पूगल का इतिहास

हरि सिंह भाटी



प्रथम संस्करण : 1989

मूल्य : तीन सौ पचास रुपये मात्र

आवरण : अमित भारती

प्रकाशक :
दलीपसिंह भाटी
हनुमानजी मन्दिर के पास
पुरानी गिन्नाणी, बीकानेर 334 001

मुद्रक : सांखला प्रिण्टर्स
सुगन निवास, चन्दन सागर
बीकानेर-334 001

PUGAL KA ITIHAS (History of Pugal) by Hari Singh Bhati Rs. 350.00

समर्पण

पूगल–उत्थान और पतन, उन अनजाने अनगिनत वीरा की कहानी है जिनके जीवट ने पीढ़ियों तक थार रेगिस्तान की विकट विभीषिकाओं से सघर्ष करके अपनी स्वतन्त्रता और स्वाभिमान को बनाए रखा। राव रणकदेव, चाचगदेव, जैसा, आसकरण, सुदरसेन, अमरसिह और रामसिह ने युद्ध मे प्राणो की आहुति देकर भाटिया की बलिदान की परम्परा को सजोये रखा, मेजर शैतानसिह भाटी, परम वीर चक्र, जैसे योद्धाओ ने इसे लुप्त नही होने दिया।

यह इतिहास उन सब वीरो को समर्पित है जिन्होने अपना 'आज' हमारे 'कल' के लिए दाव पर लगाया।

And now the time has come when we must depart, I to my death, you to go on living But which of us is going to the better fate is unknown to all except God Socrates

दशहरा
10 अक्टूबर, सन् 1989 ई

हरि सिह भाटी
कालासर

अनुक्रम

पूगल का इतिहास

प्रस्तावना

'पूगल का इतिहास' लिखने की प्रेरणा स्वर्गीय ठाकुर कल्याण सिंह, मोतीगढ़ (पूगल) के अथक प्रयासों की देन है। ठाकुर साहब इस विषय पर गहन मनन और अध्ययन अपने सेवाकाल के समय से ही करते आ रहे थे। उनके सन् 1978 ई में सेवा निवृत्त होने के पश्चात् उन्होंने अपने देहान्त (जुलाई, सन् 1988 ई) तक के दस वर्ष इसी कार्य को समर्पित कर दिए। वह लगन से यह कार्य करते थे और अपने पूर्वजों के प्रति पूर्ण निष्ठा और ईमानदारी बरतते हुए उन्होंने उपलब्ध अभिलेखों, पुस्तकों, इतिहासों और जन-श्रुतियों से पूगल के बिखरे हुए इतिहास की कड़ियों को एक अनुशासन से जोड़ा। उनके इस सकल्प मे प्रतिस्पर्धा, प्रतिशोध, अहकार, ईर्ष्या और अन्य वंशों या राज्यों को नीचा दिखाने की भावना नहीं थी। वह इस गणतन्त्र और जनतन्त्र के युग के कारण घटनाओं का सही परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण कर सके और निर्भीकता से अपने विचार, समीक्षा और टिप्पणियां दे सके। उन्होंने कभी पूगल का पक्ष लेकर उसके इतिहास को दूषित नहीं किया और इसकी आवश्यकता भी नहीं थी, क्योंकि पूगल का इतिहास अपने आप ही उज्ज्वल और गौरवमय रहा है। सन् 1837 ई के पश्चात् पूगल अपनी स्वतन्त्रता बीकानेर के हाथों खो चुका था।

सन् 1860 ई के बाद के दशकों में बीकानेर, जोधपुर और जैसलमेर राज्यों के इतिहासों को सकलित करके लिपिबद्ध करने के प्रयास आरम्भ हुए, इनमे पराधीन पूगल के इतिहास को सम्मानजनक स्थान मिलने का प्रश्न ही नहीं था। क्योंकि ऐसा करने से इन राज्यों का स्वय का इतिहास धूमिल होता था। ब्रिटिश शक्ति की छत्र-छाया में राज्यों में लम्बे समय से पल रहे अधिनायकवाद के समय पूगल अपना इतिहास लिखने का साहस नहीं जुटा पाया क्योंकि ऐसा करने से राज सत्ता से टकराव से उत्पन्न होने वाली विपरीत स्थिति के परिणाम पूगल के रावों के लिए घातक सिद्ध होते। वैसे भी पूगल के आर्थिक और शैक्षणिक साधन ऐसे नहीं थे कि वह अपना इतिहास लिखवा सके।

ठाकुर कल्याण सिंह की बातों ने मुझे बहुत प्रभावित किया और जितनी गहराई से मैं इस विषय में गया मुझ में एक परिवर्तन आने लगा। मुझे अपने ही पूगल के इतिहास, जाति और भाटी प्रदेश के इतिहास के विषय में घोर अज्ञान था और ज्यों ज्यों मेरे अज्ञान का अन्धकार छटता गया, मुझ में एक अज्ञात गौरव, आत्म विश्वास और भाटी होने का गौरव घर करता गया। अब मुझे ज्ञात हुआ कि भाटियों के, और विशेषकर पूगल के इतिहास के सामने अन्य राजवंशों, राज्यों और जातियों के इतिहास क्या थे, उनकी क्या सीमाएं थी और उनमें सच्चाई कितनी थी? इसमें अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भाटियों के गौरवमय इतिहास से मुझ में आत्म गौरव की भावना स्वत ही पनपने लगी जब कि इस लोकप्रिय

युग मे मेरा भाटी होना बेमानी है। ठाकुर कल्याण सिंह के प्रभाव के कारण मैं भी उनके साथ इस इतिहास लेखन के कार्य म सन् 1984 ई से जुड गया। वह अधिकतर बातचीत करके मेरा मार्गदर्शन करते, मैं लिखने का नियमित कार्य करता। पहले मैंने यह इतिहास अंग्रेजी मे लिखा, उसमे अनेक सशोधन किए। प्रत्येक अध्याय के पूर्ण होने पर ठाकुर साहब उसे पढकर अपने सुझाव और टिप्पणिया अलग पन्ने पर लिखकर मुझे लौटा देते थे। मैं अपने विवेक के अनुसार इनका समायोजन करता था। लेकिन फिर मैंने विचार किया कि जिस अपने इतिहास की पुस्तक को आम भाटी पढ ही नही सकें, वह इतिहास उनके लिए बेकार था। अधिकाश भाटी गावो मे रहते हैं, उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है और कुछ ही लोग पाचवी कक्षा तक पढे हुए हैं, इसलिए भाटियो का इतिहास सस्ता हो, हिन्दी भाषा मे हो जिसे पाचवी कक्षा तक पढ़ा हुआ व्यक्ति स्वय पढ सके और चौक, चौपाल, कोटडी मे बैठकर अन्यो को पढकर सुना सके। भाषा भी सरल प्रवाह वाली हो ताकि पढने और सुनने वाले उसे समझ सकें और ऊबें नही। इसलिए मैंने यह प्रयास अंग्रेजी को त्याग कर हिन्दी मे किया।

मैंने इस पुस्तक मे केवल गावो के ठाकुरो के वश का कुर्सीनामा ही नहीं लिया है बल्कि पूरे गाव के भाटी भाइयो का कुर्सीनामा लिखा है ताकि प्रत्येक भाई अपने आप को इस इतिहास से जुडा हुआ समझे, उसे स्वय के भाटी होने के गौरव का बोध हो। छोटे बच्चो के नाम सम्मिलित होने से यह कडी अगले पचास वर्षों तक उनसे जुडी रहेगी और उस समय आज के बच्चे अपने बेटो पोतो के नाम कुर्सीनामे मे जोड कर फिर से मेरे इस प्रयास को आने वाले पचास वर्षो के लिए पूर्ण करके नया कर लेंगे।

मैंने सुविधा के लिए इस पुस्तक को तीन खण्डो अ, ब, स मे विभक्त किया है।

खण्ड 'अ' मे यदुवशियो का गजनी से आरम्भ हुए इतिहास का सक्षेप मे वर्णन है। श्रीकृष्ण तक की चन्द्रवशी यदुवशियो की इक्कावन पीढियो का उल्लेख है। इनके बाद की 157 पीढियों का ब्यौरा देते हुए दर्शाया है कि किस प्रकार और कब-कब यदुवशी गजनी का राज्य (पहली शताब्दी) युद्धो मे हारे, कब वापिस वहा लाहौर और भटनेर से लौटे। राजा बालबन्ध के पौत्र चकिता के वशज कालान्तर मे मुसलमान बनकर चुगताई मुगल कहलाए और इन्होने अनेक शताब्दियो तक भारत पर शासन किया और अब उनका भारत की जनता मे विलय हो गया है। राजा बालबन्ध के पुत्र भाटी सन् 279 ई मे लाहौर मे 90 वें राजा बने। यह राजा भाटी, भाटियो के आदि पुरुष थे, उनके नाम से ही उनके वशज हम 'भाटी' नाम से सम्बोधित किए जाने लगे। इनके पुत्र भूपत ने सन् 295 ई मे इनके नाम पर भटनेर (हनुमानगढ) का अभेद्य दुर्ग बनवाया। भाटी कई बार पराजित होकर राज्यविहीन हुए, परन्तु अगली विजय इन्ही की हुई। इसी शृखला म इन्होने मूमनवाहन (सन् 519 ई), मरोठ (सन् 599 ई), केहरोर (सन् 731 ई) तणोत (सन् 770ई), बीजनोत (सन् 816 ई), देरावर (सन् 852 ई), लुद्रवा (सन् 853 ई), पूगल (सन् 857 ई), जैसलमेर (सन् 1156 ई) मे अपने नए किले बनवाए या पुराने किलो पर युद्ध मे विजयी होकर अधिकार किए।

भाटी अपने शौर्य, दिलेरी और रीति नीति के लिए प्रसिद्ध थे। इन्हें मोड़ा और मरोड़ा जा सकता है परन्तु तोड़ना असम्भव है। इसी कारण से इन्होंने सन् 162 ई में गजनी में खोरासन के शाह जयलाल के विरुद्ध, सन् 841 ई में तणोत में वराहों (पवारों) के विरुद्ध, सन् 1294 ई और सन् 1305 ई में जैसलमेर में सुलतान जलालुद्दीन खिलजी और अल्लाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध और महारावल अमरसिंह के समय (सन् 1659 1702 ई) में रोहड़ी (सिन्ध प्रान्त) में बलोचों के विरुद्ध साके (जौहर) करके अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। भारत या विश्व में अन्य किसी वंश ने अपने सम्मान को बनाए रखने के लिए इतनी बार साके नहीं किए। इनमें से पहले दोनों साके हिन्दू आक्रमणकारियों के विरुद्ध किए गए थे।

इस खण्ड में जैसलमेर के अन्तिम (वर्तमान) महारावल तक के शासकों का संक्षेप में वर्णन दिया गया है, साथ में भाटियों की लगभग 140 खांपों का उद्गम, भाटियों के ईष्ट वृक्ष जाल और सूअर के शिकार को निषेध करने के कारण आदि विषयों पर अलग परिशिष्टों में चर्चा की गई है। भाटियों द्वारा सिन्ध पंजाब की नदी घाटियों के जल नियन्त्रण पर विस्तार से विचार किया गया है। भाटियों के राजवंश ने आल राइके, सहारण व मूढ जाट, माकड़ व मलूणा सुथार, भाटिये (खत्री), फूल नाई और केवल कुम्हार समाज को दिए हैं।

खण्ड 'ब' में पदच्युत रावल पूनपाल के समय से पूगल के इतिहास पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है। उस समय पड़ोस के मुलतान के इतिहास का विवेचन किया गया है, साथ ही उस समय के दिल्ली के शासकों का विवरण भी दिया है, जिससे पाठकों का ध्यान पूगल के चारों ओर के राजनैतिक, सामाजिक और शासकीय वातावरण की ओर दिलाया जाकर उन्हें पूगल की कठिनाइयों व जटिल समस्याओं से अवगत कराया जाये। रावल पूनपाल के वंशज पूगल पर अधिकार करने के लिए लगभग एक सौ वर्षों तक जूझते रहे, राव रणकदेव सन् 1380 ई में अन्ततः पूगल पर अधिकार करने में सफल हुए। पूगल के भाटियों के इतिहास में जोइयों लंगाओं और बलोचों के साथ सहयोग या संघर्ष का बार-बार वर्णन आया है। पाठकों की सुविधा के लिए मैंने इन जातियों के इतिहास पर प्रकाश डाला है। ये पहले हिन्दू राजपूत जातियां थी, बाद में ये मुसलमान बन गए।

भटनेर के भाटियों, हिन्दुओं या मुसलमानों, का गौरवमय इतिहास रहा है। जैसलमेर, पूगल और देरावर राज्यों के अलावा भटनेर भाटियों की शक्ति का प्रतीक पन्द्रह सौ वर्षों, सन् 295 से 1805 ई तक रहा। एक अलग परिशिष्ट में भटनेर का विवरण दिया गया है। भाटियों द्वारा सन् 1380 ई में पूगल के नायकों को दबाकर वहां अधिकार करने से पहले वहां के इतिहास, पूगल की सामाजिक और साम्प्रदायिक सद्भाव की स्थिति, भाटियों के प्रतीक व मान्यताएं, विषयों पर अलग परिशिष्टों में चर्चा की गई है।

चित्तौड़ की पद्मिनी (जौहर सन 1303 ई) पूगल की ही थी। यह जैसलमेर के पदच्युत रावल पूनपाल की पुत्री थी। पूगल में एक से अधिक पद्मिनियां हुई हैं। ढोला मारू की अमर प्रेमगाथा की नायिका मरवण, पूगल के पवारों की पुत्री थी।

खण्ड 'स' मे पूगल राज्य का इतिहास विस्तार से दिया गया है। राव रणकदेव (सन् 1380 ई) से आरम्भ हुए इस इतिहास की इतिश्री सन् 1984 ई म, छब्बीस पीढियो बाद मे, राव देवीसिंह के निधन के साथ हुई। भाटियो ने लगभग छ सौ वर्षो तक पूगल मे अटूट राज्य किया। जहा पूगल मे भाटियों का राज्य राव रणकदेव ने स्थापित किया वहा इसका उत्थान राव केलण (सन् 1414 ई) के उनके गोद आने से आरम्भ हुआ। इन दोनो रावो ने ब्रह्मदेव राठौड, उनके भाई गोगादे राठौड और पुत्र राव चूडा राठौड को युद्धो मे ललकार कर मारा। राव चूडा राठौड जोधपुर के भावी शासक राव जोधा के पितामह थे, राव जोधा के पुत्र राव बीका राठौड बाद मे बीकानेर के शासक बने। भाटियो ने इन राठौडो को बार-बार युद्धो मे पराजित अवश्य किया परन्तु इनके राज्यो पर अधिकार नही करके इनको इनकी जीविका से वचित नही करके उनके प्रति उदारता रखी।

राव रणकदेव की पुत्रवधू, अरडकमल राठौड की मगेतर कोडमदे, छापर के मोहिलो की राजकुमारी थी। यह राजकुमार शार्दूल भाटी के साथ प्रणयसूत्र मे बन्ध गई राजकुमार अरडकमल के साथ युद्ध करते हुए कोडमदेसर के पास सन् 1414 ई मे रणखेत रहे। कोडमदे ने वहा सती होने से पहले अपनी दोनो जीवित भुजाएँ काटकर, गहने समेत एक भुजा अपने ससुराल पूगल भेजी और दूसरी अपने पीहर छापर भेजी। शार्दूल और कोडमदे की गाथा पूगल के जन जन की धरोहर है, मेघराज 'मुकुल' की कविता 'कोडमदे' ने इसे अमर बना दिया है।

राव केलण (सन् 1414–1430 ई) ने 32,000 वर्ग मील क्षेत्र पर राज्य स्थापित किया और यह राज्य राव शेखा के समय (सन् 1464–1500 ई) तक यथावत् रहा। इन्होने पठान जाम इस्माइल की पुत्री जावेदा से विवाह करके उनके पुत्रो को भटनेर मे बसाया, जिनके वशज भाटी (भट्टी) मुसलमान कहलाए। राव रणकदेव के पुत्र तणु मुसलमान बन गए थे, उनके वशज मुमानी, हमीरोत और अबोहरिया भाटी मुसलमान कहलाए।

राव शेखा की पुत्री रगकवर का विवाह देवी करणीजी की मध्यस्थता से बीकानेर के भावी सस्थापक बीका राठौड से सन् 1469 ई. मे हुआ था राव शेखा इस सम्बन्ध के पक्ष में नही थे।

जहा राव चाचकदेव (सन् 1430–1448 ई) ने अपने भानजे, मडोर के राव जोधा को सन् 1438 से 1453 ई तक पूगल क्षेत्र म शरण प्रदान की वही उनके पुत्र राव बरसल (सन् 1448–1464 ई) ने सन् 1453 ई मे सैनिक और आर्थिक सहायता से इनका मडोर पर अधिकार करवाया और सन् 1459 ई मे जोधपुर मे मारवाड राज्य की राजधानी स्थापित करने मे उनकी सहायता की। पूगल के राव शेखा, हरा और वरसिंह ने बीकानेर के राव बीका, लूणकरण और जैतसी की भरपूर सहायता करके रानी रगकवर के राठौड पुत्रो, पौत्रों की राज्य के विस्तार मे सहायता की जिसके कारण इस शैशव राज्य की नीव सुदृढ हुई। राव बरसिंह और राव जैसा ने अमरकोट सोढ़ाण, मालाणी, बाडमेर म जैसलमेर के लिए लडाइया लडी और मडोर पर छापा मारकर मारवाड के राव मालदेव को अपन शौर्य का विश्वास दिलाया।

राव वाना की पुत्री जसोदा की सगाई राजा रायसिंह के राजकुमार भोपत से हुई थी, राजकुमार की विवाह से पहले असमय मृत्यु के कारण जसोदा बीकानेर आ कर उनके पीछे क्वांरी सती हो गई, ऐसा उदाहरण भारत के अन्य राजवशो मे दुर्लभ है।

राव सुदरसेन ने अपने वशज, जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र, को सन् 1650 ई मे अपने राज्य का आधा पश्चिमी भाग, 15000 वर्ग मील, देकर देरावर का नया भाटी राज्य स्थापित करवा दिया। यह राज्य सन् 1763 ई म दाऊद पुत्रो के अधिकार म चला गया, कुछ समय पश्चात् यही राज्य बहावलपुर (पाकिस्तान) राज्य के नाम से जाना जाने लगा।

पूगल की स्वतन्त्रता नष्ट करने के लिए बीकानेर के राजा करणसिंह ने सन् 1665 ई मे राव सुदरसेन को मारा, महाराजा गजसिह न सन् 1783 ई मे राव अमर सिह को मारा और महाराजा रतन सिह ने सन् 1830 ई मे राव रामसिंह का मारा। भाटिया के लिए युद्ध मे मारे जाने वाला विकल्प सरल था, उनके लिए किसी की अधीनता स्वीकार करनी दुष्कर थी। सन् 1650 ई मे पूगल राज्य का आधा भाग देरावर राज्य मे परिणत हो गया, सन् 1749 ई मे बीकमपुर और बरमलपुर जैसलमेर राज्य मे विलीन हो गए और 1837 ई से राव करणी सिह ने बचे हुए पूगल राज्य के लिए बीकानेर राज्य का परोक्ष रूप से सरक्षण ले लिया।

सन् 1707 ई मे बादशाह औरगजेब की मृत्यु के पश्चात मुगल साम्राज्य बिखर गया था, साम्राज्य की सेवा करने वाले राजा महाराजा अपने राज्यो मे लौट गए। आर्थिक विपदा से उबरने के लिए जयपुर, जोधपुर और बीकानेर राज्यो ने जाट और विश्नोई काश्तकारो को निचोडना शुरू किया। बीकानेर और जैसलमेर जैसे गरीब राज्यो को छोड कर अन्य सम्पन्न राज्यो मे मराठो ने चौथ वसूल करने का भूचाल मचा दिया। राजाओ ने अपनी और मराठो की आर्थिक पूर्ति के लिए काश्तकारो का शोषण किया, यही राजपूतो और जाटों, विश्नोइयो के आपसी द्वेष का कारण बना और उनमे राजपूतो के प्रति बदले की भावना आज भी है। इसके विपरीत जैसलमेर और पूगल राज्यो ने जाटो और विश्नोइयों को अपने राज्यों म बसने के लिए प्रेरित किया और उन्हे भूमि व अन्य सुविधाए देकर प्रोत्साहित किया। पूगल के राव देवीसिंह ने सन् 1950 ई के आसपास हजारो बीघा जमीन उन सब लोगो को बख्शी जो समय रहते हुए उनके पास पहुच गए। कौडियो की वह भूमि आज लाखो की है, इसमे राजस्थान नहर के पानी से सिंचाई हो रही है।

पूगल राज्य न कभी भी दिल्ली के शासन की अधीनता स्वीकार नही की, उनस रावो ने कभी राज्य के फरमान प्राप्त नहीं किए और उनके साथ पारिवारिक सम्बन्ध नही किए। पूगल को अपने राज्य के विस्तार करने का या क्षेत्र विच्छेद का स्वतन्त्र अधिकार सदैव रहा। यह सन् 1837 ई के बाद ही बीकानेर राज्य के सरक्षण मे आया।

मेरे विचार में जिस जाति या वश का इतिहास नही होता, उसमे आत्म सम्मान मर जाता है और उनमे देश प्रेम उत्पन्न हो ही नहीं सकता।

यह 'पूगल के भाटियां का इतिहास' मेरा पूगल के बीते युग को सही परिप्रेक्ष्य मे प्रस्तुत किए जाने का प्रयास है। इससे पहले क्योंकि पूगल का इतिहास कभी लिखा ही नहीं गया था, इसलिए अनेक ऐतिहासिक तथ्य पाठको के लिए चौंकाने वाले सिद्ध होंगे, लेकिन वस्तुस्थिति ही ऐसी थी, घबराने या सन्देह करने की आवश्यकता नही है। पिछले एक सौ से ज्यादा वर्षों से भाटियो और पूगल के विषय मे जो भ्रम, विसगतिया और धारणाए बना कर इतिहासकारो ने हमारे मानस को सवारा है, उन्ह एकदम भूलना स्वाभाविक नही है। इसमे समय लगेगा। मैं पाठको को विश्वास दिला दू कि इस इतिहास को लिखते समय मुझे भय, लालच, अहकार या पारितोषिक मिलने की भावना ने ग्रस्त नही किया। ऐसा पूर्व के इतिहासकारो के साथ हुआ था। मुझे प्रसन्नता है कि इस लोकतान्त्रिक काल मे मैं अपने स्फुट विचार स्वतन्त्र रूप से प्रस्तुत कर सका हू। मैंने पूगल को भी उसकी कमियो और बुराइयो के लिए क्षमा नही किया।

इस इतिहास को सकलित करने मे मुझे गावो म बसे हुए भाटी भाइयो का स्नेह और सहयोग मिला जिसके लिए मैं उनका आभारी हू। पूगल के राव सगत सिंह का सहयोग सराहनीय रहा।

अगर मेरे से कोई भूल हो गई हो, जाने अनजाने मे अगर कुछ सही तथ्य ऐसे लिखे गए हो जिनसे अन्य राजपूत भाइयो को पीडा हुई हो, इनके लिए क्षमा चाहता हू।

बीकानेर
जन्माष्टमी
दिनांक 24 अगस्त, 1989

हरिसिंह भाटी
कालासर

अध्याय–एक

पृष्ठभूमि

भाटियो की गजनी, लाहोर, भटनेर, मरोठ, देरावर, तणोत, लुद्रवा, जैसलमेर और पूगल तक की 1800 वर्षों की यात्रा—

भाटी मूलतः चन्द्रवंशी क्षत्रिय है। बाद मे यह कृष्णवंशी यदु हुए और उसी दिन से छत्राला यदुवंशी के नाम से जाने जाते हैं। यदुवंशियो का मूलस्थान प्रयाग था, बाद मे प्रधरवा ने मथुरा बसायी।

चन्द्रवश, चन्द्रदेव के बुध नामक पुत्र से स्थापित हुआ। बुध के पुत्र प्ररुरवा (प्रग) ने प्रतिष्ठानपुर (प्रयाग)को अपनी राजधानी बनाई। उसके बाद मे आयु, निघूप और ययाति प्रतापी राजा हुए। ययाति ने देवयानी से विवाह किया। ययाति के ज्येष्ठ पुत्र यदु से यदुवश का शुभारम्भ हुआ। चन्द्रदेव की अडतालीसवी पीढी मे राजा शूरसेन हुए। राजा शूरसेन के पुत्र वासुदेव और वासुदेव के प्रतिभाशाली पुत्र श्रीकृष्ण हुए।

श्रीकृष्ण ने कुनणपुर के राजा भीष्मक की पुत्री रुकमणी से विवाह किया। श्रीकृष्ण को उनके अलौकिक कार्यों के फलस्वरूप उन्हे देवराज इन्द्र ने मेघाडम्बर छत्र प्रदान किया। उसी समय से श्रीकृष्णवंशी यदु अपने आप को छत्राला यदुवंशी के नाम से सम्बोधित करने लगे और वह इसी नाम से जाने गये।

रानी रुकमणी देवी, लक्ष्मी का अवतार थी। जब श्रीकृष्ण रुकमणी को ब्याहने स्वयंवर मे पधारे तब उनका उचित सत्कार नही हुआ, उन्होंने खिन्न होकर गलकँथ में अपना डेरा डाला। उन्हे प्रसन्न करने के लिए देवराज इन्द्र ने स्वर्ग से लवाजमा भेजा, जिसमे श्रीकृष्ण का विधिवत राज्याभिषेक हुआ। अपनी श्रद्धा के अनुसार उपस्थित सभी राजाओं ने उन्हे नजरें भेंट की। परन्तु राजा जरासिंध ने अपने घमण्ड और अहकार के कारण उन्हे नजर भेंट नही की। स्वयंवर के पश्चात् देवराज इन्द्र द्वारा भेजा गया लवाजमा वापिस उन्हें स्वर्ग में लौटा दिया गया, किन्तु श्रीकृष्ण ने मेघाडम्बर छत्र नही लौटाया, उसे अपने पास रख लिया। उन्होने वचन दिया और घोषणा की कि जब तक मेघाडम्बर छत्र उनके यदुवंशियो के पास रहेगा तब तक पृथ्वी पर उनका राज बना रहेगा। यह मेघाडम्बर छत्र अब भी जैसलमेर के महारावल के पास है और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वहां यदुवंश का राज है। सभी से छत्राला यदुवंशी राजाओ मे श्रेष्ठ हैं। भाटी छत्राला यदुवंशी है। श्रीकृष्ण ने द्वारिका, जिसे जगत कूट कहा जाता था, पर राज्य किया।

यदुवंशियों की कुलदेवी कालिका को साहणी कहते है। रुकमणी के स्वयंवर के समय वहां उपस्थित राजा जरासिंध को, श्रीकृष्ण को नजर भेंट नहीं करने की धृष्टता के लिए दण्ड देने की नीयत से देवी सहाणी श्रीकृष्ण की सहायता से जरासिंध का स्वांग उतार कर ले आई। उस दिन से यह देवी स्वांगियाजी के नाम से जानी जाने लगी और तभी से यह देवी भाटियों की कुलदेवी प्रतिष्ठित हैं।

बुध से श्रीकृष्ण तक की इक्कावन पीढ़ियां निम्न प्रकार हैं—

1 बुध 2. प्रुरवा 3 आयु (प्रथम) 4 निघूप 5 ययाति 6 यदु 7 कोष्ट 8 ब्रजमान 9 स्वाति 10 उपनक 11 चित्ररथ 12 शशिवदु 13 प्रथुश्रवा 14 धर्म 15 उपना 16 रुचक 17 जयमघ 18 विदर्भ 19 क्रथ 20 कुन्त 21 दृष्टि 22 निवरिति 23 दरसाह 24 व्योम 25 जीमूत 26 विकृति 27 भीमरथ 28 नवरत्न 29 दशरथ 30 शकुन 31 कारम्भ 32 देवरात 33 देवक्षत्र 34 माधो 35 कुरुवश 36 अणु 37 पुरुह्त्र 38 आयु (द्वितीय) 39 सात्वत 40 अन्धक 41 भजमान 42 विदुर्थ 43 सूरसेन (प्रथम) 44 समी 45 प्रतिक्षत्र 46 शयनिभोज 47 हृदिदीक 48 देवमीठ 49 शूरसेन (द्वितीय) 50 वासुदेव 51 श्रीकृष्ण।

श्रीकृष्ण राजा बुध से 51 वी पीढ़ी मे हुए, यह यदुवंश के 45 वें शासक थे। इनकी 51 पीढ़ी का वर्णन ऊपर दिया जा चुका है। श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युमन से आगे की पीढ़ियों का वर्णन नीचे दिया जा रहा है। श्रीकृष्ण की पटरानी रुकमणी प्रद्युमन की माता थी। इनकी सातवीं रानी जम्बूवति से साम्बा नाम के पुत्र हुए जिनसे सिन्ध प्रान्त का प्रसिद्ध सम्मा वंश चला। उनके वंशज जाडेचा यदु हुए, सिन्ध मे राज्य किया।

1 प्रद्युमन 2 अनिरुद्ध 3 वज्रनाभ 4 प्रतिबाहु 5 उग्रसेन 6 सूरसेन 7 नाभबाहु 8 सुबाहु 9 समा 10 गज 11 रजसेन 12 प्रतिबाहु 13 दतबाहु 14. बाहुबल 15 सुभाव 16 देवरथ 17 पृथ्वीसहा 18 महीपत 19 मरजादपत 20 सच्दतसेन 21 सूरसेन 22 उदीपसेन 23 अमरजीत 24 कनकसेन 25 सुगनसेन 26 मघवानजीत 27 करतसेन 28 भगवानसेन 29 विद्रथ 30 विक्रमसेन 31 भुमिदसेन 32 रिजपाल 33 वजीत 34 मुरतपाल 35 रुक्मसेन 36 कनकसेन 37 उत्तराशन 38 सवावतसेन 39 परतसेन 40 रामसेन 41 सहदेव 42 देवसवव 43 शकरदेव 44 सूयदेव 45 प्रतापसेन 46 अवनीजव 47 भीमसेन 48 चन्द्रसेन 49 जगसवात 50 वण 51 देवजस 52 मूलराज 53 रावदेव 54 सतुराव 55 देवन्द 56 जगभूप 57. युद्ध 58 रोहतास 59 प्रनसेन 60 महतन 61 ससुदेव 62 अलमाण 63 वीरसेन 64 सुभेव 65 सुरतसेन 66 गुणपबोध 67 जगमाल 68 भीमसेन 69 तेजपाल 70 सुपतसेन 71 रसानूप 72 चन्द्रसन 73 मुलमन 74 लालमन 75 सारगदेव 76 देवरथ 77 जसपत 78 जगपत 79 हसपत 80 देवाकर 81 भारमल 82 खुमाण 83 अर्जुन 84 जुजसेन 85 गेनलाम 86 पदमरिक्ष नाम के राजा हुए।

87 गजसेन इन्होंने गजनी नगर की स्थापना की और वहां का किला बनवाया। यह शत्रुओं से गजनी हार गए। यह राजा ईसा की पहली शताब्दी मे हुए थे।

88. शालिवाहन-प्रथम : (सन् 194-227 ई)कर्नल टाड के अनुसार मन् 016 ई, वि. स 073 मे शालिवाहनपुर नगर की स्थापना हुई। अन्या के अनुसार राजा गजसेन के पुत्र कुमार शालिवाहन ने वि स. 210, सन् 153 ई मे शालिवाहनपुर और स्यालकोट नगर बसाए। यह वि स 251, सन् 194 ई. मे लाहौर मे राजा बने। इन्होने गजनी वापिस जीती।

89 बालबन्ध ' (सन् 227-279 ई)यह वि. स 284, सन् 227 ई मे लाहौर मे राजा बने। इनके पुत्र ने सिन्ध मे सम्बाहणगढ और कशमोर बसाए। लाहौर से राज्य किया।

90 भाटी : (सन् 279-295 ई) यह वि स. 336, सन् 279 ई. मे राजा बने। लाहौर मे राज्य किया। इनके आठ पुत्र थे, प्रत्येक के वशज भाटी कहलाए। यह भाटीवश के आदि पुरुष थे। इनके समय से भाटी सम्वत (कैलेन्डर) प्रचलित था।

91. भूपत : (सन्295-338 ई)यह भी लाहौर मे राजा बने, परन्तु राजा धुन्ध से लाहौर और गजनी हार गए। अपने पिता भाटी की स्मृति मे वि स. 352, सन् 295 ई मे भटनेर का किला बनवाया। इनके पुत्र बीजल के वशज चकीता (चुगताई) मुगल हुए, जिनके वशज शाहबुद्दीन मोहम्मद गौरी ने सन् 1192 ई मे पृथ्वीराज चौहान को हराया और दिल्ली के शासक बने। भूपत के पुत्र हसपत ने हिसार, सिहराव ने सिरसा और अभयराज ने अबोहर बसाये।

92. भीम : (सन् 338-359 ई) भटनेर मे राजा हुए।

93 सातेराव : (सन् 359-397 ई) भटनेर में राजा हुए। इन्होने वीरान पडे हुए मुलतान नगर को आबाद किया।

94. खेमकरण : (सन् 397-425 ई) भटनेर मे राजा हुए। लाहौर के समीप खेमकरण नगर बसाया।

95. नरपत : (सन् 425-465 ई)भटनेर मे राजा बने। गजनी और लाहौर जीते, लाहौर में राजधानी बनाई।

96 गज : (सन् 465-474 ई) लाहौर मे राजा हुए।

97. लोमनराव : (सन् 474-482 ई) लाहौर मे राजा हुए, परन्तु गजनी और लाहौर हार गए। युद्ध मे मारे गए।

98. रणसी : (सन् 482-499 ई.) नाम मात्र के शासक हुए, भटनेर भी छूट गया।

99. भोजसी : (सन् 499-519 ई) राज्यविहीन रहे।

100. मंगलराव : (सन् 519-559 ई) प्रारम्भ में राज्यविहीन रहे। मूमनवाहन मे राज्य स्थापित किया, जिसे शत्रुओं ने छीन लिया।

101. मझमराव : (सन् 559-610 ई) प्रारम्भ मे राज्यविहीन रहे। सन् 599 ई. मे मरोठ का राज्य स्थापित किया।

102 सूरसेन • (सन् 610-645 ई) मरोठ मे राजा हुए।

103 रघुराव (सन् 645 656 ई) मरोठ मे राजा हुए।

104 मूलराज (प्रथम) (सन् 656-682 ई) मरोठ मे राजा हुए।

105 उदयराव (सन् 682-729 ई) मरोठ मे राजा हुए।

106 मझमराव (सन् 729-759 ई) मरोठ मे राजा हुए। इनके पुत्र केहर ने सन् 731 ई मे केहरोर का किला बनवाया।

107 केहर (प्रथम) (सन् 759-805 ई) यह मरोठ म राजा हुए। सन् 770 ई. म अपनी राजधानी तणोत ले गए। इन्होने अपने पुत्र तणुराव के नाम से तणोत बसाया।

108 तणुजी : (सन् 805-820 ई) तणोत म राजा हुए। सन् 820 ई मे राज्य त्याग कर पूजा पाठ मे लग गए। इनके वशज जैतुग भाटी हुए। इनके छठे पुत्र जाम के वशज भाटिया हुए।

109 विजयराव चुडाला (सन् 820-841 ई) इन्होने सन् 816 ई मे बीजनोत का किला बनवाया था। तणोत मे राजा बने। सन् 841 ई मे मारे गए। सन् 841 ई मे तणोत मे पहला साका हुआ।

110 रावल सिद्ध देवराज सन् 852 ई मे योगीराज रतननाथ ने देरावर मे राज्याभिषेक किया।

सन् 853 ई मे लुद्रवा जीत कर राजधानी वहा ले गए।

सन् 857 ई म पवारो से पूगल जीती।

सन् 965 ई मे सापली गाव के पास बलोचो द्वारा मारे गए।

111 रावल मुन्धा (सन् 965-978 ई) लुद्रवा मे रावल बने।

112 रावल मघजी (सन् 978 1056 ई) लुद्रवा में रावल बने। सिन्ध नदी के पार मुन्धकोट नगर बसाया।

113 रावल बाछुजी (सन् 1056 1098 ई) लुद्रवा म रावल बने। पुत्र सिहराव के वशज सिहराव भाटी हुए और रोहडी के पास सिहराव नगर बसाया। इनके पुत्र बापेराव के वशज पाहू भाटी हुए। पाहू ने सन् 1046 ई मे जोइयो से पूगल लिया।

114 रावल दुसाजी (सन् 1098 1122 ई) लुद्रवा मे रावल बने।

115 रावल विजयराव लाझो (सन् 1122-1147 ई) लुद्रवा म रावल बने। लुद्रवा मे युद्ध मे मारे गए।

116 रावल भोजदेव (सन् 1147-1152 ई) लुद्रवा में रावल बने। युद्ध मे मारे गए।

117 रावल जैसल (सन् 1152-1168 ई) लुद्रवा मे रावल बने। सन् 1156 ई म जैसलमेर का किला बनवाया। राजधानी जैसलमेर ले गए। शत्रुओ द्वारा मारे गए।

118 रावल शालिवाहन (द्वितीय) (सन् 1168 1190 ई) जैसलमेर म रावल बने। देरावर मे मारे गए। इनके पुत्र कपूरथला और पटियाला गए। एक पुत्र नाहन सिर -मौर गए।

119 रावल बीजल . सन् 1190 ई म यह अपने पिता के रहते हुए रावल बन गये थे, परन्तु तुरन्त बाद मे मारे गए।

120 रावल केलण (सन् 1190 1218 ई) जैसलमेर के रावल हुए।

121 रावल चाचगदेव (सन् 1218 1242 ई) जैसलमेर के रावल हुए।

122 रावल करण (सन् 1242-1583 ई) जैसलमेर क रावल हुए।

133 रावल लखनसेन (सन् 1283-1288 ई) जैसलमेर के रावल हुए।

124 रावल पूनपाल (सन् 1288-1290 ई) इन्हे जैसलमेर की राजगद्दी से पदच्युत किया गया। पूगल राज्य के सस्थापक राव रणकदेव इनके पडपौत्र थे।

125 रावल जैतसी (प्रथम) (सन् 1290 1293 ई) रावल पूनपाल के स्थान पर रावल बने।

126 रावल मूलराज (द्वितीय) (सन् 1293-1294 ई) इनके समय जैसलमेर का पहला और भाटियो का दूसरा साका हुआ।

127 रावल दूदा जसोड (सन् 1295-1305 ई) यह पिछले शासको के भाटी वश म से नही थे, यह जसोड भाटी थे। इनके समय जैसलमेर का दूसरा साका हुआ। सन् 1305 से 1316 ई तक जैसलमेर खानसे रहा।

128 रावल घडसी (सन् 1305 1361 ई) वापिस जैसलमेर के राजवश के वशज गद्दी पर आ गए।

		जैसलमर के रावल	सन्		पूगल के राव	सन्
129	1	रावल केहर	1361-1396	1	राव रणकदेव	1380-1414
130	2	लखनसेन	1396-1427	2	केलण	1414-1430
131.	3	वरसी	1427-1448	3	चाचगदेव	1430-1448
132	4	चाचगदेव	1448-1467	4	वरसल	1448-1464
133	5	देवीदास	1467-1524	5	शेखा	1464 1500
134	6	जैतसी (द्वितीय)	1524-1528	6	हरा	1500-1525
135	7	लूणकरण	1528 1551	7	बरसिंह	1525-1553
136	8	मालदेव	1551 1561	8	जैसा	1553-1587
137	9	हरराज	1561-1577	9	काना	1587-1600
138	10	भीम	1577 1613	10	आसकरण	1600-1625
139	11	कल्याणदास	1613-1631	11	जगदेव	1625-1650
140	12	मनोहरदास	1631-1649	12	सुदरसेन	1650 1665

141.	13.	रामचन्द्र	1649-1650	13.	बीकानेर के पास	1665-1670
					गणेशदास	1665-1686
142.	14	सबलसिंह	1650-1659	14	बिजय सिंह	1686-1710
143.	15	महारावल अमरसिंह	1659-1702	15	दलकरण	1710-1741
144	16	महारावल जसवन्त सिंह	1702-1707	16	अमर सिंह	1741-1783
145	17	महारावल बुधसिंह	1707-1709	17	बीकानेर के पास	1783-1790
					उज्जीण सिंह	1790-1793
146	18	तेज सिंह	1709-1710	18	अभय सिंह	1793-1800
147	19	सवाई सिंह	1717-1718	19	राम सिंह	1800-1830
148	20	अखैसिंह	1718-1762	20	सादूल सिंह	1830-1837
149	21	मूलराज (तृतीय)	1762-1820	21	रणजीत सिंह	1837 मृत्यु
150	22	गज सिंह	1820-1845	22	करणी सिंह	1837-1883
151	23	रणजीत सिंह	1845-1863	23	रुघनाथ सिंह	1883-1890
152.	24	बैरीसाल सिंह	1863-1891	24	मेहताब सिंह	1890-1903
153	25	शालिवाहनसिंह (तृतीय)	1891-1914	25	जीवराज सिंह	1903-1925
154	26	जवाहर सिंह	1914-1949	26	देवीसिंह	1925-1984
155	27	गिरधर सिंह	1949-1950	27	सगतसिंह	1984 से
156	28	रुघनाथ सिंह	1950-1982			
157	29	ब्रिजराज सिंह	1982 से			

उपरोक्त वशावली के अनुसार श्रीकृष्ण चन्द्रवश की इक्कावनवी पीढी मे शासक हुए। श्रीकृष्ण एव उनके वशजो का प्रभाव क्षेत्र पश्चिमी भारत रहा। उस समय पश्चिमी भारत के क्षेत्र मे, बकत्रिया एव वर्तमान अफगानिस्तान और इनसे लगने वाले पश्चिम के क्षेत्र भी थे। भारतवर्ष का यह क्षेत्र यमुना नदी की घाटी, मथुरा से द्वारिका तक का भू-भाग एव इसके पश्चिम के प्रदेश, वर्तमान राजस्थान, गुजरात, काठियावाड, सौराष्ट्र, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पजाब, सिन्ध, बलौचिस्तान, बकत्रिया, अफगानिस्तान, जम्मू कश्मीर और इनसे लगने वाले क्षेत्रो से बना था।

यदुवशी राजाओ की सेनाओ मे घोडो का प्रमुख स्थान रहा और युद्धो मे अश्वारोही सेना व रथो की निर्णायक भूमिका रही। उपरोक्त प्रदेशों की जलवायु, भूमि व वनस्पति घोडो के लिए उत्तम थी। घोडे अधिक वर्षात, दल दल वाली मिट्टी, पथरीले एव घने जगलों वाले क्षेत्रो के लिए उपयुक्त नही होते। यही कारण रहा कि बिहार, बगाल, असम, ब्रह्मा एव अन्य सुदूरपूर्व के क्षेत्रों मे घोडो का उपयोग बहुत कम होता था। पश्चिमी क्षेत्रों की शुष्क जलवायु, दोमट मिट्टी और घास के समतल मैदान घोडों के लिए उपयुक्त थे।

श्रीकृष्ण के विपरीत श्रीराम का सम्पर्क एव प्रभावक्षेत्र पूर्वी भारत, नेपाल की तराई, नर्मदा नदी की पूर्वी घाटी, पूर्वी भारत की महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदियो की घाटिया, इन घाटियो के दुर्गम जगल एव श्रीलका का प्रदेश रहा। दुर्गम जगलो एव अति वृष्टि वाली घाटियो के कारण श्रीराम का सम्पर्क वहा बसनेवाली अनेक आदिवासी एव जगली जातियो से हुआ। इन जातियो को दर्शाने के लिए वानर व रीछो का साकेतिक माध्यम रामायण मे चुना गया। यह क्षेत्र अधिक वर्षा वाला, सघन जगलो से भरा हुआ और सामान्यत दल-दल और चिकनी मिट्टी वाला था।

इस प्रकार श्रीकृष्ण और श्रीराम के प्रभाव क्षेत्रो व कार्यक्षेत्रो का स्पष्ट विभाजन था इनका आपस मे कही टकराव नही था। श्रीकृष्ण का क्षेत्र अधिक विकसित था, इसलिए इस क्षेत्र पर पश्चिम की कम विकसित जातियो के आक्रमण होते रहते थे। उनकी प्राय लगन भारतवर्ष के विकसित क्षेत्र मे आकर बसने की रहती थी ताकि वह इसकी सम्पदा का उपयोग और उपभोग कर सकें। इसलिए पश्चिमी भारत के निवासियो को सदैव सतर्क रहना पडता था और युद्ध कौशल मे आक्रमणकारियो से ज्यादा पारगत होना पडता था।

यदुवशी राजा पदमरिक्ष ने पश्चिम से होने वाले आक्रमणो से बचने के लिए अफगानिस्तान प्रान्त म गजनी का सुदृढ किला बनवाना प्रारम्भ किया। राजा पदमरिक्ष का विवाह मालवा के राजा वेरसिंह की पुत्री सुभाग सुन्दरी से हुआ था, इन्होंने 12 वर्ष शासन किया। खोरासन के शासक फरीद शाह ने रुमानो (सीरिया) के शासक की सहायता से इन पर आक्रमण किया, शाह फरीद परास्त हुए। परन्तु दूसरे युद्ध मे राजा पदमरिक्ष घायल होकर मर गए। उस समय इनके पुत्र गजसेन पूरब देश के राजा जुदभान की पुत्री हेमवती से विवाह करने गए हुए थे। लौटने पर वह राजा बने। इन्होने गजनी के किले का कार्य पूर्ण करवाया ताकि वह अपने पूर्वी प्रान्तो को सुरक्षित रख सकें। यह अजेय दुर्ग वर्षों तक उनके राज्य की प्रजा को सुख शान्ति प्रदान करता रहा और उनकी समृद्धि को इससे प्रश्रय मिलता रहा। राजा गजसेन की प्रजा का सुख व समृद्धि पडोसी राज्यो को नही सुहाती थी। इसलिए पडोस के पश्चिम के रुमानो (सीरिया) और खोरासन (बकनिया) के शासक मामरेज ने राजा गजसेन की शक्ति का परीक्षण करने के लिए उन पर अपनी सेनाओ से सयुक्त रूप से आक्रमण किया। राजा गजसेन के सैन्यबल ने इन्हे पराजित किया और गजनी का दुर्ग अजेय रहा। उन्होने पश्चिम के अनेक देश जीते। कश्मीर के शासक कुन्दपकोल को युद्ध मे पराजित करके उनकी पुत्री से विवाह किया। इनके शालिवाहन नाम के पुत्र जनमे।

शान्ति की स्थिति ज्यादा दिनो तक नही रह सकी। खोरासन के शासक द्वारा दूसरे आक्रमण की आशका से उन्होने कुमार शालिवाहन को पजाब भेज दिया था। इस युद्ध म राजा गजसेन की पराजय हुई। युद्ध करते हुए राजा गजसेन ने अपने नौ सौ सैनिको सहित वीरगति पाई।

रूमीपत खोरासन पत, हाय, गाय, पाखुर, पाय।
चिता तेरा, चित्त लेगी, सुनो जदूपत राय॥
(हाय-घोडा, गाय-हाथी, पाखुर-हाथी घोडे का शृगार, पाय-पैदल)

राजा गजसेन के पुत्रो को पूर्व की ओर पजाब के अपने ही प्रदेश मे पीछे हटना पडा।

यदुवश के 87 वें शासक गजसेन के कुवर शालिवाहन लाहौर आये और उन्होने ज्वालामुखी देवी के तीर्थस्थान की यात्रा की। वहा जाते हुए उन्होने वि स 210 (सन् 163 ई) मे लाहौर के समीप शालिवाहनपुर और स्यालकोट नगरो की स्थापना की।

जब राजा गजसेन साका करके खोरासन के शहजादा जलालुद्दीन (जमलाल) की सेना से हार गये और मारे गए, तब उनके वशज गजनी का किला छोडने से पहले अपने साथ अष्टचक्र वाला अपना पैतृक तख्त ले आये। यह तख्त लकडी का बना हुआ था। जहा-जहा भी कालातर मे यदुवशियो की राजधानी रही यह तख्त उन्होने राज चिन्ह के रूप मे अपने साथ रखा। गजनी से लाहौर, भटनेर, मुमनवाहन, मरोठ, तणोत, देरावर, लुद्रवा के भाटियो के किलो को सुशोभित करता हुआ उनके पूर्वजो का यह गजनी का तख्त, जैसलमेर के किले में सन् 1156 ई मे स्थापित किया गया। यह तख्त सन् 1156 ई से 1290 ई तक जैसलमेर मे रहा। सन् 1290 ई मे जब रावल पूनपाल को जैसलमेर की राजगद्दी से पदच्युत किया गया तब वह इसे अपने पैतृक अधिकार स्वरूप साथ ले आये। बाद मे राव रणकदेव इसे अपने साथ पूगल के गढ मे सन् 1380 ई मे ले आये। राव रणकदेव से राव देवीसिह तक की पूगल मे भाटियो की छब्बीस पीढियो के रावो का राज्याभिषेक इसी पैतृक तख्त पर हुआ। अब यह प्राचीनतम लकडी का तख्त पूगल के गढ मे सुरक्षित है।

बीकानेर के स्वर्गीय महाराजा करणी सिंह और जर्मनी के डॉ गोयज सहित अनेक पुरातत्व विशेषज्ञो ने इसकी वास्तविकता और प्राचीनता के बारे मे जानकारी करके प्रमाणित किया कि यह तख्त अति प्राचीन है, इससे पुराना लकडी का बना हुआ फर्नीचर सम्भवत भारत मे अन्य किसी स्थान पर नही है।

यह तख्त सदैव भाटियो की सत्ता का प्रतीक रहा, इसके सामने प्रत्येक भाटी का मस्तक श्रद्धा से अपने आप झुक जाता है। यह तख्त इस तथ्य का प्रमाण है कि पिछले लगभग 2000 वर्षों से भाटीवश की शासक शृखला अटूट रही है।

राजा गजसेन के पुत्र शालिवाहन ने अपने पिता की गजनी के युद्ध मे हुई मृत्यु का बदला लेने का प्रण किया और इस प्रबल सकल्प की पूर्ति के लिए इन्होने सैन्य सगठन किया। राजा गजसेन की मृत्यु के बाद मे शालिवाहन यदुवश के 88 वें शासक वि स 251 सन् (194 ई) म लाहौर मे राजा बने। इन्होने बलशाली सेना से सुसज्जित होकर लाहौर से गजनी पर आक्रमण किया। घमासान युद्ध मे शहजादा जलालुद्दीन खेत रहे। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने का अपना प्रण पूरा करके, राजा शालिवाहन ने गजनी के किले मे प्रवेश किया और यदुवश का ध्वजा पुन उस किले पर फहराने लगा। यहा यह बताना आवश्यक है कि उस समय तक इस्लाम धर्म का शुभारम्भ नहीं हुआ था। उस समय पश्चिमी क्षेत्र के लोगो के नाम पहले से ही मुसलमानो के नामो जैसे थे।

राजा शालिवाहन ने अपने पुत्र कुमार बालबध को गजनी की शासन व्यवस्था और प्रबन्ध सम्भालने के लिए नियुक्त किया और स्वय लाहौर आ गए। इन्होंने गजनी विजय के

बाद मे 33 वर्ष (सन् 227 ई) लाहौर से राज्य किया। इनके पन्द्रह पुत्र थे। प्रत्येक ने पजाब के पहाडी क्षेत्र और सिन्ध नदी की घाटी के पश्चिमी प्रदेशो मे बाहुबल से राज्य स्थापित किए। इनकी मृत्यु के पश्चात् बालबंध ने अपने पौत्र मूपन को गजनी के किले की व्यवस्था सौंपी और स्वय राज्य सम्भालने लाहौर लौट आए। राजा बालबंध सम्वत् 284 (सन् 227 ई) मे यदुवश के 89 वें शासक बने। इन्होंने अपनी राजधानी लाहौर मे ही रखी और वही से राज्य की सुचारु रूप से देख-रेख करते रहे। राजा बालबंध के पुत्रो ने सिन्ध प्रदेश मे सिन्ध नदी के किनारे सम्बाहणगढ और कशमोर नगर बसाये। राजा बालबंध की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र भाटी राजा बने। राजा भाटी के पौत्र चकीता गजनी के किले और प्रान्त के प्रशासक बने। चकीता ने बलख बोखारे के शाह की एकमात्र पुत्री से विवाह किया और शाह की मृत्यु के बाद मे वह उनके राज्य के शासक बने। कालान्तर मे चकीता के वशजों ने बलख, बोखारा और उजबेक के शासकों की राजकुमारियो से विवाह किए और अपनी पुत्रिया वहा ब्याही। सातवी शताब्दी म उस क्षेत्र मे इस्लाम धर्म का प्रादुर्भाव हुआ, अन्य निवासियो का साथ देते हुए चकीता के वशजो ने भी इस्लाम धर्म ग्रहण किया। इनके वशज चकीता मुगल हुए। यह मुगल यदुवशी चकीता मुसलमान हैं। चकीता के आठ पुत्र थे। इनमें से एक पुत्र बीजल की सतान शाहबुद्दीन मोहम्मद गौरी हुए, जिन्होंने सन् 1175 ई मे भारत पर पहला आक्रमण मुलतान पर किया। सन् 1192 ई मे सम्राट पृथ्वीराज चौहान को परास्त करके शाहबुद्दीन मोहम्मद गौरी दिल्ली के शासक बने। इस प्रकार मोहम्मद गौरी वस्तुत राजा भाटी के वशज थे।

राजा बालबन्ध के पुत्र भाटी श्रीकृष्ण की 90 वी पीढी पर लाहौर म राजा हुए। यह हमारे भाटीवश के आदि पुरुष थे। राजा भाटी के आठ पुत्र थे, इन सभी की सन्तानें भाटी कहलाए। राजा भाटी का शासनकाल वि स 336 (सन् 279 ई) से प्रारम्भ हुआ। यह प्रतापी राजा थे इनकी दूर-दूर के प्रदेशो मे मान्यता थी। इनके शासनकाल मे भाटी सम्वत् चलता था, यह बाद मे भी अनेक शताब्दियो तक प्रयोग मे लिया जाता रहा। (रणबाकुरा, मासिक पत्रिका, जनवरी, 1988, पृष्ठ 103)

राजा भाटी की मृत्यु के पश्चात् इनके पुत्र भूपत लाहौर मे यदुवश के 91 वें शासक हुए। इनके समय म गजनी का किला एव प्रान्त लाहौर राज्य के अधिकार स निकल गया, वहा धुन्ध नाम के पश्चिम के एक राजा ने अधिकार कर लिया था। राजा धुन्ध ने लाहौर पर भी आक्रमण किया, दुर्भाग्यवश राजा भूपत इस युद्ध मे पराजित हो गए। इन्हे लाहौर छोडना पडा और अपने पूर्वज राजा शालिवाहन की तरह अपने ही राज्य के पूर्व के प्रान्तो मे पीछे हटना पडा। वहा भी राजा धुन्ध ने इनका पीछा किया। अन्त मे उन्होने राजा भूपत भाटी को बुरी तरह पराजित करके इन्हे लाखी जगल मे शरण लेने के लिए विवश किया। यह जगल थार रेगिस्तान की सीमा पर घग्घर नदी की घाटी मे फैला हुआ था। इन्होंने वि स 352 (सन् 295 ई) मे घग्घर नदी के पूर्वी किनारे पर भटनेर (वर्तमान हनुमानगढ) का किला बनवाया। भटनेर नाम इन्होने अपने पिता राजा भाटी की स्मृति मे रखा। भटनेर के किले के शिल्पी केकैया थे।

कुछ समय पश्चात् राजा भूपत भाटी की स्थिति कुछ सुधरी, इन्होंने अपने आपको सुदृढ़ बनाया और राज्य का विस्तार करना आरम्भ किया। इनके एक पुत्र हंसपत ने हिसार नगर बसाया और उस क्षेत्र पर अधिकार किया, दूसरे पुत्र मिहराव ने सरसा नगर बसाया और आस-पास के क्षेत्र पर अधिकार किया।

श्री नथमल और हरिदत्त के अनुसार राजा शालिवाहन के पौत्र भाटी ने वि.स. 336 (सन् 279 ई.) में लाहौर से राज्य किया। यह यदुवंश की शृंखला मे 90 वें शासक थे। लेकिन कर्नल टाड के अनुसार सन् 016 ई. (वि. स. 073) मे शालिवाहनपुर नगर की स्थापना के साथ इन्होंने राज्य करना आरम्भ किया। इतिहासकारों के सम्वत् या ईसवी सनों मे थोड़ा मतभेद होते हुए भी यह निश्चित है कि लगभग 1700-1800 वर्ष पहले लाहौर में यदुवंशी भाटियो का राज्य था।

भटनेर से 92 वें शासक भीम, वि. स. 395 (सन् 359 ई) ने शासन किया। सातेराव ने वीरान पड़े मुलतान नगर को फिर से बसाया।

पूगल पर भाटियो का राज्य स्थापित होने से पहले वहा पर पंवार राजपूत राज्य करते थे। पूगल की स्थापना राजा पिंगल पवार ने की थी। इन्हीं के नाम से यह पूगल कहलाने लगा। सम्वत् 454 (सन् 397 ई)मे भाटियो के यदुवश के 94 वें राजा खेमकरण भटनेर मे राजा हुए। इन्होंने सम्वत् 482 (सन् 425 ई)तक राज्य किया। इनका विवाह पूगल के पवार राजा दोमट की पुत्री हेमक्वर से हुआ था। राजा खेमकरण के दो रानिया और थीं, एक गहलोत वश की और दूसरी भटिंडा की मक्वानी रानी। इन्ही राजा खेमकरण ने लाहौर के पास खेमकरण नगर बसाया था। यहा सन् 1965 ई. मे भारत और पाकिस्तान की सेनाओ के बीच निर्णायक टैंक युद्ध हुआ था, जिसमे भारत विजयी रहा।

इस प्रकार राजा भूपत, भीम, सातेराव और खेमकरण ने, वि स. 352 (सन् 295 ई.) से वि. स. 482 (सन् 425 ई.) 130 वर्षों तक भटनेर मे राज्य किया।

राजा खेमकरण के पुत्र नरपत 95 वें शासक, वि. स. 482 (सन् 425 ई), काफी शक्तिशाली शासक हुए। इनके पीछे एक सौ तीस वर्षों की चार पीढ़ियों द्वारा संचित द्रव्य, उपजाऊ क्षेत्र और व्यवस्थित सुरक्षा साधन थे। भाटियो के हृदय मे गजनी का सदैव विशेष स्थान रहा,प्रत्येक भाटी पश्चिमोत्तर गजनी के दर्शन करने की सुषुप्त भावना सजोये रखता था। ज्योंही राजा नरपत को अवसर मिला इन्होंने लाहौर और गजनी पर आक्रमण किया तथा राजा धुन्ध के वशजो को परास्त करके राजा भूपत की पराजय का बदला लिया और इस समस्त क्षेत्र पर भाटियो ने अधिकार किया। राजा नरपत ने लाहौर को पुन भाटियो की राजधानी बनाया। वह वहा से विस्तृत राज्य पर शासन करने लगे। इन्होंने अपने निकटस्थ वशज भाटियों को अबोहर और भटनेर के किले देकर वहा का राज्य दिया। इस प्रकार पश्चिम के गजनी प्रदेश से पूर्व में मथुरा एव आस-पास के क्षेत्रों पर राजा नरपत भाटी का शासन हो गया।

राजा नरपत के कुमारों, गजू और बजू, के आपस में राज्य के लिए तकरार हुई। हजारो लोग इस तकरार के कारण हुई अनावश्यक झड़पो मे मारे गए। आखिर सब की राय

से गजू को मेघाडम्बर छत्र मिला और बजू को राजा नरपत का राज्य मिला। गजू अपने साथी सरदारों को लेकर नया राज्य स्थापित करने की नीयत से पश्चिम की ओर निकल गये। उस समय पूर्व के बजाय पश्चिम की ओर जाने का आकर्षण अधिक था। यह आकर्षण बाद में भी यथावत रहा, आमेर के कछावा और जोधपुर-बीकानेर के राठौड भी पूर्व से पश्चिम की ओर आए थे।

कई दिनों के बाद मे गजू बोखारा पहुचे, वहा के बादशाह ने भाटी राजपुत्र होने के नाते इनकी बडी आवभगत की। वहां रहते हुए इन्होने एक दिन सूअर का शिकार कर लिया। इससे बादशाह बहुत अप्रसन्न हुए, क्योकि उन्हे ज्ञात था कि यदुवशी भाटियो के लिए सूअर का शिकार करना वर्जित था। यह बादशाह मुसलमान नही थे। इससे बहुत पहले, यदुवश के आठवें राजा सुबाहु शिकार करने के लिए सूअर के पीछे पाताल देश पहुँच गये थे, जहा उन्हे भगवान वाराह के साक्षात दर्शन हुए। वहा उन्होंने सूअर का शिकार नही करने की सौगन्ध खाई थी। तभी से यदुवशियो के लिए सूअर का शिकार करना या उसका मास खाना वर्जित था। इस वर्जना का बोखारा के बादशाह को ज्ञान था।

जब बादशाह ने सूअर के शिकार के विषय मे इनसे पूछा तो गजू ने झूठ बोल दिया। बादशाह ने अपने आदमी झूठ की छानबीन करने भेजे। देवी सागियाजी की कृपा से सूअर जीवित मिला। इस पर बादशाह उनसे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अपनी सेना गजू के साथ भेजी, जिसमे उन्होंने बजू से युद्ध करके गजनी और लाहौर जीते, और वहा राज किया। इन्होने भटनेर, हिसार एव पूर्व के प्रान्त बजू के पास रहने दिये। इस प्रकार राजा गजू यदुवश के 96 वें राजा, वि स 522 (सन् 465 ई) मे, लाहौर के शासक हुए। कुछ समय पश्चात् यह लाहौर का शासन अपने पुत्र लोमनराव को सौंप कर स्वय गजनी चले गए।

लाहौर मे राजा नरपत गजू और लोमनराव का राज्य, वि स 482 से 531 (सन् 425 से 474 ई) तक, 50 वर्ष रहा। राजा लोमनराव यदुवश के 97 वें शासक थे। भाटियो की बढती हुई शक्ति और समृद्धि पहले की तरह पडोस के राज्यो के लिए सकट-कारक थी। इसलिए वि स 531 (सन् 474 ई) मे, ईरान और खोरासन की सेनाओ ने राजा लोमनराव पर आक्रमण किया। इस आक्रमण करने का एक कारण यह भी था कि बजू के पुत्र हिसार के शासक झडू बोखारा के बादशाह की राजकुमारी का अपहरण करके ब्याहने ले आये थे। झडू ने राजकुमारी का अपहरण इसलिए किया था क्योंकि बोखारा के बादशाह ने गजू की सहायतार्थ अपनी सेना उनके पिता बजू के विरुद्ध भेजी थी, जिससे उनका गजनी और लाहौर पर से अधिकार समाप्त हो गया था। ईरान और खोरासन की सयुक्त सेनाओ ने राजा लोमनराव को पराजित किया। वह सन् 482 ई के युद्ध मे मारे गए।

इस युद्ध म पराजय के फलस्वरूप राजा लोमनराव को लाहौर, गजू को गजनी, मूलराज को मथुरा, झडू को हिसार और जग सवाई को भटनेर के राज्यो से वचित होना पडा (जैसलमेर का इतिहास, लक्ष्मी चन्द नथमल)। बादशाह के सेनापति भाटियो के प्रदेशो मे से गजनी चगीतों को, पजाब पडिहारो को और मथुरा बयाना के यादवो को

देकर, उनसे सन्धि करके वापिस चले गए। इस सन्धि के अनुसार भाटियो के प्रदेश के इन नये शासको ने खोरासान की अधीनता स्वीकार की और उन्हें चौथ चुकाने का अनुबन्ध किया।

इन पाचो राज्यो के खोने से पजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और अफगानिस्तान से भाटियो का राज्य हमेशा के लिए समाप्त हो गया। अगर इस राजकुमारी के अपहरण को युद्ध का एकमात्र कारण मानें तो झंडू द्वारा बदले की भावना से की गई भूल समस्त भाटी राज्य के नाश का कारण बन गई। एक छोटी-सी भूल का इतना विपरीत परिणाम हुआ कि भाटी इन खोये हुए प्रान्तो मे भविष्य मे वापिस कभी नही जम सके। उन्हें भूमिविहीन हो कर दर-दर की ठोकरें खानी पडी और रेगिस्तान के संघर्षमय जीवन से पीढी-दर-पीढी जूझना पडा और अभी तक जूझ रहे हैं। भाटियो ने कई बार सतलज व सिन्ध नदियो की घाटियो मे पाव जमाने के अथक प्रयास किए, लेकिन वहा की उभरती हुई शक्तिशाली जातियों ने इन्हे स्थाई तौर पर वहा नही जमने दिया। भाटी सदियो से इन नदी घाटियो को रेगिस्तान की सीमा से ललचाई हुई आंखो से देखते रहे लेकिन वहा की सम्पदा को भोगने के लिए पर्याप्त शक्ति और साधन नही जुटा पाए।

लाहौर मे राजा लोमनराव की युद्ध मे पराजय और मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र रेणसी भाटी, पैतृक गजनी का तख्त, मेघाडम्बर छत्र, आदिनाथ की प्रतिमा, ध्वज, ढोल, नगारा आदि अपने साथ लेकर लाहौर से निकल पडे। शत्रु सेना ने उनका पीछा किया। अन्तत वह भी अपने पूर्वज राजा भूपत की भाति जान बचाने के लिए लाखी जगल की शरण मे पहुँचे। राजा रणसी यदुवश के नाममात्र के 98 वें शासक, वि. स. 539 (सन् 482 ई.) मे हुए। इनके पश्चात् इनके पुत्र भोजसी 99 वें शासक, वि स 556 (सन् 499 ई) मे हुए। इन्होने राजा लोमनराव द्वारा खोये हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने के अनेक प्रयास किये परन्तु सफल नही हो सके।

भाटी, लाहौर, भटनेर एव पूर्व के प्रदेशो को छोडने के बाद, हाकड़ा नदी (वर्तमान घग्घर) के दोनो किनारो के क्षेत्र मे रहने लगे और छोटे-मोटे क्षेत्रो पर अधिकार करते हुए, नदी के ही साथ पश्चिम व दक्षिण पश्चिम की ओर फैलते रहे। वह हाकडा नदी से ज्यादा दक्षिण मे नही आ सके। उस क्षेत्र मे उस समय शक्तिशाली जोइया और पवार राजपूतो के राज्य थे। वह सिन्ध नदी की घाटी के साथ इस आशा मे चिपके रहे कि कभी न कभी उनकी शक्ति बढेगी और भाग्य ने साथ दिया तो एक दिन वह अवश्य ही लाहौर, भटनेर, हासी, सिरसा आदि अपने पूर्वजो द्वारा हारे हुए प्रान्त पुनः प्राप्त करेंगे। इसी आशा को संजोये हुए वह हाकडा नदी के साथ-साथ सतलज नदी के पूर्वी छोर पर पहुँचे। अब तक उन्होने काफी बडे भू-भाग पर अधिकार स्थापित कर लिया था।

राजा भोजसी के पुत्र राजा मगलराव ने सन् 519 ई. मे मूमनवाहन नामक स्थान पर नया किला बनवाया। मूमनवाहन वर्तमान बहावलपुर नगर के पास या इसी के स्थान पर था। पास ही पश्चिम मे सूई वाहन (या विहार) स्थित है। बहावलपुर के पास सतलज नदी पर आधुनिक रेल और सडक, आदमवाहन पुल बना हुआ है।

राजा मगलराव 100 वें शासक थे, इनका राज्यकाल वि स 576 (सन् 519 ई) से आरम्भ हुआ। राजा मगलराव ने गाराह नदी, सतलज व पुरानी व्यास, के प्रदेश को विजय किया और वराहो, मुट्टो को पराजित किया। उस समय पूगल मे पवार, धाट (अमरकोट) मे सोढा और लुद्रवा मे लोद्रा (पवार) राजपूत राज्य करते थे।

सतलज नदी की ओर पश्चिम मे सिन्ध नदी की घाटी मे बसन वाली शक्तिशाली लगा कौम (हिन्दू) मूमनवाहन म नया किला बनवाकर उदय होने वाली शक्ति के प्रति आशक्ति हुई। मुलतान की सत्ता भी उनसे थोडी दूरी पर एक पुरानी पराजित भाटी जाति की शक्ति के प्रति सावचेत हुई। लगा एव मुलतान के हिन्दू शासक दोनो नही चाहते थे कि उनके पडोस म एक ऐसी सशक्त जाति उभरे, जिसके पूर्वजो ने उत्तर और उत्तर-पश्चिम भारत के विस्तृत भू-भाग पर राज्य किया था। उन्हे भय था कि ज्योही भाटियो की शक्ति का सगठन हुआ, वह सिन्ध और मुलतान के राज्यो को अपने राज्य म मिलाते हुए लाहौर और गजनी लेने का प्रयास करेंगे। मुलतान से बोलन दर्रे से होते हुए अफगानिस्तान मे प्रवेश करन का सुगम मार्ग था। आने वाले भय से निपटने के लिए लगाओ ने मूमनवाहन पर आक्रमण कर दिया। अभी राजा मगलराव यहा नये नये आए थे, उनके पाव भी मजबूती से नही जम पाये थे कि इस आक्रमण के कारण उन्हें पुत्र मडमराव के साथ मूमनवाहन छोडना पडा।

फिर वही ढाक के तीन पात। पिता मगलराव और पुत्र मडमराव राज्यविहीन होकर नये पडाव की खोज मे फिरते रहे। उनके बुरे दिनो मे उनके भाइयो ने उनका साथ दिया। भाटी आसानी से हिम्मत हारने वाले कहा थे ? राजा मगलराव के भाई मसूरराव थे। मसूरराव के अभयराव और सारनराव दो पुत्र थे। अभयराव के वशज अबोहरिया भाटी कहलाय, बाद म यह मुसलमान बन गए। सारनराव के वशजो ने काश्तकारी का पेशा अपनाया, इनके सारण जाट हुए। राजा मगलराव के पुत्रो, खुल्लरसी के खुल्लडिया जाट, मूलराज के मूड जाट और श्योराज के श्योडा जाट हुए और उनके पुत्र फूल के वशज नाई और केवल के वशज कुम्हार हुए।

पिता राजा मगलराव की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र मडमराव ने यदुवश के 101 वें शासक बनने की बागडोर, वि स 616 (सन् 559 ई) मे, सम्भाली। प्रारम्भ मे उनकी शक्ति कम थी। उन्होंने धैर्य रखा, साधन जुटाये, सेना बढायी और आस पास के छोटे राज्यो व जागीरदारो पर अधिकार किया, अपने सैन्य कौशल और राज्य के सुचारु प्रबन्ध से प्रजा व पडोस के राज्यों मे अच्छी साख बनाई। पिता मगलराव द्वारा मूमनवाहन के किले के बनवाने, वि स 576 (सन् 519 ई) के अस्सी वर्ष पश्चात्, वि स 656 (सन् 599 ई) मे, राजा मडमराव ने मरोठ का किला बनवाया और नगर बसाया। इस उत्सव के अवसर पर पूगल के पवार, जाखो के मुट्ट, लुद्रवे के पवार और भटिंडे के वराह राजा ने अपने राजदूत भेज कर शुभकामनाए भेजी। अमरकोट के सोढो ने अपनी पुत्री इन्हें ब्याही। इन राजाओ को ज्ञात था कि मरोठ मे नवस्थापित भाटी राज्य एक पुराने समृद्ध एव कीर्तिवान राजवश का उत्तराधिकारी था जिसके पूर्वजो के अधिकार मे भारतवर्ष का बहुत बडा भाग

रहा था। उस समय पूगल के पवारो, भटिंडा के वराहो एवं भुट्टो के राज्यो की सीमा सतलज नदी के पूर्वी छोर तक थी, पश्चिम मे मुलतान का राज्य था। नया भाटी राज्य इन्ही राज्यो से भूमि विजय करके स्थापित किया गया था। इनकी राजधानी मरोठ, पूगल के पवारो से युद्ध मे जीतकर अधिकार किए हुए क्षेत्र मे थी।

राजा मडमराव के पश्चात् राव सूरसेन, राव रघुराव और राव मूलराज (प्रथम) हुए। यह क्रमश॰ 102, 103 और 104 वें शासक हुए। यह वि स 667, 702 और 713 तदनुसार सन् 610, 645, 656 ईसवी मे हुए थे। मडमराव, लोमनराव की लाहोर मे पराजय और मगलराव की मूमनवाहन की पराजय और उसके उपरान्त हुई दुर्गति और दुख के दिन नही भूले थे। उन्हे वि स 539 (सन् 482 ई) से वि स 656 (सन् 599 ई) के चार पीढियो के दिन याद थे। इसलिए उन्होने अपने बेटे राव सूरसेन और पोते रघुराव को धैर्य से राज्य करने की शिक्षा दी। राव मूलराज (प्रथम) के समय तक मरोठ की स्थिति सुदृढ हो चुकी थी। राव मूलराज ने वि स. 702 मे 739 (सन् 645-682 ई) तक राज्य किया। इन्होने पहले पहल मूमनवाहन पर आक्रमण करके इसे जीता और राजा मगलराव की पराजय का बदला लिया। इसके बाद इन्होने भटनेर विजय किया। इस प्रकार इनके पूर्वज राजा भूपत भाटी द्वारा बनाया गया किला इनके अधिकार मे आया।

राव मूलराज (प्रथम) के बाद मे इनके पुत्र उदैराव वि स. 739 (सन् 682 ई) मे 105 वें शासक हुए। इनके बाद वि स 786 (सन् 729 ई) मे इनके पुत्र मझमराव 106 वें शासक हुए। राव उदैराव ने 47 वर्ष तक शान्ति से राज्य किया और प्रजा सुखी और समृद्ध रही, लेकिन ऐसी संतोषजनक स्थिति राव मझमराव के शासन मे लम्बे समय तक नही रहने वाली थी। मोहम्मद-बिन-कासिम ने सन् 712 ई मे सिन्ध विजय करके मुलतान पर आक्रमण किया। इन आक्रमणो से सिन्ध और सतलज नदियो के पूर्व मे स्थित भाटियो का मरोठ का राज्य लम्बे समय तक अछूता कैसे रहता? मुसलमान आक्रमण हिन्दुओ के लिए एक नई समस्या थी। भाटी अभी तक गैर मुसलमानो से एव खोरासन या ईरान की सेनाओ से निपटने के अभ्यस्त थे।

राव मझमराव ने नई स्थिति का धैर्य से मूल्याकन किया। उनकी सलाह व आदेश से उनके ज्येष्ठ कुवर केहर ने सेना सगठित करके मूमनवाहन के समीप सतलज नदी पार की और मुलतान के सीमान्त क्षेत्र को जीत कर सतलज नदी के पश्चिम मे केहरोर का किला, वि.स 788 (सन् 731 ई) मे बनवाया। उन्होने बचाव के लिए आक्रमण करने की नीति का योग्यता से अनुसरण किया। केहरोर का किला मुलतान से ज्यादा दूर नही था, केवल 50 मील पूर्व मे था। इसकी सुदृढ बनावट और इसके पीछे भाटियो का सुसज्जित सैन्य सगठन, मुलतान के नये मुसलमान शासको को उनके ठौर-ठिकाने पर यथावत रखने के लिए काफी था। राव मझमराव के मूलराज और गोगली दो पुत्र और थे। केहर और मूलराज का विवाह जालोर के शासक अलसी देवडा की पुत्रियो से हुआ था। कुमार गोगली के वशज गोगली भाटी हुए।

राव केहर (प्रथम) वि स 818 (सन् 759 ई) मे 107 वें शासक हुए। राव केहर भारतवर्ष के इतिहास में एक बहुत बडे मोड पर खडे थे। सिन्ध और पजाब प्रदेशो पर

मुसलमानो के निरन्तर आक्रमणो के कारण वहा के हिन्दू राजाओ की स्थिति ठीक नही थी, उनमे सगठन का अभाव था और मुसलमानो से लगातार पराजय के कारण उनका सैनिक नेतृत्व कमजोर पड रहा था। राव केहर ने पडोस के बिगडते हुए सैन्य वातावरण को समझा और स्वय की शक्ति का आकलन किया। उन्हें लगा कि ज्यादा दिन तक मरोठ मे राजधानी रखना उनके राज्य के लिए उचित नही होगा। इसलिए उन्होने समझदारी करके अपनी राजधानी मरोठ से तणोत स्थानान्तरित करने का निर्णय लिया। इन्होने वि स 827 की माघ पूर्णिमा (सन् 770 ई) मे तणोदेवी और अपने ज्येष्ठ पुत्र तणुजी के नाम पर तणोत का गढ़ बनवाया। इन्होने ज्येष्ठ पुत्र के नाम से यह गढ इसलिए बनवाया क्योकि इनके पिता मझमराव ने इन्हें भी स्वय के नाम से केहरोर का किला बनाने की स्वीकृति दी थी। राव केहर ने तणोत मे माता का मन्दिर भी बनवाया जो अभी भी तणोत में अच्छी दशा मे है। तणोत का किला वराह राजपूतो की राज्यसीमा मे बनवाया था। इसलिए जैसीरत वराह ने तणोत पर आक्रमण किया। मूलराज (केहर के भाई) ने किले की रक्षा करते हुए वराहो को किले पर अधिकार नही करने दिया। मूलराज ने अपनी पुत्री वराहो को ब्याह कर उनसे सन्धि की। राव केहर ने छापा मारकर अरोड से मुलतान से जाए जा रहे पाच सौ घोडो पर लदे हुए खजाने को पजनद के पास लूटा। राव केहर को शिकार के समय छन्ना राजपूतो ने घात लगाकर मार डाला। इनके दूसरे पुत्र उतैराव थे। उतैराव के पाच पुत्र थे, इन सबकी सन्तानें उतैराव भाटी कहलाए।

राव केहर के पुत्र तणुराव, वि स 862 (सन् 805 ई) मे यदुवश के 108 वें शासक हुए। राव तणुजी ने वराहो को परास्त किया और सिन्ध नदी (मेहरान) तक राज्य की सीमा का विस्तार किया। मुलतान के शासक हुसैन शाह लगा ने डूडी, खीची, खोसर, मुगल, जोइया, सयैद आदि की सहायता से तणोत पर आक्रमण किया। राव तणुजी और कुमार बिजयराव ने युद्ध मे इन्हें परास्त किया। (लगा सोलकी राजपूत थे)। परन्तु इससे तणोत को सुरक्षा नही मिली। लगा किसी समय उचित अवसर पाकर आक्रमण कर सकते थे। इसलिए जब भुट्टाबन के सोलकी भुट्टो राजा जूजूराव ने अपनी पुत्री के कुमार बिजयराव के साथ विवाह के प्रस्ताव स्वरूप नारियल भेजा तो राव तणुजी ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। इन्होने इस सूत्र से मुलतान के विरुद्ध बचाव व आक्रमण की सन्धि की। भुट्टो युवरानी से बिजयराव के पुत्र कुमार देवराज (सन् 836 ई में) हुए।

राव तणुजी के छ पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र कुमार बिजयराव, राव बने। दूसरे पुत्र माकड के माहोल और देको, दो पुत्र थे। देको के वशज माकड सुयार हुए। इनके तीसरे पुत्र जैतूग के पुत्रो, रतनसी और चाहड, ने बीकमपुर पर अधिकार किया। चाहड के पुत्र कोला ने कोलासर और गिरराज ने गिराजसर गाव बसाये। इनके वशज जैतूग भाटी कहलाए। चौथे पुत्र अलुन के चार पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र देवासी के वशज देवासी राईके हुए। सबसे छोटे पुत्र राकेचा के वशज राकेचा साहूकार बनिये हुए, यह ओसवालो मे शामिल हैं जो अब जैन हैं। ओसवाल भाटी, पवार और सोलकी राजपूतो के वशज हैं।

राव तणुजी के छठे पुत्र जाम के वशज वाणिया साहूकार भाटिया हुए।

राव तणुजी ने अपने जीवनकाल मे ही राज पाट त्याग दिया था और अपना शेष जीवन इश्वर और ताना देवी की भक्ति और पूजा पाठ मे लगाया। इनके रहते हुए ही इनके पुत्र बिजयराव चुडाला, वि स 877 (सन् 820 ई) म, 109 वें शासक हुए और तणोत की राजगद्दी पर बैठे। राव बिजयराव का विवाह जूजूराव (या जैंजै) सोलकी मुट्टो की पुत्री से हुआ था। इनका राज्य भटिंडा के आस पास जाघी (या जाघै) म था।

राव तणुजी के पुत्र बिजयराव ने वि स 873 सन् 816 ई) म बीजनोत का गढ बनवाया। इनके पूर्वज कुमार केहर और कुमार तणुराव की भाति राव तणुजी ने इस गढ का नाम बिजयसैनी देवी और कुमार बिजयराव के नाम से बीजनोत रखा।

राव बिजयराव ने भटिंडा पर आक्रमण करके यहा के वराह शासक को पराजित किया। लेकिन तुरन्त बाद मे वराहो न लगाओ से सहायता लेकर बिजयराव को युद्ध के लिए ललकारा। अपनी स्थिति का आकलन करन पर राव बिजयराव न शत्रु सेना से अपनी सेना का बल कम पाया। वह कुछ घबराए और तणोत से सैकडो मील दूर, भटिंडा के पास इन्हें किसी प्रकार की सैन्य सहायता की आशा नही थी। हारे को हरिनाम, इन्होंने इस सकट की घडी म कुलदेवी सागियाजी की शरण ली, उन्हे स्मरण किया और आराधना की। देवी सरूप प्रगट हुई, इन्हें विजयी होने का आशीर्वाद दिया और वचन दिया कि वह स्वय अदृश्य रूप से उनके घोडे की कनौति के बीच म बैठकर युद्ध करेगी। राव बिजयराव के भ्रम और शका के समाधान के लिए देवी ने अपने दाहिने हाथ की सान की चूडी उन्हें दी। तभी से यह बिजयराव चुडाला कहलाए। युद्ध म राव बिजयराव की विजय हुई। इसके बाद इन्होंने ईरान, खोरासन से 22 परगने जीते, पवार, वराहो और लगाओ (सोलकी) से राज्य जीते।

पवार राजपूतो की शाखा वराह, देरावर, भटिंडा के आसपास राज्य करती थी। पवारो और भाटियो के आपसी सम्बन्ध अच्छे नही थे, क्योकि भाटियो के राज्य का अधिकाश क्षेत्र पवारो से जीता हुआ था। दोनो जातियो मे राज्य विस्तार के लिए युद्ध चलते रहते थे। भाटियों की शक्ति के सामने पवार कमजोर पडते थे, भाटी इन्ही के राज्य को दबाकर विस्तार करना चाहते थे। भाटियो के आक्रमणो से बचने के लिए और अपने राज्य की सीमा की सुरक्षा के लिए वह भाटियो से वैवाहिक सम्बन्धो को प्रोत्साहन देते थे ताकि शान्ति रह सके और भाटियो के राज्य के विस्तार को सीमित रखा जा सके।

इसी नीति की पालना मे भटिंडा के पवार राजा ने राव बिजयराव चुडाला के पास अपनी पुत्री का विवाह कुमार देवराज के साथ करने के अभिप्राय से नारियल भेजा, जिसे उन्होने सहष स्वीकार कर लिया। उस समय भवर देवराज (इनके दादा राव तणुराव जीवित थे) की आयु केवल पाच वर्ष की थी। देवराज की माता मुट्टीरानी मुट्टोबन (जाघी) के राजा जूजूराव सोलकी की पुत्री थी।

भाटियो और पवारो के सम्बन्ध कभी मधुर नही थे। पवारो ने विवाहोत्सव का अनुचित लाभ उठाया। विवाह के दूसरे दिन वृहद् भोज का आयोजन किया गया। भाटियो ने पवारो पर विश्वास करते हुए सुरक्षा प्रबन्धो पर उचित ध्यान नही दिया और ढील

बरसी। भोज के पश्चात् पवारो ने बारात मे आए हुए भाटियो के साथ विश्वासघात किया, उनके द्वारा किये गये सुसगठित वार ने भाटियो को सम्भलने का अवसर ही नही दिया। इस अचानक किये गए घात मे राव बिजयराव सहित 750 बारातियो को मौत के घाट उतार दिया गया। यह घटना वि स 898 (सन् 841 ई) की है।

राव विजयराव की मृत्यु के तुरन्त बाद स्वामिभक्त नेग आल राईका भवर देवराज को उनकी सास की सहमति से जीवित बचाकर अपनी साढ पर चढाकर भटिण्डा से सुरक्षित ले निकले। कुछ का कहना है कि लूणा पुरोहित उन्हें अपनी साढ पर फलोदी के पास अपने गाव ले गए थे। दोनो बातो का निष्कर्ष यही है कि देवराज सांढ पर चढ कर सुरक्षित चले गए। वराह पवारो ने देवराज को जनवासे मे ढूढा, नही मिलने पर उन्हें शक हुआ। उन्होने जाने माने पागियो को साथ मे लिया और देवराज की साढ का ताबड तोड पीछा किया। भाटियो के ऊट और साढें हमेशा अन्य क्षेत्रो के ऊटो और सांढो की तुलना म ज्यादा श्रेष्ठ, तेज और रेगिस्तान क अनुकूल रहे हैं, इसी प्रकार ऊट की सवारी मे निपुणता म भाटियो और उनके राईको की कही भी बराबरी नही है। आल राईके की साढ लम्बे मार्ग के कारण थक चुकी थी, आल राईका यह कमजोरी भली भाति साढ की चाल से समझ गए थे। उन्होने सोचा कि अगर सांढ़ पर दो के बजाय एक सवार हो जाए, तब सांढ कम थकेगी और उसके पकड़े जाने का प्रश्न ही नही होगा। उन्होने देवराज को वस्तुस्थिति से अवगत कराया और सारी बात समझाई। पोकरण गाव के पास, देवायत पुरोहित के खेत मे से तेज गति से दौड़ती हुई सांढ़ ज्योही जाल के एक घने पेड के नीचे से निकली, पूर्वयोजना के अनुसार देवराज जाल की टहनी पकड कर दौडती हुई साढ़ पर से ऊपर झूल गए और जाल पर छिप गए। साढ उसी गति से आगे निकल गई। जाल से उतर कर देवराज अपने पावो के निशान पडने से बचाते हुए देवायत पुरोहित के पास गये, उन्हें सारी बात समझ मे आ गई। उन्होंने देवराज को खेत में काम कर रहे अपने चार बेटो के साथ काम मे लग जाने का कहा।

कुछ समय पश्चात् साढ़ का पीछा करने वाले वराह और उनके आदमी व पागी भी उसी रास्ते से उसी जाल के नीचे से निकले। कुछ दूरी पर जाकर पागी ने बतलाया कि साढ के पावो के निशान हल्के पड गए थे, पिछले आसन का सवार कम हुआ था। थोडी देर बाद मे वराह लौट कर पुरोहित के खेत मे आए। देवायत पुरोहित बडे धर्म सकट मे पड गए। उन्होंने शरण मे आए हुए भाटी कुमार की रक्षा करना अपना परम धर्म समझा और निश्चय किया कि कुछ भी विपत्ति आये, वह कुमार को बचायेंगे। उन्होने प्रण पक्का किया। वराहो द्वारा साढ़ और उस पर सवार आदमियो के बारे म पूछे जाने पर पुरोहित ने झूठ बताया कि साढ पर दो सवार थे, वह काफी समय पहले तेज गति से उनके खेत में से निकल गई थी। उस सांढ की नस्ल और चाल को देखते हुए उसके सामने उनके ऊट हल्के पडते थे और वह साढ उनसे पकडी नहीं जा सकती। वराह भी चतुर थे। उन्होने खेत मे काम कर रहे उनके बेटों के बारे में पूछा, पुरोहित ने पांच बेटे बताकर फिर झूठ बोला। वराहो को पुरोहित के वचन पर कुछ कम विश्वास हुआ। सयोगवश पुरोहितानी भाता (दोपहर का खाना) लेकर दूर से आती हुई दिखाई दी। वराहो ने सोचा की उसे पूछ कर पुरोहित के

कथन की सच्चाई की पुष्टि की जाये और अगर पांचो भाई एक साथ खाना खाएगे तो सभी पुरोहित के बेटे थे, अन्यथा जो बेटा अलग से खाना खायेगा वह भाटी राजकुमार अवश्य होगा, जिसकी तलाश मे वे आये थे।

पुरोहित फिर संकट मे पड गए। यह उनकी परीक्षा की घडी थी। बडे संयम और चतुराई की आवश्यकता थी। वह पुरोहितानी के गुण और चतुराई जानते थे, फिर भी भय था कि कही वह सच्चाई नही खोल दे, जिससे सारी बात बिगड सकती थी, कुमार के प्राण संकट मे पड सकते थे और उन्हें बचाने का उनका प्रण व्यर्थ हो सकता था। उनकी अजीब मानसिक स्थिति थी और विचारो मे उधेड बुन चल रही थी। पुरोहितानी अभी कुछ दूर ही थी तभी उन्होने आवाज लगाई कि आज बहुत देर कर दी, पाचो छोरे भूख के मारे काम मे मन नही लगा पा रहे थे। पाचो छोरो का सुनते ही और खेत मे इकट्ठे हुए अजनबी आदमियो को देखकर, समझदार और चतुर पुरोहितानी का सिर ठनका, उन्होने सोचा कि वह तो समय पर ही भाता लेकर आई थी और उसके तो चार बेटे थे, यह पाच छोरे कैसे ? पुरोहितानी समस्या की गम्भीरता को भाप गई। वराहा ने पूछा कितने जनो का खाना लेकर आई हो ? उन्होने चतुराई से बाप व प च बेटो का बता दिया। फिर भी वराह यह देखने के लिए बैठे रहे कि क्या खाना सभी एक साथ खायेंगे ? पुरोहित भी उनका मानस समझ रहे थे। उन्होने अत्यत समझदारी का परिचय देते हुए पुरोहितानी से कहा कि सदैव की तरह इन दोनो छोटे छोरो को अलग से खाना डाल दे, हम चारों को अलग से एक साथ डाल दे। वह दूसरा छोटा छोरा देवायत पुरोहित का सबसे छोटा बेटा रतनु था, जिसने कुमार देवराज के साथ खाना खाया। इस प्रकार उन बाप बेटो को साथ मे खाना खाते देखकर वराहो को विश्वास हो गया कि यह तो पुरोहित का ही परिवार था, इनमे राजकुमार नही थे। वह जय रामजी की करके चले गए। इस प्रकार देवायत पुरोहित ने राजकुमार देवराज की वराहो से रक्षा की और भाटी वश को नष्ट होने मे बचाया।

चूकि पुरोहित के बेटे रतनु ने भाटी राजकुमार देवराज के साथ खाना खाया था, इसलिए उन्हें उस समय के पुरोहित समाज की मान्यताओ और परम्पराओं को ध्यान मे रखते हुए अपना समाज और जाति त्यागनी पडी। भाटी समाज की मान्यताओ के अनुसार पुरोहित के साथ खाना खाने के लिए भाटियो को कोई दण्ड नही था। उन्होने यह बहुत बडा सामाजिक बलिदान दिया था। इस प्रकार पहले पुरोहित पिता ने शरणागत के प्राणो की रक्षा करते हुए भाटी वश को बचाया और दूसरे यह जानते हुए कि उनके पुत्र द्वारा राजकुमार के साथ खाना खाने से उसे समाज त्यागना पडेगा और उन्हें हमेशा के लिए एक पुत्र की सेवाओ से वचित होना पडेगा, उन्होने कितना बडा बलिदान किया। उन्होने साहस और धैर्य का अद्भुत परिचय दिया, थोडा सा विचलित होने से उनके प्राण वराहो द्वारा लिए जा सकते थे।

रतनु वहा से अपना देश, समाज और घर छोड कर गुजरात चले गए जहा देयथा चारणो की पुत्री से उनका विवाह हुआ। इनकी सन्तानें रतनु चारण कहलाए, यह भाटियो के प्रमुख बारहठ हुए। भाटियो ने इनके मान, सम्मान, मर्यादा और सेवा मे कभी कमी नही

आने दी। यह भाटियो और रतनु चारणो का सनातन सम्बन्ध पीढियो से चलता आ रहा है और आगे भी चलता रहेगा।

रतनु चारण भाटियो के पोल पाल पाटवी है। पुरोहितो को भी भाटियो ने बडा मान, सम्मान और ऊचे पद दिये, उनमे इनकी अटूट श्रद्धा और अपनापन हमेशा रहा है। आज भी पुरोहित भाटियो को पुत्रवत समझते है।

इसके बाद मे वराह पवारो की सेना ने तणोत पर आक्रमण किया। उस समय बूढे राव तणुराव जीवित थे। पुत्र और पौत्र की अनुपस्थिति मे पूजा-पाठ से अवकाश लेकर उन्होने भाटी सेना का नेतृत्व सम्भाला। इन्होने शत्रु सेना से लोहा लिया, लेकिन भाटी सेना वराहो के सामने नही टिक सकी। आखिर वि स 898 (सन् 841 ई) मे राव तणुराव ने साका किया। भाटी सरदारो ने तणोत के किले के द्वार खोलकर शत्रु सेना पर भयानक आक्रमण किया, केसरिया बाना धारण किए हुए उन्होंने प्राणो की आहुति दी। स्त्रियो ने किले में जौहर की रस्म पूर्ण की। यह कहना गलत है कि बाद के वर्षों मे क्षत्राणिया जौहर इसलिए करती थी कि वह जीवित मुसलमानो के हाथो नही पडे। सती की तरह जौहर एक बलिदान करने की परम्परा थी, ताकि जब पुरुष प्राणो के उत्सर्ग के लिए किले के द्वार खोले तो उन्हें किले मे लौटने का मोह शेष नही रहे। या इसे यो समझें कि क्षत्राणिया अपने प्राणो का बलिदान देने में पुरुषो के बराबर रहती थी। जौहर हिन्दुओ के आपस के युद्धो मे भी हुए थे। यह तणोत का वि स. 898 का साका, भाटियो का पहला साका था। वैसे ईसा की पहली शताब्दी मे गजनी पर खोरासन के शाह के साथ युद्ध करते हुए राजा गजसेन मारे गए थे। गजनी के किले की सुरक्षा का भार उनके चाचा सहदेव ने सम्भाला, शाह की सेना ने एक माह तक किले को घेरे रखा। आखिर सहदेव न साका किया जिसमे दोनो पक्षो के नौ हजार सैनिक काम आए।

इस पराजय के फलस्वरूप भाटियो ने छ गढो, तणोत, भटनेर, मरोठ, केहुरोर, मूमनवाहन और बीजनोत का अधिकार खोया। उन्हें यह सभी गढ छोडने पडे।

राईका नेग आल के कहने से राजकुमार देवराज की माता आदिनाथ की मूर्ति लेकर अपन पीहर चली गई। बचे हुए भाटी मेघाडम्बर छत्र और गजनी का तख्त लेकर अन्यत्र सुरक्षित स्थान पर चले गए। राजकुमार देवराज दस वर्ष तक छिपे रहे। जब वह जवान हो गए तब देवायत पुरोहित भटिंडा गए, वहां वह देवराज की सास रवा से मिले। देवराज के जीवित होने का समाचार सुनकर सास बहुत प्रसन्न हुई। उन्होने जोगीराज रतननाथ की मध्यस्थता से वराहो मे देवराज की सुरक्षा का वचन लिया। सांगा राईका उन्हें उनके ससुराल भटिंडे ले आया। इसी बीच जोगीराज कश्मीर भ्रमण के लिए चले गए। देवराज की सास रवा ने राजकुमार के सोने का प्रबन्ध उसी मेडी मे किया जिसमे जोगीराज सोया करते थे। मेडी मे जोगीराज की झोली मे झरझर कठा और रसकुम्पा रखे हुए थे। एक दिन देवराज की कटार पर रसकूम्पा से रस का छीटा पड गया जिससे वह सोने की हो गई। इस पर देवराज को बडा आश्चर्य हुआ और उनकी उत्सुकता बढ़ी। पाच महीने मेडी मे रहने के पश्चात् एक रात राजकुमार देवराज झरझर कठे और रसकूम्पा वाली

झोली चुराकर अपने नाना राव जूजूराव के पास चले गए, जहां उनकी माता भी थी। जाते हुए उन्होने मेडी मे आग लगादी। जब जोगीराज भ्रमण करके कुछ माह बाद लौटे तो उन्हे सारी बात बताई गई। उन्होने कहा कि जिसकी किस्मत मे लिखा था वही उसे ले गया, चिन्ता नही करो। जोगीराज की कृपा से देवराज ने रसकूम्पा के चमत्कार से अपार दान किया।

राजकुमार देवराज ने उपवास रखे और कुलदेवी नागियाजी की आराधना की, जिससे प्रसन्न होकर देवी ने उन्हें रत्नजडित तलवार भेंट की। कई दिनो तक ननिहाल मे रहने के पश्चात् देवराज ने नाना जूजूराव से भैंस के चमडे जितनी भूमि मागी, जिसकी अनजाने मे उन्होने मोहवश हामी भरली। देवराज ने भैंस के चमडे को पानी मे भिगोकर उसकी पतली लीरी काटी और उससे नाना की काफी भूमि को घेर लिया। उन्होने जब उस भूमि पर अपने नये किले की नीव रखी तब नाना जूजूराव को अपनी भूल का अहसास हुआ। वहा नया किला बनवाना राव जूजूराव को पसन्द नही था। जितना किला दिन मे देवराज बनवाते थे उसे जूजूराव रात मे गिरवा देते। इस सिलसिले से तग आकर देवराज की माता ने अपने पिता से कहा

सुण जजा इक विनती, बैण न पछा लेह।
का मुट्टा का भाटिया, कोट अढातण देह।।

बाद मे देवराज ने धोखा देकर नाना जूजूराव को परास्त किया और देरावर का किला बनवाया।

जोगी रतननाथ पहुचे हुए सिद्ध योगी थे, उन्हें भूत, भविष्य और काल अकाल का ज्ञान था। जब वह पहले पहल देवराज से मिले तब उन्होंने उन्हें उनके द्वारा उनकी झोली चुराने वाली बात बतादी। जोगीराज के आशीर्वाद और चुराये हुए झरझर कठे और रसकुम्पे से प्राप्त द्रव्य से देवराज ने देरावर का किला बनवाया। उस समय के मापदडो और शस्त्रो को देखते हुए यह काफी सुदृढ किला था। छोटी ईंटों से बनाये हुए इस दुर्ग मे 52 बुर्ज हैं, किले के सामने जल सग्रह के लिए पक्के तालाब थे। वि स 909 (सन् 852 ई) मे जब यह किला बनकर सम्पूर्ण हुआ तब जोगीराज रतननाथ ने जनवरी सन् 852 मे इसमे देवराज का विधिपूर्वक राज्याभिषेक किया और इन्हे आशीर्वाद दिया। जोगीराज ने उनसे वचन लिया कि वह और उनके वशज राजतिलक के समय जोगी का भेष धारण करेंगे। यह राजवश की पीढी के 110वें शासक हुए। जोगीराज ने सिद्ध योगी होने के नाते देवराज को अपने नाम से पहले 'सिद्ध' लगाने की अनुमति दी, तब से देवराज 'सिद्ध देवराज' कहलाए। जोगीराज ने उन्हें 'रावल' की उपाधि से सुशोभित किया। इससे पहले भाटियो के प्रमुख, राजा या राव से सम्बोधित होते थे, अब वह 'रावल' से सम्बोधित होने लगे। देवराज ने नये किले का नाम 'देरावल' रखा, जो उनके स्वय के नाम और रावल की उपाधि का सूचक था। कालान्तर मे 'देरावल' का अपभ्रश 'देरावर' बन गया। कर्नल टाड के अनुसार यह किला वि स 909 के माघ सुदी 5 सोमवार (जनवरी, 852 ई) पुरवा नक्षत्र मे बना।

हुए कि लुद्रवे के किले के द्वार से उनके एक सौ से अधिक बाराती प्रवेश नही करेंगे। इसी शर्त मे राजा जसमान मार खा गए। लुद्रवे के विमल पुरोहित उनका अपमान किए जाने के कारण राजा जसमान से रुष्ट थे। लुद्रवे के किले के बारह द्वार थे। रावल ने विमल पुरोहित की सलाह और सहयोग से प्रत्येक द्वार से बनावटी दुल्हो के साथ सौ सौ सैनिक बारातियो को किले मे प्रवेश करवा दिया। इस प्रकार किले मे भाटियो के लगभग 1200 सैनिक घुस गये। भाटियो ने पवारो की ही परम्परा मे उन पर अचानक आक्रमण किया और राजा जसमान को उनके साथियो सहित मार डाला। किले पर पूर्ण अधिकार करके रावल ने दिवगत राव बिजयराव चुडाला और उनके साथियो के साथ भटिंडा म पवारो द्वारा किये गये विश्वासघात का बदला एक सच्चे भाटी पुत्र की तरह लिया।

देरावर के जसकरण नाम के एक व्यापारी को धारदेश के पवार राजा ब्रिजमान ने बन्दी बनाकर यातनाएँ दी। जसकरण ने लौटकर रावल देवराज को अपने शरीर पर जजीरो के निशान दिखाए। इस पर रावल देवराज ने धार नगरी पर विजय प्राप्त करने से पहले अन्न जल ग्रहण नही करने का प्रण किया, किन्तु धार नगरी दूर होने के कारण उसका एक मिट्टी का प्रतीक बनाकर विजय का प्रण पूरा करने की योजना बनाई गई। रावल की सेना मे पांच सौ पवार सैनिक भी थे। उन्होने उनकी धार नगरी के प्रतीक पर विजय करने की योजना मे बाधा खडी कर दी। प्राण रहते हुए उन सैनिको ने उस मिट्टी की धार नगरी की रक्षा की, वह सारे वही काम आए।

जहा पवार थ्यां धार हो, और धार थ्या पवार।
धार बिना पवार नही, और न ही पवार बिना धार।।

बाद मे धार म हुए युद्ध मे राजा ब्रिजभान पवार पराजित हुए और युद्ध मे वह काम आए। पवारो की शक्ति को नष्ट करने के अभियान मे इसके बाद रावल ने राजा दोमट पवार के वशजो से पूगल छीन ली ताकि उनकी पडोस में राजधानी देरावर को खतरा नही रहे।

रावल सिद्ध देवराज थोडे से साथियो और अगरक्षकों के साथ शिकार खेलने गए हुए थ। वहा कही अरोड के बलोचो और छीना राजपूतो ने घात लगाकर आक्रमण कर दिया। इस सघर्ष में अपने साथियो सहित रावल सिद्ध देवराज, वि स 1022 (सन् 965 ई) मे काम आये। उस समय इनकी आयु लगभग एक सौ तीस वर्ष की थी। इनके पाच पुत्र थे। एक पुत्र छीदा के वशज छीदा भाटी हुए।

लुद्रवे विजय के थोडे समय पश्चात् ही रावल सिद्ध देवराज ने वि स 910 (सन् 853 ई) मे सामरिक एव प्रशासनिक कारणो से अपनी राजधानी लुद्रवे मे स्थापित की। मुसलमानो के सिन्ध और पजाब म बढते हुए प्रभाव और आक्रमणो के कारण तणोत और देरावर म राजधानी रखना सुरक्षित नही था। फिर पवार और सोनकी कभी भी मुसलमानो से सहायता लेकर उन पर आक्रमण कर सकते थे। लुद्रवा आने के बाद रावल ने पवारो पर बार-बार आक्रमण करके उनके युद्ध करने के मनोबल और सैन्य शक्ति को नष्ट किया, उनसे नौ कोट (किले) जीते।

पवारो म धरणी वराह बडे प्रतापी राजा हुए थे, इनका राज्य सिन्ध, गुजरात, मेवाड और पजाब तक फैला हुआ था। राजा धरणी वराह ने अपनी सुरक्षा और शासन व्यवस्था

की दृष्टि से राज्य को अत्यन्त वृहद् पाया। इसलिए उन्होंने राज्य को अपने नौ भाइयों मे बाट दिया। तभी से पवारो मे इस राज्य की पहचान नवकूटी मारवाड से थी। मरु प्रदेश का नाम ही मारवाड है। यह नौ कोट थे, (1) मन्डोर, सामन्त को (2) अजमेर, सिन्धु को (3) पूगल, गजमल को (4) लुद्रवा, मान को (5) आबू, आलपाल को (6) जलन्धर (जालोर), भोजराज को (7) धाट (अमरकोट), जोगराज को (8) पारकर (पारपारकर), हसराज को, और नवा किराडू (बाडमेर) अपने पास रखा।

मडोर सावत हुओ, अजमेर सिन्धु सू।
गढ पूगल गजमल हुओ, लुद्रवे मान सू।
आलपाल अर्बुद, भोजराज जालन्धर।
जोगराज धर धाट, हुओ हासु पारक्कर।
नवकोटि किराडू, सतगुल थिर पवार थापिया।
धरणी वराह धर भाईया कोट बाट जू जू किया।।

(मारवाड राज्य का इतिहास, राठोड क्षत्रिय इतिहास, जगदीश सिंह गहलोत।)

इस दोहे मे अजमेर पर आपत्ति है, यह आमेर हो सकता है।
दिरावर थापी दुरग, लुदरवो आप धर लावे।
समवाहता चिप सिन्ध, जूनो पारकर जमावे।
आबू फेरी आण, भट्ट जालोर हू भेजे।
मारे नृप मडोर, गढ अजमेर हू गजे।
पूगल लीनी, प्रगट कतल विठेह कीजिये।
देवराज भूप चढते दिवस रतन आज्ञा धर लीजिये।।

(जैसलमेर की ख्यात परम्परा, सम्पादक नारायणसिंह भाटी)

इस प्रकार रावल सिद्ध देवराज का राज्य उत्तर मे भटिंडा, भटनेर से पश्चिम मे दरावर, केहरोर, मरोठ, बीजनोत, तणोत तक था। और दक्षिण एव पूर्व मे मारवाड के नवो कोट इनके अधिकार मे थे।

रावल सिद्ध देवराज की मृत्यु के पश्चात् इनके पुत्र मुधा (या मध) वि स 1022 (सन् 965 ई) मे 111 वें शासक के रूप मे लुद्रवा की गद्दी पर बैठे। इन्होने अपने पिता को मारने वाले धनुआ, बलोचा और छीना राजपूतो म युद्ध किया, और उन्हें भारी क्षति पहुचा कर 800 शत्रुओ को मारा और सच्चे भाटी की तरह पिता की मौत का बदला लिया।

कुछ इतिहासकारो का मत है कि रावल सिद्ध देवराज के बजाय रावल मुधा राजधानी देरावर से लुद्रवा लाए थे। लेकिन रावल सिद्ध देवराज के राज्य की भौगोलिक स्थिति और विस्तार एव पडोस की शक्ति को देखते हुए यही सभव था कि वही राजधानी लुद्रवा ले आए थे।

रावल मुधा के पश्चात् इनके पुत्र मधजी, वि स 1035 (सन् 978 ई) मे लुद्रवा मे 112 वें शासक बने। रावल मधजी ने सिन्ध नदी के पार के क्षेत्र जीत कर वहा किला

बनवाया, जिसका नाम उन्होने अपने पिता की स्मृति मे मुन्धकोट रखा। यह क्षेत्र लेने के लिए इनका करीम खा बलोच से युद्ध हुआ, जिसमे 500 बलोच मारे गए।

रावल मघजी के पश्चात् इनके पुत्र बाछूजी (बाछा), वि स 1113 (सन् 1056 ई) मे, लुद्रवा मे 113 वें शासक बने। रावल बाछूजी का विवाह पाटन (अन्हिलवाडा) के पवार राजा की पुत्री से चौदह वर्ष की आयु मे हुआ था। महमूद गजनी ने पाटन के राजा को सन् 1025 ई मे परास्त किया, इस युद्ध मे कुमार बाछूजी ने भी भाग लिया था। इनके दुसाजी, सिहराव, बापेराव, इणाद और मूलपोसा नाम के पाच राजकुमार हुए। सिहराव ने अपने नाम से सिन्ध प्रान्त (पाकिस्तान) मे रोहडी नगर से पाच कोस दूर, सिहरोह नगर बसाया और वहा किला बनवाया। यह नगर अभी भी स्थित है और इसी नाम से जाना जाता है। सिहराव के दो पुत्र, सच्चाराय और बाला हुए। सिहराव के पुत्रो के वशज सिहराव भाटी हैं। यह भाटी वर्तमान मे पूगल क्षेत्र के मोतीगढ, जोधासर (डेली तलाई), सियासर, मैकेरी, रामडा आदि गावो मे बसे हुए है।

बापेराव के पुत्र पाहू के पुत्र वीरम के वशज पाहू भाटी हुए। उस समय पूगल क्षेत्र मे जोइया राजपूतो का राज्य था, उनसे युद्ध करके पाहू ने उन्हे पराजित किया और सारे पूगल क्षेत्र पर अधिकार करके, वि स 1103 (सन् 1046 ई) मे, पूगल म अपनी राज धानी स्थापित की। इस क्षेत्र मे पीने के पानी की भयकर समस्या थी, इसके समाधान के लिए पाहू ने अनेक कुए बनवाये। यह कुए इस क्षेत्र मे, 'पाहू के कुए' के नाम से अभी भी जाने जाते हैं।

सिहराव के सिहराव, बापेराव के पाहू, इणादे के इणादा और मूलपोसा के मूलपोसाक भाटी कहलाए।

बापेराव ने खोखरो (पडिहारो) से खारबारा 140 गावो सहित जीता। फिर डब जाल और राणेर का क्षेत्र जीत कर सीमा महाजन तक बढाई। यह सारे गाव पुत्र पाहू को पूगल के राज्य म दिये।

रावल बाछूजी के बडे राजकुमार दुसाजी बडे पराक्रमी योद्धा थे। इनका मेवाड के राणा की राजकुमारी से विवाह हुआ था, पहले की अन्य और रानिया भी थी। नादू (नागौर) मे खीची राजा यादुराय ने बीकमपुर के जैतुग भाटियो को परास्त करके पूगल क्षेत्र मे लूटपाट करनी शुरू करदी थी और सारे क्षेत्र मे अशान्ति फैलाई। कुमार दुसाजी ने यादुराय को परास्त किया जिससे पाहू के पूगल राज्य म शान्ति स्थापित हुई। रावल बाछूजी के अधीन लुद्रवा, पूगल, बीकमपुर, मूमनवाहन, मरोठ, देरावर, आसनकोट, केहरोर और भटनेर के नौ गढ थे।

रावल बाछूजी के बाद मे इनके ज्येष्ठ पुत्र दुसाजी, वि स 1155 (सन् 1098 ई) मे, 114 वें शासक लुद्रवा मे हुए। इनके ज्येष्ठ पुत्र जैसल थे, अन्य पुत्र पवो, विजयराव, पहोड, देसल थे। मेवाडी रानी से दुसाजी को विशेष लगाव और प्रेम था। इन्होने उनक पुत्र विजयराव को राजगद्दी देने का वचन दिया था। इससे जैसल रुष्ट होकर देश छोडकर गुजरात चले गए। पहोड के वशज पहोड भाटी हुए और देसल के वशज अबोहरिया भाटी हुए।

रावल दूसाजी के बाद मे, वि स 1179 (सन् 1122 ई) मे, विजयराव लुद्रवा मे 115 वें शासक बने। इनकी पहली शादी गुजरात के अन्हिलवाडा पाटन के राजा सिद्ध जयसिंह सोलकी की पुत्री से हुई। जब रावल विजयराव पाटन (गुजरात) बारात लेकर गए, वहा उन्होने कौतुहलवश झील मे बडी मात्रा मे केवडा डलवाया ताकि अमीर गरीब सुगन्धित जल पी सकें। तभी से उन्हे 'लांझा' के उपनाम से जाना जाने लगा, ऐसे ही इनके पूर्वज राव विजयराव, 'चुडाला' नाम से जाने जाते थे। रावल विजयराव की दूसरी शादी राजा हावू पवार की पुत्री से हुई। यह रावल बडे दानी, पराक्रमी और वीर योद्धा थे। उस समय भारतवर्ष पर उत्तर और पश्चिम से मुसलमानो के लगातार आक्रमण हो रहे थे, पवारों को भी उत्तर से आक्रमण की आशका थी। महमूद गजनी के सन् 1025 ई के सोमनाथ और अन्हिलवाडा के पवारो पर हुए आक्रमण के पश्चात् गुजरात पर उत्तर पश्चिम से छोटे बडे आक्रमण होते ही रहते थे। उनकी जानकारी से गजनी का शासक उत्तर-पश्चिम से पवारो पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा था। पवार रानी ने दही का तिलक करते हुए विजयराव से कहा, 'बेटा उत्तर दिस भट्ट किवाड हुई', यानि हमारे और उत्तर दिशा के गजनी के शासक के बीच किवाड का काम करना, उन्हें बीच में रोकना। रावल विजयराव ने वचन दिया कि वह आक्रमण को अवश्य रोकेंगे। इनके दानवीर होने के ऊपर किवदन्ती है :

तेसू बडो सूमरा, लांझो बीजेराव।
मागण ऊपर हाथडा, बैरी ऊपर घाव ॥

यह दोहा शाहबुद्दीन मोहम्मद गोरी के लुद्रवे पर आक्रमण के समय कहा गया था। जहा तक दोहे के भाव का प्रश्न है, वह ठीक है। लेकिन इसे ऐतिहासिक तथ्य से नहीं जोडा जा सकता। मोहम्मद गोरी का भारत पर मुलतान मे पहला आक्रमण सन् 1175 ई मे हुआ था, जबकि रावल विजयराव की मृत्यु सन् 1147 ई मे लुद्रवे में हो गई थी और सन् 1156 ई मे राजधानी लुद्रवे से जैसलमेर ले जाई गई थी। यह हो सकता है कि यह दोहा ही किसी बाद के लुद्रवे पर आक्रमण के समय कहा गया हो।

जैसी गजनी मे आक्रमण की पवार रानी को आशका थी वैसा ही हुआ। रावल विजयराव के समय स नगरथट्टे से शाहबुद्दीन गोरी के सेनापति मजेजखां और करीम खां के आक्रमण होने लग गये थे। रावल विजयराव गोरी की सेना का सामना सीमा पर या अन्यत्र कर रहे थे, राजकुमार भोजदेव लुद्रवे की रक्षा के लिए नियुक्त थे। कुमार भोजदेव ने लुद्रवे की रक्षार्थ पचास स्थानो पर शत्रु की सना का सामना किया, उन पर आगे बढकर छापे मारे। उधर रावल विजयराव आक्रमणों को रोकने मे सफल नहीं हो रहे थे, शत्रु सेना लुद्रवे की ओर अग्रसर हो रही थी। आखिर युद्ध लुद्रवे के द्वार पर आ पहुचा। रावल विजयराव युद्ध करते हुए रणखेत रहे। युद्ध के बीच म ही राजकुमार भोजदेव को, वि स 1204 (सन् 1147 ई) मे, 116 वें शासक के रूप म राजगद्दी पर बैठना पडा। नये रावल भी अपने पिता की तरह कुशल सेना नायक और वीर योद्धा थे। वह पाच वर्ष तक लुद्रवे के किले की आक्रमणकारियो से रक्षा करने में सफल रहे। कभी युद्ध मन्दा तो कभी तेज रहता। कभी शत्रु सेना को मो पचास कोस पीछे धकेल देते तो कभी शत्रु सेना आकर किले को घेर लेती थी। उनके

•पिता द्वारा अपनी सास (इनकी नानी) को दिया हुआ वचन, उत्तर दिस भट्ट किवाड़ हुई, बार-बार उन्हे संघर्ष मे जूझते रहने के लिए प्रेरित कर रहा था। लुद्रवे की पराजय से पाटन पर आक्रमण के लिए द्वार खुलता था। आखिर वि. स 1209 (सन् 1152 ई) मे भाटी सेना लुद्रवे मे पराजित हो गई, गौरी की सेना ने लुद्रवे की धन सम्पदा को कई दिन तक लूटा। यह पराजय भाटियो के लुद्रवे आने (सन् 853 ई) के तीन सौ वर्ष बाद मे हुई।

रावल विजयराव के बडे भाई कुमार जैसल जो रुष्ट होकर गुजरात चले गए थे, अपने भतीजे रावल भोजदेव के गिरते हुए मनोबल और घटते हुए सैन्यबल से भयभीत हो उठे। उन्हे उनके देश प्रेम ने देश की सकट की घडी मे उसकी रक्षा के लिए युद्ध करने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होने अपनी सेना को गुजरात से कूच किया और दिन रात चलकर लुद्रवे की रक्षा के लिए शीघ्र पहुचने के यत्न किए। गुजरात के शासको को भी भय था कि लुद्रवे की हार उन पर शत्रुओ के आक्रमण का डर थी। इसलिए लुद्रवे की रक्षा मे उनका हित भी था। हताश जैसल लुद्रवा कुछ दिन देर से पहुचे, तब तक रावल भोजदेव मारे जा चुके थे, भाटी सेना पराजित और अपमानित हो चुकी थी। उन्हे देर से पहुचने का बडा पश्चाताप हुआ और स्वय पर क्रोध आ रहा था।

मजेजखा लूट का माल ऊटो पर लदवा कर नगरथट्टे के लिए कूच करने ही वाला था कि जैसल की थकी भाटी सेना लुद्रवा पहुची। जैसल क्रोधित तो वैसे ही थे, उनके साथी और सेना मजेजखा के आदमियो पर भूखे शेर की तरह टूट पडी। मजेजखा और उसके साथी इस अप्रत्याशित आक्रमण की सोच ही नही सकते थे और न ही वे इसके लिए तैयार थे। युद्ध मे मजेजखा और उसके साथी मारे गए। जैसल ने लूटा हुआ माल वापिस अपने अधिकार मे लिया और बन्दियो को मुक्त कराया। उन्होने लूटा हुआ माल उनके स्वामियो को वापिस लौटाया। जैसल ने अपने आप को रावल भोजदेव के स्थान पर, वि स 1209 (सन् 1152 ई) मे, 117 वा रावल घोषित किया। इस प्रकार भोजदेव की मृत्यु के पश्चात् उनके चाचा जैसल रावल बने, और उन्होने अपना यथोचित अधिकार गहण किया, जिससे उन्हे पिता रावल दूसाजी ने मेवाडी रानी के मोहवश वचित किया था।

वैसे शाहबुद्दीन मोहम्मद गौरी का भारतवर्ष पर पहला बडा आक्रमण मुलतान पर सन् 1175 ई में हुआ था। मुलतान से वह उच्छ (सिन्ध) गए, वहा भाटी राजा को उन्होने परास्त किया। यह भाटी राजा सम्भवत सिहराव के वशज होगे। सिहरावो ने सिन्ध प्रान्त के कुछ क्षेत्र पर सिहरोड के किले स अधिकार कर रखा था। गौरी ने इसके पश्चात् सन् 1182 ई मे दक्षिणी सिन्ध पर आक्रमण किया। पाटन के बघेल शासक भीम *(द्वितीय) ने मोहम्मद गौरी को लोहे* के चने चबाये और बुरी तरह परास्त किया। गौरी के लिए पीछे हटना कठिन हो गया। उनकी इस पराजय का फल उनकी पहले की अनेक विजयो से बहुत ज्यादा महगा पडा। गौरी की सेना जैसलमेर के रेगिस्तान म से बडी कठिनाई से निकली। उसे भाटी बार बार छापे मारकर लूटते रहे और जन धन का नुकसान करते रहे। जो सेना बचकर वापिस गजनी पहुच सकी उसकी बडी दयनीय दशा थी। इस प्रकार गौरी का पाटन पर आक्रमण शर्मनाक व पूर्णतया विफल रहा। भाटियो ने गौरी के छोटे सेनापतियो द्वारा तीस पैतीस वर्ष पहले लुद्रवे पर किए गए आक्रमण का

वदला ब्याज समेत लिया। (Muslim Rule in India, V D Mahajan, Page 66 67)

रावल जैसल ने लुद्रव के किले को सामरिक व सुरक्षा की दृष्टि से सुरक्षित नही पाया, इसलिए वह अपनी राजधानी के लिए नए स्थान की खोज मे निकले। उन्होने सोहनराय भाखर पर नया किला बनाने की सोची ही थी कि तभी उनका साक्षात्कार 120 वर्षीय ईशालु ब्राह्मण से अचानक हो गया। ईशालु ब्राह्मण आचार्यों के कुल से भाटियो के कुल पुरोहित थे। इसलिए रावल जैसल की उनके प्रति श्रद्धा और आस्था स्वत ही हो गई। पुरोहित ने उन्हे गोराहर नामक पहाडी पर किला बनाने की सलाह दी। उन्होने किले के लिए उपयुक्त स्थान की ओर इगित करते हुए बताया कि उस स्थान पर ब्रह्म सरोवर या जहा काक ऋषि ने प्राचीनकाल मे तप किया था। उन्होने यह रहस्योद्घाटन भी किया कि एक समय उस स्थान पर श्रीकृष्ण और अर्जुन घूमते फिरते आए थे। प्रसगवश श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताया कि कलिकाल मे उनके वश का इस मरुक्षेत्र मे राज्य होगा। तब इस स्थान पर भव्य और अजेय दुर्ग बनेगा जिसकी ख्याति अमिट होगी। ऐसा दुर्ग भारतवर्ष मे अन्यत्र नहीं होगा। यहा नगर भी बसेगा। 'जैसलनामा भूपति यदुवशी इक छाय, कोई कालरे अतरे एथ रहसी आय।' अर्जुन द्वारा उस वीरान पत्थरीले क्षेत्र मे पानी के अभाव की ओर सकेत करने पर श्रीकृष्ण ने एक शिलाखण्ड बताकर उसके नीचे एक कूप मे अथाह जल बताया। आचार्य ईशालु ने रावल जैसल को कूप का वह स्थान दिखाया, उसके ऊपर रखे शिलाखण्ड पर शिलालेख बताया, जिसम श्रीकृष्ण की भविष्यवाणी अकित थी। इस वर्णन से रावल जैसल अत्यन्त प्रभावित हुए। उन्होने उसी स्थान पर किला बनवाने का निश्चय किया। क्योकि वह पहाडी त्रिकोण थी इसलिए किला भी त्रिकूटा बना।

नये त्रिकूटाचल दुर्ग और नगर की प्रतिष्ठा (नीव) श्रावण शुक्ला द्वादशी, रविवार, वि स 1212 (सन् 1156 ई) मे रखी गई। इसमे ईशालु आचार्य का अत्यन्त सहयोग और आशीर्वाद रहा। रावल जैसल ने ईशालु को किले के समीप पश्चिम मे काफी भूमि दान म दी। अभी भी इस भूमि के खेत, ईशालु के खेत, के नाम से जाने जाते हैं। इस नय दुर्ग और नगर का नाम रावल जैसल के नाम पर जैसलमेर रखा गया। दुर्ग का निर्माण कार्य आरम्भ होने पर भाटियो की राजधानी लुद्रवा से जैसलमेर लाई गई, वह पिछले आठ सौ वर्षों म वही है।

जैसलमेर का वर्तमान किला और उसकी रूपरेखा व बनावट वह नही है जिसे रावल जैसल ने बनवाया था। कालान्तर मे उसी किले के स्थान पर रावल भीम (सन् 1577–1613 ई) ने नए किले का निर्माण शुरू करवाया, जिसे रावल मनोहरदास (सन् 1631–1649 ई) ने पूर्ण करवाया। इस किले मे 99 बुर्ज हैं।

वह अतीत का युग, अशान्ति का युग था। उत्तर-पश्चिम से भारतवर्ष पर लगातार आक्रमण हो रहे थे, कुछ आक्रमण बडे और सुनियोजित होते थे, कुछ आक्रमण छोटे सरदार अपना भाग्य अजमाने के लिए भी करते थ। रावल जैसल वि स 1225 (सन् 1168 ई) मे खिजरखा बलोच के साथ युद्ध करते हुए अरावली पहाडो के क्षेत्र म मारे गए। इनके प्रमुख, पाहु भाटी, ज्येष्ठ पुत्र केलण से राजी नही थे, इसलिए उन्होंने उन्हे राजगद्दी नही

लेने दी, उनके छोटे भाई शालिवाहन को रावल बनाया। रावल शालिवाहन (द्वितीय) ने उनके पिता द्वारा प्रतिष्ठित किले का कार्य सम्पूर्ण करवाया। रावल शालिवाहन (द्वितीय) को, वि स 1225 (सन् 1168 ई) मे, जैसलमेर की गद्दी पर 118 वें शासक के रूप मे बैठाया गया था।

रावल शालिवाहन सिरोही के शासक मानसिंह देवडा की पुत्री से विवाह करने गए हुए थे। इनकी अनुपस्थिति मे इनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बीजल ने अपने धाभाई के साथ षड्यन्त्र करके अपने आपको जैसलमेर का रावल घोषित कर दिया। रावल शालिवाहन को इस घटना की सूचना सिरोही मे मिल गई थी, इसलिए पिता पुत्र के संघर्ष को टालने की नीयत से वह जैसलमेर लौटने के बजाय देवडी रानी के साथ देरावर (खडाल) चले गए। वहा वह किले मे रहने लगे। कुछ समय पश्चात् सन् 1190 ई. मे खिजरखा बलोच ने खडाल प्रदेश पर आक्रमण किया। रावल शालिवाहन देरावर मे किले की रक्षा करते हुए युद्ध मे तीन सौ साथियो सहित मारे गए। रावल शालिवाहन (प्रथम) के पन्द्रह पुत्रो मे से कुछ ने पजाब की पहाडियो मे नाहन और सिरमौर के राज्य स्थापित किये थे। कालचक्र ने ऐसी विपदा खडी की कि इन राज्यों का कोई उत्तराधिकारी नही बचा। इसलिए वहा से सम्भ्रान्त व्यक्तियो की परिषद रावल शालिवाहन (द्वितीय) से उत्तराधिकारी मागने जैसलमेर आई। रावल ने अपने छोटे पुत्र चन्द्रसेन और पौत्र मनरूप को उनके परिवारो के साथ परिषद के साथ भेजा। कुमार चन्द्रसेन नाहन सिरमौर नही पहुचे, मार्ग मे उपयुक्त स्थान पर ठहर गए। वहा उन्होने अपने लिए नए राज्य कपूरथला की स्थापना की। कुछ समय पश्चात् इनके वशजो ने पटियाला राज्य स्थापित किया। इस प्रकार कपूरथला और पटियाला राज्यो का राजवश भाटी कुल से है, यह चन्द्रसेन के वशज हैं।

कुमार मनरूप का नाहन सिरमौर पहुचने से पहले मार्ग मे देहान्त हो गया। उस समय उनकी युवरानी गर्भवती थी। मार्ग मे एक पलास के पेड के नीचे जगल मे उन्होने पुत्र को जन्म दिया। यह कुमार बडे होकर नाहन सिरमौर के शासक बने। क्योकि युवरानी का प्रसव पलास के पेड के नीचे हुआ था इसलिए कुमार मनरूप के वशज पलासिया भाटी कहलाए। जयपुर के महाराजा भवानीसिंह की पत्नी महारानी पद्मावती पलासिया भाटी वश की हैं।

कुछ समय पश्चात् रावल बीजल भी षड्यन्त्रकारी धाभाई के तलवार के वार से मारे गए। इस प्रकार 119 वे शासक रावल बीजल नही रहे।

रावल बीजल के बाद, रावल शालिवाहन के बडे भाई केलण, जिन्हे रावल जैसल की मृत्यु के बाद राजगद्दी स वचित रखा गया था, को बुलाकर जिन्हें रावल बनाया गया। यह 120 वें शासक, वि स 1247 (सन् 1190 ई) मे, बने। इनके राज्यकाल मे खिजरखा बलोच ने एक बार फिर से जैसलमेर के खडाल प्रदेश पर बडा आक्रमण किया। पहले रावल जैसल और शालिवाहन के समय की भाति विजयश्री खिजरखा बलोच के पक्ष म नहीं रही, वह सन् 1205 ई मे रावल केलण के हाथो युद्ध मे मारे गए। इस प्रकार रावल केलण ने उनके पिता और भाई को मारने वाले शत्रु से बदला चुकाया। रावल केलण ने सन् 1218 ई तक निर्भीक राज्य किया। रावल के दूसरे पुत्र पलहान के वशज जसोड भाटी कहलाए, तीसरे पुत्र जयचन्द के वशज सीहड भाटी हुए।

रावल केलण के पश्चात्, वि सं 1275 (सन् 1218 ई) मे, रावल चाचगदेव 121 वें शासक हुए। इन्हें सोढा, छीना और बलोच डाकुओ से प्रजा के जान माल की रक्षा के लिए बार बार लोहा लेना पडता था एव इन्हें मार भगाने के लिए या पकडने के लिए उनका पीछा करना पडता था। एक बार छीना और सोढा डाकुओं के 1600 आदमियो के एक गिरोह ने बुलाकीदास भाटिया साहूकार के पाच लाख रुपये सिन्ध और जैसलमेर के मार्ग मे लूट लिए। यह सारा रुपया रावल ने लुटेरो से छीन कर वापिस बुलाकीदास को दिया। सोढों (पवारो) को दड देने के लिए इन्होने अमरकोट पर अचानक आक्रमण कर दिया। राणा उरमसी ने अपनी पुत्री इन्हें ब्याहकर सन्धि की। राठौड लगभग सन् 1000 ई मे खेड मे आए थे। इन्होंने वहा गहलोतो का स्थान लिया और उपद्रव मचाने लगे। उधर अमरकोट के राणा को परेशान करने लगे। अमरकोट के राणो को छीदा और उनके पुत्र टीडा आदि राठौड भी परेशान करने लगे। रावल चाचगदेव ने उन्ह कडी चेतावनी देकर, सोढों की सहायता से जसोल और बालोतरा पर आक्रमण करके उन्हें शान्त किया। राठोडो ने टीडा की पुत्री रावल चाचगदेव के ब्याह कर भाटियों और सोढों से सन्धि की। उस समय सिन्ध के धाट क्षेत्र पर उमडा-सूमडा सोढो (पवारो) का राज्य था।

इनकी मृत्यु वि स 1299 (सन् 1242 ई) मे हुई। इनके एक मात्र पुत्र तेजराव की चेचक से मृत्यु हो गई थी। तेजराव के जैतसी और करण, दो पुत्र थे। रावल चाचगदेव की इच्छा थी कि इनके बाद मे ज्येष्ठ पौत्र जैतसी को रावल नही बनाकर, करण को रावल बनाया जावे। रावल करण ने नागौर के शासक मुज्फरखा को मारकर वराह राजपूत भगवतीदास की कन्याओ को उनके हाथो से मुक्त कराया।

रावल करण की मृत्यु के पश्चात् इनके पुत्र राजकुमार लखनसेन, वि स 1340 (सन् 1283 ई) मे, राजगद्दी पर बैठे। यह 123 वें शासक हुए। इनकी मन्दबुद्धि थी, इनके कृत्य मूर्खों जैसे थे। इन्होने वि स 1345 (सन् 1288 ई) तक केवल पाच वर्ष राज्य किया। इसके बाद मे इन्हें गद्दी से उतार दिया गया। इनके शासनकाल मे कोई महत्त्वपूर्ण घटना नही घटी।

रावल लखनसेन के बाद उनके पुत्र राजकुमार पूनपाल (या पुण्यपाल), वि सं 1345 (सन् 1288 ई) मे, 124 वें शासक बने। इनकी स्वतन्त्र प्रकृति और उग्र व क्रुद्ध स्वभाव के कारण प्रमुख सामन्त इनसे राजी नहीं थे। यह अनावश्यक हस्तक्षेप और गुटबाजी के विरुद्ध थे। इन्हे अपने काम मे मतलब था और प्रजा को तग करने वाले या कुप्रबन्ध करने वाले सामन्तों को दण्ड भी देते थे। पहले के शासको के समय की तरह सामन्तों और प्रमुख सरदारो की नही चलती थी। यह सामन्त दुर्गादजो, माणकमल, बीकमसी सीहड भाटी आदि थे।

जब रावल चाचगदेव ने अपने ज्येष्ठ पौत्र जैतसी को राजगद्दी से वचित कर दिया था, तब वह रुष्ट होकर जैसलमेर छोडकर गुजरात चले गए, जहा उन्होने पाटन के मुसलमान शासक के यहा नौकरी करली। प्रमुख सामन्तों एव बीकमसी सीहड से उन्हें पूनपाल के स्थान पर रावल बनाने का आश्वासन मिलने पर वह पाटन के शासक की सेवा छोडकर

वापिस जैसलमेर आ गए। सुलतान बलबन के समय (सन् 1266 85 ई) उसने रावल लखनसेन (सन् 1283-88 ई) से देरावर, जैतूंग से वीकमपुर और पाहू भाटियों से पूगल छीन लिए थे। कुछ दिनों के लिए रावल पूनपाल, जैतूंग और पाहू भाटियों की लगा और बलोचों के विरुद्ध सहायता करने के लिए वीकमपुर और पूगल क्षेत्र मे गए हुए थे। लगा और बलोच मुलतान के शासकों की शह से वहा भाटियो को परेशान कर रहे थे। रावल पूनपाल की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर असन्तुष्ट सामन्तो ने जैतसी को राजगद्दी पर बैठाकर तिलक कर दिया और नगारे बजवा दिये। यह रावल पूनपाल के दादा करण के बड़े भाई थे। गजनी तख्त के प्रहरियो, उत्तेराव, जमोड और सिहराव भाटियो ने जैतसी को रावल पूनपाल के वीकमपुर, पूगल क्षेत्र से लौटने तक इस तख्त पर बैठने नही दिया।

जब रावल पूनपाल कुछ समय बाद जैसलमेर लौटे तो वह इनके विरुद्ध इस षड्यन्त्र को जानकर दग रह गए। प्रमुख सरदारों और सामन्तो के इनके पक्ष मे नहीं होने के कारण इन्होने लड़ाई झगड़ा करना उचित नही समझा। इनके विरोधियो ने इन्हें पूगल की ओर पलायन करने की सलाह दी। रावल पूनपाल ने जैसलमेर छोडने से पहले राज चिह्न के स्वरूप गजनी के लकडी के तख्त को उन्हे देने की माग की। इतने से मे शान्ति से झगडा फसाद की बला को टलते हुए जानकर इन्हें विरोधियो ने गजनी का तख्त दे दिया। इसे साथ लेकर वह वीकमपुर, पूगल की ओर अपने साथियो सहित चल पडे। इन्होने केवल दो वर्ष पाच माह राज्य किया था।

जैतसी वि स 1347 (सन् 1290 ई) मे जैसलमेर के रावल बने। यह 125 वें शासक हुए। मडोर के शासक रूपसी पडिहार को मुसलमानो ने परास्त कर दिया था रावल जैतसी न रूपसी व उनकी बारह पुत्रियो को बारू क्षेत्र मे शरण दी।

जैसलमर के भाटियो के दिल्ली के शासका से सम्बन्ध नही थे। रावल जैतसी के समय दिल्ली के शासक जलालुद्दीन खिलजी (सन् 1290–1296 ई) थे। भाटी लोग मुलतान की सेना और शाही कोष के सिन्ध व मुलतान प्रान्तो से आवागमन मे बाधा डालते थे। वह उनकी रसद और खजाना लूट लेते थे। सिन्ध और मुलतान का दिल्ली के लिए मार्ग भाटी राज्य मे स होकर था। एक बार सिन्ध म थट्टा और मुलतान से दिल्ली ले जाये जा रहे करोडो रुपयो के खजाने को भाटियो ने पजनद के पास लूट लिया और पठान रक्षकों को मार भगाया। यह जानकर दिल्ली के शासक भाटियो से बहुत क्रुद्ध हुए। उन्होने नवाब महबूब खा और कमलुद्दीन के नेतृत्व म एक बडी सेना भाटियो को दण्डित करने के लिए जैसलमर भेजी और भाटियो से खजाना वापिस लेने के उन्हे आदेश दिए। यह आक्रमण वि स 1350 (सन् 1293 ई) म हुआ था। भाटियो द्वारा दण्ड भोगना या खजाना लौटाना तो दूर रहा, उन्होन शाही सेना से युद्ध करने की ठान ली।

रावल जैतसी के ज्येष्ठ पुत्र मूलराज और दूसरे पुत्र रतनसी उनके साथ किले मे रहे। मूलराज के पुत्र देवराज और देवराज के तीसरे पुत्र हमीर ने किले के बाहर मोर्चा सम्भाला। हमीर की माता जालौर की सोनगरी थी। इन्होने सेनानायक कमलुद्दीन के कई आक्रमण किले के बाहर ही विफल कर दिये। घमासान युद्ध चलता रहा, दोनो ओर के कई शूरमा काम आए। किले के बाहर का नेतृत्व सम्भालने वाले पिता पुत्र देवराज और हमीर

ने अदम्य साहस, सूझ बूझ और वीरता दिखाई। छापामार युद्ध स शत्रुओ की रसद लूटने और पानी के स्रोत नष्ट किये जाने से शत्रु परेशान थे। अन्तत युद्ध करते हुए पिता न वीरगति पाई। यह आक्रमण भाटियो के लिए प्राणनाशक था। युद्ध के बीच मे रावल जैतसी की किले मे मृत्यु हो गई। वि स 1350 (सन् 1294 ई) म, मूलराज (द्वितीय) का राज्याभिषेक किया गया। यह 126 वें शासक हुए। रावल जैतसी केवल तीन वर्ष रावल रहे।

किले के लम्बे समय तक घेरे म रहने के कारण राणा रतनसी और नवाब महबूब खा मे मित्रता हो गई थी, वह किले के बाहर खेजडे के नीचे शतरज खेला करते थे। इस भाईचारे के व्यवहार को जानकर दिल्ली के सुलतान नाराज हुए। रावल मूलराज ने युद्ध म सब कुछ दाव पर लगा दिया लेकिन युद्ध उनके पक्ष म मोड नहीं ले रहा था। किले म राडाल, बाडमेर और अमरकोट से रसद की कमी, घटती सैनिक शक्ति और अन्य साज सामान की कमी से रक्षको का मनोबल भी गिर रहा था। युद्ध को आरम्भ हुए एक साल हान को आया था, आखिर मूलराज ने बीकमसी और सीहड भाटियो से सलाह करके साका करन का निर्णय लिया। राणा रतनसी के घडसी और कानडदे दो पुत्र थे, इन्हें उन्होने नवाब महबूब खा को साके से पहले सुरक्षा के लिए सौंप दिया। स्त्रियो ने किले म जौहर की तैयारी की, इधर वीर योद्धाओ ने केसरिया बाना धारण किया और रावल मूलराज व राणा रतनसी के नेतृत्व मे किले के द्वार खोलकर अपने 3800 सैनिकों सहित शत्रु पर टूट पडे। क्याकि भाटी योद्धा सब कुछ दाव पर लगा चुके थे इसलिए उनके लिए पीछे मुडने का मोह रहा ही नही। अपनी सेना सहित दोनो भाई लडते हुए रणखेत रहे। नवाब महबूब खा ने दोनो भाईयो के दाह सस्कार करवाए। हमीर पायल अवस्था से बच गए थे। मुसलमानो के हाथ खाक लगी, शाही खजाने का अतापता देने वाला कोई शेष नही रहा। यह दूसरा साका वि स 1351 (सन् 1294 ई) म हुआ। भाटियो का पहला साका राव तणुजी के समय तणोत म, वि स 898 (सन् 841 ई) मे, 450 वर्ष पहले हुआ था।

शाह फिरोज जलाल, मूलरत्न, जै जैशान गढ।
शाके कीध कराल, तेहरसे इकावन।

रावल मूलराज के पुत्र देवराज के पुत्र हमीर और पौत्र अर्जुन के वशज हमीरोत और अर्जुनोत भाटी हुए।

इस प्रकार भाटियो का दूसरा साका जैसलमर मे वि स 1351 (सन् 1294 ई) म हुआ। खिलजी की सेना को किले मे धधकती आग, अगारो और राख के सिवाय कुछ नहीं मिला। शाही सेना के कुछ सैनिक थोडे समय तक किले म ठहरे लेकिन वहा किसी प्रकार का आकर्षण नही होने से वह ताला लगाकर चले गये।

रावल मूलराज की वीरगति के बाद षड्यत्र रचकर सूने पडे किले म कुछ समय बाद, वि स 1352 (सन् 1295 ई) म, मेहवा के मल्लीनाथ के पुत्र जगमाल राठौड ने किले पर अधिकार करने की योजना बनाई। इसे विफल करके अवसर का लाभ उठाकर दूदा जसोड भाटी राजगद्दी पर बैठ गए। यह 127 वें शासक हुए। इन्होने क्षतिग्रस्त किले की मरम्मत भी करवाई। इनके भाई तिलोकसी भाटी पराक्रमी, वीर और साहस के धनी थे। इन्होने एक दिन अजमेर के पास अनासागर म स्थित, दिल्ली के सुलतान के घोडो के पार्श

पर छापा मारकर अच्छे अच्छे घोडे-घोडिया जैसलमेर की ओर हाक लिए। इस दिलेरी की खबर जब दिल्ली मे सुलतान को मिली तो उसके क्रोध का कोई ठिकाना नही रहा। दूसरी तरफ सुलतान अल्लाऊद्दीन खिलजी (सन् 1296–1316 ई) आतकित और चिंतित भी हुए कि अगर भाटी इस प्रकार की दिलेरी और दुस्साहस अजमेर पर कर सकते थे तो उनके लिए दिल्ली कितनी दूर थी? उन्होने मन ही मन उनके सामर्थ्य को सराहा भी होगा। उन्होने अपने श्वसुर और चाचा जलालुद्दीन की भाति एक शक्तिशाली सेना जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिए भेजी और आदेश दिए कि भाटियो को दण्डित करके शाही घाडे वापिस लाये जाए। यह आक्रमण वि स. 1362 (सन् 1305 ई) म किया गया। पहले की तरह भाटियो ने किले की सुदृढ किलेबन्दी की, शाही सेना लम्ब समय तक किले के चारो ओर घेरा डाल बैठी रही।

आखिर आक्रमण की पहल भाटियो ने ही की। वीर रावल दूदा जसोड न साका करने का निर्णय लिया, यह भाटियो की शौर्यपूर्ण गाथा की एक परम्परा बन गई। प्रश्न भाटी होने का था, चाहे वह भाटी किसी वश या शाखा का हो। किले म स्त्रियो ने जौहर की तैयारी की, इधर रावल दूदा और उसके साथियो न केसरिया बाना पहन कर किले क द्वार खोले और शत्रु सेना पर तन मन से टूट पडे। रावल दूदा और तिलोकसी सहित 1700 भाटी योद्धा काम आये। दिल्ली की सेना हाथ मलती हुई रह गई, कोई भाटी दण्ड देने को नही मिला और न ही शाही फार्म के घोडे दिखाई दिये।

खिलजी अल्लाउद्दीन, दुर्जनसाल तिलोकसी।
शाकौ भारी कीन, तेरे सौ बासठ से।

यह साका वि स 1362, चैत्र माह की एकादशी को हुआ।

इस प्रकार भाटियो का यह तीसरा साका, जैसलमेर मे केवल दस वर्ष के छोटे अन्तराल मे हुआ। इससे पहले के दूसरे साके (सन् 1294 ई) मे मारे गए योद्धाओ के बालक अभी जवान ही नही हुए थे, कईयो की शादिया अभी होने को थी और कईयो के भावी योद्धा पैदा होने को थे। लेकिन इन सभी कच्ची उम्र के युवको ने प्राणो की आहुति दे डाली। इस बार सुलतान की सेना ने जैसलमेर पर अधिकार करके सीधा प्रशासन करना शुरू कर दिया। दिल्ली के सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी का सीधा प्रशासन ग्यारह वर्ष, उनके देहान्त सन् 1316 ई तक रहा।

रावल दूदा जसाडा की मृत्यु के बाद, रावल मूलराज के छोटे भाई राणा रतनसी के पुत्र कुमार घडसी, वि स 1362 (सन् 1305 ई) मे, रावल बने। चूकि जैसलमेर राज्य दिल्ली के प्रशासन मे था इसलिए रावल घडसी ग्यारह वर्ष, सन् 1316 ई तक, बीकमपुर मे रहे। इन्हे हमीर की सहमति से रावल बनाया गया था। वैसे हमीर रावल मूलराज के पौत्र होने के नाते राजगद्दी के अधिकारी थे। घडसी हमीर के एक पीढी दूर के चाचा थे। घडसी उचित अवसर की तलाश म रहे कि कैसे जैसलमेर लिया जाये। उन्होने एक विवाह मेहवा के राठौड मालदेव (मल्लीनाथ) की विधवा बुआ विमला देवी से सन् 1305 ई मे किया। उस समय विधवा विवाह को राजपूत समाज स्वीकार करता था, आज की तरह हीन दृष्टि से नही देखता था, यह कुरीति बाद म समायी है। विमला देवी की सगाई सिरोही

के देवडो के यहा हुई थी। रावल घडसी एक युद्ध से घायल आ रहे थे, उपचार के लिए मेहवा म रुक गए। वहा विमला देवी न इनकी सेवा की और इनके साथ सहवास हो गया। इसलिए इन दोनो को विवाह करना पडा। विमला देवी पति के देहान्त होने से विधवा नही हुई थी। रावल मालदेव और उनके राजकुमार जगमाल की दिल्ली म अच्छी मान्यता थी, उनके कहने सुनने पर दिल्ली के शासक कुतुबुद्दीन मुबारक शाह न जैसलमेर का शासन घडसी का, वि स 1373 (सन् 1316 ई) म, सौंपा। लेकिन अल्लाऊद्दीन खिलजी ने अपनी मृत्यु, 2 जनवरी, सन् 1316 ई, तक जैसलमेर भाटियो को नहीं लौटाया। घडसी यदुवश के 128 वें शासक थे, इन्होन सैतालीस वर्ष राज्य किया।

रावल घडसी एक दिन गडीसर तालाब से लौट रहे थे कि तेजसी नाम के एक जसोड भाटी ने इनका रास्ते मे वार करके वध कर दिया। जसोड भाटी का इनका वध करने का एकमात्र ध्येय यही था कि पूर्व के रावल दूदा जसोड की तरह पुन जसोड भाटी रावल बनें। वह मूर्ख रावल दूदा के जैसलमर के लिए किय गये बलिदान को भूल गया होगा। रावल घडसी की मृत्यु वि स 1418 (सन् 1361 ई) मे हुई।

रावल घडसी के कोई सन्तान नहीं थी, इसलिए उनकी विधवा रानी विमला देवी न रावल मूलराज के पौत्र और देवराज के पुत्र कुमार केहर को गाद लिया। इनकी माता मडोर के राव रूपसी पडिहार की पुत्री थी। सन् 1294 ई के साके स पहले कुमार केहर अपनी माता के साथ ननिहाल चले गय थ। वह वहा गायें चराने ग्वालो के साथ जाया करते थे। जगल म आक के डोको से बछडो पर घोडे से भाला मारन का अभ्यास करते थे। एक दिन वह जगल म सोये हुए थे, उनके ऊपर सर्प ने अपने फन से छाया कर रखी थी। यह दृश्य एक बारठ ने देखा और इनकी माता और रानी विमला देवी को बताया। इससे प्रभावित हो कर रानी विमला देवी ने केहर को गोद ले लिया। केहर, हमीर के छोटे भाई थे। हमीर ने रानी के पति घडसी के पक्ष मे स्वय के रावल बनने के अधिकार का त्याग किया था, इसलिए रानी ने केहर को इस शर्त पर गोद लिया कि उनके (केहर के) बाद म हमीर के पुत्र जैतसी या लूणकरण को वह अपना उत्तराधिकारी बनायेंगे। कुमार केहर वि स 1418 (सन् 1361 ई) म रावल बन, यह 129 वें शासक हुए। इन्होन वि स 1453 (सन् 1396 ई) तक, 35 वर्ष राज्य किया। यह बडे दानी, पराक्रमी योद्धा और कुशल प्रशासक थे। इनके बारह पुत्र थे। इनके समय भाटियो का राज्य उत्तर म भटिंडा, भटनेर तक, पश्चिम मे सतलज, पजनद और सिन्ध नदियों के पूर्वी छोर तक, पूर्व म नागौर, जालोर, मालाणी तक, और दक्षिण की सीमा सोढाण से लगती थी। इनके समय राठौड राज्य अपनी शैशव अवस्था मे थे, वह यदाकदा किलो के स्वामी थे और भाटियो के आश्रित थे। राठौडो का एक शक्ति के रूप मे उदय होना अभी लगभग 100 वर्ष दूर था।

रावल केहर अपने ज्येष्ठ पुत्र केलण के स्थान पर तीसरे पुत्र लक्ष्मण को राजगद्दी देना चाहते थे। केलण नाम को ही वरदान था कि उन्ह राजगद्दी के वचित रहना पडा। रावल जैसल के पुत्र केलण को भी इसी प्रकार सन् 1168 ई मे, लगभग 230 वर्ष पहले, राजगद्दी के वचित रहना पडा था। चाहे बाद मे उन्ह अपना अधिकार मिल गया हो। एक

बात और थी, भाटियों के ज्येष्ठ पुत्र ने राजगद्दी के लिए कभी पिता के विरुद्ध विद्रोह नहीं किया। यह भाटियों के पुत्रों में अच्छे संस्कारों के कारण हुआ।

राजकुमार केलण अपने मुखिया सातल सिंहराव और साथियों के साथ आसनकोट चले गये, जहां से वह रावल केहर की मृत्यु के पश्चात्, पूगल के राव रणकदेव की सहमति से बीकमपुर में रहने लगे। पूगल के प्रथम राव रणकदेव की मृत्यु के पश्चात् उनकी सोढी रानी ने पेमणा को बीकमपुर भेज कर केलण को बुलवाया और उन्हें गोद लेकर पूगल का द्वितीय राव बनाया। राव रणकदेव जैसलमेर के पदच्युत रावल पूनपाल के पड़पौत्र थे यह संघर्ष करके वि. सं. 1437 (सन् 1380 ई.) में पूगल के राव बने थे, इनकी मृत्यु वि. स. 1471 (सन् 1414 ई.) में हुई और इसी वर्ष राव केलण पूगल के राव बने। यह पूगल के अत्यन्त यशस्वी और पराक्रमी राव हुए। इन्होंने पूगल राज्य की सीमा पूर्व में नागौर, उत्तर में भटिंडा, भटनेर, पश्चिम में सिंध, पंजनद, सतलज नदियों और इनके पार केहरोर, दुनियापुर, डेरा गाजीखां, डेरा इस्माइल खां तक फैलाई। इन्होंने सन् 1418 ई. में नागौर के शासक राव चूंडा को मारकर उनसे राव रणकदेव और उनके पुत्र सार्दूल की मृत्यु का बदला लिया।

राव केलण सहित पूगल में केलण भाटियों की 26 पीढियां हुई है। वर्तमान राव संगतसिंह 26 वें राव हैं। यह केवल नाम मात्र के राव हैं, इनके पास शासनाधिकार कभी नहीं रहे। वैसे यदुवंश की पीढियों में यह 155 वीं पीढी पर है, जैसलमेर के वर्तमान महारावल ब्रजराज सिंह यदुवंश की 157 वीं पीढी के शासक हैं।

सन् 1396 ई. (वि. सं. 1453) में रावल केहर के तीसरे पुत्र, कुमार लक्ष्मण, 130 वें शासक हुए। इन्होंने सन् 1396 से 1427 ई. तक शासन किया। इनके समय में मेवाड़ का एक ब्राह्मण भूमि से प्रकट हुई श्री लक्ष्मीनाथ जी की एक मूर्ति लेकर जैसलमेर आया, जिसे रावल ने मन्दिर बना कर सत्कार के साथ प्रतिष्ठापित किया।

रावल लक्ष्मण के बाद में इनके पुत्र बैरसी, वि. सं. 1484 (सन् 1427 ई.) में, 131 वें शासक राजगद्दी पर बैठे, इन्होंने सन् 1448 ई. तक, 21 वर्ष शासन किया।

इनके बाद में इनके पुत्र कुमार चाचगदेव वि. सं. 1505 (सन् 1448 ई.) में, 132 वें रावल बने, इन्होंने 19 वर्ष, सन् 1467 ई. तक राज्य किया। इनका 11 वां विवाह अमरकोट के राणा की राजकुमारी से हुआ था। जब विवाह कर के यह बारात और राणी के साथ जैसलमेर लौट रहे थे तब अमरकोट के सोढों ने इन्हें घात लगाकर मार डाला।

रावल चाचगदेव की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र कुमार देवीदास, वि. सं. 1524 (सन् 1467 ई.) में, 133 वें शासक बने। इन्होंने 57 वर्ष, सन् 1524 ई. तक राज्य किया। इन्होंने पिता रावल चाचगदेव की मृत्यु का बदला लेने के लिए अमरकोट के सोढ़ों पर आक्रमण किया, युद्ध में राणा माडण को मारा और अमरकोट की सम्पत्ति को लूटा। बदले की भावना लूट-पाट और मार-काट से ही पूरी नहीं हुई। राणा के महल को गिरवा कर उसकी ईंटें और पत्थर जैसलमेर लाये, जहां उन्हें देवासर महल में लगवाया गया। रावल देवीदास का एक विवाह बीकानेर के राव बीका राठौड़ की पुत्री से हुआ था। इन्हीं रानी के पुत्र कुमार नरसिंग को देशद्रोह के लिए जैसलमेर से देश निकाल दिया गया था।

जब बीकानेर के राव लूणकरण ने जैसलमेर पर आक्रमण किया तब इन्होंने बीकानेर की सेना का साथ दिया था।

रावल देवीदास के पश्चात्, वि स 1581 (सन् 1524 ई) मे, जैतसी 134 वें शासक बने। इन्होंने सन् 1548, 24 वर्ष, तक राज्य किया। इनके शासनकाल मे अमरकोट के सोढा और बाडमेरा राठौड स्वतत्र रूप से व्यवहार करने लगे थे, वह अपने और पडोस के जैसलमेर क्षेत्र मे उत्पात मचाने लगे। इनके द्वितीय पुत्र ने कधार जाकर अपने मित्र काबुल के शासक से इन उत्पातियो को दबाने के लिए सैनिक सहायता मागी। काबुल के शासन ने कधार से 1000 घुडसवार सैनिक सहायतार्थ भेजे।

बाबर के आक्रमण, सन् 1526 ई , से पहले भाटियो का राज्य उत्तर म सतलज व्यास नदी (पुरानी गाराह) तक, पश्चिम मे मेहरान (सिन्ध) और पजनद नदियो तक, पूर्व म वर्तमान बीकानेर तक, दक्षिण मे बाडमेर, कोटडा का कुल प्रदेश, मालाणी, धाट तक था। लगभग यही सीमाए महारावल जसवतसिंह (सन् 1702-1707 ई.) के शासनकाल तक रही।

इनके पश्चात् रावल लूणकरण, वि स 1605 (सन् 1548 ई) म, 135 वें शासक हुए। ज्यो ज्यो पश्चिम के सिन्ध और पजाब प्रान्तो मे मुसलमानो के आक्रमण, प्रभाव और शासन बढे, अनेक राजपूतो न व्यक्तिगत या सामूहिक तौर पर इस्लाम धर्म स्वीकार किया। ऐसा उन्हे युद्धो मे पराजय या विपरीत परिस्थितियो के कारण करना पडता था, स्वेच्छा से नही। धर्म परिवर्तन करने वालो मे भाटी राजपूत अधिक थे। इसलिए रावल लूणकरण न हिन्दुओ से मुसलमान बने हुए राजपूतो को पुन वैदिक रीति मे हिन्दू धर्म मे मिलाने के लिए एक बहुत बडा यज्ञ करवाया। अनेक राजपूत वापिस हिन्दू बन, लेकिन मूल हिन्दुओ ने इन्हे स्वच्छ भावना से स्वीकार नही किया, आपस का अलगाव और कडवाहट बनी रही। वैसे रावल लूणकरण का अभिप्राय सही था कि अगर राजपूत इस प्रकार धर्म परिवर्तन करेंगे तो जहा एक तरफ हिन्दुत्व का क्षय होगा, वहा दूसरी तरफ राजपूत सेना के लिए सैनिक वहा से आयेंगे। फिर राजपूतों के उधर जाने से मुसलमानो की नसल मे सुधार होगा जो हिन्दुओ के लिए घातक सिद्ध होगी।

रावल लूणकरण की दो पुत्रियो, भारमति और उमादे, का विवाह मारवाड के शासक राव मालदेव के साथ हुआ था। राव मालदेव के भारमति के साथ अनुचित व्यवहार से उमादे उनसे रूठ गई थी और जीवन भर उनसे बोली तक नही। उमादे इतिहास मे 'रूठी रानी' के नाम से प्रसिद्ध है। राव मालदेव की मृत्यु पर यह रानी उनके साथ सती हुई। रावल लूणकरण का एक विवाह बीकानेर के राव लूणकरण की पुत्री अमृतकवर के साथ हुआ था।

रावल लूणकरण के पश्चात् रावल मालदव (सन् 1551-61 ई), हरराज (सन् 1561-1577 ई), भीम (सन् 1577-1613 ई.), कल्याणदास (सन् 1613-1631 ई), महेशदास या मनोहरदास (सन् 1631-1649 ई) मे हुए। रावल मालदेव का विवाह बीकानेर के राव जैतसी की पुत्री राजकवर से, रावल हरराज का विवाह बीकानेर के राव कल्याणमल की पुत्री मानकंवर से, और रावल भीम का विवाह भी बीकानेर के राजा

रायसिंह की बहन फूलकवर से हुआ था। जैसलमेर के विश्व प्रसिद्ध वर्तमान किले का निर्माण कार्य रावल भीम ने आरम्भ करवाया था, जिसे रावल मनोहरदास ने सम्पूर्ण करवाया।

रावल हरराज की एक पुत्री नाथी बाई का विवाह दिल्ली के बादशाह अकबर स दूसरी पुत्री गगाबाई का बीकानेर के राजा रायसिंह से और तीसरी पुत्री चम्पादे का बीकानेर के राजा रायसिंह के छोटे भाई कवि पृथ्वीराज से हुआ था। पृथ्वीराज एव रानी चम्पादे, जो स्वय कवियत्री थी, का यह कवित्त सम्वाद काफी प्रसिद्ध है.

पृथ्वीराज पीथल धोला आवियो, बहुरी लागी खोड।
चन्द्र बदन मृगलोचिनी, ऊभी मुख मरोड।।
चम्पादे धर रज जूना धोरिया, पथज धग्गां पाव।
नरा तुरा अर दिगम्बरां, पाका पाका साव।।

रावल महेशदास प्रतापी रावल हुए, इन्होने सिन्ध नदी पर सक्खर, रोहडी तक और पूर्व मे बाडमेर तक राज्य की सीमाएँ बढाकर जैसलमेर को सशक्त राज्य बनाया। इन्होने पूर्व मे महेचो और पश्चिम मे बलोचो के विद्रोहो को कडाई से दबाया।

बादशाह अकबर रावल हरराज की पुत्री नाथीबाई को ब्याहकर बहुत प्रसन्न हुए क्योंकि उनका यह भाटी राजवश के घराने से पहला वैवाहिक सम्बन्ध था। इसी उपलक्ष्य मे उन्होने फलौदी और पोकरण के परगने मारवाड से लेकर रावल हरराज को दिए।

रावल कल्याणदास के समय रावल भीम की राठौड रानी फूलकवर के पुत्र नाथू को जहर देकर मार दिया गया था। वह रुष्ट होकर राजकीय आभूषण, हीरे, जवाहरात आदि लेकर अपने पीहर बीकानेर, राजा सूरसिंह के पास चली आई थी। बादशाह जहागीर ने जमाल मोहम्मद को बीकानेर की रानी गगाबाई के पास भेजा कि वह अपनी ननद फूलकवर को समझाकर जैसलमेर के राजघराने के आभूषण आदि लौटाए। रावल कल्याणदास उडीसा के सूबेदार भी रहे।

रावल मनोहरदास के पश्चात् दत्तक पुत्र रामचन्द्र रावल बने। उनके गोद आन के विवाद का सबलसिंह के पक्ष मे निर्णय होने से उन्होने जैसलमेर की राजगद्दी के लिए बादशाह शाहजहा से फरमान प्राप्त करके, रावल रामचन्द्र (सन् 1649-50) को पदच्युत किया। इनके रावल बनने के प्रयास मे जैसलमेर राज्य ने पोकरण का परगना खोया। सबलसिंह किशनगढ के राठौडो की सेवा म थे और उनकी सहायता से ही उन्हे जैसलमेर का फरमान मिला।

रावल सबलसिंह (सन् 1650-59 ई) समझदार शासक थे। उन्होन पदच्युत रावल रामचन्द्र को नाराज करना उचित नही समझा। इसलिए उन्होने पूगल के राव सुदरसेन को समझा बुझाकर और आग्रह करके रावल रामचन्द्र को सन् 1650 ई म ही पूगल के अधीन देरावर आदि का पश्चिमी क्षेत्र दिलवाया। यह क्षेत्र इतना विस्तृत था कि बाद म इसी राज्य का नाम बदल कर बहावलपुर राज्य स्थापित किया गया। रावल रामचन्द्र ने देरावर मे केवल 10 माह और बीस दिन राज्य किया। उसके पश्चात् उनका देहान्त हो गया। रावल सबलसिंह ने व्यर्थ मे ही रावल रामचन्द्र को पदच्युत करके अपयश कमाया और पूगल से एक बडा भू भाग उन्हे दिलवाकर पूगल की स्थाई हानि की। देरावर भविष्य मे

कभी पूगल को नही मिला। रावल रामचन्द्र के वशजो न पाच पीढी, सन् 1650 से 1763 ई तक देरावर म राज किया, उसके बाद दाऊद पुत्रा न उनसे इसे छीनकर बहावलपुर का राज्य स्थापित किया। रावल सबलसिह का विवाह भूकरका (बीकानर) के राव की पुत्री सारदे से हुआ था। देरावर राज्य को रावल रामचन्द्र और उनक वशजो को हस्तान्तरण करने से बीकानेर के राजा करणसिह बहुत खिन्न हुए। उन्होन सन् 1665 ई म पूगल पर आक्रमण करके राव सुदरसेन को मार डाला।

रावल सबलसिह के पश्चात् वि स 1716 (सन् 1659 ई) म अमरसिह महारावल बने। इनके शासनकाल म सिन्ध प्रान्त के बलोचो और छीना ने वहा भारी विद्रोह किया। उन्होंने जैसलमेर के सीमास्थ कई क्षेत्रो पर अधिकार कर रोहडी के किले पर आक्रमण करके उसे घेर लिया। कई दिनो की घेराबन्दी के बाद भी वहा के भाटी किलेदार न समर्पण नही किया। आखिर जब किले को बचाने या बाहरी सहायता पहुचने की कोई आशा नही रही तब उसने साका करने का निर्णय लिया। स्त्रियो न किले मे जौहर की तैयारी की और भाटी योद्धाओ ने केसरिया बाना पहनकर किले के द्वार खोल दिए। जहां योद्धाओ ने युद्ध करके वीरगति पाई, वही रमणियो ने जौहर करके उनका साथ दिया। भाटियो का सन् 1702 ई म यह चौथा साका था। आज भी रोहडी नगर की वह उत्तुग पहाडी सतियों के नाम से सिन्ध प्रान्त मे विख्यात है। प्रतिवर्ष चैत्रमास की पूर्णमासी को वहा बडा मेला लगता था, जहा इन सतियो की पूजा अर्चना की जाती थी। अब यह मेला लगता है या नही, पता नही है।

जौहर के अगले दिन ही महारावल अमरसिह सना सहित वहा पहुच गए। उन्ह साके का बडा पश्चाताप रहा। वह एक दिन के विलम्ब के लिए अपने आप को कोसते रहे। उन्होंने बलोच और छीना विद्रोहियो को परास्त करके विजयश्री प्राप्त की और रोहडी के किले पर पुन अधिकार किया। जैसलमेर के भाटियो का यह चौथा साका था। भारतवर्ष के राज्यो के इतिहास म ऐसा एक भी उदाहरण नही है जहा एक ही राजवश मे चार बार जौहर और साके हुए हो।

सिन्ध के अमीर न उनके और जैसलमेर क बीच होन वाले सीमा सम्बन्धी विवादो और झगडो को समाप्त करन के उद्देश्य से महारावल अमरसिह स सीमा सन्धि तय की। इसक अनुसार सक्खर, भाक्खर, रोहडी, शाहकोट की भूमि, इसके किले एव पूरा क्षेत्र जैसलमेर का हो गया। इसी प्रकार इस क्षेत्र के उत्तर पूर्व म पडने वाल किल भी जैसलमेर के मान लिए गए। उपरोक्त क्षेत्र के पश्चिम म पडने वाले किल अमीर के अधीन माने गए।

पूगल के राव सुदरसेन को बीकानर के राजा करणसिह ने आक्रमण करके सन् 1665 ई म मार दिया। महारावल अमरसिह से यह सहन नही हुआ, उन्होने उचित अवसर देखकर सन् 1670 ई म राजा करणसिह से पूगल बल प्रयोग से मुक्त कराया और राव गणेशदास को उनकी पैतृक गद्दी दिलवाई।

महारावल अमरसिह न अपनी प्रजा की सिचाई सुविधा हेतु सिन्ध प्रान्त के अपन क्षेत्र मे सिन्ध नदी से नहर का निर्माण करवाया। इस नहर का नाम अमरवस नहर था।

इनके पश्चात् जसवन्तसिंह (1702-07 ई), बुध सिंह (1707-09 ई), तेजसिंह (1709-1717 ई), सवाईसिंह (1717-18 ई.) और अखैसिंह (1718 62 ई) महारावल बने। यह सब कमजोर शासक थे, पहले चार का राज्यकाल थोड़ा होने से यह शासकों की भूमिका निभाने में असमर्थ रहे। महारावल जसवन्तसिंह के समय मे राठौड़ो ने फलौदी और बाड़मेर छीन लिये। अखैसिंह के समय म दाऊद पुत्रो ने भाटियो से पश्चिम की सीमा के खड़ाल और देरावर क्षेत्र पर अधिकार कर लिया।

महारावल अखैसिंह के शासनकाल मे उनके पुत्रो और भाईयो म राज्य के लिए गृह युद्ध चलता रहा। इस आपसी गृह कलह और फूट का लाभ उठाकर शिकारपुर के अफगान सेनापति दाऊदखा ने बहावलपुर राज्य की नीव डाली, उसन जैसलमेर से खड़ाल और रावल रामचन्द्र के वशजो स देरावर छीन लिया। मारवाड के राठौड़ो न भी भाटियो की कमजोरी का लाभ उठाते हुए उनस फलौदी और बाड़मेर ले लिय।

महारावल मूलराज (तृतीय) (सन् 1762-1820 ई) ने 12 दिसम्बर, 1818 ई मे ईस्ट इडिया कम्पनी स मैत्री सन्धि की। जैसलमेर इस सन्धि पर हस्ताक्षर करन वाला अन्तिम राज्य था। इन्होने बहावलपुर के नवाब बहावलखा से दीनगढ का किला छीन कर इसका नाम बदलकर किशनगढ़ रखा। मारवाड ने शिव और कोटडा क्षेत्र जैसलमेर को लौटाने का वचन दिया था इसके बदले मे बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के कहने पर जैसलमेर ने मारवाड के शासक मानसिंह को जालोर म आर्थिक सहायता भी पहुचाई थी, लेकिन वह अपना वचन पूरा नही कर सके।

इनके पश्चात् प्रधानमन्त्री सालमसिंह मेहता ने अवयस्क गजसिंह (सन् 1820 45 ई) को महारावल बनाया। सालमसिंह मेहता ने बालक महारावल के शासनकाल मे उस समय के दो करोड रुपयो के बराबर की सम्पत्ति अर्जित कर ली और बडी क्रूरता और अनीति से शासन किया। महारावल का विवाह मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह की पुत्री स हुआ था। सालमसिंह मेहता की साजिश से बारात चार छ माह देर से लौटी। इस अवधि म सालमसिंह न अपनी गगनचुम्बी भव्य हवेली बनवा ली। यह हवेली विश्व विख्यात 'सालमसिंह की हवेली' कहलाती है और जैसलमेर के किले के बाद यह वहा आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। लेकिन अत्याचार, अन्याय पर खडी नीव अस्थाई होती है। अन्ना भाटी पूगलिया (खीया भाटी) ने सालमसिंह का अन्याय समाप्त करने के लिए कार्तिक, वि स 1880 (सन् 1823 ई) मे इनका वध कर दिया।

पूगल के राव रामसिंह को बीकानेर के महाराजा रतनसिंह न सन् 1830 ई म पूगल पर आक्रमण करके मार दिया। इसलिए थोडे समय के लिए पूगल बीकानेर के अधिकार मे चला गया। राजकुमार रणजीतसिंह और करणीसिंह बचकर जैसलमेर चले गए, जहा महारावल गजसिंह ने उन्हे उचित सम्मान दिया। पूगल पर उपरोक्त आक्रमण के कुछ माह पहले महाराजा रतनसिंह ने महारावल गजसिंह के साथ उदयपुर मे हुई अनबन की रजिश के कारण जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिए अमरचन्द सुराणा और ठाकुर बैरीसालसिंह महाजन के नेतृत्व मे सेना भेजी। जैसलमेर की सेना के सेनापति सामन्त साहब खां ने इस सेना पर रात्रि मे अचानक आक्रमण करके इसे परास्त किया। बीकानेर की सेना की यह

बड़ी करारी और शर्मनाक हार थी। अमरचन्द सुराणा इस आक्रमण मे मारे गए, युद्ध स्थल पर इनकी छतरी बनी हुई है। एक दूसरा युद्ध बासनपीर गांव के पास हुआ, जिसमे बीकानेर की सेना मे हड़कम्प मच गया और वह जान बचाकर साज-सामान वहीं छोड़कर तितर-बितर हो गई। बासनपीर की हार के लिए एक दोहा कहा गया है

मेह न भूले मेदणी, रक न भूले रांव।
पसी भूले न पाडको, बागनपीर बीकांण।।

क्योंकि सन् 1818 ई की सन्धि के बाद बीकानेर की सेना ने जैसलमेर की सीमा का उल्लघन करके उस पर आक्रमण किया था, इसलिए जैसलमेर शासन ने ब्रिटिश शासन से बीकानेर के विरुद्ध शिकायत की। इसकी जाच मिस्टर एडवर्ड ट्रेविलियन ने की। उन्होने बीकानेर के महाराजा रतन सिंह को सीमा का आक्रमण करके उल्लघन करने का दोषी ठहराते हुए, बीकानेर राज्य पर ढाई लाख रुपये का जुर्माना तय किया और निर्णय दिया कि यह रकम क्षतिपूर्ति हेतु जैसलमेर राज्य को अदा की जाये। महारावल गजसिंह को धन के लालच से ज्यादा ख्याल पूगल का था। उन्होने ढाई लाख रुपये के बदले मिस्टर ट्रेविलियन से निवेदन किया कि बीकानेर पूगल को उसके वारिसो को सम्मानपूर्वक लौटा दे और राजकुमार रणजीतसिंह को, जो उनके सरक्षण मे थे, पूगल के राव की मान्यता दे दे। यह निवेदन न्यायोचित होने के कारण मान लिया गया। महाराजा रतनसिंह ने सन् 1835 ई मे दिए हुए उपरोक्त आदेशों की पालना सन् 1837 ई मे बड़े बेमन से की।

कर्नल बलारोट पहले यूरोपियन अधिकारी थे जो सन् 1831 ई मे जैसलमेर पहुचे। इसके बाद सन् 1837 ई मे लड़लो जैसलमेर आये। अग्रेजो की सहायता से शाहगढ और घोटारू क्षेत्र बहावलपुर से वापिस जैसलमेर राज्य को मिले। महारावल ने इनके नाम बलदेवगढ और देवगढ रखे। इन दोनो किलो का किलेदार सरदारमल पुरोहित को बनाया गया। महारावल ने जैसलमेर के पुष्करणो का सबसे बड़ा पद व सम्मान व्यास ईश्वरलाल को दिया।

महारावल गजसिंह के बाद रणजीतसिंह महारावल बने (सन् 1845-63 ई)। इन्होने राज्य म शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित की और कई पक्के घाट व बाध बनवाये, जाटों और बिश्नोइयो को राज्य के बाहर से बुलाकर बसाया, खेती करने के लिए उन्हे अनेक सुविधाए दी। इन्ही के शासनकाल मे सन् 1857 ई का स्वतन्त्रता युद्ध हुआ, इन्होने जोधपुर के महाराजा मानसिंह का साथ देकर इन्हें पूरा सहयोग दिया।

इनके पश्चात् बैरीसाल सिंह (सन् 1863-91 ई), शालीवाहन सिंह (तृतीय) (सन् 1891-1914 ई) और जवाहर सिंह (सन् 1914-1949 ई) महारावल बने।

सन् 1947 ई मे स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद मे महारावल गिरधरसिंह (सन् 1949-50 ई) और महारावल रघुनाथसिंह (सन् 1950-1982 ई) हुए। महाराजकुमार ब्रजराजसिंह सन् 1982 ई. मे राजगद्दी पर बैठे, यह सन् 1987 ई मे वयस्क हुए।

महारावल ब्रजराजसिंह की रावल केहर के बाद मे 29वी पीढ़ी है और पूगल के राव सगतसिंह की रावल केहर से 27वी पीढ़ी है। चन्द्रवश की जैसलमेर की 157 वी पीढी है

और पूगल की 155वीं पीढ़ी है। इन पीढ़ियों में वह शासक भी हैं, जिन्हें गोद लिया गया, पदच्युत किया गया, पुन: अधिकार प्राप्त किया आदि।

जैसलमेर के गढ़ की ख्याति में किसी कवि ने कहा है:

गढ़ दिल्ली, गढ़ आगरो, अधगढ़ बीकानेर।
भलो चिणायो भाटियां, सिरेज जैसलमेर।।

जैसलमेर के किले की चर्चा करते हुए भाटी इस दोहे को कहते हुए पूर्ववर्ती दुर्गों का स्मरण करते हैं:

काशी, मथुरा, प्राग वड, गजनी, गढ़ भटनेर।
दिगम- देरावल, लुद्रवो, नवों जैसलमेर।।

इस प्रकार यह विख्यात नौ गढ़ थे, जैसलमेर नवां गढ़ था, जिसे नमस्कार है।

भाटियों के गजनी से पूगल तक के संघर्ष का संक्षिप्त वर्णन

पाठकों की सुविधा के लिए यह आवश्यक है कि उपरोक्त पृष्ठों में दिए गए वर्णन को संक्षिप्त रूप में दुबारा लिखा जाये ताकि वह एक दृष्टि में सारी घटनाओं को समझ सकें। भाटियों के राज्य का पंजाब में उत्थान और पतन लगभग तीन सौ वर्षों से अधिक समय तक चलता रहा। भाटी शासक बार-बार प्रयास करके पुनः अफगानिस्तान और पंजाब में स्थाई अधिकार जमाना चाहते थे, जिसे शत्रु संयुक्त रूप से विफल करते रहे।

1 राजा गजसेन ने ईसा की पहली शताब्दी में गजनी का सुदृढ किला बनवाया। सीरिया, बक्त्रिया के शासकों द्वारा किये गए दूसरे आक्रमण में राजा गजसेन परास्त हुए, मारे गए, गजनी का किला शत्रुओं के अधिकार में चला गया।

2 राजा शालिवाहन (प्रथम) लाहौर से शासन करने लगे। उन्होंने गजनी के शासक जलालुद्दीन को मारकर राजा गज की मृत्यु का बदला लिया और सन् 194 ई. में गजनी पर भाटियों का पुनः अधिकार हो गया। उन्होंने 33 वर्ष तक राज्य किया, वह अपने पुत्र बालबन्ध को गजनी सौंप कर स्वयं लाहौर लौट आए थे।

3. राजा शालिवाहन की मृत्यु के पश्चात् कुमार बालबन्ध ने गजनी का शासन अपने पौत्र चकीता को सौंपा और स्वयं लाहौर आ गए। चकीता ने बलख बोखारा के राजघराने में शादी करली, कालान्तर में इनके वंशज चकीता (चुगताई) मुगल हुए। शाहबुद्दीन मोहम्मद गौरी चकीता मुगल थे, जिन्होंने सन् 1192 ई. में सम्राट पृथ्वीराज चौहान को हराकर दिल्ली पर शासन किया। इस प्रकार गजनी प्रान्त का राज्य राजा बालबन्ध के सीधे नियन्त्रण से निकलकर चकीता के वंशजों के अधिकार में चला गया।

4 बालबन्ध के पुत्र भाटी, यदुवंश के 90 वें शासक, सन् 279 ई. में लाहौर के शासक हुए। यह राजा भाटी, भाटी वंश के संस्थापक और आदिपुरुष थे।

5 राजा भाटी के पुत्र भूपत, यदुवंश के 91 वें शासक, गजनी के राजा धुन्ध से युद्ध में हार गए। इसलिए इन्हें लाहौर छोड़कर लाखी जंगल की शरण लेनी पड़ी। इन्होंने सन् 295 ई. में भटनेर का वर्तमान किला बनवाया। मिहराव ने सिरसा और हंसपत ने हिसार नगर बसाये।

6 92 वें शासक भीम (सन् 338 ई.), 93 वें शासक सातेराव (सन् 359 ई.) और 94 वें शासक खेमकरण (सन् 397 ई.) ने भटनेर से शासन किया। राजा खेमकरण का विवाह पूगल के राजा दोमट पवार की पुत्री से हुआ था। इन्होंने खेमकरण नगर—

बसाया। इनके एक पुत्र अभयराज ने अबोहर नगर बसाया था। इनके वंशज कालान्तर में अबोहरिया भाटी मुसलमान कहलाए।

7 95 वें शासक नरपत ने सन् 425 ई. में लाहौर पर पुनः अधिकार किया। राजा धुन्ध के वंशजों से गजनी वापिस ली।

8 96 वें शासक गजु, सन् 465 ई. में लाहौर में हुए। यह राजकुमार लोमनराव को लाहौर सौंप कर स्वयं गजनी चले गए थे।

9 97 वें शासक लोमनराव के समय, सन् 474 ई. में, ईरान और खोरासन की सेनाओं ने आक्रमण किया। भाटियों ने गजनी तीसरी बार और लाहौर दूसरी बार खोया। यह भाटियों की पंजाब और गजनी में अन्तिम पराजय थी, भविष्य में भाटियों के अधिकार में यह क्षेत्र फिर कभी नहीं आए।

10 राजा लोमनराव के पुत्र रणसी मेघाडम्बर छत्र, गजनी का तख्त, आदिनाथ की मूर्ति अपने साथ लेकर एक बार फिर लाखी जंगल की शरण में गए। 98 वें शासक रणसी सन् 478 ई. में हुए। 99 वें शासक भोजसी, सन् 499 ई., ने अपना राज्य पुनः प्राप्त करने के लिए अनेक प्रयास किए लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली।

11 राजा भोजसी के पुत्र मंगलराव, 100 वें शासक, ने सन् 519 ई. में मूमनवाहन का किला बनवाया और नगर बसाया। लेकिन यह अभी कमजोर थे इसलिए पड़ोसी लंगाओं ने उन्हें पराजित करके मूमनवाहन का किला इनसे छीन लिया।

12 राजा मंडराव, सन् 559 ई. में, 101 वें शासक बने। इन्होंने सन् 599 ई. में मरोठ का किला बनवाया और नगर बसाया। इस प्रकार 80 वर्ष बाद में इस क्षेत्र में भाटियों का मूमनवाहन के बाद में दूसरा किला बना।

13 102 वें शासक सूरसेन, सन् 610 ई., 103 वें शासक रघुराव, सन् 645 ई., 104 वें शासक मूलराज (प्रथम), सन् 656 ई., 105 वें शासक उदैराव, सन् 682 ई., और 106 वें शासक मझमराव, सन् 731 ई. में हुए। राव मझमराव और इन पांचों शासकों ने सन् 599 ई. से मरोठ से शासन किया।

14 राव मूलराज ने मूमनवाहन और भटनेर के किले पुनः जीते। भटनेर का किला, जिसे सन् 474 ई. में राजा लोमनराव ने खोया था, भाटी लगभग 200 वर्षों बाद सन् 656 ई. के बाद में, सात पीढ़ियों के बाद वापिस प्राप्त कर सके। इसी प्रकार भाटी 150 वर्ष और चार पीढ़ियों बाद में मूमनवाहन के किले पर पुनः अधिकार कर सके।

15. राव मझमराव के पुत्र कुमार केहर ने सन् 731 ई. में सतलज नदी के पश्चिम में मुलतान के द्वार पर केहरोर का किला बनवाया। 107 वें शासक राव केहर, सन् 759 ई. में मरोठ की राजगद्दी पर आये। इन्होंने सन् 770 ई. में तणोत का किला बनवाया और राजधानी मरोठ से तणोत ले गए। इस प्रकार 171 वर्ष, सन् 599 ई. से सन् 770 ई. तक, मरोठ सात पीढ़ियों तक भाटियों की राजधानी रही।

16 राव तणुजी 108 वें शासक, सन् 805 ई. में, तणोत में हुए। इन्होंने सन्

820 ई मे राज-राज त्याग दिया और ईश्वर भक्ति मे अपना समय व्यतीत किया। इनके राजकुमार जैतूंग के वंशज जैतूंग भाटी हुए।

17 राव विजयराव 109 वें शासक, सन् 820 ई मे हुए। इन्होने बीजनोत का किला बनवाया। सागियाजी की कृपा से वह 'चुड़ाला' कहलाए और उनकी कृपा से इन्होने अनेक युद्धो मे ईरान, खोरासन से 22 परगने जीते और पवार वराहो के राज्य जीते। भटिंडा के पवार राजा ने इनके कुमार देवराज का विवाह करने के बाद मे इन्हे षड्यन्त्र रचकर मार डाला। पवारो ने भाटियो से भटनेर, मरोठ, मूमनवाहन, केहरोर, बीजनोत, तणोत के किले छीन लिये। पवार और लंगाओ ने विजयराव को सन् 841 ई मे भटिंडा मे मारकर तणोत पर आक्रमण किया। उस समय राव तणुजी जीवित थे, उन्होने भाटी सेना का नेतृत्व सम्भाल कर भाटियो द्वारा पहले साके का आह्वान किया।

18 जोगीराज रतननाथ की कृपा से देवराज ने सन् 852 ई मे देरावल के किले की प्रतिष्ठा की, उनसे 'सिद्ध' का विशेषण और 'रावल' की पदवी पायी। 110 वें शासक रावल सिद्ध देवराज ने देरावल को राजधानी बनाकर शासन किया। उन्होने भटिंडा, भटनेर, मूमनवाहन, मरोठ, बीजनोत और तणोत के भाटियो के किले फिर से जीते। जसमान पवार की पुत्री से विवाह करके उनसे छल से लुद्रवे का किला जीता। इन्होने सन् 857 ई मे पवारों से पूगल जीती। सन् 853 ई मे वह अपनी राजधानी देवरावर से लुद्रवे ले गए।

19 रावल सिद्ध देवराज के पश्चात्, मुधा, सन् 965 ई मे, 111 वें, मगजी, सन् 978 ई मे 112 वे, और बाछूजी, सन् 1056 ई मे 113 वें शासक हुए। रावल बाछूजी के वंशज सिहराव और पाहू भाटी हुए।

20 रावल दुसाजी, सन् 1098 मे 114 वें, लाखो विजेराव, सन् 1122 ई मे 115 वें और भोजदेव सन् 1147 ई मे 116 वें शासक हुए।

21 इसके पश्चात् सन् 1152 ई मे रावल जैसल लुद्रवे मे 117 वें शासक हुए। इन्होने लुद्रवो मे राजधानी रखना सामरिक दृष्टि से उचित नही समझा। इसलिए वह राजधानी के लिए उपयुक्त स्थान की खोज मे निकले। आचार्य इशालु की सलाह से त्रिकूटा पहाड़ी पर सन् 1156 ई. मे जैसलमेर के किले की प्रतिष्ठा कराई और पास मे नगर बसाया।

22 रावल जैसल के पश्चात्, सन् 1168 ई मे शालिवाहन (द्वितीय), 118 वें शासक, सन् 1190 ई मे. बीजल 119 वें शासक, सन् 1190 ई मे केलण 120 वें, सन् 1218 ई मे, चाचगदेव 121 वें, सन् 1242 ई मे करण 122 वें और सन् 1283 ई मे लखनसेन 123 वें शासक हुए।

रावल शालिवाहन के वंशज कपूरथला, पटियाला, सिरमौर और नाहन गए, वहा राज्य स्थापित करके शासन किया।

23 सन् 1288 ई मे राजगद्दी पर बैठे, 124 वें शासक, रावल पूनपाल को सामन्तो ने षड्यन्त्र करके, सन् 1290 ई मे, राजगद्दी से पदच्युत किया। इनके पडपौत्र रणकदेव, सन् 1380 ई मे पूगल के प्रथम राव बने। तब से आज तक लगातार पूगल पर

इन्ही के वशज केलण भाटियो का अटूट राज रहा है। इस प्रकार केलणो का पूगल पर पिछले 600 वर्षों से राज है।

24 रावल पूनपाल को पदच्युत करके सन् 1290 ई मे जैतसी को 125 वा शासक बनाया। इनके समय मे भाटियो ने दिल्ली के सुलतान जलालुद्दीन खिलजी का करोडो रुपये का खजाना सिन्ध प्रान्त से दिल्ली ले जाते हुए लूट लिया था। खिलजी की सेना ने जैसलमेर के किले पर आक्रमण करके उसके घेरा लगा दिया। युद्ध के दौरान रावल जैतसी का किले मे स्वर्गवास हो गया। सन् 1294 ई मे मूलराज (द्वितीय) रावल बने। यह 126 वें शासक हुए। इनके समय सन् 1294 ई मे जैसलमेर मे पहला और भाटियो द्वारा दूसरा साका और जौहर हुआ।

25 रावल मूलराज के बाद सन् 1295 ई मे राठौडो के एक षड्यन्त्र को विफल करके दूदा जैतूग जैसलमेर के रावल और 127 वें शासक बने। इनके भाई तिलोकसी ने अजमेर के पास अनासागर से दिल्ली के शासक के घोडे छीन लिये। इससे क्रोधित होकर सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी ने जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिए सेना भेजी। इस सेना ने लम्बे समय तक जैसलमेर के किले को घेरे रखा। आखिर रावल दूदा ने विरोचित निर्णय लिया, सन् 1305 ई मे भाटियो का तीसरा और जैसलमेर का दूसरा साका, पहले साके के केवल दस वर्ष के अन्तराल से हुआ।

26 रावल दूदा के पश्चात् 11 वर्ष तक, सन् 1305-1316 ई, जैसलमेर दिल्ली के सीधे प्रशासन के अन्तर्गत रहा। सन् 1316 ई मे रावल घडसी 128 वें शासक बने। इनका सन् 1361 ई मे तेजसिह नामक जसोड भाटी ने वध कर दिया।

27 रावल घडसी के बाद मे केहर सन् 1361 ई मे रावल बने। यह 129 वें शासक हुए। इन्होने अपने ज्येष्ठ पुत्र केलण को राजगद्दी से वचित किया। केलणजी पूगल के राव रणकदेव की मृत्यु के पश्चात् उनकी सोढी राणी के सन् 1414 ई मे गोद गए और पूगल के यशस्वी राव हुए।

28 रावल केहर के पश्चात् सन् 1396 ई मे उनके छोटे पुत्र लखनसेन रावल और 130 वें शासक बने।

यदुवशियो और भाटियो की गजनी से पूगल तक की राजधानिया

क्र. स	शासको के नाम	राजधानी	शासन करने की अवधि व विशेष विवरण
1	राजा गज	गजनी	दूसरी शताब्दी, गजनी हार गए।
2	राजा शालिवाहन (प्रथम)	लाहौर	सन् 194-227 ई, स्यालकोट नगर बसाया, सन् 194 ई मे गजनी पुन जीती।
3	राजा बालबन्ध	लाहौर	सन् 227-279 ई, गजनी का नियन्त्रण पौत्र चकीता को सौंपा।
4	राजा भाटी	लाहौर	सन् 279-295 ई, भाटी वश के आदि-पुरुष।

क्र स	शासकों के नाम	राजधानी	शासन करने की अवधि व विशेष विवरण
5	राजा भूपत	लाहौर, भटनेर	सन् 295-338 ई, लाहौर और गजनी खोये, सन् 295 ई मे भटनेर का किला बनवाया, सिहराव ने सरसा और हसपत ने हिसार नगर बसाये।
6	राजा भीम स राजा खेमकरण तक की तीन पीढिया	भटनेर	सन 338-425 ई, खमकरण ने खमकरण और अभयराज ने अबोहर नगर बसाए।
7	राजा नरपत	लाहौर	सन् 425-465 ई, लाहौर और गजनी पुन जीते।
8	राजा लोमनराव	लाहौर	सन् 474 478 ई, लाहौर, गजनी, भटनेर हारे।
9	राजा रणसी और भोजसी	राज्य विहीन	सन् 478 519 ई ।
10	राजा मगलराव	मूमनवाहन	सन् 519 559ई, सन् 519 ई मे मूमनवाहन का किला बनवाया, परन्तु हार गए।
11	राजा मडमराव से राव मझमराव तक छ पीढी	मरोठ	सन् 559-759 ई, सन् 599 ई मे मरोठ का किला बनवाया, राव मूलराज (सन् 656 682 ई) ने मूमनवाहन और भटनेर पुन जीते। सन् 731 ई मे केहरोर का किला बनवाया।
12	राव केहर	मरोठ, तणोत	सन् 759 805 ई, सन् 770 ई मे तणोत का किला बनवाया, राजधानी वहा ले गए।
13	राव तणुजी	तणोत	सन् 805-820 ई, स्वेच्छा से राज्य त्यागा।
14	राव विजयराव चुडाला	तणोत	सन् 820 841 ई, सन् 816 ई मे बीजनोत का किला बनवाया।
15	रावल सिद्ध देवराज	राज्यविहीन देरावर लुद्रवा	सन् 841-852 ई, सन् 852 ई मे देरावर का किला बनवाया, सन् 853 ई मे राजधानी देरावर से लुद्रवा ले गए। सन् 857 ई मे पवारो से पूगल जीती। भटिंडा, भटनेर, मूमनवाहन, मरोठ, बीजनोत, तणोत पुन जीते।
16	रावल मुधा से रावल जैसल तक	लुद्रवा	सन् 853-1156 ई ।

क्र. सं. शासकों के नाम	राजधानी	शासन करने की अवधि व विशेष विवरण
17. रावल जैसल	लुद्रवा जैसलमेर	सन् 1152-1156 ई. सन् 1156 ई, राजधानी लुद्रवा से जैसलमेर ले गए।
18. रावल शालिवाहन (द्वितीय)	जैसलमेर	सन् 1168-1190 ई, इनके वंशज कपूरथला, पटियाला, महेसर, नाहन, सिरमौर गए।
19. रावल पूनपाल	जैसलमेर	सन् 1288-1290 ई., पदच्युत। इनके पड़पौत्र राव रणकदेव ने सन् 1380 ई. मे पूगल लिया।
20 रावल केहर राव केलण	जैसलमेर पूगल, सन् 1414 ई	सन् 1361-1396 ई, इनके पुत्र राजकुमार केलण सन् 1414 ई. मे पूगल के राव बने, इनके वंशज अभी वहा हैं।

भाटियों की खांपें

(ए) राव मगलराव, सन् 519-559 ई. (मूमनवाहन)

1.	अबोहरिया	राव मगलराव के भाई मसूरराव के पुत्र अभयराव के वंशज। यह अब मुसलमान हैं। राव दुसाजी (सन् 1098-1122), लुद्रवा, के पुत्र देशल के वशज भी अबोहरिया भाटी कहलाए।
2.	सारण	मसूरराव के पुत्र सारनराव के वशज सारण जाट हुए।
3.	खुल्लरिया	राव मगलराव के पुत्र खुल्लरसी के वशज खुल्लरिया जाट हुए।
4	मूढ	राव मंगलराव के पुत्र मूढराज के वशज मूढ जाट हुए।
5.	शिवड	राव मगलराव के पुत्र श्योराज के वशज शिवड जाट हुए।
6.	फूल	राव मगलराव के पुत्र फूल के वशज फूल नाई हुए।
7	केवल	राव मगलराव के पुत्र केवल के वशज केवल कुम्हार हुए।

(बी) राव मझमराव, सन् 729-759 ई. (मरोठ)

8.	गोगली	राव मझमराव के पुत्र गोगली के वशज।
9.	लडवा	राव मंझमराव के पुत्र मूलराज के पुत्र लडवे के वशज।
10	चूहल	राव मझमराव के पुत्र मूलराज के पुत्र चूहल के वशज।
11	सगार	राव मंझमराव के पुत्र राजपाल के पुत्र गोगी के पुत्र संगार के वशज।
12.	थूकड	राव मझमराव के पौत्र गोगी के पुत्र थूकड के वंशज।
13.	पोहड	राव मझमराव के पौत्र गोगी के पुत्र पोहड के वशज।
14	बुघ	राव मझमराव के पुत्र राजपाल के पुत्र राणो के वशज।
15.	कुलरिया	राव मझमराव के पौत्र गोगी के पुत्र कुलरिये के वशज।
16.	लोहा	राव मझमराव के पुत्र मूलराज के पुत्र लोहा के वशज।
17.	उभेचडा	राव मझमराव के पौत्र गोगी के वशज, उभेचडा मुसलमान हैं।

(सो) राव केहर (प्रथम) सन् 759-805 ई.: यह पहले मरोठ मे रहे फिर राजधानी तणोत ले गए।

18	उत्तराव	राव केहर के पुत्र सोम का सोम और रहोसेजीये के अजय के वशज उत्तराव भाटी।
19.	चनहड	राव केहर के पुत्र चनहड के पुत्रो केलड, माऊ, भोजा, शिवदास के वशज चनहड भाटी।
20	सफरिया	राव केहर के पुत्र सफरिया के दो पुत्रो के वशज।
21.	घहीम	राव केहर के पुत्र सफरिया के बेटे घहीम के तीन पुत्रो के वशज।

22. भाटिया राव केहर के छठे पुत्र जाम के वंशज भाटिया है, यह साहूकार व्यापारी हैं।

(डी) राव तणुराव सन् 805-820 ई.–तणोत

23. माकड
24. महेपा
राव तणुराव के पुत्र माकड के पुत्रों मोलहे और महेपा के वंशज माकड सुथार हैं।

25. जैतूग राव तणुराव के पुत्र चाहड के पुत्र कोल्हे के वंशज।

26. आल राव तणुराव के पुत्र आल के चार पुत्रों देवासी, थिरपाल, भूणसी, देवीदास के वंशज आल राईका हैं।

27. देवासी आल के पुत्र देवासी के वंशज देवासी राईके है।

28. रासेचा राव तणुराव के पुत्र रासेचा के पुत्र राजपाल के पुत्रो गजहथ, कल्याण, धनराज, नाढे और हेमराज के वंशज रासेचा हुए। यह अब ओसवाल जैन साहूकार हैं।

29. घोटक राव तणुराव के पुत्र घोटक के वंशज।

30. डूला
31. डागा
32 चूडा
राव तणुराव के पुत्रो डूला, डागा, चूडा के, डूला, डागा, चाडक, महाजन हैं।

(इ) रावल सिद्ध देवराज, सन् 852-965 ई., देवराज राजधानी लुद्रवा ले गए।

33 छेना रावल सिद्ध देवराज के पुत्र छेनोजी के वंशज।

(एफ) रावल मुन्धा, सन् 965-978 ई.—लुद्रवा

लोहा
बुध
फोहड
यह तीनो जातिया राव मझमराव के पुत्र राजपाल की ऊपर बताई जा चुकी हैं। यहा इन्हें राव मुन्धा के पुत्र राजपाल का वंशज कहा गया है।

(जी) रावल बाछूजी, सन् 1056-1098 ई.—लुद्रवा

34. सिंहराव रावल बाछूजी के पुत्र सिंहराव के पुत्र सच्चाराव के पुत्र बाला के दो पुत्रो, रतन और जग्गा, के वंशज सिंहराव भाटी।

35. पाहू रावल बाछूजी के पुत्र वापेराव के पुत्रों, वीरम और तुलोड, के वंशज पाहू भाटी हैं।

36. इणाधा रावल बाछूजी के पुत्र इणाधे के वंशज।

37. मूलपसाव रावल बाछूजी के पुत्र मूलपसाव के वंशज।

38. धोवा मूलपसाव के पुत्र धोवा के वंशज।

38ए. माडण सुथार रावल बाछूजी के एक पुत्र माडण के वंशज माडण सुथार हुए।

(एच) रावल दुसाजी, सन् 1098-1122 ई.—लुद्रवा

39. पावसणा रावल दुसाजी के पुत्र पावा के वंशज।

40. अबोहरिया रावल दुसाजी के पुत्र देसल के पुत्र अमयराज के वंशज। राव मगलराव के भाई मसूरराव के वंशज भी अबोहरिया भाटी हुए।

(आई) रावल विजयराव लांझा, सन् 1122-1147 ई.—लुद्रवा

41. राहड रावल विजयराव के पुत्र राहड के पुत्रो, नेतसी और केकसी, के वंशज।

42. हटा — रावल बिजयराव के पुत्र हटा के वंशज।
43. गाहड — रावल बिजयराव के पुत्र गाहड के वंशज।
44. मागलिया — रावल बिजयराव के पुत्र मंगलजी के वंशज।
45. भीया — रावल बिजयराव के पुत्र भीमराज के वशज।

(जे) रावल शालिवाहन (द्वितीय) सन् 1168-1190 ई.—जैसलमेर

46. बानर — रावल शालिवाहन के पुत्र बानर के वशज।
47. पलासिया — रावल शालिवाहन के पुत्र हसराज के पुत्र मनरूप के वशज। यह नाहन गए थे, जहा हिमाचल प्रदेश मे नाहन, सिरमौर, महेसर के राज्य स्थापित किए।
48 मोकल — रावल शालिवाहन के पुत्र मोकल के वशज।
49. ढाला
50 सलूण — कुमार चन्द्र के वंशज जैसलमेर मे ढाला और सलूण सुथार भी हुए। कुमार चन्द्र कपूरथला, पटियाला चले गए थे।
51. महाजाल — रावल शालिवाहन के पुत्र सलात के पुत्र महाजाल के वशज।
51ए कुलरिया सुथार — रावल शालिवाहन के पुत्र लूणेजी के वशज।

(के) रावल केलण, सन् 1190-1218 ई.—जैसलमेर

52. जसोड — रावल केलण के पुत्र पहलाना के पुत्र जसोड के वशज।
53. जयचन्द — रावल केलण के पुत्र जयचन्द के पुत्र लुणाग के वशज।
54 सीहड — जयचन्द के पुत्र करमसी के पुत्र सीहड के पुत्रों बीकमसी और उगमसी के वशज।
55. मडकमल — रावल केलण के आसराव के पुत्र मडकमल के वशज।

(एल) रावल करण, सन् 1242-1283 ई.—जैसलमेर

56 लूणराव — रावल करण के पुत्र सतरग के पुत्र लूणराव के वशज।

(एम) रावल पूनपाल, सन् 1288-1290 ई.—जैसलमेर

57. पूगलिया — रावल पूनपाल के पुत्र मोजदे के वशज उस समय पूगलिया भाटी कहलाते थे।
58 चरडा — रावल पूनपाल के पुत्र चरडेजी के वशज।
59. लूणराव — रावल पूनपाल के पुत्र लूणजी के वशज भी लूणराव हुए।
60 रणधीरोत — रावल पूनपाल के पुत्र रणधीरजी के वशज।

(एन) रावल जैतसी (प्रथम) सन् 1290-1293 ई.—जैसलमेर

61. कानड — रावल जैतसी के पुत्र रतनसी के पुत्र कानडदेव के वशज।
62 उनड
63. सता
64. कीता
65. हमीर
66. गोगादे — कानडदेव के पुत्रो उनड, सतोराव, कीताराव, हमीरदेव, गोगादेव के वशज।

67. बाक्ला   रावल जैतसी के पुत्र बाक्सा के वंशज।

(ओ) रावल मूलराज (द्वितीय), सन् 1293-1294 ई—जैसलमेर

68 अर्जुनोत रावल मूलराज के पुत्र देवराज के पुत्र हमीर के हमीरोत भाटी हुए,
69 हमीरोत हमीर के पुत्र अर्जुन के अर्जुनोत भाटी हुए।

(पी) रावल केहर (द्वितीय), सन् 1361-1396 ई—जैसलमेर

70 केहरोत   रावल केहर के वंशज। यह रावल मूलराज के पुत्र देवराज के पुत्र थे। इनकी माता मंडोर के राणा रूपसी पडिहार की पुत्री थी। हमीर भी इनके भाई थे, इनकी माता जालोर के सोनगरा शासक की पुत्री थी।
71 केलण   रावल केहर के पुत्र राव केलण पूगल राज्य के शासक हुए। इनके वंशज केलण भाटी हुए।
72 सोम   रावल केहर के पुत्र सोम के वंशज।
73 रूपसिंहगोत रावल केहर के पुत्र सोम के पुत्र रूपसी के वंशज।
74 जैसा   रावल केहर के पुत्र कलकरण के पुत्र जैसा के वंशज।
75 सावतसी कलकरण के पुत्र सावतसी के वंशज।
76 एपिया   सावतसी के पुत्र एपिया के वंशज।
77 लखनपाल रावल केहर के पुत्र तराड के पुत्र राजपाल के वंशज।
78 साधर   तराड के पुत्र कीरतसिंह के पुत्र साधर के वंशज।
79 तेजसिंहगोत रावल केहर के पुत्र तेजसी के वंशज।
80 मेहजल सोम के पुत्र मेहजल के वंशज।
81 गोपालदे तराड के पुत्र गोपालदेव के वंशज।

(क्यू) रावल लखनसेन, सन् 1396-1427 ई—जैसलमेर

82 ऐका रूपसी रावल लखनसेन के पुत्र रूपसी के पुत्र मंडलीकजी के पुत्र जैमल के वंशज। रूपसी के अन्य वंशज रूपसी कहलाए।
83 राजधर रावल लखनसेन के पुत्र राजधर के वंशज।
84 परबत रावल लखनसन के पुत्र सादूल के पुत्र परबत के वंशज।
85 कुम्भा रावल लखनसेन के पुत्र कुम्भा के वंशज।

(आर) रावल बरसी, सन् 1427-1448 ई—जैसलमेर

86 केलायचा रावल बरसी के पुत्र ऊगेजी के पुत्र केलायचा के वंशज।
87 मेसडेच रावल बरसी के पुत्र मेलोजी के वंशज।

(एस) रावल देवीदास सन् 1467-1524 ई—जैसलमेर

88 सातलोत रावल देवीदास के पुत्र सातल के वंशज।
89 मदा   रावल देवीदास के पुत्र मदाजी के वंशज।
90 ठाकरसोत रावल देवीदास के पुत्र ठाकरसी के वंशज।
91 देवीदासोत रावल देवीदास के पुत्र रामसी के वंशज।
92 दूदा   रावल देवीदास के पुत्र दूदोजी के वंशज।

(टी) रावल जैतसी (द्वितीय), सन् 1524-1528 ई.—जैसलमेर

93 जैतसिहगोत रावल जैतसी के पुत्र मडलीकजी के वंशज।
वैरीसालोत रावल जैतसी के पुत्र वैरीसाल के वशज।

(यू) रावल लूणकरण, सन् 1528-1551 ई.—जैसलमेर

94 रावलोत, लूणकरणोत, मरोठिया — रावल लूणकरण के वशज। इनका देहान्त मरोठ देरावर क्षेत्र में रहते हुए बलोचो के साथ युद्ध मे हो गया था, यह हीगलीदास के रावलोत हैं।

95 दीदा रावल लूणकरण के पुत्र दीदोजी के वशज।

(वी) रावल मालदेव, सन् 1551-1561 ई.—जैसलमेर

96. मालदेओत राव मालदेव के वशज।

97. खेतसिहगोत
98. नारायण-दासोत
99. सहमलोत
100 नेतसिहगोत
101. डूगरसोत

— यह सब रावल मालदेव के इसी नाम के पुत्रो के वंशज हैं।

(डब्ल्यू) रावल रामचन्द्र, सन् 1649-1650 ई.—जैसलमेर के बाद मे देरावर के शासक रहे।

102 रावलोत, रामचन्द्रोत, देरावरिया — रावल रामचन्द्र जैसलमेर की राजगद्दी से पदच्युत किए जाने के बाद मे पूगल द्वारा प्रदान किये गए देरावर (अब बहावलपुर) राज्य के शासक हुए। इनके वशज देरावरिया रावलोत भाटी हैं।

(एक्स) रावल सबलसिह, सन् 1650-1659 ई.—जैसलमेर

103. रावलोत रावल सबलसिह और इनके बाद बने रावलो के वशज रावलोत भाटी से सम्बोधित हुए। वस्तुत रावल सिद्ध देवराज (सन् 852-965 ई.) के पुत्र छेनोजी के वंशज छेना भाटियो को छोडकर उनके बाद की सभी खापो के भाटी, रावलोत कहलाने के अधिकारी हैं।

पूगल के भाटियो की खांपें

अ. राव रणकदेव, सन् 1380-1414 ई.—पूगल

1. मुमाणी भाटी राव रणकदेव के पुत्र तणु के वशज, मुसलमान भाटी
2. हमीरोत भाटी पूगल के राव रणकदेव के दीवान मेहराव हमीरोत भाटी के वशज हमीरोत मुसलमान भाटी हुए।
मुमाणी और हमीरोत मुसलमान भाटी, अबोहरिया मुसलमान भाटियो के साथ विलीन हो गए।

(ब) राव केलण, सन् 1414-1430 ई.—पूगल

3. केलण भाटी राव केलण के वशज, मुख्यतया इनके पुत्र रणमल के वशज।
4 विक्रमजीत केलण राव केलण के पुत्र विक्रमजीत के वंशज।

5. शेखसरिया केलण राव केलण के पुत्र अखा के वशज।
6. हरमाम केलण राव केलण के पुत्र हरमाम के वशज।

(स) राव चाचगदेव, सन् 1430-1448 ई.—पूगल

7. नेतावत भाटी राव चाचगदेव के पुत्र रणधीर के पुत्र नेता के वशज।
8 भीमदेओत भाटी राव चाचगदेव के पुत्र भीम के वशज।

(व) राव शेखा, सन् 1464-1500 ई.—पूगल

9. किसनावत राव शेखा के पुत्र वाघसिंह के पुत्र किसनसिंह के वशज।
10. खीया, जैतसिहगोत, राव शेखा के पुत्र रावत खेमाल के पुत्र जैतसिंह के वशज।
11. खीया, करणोत, रावत खेमाल के पुत्र करणसिंह के पुत्र अमरसिंह के वशज।
12 खींया, धनराजोत, रावत खेमाल के पुत्र धनराज के वशज।

(य) राव बरसिंह, सन् 1535-1553 ई.—पूगल

13. बरसिंह दुर्जनसालोत राव बरसिंह के पुत्र दुर्जनसाल के वशज।

(र) राव जैसा, सन् 1553-1587 ई.—पूगल

14 बरसिंह जैसोगोत (1) राव आसकरण (1600-1625 ई) के पुत्रो सुलतानसिंह, किसनसिंह, गोविन्ददास के वशज। सुलतानसिंह के वशज राजासर और कालासर गांवो मे हैं, किसनसिंह के राजासर मे, गोविन्ददास के लालूसर मे हैं।
(2) राव जगदेव, (सन् 1625-1650 ई) के पुत्र जसवन्तसिंह के वशज मानीपुरा गाव मे हैं।
(3) राव गणेशदास (सन् 1665-1668 ई.) के पुत्र केसरीसिंह के वशज केला गाव मे हैं। इनके पुत्र पदमसिंह केला रहे, हाथीसिंह लूणखा गाव गए और दानसिंह मोटासर गए।

भाटियो की उपरोक्त खापो के अलावा कुछ और प्राचीन खापें भी हैं, जिनका वर्णन बहादुरसिंह बीदावत ने दिया है। (राष्ट्रदूत साप्ताहिक दिनाक 9 दिसम्बर, 1984) यह है —

पूना, लाड, खीर, मर, आचगण, जेसवार, पल, सेराह, आवत, मुभाजी, डाढोल, सिरन, जेस, लधड, जक्ष। इसके अलावा जैसलमेर के तत्कालीन शासको एव उनके पुत्रो, भाई-भतीजो की खापें हैं—दुर्जावत, तेजमालोत, अखैराजोत, रामसिहोत, पृथ्वीराजोत, द्वारकादासोत, गिरधरदासोत, बिहारीदासोत।

उपरोक्तानुसार भाटियो की कुल खापें—

103+14+15+8=140 हैं।

उपरोक्त खापो के अलावा, राजा बालबन्ध शालिवाहनोत को, निम्नलिखित खापें भी हैं—

1. चिगताई—मुसलमान—चिगता भूपत बालबन्धोत का।
2 गोरी—मुसलमान, गोरी बीजल चिगतावत का।

3. भाटी—हिन्दू और मुसलमान, भाटी बालबन्धोत, भाटीजी के भाइयों की सन्तानें भी भाटी हैं।
4. समा और राजड़—मुसलमान, समा बालबन्धोत का।
5. जाड़ेचा—हिन्दू और मुसलमान, समा में से हैं।
6. मंगलिया—मुसलमान, मंगलिया बालबन्धोत का।
7. कलर—मुसलमान, कलूराव बालबन्धोत का।

भाटियों का नदियो की घाटियों पर नियंत्रण रखने का उद्देश्य

भाटियो का अफगानिस्तान और पजाब की नदियो से अटूट सम्बन्ध रहा। गजनी या लाहौर, जहा से भी भाटियों ने राज्य किया, उन्होने पजाब की नदियो के धन-धान्य, व्यापार, आवागमन की देन को हमेशा प्राथमिकता दी। उस समय भूमि की सतह के अलावा जल मार्गों का उपयोग व्यापार और आवागमन के लिए बहुतायत से होता था। वर्तमान की तरह इन नदियों पर बाध और बैरेज रूपी अवरोधक नही होने से मानसून की वर्षा और हिमालय की बर्फ के पिघलने से प्राप्त पर्याप्त जल का बहाव इन नदियो मे आने से जलमार्ग बारह माह खुले रहते थे। वना की अधिकता से भूमिगत जल भी नदियो मे धीरे-धीरे रिसकर आता रहता था। इस प्रकार नदियो मे पानी की कमी कभी नही रहती थी।

पजाब से सिन्ध प्रान्त या अरब सागर मे जाने के लिए या वहा से उत्तरी पजाब और उत्तरी भारत मे आने के लिए जलमार्ग, भू मार्ग से कही ज्यादा सुविधाजनक, सुरक्षित, द्रुतगामी और सस्ते होने के साथ, जहाजें और नावें अधिक मात्रा में माल असबाब ले जा सकती थीं। भूमि मार्ग से माल ढोने के लिए ऊट, खच्चर, घोडे, गाडिया आदि के साधन लम्बी दूरी के लिए सुविधाजनक नही थे, इनका रोजमर्रा का रखरखाव कष्टदायक और महगा होता था। इनके विपरीत नावो और जहाजो के रख-रखाव का खर्चा बहुत कम होता था, माल लादने के बाद यह पानी के बहाव के सहारे या हवा से पाल के सहारे दिन-रात चलते ही रहते थ। यह जहाजें और नावें, अरब सागर हो कर भारत के पश्चिम तट के साथ और फारस की खाडी के देशो के साथ व्यापार मे सहायक थी। यह अन्य साधनों से सम्भव नही था।

जैसलमेर और पूगल के भाटियो के सदियो तक प्रयास रहे कि वह सिन्ध नदी, पजनद और ऊपर की नदियो पर नियन्त्रण रखें। पजनद जलमार्ग, सिन्ध और पजाब के बीच की समस्त नदियो का नियन्त्रक था। सागर और सिन्ध प्रान्त का यह द्वार था, इसी प्रकार नीचे से आने वाले यातायात के लिए यह पजाब और उत्तरी भारत के लिए द्वार था। जैसलमेर और पूगल के भाटियों का पजनद पर नियन्त्रण रहने से यह समस्त व्यापार इनकी देख-रेख मे होता था और नदी मार्ग के उपयोग के ऐवज मे भाटियो को कर के रूप मे बडी राशि प्राप्त होती थी।

इसके अलावा ईरान, इराक और अन्य पश्चिमी देशो से भारत के साथ होने वाला व्यापार, इन नदियो को केवल नदी पार करने योग्य घाटो से काफिले नदी पार ले जाने से सम्भव था। इन घाटो का नियन्त्रण भाटियों के पास था। इसके दो उदाहरण लें, जैसलमेर के

भाटियों के रोहड़ी (सिन्ध में सिन्ध नदी पर) और मूमनवाहन (सतलज नदी पर) के किले। यह स्थान तकनीकी दृष्टि से इतने उपयुक्त थे कि विश्व के बड़े बैरेजों में एक बहुत बड़ा आधुनिक बैरेज सिन्ध नदी पर रोहड़ी के बिलकुल पास में सक्खर में अब बना हुआ है। दूसरा, पाकिस्तान में सतलज नदी पर एक मात्र सड़क और रेल यातायात का पुल, आदमवाहन पुल, मूमनवाहन (बहावलपुर) के पास बना हुआ है। अगर यह स्थान उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में बैरेज और पुल बनाने के लिए उपयुक्त थे, तब सदियों पहले यहां घाट अवश्य उपयुक्त होंगे। इन घाटों से हजारों रुपयों का ट्रांजिट कर लिया जाता था। केवल यही नहीं, रोहड़ी और मूमनवाहन के किले व्यापार के यातायात को नदी और भूमि स्थित डाकुओं से संरक्षण प्रदान करते थे।

जहां भाटियों को कर के रूप में अपार द्रव्य प्राप्त होता था, वहीं इन नदियों की घाटियों में अतुल मात्रा में चावल, गेहूं और अन्य अनाज पैदा होता था। इनका उपयोग सेना के निर्वाह और रख-रखाव के लिए किया जाता था। हजारों की संख्या में घुड़सवार सेना के घोड़ों के लिए पंजाब और सिन्ध प्रान्तों के घास के समतल मैदान चरागाह थे, अन्यथा भाटियों के लिए घोड़ों को रखना असम्भव था। सेना के लिए नये घोड़े-घोड़ियां पैदा करने और पालने के लिए भी यह स्थान काम में लाये जाते थे। यह घाटियां बारह मास घास का विपुल भण्डार थीं। इतिहास में कई किलों का घेरा आक्रमणकारी सेना को कुछ समय बाद इसलिए उठाना पड़ा क्योंकि आसपास के क्षेत्र में अभाव या अकाल की स्थिति के कारण सेना के लिए अनाज और घोड़ों के लिए घास व दाना पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होता था। इसलिए यह समझना सरल है कि पूगल के भाटी जी जान से प्रयास करते रहे कि पंजनद का जलमार्ग, मूमनवाहन, केहरोर, दुनियापुर का क्षेत्र, पुरानी व्यास (पुरानी व्यास नदी सतलज नदी में नहीं मिलती थी। यह सतलज और रावी नदियों के बीच के क्षेत्र में बहती हुई, मुलतान के आगे जाकर लोदरान के उत्तर में चिनाब नदी में मिलती थी। यह वर्तमान की तरह सतलज नदी की सहायक नदी नहीं होकर चिनाब नदी की सहायक नदी थी) और सतलज नदियों की घाटियों का प्रदेश इनके नियन्त्रण में रहे अन्यथा पूगल कमजोर और साधनहीन हो जाएगा। हुआ भी यही, जिसकी आशंका थी। ज्योंही सन् 1650 ई. में पूगल का शासन और सीमा देरावर से पूर्व की ओर खिसकी, इसके शत्रु लंगा और बलोच, इस पर हावी होते गए और ज्यों-ज्यों पूगल मरु प्रदेश की ओर सिकुड़ता गया, इसके साधन और शक्ति के स्रोत पीछे छूटने से घटते गए। पूर्व में राठौड़ और पश्चिम से मुसलमान शत्रु दुर्बल पूगल को दबाते गए। जब तक राव केलण, चाचगदेव, बरसल और शेखा के घोड़ों की टापें पंजाब की नदियों की वादियों में गूंजती रहीं, तब तक मालाणी (बाड़मेर) से भटनेर भटिंडा तक, नागौर से मुलतान, डेरा गाजीखां तक भाटियों का सामना करने की किसमें हिम्मत थी?

इसके बाद में पूगल, मुलतान, बीकानेर और जैसलमेर के सत्ता और शक्ति के त्रिकोण में उलझ गया। मुलतान द्वारा निर्बल पूगल का लाभ उठाते देखकर, जैसलमेर ने देरावर, मरोठ, फूलड़ा आदि का अच्छा उपजाऊ और सम्पन्न क्षेत्र अपने वंशजों को सन् 1650 ई. में दिला दिया जिसे, 113 वर्ष बाद (सन् 1763 ई.) में, बहावलपुर के दाऊद पुत्र हड़प

गए। अब पूगल एक दिशाहीन, साधनहीन और अकेला पजर रह गया था। साधनो और शक्ति की कमी के साथ नेतृत्व मे भी कमी आई। अगली एक शताब्दी मे बीकानेर ने पूगल का स्वतन्त्र अस्तित्व मिटा दिया। इस सबका नतीजा यह निकला कि जैसलमेर को पूगल के बीकमपुर और बरसलपुर मिल गए, बहावलपुर के मुसलमान पूगल का देरावर क्षेत्र और जैसलमेर का कुछ भाग दबा गए, पूगल का परोक्ष या अपरोक्ष रूप से अन्त राव करणीसिंह (सन् 1837-1883 ई) के समय बीकानेर मे विलय के साथ हो गया।

इस ससार मे दुख, सुख, गरीबी, समृद्धि कुछ भी स्थाई नही है। पूगल के भाटियो का इतिहास पिछले तीन सौ वर्षों, सन् 1650 ई से, खण्डहर होने लगा और होता ही गया, जिसका अन्त पहले बीकानेर मे विलय के साथ हुआ और समाप्ति राजस्थान मे विलय के साथ। लेकिन इतिहास ने करवट ली, विकास के पहले चरण पूगल के राजस्थान मे सन् 1954 में विलय के साथ, सन् 1955 ई मे प्रारम्भ हो गए। राजस्थान नहर का सपना साकार होने लगा। इस शताब्दी के आरम्भ मे वृहद् नदी घाटी योजनाएँ बनी फिर बडे-बडे बैरेज बने और पिछले चालीस वर्षों में बडे बडे बाघ बने। भारत की लाखो एकड भूमि मे सिचाई के लिए पानी का प्रवाह होने लगा। सतलज, रावी, व्यास, चिनाब, झेलम और *सिन्ध नदियो का पानी पजाब, सिन्ध और राजस्थान प्रान्तो की सूखी पडी भूमि की सिचाई* के लिए उपयोग मे आने लगा। सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के पूर्व मे पडने वाला क्षेत्र, भटिंडा, अबोहर, भटनेर, लखवेरा (लखूवाली), सिहानकोट, चिश्राग (घडसाना), गगानगर, खारबारा, समेजा, मरोठ, देरावर, केहरोर, मूमनवाहन, दुनियापुर, बीकमपुर, बरसलपुर, बीजनोत, रोहडी, माथेलाव, नाचना, रामगढ, तणोत, घोटारू वही क्षेत्र है जहा भाटियो का राज्य था। इस सारे क्षेत्र मे, भारत और पाकिस्तान के भाटी आबाद हैं, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। इनके साथ जोइया, पवार, राठ, खीची, पडिहार, चौहान, मोहिल, बलोच, लँगा, पठान, गौरी, खत्री, जाट, सिख, विश्नोई, नायक, बावरी, हरिजन, पिछडी जातिया, सब हिन्दू मुसलमान, इस विस्तृत मरुधरा में आबाद है। सब सुख और समृद्धि का भरपूर जीवन बिता रहे है। यह भाखडा, गगनहर और राजस्थान नहर का जल, उन्ही नदियो का जल है जिसके लिए भाटियो की पीढिया खपती रही, बलिदान देती रही सघर्ष करती रही कि इनकी नदियो का आचल इनसे नही छूटे। उन्ही नदियो का जल आज चलकर इनके द्वार पर आ गया है और इस जल के आशीर्वाद का लाभ सब लोग मिल जुल कर उठा रहे हैं। यही स्थिति पाकिस्तान के मुलतान, बहावलपुर और सिन्ध क्षेत्र की है। भाटियो के वश बार बार इन नदियो की शरण मे गये और नदियो ने रक्त का बलिदान लेकर इन्हें पूर्व को ओर धकेल दिया। अब इस सघर्ष का अन्त हो गया है, पूरे भाटियो के प्रभाव क्षेत्र मे नहरो का जाल बिछ गया है। अब मेहनत का बलिदान देना है, रक्त का नहीं।

भाटी प्रदेश मे केवल राजस्थान क्षेत्र मे पैंतालीस लाख एकड भूमि म सिचाई की सुविधा उपलब्ध है। अनुमान है कि इतने ही बडे पाकिस्तान के, पूर्व म भाटियो के, क्षेत्र म सिचाई की सुविधा उपलब्ध है। इस प्रकार अखण्ड भारत के कपूरथला, पटियाला सहित एक करोड एकड से भी अधिक भाटियो के क्षेत्र की भूमि में सिचाई हो रही है।

इसी क्षेत्र को भाटी पिछले पन्द्रह सौ, सोलह सौ वर्षों से अपनी सन्तानो के खून से सीचते रहे हैं। राजा भूपत द्वारा सन् 295 ई मे भटनेर मे घग्घर नदी की घाटी मे किला बनवाने के पश्चात् एक सौ तीस वर्षों, सन् 425 ई तक राजा नरपत के काल तक, भाटी भटनेर से राज करते रहे। स्पष्ट था कि इस समय भाटी उत्तर, पश्चिम और पूर्व का राज्य हार चुके थे। पश्चिम मे पूगल मे पवारो का राज्य था, दक्षिण मे वडोपल व लखवेरा म जोइयों का और पीलीबगा मे खोखरो का राज्य था। भटनेर भाटियो का एक छोटा स्थानीय राज्य रह गया था। राजा नरपत ने पुन लाहौर और गजनी पर अधिकार करके भाटी राज्य को साम्राज्य मे बदला। राजा लामनराव की लाहौर मे हुई पराजय और मृत्यु के बाद भाटी भटनेर से भी गए और सन् 474 ई से 519 ई तक राज्यविहीन हो कर रहे। लेकिन भाटी नदियो का साथ कहा छोडने वाले थे ? वह पश्चिम की ओर घग्घर (हाकडा) नदी के साथ साथ बढ़ते गए और उसके दोनो ओर फैलते गए। अथक प्रयास और कठिनाइयो को झेलते हुए वह सतलज नदी के पूर्वी किनारे जा पहुचे। यहा सन् 519 ई मे सतलज नदी के पूर्वी किनारे पर मूमनवाहन का किला बनवाया। इसे शीघ्र खो दिया। फिर अपने से कमजोर जातियो को हराते हुए, सन् 599 ई. मे भाटियो ने घग्घर नदी के किनारे मरोठ का किला बनवाया। इस सघर्ष मे उन्हें पवारो, लगाओ और जोइयो को हराना पडा। इसके बाद राजा मूलराज (सन् 656 682 ई) द्वारा भटनेर और मूमनवाहन के किले फिर से जीतने से, भाटिया का अधिकार घग्घर नदी की घाटी पर हो गया। उन्होने सतलज नदी के पूर्वी क्षेत्र पर अधिकार करके इसके पश्चिम मे व्यास नदी की घाटी मे केहरोर और दुनियापुर के किले बनवाये। इस प्रकार भाटी सतलज और व्यास नदियो की घाटियो मे प्रवेश करने मे सफल हुए और पजनद नदी पर उनका नियन्त्रण रहने लगा।

लेकिन फिर भी इस क्षेत्र मे नए आए हुए भाटी होशियार थे, वह रेगिस्तान मे अन्य पुरानी जातियो के साथ उलझे नही। वह रेगिस्तान की सीमा को पूर्व मे बायी ओर छोडते हुए धीरे धीरे सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के पूर्वी किनारो के साथ फैलते हुए आगे बढ़ते गए। उन्होंने बीजनोत का किला बनवाया ताकि वह अपने क्षेत्र को पूर्व के रेगिस्तान की जातियो के आक्रमण से बचा सकें। रेगिस्तान की गूसार और लडावू, पवार, जोइया, मोखर, सासला आदि जातियो से टकराव को टालते हुए और पड़िहारों, लगाओ, बलोचो से नया क्षेत्र जीतते हुए वह सिन्ध प्रदेश मे सिन्ध नदी के साथ साथ प्रवेश कर गए। उन्होने सिन्ध नदी के पास रोहड़ी, मायेलाव, कशमोर सिहराव आदि स्थानों मे किले बनवाए। इस प्रकार भाटियों ने सतलज, व्यास, पजनद और सिन्ध नदियो के आस पास के सारे क्षेत्र पर और विशेषतया घाटी के पूर्वी भागो पर अधिकार किया।

घग्घर (हाकडा) नदी के विषय मे—

सरस्वती नदी जो लुप्त हो चुकी है उसका वर्णन ऋग्वेद, महाभारत और अन्य पुराणो में मिलता है। प्राचीन साहित्य मे उल्लेखित भारत की प्रमुख नदिया उनके वर्तमान स्वरूप में पहचानी जा चुकी हैं, लेकिन सरस्वती भारतीय इतिहास और भूगोल के अध्येताओ के लिए 19वीं शताब्दी से एक समस्या रही है। भारतीय उपमहाद्वीप में बहने वाली अन्य नामो से पुकारी जाने वाली किसी वर्तमान नदी का नामान्तर था या यह कोई और ही नदी थी जो कालान्तर में लुप्त हो गई है।

घग्घर नदी (सरस्वती) राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले में होकर अनूपगढ़ से कुछ आगे बहावलपुर पहुंच कर शुरू में 'वाहिंद' और बाद में 'हाकड़ा' नाम से जानी जाती है। बहावलपुर के नजदीक यह दक्षिण की ओर मुड कर सिंध प्रदेश में सिंधु नदी के समान्तर बहती हुई कच्छ के रण में मिल जाती है। गंगानगर के कुछ भागों में यह 'नाली', सिंध में 'नारा' व 'पुराण' के नाम से जानी जाती है।

राजस्थान में इस सूखे पाट के किनारे भटनेर का किला, सिंधु सभ्यताकालीन कालीबंगा तथा रंगमहल जैसे प्राचीन स्थान मिले हैं जिनमें सधानावाला थेर मुख्य है।

घग्घर, नाली, वाहिंद, हाकड़ा, नारा व पुराण के सूखे पाट की भौगोलिक स्थिति और उस पर पाए गए ऐतिहासिक पुरातात्विक प्रमाण ऋग्वेद व महाभारत में वर्णित सरस्वती से जिस प्रकार सामंजस्य रखते हैं उससे स्पष्ट है कि यही सूखी धारा प्राचीन लुप्त नदी सरस्वती की ही है। यह वही सरस्वती है जिसके तट पर ऋग्वेद तथा संभवतः वेदत्रयी के अन्य दो वेदों (यजुस व साम) की रचना हुई और जहां ऋषियों ने आने वाले युगों में भारतीय दर्शन, सामाजिक विचारधारा व संस्कृति को नया मोड दिया था।

भाटियों द्वारा चार साके

सन् 841 से 1702 ई के बीच में साढे आठ सौ वर्षों मे भाटियो ने हिन्दू और मुसलमान आक्रमणकारियो से युद्ध करते हुए चार बार जौहर और साके करके अपना अन्तिम बलिदान दिया। लेकिन शत्रुओ के सामने घुटने नही टेके और न ही मान सम्मान का समर्पण किया।

पहला साका सन् 841 ई मे तणोत में हुआ था। राव तणुजी ने, अपने जीवनकाल मे राज्य त्याग कर, सन् 820 ई मे राज्य की बागडोर पुत्र विजयराव को सम्भला दी थी और स्वय श्री लक्ष्मीनाथ की पूजा और सेवा करने मे मग्न हो गए। राव बिजयराव चूडाला अपने पाच वर्षीय राजकुमार देवराज को भटिंडा के पवार राजा के आग्रह और प्रस्ताव पर उनकी पुत्री से ब्याहने वहां गये। विवाह के पश्चात्, पवारो ने षड्यन्त्र रच करके, बारातियो सहित राव विजयराव को मार डाला। फिर पवारो और वराहो ने तणोत पर आक्रमण किया। उस समय वृद्ध राव तणुजी जीवित थे। पुत्र और पौत्र की अनुपस्थिति मे श्री लक्ष्मीनाथ जी की आज्ञा से उन्होने तणोत के किले की सुरक्षा का भार सम्भाला और भाटी सेना का नेतृत्व अपने हाथो में लिया। आखिर वह युग पुरुष थे, परम्परा को तिलांजली कैसे देते, और दायित्व से दूर कैसे भागते? स्वय के रहते हुए, पुत्र को मारने वाले वराहो और पवारो को तणोत का किला कैसे सौंपते? जब उन्होंने शत्रुओ के बल के सामने अपना सैन्य बल कमजोर पाया तब निरर्थक लम्बे युद्ध से कोई लाभ नहीं होने वाला था। इसलिए उन्होंने क्षत्राणियो को जौहर करने के लिए प्रेरित किया। स्वय ने भाटी योद्धाओ के साथ केसरिया बाना पहन कर, किले के दरवाजे खोले, और शत्रुओ पर पिल पडे। किले से जौहर की अग्नि भभक उठी। किले के बाहर, भाटियों, पवारो और वराहो के रक्त से धरती लाल हो गई। भाटी हारे। पवारो और वराहों को किले के बाहर भाटियो की लाशो के ढेर और अन्दर क्षत्राणियो की राख मिली। इस राख मे पवारो और वराहो की बहनो और बेटियो की राख भी थी, जिसे उन्होने चुटकी भर माथे पर लगाया।

इस प्रकार सन् 841 ई का भाटियों का पहला साका तणोत में हुआ। उस समय शत्रु मुसलमान नहीं थे, केवल हिन्दू राजपूत थे, फिर भी स्त्रियो ने जौहर किया। अनेक स्त्रिया शत्रुओं की बहन बेटिया थी। इसलिए यह सोचना कि जीवित बचने पर, इनका अपहरण, बलात्कार या बेइज्जती होती, मिथ्या है। वस्तुत जौहर इस प्रकार के भय के कारण नहीं होते थे। इसे यों समझें कि यह क्षत्राणियों द्वारा क्षत्रियो के बराबर बलिदान देने की भावना से होता था। जहां पुरुष लडकर जीवन देते थे, उनके बराबर स्त्रियां भी अग्नि मे आहुति देकर जीवन देती थीं। फिर एक का जीवित रहना व्यर्थ हो जाता था, मरना ही श्रेयस्कर था।

भाटियो का दूसरा साका सन् 1294 ई मे जैसलमेर के किले मे हुआ। रावल जैतसी के समय, भाटियो ने साहस करके सन् 1293 ई मे, सिन्ध से दिल्ली ले जाये जा रहे सुलतान जलालुद्दीन खिलजी के करोड़ो रुपयो के खजाने को लूट लिया। सुलतान खिलजी ने आदेश दिया कि भाटियो से खजाना वापिस लिया जाये और उन्हें दडित किया जाये। सुलतान की सेना के सामने आत्मसमर्पण करने के बजाय भाटियों ने युद्ध करके सुलतान को मुहतोड जवाब दिया। जैसलमेर के किले की सुरक्षा का भार रावल जैतसी, और राजकुमार मूलराज और रतनसी ने सम्भाला। किले के बाहर मूलराज के पुत्र देवराज और पौत्र हमीर ने सेना का नेतृत्व सम्भाला। युद्ध के चलते हुए किले मे ही रावल जैतसी की मृत्यु हो गई। मूलराज रावल बने। किले के बाहर देवराज और हमीर ने अदम्य साहस का परिचय दिया। घेराबन्दी के लम्बे समय तक चलने से रावल मूलराज को अनेक कठिनाइया आने लगी और सेना का मनोबल भी गिरने लगा। जब युद्ध का निर्णय होना सम्भव नहीं दिखा तब रावल मूलराज ने साका करने का निश्चय किया। सन् 1294 ई में क्षत्राणियो ने किले मे जौहर की परम्परा निभाई, और रावल मूलराज और भाटी योद्धाओ ने किले के द्वार खोलकर शत्रु पर आक्रमण करके वीरगति पाई।

सुलतान की सेना को खाली किले मे जौहर की राख मिली। लूट का माल भाटी हजम कर चुके थे, मरने के बाद सुलतान की सेना किसे दड देती?

भाटियो का तीसरा साका, दस वर्ष बाद मे जैसलमेर मे, रावल दूदा के समय सन् 1305 ई मे हुआ। रावल मूलराज के पश्चात् वैसे तो रावल दूदा जसोड षड्यन्त्र करके राजगद्दी पर आए थे, लेकिन इस जसोड भाटी ने साका करके षडयन्त्र के कलक को धोया और भाटियो की आन को आच नही आने दी। दिल्ली के सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी के समय, रावल दूदा के छोटे भाई तेजसी ने अजमेर के पास अनासागर मे स्थित घोडे पालने के लिए विकसित शाही फार्म पर छापा मारा, और चुने हुए घोडे-घोडिया निकाल कर जैसलमेर की राह ली। जब सुलतान को इस साहसिक छापे की सूचना मिली तो पहले तो वह यह जानकर आतकित हुए कि भाटियो के सामने दिल्ली कितनी असुरक्षित थी। फिर उन्होने सेना भेजकर भाटियो को दडित करने और घोडे-घोडियों को मुक्त कराने के आदेश दिए।

सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी दस वर्ष पहले जैसलमेर पर किये गए आक्रमण को नहीं भूले थे, इनके श्वसुर जलालुद्दीन खिलजी का जैसलमेर पर आक्रमण व्यर्थ गया था। इधर भारत पर मगोलो के आक्रमण आरम्भ हो गए थे। मगोलो के पहले चार आक्रमण सन् 1296, 1297, 1299 और 1303 ई मे हुए। चौथे आक्रमण ने सुलतान की कमर तोड कर रख दी थी। दिल्ली और सिरि तक के किले मगोलो की मार मे आ गए थे, और अब यह अनासागर की भाटियो द्वारा घटना[1] उन्होने सगठित सेना जैसलमेर भेजी और विजय का निश्चय किया, ताकि मगोलो के विरुद्ध उनकी सेना के गिरे हुए मनोबल को उभारा जा सके। भाटियो ने भी युद्ध की तैयारी कर ली। सुलतान की सेना लम्बे अरसे तक जैसलमेर के किले को घेर कर बैठी रही। रावल दूदा के पास खाद्य सामग्री और सेना के साज सामान निरन्तर कम हो रहे थे। उन्होने सुलतान की सेना के सामने समर्पण करके

मान सम्मान खोने से पूर्वजो की तरह साका करना उचित समझा। यह घटना सन् 1305ई (वि स 1362) की है। युद्ध मे रावल दूदा जसोड सहित सभी भाटी योद्धा काम आए। सुलतान की सेना ने मृतको के सिर बोरो मे भर कर विजय का संतोष किया। उस समय कटे हुए सिर बोरो मे भर कर दिल्ली ले जाने का रिवाज था, ताकि सेनापति मुड गिनवा-कर नरसंहार के बदले सुलतान से पुरस्कार प्राप्त कर सके। किले के अन्दर जौहर की पूर्ति हुई। खिलजी की सेना को कटे हुए सिर और जौहर की राख हाथ लगी।

भाटियो का चौथा साका महारावल अमर सिंह (सन् 1659-1702 ई) के समय रोहडी (सिन्ध) के किले मे हुआ। भाटियो के अधीन रोहडी के किले को विद्रोही बलोचों और छीना राजपूतो ने घेर लिया था। जैसलमेर से यह किला काफी दूर था। वहां से महारावल के पास समाचार भेजा गया। किले के लिए आदेश या सैनिक सहायता पहुचने मे समय लगना स्वाभाविक था। इधर घेराबन्दी के कारण किले की स्थिति पल पल खराब होती जा रही थी। आखिर भाटी किलेदार ने वही निर्णय लिया जो पूर्व मे भाटियो की मान्यता रही थी। उन्होने साका किया और क्षत्राणियो ने अपने आप को अग्नि के समर्पित किया। विद्रोहियों के हाथ कुछ नही लगा। इधर महारावल स्थिति की गम्भीरता से सावचेत थे, अपनी सेना को दिन रात कूच कराते हुए वह रोहडी एक दिन विलम्ब से पहुचे। आते ही बलोच और छीनो को वहां से मार भगाया। फिर इस एक दिन के विलम्ब के लिए विलाप किया, जिसके कारण इतनी बहुमूल्य जानो की आहुति देनी पडी।

रोहडी के समीप पहाडी पर प्रतिवर्ष चैत्र माह की पूर्णमासी को इन सती वीरागनाओ की स्मृति मे मेला लगता था, जिसमे हिन्दू और मुसलमान दोनो श्रद्धा से जाते थे। अब पाकिस्तान बनने के बाद भी यह मेला भरता है या नही, इसकी सूचना नही है।

भारतवर्ष तो क्या, विश्व के किसी अन्य देश मे, किसी एक राजवश मे इतने साके नहीं हुए हैं, जितने भाटियो के देश में हुए। इतिहासकारों का ध्यान कभी जैसलमेर के उज्ज्वल साको की ओर गया ही नही। उनकी बुद्धि की दौड कभी इतनी दूर गई ही नही कि जैसलमेर जैसे पिछडे और रेगिस्तानी क्षेत्र मे जौहर और साके हो सकते थे? उन्हें वाह वाह दिलाने के लिए अरावली शृंखला के किले और मध्य भारत के पठार काफी थे। इसलिए वह उसी क्षेत्र के इतिहास को टटोलते और छानते रहे। अपने ज्ञान के मद मे साकों और जौहरों का मुसलमानो के अनैतिक व्यवहार से जोडते रहे और भोले पाठको में जाने या अनजाने मे साम्प्रदायिक घृणा का जहर फैलाते रहे।

मेवाड की वीर गाथाएँ हैं, बलिदान के अद्भुत उदाहरण हैं। अन्य छोटे राज्यों का अपना सजोया हुआ वीरता और बलिदान का इतिहास है। इसे नकारा नही जा सकता। लेकिन क्या मेवाड और क्या अन्य राजवश, क्या किसी एक राजवश मे चार बार जौहर और साके हुए हैं? मुझे एक के बाद दुबारा जौहर या साका होने का ज्ञान नहीं है, भाटियो ने चार-बार, तणोत, जैसलमेर, रोहडी मे ऐसा किया। भाटी कायर थे, कमजोर थे, मुसलमानो को बेटियां देते थे, लेकिन इन आभूषणों में क्या बीकानेर, जोधपुर, जयपुर, या अन्य छोटे राज्य पीछे रहे? परन्तु क्या इनमें से एक भी राजवश ने कभी जौहर या

साका किया, या आन रखने और सौगन्ध खाने के लिए अपनी अंगुलि भी कभी अग्नि के समर्पित की ?

मेवाड ने मुगल बादशाहो से टक्कर ली, या कभी ने लोदियो, तुगलको या गुलाम वश से टक्कर ली। इन सब मे से खिलजी वश किससे कमजोर था ? सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी का मुकाबला कौनसा मुगल बादशाह कर सकता था ? कोई नही। समय का फेर था, लोग खिलजी को भूल गए, मुगलो के गीत गाते रहे। क्योंकि मुगलो ने इन्हें जागीरें, रजवाड़े, उच्चपद और सूबेदारी दी, जिसके कारण यही राजपूत हिन्दुस्तान की उनकी लूट मे हिस्सा बटाते रहे। गुजरात, मध्य प्रदेश, गोलकडा, बीजापुर और धुर दक्षिण मे कहां थे मुसलमान लूटने के लिए, और वह भी मुगल सेना के होते हुए ? वहां केवल हिन्दू थे और थे हिन्दुओ के धनाढ्य मन्दिर, जिन्हे मुसलमानो और राजपूतो ने मिल कर लूटा और अपना अपना हिस्सा सम्भाला।

ऐसे सशक्त सुलतान खिलजी का कोप भाजन जैसलमेर को दो बार बनना पडा। और न भाटियो ने उन्हे लूटा हुआ खजाना लौटाया और न ही घोडे-घोडिया लौटाई। उनके पल्ले केवल कटे हुए सिर और जौहर की राख पडी।

कथाकार और इतिहासकार मेवाड के बलिदान की गाथा गाते रहे और इतिहास की सुर्खियो मे लिखते रहे। जैसलमेर की भौगोलिक स्थिति ऐसी थी कि वहा घटने वाली घटनाओ का समाचार ज्यादा दूर पहुचता भी नही था। मेवाड की घटनाओ को उकसाने वाले, जोधपुर, जयपुर, बीकानेर के राजवश भी थे। जैसलमेर का टकराव सीधा सुलतान खिलजी से हुआ था, उस समय यह राज्य स्थापित ही नही हुए थे, इसलिए बिचौलिया कोई नही बन पाया। जैसलमेर की घटनाओ को स्थानीय महत्व की मानी गई। उनके विचार मे शायद मेवाड की घटनाएं भारत के भावी इतिहास को मोड दे सकती थी ! जैसे मुगलिया शासन कमजोर और उनका क्षेत्र थोडा सा हो ! उनके लिए हल्दीघाटी की तीन हजार से कम घोडा से लडी गई एक लडाई का क्या महत्व था ? उससे मुगल खानदान की क्या जड उखडने वाली थी ? इन घटनाओ से भारत के इतिहास पर या शक्ति और सत्ता के सतुलन पर कोई असर नही पडने वाला था। केवल हिन्दू मुसलमानो के मन गढत सघर्ष को केन्द्र मानकर मेवाड को बढाया चढाया गया, ताकि आपस की घृणा बढ सके। तथ्य यह था कि मेवाड की सेना के सेनापति और अनेक योद्धा तक मुसलमान थे। यह हिन्दू मुसलमानो का युद्ध नही था, केवल अहकार और सत्ता का सघर्ष था। यह मेवाड का सौभाग्य रहा कि वहा की घटनाओ को एक अलग राजनैतिक व साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से देखा गया और आज भी स्वार्थ के कारण उस दृष्टिकोण को नही छोडा जा रहा है। चार-चार साको के हादसो से तपने वाले जैसलमेर की क्या किसी हिन्दू ने कभी खबर ली ? जब सन् 1294 और 1305 ई मे वहा साके हुए तब हिन्दू वहा चले गए थे ? हां, उस समय तक बीकानेर, जोधपुर और जयपुर के राजवंशो का अस्तित्व बना ही नही था। यह इन घटनाओ के सौ से डेढ सौ वर्ष बाद मे स्थापित हुए। इन राज्यो ने बाद मे भी एक भी जौहर या साका नहीं किया। इसलिए जैसलमेर के पूर्व के गौरवमय इतिहास की बात नही करने म ही इनकी शान थी। उन्हें भाटियो के साको का नाम लेने म अपनी पराजय की अनुभूति होती थी।

सन् 1303 ई के चितौड के जौहर से भारतवर्ष म हाहाकार मच गया, ऐसा इतिहासकारो, चारणो और बारहठो का मत है। परन्तु इसके दो वर्ष बाद मे जैसलमेर के साके म इन हिन्दू धर्म के रक्षको के जू तक नही रेंगी। आखिर जौहर जौहर ही था, चाहे वह सुलतान खिलजी के विरुद्ध चितौड मे हुआ हो या जैसलमेर म। क्या चितौड म प्राण न्यौछावर करने में पीडा अधिक थी और जैसलमेर मे कम? केवल यही नही, सन् 1576 ई के हल्दीघाटी के युद्ध ने ऐसा करिश्मा किया कि यही लोग इस पराजय को विजय का उत्कृष्ट रूप देने से नही चूके। तथ्य केवल इतना था कि महाराणा प्रताप किन्ही कारणो से युद्ध के मैदान से चले गए।

जैसलमेर के भाटी गरीब थे, भूखे थे। मेवाडी अमीर थे, उनका राज्य धन धान्य से सम्पन्न था। परन्तु भूखा भाटी मर सकता था, उसके लिए जीने का कोई आधार नही था। अमीर क्यो मरे, उसे संसार के सुख जो भोगने थ। मरना सीखना है तो भाटियो से सीखो, जीना तो अमीरों का होता है।

कवि, चारण, बारहठ, इतिहासकार और लेखक गरीब का क्यो गुणगान करें, भूखा उनका पेट नहीं भर सकता। महिमा और गुणगान तो उनका होता था जो इनकी झोली सोने-चादी के टुकडो से भर दे।

फिर भी भाटियो के अनेक साके हुए, कर्नल टाड तक ने इन्ह माना है। भाटियो के साके हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए नही किए गए थे, उन्ह इस्लाम धर्म के प्रचार-प्रभाव से कोई भय नहीं था। साके करना उनकी आन थी, उनके सस्कारों मे था, उन्हे अपने पूर्वजो की परम्पराओं और मान्यताओ को निभाना था।

भाटियो के लिए सूअर का शिकार करना निषेध क्यो है ?

यदुवश के आठवें राजा सुबाहु एक समय सूअरो का शिकार खेलते हुए और उनका पीछा करते हुए पाताल देश पहुच गये। वहा उन्हें भगवान वराह के साक्षात् दर्शन हुए। इस दैविक चमत्कार को देख कर राजा सुबाहू ने भविष्य म उनके या उनके वशजों द्वारा सूअर का शिकार कभी नही करन का प्रण किया। इस प्रण को भाटी अभी तक निभाते आए हैं।

राजा गजू, 96 वें शासक (सन् 465–474 ई), बलख बोखारा गए हुए थे। वहा उन्होने सूअर का शिकार करके राजा सुबाहु द्वारा किए गए प्रण को भग किया। वहा के *बादशाह को जब इसकी सूचना मिली तो वह राजा गजू से नाराज हुए, क्योंकि उन्हे यदुवशियों* के प्रण का ज्ञान था। किसी वशज द्वारा अपने पूर्वजो के प्रण को भग करना वह अच्छा नही समझते थे। लेकिन राजा गजू तिरस्कार के भय से बादशाह के सामने उनके द्वारा सूअर के शिकार किए जाने की घटना से मुकर गए। तब बादशाह ने तथ्यो की जांच के लिए अपने आदमी भेजे। देवी सांगियाजी की कृपा से गजू द्वारा मारा गया सूअर जीवित मिल गया। बादशाह राजा गजू की सच्चाई से बहुत प्रसन्न और प्रभावित हुए। परन्तु राजा गजू स्वय को, अपने पूवज राजा सुबाहु का प्रण भग करने पर और बादशाह के समक्ष झूठ बोलने पर, बडा पश्चाताप हुआ। यह तो देवी सांगियाजी की कृपा हुई थी कि उन्होंने उनकी लाज रख ली। तब से राजा गजू ने सूअर का शिकार नही करने का दुबारा प्रण किया।

उपरोक्त के अलावा सबसे बडा कारण यह था कि भाटियो के सिन्ध और पजाब प्रान्तो के मुसलमानो से गहरे सम्बन्ध थे। जैसलमेर और पूगल क्षेत्र मे लगभग अस्सी प्रतिशत जनसख्या मुसलमानो की है। यह सभी मुसलमान पहले हिन्दू थे इनमे से अधिकाश राजपूत थे। यह कभी भी गो हत्या नही करते थे और न ही गो मास खाते थे। इन मुसलमान मित्रो और प्रजा की धार्मिक भावनाओ का आदर करते हुए भाटियो ने सूअर का शिकार करना या मास खाना निषेध किया। इससे जनता और शासकवर्ग मे सद्भावना बनी रही, उनकी आपसी खान पान की घृणा के कारण दूरी नही बनी। धार्मिक घृणा कभी नही उभरी और कट्टरपन के बीज नही बोये गये। यही कारण है कि मुसलमान भाई भाटियो के उत्सवो मे स्नेह पूर्वक भाग लेते हैं जहा उन्हे बराबरी का सम्मान मिलता है। भाटी और मुसलमान पीढियो से धर्मभाई रहे हैं। मुसलमान भाटी शासको के सेनापति, सामन्त, खान प्रधान, दीवान और मुखिया रहे हैं। युद्ध और शान्ति मे मुसलमानो का योगदान अन्य भाटियो से कम नहीं रहा। इसलिए भाटी सूअर को मुसलमानो की ही तरह घृणा की दृष्टि से देखते है।

भाटियो के लिए जाल के वृक्ष का महत्व

जब बालक राजकुमार देवराज को नेग आल राईका भटिंडा से सुरक्षित निकाल कर सांढ पर चढ़ा कर ले जा रहा था, तब देवायत पुरोहित के खेत मे एक जाल का ऊचा और घना वृक्ष दिखा। राईके ने कुमार देवराज को इस जाल के पेड के सहारे पुरोहित के खेत म उतारना उचित समझा क्योकि साढ दोनो के भार के कारण थक रही थी। योजना के अनुसार ज्योही साढ दौड़ती हुई जाल के पेड के नीचे से निकली, कुमार देवराज जाल की टहनी पकड कर झूल गये और उसके घने पत्तो मे छिप गय। कुछ देर कुमार वहा छिपे रहे, फिर चारो तरफ देखकर नीचे उतरे और पुरोहित के पास गए। उसे सारी घटना बताई।

क्योंकि जाल के वृक्ष ने कुमार देवराज को शरण देकर उनका पीछा कर रहे वराहो से उनके प्राणो की रक्षा की थी, जिससे भाटी वश की रक्षा हुई, इसलिए भाटियो के लिए जाल वृक्ष इष्ट वृक्ष है। वह इसकी इतनी ही मान्यता रखते हैं जितनी पुरोहितो और आल राईको की।

इसको अगर वर्तमान दृष्टिकोण से देखें तो भाटियो द्वारा जाल के वृक्ष को सरक्षण देकर पर्यावरण की रक्षा करना था। जैसलमेर, पूगल, सिन्ध नदी के पूर्वी प्रदेशो मे, जाल का वृक्ष बहुतायत से पाया जाता है। इससे वन्य पशु, भेड, बकरी, गाय, ऊट आदि को तपते रेगिस्तान मे ठण्डी और घनी छाया मिलती है। जनता को ईन्धन मिलता है। झापडो और मकानों के लिए लकडी मिलती है, जाल की लकडी मे दीमक नही लगती। इस प्रकार से जाल के वृक्ष को सरक्षण देना आवश्यक था। कुमार देवराज की ऐतिहासिक घटना के साथ इसे जोडने से जाल वृक्ष को श्रद्धा और सम्मान मिल गया। भाटियो द्वारा जाल का हरा वृक्ष काटना वर्जित है।

भाटिया (खत्रियों) का भाटीवंश से उद्गम

रावल सिद्ध देवराज के पितामह राव तणुजी यदुवंश के 108 वें शासक थे। यह तणोत की राजगद्दी पर वि स 862 (सन् 805 ई) म आए और सन् 820 में कुमार विजयराव को राजकाज संभला कर स्वय श्री लक्ष्मीनाथ जी की सेवा-पूजा म लीन हो गए।

राव तणुजी के छठे छोटे भाई का नाम जाम था, उनके वशज महाजन साहूकार 'भाटिया' हुए। यह सब अब खत्री समाज के अग हैं। भाटिया साहूकार सिन्ध प्रान्त मे जाकर व्यापार करने लगे। वहा से यह मुलतान, पजाब, लाहौर, पेशावर म अपनी ईमानदारी के कारण व्यापार के साथ फलते गए। सिन्ध के भाटिया सिन्ध म रहे और जो पजाब चले गए उन्होने वहा की सस्कृति को अपनाया और पजाबी भाटिया कहलाए। रावल शालिवाहन (द्वितीय) (सन् 1168–1190 ई) के राजकुमार चन्द्र ने कपूरथला और उनके वशजो ने पटियाला राज्य स्थापित किए। अनक भाटिया परिवार अपने वशजो के सरक्षण मे वहा चले गये और समृद्ध हुए। उनम से अनेक परिवारो न सिख धर्म ग्रहण कर लिया, जिससे उन्हे इन सिख राज्यो का राजाश्रय भी मिलता रहा।

अधिकाश भाटिया व्यापार मे लगे, इन्होंने अच्छा धन कमाया और अपने धर्म के प्रति सचेत होने से इन्हे यश भी मिलता रहा। यह जहा भी गए वहा इन्होने जन-उपयोगी कार्य करवाये। कुए, तालाब और धर्मशालाए बनवाई।

'इनके हर तरह की खूबिया, लायकपन की बातें सुनने से इस बात की खुशी जियादा होती है कि भाटीवशी ऐसे है तथा ससार उत्पन्न होने से आज पर्यन्त का हाल दरीयाफत करने व *अपनापने की निशबत ख्याल रखने म कमाल किया है। इनके भाट कई साल से* नही आए हैं। पारसाल जूनीपोथी लेकर दो जने असल वतन रामभ आए थे, परन्तु यहा वालो ने कहा बम्बई जावें। फेर न मालूम कहा गए।'

(तवारिख जैसलमेर—पेज 239–40, लक्ष्मी चन्द, सम्वत् 1948, सन् 1891 ई)

भाटियो के अन्य राज्य व राजवंश

माटिया के निम्नलिखित राज्य थे और राजवश हैं –

1 सिरमौर, नाहन, कपूरथला, पटियाला

राजा शालिवाहन (प्रथम) (सन् 194 227 ई) गजनी के राजा गज के राजकुमार थे। शालिवाहन के पुत्रो ने हिमालय मे बद्रीनाथ तक राज्य स्थापित किए। कालान्तर मे नाहन के राजा बच्छराज के पुत्र नही हुआ और राज्य का उत्तराधिकारी बनने योग्य कोई यदुवशी नही रहा। तब वहा के सामन्त मण्डल ने जैसलमेर के रावल शालिवाहन (द्वितीय) (सन् 1168-1190 ई) के पास राजदूत भेजे और उन्हे भाटी राजपुत्र देने का आग्रह किया, जिसे गोद लिया जा सके। रावल शालिवाहन ने अपन तीसरे पुत्र हसराज के पुत्र कुमार मनरूप को योग्य समझ कर कुटुम्ब सहित दत्तक पुत्र बनने के लिए भेजा और मार्ग के लिए सुविधा और सुरक्षा के प्रबन्ध किए। दुर्भाग्यवश कुमार मनरूप की रास्ते के पहाडी जगल मे मृत्यु हो गई। उनकी युवरानी गर्भवती थी। जगल म ही पलास के पेड के नीचे उनका प्रसव हुआ। पुत्र पैदा हुआ। क्योकि यह पलास के पेड के नीचे पैदा हुए थे इसलिए इनका नाम पलास रखा गया। यही कुमार बडे होकर नाहन और सिरमौर राज्य के शासक बने। इनके वशज 'पलासिया भाटी' कहलाये। जयपुर के महाराजा भवानीसिंह की पत्नी महारानी पद्मिनी इसी राजवश की पलासिया भाटी हैं।

रावल शालिवाहन के दूसरे पुत्र चन्द्र जो कुमार मनरूप के साथ जैसलमेर से रवाना हुए थे, मार्ग म ही रह गए थे। इन्होने कपूरथला का राजवश और राज्य स्थापित किया। इनकी एक शाखा न पटियाला राज्य और इसका राजवश स्थापित किया। सिख होते हुए भी कपूरथला और पटियाला के राजवश के लोग यदुवशी भाटी हैं। हमे इन पर गर्व है। गिरनार, करौली, कच्छ, नवानगर के शासक यदुवशी हुए। यह राज्य लाहौर से ही अलग राज्य स्थापित होने आरम्भ हो गए थे। बदलते बदलते अभी भी यह वश यदुवशी है।

राणा लाखा फुलानी और जाम ऊमड़ा—यदुवंशी

धवल के लाला फुलानी—केलाकोट :

भुज नगर (काठियावाड) से सोलह मील दक्षिण म केलाकोट के राणा धवल के पुत्र फूला, जाड़ेचा भाटी राज्य करते थे। एक बार वह जुमला नाम के अहीर के अतिथि बने। अहीर ने अपनी छोटी पुत्री का विवाह राणा फूला से कर दिया। वह अपनी अहीर रानी के साथ कई दिनो तक वही रहे लेकिन इसे वह अपनी राजधानी केलाकोट पहले की रानी के मोहवश और भयवश नही ले जा पाये। अहीर रानी ने पीहर मे ही एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम 'लाखा' रखा गया। कुमार लाखा बहुत होनहार थे। वह बडे होकर अपने पिता राणा फूला के पास केलाकोट चले गए और राज काज मे पिता की सहायता करने लगे। दुर्भाग्यवश किसी शिकायत पर उन्हें देश छोडने का दण्ड दिया गया। उनके एक गायक ने उनके पास परदेश जाकर वापिस देश लौटने का आग्रह किया –

फूल सुगन्धी वाडिया,
भाटी देस सिघाण,
तो बिन सूनी सिंघडी,
चल लाखा महराण।

राणा लाखा वापिस देश आ गए और सुचारु रूप से राज्य करने लगे। वह रोज सुबह सूर्योदय से पहले अपार दान करते थे, किसी को सोना चादी, किसी को भूमि और किसी को गाय या अन्य पशु दान मे देते थे। इनके अलावा दान मे अन्न, वस्त्र आदि की कोई कमी नही रखते थे। ईश्वर की ऐसी कृपा थी कि उनका कोष कभी खाली नही रहता था और दान देते वक्त उन्ह कभी चिन्ता नही रही कि कल दान म क्या देंगे ? उनकी दानवीरता के कारण दूर दूर स सभी प्रकार के लोग, गरीब, जरूरतमन्द, भिखारी, ब्राह्मण, चारण, सूर्योदय स पहले दान प्राप्त करने के लिए उपस्थित रहते थे और दान लेकर सूर्योदय से पहले वहा से चले जाते थे। उस समय उनके बराबर दानी राजा आसपास के देशो मे कोई नही था। उनके दान की प्रशसा दूर दूर तक फैली हुई थी। तभी मे सूर्योदय से पहले की वेला को 'फूला लाखानी की वेला' कह कर सम्बोधित करते हैं।

उनके देश निकाले की अवधि मे उनकी सोढी रानी मान भोलिया नामक वादक के साथ प्रेमजाल म फस गयी थी। जब राणा लाखा को इस भेद का पता लगा तो उन्होने राणी या वादक को कोई सजा नही दी। उन्होने स्वय की राणी को वादक को दान के रूप म सौंप दी।

सन् 960 ई में मूलराज सोलकी ने गुजरात पर अधिकार किया और वह अनहिलपुर

पाटन से राज्य करने लगे। सन् 979 ई में मूलराज सोलंकी ने युद्ध में राणा लाखा को परास्त किया। युद्ध मे राणा मारे गए।

कच्छ प्रदेश की यदुवंशी समा जाति (समा जाति, श्रीकृष्ण के सम्भा के वंशज) सिन्ध प्रदेश से आकर वहा बस गई थी। धीरे-धीरे यह समा जाति शक्तिशाली हुई और जाम ऊमडा के नेतृत्व म सन् 1334-35 ई मे अपने राज्य की नींव रखी। जाम ऊमडा स्वय बडे दानी राजा थे। वह उनसे लगभग चार सौ साल पहले हुए राणा लाखा फूलानी की दानवीरता की गाथाएँ सुन-सुन कर मन ही मन उनसे ईर्ष्या करने लगे। अपने आपको राणा लाखा फूलानी से बडा दानी घोषित करवाने के ध्येय से उन्होंने अपना पूरा राज्य ही सावलसुद चारण को दान में देकर, स्वय ने चारण का राज्याभिषेक कर दिया। चारण फूट पड़ा –

माई अहडा पूत जण, जहडा ऊमड जाम।
सातों सिन्ध समपिया, जाणे एक्ख गाम।

ऊमडा जाम के वशजो ने बादशाह अकबर के समय इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था और कई वर्षों तक सिन्ध प्रदेश मे राज्य करते रहे।

ऊमडा और सूमडा जाति जैसलमेर और अमरकोट के पश्चिम के सिन्ध प्रदेश के धाट क्षेत्र मे राज्य करते थे।

कर्नल टाड के अनुसार सिहोजी राठौड (सन् 1212 ई के बाद मे) वर्तमान बीकानेर के बीस मील पश्चिम मे स्थित एक सोलंकी राजपूतो के छोटे ठिकाणे म सेवा करने लग गए। सिहोजी राठौड ने सोलंकियों के शत्रु फूलडा के शासक जाड़ेचा लाखा फूलानी को परास्त किया। इस युद्ध म सिहोजी राठौड के पिता सेतराम मारे गए थे। सोलंकी ठाकुर ने अपनी पुत्री का विवाह सिहोजी के साथ कर दिया। यहा से सिहोजी पाटन (गुजरात) गए और द्वारका के मन्दिर मे भगवान के दर्शन पूजा की। सौभाग्य से उसी क्षेत्र मे उनकी भेंट लाखा फुलानी से हो गई। वह पराजय के बाद म सौराष्ट्र काठियावाड के प्रदेश मे चले गए थे। लाखा फुलानी को देखते ही सिहोजी राठौड का खून खौल उठा, उन्होंने अपने पिता सेतराम की मृत्यु का बदला उनसे लेने का निश्चय किया और राठौडो की प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए उनसे युद्ध किया। युद्ध मे सिहोजी का एक भतीजा मारा गया। द्वन्द्व युद्ध मे लाखा फुलानी मारे गए।

कुछ अन्य कवित्त

1. गजनी का गढ युधिष्ठिर के सम्वत तीन सौ आठ मे बनाया गया था

तीन सात अत्त शक. धर्म वैशाखे तीन ।
रवि रोहिणी गजवाहू ने गजनी रची नवीन ।।

2 देवराज की माता ने जुजुराव से कहा :

सुण झभा एक विनती वेण न पाछा लेह ।
धा मुटा का भाटिया कोट बणावण देह ।

जुजुराव ने देवराज से कहा :

सुण रावल देवराजजी झभो बाक एम ।
धरा रे सणपण नही कोट अडावो केम ।।

3 देवराज भटिन्डा मे वराह पवार शत्रुओ की गर्भवती स्त्रियो के गर्भ के बच्चे मारने लगे तब उनकी सास ने कहा :

इतनी न कीजे देवराज अबला इस विध कहे,
जग रहसी यह बात अति अनीत न कीजिये ।

4. विजयराव लाझो के लिए

उत्तराद भिड किंवाड भाटी झेलणहार,
वचन निभायो विजयराव ने सबर बाध्यो सार ।

5. भोजदेव के द्वारा लुद्रवा मे लडे गए युद्ध के विषय मे .

दोहा– तोड धड तुरकाण री माडूखान मजेज,
दाखे अनवी भोजदे जादम करे न जेज ।

सोरठा– गौरी साबुदीन, अडिया रावल भोजदे ।
नाम अमर कर लीन, नवसौ बारह की सवत् ।।

6 जैसलमेर के गढ के स्थान के विषय मे श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा

जैसल नाम नृपति यदुवश मे एक थाय,
किसी काल के अन्तर इण था रहसी आय ।

7 राजा शालिवाहन के पुत्र रिसालु ने राजा भोज की पुत्री के सिवाय अन्य राजकुमारियो से विवाह करने से मना कर दिया क्योकि केवल राजा भोज की पुत्री ही उनके प्रश्नो का सही उत्तर दे सकी ।

प्रश्न : छप्प '	कौन तूल से तुच्छ, कौन काजल से कारो,	उत्तर : मागने वाला,
	कौन लोह से कठन, कौन सोना से सारो,	कलक, सूम,
	कौन बिच्छु पर डक, कौन मदराते मातो,	सपूत, कुवचन, काम,
	कौन रवि पर तेज, कौन अग्नि ते तातो,	ज्ञान, क्रोध,
	कौन दूध से उजल, कौन जिम्या अमृत भरी,	जस, सज्जन।
	अर्थ बताओ इणा तिणा, मवस्र ते पहिली करनगरी (1)	
दोहा—	कहा न अग्नि मे जले, कहा न सिन्धु समाय,	उत्तर . धर्म, मन,
	कहा न अवला कर सके, काल कहा नही खाय,	पुत्र, नाम,
	कौन पुरुप जननी बिना, कौन मौत बिन काल,	अलख, नीद,
	कौन सागर पाळ बिन, कौन मूल बिन डाल (2)	विद्या, पवन,
	को घीया चोपडी का वाल्हो बीरा,	आर्ग,
	की कपास कावली की ठडो नीरा (3)	नेह।

8 फूलवती हठियो घरिये, घारु घरये सुनार,
सागोदे मत राखियो, राजा भोज कुमार।

अध्याय–दो : सिंहावलोकन

पूगल के भाटियों का संक्षेप में इतिहास
सन् 1290 से 1989 ई. तक (700 वर्षों का)

(1) रावल पूनपाल :

यह सन् 1288 ई में जैसलमेर के रावल बने। इनके उग्र स्वभाव और स्वतन्त्र व्यक्तित्व के कारण वहा के प्रधान सामन्तो एव अन्य प्रमुखो ने इन्हे राजगद्दी से पदच्युत कर दिया। इनके दो वर्ष और पाच माह तक शासन करने के पश्चात् सन् 1290 ई मे, इनकी अनुपस्थिति मे जैतसिंह (जैत्रसीह) को जैसलमेर का रावल घोषित कर दिया गया। रावल पूनपाल भाटियो के गजनी के लकडी के तख्त को साथ लेकर थोडे से साथियो सहित जैसलमेर छोडकर बीकमपुर और पूगल की ओर प्रस्थान कर गए। दिल्ली के सुलतान बलबन (सन् 1266–86 ई) के समय जैतुग भाटी बीकमपुर पर अपना अधिकार खो बैठे थे और मुलतान के शासको की परोक्ष अनुमति से नायक (थोरी) पूगल के गढ मे रहने लग गए थे। इन दोनों स्थानों पर लगा और बलोचो का दबदबा था, उन्हे मुलतान के शासको का सरक्षण प्राप्त था।

रावल पूनपाल ने अनेक छोटे-मोटे युद्ध किए, छापे मारे और अन्य प्रयास भी किए किन्तु वह बीकमपुर और पूगल पर अधिकार करने मे असमर्थ रहे। इन्होने अपना जीवन कष्टमय सघर्ष मे ही बिताया और इसी सघर्ष मे इनके पुत्र लखमन और पौत्र का जीवन भी व्यतीत हो गया। इन तीन पीढियो के अधिकार मे बीकमपुर और पूगल नही आ सके। नये राज्य की स्थापना के लिए रेगिस्तान के दुरूह जीवन, अस्थिर आवास, साधनहीनता आदि मे जूझते हुए अगले नब्बे वर्ष यों ही बीत गए। पीढी दर पीढी पूगल पर अधिकार करने का अडिग प्रण इनके साथ अवश्य रहा, जिसे रावल पूनपाल के प्रपौत्र रणकदेव ने सन् 1380 ई मे पूगल लेकर पूरा किया। चितौड की पद्मिनी, रावल पूनपाल की पुत्री थी।

(2) राव रणकदेव—सन् 1380-1414 ई

इन्होने सन् 1380 ई मे नायको को पूगल छोडने पर बाध्य किया, किले पर अधिकार किया और अपने पूर्वजो के गजनी के तख्त पर बैठ कर अपने आप को पूगल का स्वतन्त्र भाटी राव घोषित किया। नायको का पूगल पर, सन 1277-88 ई से सन् 1380 ई तक, लगभग एक सौ वर्षों तक अधिकार रहा।

पूगल मे अपनी स्थिति सतोषजनक करने के पश्चात् राव रणकदेव ने मरोठ के जोइयो पर आक्रमण किया, उन्हे परास्त करके बिना अपने अधिकार मे लिया। इन्होने जोइयो से

मुमनवाहन भी छीन लिया था परन्तु बीकमपाल जोइये ने कुछ समय पश्चात् यह किला वापिस ले लिया।

राव रणकदेव ने पूर्व म स्थित जागलू राज्य के साखलो से मित्रता की और सुरजडा गाव के माहेराज साखले को पूगल राज्य के दीवान का पद दिया।

मेहवा के रावल मल्लीनाथ राठौड के छोटे भाई वीरमदेव राठौड, लखवेरा के शासक डाला जोइया की सेवा में थे। उन्होने मौका पाकर डाला जोइया के मामा भूकन भाटी अबोहरिया का सन् 1383 ई मे वध कर डाला। इस वध का बदला लेने के लिए तुरन्त बाद म डाला जोइया ने वीरमदेव राठौड का पीछा करके उन्हे मार डाला।

सन् 1361 ई म रावल घडसी के देहान्त होने पर, हमीर के छोटे भाई कुमार केहर जैसलमेर के रावल बने। इन्होने रावल घडसी की रानी को वचन दिया था कि इनके पश्चात् हमीर के पौत्र जैतसी को रावल बनायेंगे। इन्होंने सन् 1390 ई मे कुमार जैतसी को मेवाड विवाह करने के लिए भेजा। मार्ग मे माहेराज साखले ने बारात की आव-भगत की और जैतसी को फुसला कर उन्हे अपनी पुत्री ब्याह दी। इस घटना से रावल केहर अत्यन्त अप्रसन्न हुए, उन्होने कुमार जैतसी को जैसलमेर राज्य से देश निकाला दे दिया। बदले की भावना से और अपना अलग राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से कुमार जैतसी और साखलो ने रात म पूगल पर अचानक आक्रमण कर दिया। सन् 1390 ई के इस आक्रमण मे कुमार जैतसी पूगल म मारे गए।

सन् 1411 ई मे डाला जोइये के पुत्र धीरदेव जोइया पूगल के राव रणकदेव की पुत्री से विवाह करने के लिए बारात लेकर पूगल गए हुए थे। पीछे लखवेरा में डाला जोइया अकेले ही थे। वीरमदेव राठौड के पुत्र गोगादेव राठौड ने सुअवसर देखकर डाला जोइया को मारकर उससे अपने पिता के वध का बदला लिया। इस सूचना के पूगल पहुचते ही धीरदेव जोइया और राव रणकदेव ने नाल गाव के पास गोगादेव पर आक्रमण किया और उन्हें अन्य साथियों सहित वहा मार डाला।

गोगादेव के भाई राव चून्डा नागौर और मन्डोर के शासक थे। माहेराज साखला पूगल पर अधिकार करने के विफल प्रयास के बाद में राव चून्डा की सेवा करने लगे थे।

राव रणकदेव के वीर और साहसी पुत्र राजकुमार शार्दूल आडानाना क्षेत्र से गगड निर्गण की चुनी हुई 140 घोडे घोडिया हाककर ले आए थे। लौटते हुए वह मोहिलो के गाव ओरियन्ट म तालाब के किनारे रुके। वहां के शासक मानिकराव मोहिल ने राजकुमार शार्दूल और उनके साथियों की अच्छी आव-भगत की। मानिकराव मोहिल की पुत्री कोडमदे की सगाई राव चून्डा के पुत्र अरडकमल से हो चुकी थी। राजकुमार शार्दूल को देखकर वह उन पर मोहित हो गई और उनके साथ विवाह करने के लिए तन मन से प्रण कर लिया। माता पिता के बहुत समझाने पर भी कोडमदे अपने प्रण पर अडिग रही। अत में हार मानकर माता पिता ने कुछ समय पश्चात् उसका विवाह राजकुमार शार्दूल से कर दिया। अपनी मगेतर का राजकुमार शार्दूल के साथ विवाह होने से अरडकमल अत्यन्त क्रुद्ध हो गए। माहेराज साखला भी अपने जवाई जैतसी के पूगल मे मारे जाने से प्रतिशोध की अग्नि म जल रहे थे। इन्होने राजकुमार शार्दूल की पूगल लौटती हुई बारात पर कोडमदेसर के पास

आक्रमण किया। इस युद्ध में राजकुमार शार्दूल मारे गए। कोडमदे उनके साथ वहीं पर सन् 1414 ई में सती हुईं। इस युद्ध मे अरडकमल भी बुरी तरह घायल हो गए थे। वह छ. माह पश्चात् मर गए।

कुछ समय पश्चात् सन् 1414 ई मे ही राव रणकदेव ने अपने पुत्र की मृत्यु का बदला लेने के लिए माहेराज सांखले पर उनके गाव मुडाले मे आक्रमण करके उन्हें मार डाला। इसके तुरन्त बाद मे अपने पिता वीरमदेव राठोड, भाई गोगादेव, पुत्र अरडकमल और मित्र व हितैषी माहेराज सांखले की मृत्यु का बदला लेने के उद्देश्य से राव चून्डा ने राव रणकदेव का पीछा किया। राव चून्डा ने सन् 1414 ई मे ही सिढ्ढा(सिरड) गाव के तालाब के किनारे राव रणकदेव को मार डाला।

राव रणकदेव के राठौड़ों से बैर चुकने चुकाने मे व्यस्त रहने के कारण वह अपने राज्य की पश्चिमी सीमा पर पूरा नियन्त्रण नही रख सके, मरोठ क्षेत्र उनके अधिकार से निकल गया। राव रणकदेव के पुत्र राजकुमार तनु(तिराड़)और दीवान मेहराव हमीरोत भाटी, राव चून्डा के विरुद्ध सहायता प्राप्त करने के लिए मुलतान के शासक के पास गए थे। वहा उन्होंने अपना धर्म तक परिवर्तन कर लिया परन्तु वांछित सहायता प्राप्त करने मे असफल रहे। वह पूगल खाली हाथ लौट आए। तनु की अयोग्यता के कारण और उनके द्वारा इस्लाम धर्म स्वीकार किए जाने से, उनकी माता सोढी रानी ने उन्हें पूगल का राव बनने के अधिकार से वंचित कर दिया।

(3) राव केलण–सन् 1414-1430 ई.

केलण, जैसलमेर के रावल केहर (सन् 1361-96 ई) के ज्येष्ठ पुत्र थे। रावल केहर की इच्छा छोटे राजकुमार लखनसेन को राजगद्दी देने की थी। इसलिए राजकुमार केलण जैसलमेर छोडकर अपने दीवान मातल सिहराव भाटी के साथ अपनी जागीर आसिनकोट चले गए। छोटे भाई लखनसेन के रावल बनने पर वह उनकी दुविधा दूर करने के लिए आसिनकोट भी छोडकर बीकमपुर आ गए। इन्होने गाव मे आए छोटे भाई सोम को गिराघी की जागीर दी और पालीवाल (ब्राह्मण) साहूकारों को बाप, भाजासर म बसाया।

राव रणकदेव की मृत्यु के पश्चात् उनकी सोढ़ी रानी ने समस्त परिस्थितियों और अपने पुत्र तनु की योग्यता को आक कर, केलण को पूगल का राव बनाने का निश्चय किया। केलण राव रणकदेव के वंशज भी थे। सोढी रानी ने, पेमणा कमाल पीर (गायक) को बीकमपुर भेजकर केलण को पूगल आने के लिए निमन्त्रण भेजा। रानी ने केलण को पूगल की राजगद्दी देने से पहले उनसे दो वचन लिए उनके पुत्र तनु और दीवान मेहराव हमीरोत को जागीरें देना और राव चून्डा को मारकर उनके पति राव रणकदेव और पुत्र शार्दूल की मृत्यु का बदला लेना। इसके पश्चात् केलण गजनी के भाटियों के तख्त पर बैठे और पूगल के राव घोषित किए गए।

कुछ समय पश्चात् राव केलण ने दे
साथ मे भादा पाए, उनके पुत्र • भी

देरावर पर अधिकार हो गया परन्तु युद्ध मे रूपसी पाहू और महसमल मारे गए। राव रणकदेव लम्बे समय तक खेड के राठौड़ा स उलझे रहे थे, इसलिए पर्याप्त ध्यान नही देने के कारण मरोठ उनक अधिकार स निकल गया था। राव केलण ने पूगल की सुरक्षा व्यवस्था और प्रशासन अपने पुत्र रणमल को सौंपी और मरोठ पर आक्रमण करके वहा अधिकार कर लिया। इसके बाद मे उन्होंने गारबारा, हापासर, मोटासर आदि गावो सहित 140 गावो पर अधिकार किया।

राज्य की सीमा का विस्तार करने के लिए राव केलण ने नाणणवाट, बीजनोत आदि के आस-पास के जागीरदारो को अपने नियन्त्रण मे करके यह किले अपने अधिकार मे कर लिए। उन्होंने कुछ समय तक शक्ति सचय करके सतलज नदी को पार किया और मुलतान से लगभग साठ मील पूर्व म पुरानी ब्यास नदी के पेटे मे स्थित केहरोर के पुराने किले पर अधिकार कर लिया। यह किला सन् 731 ई मे कुमार केहर भाटी द्वारा बनवाया गया था। अब राव केलण मुलतान की दहरी पर हावी थे।

अपने पश्चिम के विजय अभियाना मे लौटकर राव केलण ने तनु और मेहराव हमीरोत को साथ लेकर, सन् 1417 ई मे भटनर पर आक्रमण करके, वहा के किले पर अधिकार किया। यह किला सन् 295 ई म भूपत भाटी द्वारा बनवाया गया था। उन्होंने उस क्षेत्र में तनु और मेहराव हमीरोत को जागीरें दी, परन्तु यह अयोग्य और कमजोर शासक थे। कुछ समय पश्चात् भटनेर छोडकर यह अबोहर चले गए और वहा के अबोहरिया भाटी मुसलमानो मे विलीन हो गए। तनु के वशज मुमानी भाटी मुसलमान और हमीरोत के वशज, हमीरोत भाटी मुसलमान कहलाए।

सन् 1418 ई मे राव केलण ने मोढी रानी को दिए गए अपने दूसरे वचन को पूरा करने का निश्चय किया। इसके लिए पहले उन्होंने पूगल और नागौर राज्यो के बीच म पड़ने वाले जागलू राज्य के सांखलो से मित्रता की और उनके राज्य मे हस्तक्षेप नही करने का उन्ह आश्वासन दिया। फिर उन्होंने अपने पुराने मित्र, मुलतान और अब दिल्ली के शासक सुलतान खिजर खा सय्यद स सैनिक सहायता प्राप्त की। मुलतान के सूबेदार नवाब सलमा खा, जैसलमेर के रावल लखनसेन और जागलू के साखलो की सयुक्त सेना स राव केलण ने नागौर के राव चूण्डा पर आक्रमण किया। राव चूण्डा राव केलण की प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के शिकार हुए, वह बैसाख बदी एकम, वि स 1476, सन् 1418 ई म नागौर के किले के दरवाजे के ठीक बाहर राव केलण द्वारा मारे गए। इस प्रकार बीरमदेव राठौड़ और उनके दोनो पुत्र, गोगादेव और राव चूण्डा, भाटियो द्वारा रण-भूमि मे मारे गए। मारवाड के राव जोधा के पिता मण्डोर के राव रिड़मल, राव चूण्डा के पुत्र और राव केलण के जवाई थ। राव चूण्डा के मारे जाने के तुरन्त बाद म राव केलण ने राठौड़ो स युद्ध बन्द करने के लिए कहा और उन्ह अपने साथ लेकर उनकी सहायतार्थ आई दिल्ली के सुलतान की सेना का नागौर क्षेत्र से बाहर खदेड़ा।

इस प्रकार राव केलण ने मोढी रानी को दिए गए अपने दोनो वचनो को पूरा किया।

सन् 1414 से 1418 ई तक के चार वर्षों के समय म राव केलण का राज्य पश्चिम

और उत्तर मे सिन्ध, पजनद, सतलज, व्यास, घाघर नदियो तक था और पूर्व मे भटनेर, नागौर, बाप और फलौदी तक था।

राव केलण ने अपने सैनिक अभियानों पर लम्बे समय तक अनुपस्थित रहने के समय पीछे से पूगल का प्रशासन सुचारु रूप से चलाने के लिए और अन्य सेवाओ के लिए अपने पुत्र रणमल को मरोठ की जागीर प्रदान की। रणमल के वशज बाद मे केलण भाटी कहलाए।

राव केलण की निरन्तर सफलताओ से मुलतान के शासको को उनके इरादो के प्रति सशय रहने लगा। राव केलण ने मुलतान द्वारा सम्भावित आक्रमण से निपटने के लिए पहल करके मुलतान से पश्चिम की ओर सिन्ध नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित डेरा गाजीखा के शासक जाम इसमाइलखा पर आक्रमण कर दिया। जाम ने सन्धि स्वरूप अपनी पुत्री जावेदा का विवाह राव केलण से कर दिया। मुलतान के शासको को राव केलण की पश्चिम मे डेरा गाजीखा मे और पूर्व मे केहरोर मे उपस्थिति ने भयभीत कर दिया। वह अब उन्हे अपने बराबर का मित्र समझने लगे और उनके व्यवहार मे परिवर्तन आया। मुलतान के शासक फतेह अलिशाह से मित्रता रखकर उन्होने बल प्रयोग से मुमनवाहन, माथेलाव (माथनकोट) और नादरो के किलो पर अधिकार कर लिया। उन्होने केहरोर के किले का जिर्णोद्धार किया, इसका समा बलोचो द्वारा विरोध करने पर उन्हे परास्त किया।

राव केलण के अधीन सतलज नदी पर मूमनवाहन, हाकड़ा (घग्घर) नदी पर मरोठ, व्यास नदी पर केहरोर और सिन्ध नदी के पश्चिमी किनारे पर माथनकोट और डेरा गाजीखा तक का विस्तृत क्षेत्र था।

राव केलण के बढते हुए प्रभाव और व्यक्तिगत पराक्रम से प्रभावित होकर समा बलौचो ने अपनी एक पुत्री का विवाह उनके साथ किया। समा बलौचो का प्रभाव क्षेत्र सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के साथ साथ था।

अमीरखा कोरी ने इनकी शक्ति का परीक्षण करने के लिए केहरोर के पास अपना एक किला बनवाना शुरू किया। राव केलण ने चेतावनी देकर उसे मार दिया और अधूरे किले को ध्वस्त कर दिया।

जाम इसमाइलखा की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्रों, अपने सालो के झगडो से निपटने के लिए, राव केलण ने एक हजार घुडसवार सैनिक उनकी राजधानी डेरा इसमाइलखा मे तैनात किए और वहा का प्रशासन स्वय के पास रखा। इन्होंने पठान रानी जावेदा के पुत्रो, खुमान और थीरा, के जवान होने पर उन्हे भटनेर का क्षेत्र देने के निर्देश दिए। इन पुत्रो के वशज भट्टी (या भाटी) मुसलमान हैं। राव केलण का प्रभाव क्षेत्र हासी और हिसार तक था।

यह मुलतान से बजाज खत्रियो को अपने साथ पूगल राज्य मे लाए ताकि यह साहूकार उनके राज्य मे व्यापार को बढ़ावा दे सकें।

इनके साथ जैसलमेर से इनके एक चचेरे भाई राजपाल भी आए थे। इन्हें केलण ने अपने जीते हुए किलो मे से एक किला देने का वायदा किया था। वह यह वायदा अपने

जीवनकाल मे पूरा नही कर सके। इस वायदे को बाद में राव चाचगदेव ने राजपाल के पुत्र कीरतसिह को जागीर देकर पूरा किया।

राव केलण की पुत्री कोडमदे का विवाह राव चूण्डा के पुत्र राजकुमार रिडमल के साथ हुआ था। कोडमदे मारवाड के राव जोधा की माता बनी। राव रिडमल सन् 1427 ई मे मन्डोर के शासक बने। इनकी एक बहन हस कवर, मेवाड के राणा लाखा को ब्याही हुई थी। राव रिडमल अपनी बहन के पास चित्तौड मे रहते थे, जहा सन् 1438 ई मे इनका वध कर दिया गया। चित्तौड मे इन्होंने अपने भानजे राणा मोकल को मारकर वहा अधिकार करने का षड्यन्त्र किया था। इनके पुत्र जोधा ने पूगल आ कर ननिहाल मे शरण ली और कावनी गाव के पास के क्षेत्र मे सन् 1453 ई तक, पन्द्रह वर्षो तक अस्थाई निवास किया।

राव केलण के चार रानिया थी, दो राजपूतनिया और दो मुसलमान। एक रानी मेहवा के शासक राव मल्लीनाथ की पुत्री और जगमाल की बहन थी। जगमाल का विवाह राव केलण की बहन से हुआ था। दूसरी सोढी रानी थी, उनके पुत्र चाचगदेव बाद मे पूगल के राव बने। राजपूत रानियो से छ पुत्र हुए। कुमार रणमल को राव केलण ने मरोठ की जागीर दी, इन्हे बाद मे राव चाचकदेव ने मरोठ के बदले बीकमपुर की जागीर दी। कुमार विक्रमजीत को खीरवा क्षेत्र दिया। इनके वशज विक्रमजीत केलण भाटी हुए। कुमार अका को राव रिडमल राठोड के पुत्र नाथू न मार दिया था, इनके वशज शेखसरिया केलण भाटी हुए। कुमार कलकरण को तनु की जागीर दी, यह बीरा राठोड से साथ कोडमदेसर मे सन् 1478 ई मे हुए युद्ध मे मारे गए। कुमार हरभान के वशज नाचना, सत्त्वसर क्षेत्र मे रहे, इनके वशज हरभान केलण भाटी हुए। पठान रानी जावेदा के पुत्रो खुमान और थीरा को भटनेर का क्षेत्र दिया। इनके वशज भट्टी मुसलमान हुए।

राव केलण ने सन 1430 ई मे अपनी मृत्यु से पहले, अपन वशज पूगल के भाटियो के लिए कुछ निर्देश दिए, कुछ मर्यादाए निर्धारित की और मार्गदर्शन के लिए कुछ बिन्दु सुझाए। इन सबकी पालना पीढी दर पीढी से होती आ रही है।

(4) राव चाचगदेव . सन् 1430–1448 ई.

इन्हे राव केलण ने एक बहुत बडा और समृद्ध राज्य विरासत मे दिया। इस राज्य का क्षेत्रफल सन् 1947 ई के बीकानेर और जैसलमेर राज्यो के क्षेत्रफल से अधिक था। इन्होंने अपने छोटे भाई रणमल को मरोठ के स्थान पर बीकमपुर मे स्थापित किया। इन्होने अपना अस्थाई अग्रिम सामरिक मुख्यालय मरोठ मे रखा। इससे वह सीमान्त क्षेत्र के निकट रहकर वहा की सुरक्षा व्यवस्था को सुचारु रूप से सम्भाल सके।

मुलतान बहलोल लोदी (सन् 1451–1489 ई) के पिता काला लोदी आरम्भ मे मुलतान के प्रशासक थे और इनकी लगाओ से पुरानी मित्रता थी। इन्हे ब्यास नदी के पास केहरोर मे और सतलज नदी की घाटी में भाटियो की उपस्थिति खटक रही थी। काला लोदी के साथ पहले युद्ध मे राव चाचगदेव विजयी रहे। इस पराजय का बदला लेने के लिए काला लोदी ने दुबारा राव चाचगदेव पर आक्रमण किया। इस युद्ध म भी भाटी विजयी रहे। इन्होन केहरोर मे उत्तर पश्चिम दिशा मे स्थित दुनियापुर के किले पर अधिकार कर

लिया। राव चाचगदेव अपने ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बरसल को दुनियापुर का प्रशासक नियुक्त करके स्वयं विजयोत्सव मनाने के लिए पूगल लौट आए।

राव चाचगदेव की बाला लोदी पर हुई विजयों से प्रभावित हो कर स्वात के हेबत खा सेहता (पुत्र सूमरा खा सेहता) ने अपनी पुत्री सोनल सेहती का विवाह राव चाचगदेव के साथ कर दिया। लगा कोरियो ने भी इनके प्रभाव और पराक्रम की सराहना करते हुए और भविष्य के लिए अच्छे सम्बन्ध बनाए रखने के अभिप्राय से अपनी जाति की एक पुत्री का विवाह भी इनके साथ कर दिया। इस दूसरे विवाह से ब्रह्मवेग लगा क्रुद्ध हो गया। उसने दुनियापुर पर आक्रमण किया और वहा की प्रजा की सम्पत्ति लूटी। राव चाचगदेव ने व्यूह रचना करके दुनियापुर से दस मील पश्चिम मे निर्णायक युद्ध मे ब्रह्मवेग लगा को पराजित करके मारा और प्रजा से लूटी हुई सम्पत्ति उनके स्वामियो को लौटाई।

राव चाचगदेव के बहनोई राव रिडमल राठौड का सन् 1438 ई म मेवाड मे वध कर दिया गया था। पूगल के भानजे राव जोधा अपने अन्य भाईयो और चाचाओ के साथ पूगल की शरण म आए। वह वर्तमान कावनी गाव के पास रहने लगे। जयमलसर और कावनी गांव काफी बाद मे बसाए गए थे। राव रिडमल की राजधानी मन्डोर पर भी मेवाड ने अधिकार कर लिया था। बीकानेर राज्य के भावी संस्थापक और शासक राव बीका का जन्म पाच अगस्त, सन् 1438 ई मे, यही हुआ था।

इसके पश्चात राव चाचगदेव अपने पूर्वजो की भूमि जैसलमेर गए, जहा रावल वरसी ने इनका बडा आदर सत्कार किया। वहा राव चाचगदेव ने अपने पिता राव केलण की पैतृक जागीर, आसिनकोट, रावल वरसी को सहर्ष भेंट की जिसे उन्होने स्वीकार किया। उन्होंने जैसलमेर राज्य को अपनी तन, मन और धन से सेवायें देते रहने का वचन दिया।

जैसलमेर से पूगल लौटते हुए इन्होने बजरग राठौड से सातलमेर छीनकर उसे पुन अपने चाचा सातल को सौपा। इस युद्ध मे उन्होने अपने श्वसुर सूमरा खा सेहता से भी सहायता ली थी। इन्होने बजरग राठौड के तीन पुत्रो को बन्धक बना लिया था, जिन्हे बाद मे भाटी कुमारिया ब्याह कर मुक्त कर दिया गया। वह पोकरण और सातलमेर से चाडको और महेश्वरी भूतडो के 350 परिवार अपने साथ पूगल क्षेत्र मे ले आए ताकि वह पूगल राज्य मे व्यापार बढाने म सहायता करें। यह तीसरा अवसर था जब पूगल के शासक व्यापारियो को अपने साथ लाए। पहले केलण आसिनकोट से पालीवालो को अपने साथ बीकमपुर लाए थे, फिर वह बजाज खत्रियो को मुलतान से पूगल लेकर आए।

इसके पश्चात् इन्होने पीलीबगा के थिरराज खोखर से अपने भाईयो के घोडे छुडवाए और महिपाल डूडी (पवार) को अभद्र व्यवहार के लिए दण्डित किया। राजपाल के बेटे कीरतसिह का विवाह थिरराज खोखर की पुत्री से किया और उन्हे जागीर प्रदान की। कीरतसिह के वशज बाद मे मुसलमान बन गए। परन्तु वह जैसलमेर और पूगल के भाटियो के सदैव मित्र और शुभचिन्तक रहे।

राव चाचगदेव के अन्यत्र व्यस्त रहने के कारण, अवसर का लाभ उठाकर लगो, खोखरो और गक्खडो ने दुनियापुर पर आक्रमण कर दिया, परन्तु इन्होने कुछ समय पश्चात्

इन्हे यहा से निकाल दिया। वृद्धावस्था में राव चाचगदेव किसी असाध्य रोग से ग्रस्त हो गए। उन्होंने विरोचित मृत्यु का आह्वान करते हुए अपने पुराने मित्र और शत्रु, काला लोदी को उनसे युद्ध करने के लिए आमन्त्रित किया। काला लोदी के साथ उनका यह तीसरा और अन्तिम युद्ध था। भाटी इस युद्ध मे परास्त हुए। राव चाचगदेव सन् 1448 ई में रणभूमि मे खेत रहे। इस युद्ध मे पराजय के कारण भाटियों को मिथानकोट, मूमनवाहन, केहरोर और भटनेर के किले काला लोदी को सौंपने पडे। नैणसी के अनुसार भाटियो ने केहरोर और भटनेर के किले नही सौपे थे, अपने अधिकार मे रखे।

इनके जीवन का एक प्रमुख ध्येय, राव जोधा को मण्डोर वापिस दिलवाने का, वह पूरा नहीं कर सके। यह कार्य पाच वर्ष पश्चात्, सन् 1453 ई मे, इनके पुत्र राव बरसल ने पूरा किया।

इनके चार रानिया थी, दो राजपूतनिया और दो मुसलमान। सोढीरानी लालकवर के तीन पुत्र थे। बडे पुत्र बरसल राव बने, मेहरबान को एकनपुर और भीमदे को बीजनोत की जागीरें मिली। मेहरबान और भीमदे के वशज कुछ समय बाद मे मुसलमान बन गए थे। चौहान रानी सूरज कवर के पुत्र रणधीर को देरावर की जागीर दी। परन्तु इनके वशज वहा ज्यादा समय तक नही रह सके, उन्हें बाद मे नोख, सेवडा आदि की जागीरें दी। यह नेतावत भाटी कहलाए। सोनल सेहती रानी के पुत्र, गर्जसिह और राता, अपने ननिहाल चले गए। लगा कोरी रानी के पुत्र कुम्भा को दुनियापुर की महत्त्वपूर्ण जागीर दी।

(5) राव बरसल : सन् 1448–1464 ई.

राव चाचगदेव की मृत्यु के उपरांत लगाओ ने दुनियापुर पर अधिकार कर लिया था। राव बरसल अपने पिता के समय वहा के प्रशासक थे। इन्होने तुरन्त कार्यवाही करके काला लोदी और हैबत खा लगा को परास्त करके दुनियापुर और मूमनवाहन पुनः अपने अधिकार मे ले लिए। इसी समय इन्हे सूचना मिली कि हाशिम खा बलोच ने बीकमपुर पर अधिकार कर लिया था। राव बरसल वहा पहुँचे और बीकमपुर का किला बलोचो से खाली करवाया। वह बीकमपुर के शासक, रणमल के पुत्र गोपा केलण के कामकाज से सन्तुष्ट नहीं थे। उन्होने किले की मरम्मत करवाई, नये दरवाजे लगवाए और वहा रावो के रहने योग्य महल बनवाए। जैसलमेर के रावल बरसी इनसे मिलने और मातम करने के लिए बीकमपुर आए थे।

राव बरसल ने राव जोधा को भरपूर आर्थिक सहायता प्रदान की ताकि वह मन्डोर वापिस जीतने के लिए सेना का सगठन कर सकें। इन्होंने राव जोधा को मन्डोर पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया। अन्ततः सन् 1453 ई मे इनकी आर्थिक और सैनिक सहायता से राव जोधा ने मन्डोर पर अधिकार कर लिया। राव जोधा ने सन् 1459 ई मे जोधपुर नगर बसाया और किले की नीव रखी।

इन्होंने अपनी मृत्यु से कुछ समय पहले, सन् 1464 ई. मे, बरसलपुर बसाया और किले का निर्माण कार्य आरम्भ करवाया। जिसे बाद मे राव शेखा ने पूर्ण करवाया।

इनके चार पुत्र थे। राजकुमार शेखा इनके बाद मे पूगल के राव बने। जगमाल को मूमनवाहन, और जोगायत को केहरोर की जागीरें दी। जोगायत के वशज थोडे समय बाद मे मुसलमान बन गए। चौथे पुत्र तिलोकसी को मरोठ की जागीर दी, इनके पुत्र भैरवदास नि सन्तान रहे, इसलिए राव जैसा ने इस जागीर को खालसे कर लिया था।

(6) राव शेखा सन् 1464-1500 ई.

जोधपुर के राव जोधा के पुत्र बीका न सन् 1465 ई मे अपने मामा नापा साखले के अनुरोध पर नया राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से जोधपुर से जागलू की ओर प्रस्थान किया। उन्होने मार्ग मे देशनोक मे सजीव देवी करणीजी के दर्शन किए। नापा साखले ने इन्हे अपनी जागलू की जागीर भेट की। करणीजी ने पूगल के राव शखा को सलाह दी कि वह अपनी पुत्री रगकवर का विवाह बीका के साथ कर दें, परन्तु बीका के विषय म तथ्यो को जानते हुए उन्होने इस पर कोई विचार नही किया।

सन् 1469 ई. मे राव शेखा अपने पश्चिमी सीमान्त क्षेत्र के निरीक्षण पर गए हुए थे। वहा वह कुछ विद्रोहियो को दबा रहे थे, तभी उनके सैनिको और भाइयो की लापरवाही के कारण मुलतान के शासक हुसैन खा लगा ने उन्हे बन्दी बना लिया। उन्हे मुलतान ले जाया गया। राव शेखा की अनुपस्थिति मे करणीजी ने उनकी रानी, दीवान गोगली भाटी और पुरोहित उपाध्याय पर अनुचित दबाव डालकर रगकवर की सगाई बीका से कर दी। वह फिर राव शेखा को मुलतान के बन्दी गृह से मुक्त करवाने के लिए वहा गई। वहा उनके प्रयास विफल रहने पर मुलतान के पीर ने मध्यस्थता करके राव शेखा को मुक्त करवाया। पीर ने करणीजी को अपनी धर्म बहन बनाया और उन्हे व राव शेखा को पूगल तक सुरक्षित पहुचाने के लिए अपने पाच पीर शिष्य उनके साथ भेजे। यह पीर शिष्य पूगल मे ही रहने लग गए। इनकी खानगाह अब भी पूगल मे है। पीर के मन म करणीजी के प्रति इतनी श्रद्धा थी कि सन् 1947 ई तक प्रतिवर्ष मुलतान के पीर की गद्दी की ओर से दशहरा के नवरात्रो में चढावे के लिए दो बकरे देशनोक भेजे जाते थे। इन्हे देशनोक के चारण 'मामेजी की सिलाड' कह कर सम्बोधित करते थे।

राजकुमारी रगकवर का विवाह सन् 1469 ई म बीका स हो गया। इस सम्बन्ध के लिए राव शेखा, दीवान गोगली भाटी और पुरोहित को दोषी मानते थ। उन्होने इन दोनो को दण्ड देकर पूगल स देश निकाला दिया। बीका ने गोगली भाटी को जेगला गाव मे और उपाध्यायो को मेघासर कोलासर गावो मे शरण देकर बसाया।

सन् 1478 ई म बीका राठौड ने कोडमदेसर म भाटियो के क्षेत्र मे अपने किले का निर्माण कार्य आरम्भ करवाया। भाटियो ने अपने क्षेत्र म इस प्रकार से किले के बनाए जाने का कडा विरोध किया किन्तु राव शेखा अपने जवाई के प्रति तटस्थ रहे। आखिर राव केलण के वयोवृद्ध पुत्र, तनु के कलकरण, ने भाटियो का नेतृत्व सभाला और बीका राठौड पर कोडमदेसर मे आक्रमण करके उन्ह वहा से अधूरे किले को छोडकर पीछे हटने के लिए विवश किया। भाटियो ने निर्माणाधीन किले को ध्वस्त किया। इस युद्ध मे कलकरण ने वीरगति पाई। इस किले के किवाड उतारकर भाटियो ने वरसलपुर के नवनिर्मित किले में चढाये और ध्वस्त किले की तुला को जैसलमर ले जाकर प्रदर्शित किया।

बीका राठोड ने बाद मे, सन् 1485 ई मे, राती घाटी मे अपना किला बनवाया और सन् 1488 ई. मे बीकानेर नाम से नगर की स्थापना की।

सन् 1489 ई मे राव जोधा के देहान्त होने के पश्चात जोधपुर के राव सातल ने बीकानेर पर आक्रमण किया। राव बीका के अनुचित व्यवहार के कारण राव शेखा जोधपुर के राव सातल की सहायता मे थे। करणीजी ने मध्यस्थता करके दोनो भाइयो के आपस के युद्ध को टाला।

कुछ समय पश्चात हिसार के सूबेदार सारग खा और द्रोणपुर के मोहिलो ने मिलकर राव बीदा को द्रोणपुर से निकाल दिया। राव बीदा का विवाह भी पूगल की कुमारी सोहन क्वर से हुआ था। राव शेखा ने अपने राजकुमार हरा को सेना देकर राव बीदा की सहायता करने भेजा। इस युद्ध मे राना बरसत और नरबद मोहिल मारे गए। राव बीदा ने द्रोणपुर पर पुन अधिकार कर लिया।

सन् 1492 ई. मे राव बीका ने जोधपुर से राठौडो के राज्य चिह्न प्राप्त करने के लिए वहा अपने भाई राव सूजा पर आक्रमण किया। इस आक्रमण मे पूगल के राजकुमार हरा राव बीका की सहायता मे अपनी सेना लेकर जोधपुर गए थे। राव सूजा की माता ने बीच बचाव करके राज्य चिह्न राव बीका को सौपे जिससे एक बार फिर भाइयो का आपसी युद्ध टला।

राव शेखा ने अपने दूसरे पुत्र खेमाल को बरसलपुर की जागीर मे 68 गाव देकर, 'रावत' की पदवी दी। इनके वशज खीया भाटी कहलाए। इनके बाद मे राजकुमार हरा पूगल के राव बने। वार्गसिह को हापासर रायमलवाली की जागीर के 140 गांव दिए। वार्गसिह के पुत्र किसनसिह के वशज किसनावत भाटी हुए।

(7) राव हरा : सन् 1500–1535 ई.

राव हरा के समय पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर अपेक्षाकृत शान्ति रही, जहा इनके भाई और सैनिक तैनात थे।

सन् 1509 ई. मे यह अपनी सेना लेकर बीकानेर के राव लूणकरण की, ददरेवा के ठाकुर मार्नासह चौहान के विरुद्ध, युद्ध मे सहायता करने गए। राव लूणकरण ने छ. माह तक ददरेवा के किले की घेराबन्दी किए रखी। कडे सघर्ष के बाद में ही ठाकुर मानसिह ने किला इन्हे सौंपा।

सन् 1512 ई. मे यह अपनी सेना लेकर राव लूणकरण की, फतेहपुर के दौलतखा रंग खा के विरुद्ध, युद्ध मे सहायता करने गए। इसी वर्ष राव लूणकरण की हिसार और सिरसा के चायलो के विरुद्ध युद्ध में सहायता करने गए। इस युद्ध मे इनके भाई रायमलवाली के वार्गसिह भी साथ मे गए थे। सन् 1513 ई में नागौर के नवाब मोहम्मद खां ने बीकानेर पर आक्रमण किया, राव लूणकरण ने राव हरा की सहायता से उसे वापिस नागौर लौट जाने पर विवश किया।

सन् 1526 ई मे राव लूणकरण ने जैसलमेर राज्य पर अकारण आक्रमण किया, राव हरा ने उन्हे ऐसा नहीं करने के लिए सलाह दी, परन्तु वह नहीं माने। राव हरा ने अपनी ना

इनके चार पुत्र थे। राजकुमार शेखा इनके बाद मे पूगल के राव बने। जगमाल को मूमनवाहन, और जोगायत को केहरोर की जागीरें दी। जोगायत के वशज थोडे समय बाद मे मुसलमान बन गए। चौथे पुत्र तिलोक्सी को मरोठ की जागीर दी, इनके पुत्र भैरवदास नि सन्तान रहे, इसलिए राव जैसा ने इस जागीर को खालसे कर लिया था।

(6) राव शेखा सन् 1464-1500 ई.

जोधपुर के राव जोधा के पुत्र बीका ने सन् 1465 ई मे अपने मामा नापा साखले के अनुरोध पर नया राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से जोधपुर से जागलू की ओर प्रस्थान किया। उन्होने मार्ग मे देशनोक मे सजीव देवी करणीजी के दर्शन किए। नापा साखले ने इन्हे अपनी जागलू की जागीर भेट की। करणीजी ने पूगल के राव शेखा को सलाह दी कि वह अपनी पुत्री रगकवर का विवाह बीका के साथ कर दें, परन्तु बीका के विपय मे तथ्यो को जानते हुए उन्होने इस पर कोई विचार नही किया।

सन् 1469 ई. मे राव शेखा अपने पश्चिमी सीमान्त क्षेत्र के निरीक्षण पर गए हुए थे। वहा वह कुछ विद्रोहियो को दबा रहे थे, तभी उनके सैनिको और भाइयो की लापरवाही के कारण मुलतान के शासक हुसैन खा लगा ने उन्हे बन्दी बना लिया। उन्हे मुलतान ले जाया गया। राव शेखा की अनुपस्थिति मे करणीजी ने उनकी रानी, दीवान गोगली भाटी और पुरोहित उपाध्याय पर अनुचित दबाव डालकर रगकवर की सगाई बीका से कर दी। वह फिर राव शेखा को मुलतान के बन्दी गृह से मुक्त करवाने के लिए वहा गई। वहा उनके प्रयास विफल रहने पर मुलतान के पीर ने मध्यस्थता करके राव शेखा को मुक्त करवाया। पीर ने करणीजी को अपनी धर्म बहन बनाया और उन्हे व राव शेखा को पूगल तक सुरक्षित पहुचाने के लिए अपने पाच पीर शिष्य उनके साथ भेजे। यह पीर शिष्य पूगल मे ही रहने लग गए। इनकी खानगाह अब भी पूगल मे है। पीर के मन मे करणीजी के प्रति इतनी श्रद्धा थी कि सन् 1947 ई. तक प्रतिवर्ष मुलतान के पीर की गद्दी की ओर से दशहरा के नवरात्रो मे चढावे के लिए दो बकरे देशनोक भेजे जाते थे। इन्हे देशनोक के चारण 'मामेजी की सिलाड' कह कर सम्बोधित करते थे।

राजकुमारी रगकवर का विवाह सन् 1469 ई मे बीका से हो गया। इस सम्बन्ध के लिए राव शेखा, दीवान गोगली भाटी और पुरोहित को दोषी मानते थे। उन्होने इन दोनो को दण्ड देकर पूगल से देश निकाला दिया। बीका ने गोगली भाटी को जेगला गाव मे और उपाध्यायो को मेघासर कोलासर गावो मे शरण देकर बसाया।

सन् 1478 ई मे बीका राठौड ने कोडमदेसर मे भाटियो के क्षेत्र मे अपने किले का निर्माण कार्य आरम्भ करवाया। भाटियो ने अपने क्षेत्र मे इस प्रकार से किले के बनाए जाने का कडा विरोध किया किन्तु राव शेखा अपने जवाई के प्रति तटस्थ रहे। आखिर राव केलण के वयोवृद्ध पुत्र, तनु के कलकरण, ने भाटियो का नेतृत्व सभाला और बीका राठौड पर कोडमदेसर मे आक्रमण करके उन्हे वहा से अधूरे किले को छोडकर पीछे हटने के लिए विवश किया। भाटियो ने निर्माणाधीन किले को ध्वस्त किया। इस युद्ध मे कलकरण ने वीरगति पाई। इस किले के किवाड उतारकर भाटियो ने बरसलपुर के नवनिर्मित किले मे चढाये और ध्वस्त किले की तुला को जैसलमेर ले जाकर प्रदर्शित किया।

बीका राठौड़ ने बाद मे, सन् 1485 ई मे, राती घाटी मे अपना किला बनवाया और सन् 1488 ई मे बीकानेर नाम से नगर की स्थापना की।

सन् 1489 ई में राव जोधा के देहान्त होने के पश्चात जोधपुर के राव सातल ने बीकानेर पर आक्रमण किया। राव बीका के अनुचित व्यवहार के कारण राव शेखा जोधपुर के राव सातल की सहायता म थे। करणीजी ने मध्यस्थता करके दोनों भाइयों के आपस के युद्ध को टाला।

कुछ समय पश्चात हिसार के सूबेदार सारग खा और द्रोणपुर के मोहिलों ने मिलकर राव बीदा को द्रोणपुर से निकाल दिया। राव बीदा का विवाह भी पूगल की कुमारी सोहन कवर से हुआ था। राव शेखा ने अपने राजकुमार हरा को सेना देकर राव बीदा की सहायता करने भेजा। इस युद्ध मे राना बरसल और नरबद मोहिल मारे गए। राव बीदा ने द्रोणपुर पर पुन अधिकार कर लिया।

सन् 1492 ई म राव बीका ने जोधपुर से राठौडो के राज्य चिह्न प्राप्त करने के लिए वहा अपने भाई राव सूजा पर आक्रमण किया। इस आक्रमण मे पूगल के राजकुमार हरा राव बीका की सहायता म अपनी सेना लेकर जोधपुर गए थे। राव सूजा की माता ने बीच बचाव करके राज्य चिह्न राव बीका को सौंपे जिसस एक बार फिर भाइयों का आपसी युद्ध टला।

राव शेखा ने अपने दूसर पुत्र खेमाल को बरसलपुर की जागीर मे 68 गाव देकर, 'रावत' की पदवी दी। इनके वशज खीया भाटी कहलाए। इनके बाद मे राजकुमार हरा पूगल के राव बने। बाघसिह को हापासर रायमलवाली की जागीर के 140 गाव दिए। बाघसिह के पुत्र किसनसिह के वशज किसनावत भाटी हुए।

(7) राव हरा सन् 1500–1535 ई

राव हरा के समय पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर अपेक्षाकृत शान्ति रही, जहा इनके भाई और सैनिक तैनात थे।

सन् 1509 ई मे यह अपनी सेना लेकर बीकानेर के राव लूणकरण की, ददरेवा के ठाकुर मानसिह चौहान के विरुद्ध, युद्ध में सहायता करने गए। राव लूणकरण ने छ माह तक ददरेवा के किले की घेराबन्दी किए रखी। बडे सघर्ष के बाद मे ही ठाकुर मानसिह ने किला इन्हें सौंपा।

सन् 1512 ई मे यह अपनी सेना लेकर राव लूणकरण की, फतेहपुर के दौलतखा खा के विरुद्ध, युद्ध म सहायता करने गए। इसी वर्ष राव लूणकरण की हिसार और सिरसा के कायमखानियों के विरुद्ध युद्ध मे सहायता करने गए। इस युद्ध म इनके भाई रायमलवाली के बाघसिह भी साथ मे गए थे। सन् 1513 ई में नागौर के नवाब मोहम्मद खा ने बीकानेर पर आक्रमण किया, राव लूणकरण ने राव हरा की सहायता से उसे वापिस नागौर लौट जाने पर विवश किया।

सन् 1526 ई म राव लूणकरण ने जैसलमेर राज्य पर अकारण आक्रमण किया, राव हरा ने उन्हे ऐसा नहीं करने के लिए समझाया था, परन्तु वह नहीं माने। राव हरा ने अपनी सेना

जैसलमेर के भाटियों के विरुद्ध भेजने से इनकार कर दिया। राव हरा की सक्रिय मध्यस्थता से दोनो राज्यों का आपसी युद्ध टल गया, परन्तु इनके रुख के कारण राव लूणकरण इनसे अप्रसन्न रहने लग गए। इसी वर्ष राव लूणकरण ने नारनौल के नवाब अभिमीर पर आक्रमण किया। राव हरा भी अपनी सेना लेकर इनके साथ गए। लगातार विजय अभियानों की सफलता के कारण राव लूणकरण के तेवर चढ गए थे, उनका व्यवहार अभद्र होने लगा था और वह अत्यन्त महत्वाकांक्षी हो गए थे। राव हरा ने अन्य असन्तुष्ट सहयोगियो के साथ मे षड्यन्त्र रचकर भयंकर युद्ध के बीच मे अपनी सेनाएँ राव लूणकरण के विरुद्ध लडाई लडने के लिए मोड दी। इस युद्ध मे राव लूणकरण की पराजय हुई, वह दोशी गांव के पास युद्ध करते हुए मारे गये।

राव लूणकरण के पुत्र राव जैतसी ने नारनौल युद्ध मे पराजय के लिए अन्य विरोधी सरदारो को दंडित किया परन्तु राव हरा से अच्छे सम्बन्ध बनाए रखे। सन् 1531 ई मे राव जैतसी जोधपुर के राव गगा की सहायता करने गए, उस समय राव हरा ने अपने राजकुमार बरसिंह को पूगल की सेना देकर उनके साथ सहायता करने भेजा। सन् 1534 ई मे कामरान ने बीकानेर पर आक्रमण किया। राव जैतसी के निवेदन पर राव हरा पूगल से सेना लेकर आए। उनके साथ मे उनके भाई बाघसिंह और रावत खेमाल आए, उनके पुत्र बीदा और पौत्र दुर्जनसाल भी साथ थे। इन सबने मिलकर बीकानेर के किले की सुरक्षा का भार सम्भाला। घमासान युद्ध मे कामरान की सेना पराजित हुई, उसे वापिस पंजाब लौटना पडा। कामरान के इस आक्रमण से कुछ समय पहले, राव जैतसी ने राव लूणकरण की मृत्यु के लिए भाटियो पर अप्रसन्नता दर्शाते हुए, भटनेर पर खेत सिंह कांधल का अधिकार करवा दिया था। परन्तु कामरान ने बीकानेर आने से पहले भटनेर के किले पर अधिकार करके युद्ध मे खेत सिंह कांधल को मार डाला।

राव हरा ने रणमल के अयोग्य वंशजो से वीकमपुर लेकर उसे खालसे कर लिया।

सन् 1535 ई मे राव हरा ने राजकुमार बरसिंह को सेना देकर बीकानेर के राव जैतसी की सहायता मे आमेर भेजा।

इनके राजकुमार बरसिंह, बीदा, हमीर और धनराज, चार पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बरसिंह इनके बाद मे पूगल के राव बने। इन्होंने रणधीर के वंशज नेता को देरावर से हटाकर वह जागीर बीदा को दी। राव चाचगदेव के पुत्रो, भीमदे और मेहरवान को बीजनोत और रुकनपुर की जागीरें दी हुई थी, परन्तु वह मुसलमान बन कर वहा से चले गए थे। इसलिए अब हमीर को बीजनोत और धनराज को रुकनपुर की खाली जागीरें दी गई।

(8) राव बरसिंह - सन् 1535 - 1553 ई.

राव जैतसी ने भाटियो से अप्रसन्न होकर पहले सन् 1534 ई मे भटनेर पर खेतसिंह कांधल का अधिकार करवा दिया था। कामरान के पराजित होकर पंजाब लौट जाने के बाद सन् 1538 ई मे उन्होंने ठाकरसी और बागसी राठौडो को भटनेर पर अधिकार करने और उसे रखने मे सहायता दी। सन् 1542 ई मे जोधपुर के राव मालदेव ने जब बीकानेर पर आक्रमण किया तब उपरोक्त कारणो से राव बरसिंह ने बीकानेर के

विरुद्ध राव मालदेव का साथ दिया, जिससे राव जैतसी अकेले पड गए। युद्ध मे वह पराजित होकर मारे गए।

दिल्ली के शासन के लिए हुमायु और शेरशाह सूरी के आपस के युद्धो के कारण, राव बरसिंह के समय, मुलतान के लगे काफी शक्तिशाली हो गए थे। इस कारण से पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर शत्रुओ का दबाव बढ़ने लग गया। पूगल की आन्तरिक स्थिति भी कमजोर होने लग गई थी। भटनेर भाटियो के हाथो से निकल गया था। पूगल के स्वय के भाई-भतीजे मुसलमान बन गए थे, मेहरवान के वशज रूकनपुर से, भीमदे के बीजनोत से, जोगायत के केहरोर से मुसलमान बनकर अन्यत्र चले गए थे। मुसलमान रानियो के पुत्रो कुम्भा, गजसिंह, राता के वशजो ने धीरे-धीरे पूगल से सम्बन्ध समाप्त कर लिए थे। इस प्रकार पूगल अपने स्वयं के वशजो का भी सक्रिय सहयोग प्राप्त करने की स्थिति मे नही रहा। इनको जागीरें बीदा, हमीर और धनराज को देने से स्थिति मे कुछ सुधार अवश्य हुआ परन्तु यह कार्यवाही उस हानि को बहाल नही कर सकी जो अपने ही वशजों द्वारा धर्म परिवर्तन करके विपक्ष के खेमे मे जाने से हुई थी।

मुलतान के आक्रमणो से रावत खेमाल और उनके पुत्र करणसिंह परेशान हो रहे थे। लगाओ ने मुमनवाहन पर आक्रमण करके जगमाल के पुत्र जैतसी को मार डाला। इससे क्रुद्ध होकर रावत खेमाल ने मुलतान ले जाए जा रहे शाही खजाने को लूट लिया। शाही खजाने को वापिस लेने और रावत खेमाल को दण्ड देने के उद्देश्य से मुलतान ने सन् 1543 ई मे बरसलपुर पर आक्रमण किया। इस युद्ध मे रावत खेमाल और कुमार करणसिंह मारे गए परन्तु शाही खजाना मुलतान को वापिस नही मिला। राव बरसिंह ने रावत खेमाल के पुत्र जैतसी को 'राव' की पदवी दी, इनके वशज 'जैतसीगोत खीया भाटी' कहलाए। कुमार करणसिंह के पुत्र अमरसिंह को बरसलपुर से 27 गाव लेकर जयमलसर की 27 गावो की अलग जागीर देकर इन्हे 'रावत' की पदवी दी, इनके वशज 'करणोत खीया भाटी' कहलाए। अब बरसलपुर के पास 41 गाव रह कर गए थे।

जैसलमेर के रावल लूणकरण ने राव बरसिंह को देरावर, मरोठ और मुमनवाहन की रक्षा करने मे सहायता की।

सन् 1544 ई मे बीकानेर के राव कल्याणमल, जोधपुर के राव मालदेव के विरुद्ध युद्ध मे शेरशाह सूरी की सहायता करने के लिए गए थे। उस समय राव बरसिंह भी पूगल से सेना लेकर राव कल्याणमल के साथ इस युद्ध मे गए।

मारवाड के राव मालदेव ने रावल लूणकरण से जैसलमेर राज्य का पूर्वी भाग छीन लिया था। राव बरसिंह ने बाडमेर, कोटडा, खबाद, चोहटन, सवोया आदि क्षेत्र राव मालदेव से वापिस जीते। इन्होने सन् 1544 ई मे गिररी और सामेल के युद्धो मे राव मालदेव को परास्त किया और जैसलमेर राज्य के सारे क्षेत्र रावल लूणकरण को वापिस सौंपे।

सन् 1553 ई. मे जोधपुर के मालदेव ने मेडता के राव जयमल पर आक्रमण किया। बीकानेर के राव कल्याणमल और राव बरसिंह मेडता के राव जयमल की सहायता करने गए। इसी वर्ष राव बरसिंह ने जैसलमेर के रावल मालदेव के कहने से अमरकोट के राणा गगा पर आक्रमण करके अमरकोट जैसलमेर के अधिकार मे दिया।

सन् 1553 ई में इनका देहान्त हो गया। इनके पातावतजी और सोनगिरीजी, दो रानियां थी। पातावतजी के पुत्र राजकुमार जैसा पूगल के राव बने। सोनगिरीजी के पुत्र दुर्जनसाल को इन्होंने 84 गावो की बीकमपुर की जागीर दी। पुत्र काला को किराडा-बाप की जागीर दी। पुत्र पाता सातल और करमच द नि सन्तान रहे।

राव बरसिह के वशज 'बरसिंह भाटी' कहलाए।

(9) राव जैसा—सन् 1553-1587 ई

राव शेखा के छोटे भाई तिलोकसी के पुत्र भैरवदास के नि सन्तान मर जाने से राव जैसा ने उनकी मरोठ की जागीर खालसे कर ली।

ऐसा कहा जाता है कि राव जैसा के कुछ समय के लिए सीमान्त क्षेत्रो के दौरे पर रहने के कारण इनकी अनुपस्थिति म इनके भाइयो, काला और सातल ने पूगल राजगद्दी पर अधिकार कर लिया था। इन्होंने कुछ समय बाद मे वापिस अपनी राजगद्दी पर अधिकार कर लिया। इस राज्यविहीन काल म यह मारवाड के पातावता के यहा अपने ननिहाल म रहे, इस काल म मारवाड के राव मालदेव ने मेडता मे रायान की जागीर इन्ह प्रदान की। इनकी पुत्री परमलदे का विवाह राव मालदेव के पुत्र राजकुमार चन्द्रसेन के साथ हुआ था। कुछ समय पश्चात् परमलदे का बीकमपुर मे देहात हो गया।

मारवाड के राव मालदेव ने जैसलमेर के सामन्त राव भीम से मालाणी, कोटडा आदि का क्षेत्र छीन लिया था। राव भीम जैसलमेर के रावल मालदेव से सहायता लेने के लिए गए। रावल मालदेव ने पूगल के राव जैसा और अपने पुत्र, राजकुमार हरराज, को सेना देकर राव भीम के साथ उनकी सहायता करने के लिए भेजा। इन्होंने राव भीम का क्षेत्र मारवाड से छीनकर उन्ह वापिस दिलाया।

ऐसा भी वर्णन है कि सन् 1536 ई मे मारवाड के राव मालदेव का विवाह जैसलमेर के रावल लूणकरण की पुत्री से हुआ था। वह किसी कारणवश नाराज हो गए और उन्होंने जैसलमेर के पास रामनाल के बाग के आमो के सारे पेड कटवा दिए। इसका बदला लेने के लिए जैसलमेर के रावल मालदेव के समय सन् 1559 ई मे, राव जैसा ने जोधपुर के पास मन्डोर के बाग पर छापा मारा। उन्होंने बाग के पेडो को कटवाया नही परन्तु पेडो को काटने के चिह्न स्वरूप प्रत्येक पेड के नीचे एक एक कुल्हाडी रख कर उसे लाल कपडे से ढक दिया। इससे राव मालदेव अपने रामनाल के बाग मे किए गए कुकृत्य के लिए बहुत शर्मिन्दा हुए।

राव मालदेव शान्ति से बैठने वाले शासक नही थे। उन्होंने राव जैसा से बदला लेने के लिए चाडी के रास्ते पूगल राज्य पर आक्रमण किया। उनकी सेना के साथ म चाडी के राव भार भोजराजोत, करणू के काला रतनावत, पृथ्वीराज राठौड आदि थे। राव मालदेव और राव जैसा की सेनाओ म चाडी, रिडमलसर और पिलाप, तीन स्थानो पर युद्ध हुए। तीनो युद्धो मे राव जैसा का पलडा भारी रहा। उस समय रावत सेमाल के पुत्र धनराज, राव मालदेव की सभा मे फलोदी के हाकिम थे। उनको बीकमकोर की बारह गावो की जागीर भी राव मालदेव द्वारा दी हुई थी। पिलाप के युद्ध में धनराज ने राव मालदेव की

ओर से लड़ते हुए, राव जैसा की सहायता की। इस सन्देह में राव मालदेव ने धनराज की बीकमकोर की जागीर जब्त कर ली। राव जैसा धनराज को अपने साथ पूगल ले आए, उन्हें बीठनोक और खींदासर की जागीरें प्रदान की। इनके वंशज धनराजोत खींया भाटी हुए।

राव मालदेव के बाद मे चन्द्रसेन मारवाड के शासक बने। इन्हें दिवगत परमलदे के स्थान पर बीकमपुर के राव डूगरसिंह की पुत्री ब्याही और उनका दूसरा विवाह मूमनवाहन के पचायन की पुत्री सहोदरा से किया। बीकानेर के राजा रायसिंह को राव डूगर सिंह के भाई बिहारीदास की पुत्री ब्याही थी। इन वैवाहिक सम्बन्धो से पूगल के भाटियो के जोधपुर और बीकानेर के राठौड़ों से सम्बन्ध सुधरे।

पूगल राज्य की पूर्व म मारवाड और बीकानेर राज्यो से लगने वाली सीमा पर शान्ति स्थापित करके राव जैसा अपनी पश्चिमी सीमा पर गए। वहा लगा और बलोच भाटियो पर निरन्तर आक्रमण करते रहते थ। राव जैसा ने शत्रुओ को दबाकर चेतावनी दी जिससे कुछ समय के लिए वहा शान्ति बनी रही।

सन् 1573 ई मे जयमलसर के रावत साईदास बीकानेर के राजा रायसिंह के साथ मे गुजरात गए थे। वह वहा युद्ध मे मारे गए।

बीकानेर के राजा रायसिंह ने दिल्ली के बादशाह अकबर के साथ अपने पारिवारिक सम्बन्धो का अनुचित लाभ उठाकर सन् 1577 ई मे, मरोठ के परगने का फरमान अपनी जागीर के रूप मे जारी करवा लिया। उन्ह यह भलीभाति ज्ञात था कि पूगल के राव रणकदेव के समय से ही मरोठ पूगल राज्य का भाग था, इसलिए वह चुप रहे, उन्होने मरोठ मे बीकानेर का थाना बैठाने या राजस्व अधिकारी नियुक्त करने का प्रयास नही किया।

सन् 1587 ई मे मुलतान की सेना से सीमा पर युद्ध करते हुए राव जैसा मारे गए। इस युद्ध में इनके पुत्र राजकुमार काना बन्दी बना लिए गए। काना की पुत्री जसकवर की सगाई राजा रायसिंह के ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार भोपत से हुई थी। उनका दिल्ली मे चेचक की बीमारी से देहान्त हो गया। राजकुमारी जसकवर बीकानेर आकर राजकुमार भोपत के पीछे कवारी सती हुई।

राव जैसा ने अपने जीवनकाल म बाईस युद्धो म भाग लिया। यह दिल्ली में बादशाह अकबर की सेवा मे कभी उपस्थित नही हुए। इन्होने उनसे कोई वैवाहिक सम्बन्ध नहीं किए और न ही पूगल ने बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार की। यह मेवाड की भाति एव स्वतन्त्र राजपूत राज्य रहा।

मुलतान की सेना से पराजित होने के कारण, केहरोर, दुनियापुर, डेरा गाजीखा, डेरा इसमाइलखा, और सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के पश्चिम का सारा क्षेत्र पूगल के भाटियो के अधिकार से निकल गया। अब पूगल राज्य के पास इन नदियों के पूर्व मे स्थित मरोठ, देरावर, मूमनवाहन, बीजनोत, रुकनपुर, वरसलपुर, बीकमपुर, रायमलवाली, सारवारा आदि का क्षेत्र रह गया।

(10) राव काना—सन् 1587–1600 ई

सन् 1587 ई म राव जैसा की मुलतान की सेना स सीमा पर युद्ध करते हुए हुई मृत्यु के समय राजकुमार काना बन्दी बना लिए गए थे। जैसलमेर के रावल भीम, बीकानेर के [redacted]

सन् 1553 ई मे इनका देहान्त हो गया। इनके पातावतजी और सोनगिरीजी, दो रानिया थी। पातावतजी के पुत्र राजकुमार जैसा पूगल के राव बने। सोनगिरीजी के पुत्र दुर्जनसाल को इन्होंने 84 गावो की बीकमपुर की जागीर दी। पुत्र काला को किराडा-वाप की जागीर दी। पुत्र पाता सातल और करमचन्द नि सन्तान रहे।

राव बरसिंह के वशज 'बरसिंह भाटी' कहलाए।

(9) राव जैसा—सन् 1553–1587 ई.

राव शेखा के छोटे भाई तिलोकसी के पुत्र भैरवदास के नि सन्तान मर जाने से राव जैसा ने उनकी मरोठ की जागीर खालसे कर ली।

ऐसा कहा जाता है कि राव जैसा के कुछ समय के लिए सीमान्त क्षेत्रो के दौरे पर रहने के कारण इनकी अनुपस्थिति मे इनके भाइयो, काला और सातल, ने पूगल राजगद्दी पर अधिकार कर लिया था। इन्होने कुछ समय बाद मे वापिस अपनी राजगद्दी पर अधिकार कर लिया। इस राज्यविहीन काल मे यह मारवाड के पातावतो के यहाँ अपने ननिहाल म रहे, इस काल मे मारवाड के राव मालदेव ने मेडता म रायान की जागीर इन्हे प्रदान की। इनकी पुत्री परमलदे का विवाह राव मालदेव के पुत्र राजकुमार चन्द्रसेन के साथ हुआ था। कुछ समय पश्चात् परमलदे का बीकमपुर मे देहात हो गया।

मारवाड के राव मालदेव ने जैसलमेर के सामन्त राव भीम से मालाणी, कोटडा आदि का क्षेत्र छीन लिया था। राव भीम जैसलमेर के रावल मालदेव से सहायता लेने के लिए गए। रावल मालदेव ने पूगल के राव जैसा और अपने पुत्र, राजकुमार हरराज, को सेना देकर राव भीम के साथ उनकी सहायता करने के लिए भेजा। इन्होने राव भीम का क्षेत्र मारवाड़ से छीनकर उन्हे वापिस दिलाया।

ऐसा भी वर्णन है कि सन् 1536 ई मे मारवाड के राव मालदेव का विवाह जैसलमेर के रावल लूणकरण की पुत्री से हुआ था। वह किसी कारणवश नाराज हो गए और उन्होने जैसलमेर के पास रामनाल के बाग के आमो के सारे पेड कटवा दिए। इसका बदला लेने के लिए जैसलमेर के रावल मालदेव के समय सन् 1559 ई मे, राव जैसा ने जोधपुर के पास मन्डोर के बाग पर छापा मारा। उन्होने बाग के पेडो को कटवाया नही परन्तु पेडो को काटने के चिह्न स्वरूप प्रत्येक पेड के नीचे एक-एक कुल्हाडी रख कर उसे लाल कपडे से ढक दिया। इससे राव मालदेव अपने रामनाल के बाग मे किए गए कुकृत्य के लिए बहुत शर्मिन्दा हुए।

राव मालदेव शान्ति से बैठने वाले शासक नही थे। उन्होने राव जैसा से बदला लेने के लिए चाडी के रास्ते पूगल राज्य पर आक्रमण किया। उनकी सेना के साथ मे चाडी के राव भान भोजराजोत, करणू के काला रतनावत, पृथ्वीराज राठौड आदि थे। राव मालदेव और राव जैसा की सेनाओ मे चाडी, रिडमलसर और विलाप, तीन स्थानों पर युद्ध हुए। तीनो युद्धो मे राव जैसा का पलडा भारी रहा। उस समय रावत खेमाल के पुत्र धनराज, राव मालदेव की सेवा मे फलोदी के हाकिम थे। उनको बीकमकोर की बारह गावो की जागीर भी राव मालदेव द्वारा दी हुई थी। विलाप के युद्ध मे धनराज ने राव मालदेव की

ओर से लडते हुए, राव जैसा की सहायता की। इस सन्देह मे राव मालदेव ने धनराज की बीकमकोर की जागीर जब्त कर ली। राव जैसा धनराज को अपने साथ पूगल ले आए, उन्हें बीठनोक और खींदासर की जागीरें प्रदान की। इनके वशज धनराजोत खीया माटी हुए।

राव मालदेव के बाद मे चन्द्रसेन मारवाड के शासक बने। इन्हे दिवगत परमलदे के स्थान पर बीकमपुर के राव डूगरसिंह की पुत्री ब्याही और उनका दूसरा विवाह मूमनवाहन के पचायन की पुत्री सहोदरा से किया। बीकानेर के राजा रायसिंह को राव डूगर सिंह के भाई बिहारीदास की पुत्री ब्याही थी। इन वैवाहिक सम्बन्धो से पूगल के भाटियो के जोधपुर और बीकानेर के राठोडो से सम्बन्ध सुधरे।

पूगल राज्य की पूर्व मे मारवाड और बीकानेर राज्यो से लगने वाली सीमा पर शान्ति स्थापित करके राव जैसा अपनी पश्चिमी सीमा पर गए। वहा लगा और बलोच भाटियो पर निरन्तर आक्रमण करते रहते थे। राव जैसा ने शत्रुओ को दबाकर चेतावनी दी जिससे कुछ समय के लिए वहा शान्ति बनी रही।

सन् 1573 ई मे जयमलसर के रावत साईदास बीकानेर के राजा रायसिंह के साथ मे गुजरात गए थे। वह वहा युद्ध मे मारे गए।

बीकानेर के राजा रायसिंह ने दिल्ली के बादशाह अकबर के साथ अपने पारिवारिक सम्बन्धो का अनुचित लाभ उठाकर सन् 1577 ई मे, मरोठ के परगने का फरमान अपनी जागीर के रूप मे जारी करवा लिया। उन्ह यह भलीभाति ज्ञात था कि पूगल के राव रणकदेव के समय से ही मरोठ पूगल राज्य का भाग था, इसलिए वह चुप रहे, उन्होने मरोठ मे बीकानेर का थाना बैठाने या राजस्व अधिकारी नियुक्त करने का प्रयास नही किया।

सन् 1587 ई मे मुलतान की सेना से सीमा पर युद्ध करते हुए राव जैसा मारे गए। इस युद्ध मे इनके पुत्र राजकुमार काना बन्दी बना लिए गए। काना की पुत्री जसकवर की सगाई राजा रायसिंह के ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार भोपत से हुई थी। उनका दिल्ली मे चेचक की बीमारी से देहान्त हो गया। राजकुमारी जसकंवर बीकानेर आकर राजकुमार भोपत के पीछे क्वारी सती हुई।

राव जैसा ने अपने जीवनकाल म बाईस युद्धो मे भाग लिया। यह दिल्ली मे बादशाह अकबर की सेवा मे कभी उपस्थित नही हुए। इन्होने उनसे कोई वैवाहिक सम्बन्ध नही किए और न ही पूगल ने बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार की। यह मेवाड की भांति एक स्वतन्त्र राजपूत राज्य रहा।

मुलतान की सेना से पराजित होने के कारण, केहरोर, दुनियापुर, डेरा गाजीखा, डेरा इसमाइलखा, और सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के पश्चिम का सारा क्षेत्र पूगल के भाटियो के अधिकार से निकल गया। अब पूगल राज्य के पास इन नदियों के पूर्व मे स्थित मरोठ, देरावर, मूमनवाहन, बीजनोत, रुखनपुर, वरसलपुर, बीकमपुर, रायमलवाली, खारबारा आदि का क्षेत्र रह गया।

(10) राव काना—सन् 1587–1600 ई.

सन् 1587 ई मे राव जैसा की मुलतान की सेना स सीमा पर युद्ध करते हुए हुई मृत्यु के समय राजकुमार काना बन्दी बना लिए गए थे। जैसलमेर के रावल भीम, बीकानेर के राजा

रायसिंह और आमेर के राजा मानसिंह के निवेदन करने पर और बीच बचाव करने से बादशाह अकबर ने इन्हे मुलतान के बन्दीगृह से मुक्त किया। इनके शासनकाल मे पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर शान्ति रही क्योंकि बादशाह अकबर के निर्देशानुसार मुलतान के शासको ने पूगल की सीमा पर गडबडी फैलाने वाले लगा और बलोचो को प्रोत्साहित नही किया।

मुमनवाहन के गोविन्ददास की पुत्री सुजानदे का विवाह जोधपुर के राजा सूरसिंह से हुआ था।

राव काना के राजकुमार आसकरण, रामसिंह और मानसिंह, तीन पुत्र थे। मानसिंह सन् 1606 ई के नागौर के युद्ध मे मारे गए और रामसिंह सन् 1612 ई मे चूडेहर (अनूपगढ) के युद्ध मे मारे गए थे। इन दोनो के सन्तानें नही थी। आसकरण पूगल के राव बने।

(11) राव आसकरण-सन् 1600-1625 ई.

सन् 1606 ई मे बीकानेर के राजा रायसिंह के पुत्र राजकुमार दलपत सिंह नागौर मे बागी हो गए थे। राजा रायसिंह द्वारा अपने पुत्र के विरुद्ध सहायता मागने पर राव आसकरण ने अपन भाई मानसिंह को पूगल से सेना देकर उनके साथ नागौर भेजा। मानसिंह दलपतसिंह के विरुद्ध युद्ध मे नागौर मे मारे गए।

मूमनवाहन के जोगीदास को उनकी सेवाओ के लिए सन् 1610 ई मे जोधपुर के शासक राजा सूरसिंह ने उन्हें राजोद के अलावा चार जागीरें और दी। मूमनवाहन के गोविन्ददास, राव बरसल के पुत्र जगमाल के पुत्र थे, इनकी पुत्री का विवाह राजा सूरसिंह के साथ हुआ। राव आसकरण की पुत्री मनोहरदे का विवाह बीकानेर के राजा सूरसिंह के साथ हुआ था। इनकी दूसरी पुत्री रतन कवर का विवाह आमेर के राजा मानसिंह के पौत्र माहासिंह के साथ मे हुआ था। बाद मे इनके पुत्र जयसिंह आमेर के शासक बने।

बीकानेर के राजा दलपतसिंह ने सन् 1612 ई मे भाटियो के क्षेत्र मे चूडेहर मे एक किला बनवाना आरम्भ किया। इसका सभी भाटियो ने कडा विरोध किया। इस युद्ध मे खारबारे के किसनावत भाटियो ने अत्यन्त साहस का परिचय दिया और किला नही बनने दिया। राव आसकरण के भाई रामसिंह इस युद्ध मे भाटियो की ओर से सेना लेकर गए हुए थे, वह युद्ध मे मारे गए।

सन् 1625 ई मे लगा और बलोचों ने पूगल पर आक्रमण किया। पूगल की सहायता करने के लिए बरसलपुर से राव नेतसिंह भी सेना लेकर आए थे। पूगल की रक्षा करते हुए दोनो, राव आसकरण और राव नेतसिंह, मारे गए।

राव आसकरण के चार पुत्र थे। राजकुमार जगदेव पूगल के राव बने। गोविन्ददास को लाखूसर की जागीर दी, इनके वशज अब भी वहा हैं। सुलतानसिंह को राजासर की जागीर दी। सुलतानसिंह के वशज राजासर और कालासर गावो मे अब भी आबाद हैं। किसनसिंह के वशज केवल राजासर में हैं।

(12) राव जगदेव—सन् 1625–1650 ई.

राव जैसा के सन् 1587 ई मे मुलतान की सेना द्वारा पराजित हो कर मारे जाने से, राजकुमार काना के बन्दी बनाए जाने से और सन् 1625 ई मे राव आसकरण के पूगल मे मारे जाने से स्पष्ट था कि पूगल के भाटियो की शक्ति क्षीण हो रही थी। इनके पश्चिम के शत्रु पूगल पर हावी हो रहे थे। इनके समय मे पूगल की आर्थिक स्थिति भी कमजोर हो गई थी। पूगल का किला समय पर रख-रखाव नही होने से जीर्ण शीर्ण अवस्था मे था। एक समय राव बरसल 32,000 वर्ग मील क्षेत्र के शासक थे, अब शक्तिहीन पूगल राज्य उस समय के राज्य की केवल छाया के रूप मे रह गया था। राव जगदेव के समय मे कोई विशेष उल्लेखनीय घटना नही घटी।

इनका विवाह मान खेमावत सोनगरा की पुत्री से हुआ था। इनके राजकुमार सुदरसेन, महेशदास और जसवन्त सिंह (जुगतसिंह) नाम के तीन पुत्र थे। सुदरसेन इनके बाद मे पूगल के राव बने। महेशदास सन् 1665 ई मे बीकानेर के राजा करणसिंह के साथ युद्ध में अपन भाई राव सुदरसेन के साथ पूगल मे मारे गए। जसवन्तसिंह को मानीपुरा गाव की जागीर दी, जहा इनके वशज अब भी हैं।

(13) राव सुदरसेन–सन् 1650–1665 ई.

राव जैसा के शासन के समय से ही पूगल के पश्चिमी क्षेत्र पर मुलतान के शासको और लगाओ व बलोचो का प्रभाव और दबाव बढ रहा था। इस कारण से पिछले 60-70 वर्षों मे अधिकाश जनता ने अपनी सुरक्षा के लिए धर्म परिवर्तन कर लिया था और पूगल राज्य मुस्लिम बहुसख्यक राज्य हो गया था। पूर्व मे बीकानेर का राज्य भी शक्तिशाली हो गया था, वह पूगल राज्य मे हस्तक्षेप करने लग गए थे। इन सब कारणो से राव सुदरसेन ने जैसलमेर के रावल सबल सिंह के सुझाव को मानते हुए अपने राज्य के देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, बीजनोत, रुकनपुर का क्षेत्र जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र को सन् 1650 ई मे, पूगल के राव बनते ही सौंप दिया। यह एक विरल ऐतिहासिक घटना थी जिसके द्वारा आपसी घरेलू प्रबन्ध से पूगल के स्वतन्त्र शासक ने अपने वशज भाई को अपने राज्य का आधा भाग, लगभग 15,000 वर्ग मील क्षेत्र, राजी-खुशी देकर देरावर का नया स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर दिया। इस घटना से और चुडेहर व भटनेर की घटनाओ से क्रोधित हो कर बीकानेर के राजा करणसिह ने पूगल पर आक्रमण कर दिया। पूगल की रक्षा करते हुए सन् 1665 ई मे, राव सुदरसेन और उनके भाई महेशदास युद्ध मे मारे गए। राजा करणसिह ने पूगल मे बीकानेर का थाना स्थापित किया और वहां पाच वर्ष, सन् 1665 से 1670 ई तक, बीकानेर का अधिकार रहा।

(14) राव गणेशदास–सन् 1665 (1670)–1686 ई.

सन् 1665 ई मे राव सुदरसेन की मृत्यु के पाच वर्ष बाद तक पूगल राज्य सीधा बीकानेर राज्य के राजा करणसिह के प्रशासन मे रहा। पूगल राज्य के लगभग तीन सौ वर्षों (सन् 1380 से) के इतिहास मे यह पहला अवसर था जब उस राज्य पर भाटियो का शासन नहीं रह कर किसी बाहर के शासक का अधिकार रहा। जैसलमेर के रावल अमरसिह के हस्तक्षेप से, केलण भाटियो के विरोध के कारण और प्रजा के असहयोग से

विवश होकर, बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह को पूगल की राजगद्दी राव सुदरसेन के पुत्र गणेशदास को सौंपनी पड़ी।

सन् 1677 ई मे महाराजा अनूपसिंह ने दक्षिण से मुकन्द राय को आदेश भेजे कि वह चूडेहर के किले का काम पूर्ण करवाये। इसका खारबारे और रानेर के भाटियो ने कडा विरोध किया, मुकन्द राय को सफलता मिलने मे सन्देह दिखने लगा, वह बडे सकट मे पड गए। तभी उन्होने भाटियो के साथ विश्वासघात करके धोखे से चूडेहर पर अधिकार कर लिया। उन्होने सन् 1678 ई मे चूडेहर के पास (वर्तमान अनूपगढ) का किला बनवाया और इसका नाम महाराजा के नाम पर 'अनूपगढ' रखा। बीकानेर राज्य ने नाराज होकर खारबारे का ठिकाना महाजन के ठाकुर अजबसिंह को दे दिया। किसनावत भाटियो ने ठाकुर अजब सिंह को मारकर खारबारे पर अधिकार कर लिया और कुछ समय पश्चात् इन्होंने अनूपगढ का किला भी बीकानेर से छीन लिया।

सन् 1686 ई में राव गणेशदास की मृत्यु हो गई। इनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बिजयसिंह पूगल के राव बने। दूसरे पुत्र केसरी सिंह को केला गाव की जागीर दी गई। केसरीसिंह के एक पुत्र पदमसिंह केला मे रहे, दूसरे पुत्र दानसिंह मोटासर गए। पदमसिंह के एक पुत्र जगरूपसिंह केला मे रहे, दूसरे पुत्र हठी सिंह लूणखा गाव गए। गौरीसर गाव के भाटी भी केला के भाटियो के वशज हैं।

(15) राव बिजयसिंह—सन् 1686–1710 ई

इनके शासनकाल म पूगल राज्य मे कोई विशेष घटना नही घटी। पूगल राज्य का पश्चिमी क्षेत्र, सन् 1650 ई मे, राव सुदरसेन रावल रामचन्द्र को देरावर राज्य के नाम से सौंप चुके थे, इसलिए बाकी बचे हुए पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा देरावर राज्य के पडोस मे होने के कारण शान्त और सुरक्षित रही। पूर्व म बीकानेर का शक्तिशाली राज्य था उन्ह राव बिजयसिंह के समय पूगल मे हस्तक्षेप करने के लिए कोई नया कारण नही मिला, इसलिए शान्ति बनी रही।

राव बिजयसिंह का सन् 1710 ई मे देहान्त हो गया। इनके राजकुमार दलकरण पूगल के राव बने।

(16) राव दलकरण—सन् 1710–1741 ई

सन् 1712 ई म कहते हैं कि बरसलपुर के भाटियो ने मुलतान के व्यापारियो के काफिले का माल लूट लिया था। इन व्यापारियो की शिकायत पर बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह ने बरसलपुर पर आक्रमण करके व्यापारियो का लूटा हुआ माल उन्हें वापिस दिलवाया। उन्होंने बरसलपुर के राव से पेशकश वसूल करने के अतिरिक्त सेना का खर्चा भी लिया।

महाराजा सुजानसिंह अपने शासन के पहले दस वर्षों म मुगल बादशाहो की सेवा मे दक्षिण मे रहे। बाद मे उन्हें और इनके पुत्र महाराजा जोरावर सिंह को बीदावतो और जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के आक्रमणो ने परेशान किए रखा। भटनेर क्षेत्र के भाटियो (मुसलमान) और नोहर क्षेत्र मे जोइया मुसलमानो ने इन्हे चैन नही लेने दिया। बीकानेर

के शासक अपनी स्वय की समस्याओं के समाधान मे उलझे रहे। पश्चिम मे देरावर के भाटी, मुलतान, बलोच और लगो से उलझते रहे। इसलिए राव दलकरण के शासन के इकतीस वर्ष शान्ति से गुजर गए।

सन् 1741 ई में इनका देहान्त हो गया। ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार अमरसिंह पूगल के राव बने और छोटे पुत्र जुजार सिंह को सादोलाई गाव की जागीर मिली।

(17) राव अमर सिंह—सन् 1741-1783 ई.

बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने सन् 1747 ई मे कुम्मा भाटी को बीकमपुर का राव बनाने के लिए वहां आक्रमण किया। इसके दो वर्ष पश्चात्, सन् 1749 ई मे, जैसलमेर के रावल अखैसिंह ने बीकमपुर पर आक्रमण करके इस जागीर को खालसे कर लिया। उन्होंने बारह वर्ष तक बीकमपुर को खालसे रखकर, सन् 1761 ई म, सरदारसिंह को वहा का राव बनाया। इस प्रकार बीकानेर और जैसलमेर दोनो अब पूगल राज्य मे आन्तरिक हस्तक्षेप करने लग गए थे। पूगल राज्य कमजोर होने के कारण असहाय था, यह कुछ भी करने की स्थिति मे नही होने के कारण, यह सब कुछ चुपचाप देखता रहा। सन् 1749 ई से बीकमपुर जैसलमेर के प्रभाव मे चला गया था और कुछ समय पश्चात् बरसलपुर भी उनके प्रभाव मे चला गया।

सन् 1760 ई में राव अमरसिंह की पुत्री का विवाह बीकानेर के राजकुमार राजसिंह से हुआ, यह बाद मे बीकानेर के शासक बने।

सन् 1761 ई. मे दाऊद पुत्रो ने किसनावत भाटियो से मौजगढ और अनूपगढ के किले छीन लिए। परन्तु जयमलसर के रावत हिन्दूसिंह बीकानेर से सेना लेकर गए और उन्होने मौजगढ व अनूपगढ पर अधिकार कर लिया। सन् 1763 ई म जोइयो की सहायता से खारबारे के किसनावत भाटियो ने बीकानेर से अनूपगढ वापिस ले लिया। इस युद्ध मे बीकानेर के धीर सिंह साडवा और मालेरी के बदन सिंह मारे गए।

सन् 1773 ई मे पूगल के राजकुमार अभयसिंह के साले, रावतसर के रावत अमरसिंह के पुत्र आनन्दसिंह, बीकानेर के जूनागढ मे स्थित नेतासर जेल तोडकर पूगल की शरण मे चले गए। राव अमरसिंह ने इन्हे वापिस बीकानेर राज्य को सौंपने से इनकार कर दिया। इस पर महाराजा गजसिंह बहुत क्रुद्ध हुए। कुछ समय पश्चात् आनन्दसिंह अपने आप पूगल छोडकर चले गए और बीकानेर राज्य म उत्पात मचाने लगे। इस कारण से और अन्य नए और पुराने कारणो से महाराजा गजसिंह का पूगल के प्रति आक्रोश बढता जा रहा था। इसी बीच पूगल के एक दीवान मोहता के एक पडिहार मुसलमान की हत्या के दोषी पाये जाने पर उन्हें राव अमरसिंह ने फासी का दण्ड दे दिया। बीकानेर के राजकुमार राजसिंह की अपने पिता महाराजा गजसिंह से अन बन रहती थी। क्योंकि राजसिंह पूगल के जवाई थे इसलिए भाटी इनका पक्ष लेते थे। इन सब कारणो से पूगल को दण्ड देने के उद्देश्य से, सन् 1783 ई मे, महाराजा गजसिंह ने पूगल पर आक्रमण कर दिया। राव अमरसिंह युद्ध मे मारे गए। उन्होने पराजय नही मानी और न ही शत्रु के सामने आत्म-समर्पण किया। इनके राजकुमार अभयसिंह और भोपालसिंह ने जैसलमेर जाकर शरण ली।

के लिए थाने बैठाए। दूसरी बार, सन् 1783 ई में, महाराजा गजसिंह ने राव अमरसिंह को मारकर, सात साल के लिए पूगल में बीकानेर राज्य के थाने बैठाए।

(21) राव सादूलसिंह–सन् 1830–1837 ई

राव रामसिंह की मृत्यु के पश्चात् महाराजा रतनसिंह ने उनके दूसरे छोटे भाई, करणीसर के ठाकुर सादूलसिंह को पूगल का राव बनाया। उन्होंने अनूपसिंह को राव इसलिए नहीं बनाया क्योंकि ठाकुर वैरीसालसिंह उनके भी साले थे। सादूलसिंह केवल नाम मात्र के राव थे। पूगल का प्रशासन बीकानेर की देख रेख में चलता था।

बीकानेर राज्य ने सन् 1829 ई मे जैसलमेर राज्य पर आक्रमण किया था और वह बासनपीर के युद्ध में जैसलमेर से बुरी तरह पराजित हुए। यह बीकानेर राज्य द्वारा पड़ोसी राज्य की सीमा का उल्लघन करके उस पर आक्रमण करने का स्पष्ट प्रमाण था। जैसलमेर राज्य ने ब्रिटिश शासन के साथ में सन् 1818 ई मे हुई सन्धि के अनुसार इस सीमा उल्लघन और आक्रमण, दोनों के लिए ब्रिटिश शासन से बीकानेर राज्य के विरुद्ध शिकायत दायर की। इस शिकायत की जाच सन् 1835 ई मे मिस्टर एडवर्ड ट्रेविलियन ने गडियाला गाव के समीप कैम्प लगाकर दोनों पक्षों से की। इस जाच में बीकानेर के महाराजा रतनसिंह को दोषी पाया गया। उन पर ढाई लाख रुपये का जुर्माना किया गया, जिसका जैसलमेर के महारावल गजसिंह को तुरन्त भुगतान किए जाने के आदेश दिए गए। परन्तु महारावल गजसिंह ने मिस्टर ट्रेविलियन से निवेदन किया कि उन्हें जुर्माने की राशि लेने मे रुचि नहीं थी, इसके बदले में महाराजा रतनसिंह पूगल का राज्य उसके वास्तविक उत्तराधिकारी राव रणजीतसिंह को सम्मान से लौटा दें। इस तर्कसगत निवेदन को मिस्टर ट्रेविलियन ने स्वीकार करते हुए महाराजा रतनसिंह को इसकी शीघ्र पालना करने के लिए आदेश दिए। बीकानेर राज्य ने इन आदेशों की पालना मे बडी ढिलाई बरती और ढीठापन दर्शाया। दो वर्ष पश्चात्, सन् 1837 ई मे, राव सादूलसिंह को पदच्युत करके रणजीत सिंह को पूगल का राव बनाया गया।

राव सादूलसिंह के समय मे महाराजा रतनसिंह ने सत्तासर और रोजडी की जागीरें खालसे करली थी, परन्तु उन्होंने ठाकुर सादूलसिंह की करणीसर गाव की जागीर उनके पास रहने दी।

(22) राव रणजीतसिंह—सन् 1837 ई

राव रणजीतसिंह के पूगल की राजगद्दी पर बैठने पर उनके चाचा ठाकुर सादूलसिंह ने उन्हें पहले पहल नजर भेंट करके अपने बड़प्पन का परिचय दिया। उन्हें पूगल के राव की गद्दी छोड़ने पर तनिक भी दु ख नहीं था। उन्होंने बीकानेर राज्य से अपने नाम की करणीसर की जागीर की चिट्ठी लेने से इनकार कर दिया। रणजीतसिंह युवा अवस्था मे राव बन गए थे, अभी इनका विवाह नहीं हुआ था। कुछ महीने राव रहने के बाद मे इनका देहान्त हो गया। इनके स्थान पर इनके छोटे भाई करणीसिंह पूगल के राव बने।

(23) राव करणीसिंह—सन् 1837-1883 ई.

इनकी माता चोकीजी, महाजन के ठाकुर शेरसिंह की पुत्री थी। सन् 1837 ई मे

इनका विवाह आऊ गाव के पातावत राठौड ठाकुर की पुत्री से हुआ था। सन् 1839 ई मे इनके राजकुमार रघुनाथसिंह का जन्म हुआ। सन् 1838, 1840 और 1845 ई मे इनके राजकुमारिया चाद कुवर, तख्त कुवर और किसन कुवर जनमी। राजकुमारी चादकुवर और तख्त कुवर का विवाह सन् 1853 ई मे बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह से हुआ और तीसरी राजकुमारी किसनकुवर का विवाह भी उन्ही के साथ मे सन् 1863 ई में हुआ। राजकुमार रघुनाथसिंह का विवाह सन् 1856 ई म शिमला (सरदारशहर) के ठाकुर की पुत्री से हुआ। महारानी चाद कुवर के प्रभाव से लालसिंह के पुत्र डूंगरसिंह का विवाह सन् 1868 ई मे सत्तासर के ठाकुर मूलसिंह की पुत्री मेहताब कुवर से हुआ। डूगरसिंह के सन् 1872 ई मे बीकानेर के महाराजा बनने पर, मेहताब कुवर उनकी पटरानी बनी।

सन् 1851 ई मे महाराजा सरदारसिंह के राज्याभिषेक के समय राव करणीसिंह पहली बार बीकानेर पधारे। यह बीकानेर आने वाले पूगल के पहले राव थे। महाराजा रतनसिंह, सरदारसिंह और डूगरसिंह के समय मे पूगल के अन्य कोई राव बीकानेर के राज-दरबार मे उपस्थित नही हुए, इनसे पहले के किसी राव के उपस्थित होने का प्रश्न ही नही था। पूगल के राव अपना दशहरा मनाते थे और पूगल मे ही दरबार लगाते थे। यह परम्परा महाराजा गगासिंह के शासनकाल मे भी यथावत रही। पूगल ने कभी भी बीकानेर राज्य को नजर, पेशकश, रकम, रेख के रूप मे कोई राशि नहीं दी।

सन् 1840 ई मे महाराजा रतनसिंह ने ठाकुर भोपालसिंह भाटी को खारबारे की ताजीम बख्शी। कुछ समय बाद मे वह भाटियो से अप्रसन्न हो गए, इसलिए उन्होंने सन् 1864 ई मे खारबारे की जागीर मादरा के ठाकुर बागसिंह को सौंप दी। किसनावत भाटी इसे नहीं सह सके, उन्होन ठाकुर बागसिंह को वहा से मार भगाया। इससे नाराज हो कर महाराजा ने खारबारे के कई गाव खालसे कर लिए। इस पर खारबारे के भाटियो न बीकानेर राज्य की इस कार्यवाही के विरुद्ध आबू स्थित ब्रिटिश पोलिटिकल ऐजेन्ट के यहा अपील की। बीस वर्ष बाद मे भाटी अपील मे जीत गए। परन्तु बीकानेर राज्य इसे अपनी प्रतिष्ठा का माप बना बैठा था। उसने सभी अनैतिक हथकडे अपनाकर खारबारे की जागीर के गाव भाटियो को वापिस बहाल नही किए, खालसे रखे, और इसी स्थिति मे उसका राजस्थान मे विलय हो गया।

सन् 1864 ई मे पूगल ने अपने जकात और थानो के अधिकार बीकानेर राज्य को सौंप दिए। इसके बदले मे मुआवजे के रूप मे बीकानेर राज्य (व राजस्थान) पूगल के राव को रु 500/- प्रतिमाह का भुगतान सन् 1954 ई तक करते रहे।

राजकुमार रघुनाथसिंह के सन् 1869 ई तक कोई सन्तान नही हुई थी। इनका दूसरा विवाह इसी वर्ष किया, जिसमे जैसलमेर के महारावल बैरीसालसिंह और बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह पूगल पधारे।

सन् 1881 ई म बीकानेर राज्य ने पूगल का राजस्व बन्दोबस्ती सर्वेक्षण करना चाहा परन्तु राव करणीसिंह ने इसकी अनुमति नही दी।

इनका देहान्त सन् 1883 ई मे हो गया।

इनमे और राव रामसिह मे बहुत अन्तर था। यह केवल बीकानेर के शासको और उनके भाई-भतीजो को अपनी और अपने निकट के भाटियो की बहन-बेटिया ब्याह कर राजी थे। जिस प्रकार के स्वतन्त्रता और स्वाभिमान के बीज महारावल गजसिह ने इनके भाई राव रणजीतसिह को पूगल दिलवा कर बोए थे, उसे यह नही निभा सके। इन्होने 46 वर्षों तक पूगल को भोगा, परन्तु उसके लिए कुछ नहीं किया। मिस्टर ट्रैविलियन के न्यायपूर्ण निर्णय मे यह सकेत अवश्य था कि पूगल बीकानेर के अधिकार मे नही था। तभी महाराजा रतनसिह को इसे राव रणजीतसिह को लौटाने के लिए विवश किया गया। राव करणीसिह ने महारावल गजसिह से विचार-विमर्श करके पूगल की स्वतन्त्रता के लिए कोई प्रयास नही किया। ब्रिटिश शासन सम्भवत पूगल को अलग इकाई के रूप मे मान्यता दे देता।

(24) राव रघुनाथसिह—सन् 1883–1890 ई.

इनके राव बनने पर बीकानेर राज्य ने इन्हे पूगल के बीकानेर राज्य के द्वितीय श्रेणी के जागीरदार होन का पट्टा दिया, जिसे इन्होने चुपचाप स्वीकार कर लिया। यह पूगल राज्य के इतिहास मे पहला अवसर था जब वहा के राव को जैसलमेर या बीकानेर राज्यो मे से किसी ने पूगल का पट्टा दिया हो। राव रघुनाथसिह को इस प्रकार पट्टा दिए जाने की कार्यवाही का विरोध करना चाहिए था, इसमे ब्रिटिश शासन उनकी सहायता अवश्य करता।

सन् 1887 ई में राव रघुनाथसिह महाराजा गगासिह के राज्याभिषेक म बीकानेर आए।

राव रघुनाथसिह का देहान्त सन् 1890 ई मे हो गया। इनके कोई पुत्र नहीं था। इनकी रानी बीकीजी ने करणीसर के गिरधारीसिह के पुत्र मेहतावसिह को गोद लेकर राव बनाया।

(25) राव मेहताबसिह—सन् 1890–1903 ई.

राव रघुनाथसिह की मृत्यु के पश्चात् पूगल मे गोद आकर राव बनने का अधिकार सत्तासर के ठाकुर शिवनाथसिह का था। मेहताबसिह को गोद लिए जाने की कार्यवाही के विरुद्ध इन्होने बीकानेर राज्य से अपील भी की, जिसे इन्होने अन्य लोगो के समझाने-बुझाने पर वापिस ले ली। बीकानेर राज्य ने राव मेहताबसिह से पेशकश प्राप्त कर के इन्हे पूगल के राव के पद पर मान्यता दे दी। पूगल राज्य के इतिहास मे यह पहला अवसर था, जब पूगल के किसी शासक ने, स्वय के राज्य के राव के पद के लिए, अन्य शासक से मान्यता प्राप्त की हो और वह भी पेशकश देकर।

सन् 1885 ई में इनका विवाह चाडी के ठाकुर जोगराजसिह पातावत की पुत्री मेहताब कुवर से हुआ। इनके सन् 1890 ई मे राजकुमार जीवराज सिह जनमे।

सन् 1899 ई मे महाराजा गगासिह के विवाह के अवसर पर इन्होने रु 25,000/– का मायरा दिया, क्योकि स्वर्गीय महाराजा डूगरसिह की पत्नी, महारानी मेहताब कुवर जिनके गगासिह गोद आए थ, पूगल परिवार के सत्तासर के ठाकुर मूलसिह की पुत्री थी।

सन् 1903 ई में, 37 वर्षों की छोटी आयु मे, इनका देहान्त हो गया।

(26) राव बहादुर राव जीवराजसिंह—सन् 1903-1925 ई

इन्होंने वाल्टर नोवल्स हाई स्कूल, बीकानेर और मेयो कॉलेज, अजमेर में शिक्षा ग्रहण की। सन् 1905 ई में इनका पहला विवाह बाय के ठाकुर जगमाल सिंह की पुत्री गुमान कवर से हुआ।

सन् 1912 ई मे महाराजा गगासिंह के राज्याभिषेक के 25 वर्ष पूर्ण होने पर, रजत जयन्ती के अवसर पर पूगल ठिकाने को द्वितीय श्रेणी के ठिकाने से पदोन्नत करके, प्रथम श्रेणी का ठिकाना बनाया गया। सन् 1918 ई मे महाराजा गगासिंह की सिफारिश पर वायसराय लार्ड चैंमसफोर्ड ने इन्हे 'राव बहादुर' का खिताब दिया।

इन्होंने सन् 1918 ई में अपना दूसरा विवाह मोकलसर (सिवाना) के ठाकुर अजीतसिंह बाला राठौड की पुत्री सोहन कवर से किया और सन् 1921 ई म तीसरा विवाह लाडम के ठाकुर भैरूसिंह रावतोत की पुत्री सूरज कवर से किया। सन् 1919 ई म राजकुमार देवीसिंह का जन्म बाय की रानी बीकीजी गुमान कवर स हुआ। सन् 1923 ई मे दूसरे पुत्र कल्याणसिंह का जन्म रानी सूरज कवर रावतोतजी से हुआ। रानी रावतोतजी का देहान्त सन् 1925 ई मे हो गया। इनके देहान्त के दो माह बाद मे राव जीवराजसिंह का देहान्त भी 35 वर्ष की छोटी आयु मे हो गया। इन्होंने बीकानेर नहर परियोजना के लिए भूमि देना सहर्ष स्वीकार किया था।

(27) राव देवी सिंह—सन् 1925-1984 ई

राव जीवराजसिंह के देहान्त के समय इनकी आयु केवल छ वर्ष की थी। इन्होंने वाल्टर नोवल्स हाई स्कूल, बीकानेर और मेयो कॉलेज, अजमेर मे शिक्षा ग्रहण की। ठाकुर कल्याण सिंह भी इनके साथ मेयो कॉलेज मे पढ़ने गए थे।

महाराजा गगासिंह दिवगत राव जीवराजसिंह की मातमपुरसी करने के लिए बीकानेर स्थित पूगल हाऊस पधारे थे।

इनके अवयस्क रहने के समय पूगल की जागीर का बन्दोबस्ती सर्वेक्षण का कार्य बीकानेर राज्य द्वारा सन् 1926 ई में पूर्ण करवा लिया गया।

इन्होने सन् 1937 ई में मेयो कॉलेज, अजमेर छोड़ा। इन्हे वयस्क होने पर सन् 1938 ई मे ठिकाने के पूर्ण अधिकार मिले।

इनका पहला विवाह, सन् 1938 ई म पीपलोदा (मध्य प्रदेश) के डूडी पवार, राजा मगलसिंह की पुत्री सुगन कवर से हुआ। इन रानी के राजकुमार संगतसिंह सन् 1939 ई में जनमे।

ठाकुर कल्याणसिंह का विवाह सन् 1941 ई म कानसर गांव के ठाकुर लक्ष्मणसिंह बीका की पुत्री मोहन कवर से हुआ। ठाकुर कल्याणसिंह के कोई सन्तान नही हुई। इनका देहान्त 20 जुलाई, सन् 1988 ई को हो गया।

राव देवीसिंह का देहान्त 8 नवम्बर, सन् 1984 मे हुआ था।

राव देवीसिंह एक दानी राव थे, इन्होने नि स्वार्थ भाव से जनता की सेवा की। इन्होने अपनी प्रजा और अन्य जनता को सन् 1951 ई मे कोई कीमत, रकम, रेख, लगान,

लिए बिना हजारो मुरब्बे दे दिए। आज इस समस्त भूमि मे राजस्थान नहर परियोजना से सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है और हजारो लोग इस भूमि पर समृद्ध जीवन व्यतीत कर रहे हैं। सन् 1954 ई मे पूगल की जागीर का राजस्थान मे विलय हो गया।

(28) राव सगतसिंह—सन् 1984 ई से

राव नाम का पद अब समाप्त हो गया है, इस पद की कोई राजकीय मान्यता नही रही। फिर भी राव सगतसिंह पूगल की परम्परा के अनुसार राव की गद्दी पर बैठे। बीकानेर के स्वर्गीय महाराजा करणीसिंह, राव देवीसिंह की मातमपुरसी करने पूगल हाऊस पधारे।

राव सगतसिंह का विवाह हरासर के ठाकुर, राव बहादुर जीवराजसिंह बीदावत की पुत्री से हुआ। इनके केवल एक सन्तान, राजकुमार राहुलसिंह हैं।

× ×

केलण, चाचो, बैरसी, शेखो, हरो, बैरेश,
जैसो, कानो, आसकरण, जगपत, सुदर, गुणेश,
बिजैसिंह, दलकरणसाह, अमरसिंह, अममाल,
रामसिंह, रणजीतसाह, करणसुत रुगनाथ,
सिरवस कर मेहतावरा, वचना ब्रह्मा, महेश,
पलजू वरस वायद, मदा रुघपत नरेश,
पुरिया थरके आपसे, दुश्मन चलै नै दाव,
जसवारी जीवराज नृप, रगो पूगल देवीसिंह राव।

× ×

जस जल्लो
अमग उजळा आपरा, बादळ बरसै लोर,
वचन बहसो कोड स, देत जादम रा जोर।
सोवै हस्ती घूमता, होवै हवदै असबार,
क्सिण मुरारी कान्हा रो, ज्यू जादम कवार।
तुरिया सावत सोवणी, जरकश जरी रुमाल,
मोरा जड़ाऊ मोतिया, कचन किलगी लाल।
तग तुरगा रेशमी, पलाणी पुखराज,
आलीजो ऐसो भवर, ज्यू मालम है महराज।
कमर कटारी चोवडो, मसकत बाध्या मोड,
दान देवै चित हित सू, सुत मेहताव सुजोड।
असवारी ऐसी हुई, घण घोडा घमसान,
तुरी नगारा तामफा, सखरा सैल निशान।
परण पधारिया पाटवी, जसवारी सरब जान,
बाय बीका घर माडवा, सखरा किया समान।

अतर अम्बर केवड़ो, चम्पो चन्दण गुलाब,
समेले सजन मिलिया, सटभरण खुलिया भाग।
कर सवारी कुंजरां, तोरण तीखा चाव,
गीतां गावें गोरिया, कर अधको उछम बिणाव।
चवरी कीना चोसरा, आयो अन्तर पाठ,
मोरां वरदो मोद से, कथिया दान कवाठ।
जादम जमरो लाडलो, दाता पूगल देश,
लखपत फुलाणी सारसो, सुत मेहताब नरेश।
कीरत, करण, बुध, भोज है, करां न पूगे कोय,
बीदा, बीका, रावतोत, कमधज बाधल जोय।
दान देवण मे सारसा, जादम रै नहीं कोई जोड,
शेखावत, सिसोदिया, राणावत, राठौड़।
राज, रिघु चुडो, पुरबी, शिव जू सखरी जोड,
बाय बीकी जगमाल सुता राजवशी राठौड़।
सादो गावे सोयड़ो, रगमानो जीवराज।

× ×

जस जल्लो

देखीया कहवाण कुंजर, जादमा हद जान,
इकतास अलवस, जरी बागो राजरो इनमान।
सिरपेच तुर्रा लाल किलगी, जरत मोतिया मोड,
महताब सुत बींद बणिया, माड़या हद जोड।
तत्कार तुरियां निरत पातर, नौबता घिनघोर,
समेले सटबर विपरा, चारणा द्रव्य छोर।
उच्छरग मे हुए रग राग, तोरण घुमिया गजराज,
महकार अम्बर केवडो, ज्यू अखिया महराज।
चवरिया मे चवर ढुळिया, द्रव्यां मोती छोळ,
जादमां की रीत जोई, पात चुका परोळ।
माडवो गढ़ बाय मडयो, कमधज घर आज,
कवि सादो इम कहवें, परणिया जिवराज॥

× ×

जस जल्लो

पूगल मे राव मेहताब सिंह, विद्या प्रवीण सायर सम्बन्ध।
जैसे दशरथ के घर रामचन्द्र, किसनावतार दधपत को नन्द॥
हुओ स्यालकोट मे सालभाण,
सिपही हुओ लखपत मेहराण,
देवराज भूप हुओ देराण,

दातार राव मेहताब जाण,
अजमेर मे पीथल चौहाण,
जयनगर मे महराज मान,
सुरतेश भूप हुओ बीकाण।
रुघपत सुत ऐसो सुभियान वर्णीग भूप तप तेज भाण, पूगल पति है मेहताब जाण।
सट भरण देत करवा कहकाण, कीरत सुणी काबुल खुरसाण।
महिमा वडी मरजाद जोर, भाद्रव मास बरसत लोर।
जाद मरदान पूगे नै ओर, मेहताब सुत जीवराज जोर।
बदजो उमर वर्षा क्रोड।
कवि आन मान दत दान छोळ।
सादो गावै गुण पात परोळ।।
खमीण सुत घेरू सुभियान,
रतनु हमीर गीता परवीण।
प्रधान रग राग रै सुमाण,
अरियान बाघ गीता परवाण,
पाखरै पीर चढती कबाण।

× ×

जस जल्लो

जाचियो जादम राव, कविया नै आदर माव,
सट माण घणो चाव, भूप मन भाया है।
जादमा की जोर चाल, अत्तर उडै गुलाल,
सिर अरियां वे साल, अक धारी जाया है।
महताव सुत सर्प माण, विद्या मे प्रवीण जांण,
बिरोलियो सारो बीकाण, ऐसा नही पाया है।
असवारी ऐसी जोर, नगारा की बाजै ठोर,
भाद्रवै जा घिनघोर, इन्द्र झड लाया है।
रग राग करै प्यारी, निरख रही थानै दुनिया सारी,
जीवराज राव भारी, पृथ्वी सराया है।
कविया नै कडा बाज,
सरणै आया राखो लाज,
जस झाल छाया है।
जायो है जस की रात,
पिरोळ बैठा गावै पात,
हेमरा काकण हाथ, सादो जस गाया है।।

उपरोक्त 'जस जल्लो' मीर बक्स पेखणा पुत्र जीवणे खा पेखणा के सहयोग से मुझे प्राप्त हुए। उन्होंने यह बोल मुझे सुनाए, जिन्हे मैंने लिपिबद्ध किया। मीर बक्स उस प्राचीन

पेवणा परम्परा की अन्तिम जीवित कडी है। अब पूगल का पेवणा गरीब व्यक्ति है। इसे भूमिहीनों मे आडूरी गाव के पास एक मुरब्बा सिंचित भूमि आवंटित है। इसमे केवल सात बीघा भूमि काश्त करने योग्य है, शेष रेतीला टीबा है।

पूगल राज्य—क्या पाया, कब खोया

1	राव रणकदेव	सन् 1380 1414 ई	सन् 1380 ई मे पूगल लिया, बाद मे मरोठ, बीकमपुर, मूमनवाहन लिए परन्तु कुछ समय पश्चात् मरोठ और मूमनवाहन हार गए।
2	राव केलण	सन् 1414 1430 ई	देरावर, मरोठ, खारबारा, हापासर (140 गाव) लिए। नानणकोट, बीजनोत, केहरोर, भटनेर, नागौर जीते। मूमनवाहन, मायनकोट, डेरा गाजीखा लिए, और डेरा इसमाइलखा, सिरसा, हिसार अपने नियन्त्रण और प्रभाव मे रखे।
3	राव चाचगदेव	सन् 1430 1448 ई	दुनियापुर जीता। इनकी मृत्यु के साथ भाटी दुनियापुर, मूमनवाहन, मियानकोट केहरोर, भटनेर हार गए।
4	राव बरसल	सन् 1448-1464 ई	दुनियापुर, केहरोर, मूमनवाहन जीते। बरसलपुर का किला बनवाया।
5	राव शेखा	सन् 1464-1500 ई	राव बरसल से प्राप्त राज्य यथावत रखा।
6	राव हरा	सन् 1500-1535 ई	यथावत।
7	राव बरसिंह	सन् 1535-1553 ई	बीजनोत, रुकनपुर, देरावर, मरोठ, मूमनवाहन इनके पास थ।
8	राव जैसा	सन् 1553-1587 ई	मुलतान द्वारा युद्ध म मारे गए, राजकुमार काना बन्दी बना लिए गए। केहरोर, दुनियापुर, डेरा गाजीखा, डेरा इसमाइलखा, सतलज व सिन्ध नदी के पश्चिम के क्षेत्र खोए। मराठ, देरावर, मूमनवाहन, बीजनोत, रुकनपुर, बरसलपुर, बीकमपुर, रायमल वाली, खारबारा शेष रहे।
9	राव काना	सन् 1587-1600 ई.	स्थिति यथावत रही।
10	राव आसकरण	सन् 1600-1625 ई	स्थिति यथावत रही।
11	राव जगदेव	सन् 1625-1650 ई	स्थिति यथावत रही।

12 राव सुदरसेन सन् 1650-1665 ई	सन् 1650 ई मे देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, बीजनोत, रुकनपुर का क्षेत्र जैसलमेर से पदच्युत रावल रामचन्द्र को देकर देरावर का एक नया स्वतन्त्र राज्य बना दिया। सन् 1763 ई में यही राज्य बहावलपुर का मुस्लिम राज्य बन गया।
13 राव अमरसिंह सन् 1741-1783 ई	सन् 1749 ई मे बीकमपुर (84 गाव) और बरमलपुर (41 गाव) जैसलमेर मे चले गए। सन् 1783 ई मे राव अमरसिंह मारे गए, बीकानेर ने पूगल के 252 गाव और किसनावतो के 140 गाव खालसे कर लिए थे, कुछ समय पश्चात् लौटा दिए।
14 राव करणीसिह सन् 1837-1883 ई	सन् 1830 ई मे राव रामसिंह मारे गए, पूगल खालसे हो गया। सन् 1837 ई मे ब्रिटिश हस्तक्षेप से राव रणजीतसिंह को पूगल पुन लौटाई गई, परन्तु इनके पश्चात् यह बीकानेर की जागीर मात्र रह गई।

भाटियो द्वारा पूगल मे अपनी राजधानी रखने का औचित्य

पूगल राज्य के गौरवशाली इतिहास के विषय म अनेक सज्जनो से बातचीत से ऐसा प्रतीत हुआ कि वर्तमान के पूगल के गढ को देखकर उन्हे विश्वास नही होता कि यहाँ स शासन करने वाले शासक क्या वास्तव मे इतने शक्तिशाली थे, जैसा कि उनका वर्णन इस इतिहास में किया जा रहा है ? उनका सदेह गलत नही है, क्योकि उनका ऐतिहासिक मानस, चित्तौड, रणथम्भौर जोधपुर, जैसलमेर या बीकानेर आदि क किलो से जुडा हुआ है। वह यह भूल जाते हैं कि महाराणा प्रताप जैसे शासको ने वर्षों तक अकबर जैसे शक्तिशाली बादशाह से लोहा लिया था, उनक पास रक्षा के लिए कौन स गढ थे ? महाराणा प्रताप सन् 1572 ई मे मेवाड की राजगद्दी पर बैठे, वह 25 वर्षों, उनकी मृत्यु सन् 1597 ई तक, अकबर बादशाह से युद्धो म व्यस्त रहे। उनके पुत्र महाराणा अमरसिंह भी सन् 1605 ई तक अकबर स युद्ध करते रहे और बाद म सन् 1615 ई तक वह बादशाह जहांगीर से युद्ध करते रहे। इस प्रकार 43 वर्षों तक यह आन का सघर्ष चलता रहा। उन्होने कभी पराजय और पराधीनता स्वीकार नही की और मौका पडने पर मुगल और उनके सहयोगी राजपूत सेनाओ को लोहे के चने चबवाए। उनके पास मे अपने बचाव और प्रतिरक्षा के लिए दो ही साधन थे, पहला, उन्हे जनता, भीलो और आदिवासियो का अटूट सहयोग व समर्थन प्राप्त था, दूसरा, अरावली शृखला की पहाडियां, घाटियो, दुर्गम नदी नालो, घने जगलो को किसी आक्रमणकारी सेना के लिए पार करके उन तक पहुँचना सम्भव नही था। कोई सेना जोखिम उठाकर भी इन भौतिक और भौगोलिक बाधाओ को लाघने का साहस नही कर सकती थी। फिर भी महाराणा प्रताप की धाक से दुश्मनो के कलेजे कापते थे और स्वय अकबर स्वप्न मे भी उनके वार से डरते थे।

ठीक इसी प्रकार पूगल केवल भाटियो के शासन और शक्ति का प्रतीक थी। इनका बचाव गढ की शरण मे नही था। इस राज्य के भटनेर, मरोठ, देरावर, केहरोर, दुनियापुर, मूमनवाहन, बीजनोत, बीकमपुर, बरसलपुर के सुदृढ दुर्ग इसकी सीमाओ के प्रहरी थे। पूगल पर आक्रमण करने से पहले शत्रु को इन किलो मे से किसी एक या अधिक किला पर साहस जुटाकर अधिकार करना पडता था। फिर जनता का शत्रु के साथ इस दुर्गम क्षेत्र मे असहयोग उनके छापे, किसी सेना को खोखला सकते थे। और भूख और प्यास से शत्रु के सैनिको और जानवरो को जनता तिल तिल करके छटपटा कर मार सकती थी। आखिर मे पूगल की भौगोलिक स्थिति, उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व को फैली हुई समानान्तर रेतीले टीबो की एक के बाद एक कतार, इन टीबो की कतारो के बीच म सकडे और गहरे बहुत

किसी प्रकार को मनुष्यो और पशुओ के लिए खाद्य वनस्पति का अभाव, कुओ का गहरा होना और उनमे पीने योग्य मीठा पानी नही होना, जनता के स्वय के छोटे छोटे और दूर दूर गावो मे स्थित वर्षाती पानी के कुड आदि ऐसी बाधाएँ थी जो किसी बडी आक्रमणकारी सेना को दुस्साहस करने से रोकने मे पर्याप्त थे। इसके साथ गर्मियो का तापमान व आधिया, और सर्दियो की कडाके की ठड को जोड दें तो स्थिति और भी भयानक हो जाती है। प्रकृति और मरु सस्कृति ही पूगल का कवच थी। उस समय विश्व मे कोई ऐसी सेना नही थी और न ही ऐसे विकसित साधन थे कि वह पूगल पर आक्रमण करते समय अपने साथ मे कई दिनो का पीने योग्य जल व अनाज, दाना और घास का प्रबन्ध कर सके और फिर वहा से सुरक्षित लौटना भी इतना ही दुष्कर रहता। स्थानीय जनता का असहयोग और टीबो मे छिपे छापामारो के वार और मार उन्हे हतोत्साहित करने के लिए काफी थे। पूगल के ऊट, कालासर और अमरपुरा गावो के ऊटो के टोले, आज भी भारतीय सुरक्षा सेनाओ को अच्छे ऊट उपलब्ध कराते हैं। क्या उस समय की कोई पैदल या अश्वारोही सेना इन ऊटो पर सवार भाटियो और राईका छापामारो से लोहा ले सकती थी ? यह असम्भव था।

उपरोक्त वर्णन का यह मतलब नही कि पूगल के भाटियो को सारा क्षेत्र पूगल म बैठे बैठाए यो ही मिल गया। पूगल के भाटियो की स्वय की सेनाओ ने देरावर, मरोठ, मूमनवाहन के किले जीते, मूल्तान के क्षेत्र पर आक्रमण किए और उनसे केहरोर, दुनियापुर, डेरा गाजीखा, डेरा इसमाइल खा, मिथानकोट, कशमोर, राहडी आदि के किले जीत कर अपने अधिकार मे लिए। उन्होन तैमूर के भारत से सन् 1399 ई म वापिस चले जान के बाद मे सुलतान खिजर खा सैयद द्वारा नियुक्त सूबेदार स भटनेर का किला जीता। भाटियो ने पजनद क्षेत्र, व्यास और सतलज नदियो की मध्य घाटी पर नियन्त्रण किया। परन्तु किसी किले पर एक बार अधिकार करना या किसी क्षेत्र पर एक बार नियन्त्रण कर लेना ही पर्याप्त नही था। इस अधिकार और नियन्त्रण को बनाए रखने के लिए पडोसियो और शत्रुओ से सतर्क रह कर कडा सघर्ष करना पडता था। मुलतान की मुगल सेनाओ, लगा, बलोचो और वराहो की सुसज्जित सेनाओ द्वारा निरन्तर होने वाले आक्रमणो का सामना करना और इन क्षेत्रो पर सैकडो वर्षो तक अधिकार जमाए रखने का श्रेय पूगल को ही तो है। क्या डेरा गाजी खा, डेरा इसमाइल खा, स्वात (सेहता, बलोचीस्तान), समा बलोचो के विरुद्ध इनके अभियान तुच्छ थे या प्रतिद्वन्द्वी कमजोर थे ? यहा यह भी ध्यान देने योग्य है कि पन्द्रहवी शताब्दी या इससे पहले अगर भाटी अपनी राजधानी पूगल से पश्चिम मे ले जाते तो नागौर, महवा, मन्डोर के राठौड पूगल पर अधिकार करने से नही चूकते। वह इस प्रकार के शक्ति शून्य और सूने क्षेत्र पर पूर्व से तुरन्त अधिकार कर लेते।

पूगल के भाटियो की तलवार की ताकत, पराक्रम और क्षमता को अगर पहचानना है तो ब्रह्मदेव राठौड, गोगादेव राठौड, नागौर के राव चूंडा राठौड अरडकमल से जानलेवा सघर्ष को देखें या मन्डोर, सातलमेर, सामेल, गिररी, नारनौल के युद्धो को देखें। या काला लोदी का हाल जानें। केहरोर, दुनियापुर, डेरा गाजी खा, लगा, सेहता, समा बलोच, खोखर और बलोचो के विरुद्ध राव रणकदेव, केलण, चाचा, बरसल आदि के युद्धो का आकलन करें। इन शासको न वीरता से शत्रुओ को परास्त करके मारा और उनके क्षेत्र जीतकर अपने

अधिकार मे लिए या याद करें बीका राठौड से कोडमदेसर खाली करवाना, राव लूणकरण को नारनौल के युद्ध मे छुड़वाना, राव जैतसी को जोधपुर के राव मालदेव के विरुद्ध युद्ध मे खेत रखना, कामरान के आक्रमण से बीकानेर की रक्षा करना। उधर राव मालदेव के विरुद्ध शेर की मदद में जाकर मन्डोर और मालाणी मे पजा मारना और उन्हे चाढी और पिलाप के बीच मे तीन बार शिकस्त देना। यह सब पूगल का पराक्रम नही था तो और किसका था ?

पूगल, भाटियों की शक्ति, सत्ता और शासन का केन्द्र था। यहीं से इसके शासक घोडे से अगरक्षकों के साथ योजनाबद्ध तरीके से अपने दूरस्थ किलो मे पहुचते थे। वहा मे वह अपने भाई भतीजो, जोगायत, जगमाल, धिरा, खुमान, रणमल, कुम्भा, भीमदे, मेहरवान, बीदा, रणधीर आदि के वशजो के साथ मुलतान के शासकों, लगा, बलोचा, वराहो या भूमि के भूखे राठौडो से युद्ध करते थे और विजयश्री प्राप्त करते थे। कर्नल टाड ने स्वय न माना है कि भाटियो ने अपने अनेक युद्धो मे पन्द्रह से तीस हजार घुडसवार सेना का नतृत्व किया। यह घोडे सतलज, व्यास, पजनद, सिन्ध नदियो की घाटियो के घास के मैदानो मे रहते थे। राव केलण, चाचगदेव, बरसल के घोडो की टापो से यह वादिया गूजती थीं। उनकी तलवार की धार और भाले की नोक से बचने के लिए पठान, कोरी, बलौच, लगा, समा आदि मुसलमान जातियें भाटियो से अपनी बहन बेटियो का विवाह करके शान्ति की कीमत चुकाती थी।

युद्ध मे एक पक्ष की विजय और दूसरे पक्ष की पराजय होती ही है। राव जैसा, रावत शेखाल, कुमार करणसिंह, राव आसकरण, भीमा पर मुलतान की सेना से या पूगल मे युद्ध करते हुए लगा और बलोचों द्वारा मारे गए थे। वहीं राव शेखा और राजकुमार काना युद्ध भूमि मे शत्रुओं द्वारा बन्दी बनाए गए थे। बीकानेर के शासको ने राव सुदरसेन, अमरसिंह और रामसिंह को युद्धों मे मारा भी। पूगल के भाटी वीरता, धैर्य, साहस और सघर्ष करने मे किसी से कम नही थे। उन्होने पूर्व के राजपूत बाहुल्य क्षेत्रो मे अग्रसर होने के स्थान पर पश्चिम की ओर आगे आगे बढ कर शक्तिशाली जातियो से युद्ध किए और हजारो वर्गमील के धन धान्य से सम्पन्न प्रदेशो पर पीढ़ी दर-पीढी राज किया और हिन्दू, मुसलमान, लगा, बलोच वराह, पवार, जोइया, सीर्वा, पडिहार, रथ, मुड्रा, चायल, खोखर, दइया आदि विभिन्न जातियो का सहयोग, स्नेह और विश्वास पाया।

सन् 1947 ई मे भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर और बहावलपुर राज्यो का क्षेत्रफल क्रमश 23317, 35066, 16062, और 15000 वर्गमील था। अगर बरसलपुर (41) और बीकमपुर (84) की जागीरो के 125 गावों का 4000 वर्गमील क्षेत्र जैसलमेर राज्य के क्षेत्रफल से निकाल दें तो इस राज्य का शेष क्षेत्रफल 12,000 वर्गमील रहता है। बीकानेर राज्य के क्षेत्रफल मे पूगल, मगरा और मग्नेर के 8,000 वर्गमील क्षेत्र को निकाल देने मे इस राज्य का शेष क्षेत्रफल 15,000 वर्गमील रहता है। जैसलमेर राज्य के जिस भाग को बहावलपुर ने दबा लिया था, उसे वापिस जैसलमेर मे मिलाने से इस राज्य का क्षेत्रफल लगभग 16 062 वर्गमील

हो जाता है। बचा हुआ बहावलपुर राज्य का क्षेत्रफल 15,000 वर्गमील वही क्षेत्र है जो सन् 1763 ई मे देरावर राज्य का क्षेत्रफल था। यह सन् 1650 ई मे पूगल राज्य का भाग था। इस प्रकार सन् 1650 ई. मे पूगल राज्य का क्षेत्रफल (4,000+8,000 +15,000)=27,000 वर्गमील था। इस प्रकार पूगल के भाटियो की धाक किसी समय हजारो वर्गमीलो के मरुप्रदेश के इस किनारे से सिन्ध घाटी के पश्चिमी छोर तक पडती थी। इस विस्तृत क्षेत्र के शासको को डाकू लूटेरा या आश्रित कहना अज्ञान है, द्वेष है, ईर्ष्या है या जातिगत हेकडी के अलावा क्या है? इसमे वीरता नही है, कायरता है, तुच्छता है या पिटी हुई सुपुप्त आकाक्षा है।

पूगल के भाटियो की मान्यताएं और प्रतीक

1	वंश	चन्द्रवंश
2	कुल	यदु
3	कुल देवता	लक्ष्मीनाथजी
4	कुल देवी	सांगियाजी
5	देवी	महिषासुर मर्दिनी (करनीजी)
6	इष्ट देव	श्रीकृष्ण
7	ठाकुरजी	सालिगराम
8	देवता	गोरा भैरू और गणेश वक्रतुण्ड
9	वेद	यजुर्वेद
10	शाखा	वाजसनेयी
11	सूत्र	पारस्कर–गृहत्र सूत्र
12	गोत्र	अत्रि
13	प्रवर	अत्रि, आत्रेय, शातातप
14	शत्रु	ग्वाल तरु
15	ध्वज	पीला, भगवां
16	छत्र	मेघाडम्बर
17	नक्कारा	अगनजोत
18	ढोल	भवर
19	गुरु	रतननाथ
20	पुरोहित	पुष्करणा
21	ऋषि	दुर्वासा
22	नदी	यमुना गोमती
23	वृक्ष	पीपल, कदम्ब
24	दर्शन	नाथमुद्रा
25	दुर्ग	जैसलमेर पूगल, वीरमपुर बरसलपुर, मरोठ, केहरोर देरावर बीजनोत, मुदवा भटनेर, मूमनवाहन, दुनियापुर, भटिण्डा।
26	पुरी	द्वारका
27	पाटगद्दी	मथुरा
28	बण्डी	वैष्णवी

29	धोती	पीताम्बरी
30	राग	माड
31	मागणीयार (दमामी)	डागा
32	पोलपात	रतनू चारण
33	भव्वा (राव)	वसवेलिया
34	गगाघाट	सौरभ
35	निकास	गगापार
36	अखाडा	तुलरो, वराह
37	पूज्य पशु	गाय, वराह हिरण भेड
38	माला	वैजयन्ति
39	विरुद (विडद)	उत्तर भड किवाड-छत्राला यादव
40	अभिवादन	श्रीकृष्ण
41	बन्दूक	भूतान
42	शिक्षा	दक्षिणा
43	राज्य चिह्न	दो हिरणो के बीच मे शकुन चिड़िया व तीर युक्त हाथ। भाटी शकुन चिड़िया को माता सागियाजी का प्रतीक मानते हैं और हिरण को बाबा रतननाथ का स्वरूप।
44	मोहता	चाण्डक, महेश्वरी
45	पूगल के नाथ	जोहर की गद्दी, अमरपुरा, वोहरा की गद्दी।
46	कोटवाल	दरबारी मडतिया
47	स्याणी	निशानदार जटटू
48	खान	घोघा गाव के गणेश खां पडिहार के वशज।
49	प्रधान	जोधासर और मोतीगढ गावो के सिहराव भाटी।
50	चन्दवरदार	अमरपुरा और रामडा गावो के पडिहार भोला।
51	किलेदार	सूरासर गाव के पडिहार भावता।
52	तरत रक्षक	राणेगना गाव के उतराव भोरता।
53	शेख	कुम्भारवाला गाव के वज।
54	खानगाह	मस्तीया शाह की
55	पीर पनाह	पूगल के पीर
56	ड्योढीदार	सियासर के सिहराव भाटी
57	ईशर गौरा	मडतिया, स्याणी
58	ढोलदार	टीकम राणा
59	नगारची	टीकम राणा
60	सारगी	टीकम राणा
61	शख वादक	राज सेवग
62	ताज	श्रीधर वादन यन्त्र
63	मोदी	खजान मत्री

भाटियो के आने से पहले पूगल का इतिहास

प्रागैतिहासिक काल या उसके बाद के युगो की सत्ता प्रथा यह रही थी कि एक नई जाति पुरानी जाति का स्थान बलपूर्वक ले लेती थी, कुछ समय पश्चात् फिर कोई अन्य जाति उसका स्थान लेने का प्रयास करती और यह क्रम सदियो तक चलता रहता था। जातियो और वशो के आपसी सघर्ष का मुख्य कारण दूसरे की भूमि, उसके जीवन निर्वाह के साधन और आर्थिक सम्पदा छीन कर स्वय उपभोग करना था। अधिक शक्तिशाली जाति उत्तम स्थान का चयन करती थी, वहा से विस्थापित जाति अपने से कमजोर जाति को अन्यत्र खदेड कर उसका स्थान ग्रहण करती थी। कई बार विस्थापित जाति या वश, दुगम पहाडो, जगलो रेगिस्तानो के पार ऐसे क्षेत्रों का सहारा लेती थी जहा से उन्हे फिर से उजाडे जाने की सम्भावनाए घट जाए।

इसी प्रकार के सत्ता सघर्ष मे मगध के राजा जरासिंध से पराजित होकर, श्रीकृष्ण और उनके यदुवशियो को धन धान्य से भरपूर व्रज और मथुरा का क्षेत्र छोडकर अरावली शृखला और थार रेगिस्तान की ओट मे द्वारिका मे जाकर बसना पडा। महाभारत के युद्ध के कुछ समय बाद मे श्रीकृष्ण के लोप हो जाने से यदुवशियो की शक्ति का ह्रास होना आरम्भ हो गया, उनकी क्षीण शक्ति उन्हे शत्रुओ के विरुद्ध डटे रहने का सबल नही दे सकी। नेतृत्व शक्तिहीन होने से उनके सगठन का केन्द्र भी बिखरने लग गया। अन्तत यदुवशियो को द्वारिका त्यागनी पडी, उन्हें वहा से सिन्धु नदी की घाटी की ओर पलायन करना पडा। सिन्ध व सतलज नदिया के क्षेत्रो को पार करके वह गजनी प्रदेश मे पहुँचे, जहां उन्होंने गजनी का नया राज्य स्थापित किया। धीरे-धीरे इस नए राज्य की शक्ति बढी, इसका अधिकार विस्तृत भू भाग पर फैला और सुदूर प्रान्त इसके प्रभाव क्षेत्र मे आए। यदुवशियो का राज्य अफगानिस्तान, बकत्रिया, पश्चिमी भारत, सिन्ध प्रान्त और यमुना घाटी तक फैल गया। जिस व्रज भूमि को त्याग कर श्रीकृष्ण को दक्षिण पश्चिम मे द्वारिका का नया राज्य स्थापित करना पडा था, उन्ही के यदुवशियो ने अब पश्चिम से आकर पुन इस पुनीत भूमि पर अधिकार कर लिया। गजनी राज्य का प्रभाव पूर्व मे प्रयाग तक पहुच चुका था।

यदुवशी इस शक्ति और सम्पन्नता का भोग सैकडों वर्षों तक करते रहे। ईसा से कुछ शताब्दियों पहले प्रारम्भ हुए रोमानो, यवनो, शको, कुशानो आदि पश्चिमी जातियो के आक्रमणा से त्रस्त यदुवशी गजनी छोड कर पूर्व मे अपने लाहौर (शालीवाहनपुर) क्षेत्र मे आ गए। यहा उन्होने एक शक्तिशाली राज्य की नीव रखी और राजा शालीवाहन के अनेक पुत्रो ने हिमालय की पहाडियों और सिन्ध प्रान्त मे स्वतन्त्र राज्य स्थापित किए। सत्ता के सघर्ष और उतार चढाव में यदुवशी कमजोर पडे, उन्हे पश्चिम के आक्रमणकारियो

से परास्त होकर घग्घर नदी घाटी में मरुस्थल के सीमान्त ताखी जगल की शरण लेनी पड़ी। इस पलायन म राजा भाटी (सन् 279 ई) के पुत्र भूपत ने यदुवशियो का नेतृत्व किया। अब से राजा भूपत के वशज 'भाटी' नाम से सम्बोधित होने लगे। राजा भूपत ने सन् 295 ई मे अपने पिता राजा भाटी की स्मृति मे भटनेर (हनुमानगढ) का किला बनवाया।

अग्निकुल के परमारो की शाखाए आबू से उत्तरी और मध्य भारत मे फैलने लगी। उन्होने मालवा, ग्वालियर, अमरकोट, जागलदेश मे अपने सम्पन्न राज्य स्थापित किए। जागलदेश के दहियो को परास्त करके परमारो की साखला शाखा ने जांगलू का राज्य स्थापित किया। परमारो के विस्तार को उत्तर मे दहियो और योद्धेओ (जोइयो) ने रोका, पूर्व मे मोहिल चौहानो और अजमेर के चौहानो ने इसे चुनौती दी, दक्षिण मे सोलकी इनके विस्तार मे बाधक बने और पश्चिम मे भाटियो से इनका टकराव होना अवश्यभावी था। परमारो (पवारों) से पहले पूगल मरोठ-क्षेत्र में पडिहार बहुतायत से थे। यही कारण था कि पूगल के पुराने गांवों के नब्बे प्रतिशत भोगता पडिहार मुसलमान राजपूत थे। मरुप्रदेश के मूल भाग, जैसलमेर, बीकानेर, पूगल, बहावलपुर मे पवार, पडिहार, चौहान और सोलकी आदि पुरानी राजपूत जातियें थी, जबकि इस क्षेत्र के चारो ओर पजाब मे पचाल, दक्षिणी पजाब मे लगा, उत्तरी राजस्थान मे यौद्धेय (जोइया) और सिन्ध मे सैन्धवा जातियें थी। पूगल, जैसलमेर, मरोठ क्षेत्र मे जाट जाति नही थी, क्योकि इनका मूल पेशा काश्तकारी का होने से यह क्षेत्र उनके इस कार्य के लिए कभी उपयुक्त नही था। वर्तमान मे भी इस क्षेत्र मे पुराने जाट बहुत कम सख्या मे हैं।

जिस समय यदुवशियो का गजनी में राज्य था, लगभग उसी समय पडिहारो का राज्य पूगल प्रदेश मे था। इस मरु प्रदेश मे पड़िहार और पवार जातियें प्रमुख थी, इनका और इनके अधीनस्थ जातियों का मुख्य पेशा पशु-पालन था। इनके उत्तर में जोइया और दहिया राजपूत इन पर हावी हो रहे थे, पूर्व मे मोहिल चौहानो का दबदबा था और पश्चिम मे लगा राजपूतों का राज्य था। भटनेर और उत्तरी राजस्थान मे भाटी एक नई शक्ति के रूप मे उभर रहे थे। पडिहारो का स्थान पवारो ने ले लिया था, भविष्य मे पडिहारो के हाथ सत्ता कभी नहीं आई। पूगल मरोठ के शासको की निष्ठा से सेवा करते रहने से स्थानीय गावो मे सत्ता सदैव इनके पास रही और वह सन् 1954 ई तक इन गांवो के पडिहार भोक्ता रहे।

नैनसी की ख्यात के अनुसार मारवाड़ के शासक वाघा साखले को पडिहारो के शासक जयचन्द्र ने मार डाला था। वाघा साखले के पुत्र वैरसी ने अपने पिता का राज्य पडिहारों से पुन प्राप्त करके रुणकोट का किला बनवाया। वैरसी के पडपौत्र रायसी ने दहियो को परास्त करके जागलू पर अधिकार कर लिया। रायसी साखले के पडपौत्र कुवरसी का विवाह छीला रणधीसर के खरला राजपूतो के यहा हुआ था, यह स्थान पूगल और बीकमपुर के बीच मे स्थित था। इन्ही साखलो के वशज जांगलू के नापा साखला पन्द्रहवी शताब्दी मे हुए थे। सोहनलाल की पुस्तक 'तवारिख राज बीकानेर' (सन् 1885 ई) के अनुसार पूगल का गढ अति प्राचीन था, इसकी स्थापना माडव पवारो ने की थी। नैनसी के अनुसार वाघा साखले के पितामह धरनीवराह का राज्य बाडमेर और किराडू मे था, जिसका उन्होने माडू

के नौ किलो पर अधिकार करके विस्तार किया। इन नौ किलो में पूगल का किला भी एक था। इन्ही राजा धरनीवराह के पूर्व के वशज राजा भर्तृहरि परमार थे, जिनकी राजधानी सिन्ध नदी के किनारे स्थित रोहडी में थी। कहते हैं कि राजा पिंगल पवार ने प्राचीन काल में पूगल का गढ बनवा कर वहा नगर बसाया था। राजा धरनीवराह ने अपने भाई गजमल को पूगल का राज्य दिया था। राजा गजमल पवार के वशज राजा दोमट की पुत्री हेमकवर से भटनेर के राजा सेमकरण भाटी (सन् 397 ई) का विवाह हुआ था। इससे स्पष्ट था कि चौथी शताब्दी से पहले पूगल मे पवारो का राज्य था और रावल सिद्ध देवराज के सन् 857 ई में पूगल विजय तक इन्ही के वशज पवार वहा राज्य करते रहे। इन शताब्दियो म पवारों का राज्य भटिंडा से मरु प्रदेश के पूगल, लुद्रवा, जागरु सम्मार्गो तक रहा।

राजा लोमनराव भाटी की सन् 474 ई मे लाहौर मे पराजय होने के बाद मे इनके वशज पुन लाखी जागल की शरण मे गए। राजा रणसी (सन् 478 ई) और भोजसी (499 ई) दोनो राज्यविहीन रहे। लाहौर और पजाब क्षेत्र से पराजित भाटियों के कुछ परिवारो के काफिले सेमकरण क्षेत्र से सतलज नदी पार करके उत्तरी राजस्थान मे आए और अनेक परिवार पुरानी व्यास नदी के साथ साथ सीधे मुलतान क्षेत्र की ओर बढे, जहा जोइयों, लगाओ, दहियो, खोखरों ने अपने क्षेत्र मे उनका प्रवेश रोका। उन्हें बाध्य हो कर सतलज नदी के पार पूर्व के मरोठ, मूमनवाहन आदि क्षेत्र मे जाना पडा। उत्तर से और पश्चिम से आने वाले भाटियों को पवारों, पडिहारो, चौहानो और सोलकियों ने दक्षिण और पूर्व के मरु प्रदेश म भी नही आन दिया। राज्यविहीन और शक्तिहीन भाटियो के भटिंडा के सोलकी भुट्टे उत्तर मे प्रवेश नहीं करने दे रहे थे और दक्षिण में लखवेरा और सिहानकोट (बडोपल) के जोइये इनके लिए बाधा बने हुए थे। इसलिए डरे और सहमे हुए राजा रणसी और भोजसी घग्घर (हाकडा) नदी के साथ साथ दक्षिण पश्चिम की ओर अग्रसर होते गए। मूमनवाहन (वर्तमान बहावलपुर) क्षेत्र म यह मुलतान की ओर से सतलज व व्यास नदियों के पूर्वी पार खदेडे गए अपने अन्य भाटी भाइयो से मिल गए। इससे इन कुछ बल मिला और राजा भोजसी के पुत्र मगलराव ने सन् 519 ई मे मूमनवाहन म किला बनवाया। इनके पश्चिम म मुलतान मे लगाओ और पूर्व मे पूगल के पवारो के शक्तिशाली राज्य थे। कमजोर भाटियो से मूमनवाहन का नवस्थापित किला छीन लिया गया भाटी फिर राज्यविहीन हो गए।

राजा मगलराव के पुत्र मडमराव (सन् 559 ई) ने कुछ सैन्य सगठन करके पूगल के पवारो से कुछ क्षेत्र जीता और सन् 599 ई में मरोठ का किला बनवा कर इस क्षेत्र म दूसरी बार भाटियो का राज्य स्थापित किया। भाटियों ने मरोठ में राज्य तो स्थापित कर लिया परन्तु मुलतान के लगाओ और पूगल के पवारो ने पश्चिम और पूर्व मे इनका विस्तार नही होने दिया। मुलतान के लगाओ की स्थिति कुछ कमजोर जानकर सन् 731 ई म कुमार केहर ने सतलज नदी के पश्चिमी पार केहरोर का किला बनवा लिया। भाटी मुलतान और पूगल की दोहरी मार सह रहे थे, उनका लम्बे समय तक मरोठ मे टिकना सभव नहीं था। इसलिए वह पचनद और सिन्ध घाटी म आगे बढते गए। आखिर इन पूगल के पवारो ने मरोठ छोडने के लिए बाध्य किया, भाटियों ने सन् 770 ई मे अपना

राजधानी मरोठ से तणोत में स्थानान्तरित की। सन् 816 ई के आसपास राव विजयराव ने बीजनोत का किला बनवाया। इनके साथ विश्वासघात करके सन् 841 ई मे पवारो ने मटिंडा मे इन्हे मार डाला। तणोत पर पवारो का अधिकार हो गया, भाटी तीसरी बार राज्यविहीन हो गए।

राव विजयराव के पुत्र रावल सिद्ध देवराज ने सन् 852 ई में पूगल क्षेत्र के पडोस मे देरावर का किला बनवाया और भाटियो के नए राज्य का फिर से शुभारम्भ किया। अभी तक पूगल और लुद्रवा के पवारों, जागलू के साखलो और उत्तर के जोइयो ने भाटियो को मरुस्थल के प्रदेश मे प्रवेश नही करने दिया था। वह मरु प्रदेश की पश्चिमी सीमा और सतलज, पजनद, सिंध नदियो के पूर्वी किनारो की सकडी किन्तु उपजाऊ पट्टी मे ही फैल रहे थे। रावल सिद्ध देवराज ने शक्ति का सगठन करके मटिंडा, मटनेर, मूमनवाहन, मरोठ, बीजनोत और तणोत के किलो पर एक के बाद एक करके फिर से अधिकार किया। इन्होने पूगल के पवारो से दूरी बनाए रखी उन्हें अभी तक उन्होंने छेड़ा नही। अब उन्होने मरु प्रदेश मे प्रवेश करने की योजना बनाई और पहले पहल पडोस के पूगल के बजाय दो सौ किलोमीटर दक्षिण मे स्थित पवारो से लुद्रवा का किला छीना। पूगल से सावधानी बरतते हुए वह अपनी राजधानी भी सन् 853 ई मे देरावर से पूगल से बहुत दूर लुद्रवा ले गये। पूगल के पवार लुद्रवा विजय से उनसे कुछ आशकित अवश्य हुए थे परन्तु राजधानी पडोस के देरावर से लुद्रवा ले जाने पर वह कुछ आश्वस्त हुए। लेकिन अब पवारों के पूगल राज्य के शासन के दिन चुक गए थे। चार वर्ष बाद मे ही, सन् 857 ई मे, रावल सिद्ध देवराज ने पूगल पर आक्रमण करके वहा अधिकार कर लिया और इसके साथ ही मरु प्रदेश म पवारों के राज्य का सदैव के लिए अन्त हो गया।

कुछ समय पश्चात् सन् 860 ई के लगभग राव तणुजी के पुत्र जैतूग के पुत्र रतनसी और चाहड ने बीकमपुर क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। अब पूगल-बीकमपुर का समस्त क्षेत्र भाटियो के अधिकार मे था और वह लुद्रवा से यहा शासन करते थे। इसके बाद अनेक वर्षों तक पूगल पर भाटियो का शासन रहा। दसवी शताब्दी मे मुलतान पर मुसलमानो के प्रारम्भिक आक्रमणो और बाद के मोहम्मद गजनी के इस क्षेत्र मे प्रवेश करने से कुछ समय के लिए भाटियो का पूगल पर से अधिकार समाप्त हो गया था। यहा जोइयो ने अधिकार कर लिया था। परन्तु सन् 1046 ई मे रावल बाछूजी के पुत्र बापेराव के वशज पाहू भाटियो ने जोइयो को परास्त करके पूगल पर पुन अधिकार कर लिया। इन्होंने पूगल मे ही अपनी राजधानी रखी। इस सारे क्षेत्र मे मीठे पानी की भयकर कमी थी, इसलिए पाहुओ ने यहा अनेक कुए बनवाये, यह कुए 'पाहू के कूप' के नाम से अब भी जाने जाते हैं। पाहू भाटियो ने इस क्षेत्र पर अगले दो सौ वर्षों तक राज्य किया। जैसलमेर के रावल शालिवाहन (द्वितीय) (सन् 1168-1190 ई) अपने पाहू भाटियो के देरावर किले मे अनेक वर्षों तक रहे, वह देरावर में ही बलोचो द्वारा मारे गए थे।

चित्तौड के रावल समरसी, दिल्ल। ... की मोहम्मद गोरी के विरुद्ध युद्धों मे सहायता करने गए थे, वह ... 1192 ई के तराइन युद्धों में ... चित्तौड के ...

इनके समय में दिवगत रावल समरसी के भाई सूरजमल किन्ही कारणो से अपने पुत्र भरत के साथ सिन्ध प्रदेश की ओर पलायन कर गए। वहा पिता-पुत्र ने मुसलमानो से सिन्धप्रदेश म क्षेत्र जीत कर अरोड में नया राज्य स्थापित किया। कुमार भरत का विवाह पुगल के पाहू भाटी प्रधान की पुत्री से हुआ था, उस समय वहा पाहू भाटियो का शासन था। राजकुमार भरत और उनकी पूगलयाणी भटियाणी रानी से राहुप नाम के राजकुमार जनमे।

रावल करण का विवाह बागड के चौहानो की राजकुमारी से हुआ था। इनके पुत्र माहुप नितान्त अकर्मण्य थे, वह चौहानो के पास अपने ननिहाल में रहते थ। रावल करण की पुत्री का विवाह जालोर के सोनगरा राव से हुआ था। माहुप की निष्क्रियता का लाभ उठाकर इनका सोनगरा भानजा चित्तौड का शासक बन बैठा। इस प्रकार मेवाड के गहलोतो के राज्य के सोनगरो (चौहानो) को हस्तान्तरण किए जाने की घटना को चित्तौड के एक स्वामिभक्त बारहठ सहन नही कर सके। उन्होंने सिन्ध प्रदेश मे अरोड जा कर राहुप को सारे तथ्यो से अवगत कराया। राहुप ने पूगल से भाटियो से सैनिक सहायता ली और चित्तौड पर आक्रमण करके सोनगरो को वहां परास्त किया। मेवाड पर पुन गहलोतो का अधिकार हो गया। सन् 1201 ई में राहुप चित्तौड के रावल बने, भाटी सेना पूगल लौट गई। राहुप ने सिन्ध प्रदेश का अपना राज्य छोटे भाई को दे दिया, जिसने काबुल के अधीन अरोड का शासक रहना स्वीकार किया और बदले मे स्वय मुसलमान बन गया।

रावल राहुप एक बार शिकार के लिए सुसिया (खरगोश) का पीछा करते हुए एक स्थान पर विश्राम के लिए रुके। वहा सुसिये ने उनका सामना कर लिया। इस चमत्कारिक स्थान पर उन्होंने एक नगर की स्थापना की, जिसे सुसिये के नाम पर 'सिसोदा' नाम दिया गया। इसके बाद में चित्तौड के अहरिया गहलोत शासक इस नगर के नाम से 'सिसोदिया' कहलाए और अब भी वह गहलोत होते हुए इसी नाम (जाति) से सम्बोधित किए जाते हैं।

मडोर के पडिहार शासक राणा मोकल मेवाड के शत्रु थ। रावल राहुप ने मडोर पर आक्रमण करके उन्हें युद्ध मे परास्त किया और बन्दी बनाकर सिसोदा ले गए। राणा मोकल ने सन्धि स्वरूप गोढवाड का परगना मेवाड को सौंपा। विजयी रावल राहुप को उन्होंने अपनी 'राणा' की उपाधि समर्पित की, जिन्होंने पडिहारो पर अपनी विजय के चिह्न के रूप मे अपनी 'रावल' की उपाधि के स्थान पर 'राणा' की उपाधि ग्रहण की। सन् 1200 ई. के बाद से मेवाड के शासक रावल के बजाय 'राणा' की उपाधि से सम्बोधित किए जाते हैं।

इस प्रकार पूगल के भाटियों के भानजे राहुप, मेवाड के ऐसे पहले शासक थे जो 'सिसोदिया' कहलाए और जिन्हें 'राणा' की उपाधि से सम्बोधित किया जाने लगा। (कर्नल टाड, पृष्ठ 211, भाग एक)

मेवाड के राणा लखमनसी (सन् 1275 ई) के ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार ऊडसी अल्लाउद्दीन खिलजी के साथ हुए युद्ध मे मारे गए थे। उस समय राजकुमार ऊडसी के पुत्र हमीर बालक थे, इसलिए राणा लखमनसी ने अपने दूसरे पुत्र अजयसिंह को अपना उत्तराधिकारी घोषित करते हुए उनसे वचन लिया कि वह अपने बाद मे कुमार हमीर को उनका पैतृक अधिकार लौटाकर मेवाड का राणा बनाएँगे। इसके बाद मे राणा लखमनसी भी उसी

युद्ध मे मारे गए। चित्तौड़ विजय करके अल्लाउद्दीन खिलजी ने जालौर के राव मालदेव सोनगरा (चौहान) को वहां का किलेदार नियुक्त किया।

राणा अजयसिंह के पश्चात् (सन् 1301 ई म) हमीर मेवाड के शासक बने। राव मालदेव सोनगरा की पुत्री का बाल्यकाल मे विवाह एक भाटी प्रमुख से हुआ था, परन्तु कुछ समय पश्चात् दुर्भाग्य से वह युद्ध मे मारे गए और वह कुमारी बाल विधवा हो गई। राव मालदेव ने अपनी पुत्री के वैधव्य को गुप्त रखते हुए इसका विवाह राणा हमीर से कर दिया। उसने सारा भेद अपने पति को बता दिया। राणा हमीर ने उसके बाल वैधव्य को महत्व नहीं देते हुए उसकी सच्चाई की प्रशसा की और उसे अपनी पत्नी के रूप म अगीकार किया। इसी सोनगरी राणी की सहायता से बाद मे राणा हमीर चित्तौड पर अधिकार करने मे सफल हुए। इनके राजकुमार खेतसी जन्मे। वह सन् 1365 ई म मेवाड के शासक बने, जिनकी हत्या किए जान पर इनके पुत्र लाखा सन् 1373 ई म मेवाड के राणा बने।

राणा लाखा का वृद्धावस्था मे मडोर के राव रिडमल राठोड की बहन हसा से विवाह हुआ था। इस विवाह होने की घटना की वचनबद्धता के कारण राणा लाखा के ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार चूडा ने अपना उत्तराधिकार त्यागा, राठौड राणी के पुत्र मोकल मेवाड के राणा बने। राव रिडमल राठोड अपनी बहन के पास चित्तौड मे ही रहने लगे थे, बालक राणा मोकल के प्रति उनकी नीयत खराब हुई। मेवाड के प्रति अपने उत्तरदायित्व को निभाते हुए चूडा ने रात्रि म चित्तौड पर अचानक आक्रमण कर दिया। चित्तौड के किले के एक भाटी सरदार किलेदार थे, वह सूरजपोल के पास मारे गए। उधर वृद्ध राव रिडमल एव सिसोदिया दासी क मोहपाश म अफीम व मदिरा का सेवन करके नशे मे अचेत थे। स्वामिभक्त दासी ने उन्ही की पाग से उन्हे अचेतना की अवस्था मे मांचे से बाध दिया। ऐसी बन्धक की दशा मे ही चूडा ने राव के शरीर के टुकडे-टुकडे करके उन्ह बन्धन से मुक्त किया।

राणा लाखा की पुत्री लीला मेवाडी का विवाह जैसलमेर के राजकुमार जैतसी से रचा गया था, परन्तु जैतसी के विवाह से पहले पूगल मे मारे जाने से लीला का विवाह गागरोन के खीची प्रधान से किया गया।

राणा मोकल के पश्चात् राजकुमार कुम्भा मेवाड के राणा बने।

इस प्रकार मेवाड के 'सिसोदिया राणा' पूगल की पाहू भटियाणी की सन्तानें है।

दिल्ली के सुलतान बलबन (सन् 1266-1286 ई) के समय मुलतान के शासको ने जैतुग भाटियो से बीकमपुर और पाहू भाटियो से पूगल छीन लिए। पानी की कमी, विपरीत जलवायु, अत्यधिक गर्मी व सर्दी के कारण मुलतान के सैनिक और अधिकारी इन किलों को सूना छोड कर वापिस चले गए। पूगल के सूने किले मे थोरी (नायक) रहने लग गए। इन्ह मुलतान के शासको का सरक्षण प्राप्त था। वह इस किले मे लगभग एक सौ वर्ष रहे।

सन् 1290 ई मे राजगद्दी स पदच्युत किए जाने स पहले जैसलमेर के रावल पूनपाल, जैतुग और पाहू भाटियो की मुलतान के विरुद्ध सहायता करने इस क्षेत्र में आए थे, परन्तु वह यह किले जीतने मे असफल रहे। सन् 1290 ई म राजगद्दी से पदच्युत किए

जाने के पश्चात् वह अपने साथियो और लकडी से बने हुए गजनी के तख्त के साथ पूगल क्षेत्र म आ गए। यहां उन्होंने पूगल लेने के अनेक प्रयास किए किन्तु नायको से वह गढ नही ले सके। वह अपने जैतुग और पाहू भाटी वशजो के पूगल मे उनके गावा और ढाणियो म रहने लग गए।

इधर रावल पूनपाल राज्यविहीन होकर पूगल क्षेत्र मे अपने परिवार और साथियो के साथ रह रहे थे, उधर जैसलमेर पर दिल्ली के खिलजियो के आक्रमण होने लग गए थे। सन् 1294 95 ई के जैसलमेर के साके के बाद मे रावल अपने परिवार के प्रति चिन्तित रहने लगे। उनकी पुत्री पद्मिनी का जन्म जैसलमेर मे सन् 1285 ई मे हुआ था, वह अब दस वर्ष की हो चुकी थी। वह अल्लाउद्दीन की नीयत के प्रति आशक्ति थे, उनके पास बचाव करने के कोई उपाय नही थे। शीघ्र ही सन् 1300 ई म उन्होने अपनी पुत्री पद्मिनी का विवाह मेवाड के राणा रतनसिंह के साथ कर दिया। उसके साथ वही हुआ जिसकी उन्हें खिलजी से आशका थी। सन् 1303 ई. मे अल्लाउद्दीन खिलजी पूगल की पद्मिनी को पाने के लिए मेवाड में आतुर हो उठा, उसे चित्तौड के किले मे जौहर करके अपनी इज्जत की रक्षा करनी पडी।

पूगल की भाटी पद्मिनी से पहले भी पूगल के ढोला मरवण की प्रेमगाथा प्रसिद्ध थी। ढोला, ग्वालियर के पास कच्छावों के नरवर राज्य के राजकुमार थे और मरवण पूगल के राजा पिंगल पवार की पुत्री थी। इनका बाल्यावस्था मे विवाह हो गया था। युवा होने पर राजकुमार ढोला का विवाह मालवा की कुमारी मलवण से हो गया, इधर पूगल मे मरवण अपने पति ढोला के प्रेमपाश मे बन्धी हुई उनसे मिलने की प्रतीक्षा कर रही थी। राजकुमार इस बन्धन से अनभिज्ञ थे। उनकी प्रेमगाथा की इसी मिलन की घडी के इन्तजार में इतिश्री हो गई।

रावल पूनपाल के पुत्र लखमन भी अपने पिता की तरह भटकाव म ही रह और यही हाल इनके पुत्र का भी रहा। इस प्रकार लगभग एक सौ वर्षों तक पूगल पर थोरियो का अधिकार रहा और रावल पूनपाल की तीन पीढिया भी वहा अधिकार नही कर सकी। आखिर सन् 1380 ई में रावल पूनपाल के पडपौत्र रणकदेव ने नायको को पूगल का किला छोडने के लिए बाध्य किया और अपने आप को पूगल का पहला राव घोषित किया। इनके बाद में पूगल पर अगली 26 पीढियो तक भाटिया का अटूट शासन रहा, यह शासन सन् 1954 ई मे समाप्त हुआ।

सक्षेप में पूगल का प्राचीन इतिहास निम्न प्रकार से रहा

1 ईसा पूर्व में यहा पडिहारो का राज्य था।
2 राजा धरनीवराह ने माड प्रदेश के नौ किले जीते थे, जिनम पूगल भी एक था। राजा धरनीवराह ने अपने भाई गजमल पवार को पगल का राज्य बट मे दिया।
3 राजा पिंगल पवार ने पूगल का गढ बनवाया था। इनकी पुत्री, पूगल की पद्मिनी, पवार मरवण थी, जिसकी ढोला मारू की प्रेमगाथा अमर है।
4 भाटी राजा खेमकरण (सन् 397 ई) का विवाह पूगल के पवार राजा दोमट की पुत्री हेम कवर से हुआ था।

5 सन् 857 ई म रावल सिद्ध देवराज ने पवारो को परास्त करके पूगल मे पहली बार भाटियो का अधिकार स्थापित किया।

6 कुछ समय पश्चात् जोइयो ने भाटियो स पूगल छीन ली।

7 सन् 1046 ई मे पाहू भाटियो ने जोइयों को परास्त करके पूगल पर अधिकार कर लिया। जैसलमेर के रावल शालीवाहन (सन् 1168 1190 ई) पूगल के अधीन देरावर के किले मे कई वर्ष रहे, जहा वह सन् 1190 ई मे मारे गए।

8 मुलतान बलबन (सन् 1266 1281 ई) के समय मुलतान के शासको ने पाहू भाटियो से पूगल छीन ली, परन्तु कुछ समय पश्चात् उनके सैनिक गढ को सूना छोड कर मुलतान लौट गए।

9 सूने पड़े हुए गढ पर थोरियो (नायका) ने अधिकार कर लिया और मुलतान के शासको ने इन्हे सरक्षण दिया।

10 जैसलमेर के पदच्युत रावल पूनपाल, उनके पुत्र और पौत्र एक सौ वर्षों तक पूगल पर अधिकार करने के प्रयास करते रहे किन्तु थोरियो ने उनके प्रयासो को बार बार विफल किया। इनकी पुत्री पूगल की पद्मिनी थी, जिसका विवाह सन् 1300 ई म मेवाड के राणा रतनसिंह से हुआ था।

11 सन् 1380 ई मे राव रणकदेव (रावल पूनपाल के पडपौत्र) ने थोरियो को पूगल का गढ छोडने के लिए बाध्य किया।

12 सन् 1380 ई के बाद का पूगल मे भाटियो का इतिहास इस पुस्तक मे प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

पुरातत्व विभाग की राय मे पूगल की प्राचीनता

राजस्थान सरकार, जन सम्पर्क निर्देशालय, जयपुर।

विषय पूगल मे प्राचीन वस्तुओ की खोज।

जयपुर, 19 अप्रेल। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण जयपुर के अधिकारी, डा दास शर्मा ने हाल ही मे बीकानेर से 85 किलोमीटर दूर पूगल के पास कुछ प्राचीन वस्तुएँ खोजी हैं।

इस सामग्री मे पत्थर के बने छोटे हथियार (माइक्रोलिथ्स) कुछ लम्बी ब्लेडें और ताम्बे के टुकडे जो भाले व चाकू के अग्रभाग प्रतीत होते हैं शामिल हैं।

यह सामग्री हाल ही सीकर जिले के नीम का थाना के पास गणेश्वर के मिली वस्तुओ से मिलती जुलती है।

जयपुर के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग द्वारा इस सामग्री का विश्लेषण किये जाने पर पता चला है कि यह स्थल लगभग 4500 वर्ष पुराना है।

पूगल क्षेत्र की यह नई खोज राजस्थान के पुरातत्व मे एक नई कडी जोडने मे पूर्णतया समर्थ है और इसलिए पुरातत्व की दृष्टि से इसका बडा महत्व है।

क्रमाक—184/276

पूगल की सामाजिक स्थिति और साम्प्रदायिक सद्भावना

पूगल की सज्ञा किसी एक गाव, नगर, गढ या क्षेत्र का नहीं दी जा सकती, यह एक सस्था थी जो किसी जाति विशेष के अहकार की प्रतीक नहीं थी। इसकी सस्कृति का ऐसा सुन्दर सामजस्य था जिसमे व्यक्ति, समुदाय, जाति या धर्म की महत्ता नही थी किन्तु यह एकरूपता का सुन्दर समागम था। मनुष्य और उसके गुण ही सर्वोपरि थे, जाति या धर्म इसके लिए गौण थे। राव केलण के द्वारा दिए गए निर्देशो और उनके द्वारा निर्धारित मान्यताओ मे कितनी साम्प्रदायिक सद्भावना थी, छुआछूत का कहीं नामोनिशान तक नहीं था, किसी जाति विशेष के अन्याय पर कितना बडा अकुश था, जनता की भावनाओ का कितना महत्व था और निरकुश शासक के अन्याय के विरुद्ध उस प्रक्रिया मे कितना नियन्त्रण निहित था। भाटियो के सामाजिक जीवन, उनकी परम्पराओ और न्याय की छाप सारे पूगल क्षेत्र के जन जीवन पर थी। यह सदियो पुराने इतिहास की उपज थी, विकास की प्रक्रिया की एक अविरल कडी थी।

छ्याला यदुवशी कृष्ण के वशज थ, जिनकी गीता का प्रभाव भारत के जन-जन पर पड़ा, जिससे जनता सार्थक जीवन जीने के लिए अभिभूत हुई। गीता का सबसे ज्यादा प्रभाव यदुवशियों पर पडा और एक प्रकार से उनका कर्तव्य हो गया था कि वह इसके उपदेशों की पालना करें। इसी कर्तव्य पूर्ति के लिए भाटिया की सैंकडो पीढ़िया वलिदान और सघर्ष करती रही। उन्होंने गजनी और लाहौर के साम्राज्य भोगे, जिससे उनमें न्याय, दया, शत्रुओ के प्रति आदर व उदारता और स्वय के त्याग और वलिदान के गुण आए। वर्षों तक वह राज्यविहीन भी रहे, जिससे उनमे सगठन, सहिष्णुता, सद्भावना, अभाव से जूझना, समस्याओं से समझौता करने आदि के गुण आए। वाद मे उन्होने पन्द्रह सौ वर्षों तक मरुस्थल पर राज्य किया, इसके विकट जीवन ने उन्हें अभाव और अकाल से जूझने की शक्ति दी, चतुराई, वाक्पटुता और व्यवहारिक निपुणता दी, अनेक सप्रदायो के साथ मिल-जुल कर रहने के लाभ सिखाए, साम्प्रदायिक सद्भावना के गुण दिए और इसी कारण इनके राज्य, एक हजार वर्षों स सही मायनो मे धर्म निरपेक्ष राज्य रहे। जहा मुसलमानों ने राव केलण और चाचगदेव को अपने जवाई के रूप म सहर्ष स्वीकार किया, वहां भाटियो ने भी अपनी वेटिया मुसलमानों को ब्याहने मे कोई हिचकिचाहट नही दिखाई। पूगल के भाटियों के सैंकडों वशजो ने इस्लाम धर्म ग्रहण किया परन्तु भाटियों ने इसके लिए उन्हें कभी दडित नहीं किया और न ही उनके प्रति वदले की भावना रखी। भाटियों के साथ अन्य राजपूत जातियें भी इस्लाम धर्म ग्रहण करने लग गई थीं। परन्तु पूगल ने इस कारण स कभी उनके

अधिकारो पर कुठाराघात नही किया। उनके भूमि, सम्पत्ति और अन्य अधिकार यथावत रखे। भाटियो ने इन्ही भाइयो की धार्मिक भावनाओ का आदर करते हुए सूअर का शिकार निषेध किया था।

मरुस्थल के जीवन मे कायरता, विश्वासघात, झूठे आश्वासनो, चोरी, जारी और चरित्रहीनता के लिए कही भी स्थान नही था। इसीलिए इस क्षेत्र के लोग वीरता मे किसी से कम नही हुए, उन्होने कभी किसी के साथ विश्वासघात नही किया, शरणागत की रक्षा के लिए अपने प्राण तक न्योछावर किए। उनकी वचनबद्धता उच्च श्रेणी की होती थी, क्योकि सारे काम के लेन देन जबान के विश्वास पर ही होते थे। चोरी, डाका, लूट खसोट इस क्षेत्र मे कम होती थी, क्योकि सबके गाव दूर-दूर थे, पशुओ को जगल मे अकेले चरने छोडना पडता था, राहगीर अकेले ही जाते थे, महीनो तक घर सूने रहते थे। चरित्र का सबसे बडा प्रमाण राव केलण के उस निर्देश मे था जिसमे उन्होने पूगल के रानो तक के लिए पासवान रखना वर्जित किया था।

पूगल क्षेत्र की भूमि कम उपजाऊ थी और यहा वर्षा की निरन्तर कमी रहती थी। इसलिए अधिकाश जनता गाय, ऊट, भेड व बकरिया पालती थी, खेती बहुत कम लोग करते थे। *वर्षा की मौसम मे पूगल की धरती सेवण और मुरट घास से लहलहा उठती थी।* मुलतान और बहावलपुर क्षेत्र के पशुपालक हजारो की सख्या मे अपने पशु यहा चराने आते थे, स्थानीय जनता और शासन उनका हार्दिक स्वागत करते थे। इसी प्रकार अकाल के *वर्षों और सर्दियों के मौसम मे पूगल क्षेत्र के हजारो पशु देरावर, मरोठ और सतलज नदी* की घाटी मे चरने जाते थे, इनका भी स्थानीय लोग आदर से स्वागत करते थे। हजारो पशुओ का एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश मे पलायन प्रतिवर्ष होता था परन्तु इनकी चोरी बहुत कम होती थी। अगर किसी के पशु गुम हो जाते या दूसरे के पशुओ के झुड मे मिल जाते तो स्थानीय लोग उनकी खोज खबर लेने मे पूर्ण सहयोग करते और उन्हे ढूढ कर उनके स्वामियो को लौटाने का अपना नैतिक और मानवीय दायित्व समझते थे। कई बार खोये हुए, चोरी गए हुए या गुमराह हुए पशु साल छ महीने बाद तक वापिस सौपे जाते थे। ऐसे खोये हुए पशुओ की मौखिक जानकारी गाव-गाव तक पहुच जाती थी और लोग उनके लिए पानी पीने के तालाबो, जोहडो, टोबों, कुओ और घाटो पर सतर्क रहते थे। एक बार किसी पशु के *अमुक गाव* ऊटों के टोले, भेडो के रेवड या गायो को झुड के साथ होने की खबर मिलने पर बाद मे उसके इधर उधर किए जाने का प्रश्न ही नही था। उनके लिए समाज का भय और पचायत का लाछन बहुत बडा होता था।

बहावलपुर और पूगल क्षेत्र मे आना जाना बिना किसी बाधा या रोक-टोक के सामान्यत चलता ही रहता था। पूगल क्षेत्र के अनेक लोग सिन्ध, मुलतान और बहावलपुर क्षेत्रो मे खेती के कार्यो और अन्य कार्यों पर दिहाडी मजदूरी करने जाया करते थे। उन्हे काम के बदले अनाज और नकद दिया जाता था। गरीब जनता, आदिवासी गण और हरिजन अपने परिवारो सहित प्रतिवर्ष हाडी काटने वहा नियमित रूप से जाया करते थे।

पूगल के गावो मे वर्षा का पानी भरने के लिए बडे-बडे टोबे होते थे जहा आस-पास के सारे पशु पानी पीते थे। गावो मे प्रत्येक घर के लिए वर्षा का पानी इकट्ठा करने के

लिए पक्के कुण्ड होते थे जिनसे पूरा परिवार अगली वर्षा तक सयम से पानी पीता था। गर्मियो के दिनो मे प्राय सभी गाव सूने और उजडे हुए रहते थे, वर्षा होने पर लोग अपने गांवों म लौटते थे और उजडे हुए घर फिर से आवाद होते थे। इस सारे क्षेत्र के कुओ का पानी खारा था, परन्तु घी और दूध की कोई कमी नही रहती थी। लोग वाग घी, दूध और छाछ का उपभोग बहुत करते थ जिससे इनका शारीरिक गठन सुदृढ होता था। यही कारण था कि पूगल के स्त्री पुरुष, अच्छे लम्बे कद काठी वाले, सुगठित अगो वाले, गेहुए रग के और उठे हुए मस्तक वाले होते थे।

आम जनता का खानपान सादा और सरल होता था। बाजरी की रोटी, मोठ की दाल, सागरी व फोपलियो की सब्जी, फोगले का रायता, छाछ, राब, मिर्च की चटनी, दूध, दही और घी का खान-पान अपनी श्रद्धानुसार होता था। हाडियें काटने के बाद बटाई मे प्राप्त गेहू और चना भी लोग कई दिनो तक खाते थे। पूगल की गायो का घी दूर-दूर तक प्रसिद्ध था, इसकी शुद्धता, सफाई और सुगन्ध की सर्वत्र प्रशसा होती थी। इसी कारण बीकानेर, फूलडा, अनूपगढ, बहावलपुर, खानपुर और मुलतान की मडियो मे यह घी ऊचे दामों पर बिकता था। यहा के भेड पालक भेडो की ऊन वर्ष मे दो बार बेचते थे, इसे व्यापारी गावो से ही सीधी खरीद लेते थे। घेटे और बकरे भी व्यापारियों को गावो मे ही बेचे जाते थे। पूगल के अमरपुरा और कालासर गावो के टोलो के ऊट बहुत बढिया किस्म और नस्ल के होते थे। भारत और पश्चिम के पडोसी सिन्ध और मुलतान के क्षेत्रो मे ऐसी कद काठी वाले सुन्दर ऊट कहीं नहीं होते थे। यह भार ढोने और सवारी के कामो मे बहुतायत से काम लिए जाते थे। रेगिस्तान म चलने, भार ढोने और बिना पानी कई दिनों तक रह सकने की इनकी अद्भुत क्षमता होती थी। यही कारण था कि सशस्त्र सेना के अगो में इस क्षेत्र के ऊट ही प्राथमिकता से लिए जाते थे।

पूगल की अधिकाश जनता मुसलमान थी, यह पहले हिन्दू राजपूत थे। पडिहार, पवार, खीची, साखला, जोइया, खरल, दहिया, भाटी, खोखर आदि राजपूत जातियाँ ही मुसलमान बनी थीं। कुछ नए धर्म के प्रभाव से और कुछ मुलतान व सिन्ध के लोगों से सम्पर्क और आपसी आवागमन व विवाह शादियो के कारण यह लोग पूगल की जैसलमेर के भाटियो की मारवाडी बोली के बजाय सिन्धी और मुलतानी मिश्रित भाषा बोलने लग गए थे। भाषा का धर्म से कोई ज्यादा सबध नहीं था, यह लोग हिन्दू होते हुए भी अपनी मातृभाषा सिन्धी और मुलतानी बोलते और समझते थे।

मुसलमान पुरुषो का पहनावा सफेद तहमत, सफेद लम्बा कुर्ता और सफेद साफा होता था। साफा बाधने में सिन्धियों का लहजा रहता था। औरतें, नीला घाघरा, लम्बा कुर्ता और ओढ़ना रखती थीं। कुछ औरतें मुलतान सिन्ध की होने के कारण सलवार कमीज भी पहनती थी। वह सिर के बाल गूथ कर चादी की पट्टी लगाती थीं, कानो म चादी के झुमके और गले म चांदी की हसली पहनती थी। पुरुष कभी कदास कानों मे लौंग पहन लेते थे। सोना पहनने का रिवाज इनमे नही था। सर्दियो में ओढने के लिए कम्बलों का उपयोग करते थे। सर्दी के दिनो मे अच्छा सुन्दर बना हुआ ऊन का पट्टू अपने साथ रखते थे, वैसे वह सामान्यत गमछा भी साथ रखते थे। स्त्री और पुरुषो मे आंखो मे काजल डालने का—

आम रिवाज था। इनकी जूती भी पश्चिम के मुलतान क्षेत्र के डिजाइन की होती थी। आधी कटी सवरी हुई दाढी और बीच मे से साफ की हुई मूछें इनकी पहचान थी। यह राजपूतो की तरह मूछो के बट नही लगाते थे और न ही लम्बी दाढी रखते थे।

इस क्षेत्र के राजपूतो का पहनावा, धोती, अगरखी, कुर्ता और साफा था। साफा आयु के अनुसार, मोठडा, चुनरी, रगीन या खाकी होता था। इनकी स्त्रिया भी घाघरा (लहगा), कुर्ती, काचली और ओढना पहनती थी। अधिकांश महिलाएँ राठोडो और केलावतो की बेटिया होने से उनका पहनावा ठेठ अपने पीहर जैसा राजपूती होता था। इस क्षेत्र के राजपूतो की हिन्दू सस्कृति, रीति रिवाज, बोली चाली और व्यवहार को बिगडने नही देने मे इन महिलाओ का बहुत बडा योगदान रहा। राजपूत अपने घर आगन में मारवाडी भाषा बोलते थे, बाहर मुसलमानो से बात-चीत मे मुलतानी व सिन्धी भाषा ही आपसी माध्यम थी। वैसे मुसलमान मारवाडी भाषा समझ लेते थे किन्तु अभ्यास नही होने के कारण उन्हे बोलने मे कठिनाई आती थी।

इस सारे क्षेत्र मे धार्मिक सहिष्णुता और साम्प्रदायिक सद्भाव सराहनीय था। भाटियो के मुसलमान ही खान प्रधान थे, वह प्रत्येक त्यौहार, उत्सव, अनुष्ठान मे भागीदार होते थ। राव के चयन की प्रक्रिया मे भी उनका पूरा हस्तक्षेप रहता था। भाटी व अन्य राजपूत इनकी खानगाहो और पीरों के स्थानो को स्वेच्छा से पूजते थे और उन पर चढावा चढ़ाते थे। ईद आदि के मौको पर वह स्नेह से उनस मिलते थे। हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के यहा जनम, शादी और मरने के अवसरो पर वैसे ही जाते जैसे वह अपने परिजनो क यहा जाते थ। यह अपने ऊटो पर सवार एक दूसरे की बारात का शृगार होते थे और माढे वाले बारात मे हिन्दू मुसलमानो को देखकर फूले नही समाते थे और अपनी श्रद्धा से ज्यादा उनका आदर करते थे। क्योकि गावो मे हिन्दुओ के घर बहुत थोडे होते थे इसलिए उस गाव और पडोस के गावो के मुसलमान हिन्दू की बेटी के विवाह मे बारात का सारा इन्तजाम करना अपना फर्ज समझते थे। यह सब देखते ही बनता था, और फिर उपहार भेंट मे गाय-बछी, टोडिया आदि देना वह अपना सम्मान समझते थे। गावो मे आपस मे धर्म भाई बनाना बनाना और आपस मे बेटी को खोले देना पीढ़ियो की एक शाश्वत परम्परा थी और बडी बात यह थी कि सगे रिश्ते चाहे निभें या नही निभें, यह हिन्दू मुसलमानो के धर्म भाई बहन के रिश्ते पीढियो तक निभते थे और अगली पीढी मे चाचा, ताऊ, भतीजा, बुआ, फूफा, मामा और नाना नानी मे परिणित हो जाते थे। एक दूसरे के घर का पानी पीने मे या खाना खाने मे कोई भेदभाव और नफरत नही होती थी।

होली दिवाली पर गाव के सारे मुसलमान हिन्दुओ के घर राम राम करने जाते थे। किसी को किसी के धार्मिक उत्सवो से ईर्ष्या या दखल नही थी, सभी लोग जागरण, राती जोगा, भजन कीर्तन मे भाग लेते थे। सामान्यत प्रत्येक गाव मे एक कच्ची ईंटो की बनी छोटी मस्जिद होती थी जिसके आगे एक चौक होता था, परन्तु प्रत्येक गाव मे मौलवी का होना सम्भव नही था। हिन्दुओ की जनसख्या थोडी होने से सभी गावो मे मन्दिर नही होते थे और न ही वह पुजारी का खर्चा वहन कर सकते थे।

पूगल के चारण और पुरोहित सबसे ज्यादा सम्मानित व्यक्तियो मे होते थे। सेवग,

पुजारी, ब्राह्मण चाडक, महेश्वरी, भूतडा, मोहता, मोदी एव अन्य जातिया भी सभी प्रकार से मान सम्मान की अधिकारी थी। ढोलियो को राणा कहते थे और इनका उचित आदर था। मेहतरो और नायको का सभी धार्मिक अनुष्ठानों मे उचित स्थान होता था, प्रत्येक जाति का सहयोग, श्रेणी व पद राव केलण ही तय कर गए थे। नायको का पहनावा, व्यवहार, उठ बैठ और मर्यादा राजपूता के समान होती थी और युद्ध और शान्ति मे इनका विरोचित साथ रहता था।

गावा के मुखिया भोगते हुआ करते थे, वह गाव की शान्ति व्यवस्था, वाद विवाद, आपसी झगडे आदि अपने स्तर पर या पचायत के माध्यम से निपटाते थे।

गावो की अर्थव्यवस्था स्थानीय साहूकार चलाते थे। वह लोगो से ऊन, घी आदि खरीदते थे और रोज काम मे आने वाली वस्तुएं उन्हे उचित मूल्य पर उपलब्ध करवाते थे। गावो के मुखिया निगरानी रखते थे कि वह किसी को परेशान नही करें।

पशुपालक जगलो मे बासुरी और अलगूजा की तान लगाते थे, वही गावो मे ढोलक, ढोल, नगारे प्रचलित थे। मुसलमान लोग सामूहिक नृत्य भी करते थे। स्त्रिया शादी विवाह के गीत मुलतानी लय मे गाती थी परन्तु इनमे उनके पुराने हिन्दू गीतो के भाव और पुट होती थी।

पूगल के रावो का प्रजा से अटूट सम्बन्ध, उनके प्रति प्रजा मे निष्ठा, ईमानदारी और विश्वास था। यह सब राजपूतो के व्यक्तिगत चरित्र, उनकी न्याय प्रियता और धार्मिक सहिष्णुता के कारण था। आज भी पूगल के भाटो की पीडा वहा की मुसलमान जनता की पीडा है। सन् 1984 ई मे राव देवीसिह के निधन पर पूगल पट्टे के सैकडो मुसलमान भाई उनका मातम मनाने बीकानेर आए थे। यह उनके पीढियो पुराने सद्भाव के सस्कारो के कारण ही था, जबकि पूगल की जागीर समाप्त हुए चालीस वर्ष बीत चुके थे, पुरानी पीढी का स्थान युवा पीढी ले चुकी थी।

अध्याय–तीन

मुलतान–संक्षेप इतिहास

जैसलमेर और पूगल के इतिहास की जानकारी के लिए आवश्यक है कि पडोस के मुलतान (मूलस्थान) प्रदेश के विषय मे जानकारी लें। पैगम्बर मोहम्मद साहब का जन्म सन् 570 ई मे और स्वर्गवास सन् 632 ई मे हुआ था। इस्लाम धर्म का प्रचार और विस्तार इनके निधन के बाद मे आरम्भ हुआ। अरब के व्यापारियो ने सन् 636–637 ई मे बम्बई तट के पास मे थाना पर और सन् 644 ई मे बलोचिस्तान के मकरान तट पर पहले पहल इस्लाम धर्म से भारत का परिचय करवाया। भारत पर सन् 659 ई मे बोलन दर्रे से अरबो का पहला आक्रमण हुआ, दूसरा आक्रमण सन् 662–64 ई मे हुआ। परन्तु इस धर्म के प्रारम्भिक परिचय, सम्पर्क या आक्रमण से हिन्दुओ पर विशेष प्रभाव नही पडा।

मोहम्मद-बिन-कासिम ने सन् 711 ई मे सिन्ध प्रदेश पर पहला आक्रमण किया और अगले वर्ष, सन् 712 ई मे पूरा सिन्ध प्रान्त उनके अधिकार मे चला गया। सिन्ध प्रान्त पर विजय प्राप्त करके इसी वर्ष वह मुलतान की ओर बढे। वहा के हिन्दू राजाओ ने शत्रुओ का डट कर विरोध किया, शत्रुओ ने मुलतान के किले की कई दिनो तक कसकर घेरा बन्दी किए रखी। एक दिन एक भगौडे सैनिक ने मुलतान के लिए जल आपूर्ति के गुप्त स्रोत की जानकारी शत्रु को दे दी। शत्रु ने इस स्रोत को बाहर से नष्ट करके किले को जल आपूर्ति रोक दी। पानी के अभाव मे हिन्दू शासक को आत्मसमर्पण करने के लिए बाध्य होना पडा। मुलतान नगर और किले से अरबो को अपार स्वर्ण और अन्य धन सम्पत्ति प्राप्त हुई। इससे वह इतने प्रसन्न और प्रभावित हुए कि उन्होने मुलतान नगर का नाम ही सवर्ण नगरी' रख दिया। अगले 150 वर्षों तक सिन्ध और मुलतान प्रदेश अरब के खलीफा की सल्तनत के भाग रहे। इनके शासनकाल मे हिन्दू जनता के साथ म असामान्य अमानवीय व्यवहार हुआ और उनकी स्थिति अत्यन्त दयनीय रही। सभी प्रकार के अत्याचार उनके साथ म हुए, जिन्हे सहने के या इस्लाम धर्म ग्रहण करने के सिवाय उनके पास और कोई विकल्प नही था।

मुलतान के मुसलमान शासक ने सन् 871 ई मे अरब के खलीफा के नियन्त्रण को अमान्य कर दिया, परन्तु सिन्ध प्रान्त पर अरबों का शासन यथावत रहा, वह अरब के खलीफा के नियन्त्रण मे रहे।

ग्यारहवी शताब्दी के आरम्भ मे मुलतान पर कारमाथियनो का अधिकार हो गया। उनका फतेह दाऊद नाम का एक योग्य शासक था। बलख और गजनी के राज्य बोखारो के खलीफा के अधीन थे। उन्होंने खोरासन के प्रशासक, सुबुक्तगिन के पुत्र महमूद गजनी (सन् 997–1030 ई) को शासक की मान्यता द दी। महमूद गजनी ने सन् 1006 ई मे भारत पर अपना चौथा आक्रमण मुलतान के शासक फतेह दाऊद के विरुद्ध किया। सात दिन के घमासान युद्ध के बाद महमूद गजनी विजयी हुए। उन्होने अपार धन पेशकश मे लेकर

राजा जयपाल के पौत्र नवासा शाह को मुलतान का शासक नियुक्त किया। वह स्वयं धन लेकर गजनी लौट गए। कुछ समय पश्चात् उन्हें सूचना मिली कि नवासा शाह ने अपने आप को स्वतन्त्र शासक घोषित कर दिया था। इसलिए उन्होने भारत के विरुद्ध पाचवा आक्रमण भी मुलतान पर करके नवासा शाह को बन्दी बना लिया। सन् 1010 ई मे महमूद गजनी ने भारत पर अपना आठवा आक्रमण भी मुलतान के विरुद्ध किया। इस आक्रमण में उन्होने विद्रोही शासक फतेह दाऊद को मुलतान के पास परास्त किया। इस प्रकार महमूद गजनी ने चार वर्ष की अल्पावधि मे मुलतान पर तीन बार आक्रमण किए। इससे मुलातन की महत्त्वपूर्ण स्थिति और उसकी समृद्धि का अन्दाजा लगाया जा सकता था।

मोहम्मद गोरी ने भी सन् 1175 ई में अपना पहला आक्रमण भारत के विरुद्ध मुलतान पर ही किया। उन्होने विजय प्राप्त करके वहां एक कट्टर मुसलमान को सूबेदार नियुक्त किया ताकि वह स्थानीय जनता के साथ क्रूरता का व्यवहार करके वहा नियन्त्रण रख सके और सताई हुई जनता आसानी से इस्लाम धर्म स्वीकार कर ले।

मोहम्मद गोरी मुलतान से उछ राज्य की ओर बढे। सतलज और पजनद नदियो के पूर्व म स्थित उछ भाटियो का राज्य था, इसका किला बहुत सुदृढ था। उछ के भाटी राजा और उसकी रानी मे अन बन थी। रानी ने मोहम्मद गोरी को सदेश भिजवाया कि अगर वह उनकी पुत्री को ब्याह कर उसे पटरानी बनाए तो वह राजा को जहर देकर मरवा देगी और किले का अधिकार उन्हे सौंप देगी। रानी ने अपना वायदा अवश्य निभाया परन्तु मोहम्मद गोरी ने अपने वायदे की ओर ध्यान नही दिया। उन्होने सन् 1182 ई तक पूरे सिन्ध प्रान्त पर अधिकार कर लिया।

दिल्ली के सुलतान इलतुतमिश (सन् 1211–1236 ई) के समय कबाचा नाम का एक व्यक्ति उछ और मुलतान का शासक बना। उसने सुलतान कुतुबुद्दीन ऐबक के शासन (सन् 1206–1211 ई) के समय पजाब प्रान्त के कुछ भाग पर भी अधिकार कर लिया था। इलतुतमिश ने सन् 1227 ई मे कबाचा पर आक्रमण किया और उससे उछ और मुलतान छीन लिए। कबाचा भाखड के पास भागता हुआ सिन्ध नदी मे डूब कर मर गया। रजिया सुलतान (सन् 1236-1240 ई) के समय के मुलतान के सूबेदार ने उन्हे दिल्ली की सुलतान मानने से इनकार कर दिया। उछ और मुलतान के शासक ने अपने आपको स्वतन्त्र शासक घोषित करके रजिया सुलतान के शासन को चुनौती दे डाली, परन्तु कुछ समय पश्चात् वहां दिल्ली का शासन हो गया।

सुलतान बहराम शाह (सन् 1240–42 ई) के समय, सन् 1241 ई मे, मगोलो ने मुलतान पर पहला आक्रमण किया परन्तु वहां के सूबेदार कबीरखा अयाज ने उनका वहा विरोध करके उन्हे यहा अधिकार नही करने दिया। सन् 1245 ई से पहले उछ और मुलतान पुन स्वतन्त्र हो गए। सुलतान अल्लाउद्दीन मसूद शाह (सन् 1242–46 ई) के समय, सन् 1245 ई मे, सैफुद्दीन हसन करलाघ ने मुलतान और उछ पर अधिकार कर लिया। इसी वर्ष मगोलों ने मुलतान पर दूसरा आक्रमण किया। उन्होंने हसन करलाघ को परास्त करके मुलतान पर अधिकार कर लिया और उछ के किले को घेर लिया। सुलतान मसूद शाह उनसे युद्ध करने के लिए आगे बढ़े, उनके व्यास नदी (मुलतान के पूर्व मे) तक

बढ़ आने की सूचना पाकर मगोलो ने अपना घेरा उठा लिया और वह भारत छोड़कर चले गए। सुलतान नसीरुद्दीन शाह (सन् 1246 66 ई) के शासन के समय मगोलो ने मुलतान और लाहौर पर बार-बार आक्रमण करके जनता को सताया और प्रजा व शासकों से मनचाहा धन ऐंठा।

बलबन के भाई किशलुखा मुलतान और उछ के सूबेदार थे। जब सुलतान सत्ता मे पुनः आए तब किशलुखा ने विद्रोह करके खोरासन के हुलागुखा की प्रभुसत्ता स्वीकार कर ली। कुछ समय पश्चात् किशलुखा ने समाना पर आक्रमण किया परन्तु सुलतान बलबन ने उन्हे परास्त किया। सन् 1256 ई मे ही कुछ माह पश्चात् किशलुखा और नुइनखा मगोल ने मिलकर मुलतान पर आक्रमण किया। वह केवल लूटपाट करने और जनता मे भय फैलाने आए थे, इसलिए सुलतान बलबन के उनके सामने बढ आने का सुनकर वह वापिस चले गए। सुलतान बलबन (सन् 1266-86 ई) ने उछ व मुलतान को मगोलो से मुक्त करवाया। मगोलो द्वारा बार बार मुलतान पर आक्रमण किए जाने के कारण उन्होंने सन् 1271 ई मे शहजादा महमूद को मुलतान का सूबेदार नियुक्त किया। सन् 1279 और 1285 ई मे मंगोलो ने मुलतान पर शक्तिशाली आक्रमण किए परन्तु शहजादा महमूद ने उन्हे परास्त किया। सुलतान बलबन के समय म जैसलमेर मे रावल लक्ष्मण थे (सन् 1283–88 ई), उस समय बलबन ने जैसलमेर स देरावर, पाहू भाटियो से पूगल, और जैतुग भाटियो से बीकमपुर छीन लिये। सन् 1286 ई के मगोलो के आक्रमण मे शहजादा महमूद मुलतान मे मारे गए। इस हादसे को सुलतान बलबन धैर्य से नही सह सके। इसी वर्ष उनका निधन हो गया।

यह आक्रमणकारी मगोल उस समय मुसल्मान नही थे। जिन मगोलो को बन्दी बना लिया जाता था, उन्हें जबरदस्ती मुसलमान बनाकर 'नव मुसलमान' नाम से सम्बोधित करते थे। इनमे से अनेकों को दिल्ली ले जाकर मगोलपुरी बस्ती मे बसाया गया था।

सन् 1286 ई. मे सुलतान बलबन के निधन के बाद मे सुलतान बनने के लिए किशलुखां, जिसे मलिक छज्जू भी कहा जाता था, ने विद्रोह किया। सुलतान जलालुद्दीन खिलजी (सन् 1290-96 ई) ने इनके विद्रोह को दबाकर इन्हें मुलतान भेज दिया, जहा इनकी सुख सुविधा के सारे प्रबन्ध किए गए।

सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी (सन् 1296–1316 ई) के समय मगोलो ने भारत पर बार-बार आक्रमण किए। इनके फलस्वरूप उन्होने अन्य स्थानो के अलावा मुलतान के किले को भी सुदृढ करवाकर यहा पर अतिरिक्त सेना रखी। मगोलो ने सन् 1298 ई मे बोलन दर्रे से आक्रमण करके सिवी के किले पर और सिवस्थान पर अधिकार कर लिया। इन्हें जफरखां ने निर्णायक युद्ध मे परास्त किया और इनसे सिवी का क्षेत्र खाली करवाया। परन्तु सिन्ध और दक्षिणी पजाब के मुलतान समाग पर मगोलो के बार बार के आक्रमणो से यहां की प्रशासनिक और शान्ति व्यवस्था भग होती रहती थी, इसलिए दिल्ली के शासकों को सतर्क रहकर इनसे सघर्ष करना पड़ता था। सन् 1306 ई मे मगोलो ने मुलतान पर पाचवी बार सीधा आक्रमण किया। पजाब के सूबेदार गाजी मलिक ने मगोलो को परास्त किया। मगोलो के विरुद्ध दिल्ली के सुलतानो की सुरक्षा पक्ति लाहौर, दिपालपुर, समाना,

मुलतान, उच्छ मे होकर थी। इस कारण इस पक्ति के पश्चिम म पडने वाले सुरक्षित क्षेत्र को मगोलो के आक्रमणो और उनसे होने वाली यातनाओ को झेलना पडता था। यह मगोल अभी तक मुसलमान नही बन थे।

ग्यासुद्दीन तुगलक (गाजी मलिक, सन् 1320-25 ई) के पिता तुर्क और माता जाट जाति की थी। इनके पुत्र मोहम्मद-बिन तुगलक, सन् 1325-51 ई म, सुलतान बने। सन् 1351-88 ई म फिरोज तुगलक शासक बने। इनका जन्म सन् 1309 ई मे हुआ था। यह ग्यासुद्दीन तुगलक के छोटे भाई रजाब के पुत्र थे। इनकी माता बीबी नायला, रजाब की पत्नी, अबोहर के भाटी राजा रणमल की पुत्री थी।

सुलतान मोहम्मद बिन तुगलक के समय मालवा और धार के सूबेदार अजीज खुम्मार के विरुद्ध स्थानीय विद्रोह छिड गया। इसे दबाकर सुलतान एक अन्य विद्रोह को दबाने के लिए गए। वहा उन्हे सूचना मिली कि तागी के नेतृत्व मे गुजरात मे भी विद्रोह भडक उठा था। सुलतान ने इस विद्रोह को सफलतापूर्वक कुचला परन्तु विद्रोहियो के सरदार तागी सिन्ध प्रान्त की ओर भाग गये। सुलतान ने उनका पीछा किया परन्तु सुलतान सन् 1351 ई मे सिन्ध म थट्टा के समीप मर गए। इनके स्थान पर वही सिन्ध के कैम्प मे ही फिरोज तुगलक को दिल्ली का सुलतान घोषित कर दिया गया।

सन् 1361-62 ई म सुलतान फिरोज तुगलक ने सिन्ध विजय करने के अभिप्राय से थट्टा पर आक्रमण किया। सिन्ध प्रदेश के शासक जाम बाबनिया ने सुलतान फिरोज तुगलक का डटकर विरोध किया। सिन्ध मे सुल्तान की सेना को अकाल, महामारी और शक्तिशाली शासक का सामना करना पडा। इससे उनकी सेना के तीन चौथाई भाग की क्षति पहुची। हताश सुलतान ने अपना सिन्ध विजय का अभियान रोका और बची खुची सेना को सुरक्षित निकाल ले जाने के लिए उन्होंने गुजरात की ओर पीछे हटना उचित समझा। इस पलायन मे मार्गदर्शको की भूल के कारण सेना और सुलतान कच्छ के रन और जैसलमेर राज्य के रेगिस्तानी भाग म छ माह तक भटकते रहे। इस अवधि म सुलतान और उनकी सेना का कोई अता पता नही लगा। आखिर खान ए जहान मकबूल ने सेना का कुमक भेजी जिससे सन् 1363 ई मे सुलतान फिरोज तुगलक ने सिन्ध प्रान्त पर अधिकार किया और वह जाम बाबनिया को बन्दी बनाकर दिल्ली ले गए। सुलतान मोहम्मद बिन तुगलक और फिरोज तुगलक के सिन्ध विजय के अभियानो से मुल्तान को अलग नही किया जा सकता। मुलतान दिल्ली सल्तनत की शक्ति और शासन का प्रमुख केन्द्र था। सिन्ध के दोनो अभियानो मे मुलतान की प्रमुख भूमिका रही थी।

सन् 1397 ई मे तैमूर ने अपने युवा पौत्र पीर मोहम्मद को काबुल, गजनी, कन्धार सहित पन्द्रह परगनो का शासक नियुक्त किया। पीर मोहम्मद ने नवम्बर, सन् 1397 ई म, सिंध नदी पार करके अगले माह उच पर अधिकार कर लिया। इसके पश्चात् उन्होने मुलतान पर आक्रमण किया परन्तु बडे विरोध के कारण वह वहा अटक गए। मुलतान के शासक और रक्षक सारग खा ने उन्हें बुरी तरह फसा रखा था। मुलतान पर अधिकार करना उन्हे असम्भव लग रहा था, पीर मोहम्मद ने छ माह के घेरे के पश्चात् कठिनाई म सफलता प्राप्त की। फिर वह पाकपट्टन पहुचे, जहा सतलज नदी के किनारे

उनसे तैमूर अपनी सेना सहित आ मिले। यहा से तैमूर ने नवम्बर, 1398 ई मे भटनेर के भाटी राय दुलिचन्द पर आक्रमण किया और घमासान युद्ध के पश्चात् विजय प्राप्त की।

6 मार्च, सन् 1399 ई मे तैमूर ने लाहौर म एक भव्य दरबार का आयोजन किया। इस दरबार मे उन्होने सैयद खिजर खा को मुलतान सौंपा और उन्हे उत्तरी सिन्ध का वायसराय बनाया। 12 नवम्बर, सन् 1405 ई मे सैयद खिजर खा ने अपने एक शक्तिशाली प्रतिद्वन्द्वी मल्लू इक्बाल पर दिपालपुर से आगे बढकर आक्रमण किया और उन्हे पाकपट्टन के समीप परास्त करके मारा। सन् 1406 ई मे सैयद खिजर खा ने दौलत खा लोदी पर समाना मे आक्रमण किया, वह मैदान छोडकर भाग गए। खिजर खा ने समाना के अलावा सरहिन्द, सुनम और हिसार पर अधिकार कर लिया। सन् 1409 ई मे सैयद खिजर खा ने फिरोजाबाद पर आक्रमण किया परन्तु अभाव और अकाल होने के कारण वह सफल नही हो सके। सन् 1411 ई मे उन्होने रोहतक पर अधिकार किया और अगले वर्ष, सन् 1411 ई मे नारनौल पर अधिकार कर लिया।

सन् 1413 ई मे सुलतान महमूद शाह तुगलक (सन् 1393–1413 ई) का देहान्त हो गया। इसी वर्ष सैयद खिजर खा ने दौलत खा लोदी पर आक्रमण करके उसे मेवात मे परास्त किया और मार्च, सन् 1414 ई मे उन्होने लोदी को सिरी के किले से बन्दी बनाया और स्वय को दिल्ली का सुलतान घोषित किया। इन पन्द्रह वर्षों (सन् 1399–1414 ई) के समय, दिल्ली की सत्ता, हथियाने तक सैयद खिजर खा के लिए मुलतान की प्रमुख भूमिका रही क्योकि पीछे यही उनकी सत्ता और शक्ति का केन्द्र रहा। इसी समय मे राव रणकदेव (सन् 1380–1414 ई.) ने पूगल का राज्य स्थापित किया था और सन् 1414 ई मे राव केलण भी पूगल के शासक बने थे।

सैयद खिजर खा के शासन के प्रारम्भिक कुछ वर्ष अत्यन्त तनावपूर्ण रहे, उन्हे सामन्तों एव अन्य प्रभावशाली व्यक्तियो का सहयोग प्राप्त नही हो रहा था। मुलतान और लाहौर क्षेत्र मे खोखरो का भयानक आतक था। सैयद ने इन्हें दबाने के लिए मुलतान की सूबेदारी अब्दुर रहमान को सौंपी। सन् 1421 ई मे सैयद खिजर खा का देहान्त हो गया।

सैयद खिजर खा के स्थान पर उनके पुत्र मुबारक शाह (सन् 1421–1434 ई) दिल्ली के सुलतान बने। इनके शासनकाल मे जसरथ खोखर ने पजाब मे तहलका मचा रखा था और उसने यह अशान्ति सन् 1432 ई तक बनाए रखी। सन् 1433 ई मे बच्चा तुर्क ने उपद्रव मचाया, इसकी सहायता के लिए आए हुए काबुल के अमीर शेखजादा अली ने मुलतान क्षेत्र को खूब लूटा। सुलतान मुबारक शाह के समय मुलतान मे अत्यन्त अशान्ति व उपद्रवो के दौर रहे, यही स्थिति बहलोल लोदी के समय (सन् 1472 ई) तक रही।

बहलोल लोदी अफगान लोदी जाति के शाहु खेल उप जाति के थे। इनके पितामह मलिक बहराम सुलतान फिरोज तुगलक के समय म बाहर स आकर मुलतान मे बसे और मुलतान के सूबेदार मलिक मरदान दौलत के अधीन सेवा करने लगे। मलिक बहराम के पाच पुत्रो मे से मलिक सुलतान शाह और मलिक काला लोदी ज्यादा प्रसिद्ध हुए। काला लोदी बहलोल लोदी के पिता थे इन्होने जसरथ खोखर को परास्त करके अपने आप को स्वतन्त्र

इकाई का शासक घोषित किया। सुलतान सैयद खिजर खा ने सन् 1419 ई मे काला लोदी के भाई मलिक सुलतान शाह को सरहिन्द का सूबेदार नियुक्त किया था। इन्हे 'इस्लाम खा' का खिताब दिया और इनकी पुत्री का विवाह इनके भतीजे बहलोल लोदी के साथ किया। इस्लाम खा की मृत्यु के बाद म बहलोल लोदी सरहिन्द के सूबेदार बने। सुलतान मुहम्मद शाह सैयद (सन 1434–1444 ई) ने सन् 1440–41 ई म बहलोल लोदी की सहायता से मालवा के महमूद शाह खिलजी को परास्त किया। सुलतान मुहम्मद शाह ने बहलोल लोदी को लाहौर और दिपालपुर के सूबे भी दिए। बहलोल लोदी ने अपने आपको इन सूबो का शासक घोषित करके 'सुलतान' का खिताब स्वय ग्रहण कर लिया। सुलतान आलम शाह सैयद (सन 1444–1451 ई) के समय सुलतान बहलोल लोदी ही उनके शासन के कर्ता धर्ता थे और वही दिल्ली का प्रशासन अपनी इच्छानुसार चलात थे। सुलतान आलम शाह ने सन् 1451 ई म सुलतान बहलोल लोदी के पक्ष म अपना पद त्याग कर उन्हें दिल्ली का सुलतान बना दिया।

हुसैन शाह लगा अपने पिता के निधन पर मुलतान राज्य के शासक बने और वह दिल्ली के सुलतान की प्रभुसत्ता को चुनौती दने लगे थे। इसलिए बहलोल लोदी ने सन 1472 ई म मुलतान पर आक्रमण किया और शासक लगा को उनकी अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया।

बहलोल लोदी न सन् 1451 ई स सन् 1489 ई तक शासन किया। इसके बाद म सिकन्दर शाह (सन 1489 1517 ई) और इब्राहिम लोदी (सन 1517–1526 ई) शासक बने। सन् 1526 ई मे सुल्तान इब्राहिम लोदी बाबर से परास्त हो गए जिससे लोदी वश का पतन हो गया।

तुगलक वश के पतन के समय (सन 1390–1414 ई) से सिन्ध प्रा त स्वतन्त्र हो गया था। सोलहवी शताब्दी के प्रारम्भ मे वहा अशान्ति अन्याय, असुरक्षा और लूटपाट का वातावरण बनने लग गया था। सूमरा वश समाप्ति की दशा म था और कन्धार के सूबेदार शाह बेग अफगान सिन्ध प्रदेश पर घात लगाए बैठे थे। उन्होने सन् 1520 ई म सिन्ध प्रदेश पर आक्रमण करके वहा अपना आधिपत्य स्थापित किया और उनके पुत्र शाह हुसैन ने मुलतान पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार सन 1520 ई मे सिन्ध और मुलतान के प्रदेशो पर अफगानो का अधिकार हो गया।

हुमायु (सन 1530–1540 ई) के बादशाह बनने के समय उनके भाई कामरान को काबुल और कन्धार के प्रदेश दिए गए थे। उन्होने कुछ समय पश्चात् पजाब पर भी अधिकार कर लिया। हुमायु ने उन्हे अपदस्थ नही किया। इस प्रकार मुलतान पर भी कामरान का शासन हो गया। बादशाह हुमायु के स्थान पर शेरशाह सूरी (सन् 1540–54 ई) ने शासक बनने पर सिंध और मुलतान पर अधिकार किया और कामरान द्वारा पजाब छोडकर चले जाने पर उन्होने वहां पर भी अधिकार कर लिया। सन् 1540–1555 ई तक मुलतान सूर वश के अधिकार मे रहा। शेर शाहसूरी ने अपने समय मे अनेक महत्वपूर्ण सडको का निर्माण करवाया, इनमे से एक सडक लाहौर से मुलतान तक की भी थी। सन् 1555 ई मे हुमायु ने पुन दिल्ली पर अधिकार करने के समय तक सिन्ध और मुलतान

स्वतन्त्र हो चुके थे, उनके शासको मे दिल्ली दरबार के प्रति कोई निष्ठा नही थी। इसी प्रकार उस समय तक कश्मीर के शासक भी स्वतन्त्र हो चुके थे। सन् 1556 ई मे अकबर के बादशाह बनने के समय भी सिन्ध, मुलतान और कश्मीर के राज्य स्वतन्त्र राज्य थे। यह स्थिति सन् 1574 ई तक यथावत रही। इस वर्ष बादशाह अकबर ने मालव क्षेत्र पर अधिकार करके मुलतान को अपने अधीन कर लिया। अभी उसका दक्षिणी सिन्ध प्रान्त पर अधिकार नही हुआ था, *कन्धार पर अधिकार करने से पहले उसका वहाँ अधिकार होना आवश्यक था।* बादशाह अकबर ने सन् 1590 ई मे मिर्जा अब्दुर रहमान को मुलतान का सूबेदार नियुक्त किया, उन्होने सन् 1591 ई मे सिन्ध के शासक मिर्जा जानी बेग को परास्त किया। सन् 1595 ई मे कन्धार पर मुगलो का अधिकार हो गया। सन् 1574 ई के बाद मे मुलतान मुगलो की सत्ता का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण केन्द्र रहा।

भारत मे मुलतान पर मुसलमानो का अधिकार आठवी शताब्दी से रहा। इस पर लगातार मुसलमानो का अधिकार रहने से उन्होने यहां अनेक भव्य निर्माण कार्य करवाए, महल व भवन बनवाए। दो मस्जिदें सबसे प्राचीन थी। पहली मोहम्मद बिन कासिम द्वारा *बनवाई गई, दूसरी मस्जिद करमाथियानो द्वारा आदित्य के मन्दिर को तुडवाकर बनवाई* गई थी। इनके अलावा शाह युसुफ गारदिजी (सन् 1152 ई), बाहा उल हक्क (सन् 1262 ई), शमश-ए-तबरीजी (सन् 1276 ई) की दरगाहे भी प्रसिद्ध हैं। सादना शहीद का मकबरा अपने समय की वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना है। रुक्न ए आलम का मकबरा ग्यासुद्दीन तुगलक द्वारा सन् 1320-24 ई मे बनवाया गया था, यह भव्य कला का नमूना था। यह फारसी कला का एक ऐसा भव्य नमूना था कि विश्व मे इसके बराबर उस समय *तक अन्य मकबरा नही था।*

सन् 1738-39 ई में नादिर शाह के आक्रमण के कारण मुगलो की सत्ता चरमरा गई थी। उनका मुलतान, सिन्ध और पजाब मे नियन्त्रण समाप्त हो चुका था। सन् 1751 ई के पश्चात् मुलतान, लाहोर और सिन्ध प्रान्त अहमद शाह अब्दाली के अधिकार मे चले गए।

मुलतान, जैसलमेर और पूगल की भोगोलिक स्थिति भी इनके आपसी सम्बन्धो मे सहायक या बाधक रही। मुलतान लगभग 30 0° उत्तर अक्षाश और 71 5° पूर्व देशातर पर स्थित है। बोलन दर्रा, क्वेटा, चमन, *कधार का मार्ग था। बोलन दर्रे से भारत मे प्रवेश करने के बाद मे पूर्वी और दक्षिणी सिन्ध प्रान्त मे प्रवेश पाने के लिए रोहडी के सामने से* सिन्ध नदी को पार करना पडता था। इस नदी को पार करने के लिए यही स्थान सबसे ज्यादा उपयुक्त था। इस स्थान की तकनीकी महत्ता को ध्यान मे रखते हुए वर्तमान सक्खर बैरेज रोहडी के समीप बनाया गया था। केवल यही नही, इस स्थान की तकनीकी उपयुक्तता इससे भी स्पष्ट है कि सिन्ध नदी पर रेल और सडक मार्ग का पहला पुल भी रोहडी के पास मे *बनाया गया था। सिन्ध नदी पर दूसरा पुल हैदराबाद के पास, रोहडी से 200 मील* दक्षिण पूर्व मे है।

रोहडी पर नियन्त्रण होने से सिन्ध नदी के जल मार्ग और जल यातायात पर भी नियन्त्रण रहता था। नदी डाकुओ से नावो और जलपोतो को सुरक्षा प्रदान होती थी।

रोहड़ी पश्चिम से पूर्व की ओर आने वाले व्यापारिक काफिलों के लिए और शत्रुओं की सेनाओं के लिए जैसलमेर का प्रवेश द्वार था। भाटियों ने हर सम्भव प्रयास किए कि रोहड़ी का किला और उसके आस-पास की पहाड़ियाँ उनके अधिकार और नियन्त्रण में रहे। जैसलमेर के भाटियों का कन्धार और गजनी आने-जाने का मार्ग रोहड़ी हो कर ही था। सिन्ध नदी के पश्चिमी किनारे के कशमोर और मिथानकोट के किले भाटियों के पास में होने से इनका जल और थल मार्गों पर अच्छा नियन्त्रण रहता था। उछ का सुदृढ़ किला पजनद नदी के क्षेत्र पर निगरानी रखने के लिए उपयुक्त स्थान था। इस किले के पजनद के पूर्व की ओर होने से इसका सामरिक महत्त्व भी अत्यधिक था। सिन्ध प्रान्त से पंजाब, दिल्ली, मुलतान आदि स्थानों को जाने के लिए पजनद नदी ही एकमात्र जलमार्ग है, जो पंजाब की समस्त नदियों को जोड़ता है। इसी प्रकार उत्तरी पंजाब, दिल्ली, मुलतान से सिन्ध प्रदेश में जल मार्ग द्वारा प्रवेश पाने के लिए पंजाब की सभी नदियों के जल यातायात को पजनद नदी में हो कर सिन्ध नदी में पहुंचना पड़ता है। उछ और कशमोर की उपयोगिता तकनीकी दृष्टि से भी उत्तम है, तभी तो इनके समीप आधुनिक पजनद बैरेज और गुड्डू बैरेज बनाए गए हैं।

मुलतान नगर और किला, चिनाब नदी के पूर्वी किनारे पर बसा हुआ है। जहाँ यह जल मार्ग से जुड़ा हुआ है, वहीं यह गजनी और कन्धार से बोलन दर्रे हो कर थल मार्ग से भी जुड़ा हुआ है। पश्चिम में ईरान, बकत्रिया, खोरासन, गजनी से जितने आक्रमण हुए थे, वह सब बोलन दर्रे से हो कर हुए थे। आक्रमणकारियों का भारत में प्रवेश करने के बाद में पहला बड़ा पड़ाव मुलतान में ही होता था, चाहे यह पड़ाव उन्हें शान्ति से मिलता या बल प्रयोग से। मुलतान एक प्रकार से सिन्ध और पंजाब प्रान्तों का संगम स्थान था। मुलतान के व्यापारी सारे भारत और पश्चिमी प्रदेशों में प्रसिद्ध थे। वह पश्चिमी देशों से माल लाकर उसे मुलतान से लाहौर, अबोहर, भटिन्डा, दिल्ली और उत्तरी भारत के अन्य नगरों और मण्डियों में भेजते थे। कुछ माल देरावर, पूगल, नागौर हो कर मारवाड़ में जाता था और कुछ बीकमपुर, फलोदी के मार्ग से मारवाड़ और गुजरात पहुंचता था। इसी प्रकार भारत से पश्चिम की ओर बाहर जाने वाले माल को भी मुलतानी व्यापारी सम्भालते थे। उनकी ईमानदारी, वाक्पटुता, व्यापार में योग्यता और साहूकारिता जगत प्रसिद्ध थी।

सामरिक दृष्टि से जिस शासक का मुलतान पर अधिकार होता था, वह पंजाब और सिन्ध, दोनों प्रान्तों की नाकेबन्दी करके उनकी गतिविधियों पर सरलता से नियन्त्रण रख सकता था। वर्तमान बहावलपुर नगर के स्थान पर भाटियों का पुराना भूमनवाहन का किला और नगर था। इसके समीप सुई वाहन भी है। भूमनवाहन की सामरिक उपयोगिता का इसी से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि सतलज नदी को पार करने के लिए यही सबसे उपयुक्त स्थान था। यहीं से नदी पार करके भाटी अपने केहरोर और दुनियापुर के क्षेत्रों में आया-जाया करते थे। इस स्थान के उपयुक्त होने के कारण ही वर्तमान बहावलपुर नगर के पास में सतलज नदी पर रेल और सड़क मार्ग का पुल बना हुआ है जिसे आदम वाहन पुल कहते हैं। यह विचार योग्य है कि रोहड़ी के पुल के बाद में, 250 मील उत्तर पश्चिम में सिन्ध, पजनद और सतलज नदियों पर आदम वाहन ही एकमात्र पुल है। सतलज नदी पर दूसरा

पुल 250 मील दूर फिरोजपुर के पास में है। इससे स्पष्ट है कि रोहड़ी, बशमोर, उछ, मूमनवाहन की स्थिति जहां सामरिक दृष्टि से उपयुक्त थी, वहीं यह तकनीकी दृष्टि से भी उत्तम थी।

मुलतान से पूर्वी भारत का समस्त व्यापार और सैनिक आवागमन मूमनवाहन, मरोठ, भटनेर, सिरसा, दिल्ली को जाता था। इसी प्रकार मुलतान से मूमनवाहन, देरावर, बीजनोत, जैसलमेर का मार्ग था, दूसरा मार्ग, बीजनोत से बीकमपुर, फलौदी, पोकरण, मालाणी होकर गुजरात के लिए था। मूमनवाहन से पूगल बीकानेर होकर मारवाड के लिए भी व्यापारिक मार्ग था। इससे यह तथ्य भी स्पष्ट है कि भाटियो ने मूमनवाहन, मरोठ, देरावर, बीजनोत, बरसलपुर, बीकमपुर, भटनेर आदि के सामरिक महत्त्व के किले बनाकर न केवल व्यापारिक महत्त्व के मार्गों की सुरक्षा का ध्यान रखा बल्कि व्यापारियों को सुरक्षा और सुविधा उपलब्ध कराई। इन्होंने जल और थल के सामरिक महत्त्व के मार्गों और स्थानो पर अपना नियन्त्रण और अकुश रखा।

मुलतान पर परोक्ष रूप से अपना प्रभाव रखने के लिए भाटियो ने मूमनवाहन से सतलज नदी को पश्चिम की ओर पार करके, केहरोर और दुनियापुर के किलो पर अधिकार रखा। मुलतान और इन किलो के बीच मे केवल पुरानी व्यास नदी ही थी, यह नदी तहसील मुख्यालय लोधरान के उत्तर मे होती हुई चिनाब नदी में मिलती थी। मूमनवाहन के पास से सतलज नदी की बाढ का पानी नहरो द्वारा पूर्व में देरावर तक सिंचाई के लिए ले आया जाता था। इसी प्रकार पश्चिम मे भी बाढ के पानी से दुनियापुर और केहरोर के समतल उपजाऊ क्षेत्र मे सिंचाई की जाती थी।

उपरोक्त वर्णन से मुलतान का ऐतिहासिक, सामरिक, व्यापारिक और भौगोलिक महत्त्व स्पष्ट उजागर होता है। पूगल के पडोस मे ऐसे स्थान के होने से उसकी कठिनाइया, सुविधाएँ, विवशताएँ और विपदाएँ समक्ष मे आती हैं। एक तरफ धन-धान्य से सम्पन्न, सामरिक दृष्टि से सुदृढ, शक्ति और सत्ता का केन्द्र मुलतान था, दूसरी ओर अभाव, अकाल, रेगिस्तानी विपदाओ और अधूरे साधनों से जूझता पूगल का राज्य था। ऐसी दुविधापूर्ण स्थिति मे सैकडो वर्षों तक शक्तिशाली पडोसी से निभाना, उसके साथ ताल-मेल बैठाना और अपने राज्य को स्वतन्त्र बनाए रखना आसान कार्य नही था। मुलतान आठवी शताब्दी में ही इस्लाम धर्म के प्रभाव मे आ गया था। उसकी हिन्दू सस्कृति मे आमूलचूल परिवर्तन आया था। इस्लाम धर्म और मुस्लिम सस्कृति सभी राजपूत जातियो को पूर्ण रूप से निगल गई थी। पूगल राजवश के अनेक भाटी परिवार मुसलमान बन चुके थे। शनै शनैः पूगल भी मुस्लिम अधिसख्यक राज्य हो गया। यह भाटियो की सूझ-बूझ, कार्य कुशलता, धैर्य और परिस्थितियो से समझौता करने मे निपुणता थी, जिसके कारण उन्होने 600 वर्षों तक पूगल मे राज किया और राव रणकदेव के समय से राव देवीसिंह तक, एक ही परिवार पीढी दर-पीढी गजनी के तख्त को शोभित करता रहा।

अध्याय–चार

भाटियों और जोइयों के सम्बन्ध

जोइया की उत्पत्ति मूलत क्षत्रियों से हुई है। यह यौद्धेय नामक पुरातन जाति के वंशज हैं। पानिनी के ग्रथ अष्टाध्यायी, जिसका लेखन मौर्य साम्राज्य (सन् 322-184 ईसा पूर्व) की स्थापना से पहले किया गया था, मे यौद्धेय जाति का वर्णन है। यह पजाबी अश के थे और सतलज नदी की घाटी मे, नदी के दोनो किनारो के आस-पास बस हुए थे। इससे स्पष्टतया यह पूर्वी पजाब के थे और इनके पूर्व के पडोसी पजाबियो के अलावा राजस्थान, हरियाणा और हिमाचल प्रदेश के लोग थे। सतलज नदी के पूर्व मे घग्घर नदी के किनारे स्थित मरोठ के क्षेत्र को 'जोइया वीहड' नाम से जाना जाता था। यह क्षेत्र पूर्व मे बडोपल (गगानगर), किसनावत पट्टी (अनूपगढ), लूणकरनसर (भडाण), चिम्राग (रावला) आदि क्षेत्रो का था। साथ ही भटनेर और उससे लगने वाले हासी हिसार के क्षेत्र भी 'जोइया वीहड' मे समायोजित थे। सम्राट समुद्रगुप्त और रुद्रमान ने इस जाति को अपने अधीन किया। जोइया जाति स्वतन्त्र प्रकृति वाली जाति थी इसलिए इन्हे अन्यो के अधीन रहना सहन नही होता था। जब इनके जन्म क्षेत्र पर बाहरी जातियो और वशो का दबाव बढने लगा, तब जोइयो ने उनकी अधीनता स्वीकार करके अपनी ही जन्मभूमि मे निम्न श्रेणी के उपेक्षित नागरिक बनकर रहने से, यही उचित समझा कि वह उस भूमि को त्याग कर अन्यत्र चले जायें। इसलिए यह पंजाब प्रान्त के सतलज नदी वाले क्षेत्र को छोडकर दक्षिण पश्चिम दिशा मे आ गए और इन्होने कम जनसख्या वाले सतलज नदी के पूर्वी किनारे (बहावलपुर) के क्षेत्र और उत्तरी राजस्थान को बसाया।

आर सी गुप्ता के 'भारतीय इतिहास' पृष्ठ 26 के अनुसार यौद्धेय राज्य गुप्त साम्राज्य का अंग था। सम्राट समुद्रगुप्त ने एक भयकर अभियान चलाकर यमुना नदी के पश्चिम के समस्त राज्यो को परास्त करके उन्हे उनकी अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। यह अभियान क्रूरता और निर्दयता से चलाया गया था। इसके फलस्वरूप पंजाब, राजस्थान, मालवा आदि प्रदेशो के राजाओ ने गुप्त साम्राज्य की अधीनता स्वीकार की और उन्हे राजस्व का भाग चुकाया। इन पराजित राजाओ मे यौद्धेय भी शामिल थे।

राजा रुद्रमान चशलाना वश के राजा थे, इस वश ने सन् 78 से 390 ई के बीच राजधानी उज्जैन से राज्य किया। इनका विस्तृत क्षेत्र पर राज्य था, इसमे मालवा, कच्छ, सिन्ध, रानवरन आदि प्रदेश थे। जब उत्तरी राजस्थान के यौद्धेय राजाओ ने इनके साम्राज्य की शान्ति भग करने के प्रयास किए तब उन्होने इन्हे परास्त किया और अपने अधीन रहने के लिए बाध्य किया।

यौद्धेय क्षत्रिय कार्तिकेय को अपना इष्ट देव मानते थे। इनके सिक्के और मोहरो के एक तरफ छ मुखी कार्तिकेय की प्रतिमा अंकित रहती थी और दूसरी तरफ शासक या सेनापति का नाम होता था।

प्रारम्भिक शताब्दियो मे पंवार राजपूतो ने अनेक जोइया राज्यो को पराजित करके उनकी भूमि पर अधिकार किया। यह पवारो के उत्थान और जोइयो के पतन का युग था। युग के बदलते हुए भाग्यचक्र को कोई नही रोक सकता।

भाटी गजनी से आकर लाहौर मे बस गए थे, वह वहा ज्यादा दिन नही टिक सके। तीसरी शताब्दी मे उनके शत्रुओ ने लाहौर पर अधिकार कर लिया। पराजित भाटियो ने उत्तरी राजस्थान की शरण ली, जहा की जनसख्या कम थी, जमीनें उपजाऊ नही थी और वर्षा भी कम होती थी। उस समय इस क्षेत्र पर पवारो का अधिकार था। इसमे बसने वाली जोइया जाति पराजित और उपेक्षित थी। अब इनके जैसी ही एक और जाति, भाटी, अपने लाहौर क्षेत्र से पराजित होकर बसने के लिए क्षेत्र, जीवन-निर्वाह के लिए साधन, और सहारा ढूढ रही थी। भाटियो और जोइयो दोनो की गति एक समान थी, क्योकि पवारो ने जोइयो को पराजित किया था इसलिए वह उनसे दुखी थे, भाटी दुखी होकर लाहौर से नये आये थे, इसलिए इन्होने आपस मे सहयोग किया और गठबन्धन कर लिया। जोइयो की सहायता से भाटियो ने सन् 519 मे मूमनवाहन मे और सन् 599 मे मरोठ मे किले बनवाये और पवारो से भूमि जीतकर राज्य स्थापित किया। इस सारे क्षेत्र पर चौथी शताब्दी मे जोइयो का राज्य था, पाचवी शताब्दी मे पवारो ने जोइयो को परास्त करके यहा राज्य स्थापित किया और छठी शताब्दी मे जोइयो और भाटियो ने पंवारो को हराकर यहा भाटी राज्य स्थापित किया। यही से भाटियो और जोइयो का आपस का विश्वास, स्नेह और पारिवारिक सम्बन्ध शुरू हुए जो भविष्य मे कभी टूटे नही। यह सम्बन्ध केवल हिन्दू राजपूत, भाटी और जोइयो, तक ही सीमित नही थे। जब आठवी शताब्दी और उसके बाद के वर्षों मे इस्लाम धर्म भारत म आया और अनेक भाटियो और जोइयो ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया था, तब भी पूर्व के सस्कारो के कारण हिन्दू और मुसलमानो, भाटियो और जोइयो के आपस के अटूट सम्बन्ध पूर्ववत रहे। जोइयो के सक्रिय सहयोग से भाटियो ने केहरोर, चीननोत, तणोत आदि के नये किले स्थापित किए और पूगल, लुद्रवा, बीकमपुर, भटनेर, भटिंडा आदि के पुराने किलो पर अधिकार किया। यह सब किले पवारो के थे या उनसे जीती हुई भूमि पर बनाए गए थे। रावल सिद्ध देवराज ने पवारो से जीती हुई भूमि पर सन् 852 ई म देरावर का किला बनवाया, इस भूमि के स्वामी पवारो के अधीनस्थ थे।

सिहाणकोट और मरोठ के मुखिया, सिम्बरा, विग्रह राज चौहान के मामा थे। विग्रह राज चौहान पृथ्वीराज के पूर्व वशज थे। पृथ्वीराज चौहान का विवाह जोइया राजकुमारी से हुआ था।

उस समय लखबेरा (लखूवाली), लखौर, सिहाणकोट (बडोपल), पीलीबगा, महाजन और आस पास के क्षेत्रो मे जोइयो के राज्य थे। बलबन और खिलजी शासको ने इन छोटे राज्यो को नष्ट करके अपनी सलतनत मे मिला लिया। लेकिन तुगलक वश के कमजोर

शासकों के समय इन्होंने अपने स्वतन्त्र राज्य फिर से स्थापित कर लिए। पवार, जिन्होंने जोइयों की भूमि पर अधिकार किया था, कभी भी शान्ति से शासन नहीं कर सके। जोइया निरन्तर इनका विरोध करते रहे और अवसर आने पर विद्रोह भी करते थे। जोइयों ने मरोठ के किले पर अधिकार कर लिया था लेकिन कराल (पड़िहार) इससे प्रसन्न नहीं थे। पूगल के राव रणकदेव (सन् 1380-1414 ई.) ने करालों की सहायता से मरोठ के जोइयों को परास्त करके यह किला ले लिया।

राव सलखा राठौड़ के पुत्र वीरमदे राठौड़, जो रावल मल्लीनाथ के छोटे भाई थे, को पैतृक भूमि में जागीर नहीं मिली थी इसलिए वह लखवेरा के डाला जोइया की सेवा में अपना भाग्य अजमाने चले गए। वहां उन्होंने उचित अवसर पाकर डाला जोइया के मामा भूवन भाटी अबोहरिया का वध कर दिया। इसकी सूचना मिलते ही डाला जोइया ने वीरमदे राठौड़ का पीछा किया, उन्हें पकड़ा, और दिनांक 17 अक्टूबर, 1383 को मार डाला।

वीरमदे राठौड़ नागौर के राव चूंडा के पिता, राव जोधा के पड़दादा, और राव बीका के सड़दादा थे। सन् 1411 ई. में उचित अवसर पाकर वीरमदे राठौड़ के पुत्र गोगादे राठौड़ ने डाला जोइया को मार डाला और अपने पिता वीरमदे की मृत्यु का बदला ले लिया। जिस समय गोगादे राठौड़ ने डाला जोइया को लखवेरा के समीप मारा था, उस समय (सन् 1411 ई.) उनके पुत्र धीरदे जोइया अन्य जोइया सरदारों के साथ बारात लेकर पूगल के राव रणकदेव की पुत्री से विवाह करने पूगल गए हुए थे। ज्योंही धीरदे ने अपने पिता की मृत्यु का समाचार पूगल में सुना वह वहीं से भाटियों की सहायता लेकर गोगादे से बदला लेने दौड़ पड़े। उन्होंने भागते हुए गोगादे का नाल गांव के पास रास्ता रोका और उन्हें मारकर पिता की मृत्यु का बदला लिया।

सन् 1413 ई. में जब पूगल के राजकुमार शार्दूल कोड़मदे से विवाह करने मोहिलों के यहां छापर गये तब बारात में उनके बहनोई धीरदे जोइया भी अन्य जोइया सरदारों के साथ गये थे। यह भाटियों की ओर से कुमार अरड़कमल से कोड़मदेसर के युद्ध में लड़े। सन् 1413 ई. के इस युद्ध में राजकुमार शार्दूल मारे गए थे और उनकी युवरानी कोड़मदे, वहीं सती हुई।

जब सन् 1414 ई. में पूगल के राव रणकदेव ने माहेराज सांखला को राजकुमार शार्दूल को मारने के षड्यन्त्र में शामिल होने के अपराध में मुंडाला गांव के पास मारा, तब भी जोइयों ने इनका साथ दिया।

जोइया ने पूगल के राव केलण (सन् 1414-1430 ई.) को सहायता करके, उन्हें पश्चिम के प्रदेशों में विजय दिलाई और केहरोर, बीजनोत और भटनेर के किलों पर उनका अधिकार करवाया। जोइयों के अलावा इन अभियानों में जैतुंग और पाहू भाटियों, पड़िहारों, दहियों आदि राजपूतों ने राव केलण का साथ दिया। जब सन् 1418 ई. में राव केलण ने नागौर पर चढ़ाई करके वहां के राव चूंडा राठौड़ का वध किया उस समय भाटियों

पूगल के राव चाचगदेव (सन् 1430 48 ई) को सतलज नदी के पश्चिम में स्थित दुनियापुर के किले की विजय मे जोइयों ने सहयोग दिया और इसके पश्चात् मुलतान के शासक खाना लोदी के साथ दुनियापुर के युद्ध मे राव चाचगदेव के साथ अनेक जोइया योद्धा मारे गए। इसी प्रकार जोइयो ने राव बरसल (सन् 1448-1464 ई) का दुनियापुर के किले पर पुन अधिकार करने मे साथ दिया।

राव शेखा (सन् 1464-1500 ई) को लगा और बलोचों से सीमा की सुरक्षा करने मे जोइयो ने सहायता दी। इसके बाद जब सन् 1469 ई मे मुलतान के शासक हुसैन खा लगा ने राव शेखा को बन्दी बना लिया था तब भी जोइयो ने उन्हे छुडाने के प्रयत्नो मे सहयोग दिया और राव शेखा के मुलतान से छूटने के बाद उन्हे सुरक्षित पूगल पहुचाया।

शेरसिंह जोइया अपने राज्य के 1100 गावो पर, राजधानी बडोपल से राज्य करते थे। बीकानेर के राव बीका (सन् 1485-1504 ई) ने गोदारा जाटो की सहायता से बडोपल पर आक्रमण किया। जोइयो ने राव बीका और गोदारो का डटकर विरोध किया और कई दिनो तक युद्ध चलता रहा। आखिर राव बीका ने उनके साथ विश्वासघात किया और शेरसिंह जोइया के बडे भाई को धोखा देकर मार दिया। इस प्रकार जोइयो का बडोपल, बीकानेर के अधिकार मे आया। (दयालदास, बीकानेर का इतिहास, भाग दो, पृष्ठ 142)

बीकानेर के राव लूणकरण ने अपनी आक्रामक और विस्तारवादी नीतियो के कारण शेखावत, तोमर, भाटी, जोइया, बीदावत आदि राजपूतो का सहयोग और सहानुभूति खो दी थी। इसलिए पूगल के राव हरा, तिहुनपाल जोइया और अन्य राजपूतों ने नारनौल के नवाब शेख अभिमुरा के विरुद्ध राव लूणकरण का साथ नही दिया और युद्ध के बीच मे अपनी सेनाओ को हटा लिया। इसके फलस्वरूप, सन् 1526 ई मे, ढोसी के पास नवाब शेख अभिमुरा द्वारा राव लूणकरण मारे गए। (हाउस आफ बीकानेर, पृष्ठ–30)

तिहुनपाल जोइया को दण्ड देने की नीयत से राव जैतसी ने सिहाणकोट पर आक्रमण किया। तिहुनपाल जोइया लाहौर चले गए। राव जैतसी, राव हरा से भी अप्रसन्न हुए, लेकिन प्रत्यक्ष रूप से शान्त रहे।

शेरशाह सूरी के शासन काल मे उनके मुलतान के सूबेदार के पूगल पर अधिकार करने के प्रयास राव बरसिंग (सन् 1535-1553 ई) ने जोइयो की सहायता से विफल किए और इन्ही की सहायता मे लगो को पूगल की सीमा से बाहर रखा।

राव जैसा (सन् 1553 1587 ई) ने जोइयो की सहायता से अपने जीवनकाल मे बाईस युद्ध लडे, जिनमे से अधिकाश पश्चिमी सीमा पर लगा और बलोचो के विरुद्ध थे। राव आसकरण (सन् 1600 1625 ई) और राव जगदेव (सन् 1625 1650 ई) को जोइयो का पूर्ण सहयोग प्राप्त था, जिसके कारण यह दोनों बीकानेर के राठोडो का सामना कर सके। इन्ही के सहयोग से राव आसकरण ने बीकानेर के राजा दलपतसिंह को चुडेहर (अनूपगढ़) का किला नही बनवाने दिया।

सन् 1614 ई मे राजा दलपतसिंह की मृत्यु के तुरन्त बाद मे जोइयो की सहायता से हयात खा भाटी ने भटनेर के किले पर अधिकार कर लिया। इस युद्ध मे जोइयो ने महाजन

के ठाकुर उदयमानसिंह के 18 पुत्र मनछोटा मे और दा पुत्र नोहर मे मारे। इस समय राजा सूरसिंह बीकानेर के राजा थे।

सन् 1665 ई मे पूगल के राव सुदरसेन ने जोइयो के सहयाग से बीकानेर के राजा करणसिंह का सामना किया। राव गणेशदास (सन् 1665-1686 ई) ने जोइयों की सहायता से राठौडो को चुडेहर के किले से निकाला। इसी समय खारबारा मे भाटियों और जोइयो ने मिलकर राठौडो को वहां से मार भगाया। इस संघर्ष मे फरीद खां जोइया ने महाजन के ठाकुर अजबसिंह को मार डाला। ठाकुर अजबसिंह के अवयस्क पुत्र मोखमसिंह खारबारे मे पकडे गए थे, लेकिन जोइयो के कहने पर भाटियो ने बालक को छोड दिया। लेकिन यही बालक मोखमसिंह जब बडे हुए तो उन्होने बदले की भावना से फरीद खा जोइये की कबर पर तलवार से कई वार वार किए।

हिसार के मुखिया जोइया ने सिरसा पर आक्रमण करके वहा के किलेदार मूकरका के ठाकुर को मार डाला और सिरसा पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार सिरसा बीकानेर राज्य के अधिकार से हमेशा के लिए निकल गया। सन् 1736 ई मे महाराजा जोरावरसिंह और महाजन के ठाकुर भीमसिंह ने जोइयो मे सिरसा छीनने के प्रयास किए लेकिन विफल रहे। इसी बीच तलवाडा के माला जोइया ने भाटियो से भटनेर का किला छीन लिया। सन् 1740 ई मे महाराजा जोरावरसिंह ने महाजन के ठाकुर भीमसिंह को भटनेर भेजा, उन्होने धोखा देकर माला जोइया और उसके 70 साथियो को जहर देकर मार डाला। किले पर ठाकुर भीमसिंह का अधिकार हो गया। कुछ समय पश्चात् भाटियो ने ठाकुर भीमसिंह को किले से निकाल कर उस पर अधिकार कर लिया और इनकी जोइयो से मित्रता हो गई।

सन् 1745 ई मे महाराजा जोरावरसिंह ने जोइयो और भाटियो से हासी और हिसार के परगने जीत लिए। दिल्ली के बादशाह अहमद शाह ने सन् 1752 ई मे यह परगने बीकानेर राज्य को बख्शे। बीकानेर ने बख्तावरसिंह को इनका प्रशासन सम्भालने के लिए भेजा। वस्तुत सन् 1745 ई मे बीकानेर ने हासी और हिसार पर अधिकार कर लिया था लेकिन कुछ समय पश्चात् जोइयो ने उनसे हिसार वापिस छीन लिया। इसलिए महाराजा गजसिंह ने दिल्ली दरबार में पुकार की, जिसके फलस्वरूप सन् 1752 ई मे हासी और हिसार का फरमान उन्हें दिया गया। इनके साथ साथ बादशाह ने सिरसा और फतेहाबाद के परगने अमीर मोहम्मद जोइया के पुत्र कमरुद्दीन जोइया को बख्शे। बीकानेर ने जेतरूप मेहता को यह दोनो परगने जोइया को सम्भलाने भेजा ताकि जोइया राजी खुशी हिसार उन्हे सौंप दे। दिल्ली के शासक बीकानेर और जोइयो के साथ बराबरी का बर्ताव रखना चाहते थे ताकि दोनो मे से कोई नाराज न हो, इसलिए जहा हासी हिसार के दो परगने बीकानेर को दिए, वहां सिरसा फतेहाबाद के दो परगने जोइयो को भी दिए। यह इसलिए किया कि जोइया यह न समझें कि बीकानेर के साथ पक्षपात करके कोई अनुचित लाभ दिया गया हो। दिल्ली ने दोनो की ताकत और स्वामिभक्ति को बराबर तोला।

सन् 1763 ई म जोइया ने भाटियो और दाऊद पुत्रो की सहायता से चूडेहर (अनूपगढ) के किले पर अधिकार करके साडवा के धीरसिंह और मालेरी के बहादुरसिंह को मार डाला।

महाराजा गजसिंह के समय मे भटनेर के शासक हुसैन मोहम्मद भाटी और अमीर मोहम्मद जोइया के आपसी सम्बन्ध बिगडने से स्थिति गम्भीर हो गई। भाटी और जोइयो की शक्ति के विभाजन का लाभ उठाकर महाराजा ने बख्तावर सिंह के नेतृत्व मे नोहर सेना भेजी और स्वय भी नोहर गए। उन्होने सिरसा और फतेहाबाद के शासक अमीर मोहम्मद जोइया को ठिकाने लगाया और हुसैन मोहम्मद भाटी को नोहर बुलाकर दण्डित किया। बीकानेर ने यह नही जताया कि आखिर भाटियो और जोइयो का आपसी झगडा किस बात पर था और जब दोनो शासक बीकानेर के अधीन नही थे तब बीकानेर को उनके मतभेद दूर करने मे रुचि क्यो थी? ऐसा लगता है कि बीकानेर के शासक हासी हिसार मे अपनी स्थिति सुदृढ बनाये रखने के लिए षड्यन्त्र रच कर भाटियों और जोइयो के आपसी मतभेद उभारते थे और द्वन्द्व सुलझाने के बहाने उनके शासन मे हस्तक्षेप करते थे और पेशकश, नजराना या सेना के खर्चे के रूप मे उनसे भारी रकम ऐंठते थे। वस्तुत भाटियो और जोइयों के कोई झगडे या मतभेद नही थे, मामूली घटनाओ को उछाल कर बीकानेर अपनी उत्तरी सीमाओ के पडोसियो पर दबाव रखना चाहता था। यह स्वार्थी नीति थी।

सन् 1799 ई मे बीकानेर के भटनेर के शासक जाबती खा के विरुद्ध असफल अभियान के पश्चात्, जाबती खा ने 7000 सैनिको की सेना बीकानेर पर आक्रमण करने के लिए भेजी। इस सेना न सूरतगढ पर अधिकार कर लिया लेकिन आगे उसे सफलता नही मिली। इस आक्रमण मे मगलूना और बोलारा के जोइया भी भाटियो के साथ थे। सन् 1801 ई म बीकानेर ने जबाबी आक्रमण करके फतेहगढ पर अधिकार किया, लेकिन भाटियो और जोइयो ने भटनेर को क्षति नही पहुचाने दी।

सन् 1799 ई और 1801 ई के आक्रमणो मे असफलता से बीकानेर निराश था, इसलिए उन्होने सन् 1804 ई मे भटनेर पर सज धज कर जोरदार धावा किया। भाटियो और जोइयो ने सयुक्त रूप से इस आक्रमण का सामना किया अनेक योद्धा खेत रहे। आखिर छ माह के घेरे के पश्चात् सन् 1805 ई म बीकानेर की विजय हुई। भटनेर पहली और आखिरी बार स्थायी रूप से बीकानेर के अधिकार मे चला गया और इसका बीकानेर राज्य मे विलय हो गया। बीकानेर ने भटनेर का नाम बदल कर 'हनुमानगढ' रख लिया।

बीकानेर राज्य की भटनेर विजय से तृप्ति कहा होने वाली थी। उन्होने सन् 1822 23 और 1837 ई म ब्रिटिश शासन के सामने पजाब के टीबी परगने के भाटियो और जोइयो के 41 गाव उन्हे सुपुर्द करने के दावे पेश किये। जाच के बाद दोनो बार दावे झूठे पाये गये। आखिर सन् 1857 ई मे बीकानेर राज्य द्वारा ब्रिटिश शासन को दी गई विशिष्ट सेवाओ के लिए, सन् 1861 ई मे पुरस्कार स्वरूप टीबी परगने के भाटियो और जोइयो के 41 गाव बीकानेर को दिए गए।

भटनेर के सन्दर्भ मे जहां भी भाटियो या जोइयो का वर्णन आया है, वह हिन्दू राजपूत मुसलमान थे।

इसमे कोई सन्देह नही है कि जोइया एक अत्यन्त प्राचीन क्षत्रिय जाति है, जिसके स्वय के राजवश, राज्य और शासक थे। इन्होने शताब्दियो तक सत्ता और शासन का भोग किया। चौथी शताब्दी मे इनसे अधिक सशक्त पवार जाति ने इनका स्थान ले लिया। इनके

दो शताब्दी उपरात भाटियो ने पवारो का स्थान लेना आरम्भ कर दिया। भाटियो ने पंवारो के लगभग उन्ही स्थानो पर अधिकार किया जिन स्थानो पर पहले पवारो ने जोइयो से अधिकार किया था। लेकिन जोइयो और भाटियो मे आपसी शत्रुता नही पनपी। असली शत्रुता जोइयो और पवारो मे थी या बाद मे पवारो और भाटियो मे थी। इस त्रिकोण सघर्ष ने भाटियो और जोइयो की मित्रता को जन्म दिया, जो अगले बारह सौ तेरह सौ वर्षों तक अडिग रही। जोइये स्वय इतने शक्तिशाली नही थे कि वह भाटियो का स्थान लेते, इसलिए भाटियो के साथ रहने से ही वह आशिक रूप से सत्ता भोग सकते थे। लेकिन जोइये इतने कमजोर भी नही थे कि भाटियो का काम उनके बिना चल सके। इसलिए यह गठबन्धन दोनो जातियो के स्वार्थों एव शक्तियो का आपसी सतुलन था। यह सुन्दर सगम एक हजार वर्षों से ज्यादा समय तक चला।

पन्द्रहवीं सोलहवी शताब्दी मे जब एक नई राठौड शक्ति का भारत के पश्चिमी भाग मे उदय हुआ तब फिर वही त्रिकोण सघर्ष उपजा। पवार पराजित हो चुके थे, उनकी शक्ति बहुत पहले लोप हो गई थी। अब सघर्ष भाटियो, जोइयो और राठौडो के बीच आरम्भ हुआ। भाटी इस बात को जान गए कि अगर राठौडो ने जोइयो को अपने अधीन कर लिया तो अगली बारी उनकी होगी, या जोइये यह जान गए कि अगर भाटी पराजित हो गए तो उनके लिए राठौडो के यहा ठौर नही थी। राठौड दोनो को अपने अधीन कर लेंगे। इसलिए राव रणकदेव (सन् 1380-1414 ई) के समय से जोइयो और राठौडो का या भाटियो और राठौडो का सघर्ष सन् 1861 ई तक चलता रहा। राठौड जितना भाटियो और जोइयो को तोडने के प्रयास करते, वह उतने ही अधिक आपस म जुडते गए। यह सगठन इनके हिन्दू रहते हुए भी चलता रहा और बाद मे इनके इस्लाम धर्म स्वीकार करने पर भी चलता रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि जहा बीकानेर की आर्थिक क्षति हुई, वहा बीकानेर राज्य की सीमाओ की उलटफेर के कारण भी क्षति हुई।

अन्तत नुकसान भाटियों और जोइयो का ही हुआ। उन्हे बहावलपुर और बीकानेर की क्षेत्रीय अधीनता स्वीकार करनी पडी। इतिहास मे ऐसे उदाहरण शायद नही मिलेंगे जहा दो जातियो का इतना घनिष्ठ और स्नेहपूर्ण सम्बन्ध, हिन्दू और मुसलमानो का, सैकडो वर्षों तक रहा हो।

अध्याय–पांच

भाटियों और लंगाओं, बलोचों का संघर्ष

भाटियो का इतिहास प्रारम्भिक काल मे ही बलोच और लगा जातियो से जुड़ा हुआ है। कभी इन जातियो ने भाटियो का स्थान लिया और कभी भाटी इन पर हावी हो गए। भाटियो की लगाओ और बलोचो से स्थाई शत्रुता रही, इनमे आपस मे मित्रता कभी नही रही। प्रश्न जीवन के लिए सघर्ष का सर्वोपरि रहा, सत्ता का रहा, एक दूसरे के जीवन निर्वाह के साधनो को छीनने का रहा।

लगा और बलोच समुदायो के नाम हैं, किसी जाति या धर्म विशेष का नही। यह दोनो समुदाय पहले हिन्दू थे, बाद मे मुसलमान बन गए। लगा मुख्यतया पजाब प्रान्त के रहने वाले पवार और चालूक राजपूत थे। इनका पजाब मे लोकोत नामक स्थान सबसे पुराना निवास स्थान था। इन्होने उत्तरी पजाब से दक्षिण मे मुलतान क्षेत्र के आसपास के प्रदेश मे विस्तार किया। यह थार रेगिस्तान से पश्चिम की ओर रहे, कभी रेगिस्तान मे स्थाई तौर से नही बसे। लगाओ की तरह बलोच भी मुलतान प्रान्त एव सिन्ध नदी की निचली घाटी मे आबाद थे। मुलतान क्षेत्र मे इन दोनो जातियो का मिश्रण हुआ, यह क्षेत्र पजाब और सिन्ध प्रदेशो का सगम था। लगाओ की भाति बलोच भी सोलकी, मुट्टे, खीची आदि राजपूत जातियों का ही समूह था। इन दोनो जातियो का पजाब और सिन्ध प्रान्तो की उपजाऊ भूमि पर अधिकार था, यह अपने क्षेत्र के आसपास किसी अन्य जाति या राज्य को पनपने नही देते थे। अगर इनके क्षेत्र पर किसी ने अधिकार करने की कभी चेष्टा की भी तो इन्होने उसके साथ बडा हिंसक सघर्ष किया।

भाटियों और लगाओ का आपसी सघर्ष दूसरी या तीसरी शताब्दी से आरम्भ हुआ। दोनो ही राजपूत जातिया थी। भाटी उत्तर पश्चिम से गजनी की ओर से पराजित होकर पूर्व की ओर लगाओ के प्रदेश में आए थे। भाटियो और लगाओ का सघर्ष लाहौर, अबोहर, भटिंडा, मटनेर, आदि स्थानों पर भाटियो द्वारा नये राज्य स्थापित करने के प्रयास करने से आरम्भ हुआ। लगा अपने प्रदेश मे भाटियो की सत्ता के पाव नही जमने देना चाहते थे। भाटी जायें तो कहा जायें, वह गजनी वापिस जाने मे समर्थ थे नही, इसलिए पजाब मे ही लगा प्रधान क्षेत्र मे उन्हे विवश हो कर जमना पडा। जमने के लिए उन्हे युद्ध करने पड़े, बलिदान देना पडा।

लगाओ ने भाटियो को कभी चैन नही लेने दिया। भाटी घग्घर नदी की घाटी मे पूर्व से पश्चिम की ओर धीरे धीरे फैले और सिन्ध नदी की घाटी मे पूर्वी भाग मे फैलते गए। लगे भी इनके समानान्तर सिन्ध घाटी के पश्चिमी क्षेत्र मे बढते गये ताकि भाटी कहीं सतलज नदी को लाघ कर पश्चिमी प्रदेशो पर अधिकार न करलें। जब भाटी तणोत, लुद्रवा

और जैसलमेर मे प्रवेश कर गए तब लंगाओ और बलोचो ने सम्मिलित प्रयास करके इन्हे पजनद और सिन्ध प्रदेशो मे प्रवेश करने से रोका। जब पूगल मे भाटियो की सत्ता का पन्द्रहवी शताब्दी मे उदय हुआ तब लगाओ ने, जो अब तक मुसलमान हो गए थे, मुलतान क्षेत्र से पूगल पर दबाव बनाये रखा और आक्रामक रवैया रखा ताकि भाटी मुलतान के लिए खतरा न बन जायें। साथ ही इन्होने बलोचो से मिल कर जैसलमेर पर भी आक्रामक दबाव रखा।

लगाओ को अपने और भाटियो के इतिहास से यह ज्ञान था कि भाटियो ने रेगिस्तान को सुरक्षा को अपनी निर्बलता के कारण चुना था, अवसर पडने पर वह पश्चिम की ओर उनके क्षेत्र मे घुसने से नही चूकेंगे। पूगल के भाटियो ने सतलज और पंजनद नदियो को बाधा को तोडकर पश्चिम मे अधिकार करने के बार-बार प्रयास किए। लगाओ और बलोचो ने इन प्रयासो को विफल करने मे कोई कसर बाकी नही रखी। यह इन दानो जातियो के सघर्ष का विश्लेषण है, भाटी पश्चिम की ओर पानी वाले क्षेत्र मे, जहा साधन थे, धन धान्य था, वैभव था, उपजाऊ भूमिया थी, समृद्धि थी, जाने के अथक प्रयास करते और लगा और बलोच, जो इन सुविधाओ को भोग रहे थे, भाटियो को इसमे भागीदार बनने का अवसर नही देना चाहते थे। यही इनका आपसी अनन्त सघर्ष रहा।

लगा और बलोच भाटियो के रेगिस्तानी ठिकानो पर आक्रमण इसलिए नही करते थे कि उन्हे इनके क्षेत्र मे विस्तार करने की लालसा थी या लूट पाट मे धन मिलने की आशा थी, बल्कि उनका उद्देश्य केवल भाटियो की उभरती हुई शक्ति को कुचल देने का और उन्हे वही दबा देने का रहता था। अगर वह इस नीति मे कही असफल रहते तो वह अपनी बेटियां तक भाटियो को ब्याहने का विकल्प काम मे लेने से नही चूकते थे। भाटी भी इन लोगो पर दबाव डालने से नही हिचकिचाते थे। क्योकि लगाओ और बलोचो के क्षेत्र समृद्ध थे, इसलिए हानि हमेशा उनकी ही होती थी। भाटी घाटे मे नही रहते थे। लंगाओ और बलोचो को सिन्ध व मुलतान के शासको का प्रश्रय प्राप्त था, वह अनेक आक्रमणो मे उनका सहयोग और शह देते थे। भाटी भी घोडा घडी, चालाकी, झांसा, दावा, व्यवहारिकता, साहस, धैर्य में इनसे कभी कम नही रहे। आखिर देरावर मे दाऊद पुत्रो ने भाटियो की कमर तोड दी, इसमे लगाओ का उनके साथ सक्रिय योगदान रहा। उधर पूर्व मे राठौडो ने सांखलों, जो पवार लगाओ की एक शाखा थी, की सहायता से भाटियो के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। जैसलमेर राज्य पर भी दाऊद पुत्रा ने लगाओ की सहायता से अधिकार करने की योजना बना रखी थी और उसके काफी बडे भू-भाग पर अधिकार कर भी लिया था। यह तो सन् 1818 ई की ब्रिटिश शासन के साथ जैसलमेर राज्य की सन्धि थी, जिसने जैसलमेर को बचा लिया अन्यथा कोई बडी बात नही थी कि जैसलमेर राज्य का विलय बहावलपुर राज्य मे हो जाता। यह इस सन्धि का ही परिणाम था कि बहावलपुर राज्य को जैसलमेर राज्य के दबाये हुए क्षेत्र उन्हे वापिस लौटाने पडे।

इस प्रकार भाटियो और लगाओं, बलोचो का लाहौर मे सन् 279 ई मे प्रारम्भ हुआ सघर्ष 1540 वर्षो बाद मे सन् 1818 ई मे रुका।

मुस्लिम इतिहासकारो के अनुसार (देखें ब्रिग्स, 1414-21 फरिश्ता, भाग चार, पृष्ठ 379) जब सैयद खिजर खां (सन् 1414-21) दिल्ली के शासक थे, उन्होंने शेख

युसुफ को मुलतान का सूबेदार बना कर भेजा। उन्होंने अपने सात्विक जीवन और धार्मिक प्रवृत्ति के कारण वहां की प्रजा की श्रद्धा और स्नेह अर्जित किया। इनमे लगा जाति के मुखिया बलौचिस्तान मे स्थित सिवि के प्रमुख राय सेहरा भी थे। वह शेख युसुफ का अभिवादन करने मुलतान आए, उन्हे अपनी सेवाएँ अर्पित की और अपनी पुत्री का विवाह उनके साथ करने का प्रस्ताव रखा। उनका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। मुलतान और सिवि के आपसी सम्बन्ध घनिष्ठ और मधुर बनते गए। आखिर राय सेहरा ने अपना असली अभिप्राय प्रकट किया, उन्होने शेख युसुफ को बन्दी बनाकर दिल्ली भेज दिया और स्वय को मुलतान का कुतुबुद्दीन के नाम से शासक घोषित कर दिया। फरिश्ता ने राय सेहरा और उनके कबीले को लन्घा अफगान और अबू कहा है। फजल के अनुसार सिवि के रहने वाले नुनवी (लोमडी) कहलाते थे। उन्होने इस्लाम धर्म ग्रहण करने के पश्चात् अपने आप को बलोच कहना शुरू कर दिया था। भाटी इतिहासकार भी लंगाओ को एक स्थान पर पठान या बलौच कह देते है, दूसरे स्थान पर राजपूत कह देते है। यह बात समझ मे आने योग्य भी है। यह इसका सूचक है कि आरम्भिक समय मे या राय सेहरा के समय मे पठान, बलौच और अफगान सारे के सारे मुसलमान नही थे। सेहरा के पहले 'राय' लगाना भी इस बात का प्रमाण है कि यह हिन्दू थे, मुसलमान प्रमुख 'राय' कभी नही कहलाते थे। इस प्रकार लगा और बलोच पहले या मध्यकाल तक हिन्दू राजपूत थे, बाद मे मुसलमान बने।

भाटियो का लगाओ और बलोचो से संघर्ष सन् 279 ई मे लाहौर से आरम्भ हुआ था। लंगा वराहो ने भाटीवश के आदिपुरुष, राजा भाटी को पडोस के विदेशी राजाओ से सहयोग लेकर वहा चैन से राज्य नही करन दिया। अन्तत. उनके पुत्र राजा भूपत को लाहौर छोडना पडा। उन्होने लाहौर के विकल्प मे सन् 295 ई मे भटनेर का किला बनवाया। भाटियो ने सन् 425 ई मे पुन लाहौर पर अधिकार कर लिया। सन् 474 ई मे फिर वही हुआ जो पहले राजा भाटी और भूपत के साथ हुआ था। राजा लोमनराव लाहौर मे परास्त हो गए, उनके पुत्र रेणसी कठिनाई से वहा से राजचिह्न लेकर निकले। इनके पुत्र राजा भोजसी ने लाहौर जीतने के अनेक प्रयास किए किन्तु स्थानीय लगाओ ने ऐसा करने से उन्हे रोका। राव मगनराव ने सन् 519 ई मे मूमनवाहन का किला बनवाया। यहा से भी मुलतान और खोरासन की सहायता से लंगाओ ने उन्हे मार भगाया। अगले 80 वर्षों, सन् 599 ई, तक भाटी कही अपने पाव जमाने और राज्य स्थापित करने मे लगे रहे। आखिर लगाओ को दबाकर इन्होने मरोठ का किला बनवाया। यहा लगा कोई विदेशी नही थे, इस्लाम धर्म अभी तक शुरू भी नही हुआ था। यह स्थानीय पवार, मोकरी, जोइया, भुट्टा, खीची, पडिहार, हिन्दू राजपूत थे।

कुमार केहर ने सतलज नदी पार के वराह लगाओ को परास्त करके, उनके क्षेत्र मे सन् 731 ई. केहरोर का किला, मुलतान के समीप बनवाया। कुमार विजयराव ने सन् 816 ई मे बीजनोत का किला बनवाया और अनेक युद्धो मे वराह लगाओ को परास्त किया। जब वह अपने पुत्र देवराज का विवाह वराहो की पुत्री मे करने भटिंडा गये, वहा वराहो ने षड्यन्त्र करके इन्हें मार डाला, फिर पवारो (लगाओ) ने सन् 841 ई मे तणोत पर आक्रमण किया। राव तणुजी ने सेना की कमान सम्भाली। लगा बलशाली थे, राव तणुजी ने

जौहर और साका करने का निर्णय लिया। यह भाटियो का लगाओ के विरुद्ध पहला साका था। 860 वर्ष बाद भाटिया का चौथा साका बलोचो के विरुद्ध रोहड़ी किले म हुआ।

रावल सिद्ध देवराज भाटी जाधो के राजा जूजूराव की पुत्री के पुत्र थे, यह भुट्टा राजपूत थे, जो सोलकियों की शाखा है। इन्हे लगा या बलोच नाम से सम्बोधित किया जाता था। रावल देवराज भाटी ने वराह पवारो को अनेक युद्धो मे पराजित किया। सन् 853 ई मे जसमान पवार से लुद्रवा छीना, सन् 857 ई मे पवारो से पूगल छीनी, पवारो (वराहो) के मारवाड के नौ किले विजय किए। सन् 965 ई मे वराह पवारो (लगाओ) और बलोचों ने इन्हें मार डाला।

रावल सिद्ध देवराज के पुत्र मुन्धजी ने सिन्ध प्रदेश और सिन्ध नदी के पार के क्षेत्रो मे उनके ही प्रदेश में जाकर लंगाओं और बलोचो को परास्त करके दंडित किया और अपने नाम से वहा मुन्धकोट का किला बनवाया। इन्होने अपने पिता की मौत का इनसे बदला लिया। इनके बाद रावल वाछूजी ने भी लगाओ और बलोचो को क्षमा नही किया। रावल सिद्ध देवराज की मृत्यु का बदला लेने के लिए इन्होने क्रूरता से इनका नर सहार किया। रावल दुसाजो ने सन् 1043 ई मे नगर थट्टा के गाजी खा बलोच को मारा। पाहू भाटी के पुत्रों ने सन् 1046 ई मे जोइयो से पूगल विजय की। बाद मे मुलतान के शासको की शह से, सुलतान बलबन के समय सन् 1270 ई म, लगा और बलोचो ने पाहू भाटी के वशजो से पूगल जीती।

सन् 1152 ई मे लगा और बलोचो ने शाहबुद्दीन गौरी को उकसा कर लुद्रवा पर आक्रमण करवाया, उन्होंने ही मुलतान से देरावर होकर बीकमपुर और लुद्रवा का मार्ग उन्हे बताया था। लगाओ और बलौचों ने जैसलमेर के खुडी क्षेत्र को लूटकर उजाडा, लेकिन रावल जैसल ने उन्हें वहा से मार भगाया। रावल जैसल को सन् 1168 ई मे अरावली की पहाडियो मे खिजर खा बलोच ने मारा। इसी खिजर खा बलोच ने रावल शालिवाहन को सन् 1190 ई मे देरावर में मारा। लेकिन खिजर खा बलोच के दिन पूरे हो चुके थे। रावल केलण ने इसे देरावर मे सन् 1205 ई मे जब मारा तब किले में प्रवेश करने के उसके प्रयास सफल होने वाले थे। रावल चाचगदेव ने पूरे भाटी क्षेत्र से लगाओ और बलोचो को निकाल दिया ताकि प्रजा इनके रोज-रोज के आक्रमणो, डाको और लूट खसोट से मुक्त हो सके।

सन् 1380 ई म राव रणकदेव (सन् 1380-1414 ई) ने पूगल और बीकमपुर से लगाओं और बलोचो को निकाला और पूगल मे भाटियों का राज्य स्थापित किया। लग भग एक सौ वर्षों तक (सन् 1280-1380 ई) इन लोगो ने पूगल और बीकमपुर क्षेत्रो म राज्य किया या अपने आश्रितो को करने दिया। राव रणकदेव ने इन्हे परास्त करके मूमन वाहन का किला लिया।

राव केलण (सन् 1414 1430 ई) ने लगाओ और बलोचो पर कहर ढा दिया। उन्होंने सतलज नदी के पूर्व के समूचे प्रदेश पर अधिकार करके, बीकमपुर, मूमनवाहन, भटनेर, बीजनोत, देरावर, मरोठ, माथेलाव, कशमोर के किले अपने अधिकार मे लिए। सतलज नदी के पार केहरोर का किला लिया और डेरा गाजीखा और डेरा इसमाइलखा में

भाटियों की विजय का डंका बजाया। आखिर लगाओं ने राव केलण को जाम इस्माइल की बेटी विवाह मे देकर सन्धि की। इसी प्रकार राव चाचगदेव (सन् 1430 1448 ई) ने राव केलण का विजय अभियान जारी रखा। सतलज नदी पार करके उन्होंने दुनियापुर का किला बनवाया, और विजय का झंडा ब्यास नदी के पेटे मे मुलतान की देहरी पर गाड़ दिया। लगाओं ने अपनी एक बेटी का इनसे विवाह करके सन्धि की।

दिल्ली मे सैयद वंश का स्थान लोदी वंश ने ले लिया था। दिल्ली की स्थिति को कमजोर पाकर मुलतान पर लगाओं ने अधिकार कर लिया। लोदियों ने कई आक्रमण किए लेकिन वह मुलतान को लगाओं से छुडाने मे सफल नही हुए। मुलतान के शासक हुसैन खा लंगा ने सन् 1469 ई मे पूगल के राव शेखा को बन्दी बना लिया था। कुछ समय पश्चात् करणीमाता और मुलतान के पीरो के बीच बचाव से उन्हे छोड दिया गया। बाबर (सन् 1526-30 ई) ने लगाओं और बलोचो को पराजित करके मुलतान को अपने शासन के अधीन किया और अशकरी को वहा का सूबेदार नियुक्त किया।

शेरशाह सूरी (सन् 1540 45 ई) द्वारा नियुक्त मुलतान के सूबेदार का रवैया लगाओं और बलोचो के प्रति मित्रतापूर्ण और नर्म था, क्योंकि इन लोगो ने मुलतान से मुगलो को निकालने मे अफगानो की सहायता की थी। इसका लाभ उठाकर उन्होंने पूगल क्षेत्र पर आक्रमण किया और अपने क्षेत्र की रक्षा करते हुए, सन् 1543 ई मे, रावत खेमाल अपने पुत्र करण के साथ मारे गए। पूगल के राव बरसिंग ने मौके पर पहुचकर स्थिति को सम्भाला। पूगल के राव जैसा लगाओं और बलोचो द्वारा पूगल के सीमान्त क्षेत्र मे मार दिए गए थे और वह उनके पुत्र राजकुमार काना को बन्दी बनाकर मुलतान ले गए। यह सारी कार्यवाही मुलतान के सहयोग के बिना सम्भव नहीं थी। बाद मे जैसलमेर, बीकानेर के शासको के हस्तक्षेप से राव काना को बादशाह अकबर ने मुक्त करवाया। भाटियों को पूगल के सतलज और सिन्ध नदियों के पश्चिम के सारे किले मुलतान (अकबर) को इस मुक्ति के बदले मे देने पड़े। बादशाह अकबर ने मुलतान के शासको को आदेश दिए कि लगा और बलोच भविष्य मे पूगल को परेशान नही करें।

सन् 1625 ई म पूगल के राव आसकरण और बरसलपुर के राव नेतसिंह समा बलोच द्वारा पूगल मे मारे गये। इन दोनो रावो की मृत्यु का बदला बरसलपुर के राव उदयसिंह ने समा बलोच को मारकर लिया। राव जगदेव (सन् 1625-50 ई) ने चौकसी बरती और लगाओं और बलोचो को पूगल के क्षेत्र पर अधिकार नही करने दिया, लेकिन पूगल राज्य के विरुद्ध उनके लगातार आक्रमणो और सीमा संघर्षों के कारण राज्य की व्यवस्था डगमगाने लगी थी और प्रजा इनसे हमेशा आतंकित रहने लगी थी।

सन 1650 ई मे राव सुदरसेन ने पूगल राज्य का पश्चिमी भाग जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र को सौंपा। उन्होंने देरावर को नये राज्य की राजधानी बनाकर राज्य करना शुरु किया, तब पूगल के बचे हुए पूर्वी क्षेत्र को लगाओं और बलोचो से राहत मिली। वस्तुत अब पूगल के स्थान पर देरावर उनसे सीधे संघर्ष मे आ गया था। लगाओं और बलोचो के लगातार होने वाले आक्रमणो के सामने देरावर के भाटी ज्यादा समय नही टिक सके। आखिर, 113 वर्षों तक देरावर पर राज्य करने के बाद, सन् 1763 ई मे रावल रायसिंह के

राग्य लगाओ और बलोचो की सहायता से टुगा । उनसे देरावर राज्य ले लिया और वहा बहावलपुर राज्य की स्थापना हो गई ।

बादशाह औरगजेब (सन् 1657-1707 ई) के समय रावल अमरसिंह (सन 1659-1702 ई) जैसलमेर के शासक थ । बलोचो ने जैसलमेर के अधीन सिन्ध प्रान्त म सिंध नदी पर स्थित रोहडी के किले पर आक्रमण करके वहा अधिकार कर लिया । इस किले मे भाटियो ने जोहर और साका किया, यह भाटियो का चौथा और अन्तिम साका था। एक दिन बाद मे ही रावल अमरसिंह ने वहा पहुचकर बलोचो से किला छीन लिया । पहला साका लगाओं के विरुद्ध तणोत म 860 वर्ष पूर्व, सन् 841 ई मे हुआ था ।

रावल मूलराज (सन् 1762-1820 ई) के समय बहादुर खा बलोच ने जैसलमेर के क्षेत्र म दीनगढ मे किला बनवाना शुरू किया था, उन्होने उसे वहा से निकाल कर किले पर अधिकार किया और किले का नाम दीनगढ के स्थान पर किसनगढ रखा ।

पूगल, बीकानेर और जैसलमेर की सीमा पर लगाओ और बलोचो का हस्तक्षेप सन् 1818 ई की सन्धि के बाद म कम होना शुरू हुआ और ज्यो ज्यो ब्रिटिश शासन की जडें मजबूत होती गई वैसे वैसे सीमा पर शान्ति का वातावरण बनने लगा ।

कालान्तर म सीमा पार के पडोसी भूल गए कि कभी उनमे आपसी शत्रुता कितनी थी और कितने सैकडो वर्षों से थी । पूगल और बहावलपुर, हिन्दू और मुसलमानो के राज्य थे, लेकिन इनकी आपसी शत्रुता अब समाप्त हो चुकी थी। दोनो ओर का रहन सहन भाषा, पहनावा, रीति रिवाज एक जैसे थे । अभाव या अकाल के दिनों मे वह एक दूसरे के क्षेत्र मे पशु चराने जाते थ, आपस म कोई कटुता नही थी । जिस क्षेत्र मे पानी और घास की सुविधा होती वहीं हजारो की सख्या मे पशु एक दूसरे राज्य मे बेरोकटोक के आते जाते थ । झगडा, फसाद, चोरी जारी, आपसी पचायत तय करती थी । धीरे-धीरे भाटियों, लगाओं और बलोचो का बैर व भेद भाव मिट गया था और पूर्व की आपसी टकराव की स्थिति अब मैत्री में बदल चुकी थी । यह सौभाग्यपूर्ण सुखद स्थिति लगभग एक सौ वर्षों, सन् 1947 ई तक चली। फिर पाकिस्तान और भारत बने, और भाटिया, लगाओं, बलोचों के रिश्तों नातों को 1670 वर्ष पूर्व की, सन 279 ई की, स्थिति मे धकेल दिया गया । आज उसी सीमा के पार देखना भी अपराध है ।

अध्याय–छः

भटनेर : उत्थान और पतन

सन् 295 ई.-1805 ई.

भटनेर के उत्थान और पतन की कहानी सत्रह सौ वर्ष पुरानी है। इसके बिना भाटियो का इतिहास आगे बढेगा ही नही, अधूरा और अपंग रहेगा। भारतवर्ष का भाटियो के सिवाय कोई राजवश इतने लम्बे समय तक सजीव और सशक्त नही रह सका जो अपने पूर्वजों की सैकडो वर्षों की गाथा स्मरण कर सके, लिख सके। भटनेर भाटियों के जीवन का प्रतीक रहा है, जबकि इतने लम्बे समय मे अनेको अनेक साम्राज्य और राजवशो का अता-पता भी नही रहा, उनके श्राद्ध करने वाले भी नही बचे। लेकिन भाटी आज भी अपने जीवट के कारण फल-फूल रहे हैं, बार-बार किलों के खडहर और जौहर की खाक से वह खडे हुए हैं।

यदुवश के 90 वें राजा भाटी ने गजनी से आ कर सन् 279 ई मे लाहौर से अपने विस्तृत राज्य पर राज करना आरम्भ किया। इनके राज्य मे सिन्ध व गगा जमुना की घाटी का हजारो वर्ग मीलो का क्षेत्र था। इनके पुत्र भूपत 91 वें शासक हुए। वह अपने से ज्यादा शक्तिशाली गजनी के शासक धुन्ध से लाहौर का राज्य हार गए। उन्हे अपने पूर्वजो की राजधानी लाहौर को छोडकर घग्घर (सरस्वती) नदी की घाटी के लाखी जगल मे शरण लेनी पडी। इस जगल के दक्षिण और पूर्व मे थार रेगिस्तान फैला हुआ था, आज भी है।

राजा भूपत ने सन् 295 ई (वि स 352) मे घग्घर नदी के पूर्वी किनारे पर एक बहुत सुदृढ और भव्य किला बनवाया। यह किला बावन बीघो के क्षेत्र मे फैला हुआ है, इसके बावन सुदृढ बुर्ज हैं और इसके पास इतने ही मीठे पानी के कुए हैं। किले की चिनाई अच्छी पकी हुई ईंटो से चूने मे की गई थी। इसमे अनेक महल और अन्य मकान बने हुए हैं। केकैया इसके शिल्पी थे। राजा भूपत भाटी ने अपने पिता राजा भाटी की स्मृति मे इसका नाम 'भटनेर' रखा। राजा भूपत ने इस क्षेत्र के शक्तिशाली जाट काश्तकारो के छोटे छोटे राज्यो को अपने अधीन किया। उनके तुष्टीकरण के लिए उन्होने नए किले के नाम के साथ 'नेर' जोडा। ऐसा ही राव बीका ने सदियो बाद मे 'बीकानेर' का नाम रखते समय किया था। यह गगनचुम्बी किला आज भी अपना मस्तक ऊचा किए हुए घग्घर नदी के मैदानो पर प्रहरी की तरह सदियों से खडा है। इसने सत्ता के अनेक उतार-चढाव देखे हैं सैकडो आक्रमणो के घाव सजोये हैं। पिछली सत्रह शताब्दियो से यह दुर्ग उचित रख-रखाव के अभाव में अब खडित और जीर्ण-शीर्ण हो गया है। इसकी बनावट, भव्यता और सुदृढ रूप-रेखा, उस अतीत के समय के भाटियो के वैभव और समृद्धि का प्रमाण है।

राजा भूपत के वशजो ने भटनेर से सन् 295 ई से 425 ई तक, 130 वर्ष राज्य

किया। इन पाच पीढियो के अन्य शासक थे भीम, सातेराव, खेमकरण, और नरपत। अपने पितामह की स्मृति मे बसाये गये भटनेर नगर की तरह राजा खेमकरण ने लाहौर के समीप 'खेमकरण' नगर बसाया और वहा किला बनवाया। इसी खेमकरण क्षेत्र मे सन् 1965 ई का भारत पाक टैंक युद्ध हुआ था, जिसमे भारत विजयी रहा था। राजा खेमकरण का विवाह पूगल के पवार राजा दोमट की पुत्री हेमकवर से सन् 397 ई म हुआ था।

लाहौर के राजा भाटी के एक पुत्र अभयराज ने अबोहर नगर बसाया। इनके वशज अबोहरिया भाटी हुए, जिन्होने कालान्तर मे इस्लाम धर्म स्वीकार किया और अबोहरिया भट्टी मुसलमान कहलाए।

भटनेर के राजा भूपत के वशज राजा नरपत काफी शक्तिशाली और समृद्ध हो गए थ। इनके पीछे चार पीढियो की सुख, शान्ति और समृद्धि की भूमिका थी, जिससे अर्थ व्यवस्था अच्छी रहने से यह काफी सैन्य शक्ति जुटा पाये। सन् 425 ई म इन्होने अपने पूर्वजो की राजधानी लाहौर पर आक्रमण करके वहा अधिकार कर लिया। इन्होने लाहौर के आस-पास का क्षेत्र अबोहरिया भाटियों को राज्य करन के लिए दे दिया। इन अबोहरिया भाटियो म से कुछ ने अपने आपको अब आधुनिक 'आँबराय' कहना शुरू कर दिया है।

राजा नरपत की सैनिक सफलता से भाटियो के अधिकार मे गजनी से मथुरा तक का क्षेत्र आ गया और साथ मे इस क्षेत्र के किलो पर भी इनका नियन्त्रण हो गया। लेकिन यह अधिकार ज्यादा दिनो तक नही रह सका। भाटियो के लाहौर आने के केवल पचास वर्ष बाद, सन् 474 ई. मे, राजा नरपत के वशज राजा लोमनराव को ईरान, खोरासन और बोखारो की सयुक्त सेना न पराजित किया। इस आक्रमण का कारण एक भाटी राजकुमार की छोटी सी जवानी की भूल थी। वह बोखारा के बादशाह की पुत्री के प्रेमजाल मे पड गये थे। बजू के पुत्र राजकुमार झड्डू शहजादी को फुसलाकर और अपहरण करके भाटी देश म ले आए। इस सयुक्त आक्रमण से भाटियो को लाहौर दुबारा छोडना पडा। राजा लोमनराव की इस करारी पराजय के फलस्वरूप भाटियों को लाहौर का समर्पण करना पडा, गजू को गजनी, मूलराज को मथुरा, झन्डू को हिसार और जग सवाई को भटनेर छोडना पडा। इस प्रकार सन् 474 ई की पराजय के कारण भाटियो को लाहौर, अन्य छोटे किले और इसके प्रान्त भी छोडने पड़े। (लक्ष्मीचन्द नथमल द्वारा जैसलमेर का इतिहास, पृष्ठ 14)

राजा लोमनराव के पुत्र रेणसी, लाहौर से मेघाडम्बर छत्र, गजनी का तख्त, आदिनाथ की मूर्ति, ध्वज, नगारा, ढोल और अन्य प्रतीक, छत्र आदि लेकर निकले और अपने आपको बचाते-बचाते फिर राजा भूपत की तरह लाखी जगल की शरण मे पहुचे। इस जगल म काफी समय तक भटकने और छिपे रहने के बाद राव मगलराव ने सन् 519 ई मे मूमनवाहन का किला बनवाया। लेकिन यहा से इन्हें खोरासन के शासक की सहायता से लगाओं और बलोचों ने मार भगाया और नया किला इनसे छीन लिया। वह लगा और बलोच या अन्य बादशाह उस समय मुसल्मान नही थे, यह क्षत्री हिन्दू जातियां थी।

भाटी कभी हार मानने वाले नहीं थे, उन्हें मोडा जा सकता था, मरोडा नही जा सकता था। राव मगलराव के पुत्र मडवराव सन् 559 ई मे शासक बने और मूमनवाहन के किले के बनाने (519 ई) के 80 वर्ष बाद, सन् 599 ई मे राज्य जीत कर इन्होने

मरोठ का किला बनवाया और नगर बसाया। इनके वंशज राव मूलराज ने सन् 645 से 682 ई. में राज्य किया। इन्होंने मुमनवाहन पर पुनः अधिकार किया। इनकी सहायता से अबोहरिया भाटियों ने भटनेर पर भी पुनः अधिकार कर लिया। इस प्रकार सन् 474 ई. में भटनेर पराजय के 200 वर्ष बाद में भटनेर पुनः भाटियों के अधिकार में आया। इस 200 वर्ष के अन्तराल में पवार राजपूतों ने भटनेर पर अधिकार कर लिया था। अबोहरिया भाटियों को भटनेर दिलाने के लिए राव मडवराव को पवारों को पराजित करना पड़ा। भटनेर पर भाटियों का राज अगले 600 वर्षों, सन् 1270 ई. तक रहा। इन्होंने सुचारु रूप से राज्य का प्रशासन चलाया, प्रजा के साथ न्याय किया और सभी प्रकार से भटनेर की उन्नति की। उस समय भाटी राजा को 'राव' से सम्बोधित किया करते थे।

तारीखे हिन्द के अनुसार महमूद गजनी ने सन् 1001 में भटनेर पर विजय प्राप्त की, लेकिन ओझा द्वारा लिखे गये, 'बीकानेर का इतिहास', भाग एक, के अनुसार महमूद गजनी ने ऐसा नहीं किया।

रावल सिद्ध देवराज ने सन् 852 ई. में देरावर में राजधानी स्थापित करने के पश्चात् भटनेर को अपने राज्य में मिला लिया। भटनेर की भौगोलिक स्थिति के कारण यह उनके लिए सामरिक दृष्टि से अत्यन्त उपयुक्त स्थान था। वह प्रायः भटनेर के किले में रहने लगे और यहीं से अपने सैनिक अभियानों को चलाया करते थे। वह इस क्षेत्र में दस हजार सैनिकों की स्थाई सेना रखते थे। भटिंडा के वराह (पवार) भाटियों के आदि शत्रु थे, भटनेर को भाटियों द्वारा शक्ति केन्द्र बनाना उन्हें अनुकूल नहीं था। इसलिए उचित अवसर देखकर उन्होंने भटनेर पर अचानक आक्रमण किया, लेकिन भाटी चौकस थे, उनकी *स्थाई सेना ने इसे विफल कर दिया। फिर रावल सिद्ध देवराज ने अपनी सास, जो भटिंडा* की थी, के सुझाव पर भटिन्डे पर आक्रमण करके उसे अपने अधिकार में ले लिया, जिससे भटनेर अप्रत्याशित आक्रमणों से सुरक्षित हो गया।

कुछ समय पश्चात् रावल सिद्ध देवराज ने लुद्रवा के राजा जसमान पवार की पुत्री से विवाह किया और षड्यन्त्र करके उन्होंने लुद्रवा के किले पर अधिकार कर लिया। वह सन् 853 ई. में अपनी राजधानी भी देरावर से लुद्रवा ले गये। सन् 965 ई. में इनकी मृत्यु के पश्चात्, मुन्ध, वाछूजी और दुसाजी रावल बने। रावल दुसाजी के भाई बापे राव के पुत्र पाहू भाटी ने सन् 1046 ई. में पवारों से पूगल का राज्य जीत लिया। इतिहास से यह स्पष्ट नहीं है कि पाहुओं ने भटनेर को अपने राज्य में मिलाया या यह भाटियों के वृहद् राज्य का ही भाग रहा, जिसकी राजधानी लुद्रवा में थी। इसमें दो राय नहीं है कि *उस समय भटनेर भाटियों के अधिकार में ही था।*

उस काल में भारत पर उत्तरी पश्चिमी सीमा से बार बार आक्रमण हो रहे थे, जिन्हें पंजाब, सिन्ध, मुलतान और पश्चिमी भारत झेलता रहा। दिल्ली के मुसलमान शासक भी अपनी सुरक्षा और सत्ता की स्थिरता के लिए और राज्य की सीमाओं के विस्तार के लिए पड़ोस के स्वतन्त्र राज्यों को पराजित करने में लगे हुए थे। इसी अभियान में दिल्ली *के सुलतान ग्यासुद्दीन बलबन (सन् 1266–86 ई.) ने देरावर, पूगल और बीकमपुर पर*

अधिकार कर लिया। उन्होंने सन् 1270 ई. में भटनेर पर आक्रमण किया और वहां के भाटी शासक को पराजित किया। पिछले 600 वर्षों में पहली बार भाटियों को भटनेर छोड़ना पड़ा। सुलतान बलबन ने हाकिम शेरखान को भटनेर का प्रशासक नियुक्त किया। यह अच्छे शासक थे, इन्होंने पराजित जनता पर कोई अत्याचार नहीं होने दिए। सन् 1296 ई. में इनकी मृत्यु भटनेर में हो गई, इनका मकबरा भटनेर के किले में बनाया गया। यह अब भी वहां मौजूद है। सन् 1270 ई. से अगले 90 वर्षों (सन् 1360 ई.) तक भटनेर भाटियों के अधिकार में नहीं आया।

दिल्ली के सुलतान फिरोज तुगलक (सन् 1351–88) अपने शासनकाल के प्रारम्भिक वर्षों में कमजोर शासक थे। भाटियों के प्रति इनका उदार रुख था। सुलतान फिरोज शाह तुगलक, ग्यासुद्दीन तुगलक के छोटे भाई, रजब के पुत्र थे। रजब की पत्नी बीबी नायला, फिरोज की माता, अबोहर के प्रमुख भाटी राय रणमल की पुत्री थी। राय रणमल ने अपनी पुत्री का विवाह रजब से इस शर्त पर किया था कि दिल्ली के सुलतान अबोहर पर आक्रमण करके जनता को बरबाद नहीं करेंगे। यह शर्त सुलतान फिरोज तुगलक ने भी अपनी माता के प्रति स्नेह के कारण निभाई और भाटियों को उचित मान, सम्मान और संरक्षण दिया।

सुलतान फिरोज शाह तुगलक की कमजोरी कहें या भाटियों के प्रति उनकी उदार नीति कहें, सन् 1360 ई. में जब भाटियों ने भटनेर पर अधिकार कर लिया तो सुलतान ने उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की। इसे अनदेखा कर दिया। भाटियों ने भटनेर पर अगले 38 वर्षों, सन् 1398 ई. तक राज्य किया। इसी वर्ष तैमूर ने भटनेर पर कहर ढा दिया।

भटनेर के भाटी एवं लखवेरा (लखूवाली) और सिहाणकोट (बड़ोपल) के जोइया अच्छे मित्र थे। इनके पारिवारिक सम्बन्ध थे। बीरमदे राठौड़ लखवेरा के डाला जोइया की सेवा में थे। इन्होंने अनुकूल अवसर का लाभ उठाकर, सन् 1383 ई. में डाला जोइया के मामा और भटनेर के शासक, भूकन भाटी अबोहरिया को मार डाला। बीरमदे राठौड़ का भूकन भाटी को मारने का उद्देश्य भटनेर पर अधिकार करने का था। डाला जोईया को ज्योंही अपने मामा के मारे जाने की सूचना मिली, उन्होंने सेना लेकर राठौड़ का पीछा किया और उन्हें पकड़ कर वहीं मार डाला। बीरमदे राठौड़ राव चून्डा के पिता थे। राव चून्डा, राव जोधाजी के दादा और राव बीकाजी के पड़दादा थे।

तैमूर ने सन् 1397 ई. में एक बड़ी सेना का नेतृत्व अपने पौत्र पीर मोहम्मद को देकर, दिपालपुर, पाकपट्टन आदि क्षेत्रों को विजय करने के उद्देश्य से भेजा, ताकि उसके बाद के उनके बड़े आक्रमणों के प्रति विरोध निर्बल हो जाए। वह भटनेर की उपयोगिता, उसके रक्षा प्रबन्धों एवं रक्षकों के चरित्र से अनभिज्ञ नहीं थे, इसलिए उन्होंने पीर मोहम्मद को पाकपट्टन से आगे भटनेर पर आक्रमण करने से रोका। वह कम अनुभव वाले किसी सेनानायक द्वारा भटनेर पर आक्रमण करने का जोखिम उठाने को तैयार नहीं थे। इसलिए तैमूर ने स्वयं भटनेर पर आक्रमण का नेतृत्व सम्भाला और योजनाबद्ध तरीके से सन् 1398 ई. में भटनेर पर बहुत बड़ा भयानक आक्रमण किया। भटनेर के शासक राय दुलीचन्द भाटी

ने उनका कड़ा विरोध किया, किले के बाहर के मैदान में घमासान युद्ध हुआ। लेकिन राव दुलीचन्द भाटी तैमूर की बलशाली सेना के सामने ज्यादा दिनों तक नही टिक सके। उन्होंने 9 नवम्बर, सन् 1398 ई. के दिन तैमूर के सामने आत्मसमर्पण कर दिया।

तैमूर के अधीनस्थ आदमियों ने भटनेर के वैभव और सम्पदा का कही अधिक मूल्यांकन किया था, जिसे देने की क्षमता वहां के निवासियों में नही थी। इसलिए उन्होंने अपार धन की मांग को पूरा करने मे असमर्थता दर्शाते हुए उसका विरोध किया। इस विरोध को दबाने के लिए और उनके साहस और मनोबल को कुचलने के लिए तैमूर की विजयी सेना ने अत्यधिक बल का प्रयोग किया। 'सारे नगर और आसपास के क्षेत्र मे कत्लेआम हुआ, नगर को जला दिया गया, नागरिको से धन-दौलत, माल असबाब लूट लिया गया और स्त्रियो की बेइज्जती की गई। यह सब इतने क्रूर तरह से और निर्दयता के साथ किया गया कि कोई विश्वास नही कर सकता था कि इस नगर में कभी जीवन भी सांस लेता था।' भटनेर के निवासियों और नागरिको की दशा के बारे में कहा गया कि, 'हिन्दूओ ने अपनी स्त्रियो और बच्चो को जला दिया, धन-दौलत, माल-असबाब आग मे फेंक दिया, जो मुसलमान होने का दावा करते थे, उन्होंने भी अपनी स्त्रियो और बच्चो के सिर भेड़-बकरियो की तरह काट डाले। यह सब कुछ पूरा करके, तैमूर की धर्मान्ध सेना द्वारा उत्तेजित किए हुए, भटनेर के कल तक के नागरिक, हिन्दू और मुसलमान, साम्प्रदायिकता की आग के शिकार हुए और एक दूसरे पर पिल पड़े। जो काम सेना पूरा नही कर सकी, वह बचा हुआ काम हिन्दू और मुसलमानो ने मिलकर एक दूसरे का कत्लेआम करके कर लिया। मुसलमानो को तैमूर की सेना का सहयोग प्राप्त था, लगभग दस हजार हिन्दू मारे गए, मुसलमान कुछ कम मारे गए। मकानो को जला दिया गया या गिराकर समतल कर दिया गया।' शायद यह पहला अवसर था जब कि भारतवर्ष के एक नगर मे बसने वाले हिन्दू और मुसलमान, विदेशी सेना द्वारा उकसाये जाने पर, आपस मे एक दूसरे को मारने पर उतारू हो गए। यह हाहाकार और ताण्डव चार दिन तक चला, भटनेर का सब कुछ स्वाहा हो गया। तैमूर की सेना स्त्रियो की इज्जत लूट कर और लूटी हुई अपार सम्पत्ति साथ लेकर भटनेर से 13 नवम्बर, 1398 ई को प्रस्थान कर गई। यह सेना मार्ग मे सिरसा और फतेहाबाद की दशा भी भटनेर जैसी ही करती गई। भाटियो ने पीर मोहम्मद की सेना का उच्छ और मुलतान मे कड़ा विरोध करके उसकी सेना को अत्यधिक क्षति पहुंचाई थी। इससे तैमूर अत्यन्त क्रोधित थे, इसलिए उन्होने भटनेर के भाटियो से बदला लिया। (Muslim Rule in India, Mahajan, Page 225)

कर्नल टाड के अनुसार तैमूर ने अपने एक प्रमुख टारटर सरदार चिगत खां चकताई को भटनेर का शासक बना दिया और स्वयं दिल्ली की ओर बढ़ गए। तैमूर आंधी की तरह अप्रेल, 1398 ई. मे भारत मे आए थे। एक वर्ष तक बवन्डर मचा कर, सदियो की नीवें उखेड़ कर और सब कुछ तहस नहस करके 19 मार्च, सन् 1399 ई को भारत से प्रस्थान कर गए। उस समय पूगल के शासक राव रणकदेव (सन् 1380-1414 ई) थे।

तैमूर के प्रस्थान के बाद भटनेर के चकताई शासक को जनता और भाटियों के विरोध और सशक्त विद्रोह ने ज्यादा समय वहा टिकने नही दिया। मरोठ और फूलड़ा के भाटियो ने उनसे भटनेर छीन लिया। बैरसी भाटी ने वहा कई वर्ष शासन किया। इनके बाद मे

इनके पुत्र भैर भाटो शासक बने। इनके समय में पूर्व शासक खिगत खा के पुत्रों ने दिल्ली के सैयद सुल्तानों की सहायता से भटनेर पर दो बार असफल आक्रमण किए। तीसरे आक्रमण में भाटी हार गए। उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया। सन्धि के अनुसार वहां के भाटियों ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया। तभी से इस क्षेत्र के भाटी, भट्टी मुसलमान हो गए। भटनेर के चकताई शासकों पर दिल्ली के सैयद शासकों का अंकुश था।

उधर जैसलमेर के रावल केहर का, 35 वर्षों तक निर्बाध शासन के बाद, सन् 1396 ई. में देहान्त हो गया। भटनेर पर तैमूर द्वारा आक्रमण उनके देहान्त के दो वर्ष बाद, सन् 1398 ई. मे, हुआ। सन् 1397 ई. में तैमूर की सेना ने शहजादा पीर मोहम्मद के नेतृत्व में सिन्ध नदी पर स्थित उछ के भाटियों के किले को घेरा और मुलतान पर आक्रमण किया। इस आक्रमण में उन्हें अत्यधिक कठिनाई आई और कठोर संघर्ष के पश्चात् ही उन्हें सीमान्त विजय मिल सकी। इस संघर्ष से भाटियों के बारे में तैमूर को बहुत सब जानकारी मिल गई जिसके कारण उन्होंने भटनेर पर आक्रमण का नेतृत्व स्वयं के हाथों में लिया। इधर भाटी रावल केहर की मृत्यु के सदमे से उबरे भी नहीं थे कि तीन सौ मील उत्तर पूर्व में भटनेर के युद्ध में राव दुलीचन्द भाटी की पराजय और मौत हो गई। रावल केहर की मौत ने जहां राजकुमार केलण को जैसलमेर की राजगद्दी से वंचित रखा, वहां राव दुलीचन्द की मौत ने भाटियों के भटनेर पर शासन में विघ्न डाला और भटनेर भाटियों से छिन गया। अगर शहजादा पीर मोहम्मद ही विजय के आवेश में दिपालपुर, पाकपट्टन आदि लेते हुए सतलज नदी पर रुकने के बजाय नदी पार करके भटनेर पर आक्रमण कर देते तो शायद इतिहास कुछ और ही होता। राव दुलीचन्द भाटी उन्हें अवश्य पराजित करके बन्दी बनाते। लेकिन यह राव दुलीचन्द का दुर्भाग्य था कि तैमूर की खुफिया तन्त्र बहुत सक्रिय थी, उसने भटनेर के सैन्यबल, सुरक्षा प्रबन्धों और भाटियों के चरित्र के विषय में तैमूर को सही जानकारी दी। अनुभवी तैमूर ने स्थिति का उचित मूल्यांकन करके सतलज नदी के पश्चिमी किनारे पर पौत्र पीर मोहम्मद से स्वयं ने सेना की कमान सम्भाली। इससे भाटियों का भाग्य ही बदल गया। इस प्रकार जैसलमेर से पूगल भटनेर तक फैला हुआ भाटी राज्य कुछ समय के लिए संकट में आ गया।

रावल केहर की मृत्यु के पश्चात् कुमार केलण पूगल के राव रणकदेव की राणी के गोद आकर सन् 1414 ई. में पूगल के राव बने। उन्होंने पंजाब की पांचों नदियों एवं भटनेर पर अधिकार करके सन् 1398 ई. में भटनेर में हुई भाटियों की पराजय को सवारा और उनका स्वाभिमान जाग्रत किया। सन् 1417 ई. में राव केलण ने भटनेर पर अधिकार कर लिया। राव केलण की दिल्ली के शासक सैयद खिजर खां (सन् 1414 ई.) से उनके मुलतान के शासक रहने के समय से अच्छी मित्रता थी। इसलिए राव केलण द्वारा भटनेर पर अधिकार करने की घटना को उन्होंने गम्भीरता से नहीं लिया।

राव केलण को पूगल की राजगद्दी सौंपने से पहले, राव रणकदेव की सोढ़ी राणी ने उनसे वचन लिया था कि वह राव बनने (सन् 1414 ई.) के तुरन्त बाद में उनके पुत्र तणु और दीवान मेहराव हमीरोत भाटी को अपने राज्य में सम्मानपूर्वक स्थापित करेंगे। इन दोनों ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया था। राव केलण को सन्देह था कि अगर तणु और

मेहराव पूगल क्षेत्र मे रहे तो उन्हे अन्य माटी मार डालेंगे। इसलिए उन्होने नागौर मे राव चून्डा पर आक्रमण करके उनसे राव रणकदेव और राजकुमार शार्दूल की मौत का बदला लेने से पहले, इन दोनो को अपने वचन के अनुसार अलग से राज्य देना आवश्यक समझा। इसलिए सन् 1417 ई मे राव केलण ने भटनेर जीता और वहा का राज्य इन्हे दिया। तणु के वशज मुमानी भाटी मुसलमान हुए और मेहराव के वंशज हमीरोत माटी मुसलमान हुए। यह दोनो राज्य करने के लायक नही थे। कुछ वर्ष इन्होने राज्य किया, लेकिन राज काज सुचारु रूप से नही चला सके। इससे प्रजा मे असतोष फैला। आखिर परेशान होकर यह भटनेर का राज्य त्याग कर अबोहर चले गए। वहा यह अपने पूर्वज अबोहरिया भाटियो मे मिल गए और उनका अन्य माटी मुसलमानो मे विलय हो गया।

राव केलण की तीन राणियो मे से एक राणी पठान भी थी। उनकी दोनो हिन्दू (राजपूत) राणियो से छ पुत्र और पठान राणी से दो पुत्र, खुमाण और थीरा, थे। इन्होने इन दोनो कुमारो को पूगल से कही दूर बसाने की सोची ताकि अन्य भाई या भाटी इन्हे हानि नही पहुचा सकें और इनके कारण किसी प्रकार का गृह कलह उत्पन्न नही हो। उन्होने अपनी मृत्यु (सन् 1430 ई) से पहले राजकुमार चाचगदेव को आदेश दिया कि वह खुमाण को भटनेर दे दें और थीरा को उसके पास मे जागीर दे दें। राव चाचगदेव को इसमे कोई कठिनाई नही आई। तणु और मेहराव वैसे भी भटनेर मे शासन करने से तग आए हुए थे, उन्हे राव चाचगदेव के कहने की देरी थी कि वह, सन् 1430 ई मे, खुमाण और थीरा को भटनेर सौंप कर अबोहर चले गए। उन्हे वहा भटनेर से गुजारा और भरण पोषण मिलता रहा। खुमाण और थीरा के वशज भी भट्टी मुसलमान कहलाए। यह पाकिस्तान, हरियाणा, पजाब राजस्थान मे आबाद हैं। इनमे से अनेक व्यक्तियो ने अपने देशो की अच्छी सेवा की, प्रसिद्धि पाई, नागरिक और सैनिक सेवा मे उच्च पद प्राप्त किए। मेरी जानकारी मे सभी भट्टी मुसलमान समृद्ध हैं। हमे इसमे प्रसन्नता है और हमे इन पर गर्व है।

बीकानेर के राव लूणकरण ने सन् 1512 ई मे हिसार और सिरसा की सीमा पर स्थित चायलवाडा पर आक्रमण करके चायलो से उनके 440 गाव छीन लिए। चायलो का सरदार पूना चायल पराजित होकर भटनेर चला गया। उसने वहा के कमजोर माटी (मुसलमान) शासक से भटनेर का किला छीन लिया।

बीकानेर के राव जैतसी ने सन् 1527 ई मे भटनेर पर आक्रमण करके सादा चायल को पराजित किया और राव काधलजी के पौत्र खेतसिह कांधल को किले का किलेदार नियुक्त किया।

इस प्रकार सन् 1417 ई के बाद चायलो ने भाटियो से सन् 1512 ई म भटनेर लिया। भाटियो ने भटनेर पर इस क्रिश्न मे एक सौ वर्षों तक राज्य किया। यहा यह बताना आवश्यक है कि सन् 1417 ई के बाद म भटनेर के सब माटी शासक मुसलमान थे, भटनेर के सदर्भ मे उन्हें माटी ही लिखेंगे।

दयालदास के अनुसार बादशाह बाबर के पुत्र और हुमायु के भाई कामरान ने, जो पजाब आदि के सूबेदार थे, बीकानेर पर सन् 1534 ई मे आक्रमण किया। उन्होंने पहले

भटनेर के किले पर आक्रमण किया। वहां के किलेदार गेतसिंह कांधल एवं पांच सौ राजपूत सैनिकों को मारकर उन्होंने किले पर अधिकार कर लिया। उन्होंने अहमद कायम को किले का प्रबन्ध सौंपा। कुछ का विचार है कि गेतसिंह कांधल की मृत्यु सन् 1549 ई में हुई थी, यह दयालदास द्वारा दिए गए सन् 1527 से और कामरान के आक्रमण से मेल नहीं खाती।

ओझा के अनुसार दिल्ली के शासक शेरशाह सूरी (सन् 1540 45 ई) ने बीकानेर के राव कल्याणमल (सन् 1542-71 ई) के शासन काल में भटनेर का परगना जैतपुर के ठाकुरसी राठोड़ के पुत्र बाघा को दिया था। ठाकुरसी राव कल्याणमल के भाई थे। दीनानाथ खत्री के अनुसार, 'ठाकुरसी की भटनेर के कायम शासक अहमद से अनबन रहती थी। ठाकुरसी भटनेर लेने के उपाय सोच रहा था। इसी समय भटनेर का एक तेली, अपनी ससुराल जैतपुर आया। ठाकुरसी ने तेली की बड़ी आवभगत की और उससे भटनेर पर अधिकार कराने मे सहायता करने का वचन ले लिया। विदा होते समय ठाकुरसी ने तेली को वस्त्र, आभूषण और द्रव्य देकर उसका बड़ा सम्मान किया और अपना एक आदमी भटनेर के मार्ग तथा किले का भेद लेने के लिए उसके साथ भेज दिया। कुछ दिन पश्चात् अहमद कायम अपने पुत्र का विवाह करने भटनेर से बाहर गया तो तेली ने गुपना भेज कर ठाकुरसी को बुलवाया। तेली की सहायता से ठाकुरसी के आदमी किले में प्रविष्ट हो गये। उस समय किले के फिरोज रक्षक ने 500 आदमियों से ठाकुरसी का सामना किया। पर फिरोज मारा गया, ठाकुरसी का किले पर अधिकार हो गया। ठाकुरसी बीस वर्ष तक भटनेर का शासक रहा।' आगे दीनानाथ खत्री के अनुसार

'एक बार बादशाह अकबर के समय शाही खजाना कश्मीर और पंजाब से दिल्ली ले जाया जा रहा था। इसे भटनेर परगने के गांव मछली में लूट लिया गया। इस पर अकबर ने हिसार के सूबेदार को भटनेर पर चढ़ाई करने के आदेश दिए। उसने किले को घेर लिया। भटनेर का शासक ठाकुरसी एक हजार राजपूतों के साथ लड़ता हुआ मारा गया और भटनेर में हिसार का थाना लग गया। कुछ समय पश्चात् लूट के माल को लौटाकर, ठाकुरसी का पुत्र बाघा अकबर की सेवा मे दिल्ली चला गया। बादशाह को ईरान के एक कारीगर ने एक ऐसा धनुष नजर किया जिसे कोई चढ़ा नहीं सकता था। बाघा ने उस धनुष को चढ़ा दिया। इसी प्रकार बाघा ने बादशाह के दरबार म एक शेर को मल्लयुद्ध में मार डाला। बादशाह अकबर उसकी वीरता स बडे प्रसन्न हुए। उसे भटनेर वापिस दे दिया। बाघा न किले म गोरखनाथ का मन्दिर बनवाया।'

राव कल्याणमल (*सन् 1542–71 ई*) और राजा रायसिंह (सन् 1571–1612 ई), अकबर बादशाह (सन् 1556–1605 ई) के समय बीकानेर के शासक थे। बीकानेर के इन दोनो शासकों के समय अकबर के इनसे घनिष्ठ पारिवारिक सम्बन्ध स्थापित हो गए थे। राव कल्याणमल ने अपने भाइयो, भींवराज और कान्हा, की पुत्रियां भानुमति और राजकंवर अकबर को ब्याही। अकबर और राजा रायसिंह दोनों का विवाह जैसलमेर के रावल हरराज की पुत्रियां, नाथी बाई और गगा बाई, से हुआ था। राजा रायसिंह की पुत्री शहजादा सलीम (जहांगीर) को (26 जून, 1586) ब्याही हुई थी। (दलपत

विलास, पृष्ठ 15)। इन सम्बन्धो को देखते हुए, ठाकुरसी और उनके पुत्र बाघा को भटनेर दिलाने मे इन दोनो शासको की निर्णायक भूमिका को मिथ्या नही कहा जा सकता। कोई प्रसग चाहे कितना ही सार्थक क्यों न हो, वैवाहिक सम्बन्धो से ऊपर नही हो सकता। राव कल्याणमल ने शेरशाह सूरी की जोधपुर के राव मालदेव के विरुद्ध मेडता के युद्ध म बडी सहायता की थी, जिसके फलस्वरूप बीकानेर का राज्य वापिस राव कल्याणमल को मिला। इसलिए ठाकुरसी द्वारा सन् 1540 ई मे भटनेर पर अधिकार की घटना को शेरशाह सूरी ने गम्भीरता से नहीं लिया और सम्भवत उ होने वह जागीर उन्हें बख्श दी।

सन् 1540 ई से 1560 ई तक भटनेर ठाकुरसी राठौड के पास रहा और इसके बाद सन् 1580 ई तक उनके पुत्र बाघा के पास रहा।

सन् 1580 ई के आसपास बादशाह अकबर ने भटनेर राजा रायसिंह को दे दिया। सन् 1597 ई मे राजा रायसिंह के एक कर्मचारी तेजा बाघोड ने अकबर के ससुर नासिर खा के साथ अभद्र व्यवहार किया, जिससे अप्रसन्न होकर बादशाह अकबर ने भटनेर राजा रायसिंह के पुत्र राजकुमार दलपतसिंह को दे दिया। परन्तु भटनेर मिलने के बाद मे राजकुमार दलपतसिंह का रुख अकबर के प्रति उचित नही रहा, उन्होने उद्दडता दर्शायी और अभद्रता का प्रदर्शन किया, जिससे अप्रसन्न होकर अकबर ने सेना भेज कर उन्हे भटनर से निकाल दिया। लेकिन कुछ समय पश्चात् उन्होने भटनेर पर फिर अधिकार कर लिया और अपनी छ रानियो के साथ वहां रहने लगे। राजा रायसिंह और राजकुमार दलपतसिंह के सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। उन्हा न कई बार बीकानेर पर आक्रमण भी किए, जिसमे उन्हें सफलता ता नही मिली, लेकिन इससे राजा रायसिंह परेशान अवश्य रहते थे और दिल्ली के दरबार मे अन्य राजाओ के सामने उनकी प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचती थी। बादशाह अकबर भी पिता पुत्र के गृह युद्ध मे किसी का पक्ष नही लना चाहते थे, इसमे उनकी स्वय की राठौड और भाटी बेगमो का और पुत्र सलीम की पत्नी का सक्रिय हस्तक्षेप भी रहता था। इस तथ्य के कारण जब राजकुमार दलपतसिंह ने पुन भटनेर पर अधिकार कर लिया तब अकबर ने इसकी अनदेखी की। वरना राजकुमार दलपतसिंह का क्या सामर्थ्य था कि वह बादशाह अकबर के थाने को हटाकर *किले मे प्रवेश करे या इस दुस्साहस के लिए अकबर* उन्हे दण्ड नही दे?

इस पिता पुत्र के सघर्ष से दूर रहने के उद्देश्य से बादशाह अकबर ने सन् 1599 ई मे जब राजा रायसिंह को गुजरात एव सौराष्ट्र के 52 परगनो का फरमान जारी किया तब भटनेर का परगना भी उसमे शामिल कर दिया। राजा रायसिंह ने राजकुमार दलपत सिंह और उनकी रानियो को भटनेर में यथावत रहने दिया।

राजा रायसिंह की मृत्यु (सन् 1612 ई) के पश्चात् दलपत सिंह केवल दो वर्ष (सन् 1612 14 ई) के लिए ही बीकानेर के राजा रह सके। उन्होने बादशाह जहागीर के विरुद्ध विद्रोह किया। वह सन् 1614 ई में अजमेर की जेल से छूट कर भागने के प्रयास मे वहीं मारे गए। जब दलपत सिंह बीकानेर के राजा बने तो उन्होने सुरक्षा की दृष्टि से अपनी रानियो को भटनेर में ही रखा। उन्होने राजा रायसिंह के समय के दीवान ठाकुर सिंह वैद,

जो राजा रायसिंह के विरुद्ध उनके षड्यंत्रो में सहायक थे, को भटनेर का सूबेदार बनाया, उन्हें 141 गांव दिए और उनके अधीन भटनेर मे 3000 आदमियो की सेना छोडी।

राजा रायसिंह के समय से ही आपसी गृह कलह के कारण भटनेर मे अराजकता और अव्यवस्था का वातावरण था, जिसे राजा दलपतसिंह को अजमेर में बन्दी बनाये जाने से और बढावा मिला। इस दोषपूर्ण स्थिति का लाभ उठाकर फतेहाबाद के हयात खा भाटी ने जोइयों की सहायता से भटनेर के किले पर सन् 1614 ई मे आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में महाजन के ठाकुर उदयमानसिंह के 18 पुत्र मन्छोटा में और दो पुत्र नोहर मे मारे गए। इससे भटनेर स्थित राठौड सेना के मनोबल को भारी आघात पहुचा। उन्होंने बडे बेमन से भटनेर मे भाटियो का सामना किया। बेकार जान गवाने के बजाय उन्होंने आत्मसमर्पण करना उचित समझा। राठोडो ने हयात खा भाटी को किला सौंप दिया। भाटियो ने राजा दलपतसिंह की रानियो को और ठाकुरसिंह बैद को किले में रहने की अनुमति दे दी।

राजा दलपतसिंह की सन् 1614 ई मे अजमेर मे मृत्यु के पश्चात् उनकी रानिया उनकी पाग के साथ भटनेर के किले मे सती हुईं। उनकी देवलिया किले मे बनी। अब भी वहा हैं। भाटियो के मुसलमान बन जाने से उनमे राजपूतों के संस्कार और हिन्दू संस्कृति लोप नही हुई थी। उनमें वीरोचित वह सभी गुण थे जो भाटियो मे थे। इसीलिए उन्होने राजा दलपत सिंह की रानियो को उनकी सकट की घडी मे समय भटनेर के किले मे रहने दिया। उनकी मृत्यु के पश्चात् राजपूत परम्परा के प्रति श्रद्धा दर्शाते हुए उन्होने रानियों को अपने अधीन किले में सती होने दिया। केवल यही नही, इस्लाम धर्म के मूलत मूर्ति विरोधी होते हुए भी, भाटियो ने सती रानियो की देवलियो को किले में स्थापित करने की हर्ष और श्रद्धा से राजा सूरसिंह को अनुमति दे दी। राजा दलपतसिंह के बाद में उनके भाई सूरसिंह बीकानेर के राजा बने। (सन् 1614-31 ई)

हयात खा भाटी द्वारा सन् 1614 ई मे भटनेर पर अधिकार करने के साथ 102 वर्ष बाद पुन भाटी शासन भटनेर में स्थापित हुआ। इससे पहले सन् 1512 ई में पूना चायल ने भाटियों से भटनेर छीन लिया था। इन सौ वर्षों म भटनेर ने सत्ता के कई उलट फेर सहे। हयात खा भाटी न सन् 1614 ई म अपने आपको स्वतन्त्र शासक घोषित कर दिया। वह शान्ति से सुचारु शासन व्यवस्था चलाते रहे, प्रजा भाटियों के शासन मे अत्यन्त सुखी थी। बीकानेर के राजा सूरसिंह स इनके सम्बन्ध राजा दलपतसिंह की मृत्यु के समय से ही अच्छे थे। राजा करणसिंह अपने किये के कारण (नावें तोडने की घटना) बादशाह औरगजेब के कोपभाजन थे। उन्हें बादशाह ने औरगाबाद के किले मे नजरबन्द रखा और उनके जीवनकाल में ही राजकुमार अनूपसिंह को बीकानेर के शासनाधिकार दे दिये। महाराजा अनूपसिंह (सन् 1667-98 ई) ने भटनेर के भाटिया से छेड छाड शुरू की ही थी कि वनमालीदास ने बीकानर राज्य के आधे भाग का फरमान बादशाह औरगजेब से प्राप्त करके उनका मनोबल गिरा दिया और उनकी मानसिक दशा बिगाड दी, जिससे भाटियों को इनस राहत मिल गई। इस प्रकार महाराजा अनूपसिंह भटनेर के विरुद्ध अन्य कारणो से सफल नही हुए। दिल्ली के शासकों का भटनेर के मुसलमान भाटियों के प्रति सदैव उदार रवैया रहा।

महाराजा सुजानसिंह (सन् 1698-1734 ई) ने भटनेर के विरुद्ध सक्रिय अभियान

छेडा। सन् 1707 ई मे बादशाह औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् दिल्ली का साम्राज्य बिखरने लगा था और स्थानीय मुसलमान शासकों को दिल्ली का उदार लेकिन सशक्त सरक्षण मिलना समाप्त हो गया था। इसलिए महाराजा सुजानसिंह भी भटनेर के प्रति आक्रामक रवैया अपनाने लगे। निर्बल दिल्ली के कारण उनमे निर्भीकता जाग्रत हुई। उन्होंने भाटियो और जोइयो को दण्ड देने के अभिप्राय से सन् 1730 ई मे नोहर पर आक्रमण करके वहा से भटनेर के विरुद्ध सैनिक अभियान चलाया। भटनेर की सुरक्षा व्यवस्था मे कमी थी और सेना भी कम थी, इसलिए सन् 1730 ई म भटनेर पर बीकानेर का अधिकार हो गया। इस प्रकार भाटियो का भटनेर पर शासन 116 वर्ष, सन् 1614 से सन 1730 ई तक रहा। यह अवधि शान्तिपूर्ण रही। किसी पडोसी से झगडा फसाद नही हुआ। केवल बीकानेर के शासको की राज्य की सीमा उत्तर की ओर बढान की भूख शान्त नही हुई थी। जोइयो के सक्रिय सहयोग के कारण भटनेर के भाटी शासक बीकानेर के राजा सूरसिंह, करण सिंह, अनूपसिंह के वश म नही आये थ।

दयालदास ने बीकानेर का इतिहास, भाग–2, के पृष्ठ 60 पर लिखा है कि भटनेर के शासक ने बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह को नोहर म भटनेर के किले की चाबियां भेंट की। परन्तु उदार महाराजा ने बीस हजार रुपये का नजराना स्वीकार करते हुए, भटनेर का किला उन्हें रखने दिया। यह युक्तिसगत नही लगता। महाराजा सुजानसिंह जोइयो को दबाने नोहर गए थे, लेकिन वह ऐसा करने मे सफल नही हुए। यह कैसे सम्भव था कि जिन भाटियो ने महाजन के ठाकुर उदयभान के बीस बेटो को मारा था या जिन जोइया ने महाजन के ठाकुर अजबसिंह को मारा था, उनसे महाराजा बीस हजार रुपये का तुच्छ नजराना ले लें और उन्ह कोई दण्ड नही दें और भटनेर का किला भाटियो को बख्शीश करके बीकानेर लौट आए। वस्तुत जब बीकानेर के महाराजा जोइयो को दबाने और दण्डित करने मे सफल नहीं हुए तब अपनी नाक रखने के लिए उन्होने भटनेर विजय की कहानी बनाई और नोहर मे ही भाटियो से नजराना लेना दर्शाकर उन्ह आक्रमण की त्रासदी से मुक्त रखना बताया। जब वह जोइयो को दल-बल सहित नोहर म नहीं दबा सके तब उन्होंने भटनेर विजय की आस छोड दी और बीकानेर वापिस आ गए। अगर बिना लडाई के भाटी उन्ह भटनेर सौंप रहे थे, तब उन्ह भटनेर जा कर वहां अधिकार करके अपना थाना स्थापित करना चाहिए था। सन् 1730 ई में बीकानेर द्वारा भटनेर पर अधिकार करने वाला तथ्य सही नही लगता।

महाराजा जोरावर सिंह (सन् 1734 46 ई) के शासनकाल म भाटियो और जोइयो के आपसी अनबन और मनमुटाव के कारण वहा गदर्भ के कारण उपद्रव होने वाली स्थिति हो गई थी। इसलिए दयालदास के अनुसार, महाराजा ने सन् 1740 ई म महाजन के ठाकुर भीमसिंह को भटनेर में शान्ति व्यवस्था करने के लिए भेजा। ठाकुर भीमसिंह की सहायता करने क लिए बीदा और रावतोत सरदार भी साथ म भेजे गए। महता रघुनाथ राठौ राज्य के प्रतिनिधि बन कर उनके साथ गये। तलवाडा क माना नामक जोइये ने किसी प्रकार धोखा, युद्ध या लालच देकर भाटियों को भटनेर के किले म निकाल दिया था और स्वय वहा का स्वामी बन बैठा था। भाटी माना जोइया से किला वापिस लेने का प्रयास

0 पूगल का इतिहास

कर रहे थे। इस कारण से जोइयो और भाटियो मे आपसी संघर्ष चल रहा था। पहले विद्रोही जोइया थे और भाटी शासक थे, अब भाटी विद्रोही थे और जोइया शासक बन गये थे।

ठाकुर भीमसिंह और अन्य प्रमुखो ने माला जोइया से बातचीत की ताकि आपस के संघर्ष का शान्तिपूर्ण ढग से समाधान किया जाए। कुछ दिन सौहार्द्रपूर्ण वार्ता चलने के पश्चात् ठाकुर भीमसिंह ने माला जोइया को भोजन के लिए आमन्त्रित किया। उसने उन पर विश्वास करते हुए यह निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। दूसरी तरफ ठाकुर भीमसिंह ने चोरी छिपे व्यापारियों के माल असबाब के रूप मे छिपा कर 125 ऊट, बन्दूकें, गजर और अन्य सेना का सामान लेकर किले में भेज दिया। इनके साथ भेष बदल कर उनने राजपूत सैनिक भी किले मे प्रवेश कर गए। भोजन के समय माला जोइया और उसके 70 साथियो एव अग-रक्षको को जहर देकर किले के बाहर मार दिया गया।

माला जोइया और उसके 70 आदमियो को मारने के पश्चात् ठाकुर भीमसिंह और उनके आदमियों ने मृतकों के घोडो पर किले म प्रवेश किया, जहा पहले से ही उनके सैनिक यथास्थान मोर्चा सम्भाले हुए थे। किले मे थोडी देर के लिए संघर्ष हुआ जिसम माला जोइया के पुत्रो और पौत्रो सहित अनेक जोइया मारे गए। ठाकुर भीमसिंह ने किले पर अधिकार होने का नगर मे डका बजवा दिया। ठाकुर भीमसिंह को किले म चार लाख रुपये और स्वण मोहरें मिली, जिन्हे उन्होने बीकानेर राज्य के प्रतिनिधि मेहता रुघनाथ राठी को नही देकर स्वय रख ली। मेरे विचार मे यह धन भाटियो का था, जिसे जोइयो के लिए किले मे छोडकर उन्हे विवश होकर जाना पडा। अन्यथा माला जोइया इतने अल्प समय मे इतना धन कहा से लाया? अगर जोइयो के पास इतना धन होता तो वह महाराजा सुजानसिंह को नोहर मे भाटियो द्वारा दिए गए बीस हजार रुपये के नजराने से अधिक नजराना भेंट करके भटनेर का अधिकार स्वय प्राप्त कर सकते थे, क्योंकि बीकानेर के शासकों को न्याय अन्याय का ख्याल कम था, रुपये ऐंठने का मोह ज्यादा था।

उपरोक्त सारी मनगढत कहानी है यह वैसी ही खोखली है जैसी जैतपुर के ठाकुरसी और भटनेर के तेली की। उपरोक्त मे सार इतना ही है कि महाजन के ठाकुर भीमसिंह ने भटनेर पर अधिकार कर लिया और वहा से प्राप्त धन को बीकानेर राज्य के सुपुर्द नहीं करके स्वय ने रख लिया।

बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह ठाकुर भीमसिंह द्वारा भटनेर पर अधिकार किए जाने की घटना स इतने प्रसन्न और उत्साहित नही हुए जितने कि वह धन उन्हे नही सौपने के कारण अप्रसन्न और क्रुद्ध हुए। महाराजा ने भटनेर के हसन खा भाटी से आग्रह किया कि अब वह ठाकुर भीमसिंह को किले से निकालने मे और उनसे धन प्राप्त करने मे उनकी सहायता करे। हसन खां भाटी ने सुगमता से किले पर अधिकार कर लिया, क्योंकि किले मे तैनात अन्य बीका और रावतोत सरदारों न महाराजा के आदेशो से ठाकुर भीमसिंह के पक्ष में और भाटिया के विरोध म हथियार नही उठाये। ठाकुर भीमसिंह भाटियों के भय से किला छोड कर भाग गए किन्तु वह धन साथ नहीं ले जा सके। हसन खां भाटी को वह धन

गुन सुरक्षित मिल गया, भाग्य की ऐसी ही नियति थी, यह धन न जोइये ले जा सके और न ही ठाकुर भीमसिंह।

उपरोक्त विवरण स यह स्पष्ट है कि हसन खा भाटी और ठाकुर भीमसिंह के आपस मे कुछ ऐसा विचार-विमर्श अवश्य हुआ होगा जिसके अनुसार भाटियो ने उन्हे बन्दी नही बनाकर जीवन दान दिया, जिसके बदले मे उन्होने पूरा खजाना भाटियो को सौंप दिया। वरना वह उसे बीको या रावतोतो को भी सौंप सकते थे। उसे उनसे लेने मे भाटियो को कठिनाई आती या संघर्ष करना पडता। ठाकुर भीमसिंह भटनेर छोड कर जोधपुर चले गए। कुछ का विचार है कि वह चूरू के विद्रोही ठाकुर संग्रामसिंह से जा मिले। महाराजा जोरावरसिंह के इस अविवेकपूर्ण निर्णय का परिणाम यह हुआ कि न तो उन्हे भटनेर का किला मिला और न ही भाटियो का खजाना, यह दोनो भाटियो को मिल गए, जिसके वह अधिकारी थे। बीकानेर को केवल जोइयो की शत्रुता और एक प्रमुख राठोड सामन्त का विमुख होना मिला।

महाराजा जोरावरसिंह की कार्यवाही का भाटियो और जोइयो पर प्रतिकूल प्रभाव पडा। उन्होंने मिलकर बीकानेर की सीमा पर लूट पाट करनी आरम्भ कर दी और जनता को सताने लगे। महाराजा सुजानसिंह के समय में नोहर क्षेत्र के जोइया परेशान करते थे, अब भाटी और जोइये मिलकर हिसार के क्षेत्र से भी आतंक फैलाने मे लग गए थे। *बीकानेर अकेले का इतना सामर्थ्य नही था कि वह इन दोनो को दबाने मे सफल हो सके।* इसलिए उसने रेवाडी के शासक सूरजमल से सहायता मागी। सन् 1744 ई मे दौलतसिंह और बख्तावरसिंह को बीकानेर की सेना देकर राव सूरजमल के पास रेवाडी भेजा। इनका संयुक्त अभियान सफल रहा, हासी हिसार मे शान्ति स्थापित हो गई। इसके पश्चात् महाराजा स्वयं वहा पधारे, भाटियो का दमन किया और सेना भेजकर फतेहाबाद के भाटियो को परास्त करके वहा पर अधिकार किया।

महाराजा गजसिंह (सन् 1746 1787 ई) को भटनेर के शासक हुसैन मोहम्मद भाटी ने सन् 1757 ई म, उनकी प्रतिष्ठा को आघात पहुचाया, जिससे महाराजा अप्रसन्न हुए। लेकिन भाटियो और जोइया के संयुक्त बल के सामने बीकानर निर्बल पडता था वह अपना क्रोध मन ही मन पी गये। *भाटी और जोइया सरदार लूटमार करके मौज मस्ती मारते रहे।*

बीकानेर मे महाराजा भाटियो और जोइयो को दड देने के अवसर का इन्तजार कर रहे थे। उनके सौभाग्य से सन् 1759 60 ई म हुसैन मोहम्मद भाटी और अमी. मोहम्मद जोइया के बीच तकरार हो गई और आपसी युद्ध का वातावरण बनने लगा। भाटी और जोइयो के सगठित बल के विभाजित होने स बीकानर को उन्ह दण्ड देने का मौका मिल गया। महाराजा गजसिंह ने एक सेना बख्तावरसिंह साईदासोत के नेतृत्व मे नोहर भेजी और स्वयं भी वहा पधारे। उ होने हुसैन खा भाटी को नोहर बुलाया, बातचीत की और, उनके और जोइयो के झगडे को शान्तिपूर्वक निपटा दिया। (दयालदास, बीकानेर राज्य का इतिहास, भाग 2, पृष्ठ 88) यह नही बताया गया कि भाटियो और जोइयो का आपसी विवाद किस बिन्दु पर था, *केवल भाटी सरदार को बुलाया गया जोइया सरदार को नही बुलाया।* और फिर क्या झगडा एक तरफे निर्णय से निपटा और किन शर्तों पर?

वस्तुत भटनेर के भाटी बीकानेर के आगे कभी झुके नही। भटनेर सदैव उन्हें अखरता था। बीकानेर किसी न किसी बहाने भटनेर से पेशकश ऐंठने के प्रयास करता रहा, जिसे उन्होंने कभी नही दी। पेशकश नही देने के दण्ड स्वरूप बीकानेर के शासक भटनेर को अपने अधिकार म लेने की चेतावनिया देते रहते थे। यह इच्छा सन् 1805 ई से पहले पूरी नही हो सकी।

महाराजा सूरतसिंह (सन् 1787-1838 ई) ने सन् 1790 ई मे सेना भेजकर राजपुरा के खान बहादुर खा भाटी से पेशकश के बीस हजार रुपये वसूल किए और वहा शान्ति स्थापित की। इन्होने सन् 1799 ई मे, रावतसर के रावत बहादुरसिंह के नेतृत्व मे एक दो हजार आदमियो की सेना भटनेर भेजी। उन्हें आदेश दिए कि वह भाटियो से पेशकश की बकाया राशि वसूल करें और उन्हें उचित दण्ड देकर भविष्य मे पेशकश समय पर देने के लिए पाबन्द करें। उस समय जाबती खा भाटी वहा के शासक थे। जाबती खा भाटी दबग योद्धा थे, वह इस प्रकार की धमकियो से कहा पेशकश देने वाले थे या दण्ड लेने वाले थे। उन्होने बीकानेर की सेना का सामना किया, घमासान युद्ध हुआ और बीकानेर की सेना बडी कठिनाई से डबली की मोर्चाबन्दी तोडकर वहा अधिकार करने मे सफल हुई। इस विजय की खुशी मे बीकानेर ने बीगोर के पास, भटिण्डे से दस मील पश्चिम मे एक छोटे गढ का निर्माण कराया, जिसका नाम फतेहगढ रखा गया। भाटी बीकानेर को चैन से कहा रहने देने वाले थ। कुछ समय पश्चात् जार्ज थामस की सहायता से उन्होने अपने क्षेत्र की भूमि पर पुन अधिकार कर लिया, फतेहगढ के किले को गिरा कर उसमें आग लगा दी। (दयालदास बीकानेर राज्य का इतिहास, भाग 2)

सन् 1799 ई मे सिंधिया के सरदार मरहठा वामनराव तथा अंग्रेज जार्ज थामस की सम्मिलित सेना ने जयपुर पर आक्रमण किया। भिन्न भिन्न गावो और जागीरदारो से रुपये वसूल करती हुई यह सेना फतेहपुर की ओर बढी और वहा के एकमात्र बचे हुए कुए पर अधिकार कर लिया। जयपुर की सेना के कई स्थानो पर पराजित होने से अब उसकी शक्ति क्षीण हो गई थी। जयपुर की सहायतार्थ बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह ने पाँच हजार आदमियो की सेना भेजी। इस देखकर जार्ज थामस फतेहपुर मे वापिस चला गया और वामनराव सिंधिया ने जयपुर से सधि कर ली।

उपरोक्त घटना से क्रुद्ध हो कर जार्ज थामस ने बीकानेर पर आक्रमण कर दिया। यह एक नयी विपदा थी, जिसका बीकानेर सामना नही कर सका। उन्होने थामस को दो लाख रुपयों की पेशकश देकर पीछा छुड़ाया। बीकानेर ने पेशकश की आधी रकम नगद चुकाई और बाकी के लिए जयपुर के साहूकारो के नाम हुडी लिख दी। बीकानेर की गिरी हुई साख पर साहूकारो ने हुडी का चुकारा नही किया। भाटी भी उचित अवसर की तलाश मे थ, वह चालीस हजार रुपयो की पेशकश लेकर थामस के पास पहुचे। उन्होने थामस को पेशकश देकर भटनेर क्षेत्र पर उनका अधिकार कराने और फतेहगढ के किले को नष्ट करने के लिए राजी कर लिया। थामस के लिए एक पथ दो काज हुए। उसे बीकानेर को उनकी हुडी के लौटाए जाने के लिए दण्ड देने का अवसर मिल गया और साथ मे भाटियो ने नगद पेशकश भी नजर कर दी। उसने भटनेर के क्षेत्र पर भाटियो का अधिकार करवा दिया

और फतेहगढ के किले को आग लगाकर नष्ट कर दिया। सौभाग्यवश इसी समय बीकानेर को पटियाला के सिखों की सेना की सहायता प्राप्त हो गई। इससे डरकर थामस वापिस लौट गया। (दीनानाथ खत्री, बीकानेर राज्य का इतिहास)

यह ऐतिहासिक तथ्य हैं कि सन् 1730 ई मे सुजानसिंह नोहर गए और भटनेर के भाटियो से बीस हजार रुपये का नजराना लेकर आ गए। सन् 1740 ई के बाद जोरावरसिंह नोहर क्षेत्र मे गए और फतेहाबाद के भाटियो को परास्त किया और किले पर अधिकार किया। सन् 1759-60 ई मे गजसिंह नोहर गए और भाटियो और जोइयो के झगडे को सुलझाया। सन् 1790 ई मे सूरतसिंह ने बीस हजार रुपये राजपुरा के भाटियो से वसूल किये और बकाया वसूल करने सेना भटनेर भेजी। क्या कारण था कि चारो राजाओ मे से एक भी स्वय भटनेर नही गए ?

जाबती खा ने बीकानेर से बदला लेने के लिए आक्रमण किया। उसने एक 7,000 आदमियो की सेना भेजकर सूरतगढ क्षेत्र पर अधिकार किया। इस सेना के साथ म मगलूना और बोलारा के जोइया सरदार भी थे। जाबती खा से बीकानेर की सन्धि हो जाने से वह सेना वापिस लौट गई। बाद मे कुम्भाणा के ठाकुर की सहायता से महाराजा सूरतसिंह ने सोढल गांव के पास सूरतगढ नगर बसाया।

बीकानेर ने भाटी और जोइयो के साथ विश्वासघात करके सन्धि का उल्लघन किया और सन् 1801 ई मे भटनेर के विरुद्ध अपनी सेना भेजी। यह सेना भटनेर को कोई क्षति नहीं पहुचा सकी। इसने फतेहगढ पर अधिकार करके वेहराजका, टीबी और अबोहर मे थाने स्थापित किए।

बीकानेर ने सन् 1804 ई मे एक बडी सेना अमरचन्द सुराणा के नेतृत्व मे भटनेर भेजी, इसमे चार हजार सैनिक थे। इस सेना ने भटनेर के किले को घेर लिया। जाबती खा ने सुदृढ सुरक्षा के प्रबन्ध कर रखे थे। किले का छ माह तक घेरा रहा। इस अवधि मे जहां अनेक भाटी और जोइया मारे गए, वहा बीकानेर की सेना के 70 सरदार भी मारे गए। इतनी लम्बी अवधि के घेरे के कारण किले मे रसद गोला बारूद एव अन्य साज सामान की कमी होने लगी थी। आखिर जाबती खा और उसके बचे हुए सैनिक, सन् 1805 ई म किला खाली करके भटनेर से राजपुरा (रणिया) चले गए, जहा टीबी क्षेत्र मे उनके गांव थे।

खाली किले मे बीकानर की सेना ने गाजे-बाजे के साथ प्रवेश किया। उस दिन मगलवार था, इसलिए भटनेर का नाम बदल कर 'हनुमानगढ' रखा गया। अभी भी यह इसी नाम से जाना जाता है। महाराजा सादूलसिंह के समय (सन् 1943-50 ई) मे कुछ समय के लिए इसका नाम सादूलगढ रखा गया था लेकिन वापिस हनुमानगढ कर दिया गया।

सन् 1805 ई की भटनेर विजय का समाचार कुछ दिनो बाद म जब बीकानेर पहुचा तब यहा तोपें दागी गई, उत्सव और खुशिया मनाई गयी। अमरचन्द सुराणा को उनकी सराहनीय सेवाओ के लिए चादी की पालकी भेंट की गई और उन्हें बीकानेर राज्य का दीवान बनाया गया।

सन् 1822-23 ई म महाराजा सूरतसिंह ने ब्रिटिश शासन से प्रार्थना की कि टीबी परगने के भाटियो और जोइयों के 41 गांवो पर बीकानेर राज्य का आधिपत्य मानते हुए

यह गाव बीकानेर राज्य को दिए जायें। ब्रिटिश शासन ने एडवर्ड ट्रेविलियन से जाच करवाने के बाद बीकानेर का दावा झूठा पाये जाने प० उनकी प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। सन् 1837 ई मे ब्रिटिश शासित पजाब प्रान्त और बीकानेर राज्य की सीमा का सही निर्धारण किया गया। उस समय भी तत्कालीन महाराजा रतनसिंह ने बीकानेर राज्य का इन 41 गांवो पर पुन दावा प्रस्तुत किया। लेकिन एक बार फिर उनका दावा अस्वीकार कर दिया गया।

सन् 1845 ई मे भोजालाई गांव के अरजो और हरिसिंह बोदावत को बन्दी बनाकर भटनेर के किले मे कारावास मे रखा गया था। इसी वर्ष हिन्दूमल ने नथमल कामदार से भटनेर का प्रशासन सम्भाला।

सन् 1857 ई के भारतीय सैनिको के विद्रोह को दबाने मे महाराजा सरदारसिंह ने ब्रिटिश शासन को तन मन धन से सहायता दी। ब्रिटिश शासन ने बीकानेर द्वारा उपलब्ध कराई गई इन सेवाओ की सराहना करते हुए, सन् 1861 ई मे भाटियो और जोइयो के यह 41 गाव बीकानेर को पुरस्कार के रूप मे बख्शे।

इस प्रकार सन् 295 ई से चलते आ रहे भाटियो के भटनेर पर स्वतन्त्र शासन का अन्तिम लोप, बीकानेर ने 1510 वर्ष पश्चात् सन् 1805 ई मे किया। बीकानेर के सन् 1954 ई मे राजस्थान राज्य मे विलय के साथ हनुमानगढ का भी राजस्थान म विलय हो गया। बीकानेर राज्य ने भटनेर का नाम 'हनुमानगढ' मे बदल कर इसके ऐतिहासिक अस्तित्व को नष्ट करने का कुप्रयास किया था, उन्हे ऐसा नहीं करना चाहिए था।

राव केलण की सन्तानें, भाटी मुसलमान, भटनेर मे अपनी स्वतन्त्रता और अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अनेक कठिनाइयों को झेलते हुए शत्रुओ मे चार सौ वर्षों तक अकेले जूझते रहे, लेकिन पूगल के राव भटनेर को भुला चुके थे, उन्होने कभी भटनेर के भाटियो को सशक्त सहायता नहीं पहुचाई। और न ही कभी इन रावो ने अपने वशजो पर हो रहे बीकानेर के अत्याचारो को रोका। सन् 1650 ई से पूगल का स्वय का अस्तित्व भी अधरझूल म था, उसे बीकानेर परेशान करता था और जैसलमेर वैशाखियों का सहारा देता था। इस स्थिति म पूगल के भाटियों ने भटनेर के भाटियो के लिए कुछ नही किया। शायद पूगल की भी बेबसी थी। केवल 50 वर्ष के अन्तराल मे, पूगल (सन् 1783 ई), देरावर (सन् 1763 ई) और भटनर (सन् 1805 ई) समाप्त हो गए।

अध्याय–सात

रावल पूनपाल और उनका समय

जैसलमेर के रावल चाचगदेव (प्रथम) के तेजसिंह और करणसिंह दो पुत्र थे। इनके पश्चात् कनिष्ठ पुत्र करणसिंह सन् 1242 ई में राजगद्दी पर बैठे। इन्होंने 41 वर्ष की लम्बी अवधि, सन् 1283 ई., तक राज्य किया। इनके पुत्र लक्ष्मनसेन ने केवल पाच वर्ष, सन् 1288 ई, तक राज्य किया। वह अतीत के काल ऐसे थे कि आन्तरिक कलह, बीमारिया, बाहरी आक्रमण पडोसियो के आपसी युद्ध, आदि के कारण जीवन सकटमय रहता था और थोडी सी उग्रता जानलेवा हो सकती थी। ऐसे ही अनिश्चित वातावरण मे, सन् 1288 ई मे, कुमार पुण्यपाल (पूनपाल) जैसलमेर के रावल बने। इन्हें पूनपाल के नाम से ज्यादा जाना जाता था। रावल पूनपाल को केवल दो वर्ष और पाच माह राज्य करने के पश्चात्, सन् 1290 ई मे, पदच्युत कर दिया गया।

आगे का वर्णन करने से पहले उस समय की बाहरी और आन्तरिक स्थिति को समझने से वस्तुस्थिति का सही और गुणात्मक ज्ञान होगा। रावल पूनपाल के रावल बनने से पहले की और पदच्युत करने के बाद की पडोसी सिन्ध व मुलतान की व्यवस्था जाननी जरूरी है। इस व्यवस्था का दिल्ली के शासन से सीधा सम्बन्ध था। उस समय उत्तरी और उत्तर पश्चिमी भारत की राजनैतिक, सामाजिक और बाहरी उथल-पुथल के प्रभाव और बिगडते हुए वातावरण के कुप्रभाव से जैसलमेर अछूता नही रह सकता था। जैसलमेर एक पिछडा हुआ अलग राज्य था, जो भारत की मुख्य धारा से छूटा हुआ था। विस्तृत फैला हुआ रेगिस्तान, रेत के टीबो की समानातर श्रेणिया, पानी एव जीवन के लिए आवश्यक साधनो का अभाव, दूर-दराज की बस्तिया और गाव, लम्बे और दुर्गम मार्ग, भौगोलिक कठिनाइया और विपरीत मौसम आदि ऐसे अनेक कारण थे, जिससे घटनाओ का जैसलमेर तक पहुचना अत्यन्त कठिन था, लेकिन चाहे विलम्ब से सही, बाहरी घटनाएँ, उनके अच्छे या बुरे परिणाम और उनमे उत्पन्न होने वाले शासकीय घटनाक्रम से जैसलमेर लम्बे समय तक अछूता नही रह सकता था। इस प्रकार कुछ अन्तराल से जैसलमेर भी बाहरी घटनाओ से जुड जाता था और स्थानीय सत्ता सन्तुलन पर इनकी छाया अवश्य पडती थी।

गुलाम वश के शासक ग्यासुद्दीन बलबन (सन् 1266 से 1286 ई) दिल्ली के सुलतान थे, यह एक कठोर अनुशासन वाले, इरादो के पक्के और अत्यन्त योग्य शासक थे। इन्होंने कडाई से शासन किया और इनके आदेशो की अवहेलना करने वालो या न्याय और शान्ति भग करने वाले सूबेदारो, मुखियो, सामन्तो और राजाओ को यह अनुकरणीय दण्ड देते थे। साथ ही योग्यता, साहस, ईमानदारी, निष्ठा और स्वामिभक्ति को पुरस्कृत भी करते थे। इस्लाम धर्म और मुसलमानो का प्रभाव सिन्ध और मुलतान के क्षेत्रो मे, सिन्ध

और सतलज नदियो की घाटियो के पूर्वी प्रदेशो म निरन्तर बढ रहा था। सुलतान बलबन के मुलतान के सूबेदारो की शह से लगाओ और बलोचो ने बीकमपुर से जैतुग भाटियो को और पूगल स पाहू भाटियो का निकाल कर वहा अधिकार कर लिया था। रावल लक्ष्मनसेन (सन् 1283 88 ई) के समय सुलतान बलबन ने देरावर सहित पूगल और बीकमपुर क्षेत्र अपने अधिकार म ले लिए थे और स्थानीय लगा और बलोच शासको ने उनकी प्रभुसत्ता स्वीकार कर ली थी। सुलतान बलबन ने असहयोगी हिन्दुओ को दण्डित किया और इस क्षेत्र मे न्याय और सुरक्षा स्थापित की।

भाग्य ने सुलतान बलबन का साथ नही दिया। उनका समय समाप्त हो चुका था। उनके स्थान पर काईकाबाद सुलतान बने (सन् 1286 90 ई), इन्होंने चार वर्ष शासन किया, अपना समय सुन्दरियो और मदिरा के सग गवाया। यह रावल पूनपाल के समकालीन शासक थे।

गुलाम वश के बाद मे खिलजी वश का शासन, सन् 1290 से 1320 ई तक चला। इसे यो समझें कि रावल पूनपाल का पदच्युत होना और गुलाम वश का अन्त होना, दोनो घटनाए दुर्भाग्य से एक साथ हुई। खिलजियो ने मगोल आक्रमणो को सफलता से रोका। उत्तर पश्चिम स आने वाले मगोल मुसलमान नही थे। कई पाठको की यह भ्राति है कि मगोल मुसलमान थ, सही नही है। खिलजी की सेना बन्दी बनाये गए मगोलो को धर्म परिवर्तन करने के लिए बाध्य करती थी। जलालुद्दीन खिलजी ने, सन् 1290 से 1296 ई तक, केवल छ वर्ष राज्य किया। इनके भतीजे और जवाई अल्लाउद्दीन खिलजी ने इनका वध करवा दिया और सन् 1296 ई मे स्वय शासक बन बैठे। इन्होने बीस वर्ष, सन् 1316 ई, तक राज्य किया। यह खिलजी वश के सबसे शक्तिशाली शासक थे। इन्होने शान्तिप्रिय और धर्मभीरू उप महाद्वीप मे अनावश्यक रक्तपात करके इसे उजाडा। यह विजेता जल्दबाजी म थे, थोडे से थोडे समय मे अधिक से अधिक क्षेत्र को विजय करके अपनी प्रभुसत्ता स्थापित करना चाहते थे। यह अपने प्रतिद्वन्द्वी को अपनी सना की सख्या और अत्याचार से आतकित करते और विरोधी सेना, जनता और उनके समर्थकों और सहयोगिया के साथ म अमानवीय क्रूरता और व्यवहार करते। सुलतान जलालुद्दीन और अल्लाउद्दीन खिलजी के समय, सन् 1293 94 ई और 1299-1305 ई. मे, जैसलमेर के किले को लम्बे समय तक घेरा गया और सन् 1302-1303 ई मे चित्तौड के किले को भी घेरा गया। तीनों ही घेरो म राजपूतो ने अद्भुत वीरता दिखाई, क्षत्राणियो ने जौहर किए और योद्धाओ न आत्मोत्सर्ग किया।

तर्जसिंह के पुत्र और रावल चाचगदेव (प्रथम) क पौत्र रावल जैतसी दिल्ली के सुलतान जलालुद्दीन क समकालीन शासक थ। इनके आपसी सम्बन्ध कडवे थे। भाटिया का निरन्तर प्रयास रहता था कि यह सुलतान बलबन के समय में दिल्ली द्वारा अधिकार में लिए गए उनके पूर्वजों के क्षेत्रो को मुक्त करायें और उन पर से सिन्ध और मुलतान के शासको का नियन्त्रण समाप्त करके बलोचा और लगाओ के हस्तक्षेप और दबाव मे राहत की सास लें। दिल्ली के सुलतान जैसलमेर हथियाने के प्रयास मे लगे रहते थे क्योंकि सिन्ध और मुलतान का दिल्ली से सम्पर्क भाटी बाहुल्य क्षेत्रो से होकर था और भाटी इन प्रदेशो मे आने जाने

वाले व्यापारिक काफिलो और सेना के आवागमन मे बाधा पहुचाते थे। सिन्ध और मुलतान से दिल्ली ले जाने वाले शाही कोष को इन प्रदेशो से सुरक्षित ले जाना दुष्कर था। भाटी डाके डालकर या छापे मारकर इस कोष को लूट लेते थे। भाटी सदैव साहसी, दिलेर, स्वाभिमानी और अपनी वचनबद्धता के पक्के थे।

सन् 1292 ई मे एक बार भाटियो ने सिन्ध से दिल्ली ले जाये जा रहे तेरह करोड रुपयो के शाही खजाने को रोहडी के पास लूट लिया और रक्षको को मार भगाया। इसलिए सुलतान जलालुद्दीन खिलजी ने सन् 1293 ई मे नबाब महबूब खा के नेतृत्व मे एक सशक्त सेना जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिए भेजी। नबाब महबूब खा को निर्देश थे कि वह भाटियो को शाही खजाना वापिस लौटने के लिए बाध्य करें और खजाना लूटने के लिए उन्हे दण्डित भी करें। उनका यह विचार था कि भाटी शाही सेना का जैसलमेर की ओर आना सुनकर ही खजाना स्वत समर्पित कर देंगे और आक्रमण नही करने के लिए उनसे सन्धि का प्रस्ताव रखेंगे। शाही सेना की इन आशाओ पर पानी फिर गया। शाही सेना के जैसलमेर पहुचने से पहले ही गुप्तचरो ने उन्हे भाटियो द्वारा युद्ध के लिए की जाने वाली तैयारियो और किले के सुरक्षा प्रबन्धो की जानकारी दे दी।

रावल जैतसी और उनके पुत्रो, मूलराज और रतनसिंह, ने किले की सुरक्षा के प्रबन्धो का दायित्व सम्भाला। मूलराज के पुत्र देवराज और पौत्र हमीर ने किले के बाहर आक्रमण का सामना करने का दायित्व उठाया। किले के बाहर रह कर पिता पुत्र देवराज और हमीर ने शत्रु की सेना से लोहा लेना आरम्भ किया, उनके पानी के श्रोतों को तहस-नहस कर दिया, सेना के लिए आने वाली रसद और सैनिक साज-सज्जा की नाकेबन्दी करके उसे लूटा। उन्होंने दिन और रात मे शत्रु सेना पर छापे मारने शुरू किये। इन विपदाओ से निपटने के लिए सुलतान की सेना के पास कोई वैकल्पिक साधन नही थे। उन्हे दिल्ली और अन्य किलो से कुमुक मंगानी पडी। देवराज और हमीर को जोडी का दृढ निश्चय था कि कुछ ही दिनो मे शाही सेना को किले की घेराबन्दी उठाकर सन्धि का प्रस्ताव करना पडेगा क्योकि उनको दिख रहा था कि शाही सेना सही सलामत वापिस जाने की स्थिति मे नहीं थी। इस युद्ध में राजकुमार देवराज और हमीर ने अद्भुत शौर्य दर्शाया। दुर्भाग्यवश युद्ध के दौरान सन् 1293 ई मे रावल जैतसी की किले मे मृत्यु हो गई। चलते हुए युद्ध मे ही मूलराज का राज्याभिषेक किया गया। भाटी सेना के अधिकतर योद्धा जैसलमेर की रक्षा करते हुए काम आ गए थे। इधर शत्रु सेना भाटियो की क्षति का लाभ उठाकर और अधिक दबाव डाल रही थी ताकि वह बाध्य होकर सन्धि का प्रस्ताव करें। भाटियो ने उनकी आशाओ और अभिलाषाओ पर पानी फेरते हुए, वह युद्ध मे नई तेजी लाए। स्त्रियो को जौहर करने के लिए प्रोत्साहित किया और स्वयं साका करने की तैयारी मे लग गए। शत्रु सेना भाटियो की सेना से कई गुना अधिक थी, उनके हथियार और सेना की साज-सज्जा जैसलमेर की सेना से उत्कृष्ट थी। उधर किले मे रसद की कमी, सैनिको की निरन्तर घटती संख्या, साधनो के बढते हुए अभाव और धीरे-धीरे गिरते मनोबल के कारण उन्हें जौहर और साका करने का अभूतपूर्व निर्णय लेना पडा। यह रावल मूलराज की परीक्षा की घड़ी थी। शाही सेना घोर विपदाओ और क्षति को सहती हुई घेरा जमाये हुए थी।

स्त्रियो ने किले मे जौहर किया। योद्धाओ ने केसरिया बाने पहन कर किले के द्वार खोल दिए और वह शत्रु सेना पर टूट पडे। यह उनका देश के लिए अन्तिम उत्सर्ग था। इस युद्ध मे सीहड भाटियो का बलिदान उत्कृष्ट रहा। उनके अनेक योद्धा जैतसी, मूलराज, रतनसिंह, देवराज और हमीर के साथ कन्धे से कन्धा लगाकर लडे। रावल मूलराज और उनके भाई रतनसिंह ने सन् 1294 ई. मे युद्ध मे वीरगति पाई। जैसलमेर का किला शाही सेना के अधिकार मे आ गया। वह खजाने को किले के तहखानो मे ढूढते रहे। जौहर की राख के सिवाय उनके हाथ कुछ भी नही लगा। शाही सेना विजय का सन्तोष लेकर दिल्ली लौट गई। वह कुछ पहरेदार पीछे छोड गई थी। यह भी कुछ दिनो बाद मे किले के ताले लगाकर चले गए।

रावल मूलराज के बाद मे दूदा जसोड भाटी जैसलमेर के रावल बने। इन्होने सन् 1294 ई से 1305 ई तक राज्य किया। इनके बारे मे प्रसिद्ध है कि यह पाच भाई थे, किले के घेरे के दौरान इनके बडे भाई ने मरने का स्वाग रचा, जिसकी अर्थी को अन्य चार भाई कन्धे लगाकर किले के बाहर दाह सस्कार करने लाये। सुलतान की सेना ने मुर्दा जानकर इन्हे रोका नही। जब शाही सैनिक किले के द्वारो के ताले लगाकर चले गए, तब इन लोगो ने ताले तोडकर अपने आदमियो के साथ किले मे प्रवेश किया और दूदा जसोड भाटी को रावल घोषित करके उनके राजतिलक कर दिया और तोपें दाग दी। दूदा जसोड के इस विपत्ति के समय में रावल बनने का अन्य भाटियो ने विरोध नही किया, क्योकि जिस त्रासदी मे से वे गुजर चुके थे उसे इतना जल्दी भूलाना सम्भव नही था। राजगद्दी के काटो के ताज को जिसने पहना, ठीक किया। रावल दूदा जसोड ने अच्छी शासन व्यवस्था की।

जैसा कि ऊपर कहा है भाटी साहसी और दिलेर थे, रावल दूदा के एक भाई तिलोकसी भाटी ने सन् 1299 ई मे अजमेर के समीप अनासागर मे स्थित सुलतान खिलजी के घोडों के फार्म पर छापा मारा और चुने हुए अनेक घोडे घोडियो को हाककर जैसलमेर की राह ली। इस फार्म मे अच्छी नसल के घोडे-घोडिया शाही सेना के लिए और स्वय खिलजी के लिए पाली-पोसी जाती थी। इस अप्रत्याशित घटना का समाचार सुनकर अल्लाउद्दीन खिलजी स्तब्ध रह गए। उनके मन मे विचार उठा कि इतने कडे सुरक्षा प्रबन्धो के होते हुए भी अगर भाटी घोडे-घोडियां हाककर ले जा सकते थे तो वह किसी दिन दिल्ली की सुरक्षा को भी चुनौती दे सकते थे। उनके दिमाग मे सन् 1294 ई के जैसलमेर के युद्ध की और भाटियो की वीरता की याद ताजा हो गई। जहा एक तरफ उनके मन मे भय से सिहरन हुई थी, वही स्वय एक वीर योद्धा होते हुए उन्होने तिलोकसी की दिलेरी को मन ही मन अवश्य सराहना की होगी। इस घटना से सुलतान खिलजी की प्रतिष्ठा को बडी ठेस पहुची, शत्रुओ और असन्तुष्टो ने मन ही मन उनकी हसी उडाई।

उपरोक्त घटना जैसलमेर के सन् 1294 ई. के साके के केवल पाच वर्ष बाद, सन् 1299 ई की है। सुलतान ने एक बडी सेना कमलुद्दीन और मालिक काफूर के नेतृत्व मे जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिए भेजी। इन्हे आदेश दिये गए कि वह शाही घोडे-घोडियों को जहा भी वह हो वहा से उन्हे बरामद करें और भाटियो को सख्त दण्ड दें। उनके मन में शायद यह विचार भी हो कि पाच वर्ष पहले ही मार खाए हुए भाटी इस बार आत्म-

समर्पण कर देंगे और शाही सेना आसानी से किले पर अधिकार कर लेगी। मन ही मन वह भाटियो की वीरता के कायल थे, उनसे युद्ध करने मे शाही सेना के अत्यधिक जान-माल की हानि होने का उन्हे अदेशा था। भाटियो के गुप्तचरो और द्रुतगामी साडो पर सवार राइको ने सुलतान की सेना की प्रगति और उनके द्वारा राज्य मे किये गए लूटमार और हानि की सूचना रावल दूदा को दी। उन्होंने किले की सुरक्षा के पहले की तरह कडे प्रबन्ध किए, पर्याप्त रसद और साज-समान इक्ट्ठे किए। उन्होंने सेना और सेनापतियो से सलाह करके कई वर्षों के घेरे से निपटने और युद्ध सचालन और नेतृत्व के उपाय सुझाय। भाटियो ने पहले की तरह ही सुलतान की सेना से विरोध किया, उनके रसद और पानी के श्रोत नष्ट किए जाने लगे। घेरा देकर बैठी हुई सेना और बाहर से आने वाली कुमुक पर भाटी दूर-दूर से आकर छापे मारकर रेतीले टीबो की अभेद्य सुरक्षा म शरण लेते।

शाही सेना किले की रक्षा व्यवस्था को तोडने का बार बार प्रयास करती परन्तु वह किले के अन्दर मे और बाहर से दोहरी मार खाकर फिर शान्त हो जाती। यह घेराबन्दी सन् 1305 ई तक, छ वर्ष चली। शाही सेना के पीछे दिल्ली के अचूक साधन थे, सेना की क्षतिपूर्ति होती रहती थी। घायलो और थके हुए सैनिको के स्थान पर नये सैनिक आते रहते थे, यह अदला बदली छ वर्षों तक चलती रही। उधर जैसलमेर के साधन सीमित थे, सैनिक भी थोडे थे, कमजोर अर्थ व्यवस्था और धनाभाव पहले भी था। अभी पाच वर्ष पहले के युद्ध की क्षतिपूर्ति भी नही हुई थी। उस समय के बालक अभी जवान नही हुए थे, कई जवानो की शादिया अभी हुई ही थी, अन्यो की होनी शेष थी। भाटी इस प्रकार के अभाव और मानसिक तनाव म आक्रमण का सामना कर रहे थे। आखिर उन्होने वही निर्णय लिया जो वीरोचित था, भाटियो की परम्पराओ के अनुकूल था, जिससे उनकी भावी पीढियो को दाग नही लगे। स्त्रियो ने किले म जौहर किया, योद्धाओ ने केसरिया बाना पहन किले के द्वार खोल दिए।

वीर उत्तैराव और जसोड भाटी किले से पहले पहल बाहर निकले। उन्होने शत्रु सेना का सहार किया, वह सिर कटे हुए लडते रहे और जब तक रक्त की अन्तिम बूद उनके शरीर से गिरी तब तक लडते रहे। आखिर उनके रक्तहीन शरीर निढाल हो गए। इन उत्तैराव व जसोड भाटियो की समाधि जैसलमेर के किले मे है, इसकी पूजा अर्चना की जाती है। उसके सामने सभी भाटियो का सिर श्रद्धा से झुक जाता है।

रावल दूदा के भाई तिलोकसी ने किले के द्वार खोलने के बाद मे युद्ध का सचालन सम्भाला। हुआ वही जिसके लिए साका किया जाता था, रावल दूदा, भाई तिलोकसी और अन्य भाटी परिजन युद्ध मे काम आए। विजय शाही सेना की हुई, भाटी जीवित बचे ही नही, वह पराजय का टीका किसके लगाती। किले के अन्दर प्राणी का नामोनिशान नही था, केवल जौहर की धधकती आग और उसके शान्त होने पर राख मे बिखरे हड्डियो के टुकडे थे, जिन्हे अन्तिम क्रिया-कर्म के लिए चुगने वाला कोई नही बचा था।

सुलतान खिलजी के आदेशो के अनुसार जैसलमेर खालसे कर लिया गया। वहा शाही थाने बैठाये गए और दिल्ली द्वारा नियुक्त प्रशासक शासन चलाने लगे। रावल मूलराज के छोटे भाई राणा रतनसिंह के पुत्र घडसी को भाटियो ने सन् 1305 ई में नया रावल

वनाया। यह बीकमपुर मे रहने लगे, क्योंकि जैसलमेर भाटियो से खालसे कर लिया गया था।

रावल घडसी का विवाह मेहवा के रावल मल्लीनाथ राठौड की बुआ विमलादेवी से सन् 1305 ई० मे हुआ था। विमलादेवी की सगाई सिरोही के देवडो मे यहा हुई थी। रावल घडसी किसी युद्ध में घायल होने के बाद मेहवा में कुछ दिन उपचार और मरहम पट्टी के लिए रुके। इस अवधि मे विमलादेवी ने उनकी बडे लगन और आत्मीयता से सेवा की। इससे उनका सहवास हो गया और राठौडो ने उनका विवाह रावल घडसी से कर दिया। उस युग मे इस प्रकार के विवाह को समाज मान्यता देता था, इसमे कोई दोष नही था। फिर राजसत्ता के सम्बन्ध कैसे भी हो, जाति और समाज उन्हे स्वीकार कर लेता था। विमलादेवी रावल मल्लीनाथ की बहन नही हो सकती, वह उनकी बुआ होनी चाहिए थी। क्योकि रावल मल्लीनाथ की पुत्री और कुमार जगमाल की बहन से पूगल के राव केलण का विवाह सन् 1385 ई मे हुआ था, और रावल केहर (सन् 1361-96) की पुत्री और राव केलण की बहन का विवाह कुमार जगमाल से इसके बाद मे हुआ था। सन् 1361 ई मे रावल घडसी की मृत्यु के पश्चात् जब इन्होने केहर को गोद लिया था तब यह जीवित थी। यह रावल घडसी के मरने के छ माह बाद मे सती हुई थी। इससे सामान्यतया ऐसा प्रतीत होता है कि विमलादेवी रावल मल्लीनाथ की बुआ होनी चाहिए थी।

रावल मल्लीनाथ और उनके पुत्र, राजकुमार जगमाल के अल्लाउद्दीन खिलजी से अच्छे सम्बन्ध थे। दिल्ली के दरबार मे उनकी मान्यता थी। उन्होने रावल घडसी को जैसलमेर दिलाने के लिए अनेक प्रयास किए लेकिन अल्लाउद्दीन खिलजी स्वय के जीवन-काल में भाटियो को जैसलमेर वापिस करने के लिए राजी नही हुए। वह भाटियो द्वारा जलालुद्दीन खिलजी के समय तेरह करोड रुपयो के खजाने की लूट और स्वय के समय के अनासागर के डाके को भुलाये भी नही भुला सके। इसके उपरान्त भाटियो के दो साको का होना उन्हें घुम रहा था। भाटियो की अन्तिम क्षण तक लडने और मरने से नही डरने की नीति से भविष्य के लिए वह भयभीत और सतर्क थे। सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी की मृत्यु जनवरी, सन् 1316 ई मे हुई। इसके तुरन्त बाद मे इनके पुत्र मुबारक शाह ने जैसलमेर का अधिकार रावल घडसी को सौंप दिया। रावल घडसी ने, सन् 1316 से 1361 ई तक, 45 वर्ष राज्य किया। इन्होने जैसलमेर मे अनेक भवन बनाए, जिनकी कला उत्कृष्ट श्रेणी की थी। गडीसर तालाब का निर्माण भी इनके समय मे हुआ था। एक दिन यह तालाब पर से लौट रहे थे, तभी भीम जसोड भाटी ने इनका वध कर दिया। रानी विमलादेवी ने स्थिति को तुरन्त सम्भाला, कडाई से शान्ति स्थापित की और शासन व्यवस्था बिगडने नही दी। विमलादेवी ने प्रमुख भाटियो की राय से, रावल मूलराज के पुत्र देवराज के पौत्र केहर को गोद लिया। यह राजकुमार हमीर के पुत्र थे।

रावल केहर ने, सन् 1361 से 1396 ई तक, 35 वर्ष राज्य किया। चूंकि रावल केहर की मृत्यु राजकुमार देवराज की मृत्यु के सौ वर्ष बाद मे हुई थी, इसलिए यह उनके (देवराज के) पुत्र न होकर हमीर के पुत्र होने चाहिए।

पूगल के यशस्वी राव केलण, रावल केहर के ज्येष्ठ पुत्र थे। यह सन् 1414 ई मे

राव रणकदेव के पश्चात् उनकी सोढी राणी के गोद आए, पूगल के राव बने और पूगल के केलण भाटियो का अलग से वंश स्थापित किया।

यहा यह बताना सार्थक है कि सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी ने सन 1297 म गुजरात, सन् 1301 ई में रणथम्बोर, सन् 1303 ई म चित्तौड़, सन् 1305 ई मे मालवा, उज्जैन, मन्डेर, चन्देरी, धार, विजय किए। उसके आक्रमणों की गति के सामने कोई राज्य नही टिक सका, वह निर्दयता से नरसहार करते और अत्यन्त क्रूरता का उपयोग करते, जिसके हिन्दू राजपूत राजा आदी नही थे। वह विजेता जल्दबाजी मे थे, उन्होंने अच्छे और बुरे का ध्यान छोड दिया था, वह अपने क्षेत्र के विस्तार म और अधिकाधिक क़िले जीतने मे विश्वास रखते थे। लेकिन भाटियो के साहस और हिम्मत की दाद देनी होगी कि वह उनके सामने माचिस की तरह बिखरे नहीं। उन्होने दोनो बार खिलजियो का वर्षों तक डटकर विरोध किया, जबकि उनसे ज्यादा शक्तिशाली और सम्पन्न राज्य उनकी आंधी के सामने कुछ दिनो या महिनो ही टिक सके।

अल्लाउद्दीन खिलजी (सन् 1296-1316 ई), ग्यासुद्दीन तुगलक (सन् 1320-1325 ई), मोहम्मद तुगलक (सन् 1325-1351 ई), फिरोज तुगलक (सन् 1351 1388 ई), रावल घडसी के समय मे दिल्ली के शासक थे। इन शासको के समय भारत म सत्ता म बडी उथल पुथल रही।

मोहम्मद तुगलक ने पहले सन् 1327 ई मे राजधानी दिल्ली से दौलताबाद ले जाने का अभियान चलाया, वह असफल रहे और आज एक ऐतिहासिक मखौल के रूप मे याद किये जाते हैं। सन् 1328 ई मे मुलतान के शासक ने दिल्ली के विरुद्ध विद्रोह कर दिया, 1338 और 1339 ई मे बगाल और कश्मीर मे दिल्ली के अधीन शासको ने अपने आपको स्वतन्त्र घोषित कर दिया। आखिर सन् 1351 ई मे सिन्ध मे विद्रोह दबाते समय वह मारे गए।

फिरोज तुगलक, ग्यासुद्दीन तुगलक के भाई रजब के पुत्र थे, इनकी माता अबोहर के भाटी शासक रणमल की पुत्री थी। इस प्रकार सुलतान फिरोज तुगलक भाटियो के भानजे थे।

फिरोज तुगलक ने सिन्ध और मुलतान के अभियान को सन् 1351 ई में मोहम्मद तुगलक की मृत्यु के बाद जारी रखा। इन्हे भाटियो के भानजे होने के नाते पहले रावल घडसी का और उनके बाद में रावल केहर का समर्थन रहा। इस सक्रिय समर्थन के कारण सिन्ध के विद्रोही शासक जाम बबानिया ने सन् 1363 ई मे आत्मसमर्पण किया। फिरोज तुगलक की सन् 1388 ई मे मृत्यु के पश्चात् इनके लम्बे चौडे साम्राज्य की बागडोर किसी से नही सम्भली। वह साम्राज्य बिखर गया। दिल्ली के शासकों की बिगडी हुई दशा का लाभ उठाकर, तैमूर ने सन् 1397 ई में मुलतान पर आक्रमण किया और सन् 1398 ई मे भाटियो को भटनेर मे परास्त किया। सन् 1396 ई मे रावल केहर की मृत्यु के कारण भाटियो की शक्ति का ह्रास हुआ, जिससे भटनेर अकेला पड गया था। तैमूर के इन विजय अभियानो ने भविष्य के मुगल साम्राज्य की नींव रखी।

इस प्रकार के बदलते हुए वातावरण और अस्थिर घटनाचक्र में रावल पूनपाल को सन 1290 ई म जैसलमेर छोडना पडा। रावल पूनपाल स्वतन्त्र प्रकृति के शासक थे।

राजकाज में सामन्तो का हस्तक्षेप इन्हे पसन्द नही था। प्रजा के प्रति न्यायप्रिय होने के कारण यह दुराचारी सामन्तो को दडित करते और जन समस्याओं के समाधान मे रुचि रखते थे। इन कारणो से सामन्तो म असन्तोष फैला और वह इनका विरोध करने लगे। विरोधियों में सीहड भाटी सब के अगुआ थे, जिनमे माणक मल, हुशान, बीकमसी सोहड आदि प्रमुख थे। इन सामन्तो ने पहले के रावला, करणसिंह और लक्ष्मन, (सन् 1242-88 ई), की गति भी बिगाडी थी। इसलिए इन्होंने रावल पूनपाल की भी वैसी ही गति करने की ठानी। यह सामन्त राज्य मे सुदृढ स्थिति मे थे, जनता पर इनके भय और आक्रोश का दबदबा था, भाटी सरदार भी पूर्व के रावलो के साथ में इनके व्यवहार के परिणामो के कारण अनिश्चितता की स्थिति में इन्ही का साथ देना स्वय के लिए हितकर समझते थे।

सुलतान बलबन के शासनकाल (सन् 1266-86 ई) मे लगाओ और बलोचा ने मुलतान के शासको की सहायता से, सन् 1277-88 ई के बीच, पूगल से पाहू भाटियो को और बीकमपुर से जैतूग भाटियो को परास्त करके निकाल दिया था। सन् 1290 ई मे रावल पूनपाल इन भाटियो की सहायतार्थ सेना लेकर पूगल और बीकमपुर क्षेत्र मे गए हुए थे। उनका यह अभियान असफल रहा, वह भाटियो के खोये हुए प्रदेश लगाओ और बलोचो से खाली नही करा सके। कुछ समय पश्चात् जब वह जैसलमेर लौटे तो उन्होने पाया कि उनके विरोधियो ने उनकी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर जैतसी को रावल घोषित कर दिया था।

रावल जैतसी, रावल चाचगदेव (प्रथम) के पौत्र और तेजसिंह के पुत्र थे। यह रावल चाचगदेव द्वारा इनके पिता को राजगद्दी से वचित रखने के कारण रुष्ट होकर गुजरात चले गए थे। षड्यन्त्रकारी सामन्तो ने सदेशा भेज कर इन्हे लौटने पर रावल बनाने का आश्वासन दिया। इनके जैसलमेर लौट आने पर उन्होने इन्हे रावल पूनपाल के स्थान पर राजगद्दी पर बिठा दिया। रावल पूनपाल के जैसलमेर लौटने पर इन्ही सामन्तो ने उन्ह राज्य छोडकर पूगल क्षेत्र मे पलायन करने का सुझाव दिया, अन्यथा वह उनसे निपटने के लिए तैयार थे। उन्होने अपनी शक्ति का आकलन करके राजगद्दी छोडने का निर्णय लिया और सामन्तो को इसकी सूचना दे दी। पूगल में सन् 1046 ई से पाहू भाटियो का शासन था, सन् 1277-88 के बीच लगाओ और बलोचो ने उनसे यह राज्य छीन लिया था। रावल पूनपाल ने अपना नया राज्य यहीं स्थापित करने की सोची। जैसलमेर छोडने के साथ इन्होने गजनी के लकडी के तख्त को उन्हे दिये जाने और अपने साथ ले जाने की माग सामन्तो से की। अभी तक तख्त के रक्षकों, *उत्तैराव और सिंहराव भाटियो*, ने इस तख्त पर नये रावल जैतसी को बैठने नहीं दिया था। रावल जैतसी और सामन्तो ने रावल पूनपाल की तख्त उन्हें देने की माग को मान लिया, क्योकि इस एक माग के माने जाने से उनके और उत्तैराव और सिंहराव भाटियो के बीच अनावश्यक खून खराबा टल रहा था। केवल यही भाटी नही, जैतूग और पाहू भाटी भी रावल पूनपाल के साथ थे, क्योकि इनकी सहायतार्थ जाने के कारण पीछे इन्हे राजगद्दी से हाथ धोना पडा था।

रावल पूनपाल गजनी का तख्त लेकर जैसलमेर से चल पडे। उत्तैराव और सिंहराव भाटी भी इनके साथ आए। इन भाटियों को बाद मे पूगल ने अनेक गाव दिए, मान सम्मान

दिया और इनकी प्रधानता यथावत बनाए रखी। सिहराव भाटी अब भी मोतीगढ, जोधासर, डेली तलाई, रामडा, मकेरी आदि गावो मे आबाद हैं। उत्तराव भाटी रायमलवाला और जुनाडकी गावो के भोमना थे और अब भी वहा आबाद है। यह भाटी तख्त के साथ मे इसलिए आये क्योकि पीढियो से इनका जीवन मरण इस तख्त की रक्षा के साथ जुडा हुआ था।

गजनी का लकडी का तख्त हमेशा भाटियो की राजसत्ता का प्रतीक रहा, इसे भाटी पीढी-दर-पीढी अपने साथ रखते आए थे। जब से भाटी अफगानिस्तान स्थित गजनी छोडकर पूर्व मे आये, तब से यह तख्त सदैव उनके साथ रहा। जिस शासक के पास यह रहा, भाटियो ने उसे शासक माना, उसके अधिकार के विषय में कभी सदेह नही किया। बीकानेर के स्वर्गीय महाराजा डाक्टर करणी सिंह ने अपनी पुस्तक, 'बीकानेर राजघराने के केन्द्रीय सत्ता से सम्बन्ध', के पृष्ठ 13 पर लिखा है कि, 'भाटियो का गजनी का तख्त अब भी पूगल के राव के अधिकार मे है।' डाक्टर हरमन गोयट्ज ने अपनी पुस्तक, 'दी आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑफ बीकानेर स्टेट', मे लिखा है कि, 'पूगल के राजाओ का गजनी का तख्त अफगानिस्तान से लाया गया बताया जाता है, और भारत मे सबसे पुरानी फर्नीचर इकाई है,' पूगल पैलेस, पृष्ठ 81। प्रोफेसर गोयट्ज जर्मनी के विद्वान थे, यह भारतीय उप-महाद्वीप के सास्कृतिक इतिहास के विशेषज्ञ थे।

भाटियो के मन मे इस तख्त के प्रति अथाह श्रद्धा, इज्जत और सस्कारो से स्नेह है। यह इसे अपने पूर्वजो की पैतृक सम्पत्ति का अश मानते हैं, जिस पर इनकी दशो पीढियो का राज्याभिषेक हुआ। यह सदियों से भाटियो की एकता का केन्द्र रहा, उनके साथ युद्ध और शान्ति मे रहा, खुशी और गम मे साथ रहा, जिस किसी के अधिकार मे यह तख्त रहा, उस शासक की सर्वैधानिकता पर किसी को सदेह नही हुआ। इस तख्त ने एक और अनेक भाटियो से स्वामिभक्ति का आह्वान किया, उनसे बलिदान की अपेक्षा की। पूर्व मे भाटी जहा जहा गये, वहा इसे अपने साथ ले गए। इसे साथ रखने मे भाटियो ने अनेक कष्ट झेले। अमीरी और गरीबी मे, सत्ता और सत्ताहीनता मे, भाटियो ने यह तख्त सदैव अपने साथ रखा। इसे सन् 279 ई मे वह गजनी से लाहौर लाए, फिर अपने साथ भटनेर लेकर आए। इसके बाद मे भूमनवाहन, मरोठ, देरावर, तणोत, लुद्रवा होता हुआ यह तख्त सन् 1156 ई मे जैसलमेर आया। जैसलमेर से सन् 1290 ई. मे रावल पूनपाल इसे अपने साथ लेकर इसके लिए अगला नया पडाव स्थापित करने के लिए निकल पडे। सिहराव और उत्तराव भाटियो के सरक्षण मे यह तख्त नब्बे वर्ष तक बेघर रहा। रावल पूनपाल के पडपौत्र राव रणकदेव ने आखिर, सन् 1380 ई मे इसे पूगल के गढ मे विधिवत स्थापित किया। तब से पिछले 600 वर्षो से यह तख्त पूगल के गढ़ को सुशोभित कर रहा है। इस तख्त पर पूगल मे भाटियो के 26 रावो का राज्याभिषेक हुआ। वर्तमान राव सगतसिंह का राजतिलक बीकानेर मे होने से, वह इस तख्त पर नही बैठे।

रावल पूनपाल द्वारा तख्त को अपने साथ ले आने की घटना की पुनरावृत्ति लगभग दो सौ वर्ष बाद मे, बीकानेर के राव बीकाजी ने भी की। इन्होने सन् 1492 ई मे राव सूजा से जोधपुर के राजचिह्न, प्रतीक और पारिवारिक धरोहर आदि बलपूर्वक प्राप्त किए। जैसलमेर के भाटियो की परम्पराओ को मारवाड के राठौड भली-भाति जानते थे, क्योकि

उस समय यह भाटियों के पड़ोस में या संरक्षण मे छोटी-मोटी गढ़ियों और राज्यो के शासक हुआ करते थे। इसलिए राव पूनपाल की भांति राव बीकाजी ने भी जोधपुर से राजचिह्नो की माग की। फर्क इतना सा था कि जैसलमेर के भाटियो ने गजनी का तख्त रावल पूनपाल के मांगने पर उन्हे दे दिया, जबकि राव बीकाजी को जोधपुर द्वारा राजचिह्न राजी खुशी नही दिये जाने पर, इन्हें लेने के लिए उन्हें बल प्रयोग करना पडा।

जैसलमेर त्यागने के बाद मे रावल पूनपाल का कोई स्थायी ठिकाना नही रहा। जैतुग और पाहू भाटी, जिनके खातिर उन्हें जैसलमेर की गद्दी खोनी पड़ी थी, उनके लिए सुख-सुविधाएं जुटाने मे कोई कसर बाकी नही छोड़ रहे थे। फिर भी शासन के लिए सत्ता और सत्ता के लिए राज्य वह जुटा नही पा रहे थे। बीकमपुर में लगा और बलोच मुसलमान जमे हुए थे, उन्हें मुलतान का संरक्षण प्राप्त था। इधर पूगल के सूने पडे किले पर नायको ने अधिकार कर लिया था, इसे लंगा और बलोच उजाड कर चले गए थे। मुलतान के शासकों ने नायको को पाबन्द किया कि वह इस क्षेत्र मे कोई गड़बड नही करेंगे, अशान्ति नही फैलायेंगे और जो जातियां अपने गांवो मे बैठी थी, उन्हें वह परेशान नही करेंगे और जनता से कर आदि की वसूली मुलतान शासन सीधी करेगा। नायक केवल मुलतान के सीमावर्ती क्षेत्र के रक्षक थे, शासक नही थे। रावल पूनपाल ने भरसक प्रयत्न किए कि वह अपने पूर्वजो की भूमि को लगाओ, बलोचों, नायको और मुलतान से मुक्त कराएँ। उन्होने इसके लिए छापा-मार युद्ध किए, समझौतो के प्रयास किए, किन्तु सफल नही हुए। अर्थ का अभाव, साधनो की कमी, क्षेत्र की विभीषिका, आदि ऐसे अनेक कारण थे जिनसे रावल पूनपाल और उनके पुत्र लक्ष्मण बीकमपुर या पूगल पर अधिकार करने मे असफल रहे। वह अपने रहने का स्थान थोडे समय बाद में बदलते रहते थे, ताकि एक गाव या एक जाति को उनके और उनके साथियो के रहने-सहने का भार लम्बे समय तक सहना नही पडे। इससे जनता और रावल का आपस का प्रेमभाव बना रहा। रावल पूनपाल के वंशज पूनपालोत भाटी हैं, इन्ही के समकालीन भाटियो की अन्य खांपें हैं, चरडा, लूणराव और रणधीरोत।

पूगल पर नायको के अधिकार की कहानी झूठी नही है, लेकिन भाटियो के विरोधियों ने इसे रंग देकर उनकी छवि को धूमिल करने के प्रयास किए हैं। नायको ने कभी पूगल भाटियो से नही छीनी थी। सुलतान बलबन के समय लगाओ और बलोचो ने पाहू भाटियो को पूगल से निकाल दिया था और बाद मे स्वयं भी पूगल के गढ को सूना छोडकर चले गए थे। इस सूने पडे हुए गढ मे खानाबदोश शिकारी नायक रहने लगे, जिन्हे मुलतान के शासकों ने अपने अनुशासन मे रखा। पाहू भाटियो ने सन् 1046 ई. से इस निर्जन क्षेत्र को आबाद किया था, जनता को बाहरी आक्रमणो से सुरक्षा प्रदान की, आन्तरिक शान्ति व्यवस्था रखी, जनता के लिए अनेक कुए खुदवाये। इन्हे अभी भी 'पाहू के कूप' कहते हैं और उनका यह क्षेत्र 'पाहू वेरा' के नाम से जाना जाता है। पाहुओ को विवश हो कर पूगल का राज्य और वहा दो सौ वर्षों का शासन छोडना पडा। वह पराजित होकर पश्चिम की ओर पलायन कर गए, जहा पानी उपलब्ध था, जमीनें उपजाऊ थी और जीविका के अन्य साधन उपलब्ध थे।

नायको ने सूने पडे पूगल के गढ को अपना घर बनाया, इसकी मरम्मत की और वह गढ की सुरक्षा मे रहने लगे। नायक जाति राजपूतो से मिलती-जुलती जाति है, इस समय यह

अनुसूचित जन जाति की श्रेणी मे है। नायक पहले से ही पूगल क्षेत्र मे लम्बे अर्से से रह रहे थे, पशु पालते थे और शिकार करने के शौकीन थे। इन्होने पूगल के गढ की सुरक्षा के लिए उचित प्रबन्ध किए, ताकि ऐरे-गैरे लोग इसमे नही आएँ और कोई अपना भाग्य अजमाने के लिए किले पर अचानक अधिकार नही कर ले। नायको ने धीरे-धीरे अपना प्रभाव आस पास के क्षेत्र पर जमाया। यह स्वाभाविक था कि नायको ने पूगल गढ के स्वामी होने के नाते इस क्षेत्र के लोगो के साथ जाने या अनजाने मे कुछ ज्यादतिया भी की हो। नायको का सामाजिक और सास्कृतिक स्तर भी ऊचा नही था, इसमे इनका कोई दोष नही था। नायको को मुलतान के शासको का सरक्षण प्राप्त था, कुछ इन्हे सत्ता का लोभ भी था और वह काफी वर्षों से सत्ता का सुख भोग रहे थे। इसलिए इनके हित मे यही था कि पूगल पर भाटियो का पुन. अधिकार नही हो। मुलतान के हित मे भी यही था कि नायक पूगल मे ही बने रहे क्योकि भाटी मुलतान के संरक्षण मे रहने वाले नही थे। लगा और बलोच भी नायको को भाटियो के विरुद्ध प्रोत्साहित करते थे और उन्हे सहायता भी देते थे ताकि उन पर उनकी चौधर बनी रहे और वहा मुलतान की प्रभुसत्ता रहे। यही स्थिति मुलतान, लंगाओ, बलोचो और नायको, चारो के लिए लाभदायक थी। भाटियो के आने से इन चारो को घाटा था।

चूकि नायक पूगल के गढ मे पहले से जमे हुए थे, इसलिए बाहर से नए आए हुए रावल पूनपाल के लिए गढ पर अधिकार करना आसान नही था। रावल पूनपाल जितने अधिक प्रयास गढ को लेने के करते, नायक उससे अधिक प्रयास गढ की सुरक्षा से चिपके रहने के लिए करते। पूगल के गढ ने नायको को एक सम्मानजनक स्तर दे रखा था, जिससे नीचे वह गिरना नही चाहते थे। उन्हे पता था कि उनसे गढ छूटने के बाद वह अपनी पूर्व की वास्तविक स्थिति पर पहुच जायेंगे और भाटी उनके साथ वही उचित व्यवहार करेंगे जो वह अन्य नायको के साथ आज तक करते आए थे। केवल यही नही, मुलतान के शासक भी उन्हें फिर कुछ नही समझेंगे, ठोकरो से चलाएगे। पूगल के गढ मे होते हुए नायक मुलतान के स्वार्थ के लिए लाखो के थे, अन्यथा कौडियो के भी नही थे। यह सत्ता का स्वार्थ था, एक गरज थी। स्वार्थ और गरज समाप्त होने के बाद व्यक्ति के लिए स्थान कहा? इस प्रकार मुलतान की सहायता से नायको का पूगल के गढ पर अधिकार चलता रहा। बडे यत्न के पश्चात् राव रणकदेव ने एक सौ वर्ष बाद, सन् 1380 ई मे, नायको से पूगल लिया। रावल पूनपाल की तीन पीढिया पूगल के लिए रेगिस्तान मे ही भटकती रही।

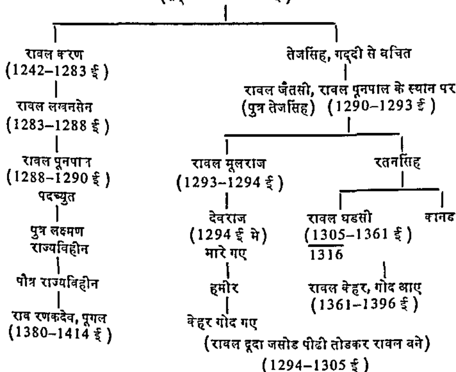
नायक जाति कभी भाटियो की विरोधी नही रही। इनके आपसी सम्बन्ध सदैव अच्छे रहे, विश्वास और भाईचारे के रह। नायक एक अच्छी लडाकू जाति रही है, इनका साहस, शौर्य और युद्ध मे अग्रणी रहने का स्वभाव राजपूतो से कम नही था। यह भाटिया क सहयोगी, यात्रा मे साथी, सकट की घडी मे विश्वासपात्र रहे हैं। अब भी यह 'ठाकुर' कहलाना अपना गर्व समझते हैं और गैर राजपूत लोग इन्हे 'ठाकुर' से ही सम्बोधित करते हैं। नायको की स्त्रियो का पहनावा, पर्दा, व्यवहार, चाल ढाल, बोली और सम्बोधन, राजपूतों से मिलता-जुलता है।

रावल पूनपाल की बेटी पद्मिनी का विवाह चित्तौड के राणा रतनसिंह के साथ सन् 1300 ई मे हुआ था। इसी पद्मिनी ने सन् 1303 ई मे चित्तौड म जौहर किया था। (कृपया परिशिष्ट 'क' देखें)

वंशावली

राव चाचगदेव (प्रथम)

(सन् 1218–1242 ई.)



(1294–1305 ई.)

1 केलण पूगल गए (1414–1430 ई.)		2 सातल	3 लक्ष्मण रावल बने (1396–1427 ई.)	
4	5	6	7	8
सोम	मनकरण	सावतसी	गोयदा	ईसर
9	10		11	12
मेहजब	तेजसिंह		परबत	तणु

रावल पूनपाल के, सन् 1290 ई. में, जैसलमेर छोड़ने के बाद के पन्द्रह वर्षों में जैसलमेर को घोर विपदाओं का सामना करना पड़ा था। दस वर्ष के अन्तराल में दो साके हुए, जैसलमेर खालसे भी हो गया। ऐसी बिगड़ती हुई स्थिति में रावल पूनपाल के लिए बीकमपुर या पूगल पर अधिकार करना आसान नहीं था। रावल घड़सी स्वयं राज्यविहीन होकर सन् 1305 से 1316 ई. तक बीकमपुर में रहे। उधर दिल्ली में केवल थोड़े समय में, सन् 1290 से 1320 ई. में, खिलजी वंश हो समाप्त हो गया, क्योंकि अलाउद्दीन खिलजी ने जल्दबाजी में न केवल भारत के राजवंशों की पुरानी जड़ें उखाड़ीं, उन्होंने स्थिर प्रबन्ध और प्रशासन के अभाव में स्वयं के वंश का भी नाश किया।

अनुसूचित जन जाति की श्रेणी मे है। नायक पहले से ही पूगल क्षेत्र मे लम्बे अर्से से रह रहे थे, पशु पालते थे और शिकार करने के शौकीन थे। इन्होने पूगल के गढ की सुरक्षा के लिए उचित प्रबन्ध किए, ताकि ऐरे-गैरे लोग इसमे नही आएँ और कोई अपना भाग्य अजमाने के लिए किले पर अचानक अधिकार नही कर ले। नायको ने धीरे-धीरे अपना प्रभाव आस पास के क्षेत्र पर जमाया। यह स्वाभाविक था कि नायको ने पूगल गढ के स्वामी होने के नाते इस क्षेत्र के लोगो के साथ जाने या अनजाने मे कुछ ज्यादतिया भी की हो। नायको का सामाजिक और सास्कृतिक स्तर भी ऊचा नही था, इसमे इनका कोई दोष नही था। नायको को मुलतान के शासको का सरक्षण प्राप्त था, कुछ इन्हे सत्ता का लोभ भी था और वह काफी वर्षों से सत्ता का सुख भोग रहे थे। इसलिए इनके हित मे यही था कि पूगल पर भाटियो का पुन अधिकार नही हो। मुलतान के हित मे भी यही था कि नायक पूगल मे ही बने रहे क्योकि भाटी मुलतान के संरक्षण मे रहने वाले नही थे। लगा और बलोच भी नायको को भाटियो के विरुद्ध प्रोत्साहित करते थे और उन्हे सहायता भी देते थे ताकि उन पर उनकी चौधर बनी रहे और वहा मुलतान की प्रभुसत्ता रहे। यही स्थिति मुलतान, लगाओ, बलोचो और नायको, चारो के लिए लाभदायक थी। भाटियो के आने से इन चारों को घाटा था।

चूकि नायक पूगल के गढ मे पहले से जमे हुए थे, इसलिए बाहर से नए आए हुए रावल पूनपाल के लिए गढ पर अधिकार करना आसान नही था। रावल पूनपाल जितने अधिक प्रयास गढ को लेने के करते, नायक उससे अधिक प्रयास गढ की सुरक्षा से चिपके रहने के लिए करते। पूगल के गढ ने नायको को एक सम्मानजनक स्तर दे रखा था, जिससे नीचे वह गिरना नही चाहते थे। उन्हें पता था कि उनसे गढ छूटने के बाद वह अपनी पूर्व की वास्तविक स्थिति पर पहुच जायेंगे और भाटी उनके साथ वही उचित व्यवहार करेंगे जो वह अन्य नायको के साथ आज तक करते आए थे। केवल यही नहीं, मुलतान के शासक भी उन्हें फिर कुछ नही समझेंगे, ठोकरो से चलाएगे। पूगल के गढ मे होते हुए नायक मुलतान के स्वार्थ के लिए लाखो के थे, अन्यथा कौडियो के भी नही थे। यह सत्ता का स्वार्थ था, एक गरज थी। स्वार्थ और गरज समाप्त होने के बाद व्यक्ति के लिए स्थान कहा ? इस प्रकार मुलतान की सहायता से नायको का पूगल के गढ पर अधिकार चलता रहा। बडे यत्न के पश्चात् राव रणकदेव ने एक सौ वर्ष बाद, सन् 1380 ई मे, नायका से पूगल लिया। रावल पूनपाल की तीन पीढिया पूगल के लिए रेगिस्तान मे ही भटकती रही।

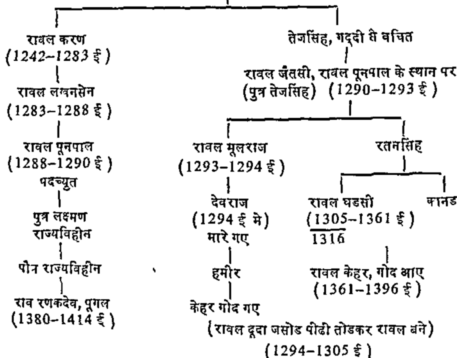
नायक जाति कभी भाटियो की विरोधी नही रहीं। इनके आपसी सम्बन्ध सदैव अच्छे रहे, विश्वास और भाईचारे के रहे। नायक एक अच्छी लडाकू जाति रही है, इनका साहस, शौर्य और युद्ध मे अग्रणी रहने का स्वभाव राजपूतो से कम नही था। यह भाटियो के सहयोगी, यात्रा मे साथी, सकट की घडी मे विश्वासपात्र रहे हैं। अब भी यह 'ठाकुर' कहलाना अपना गर्व समझते हैं और गैर राजपूत लोग इन्हे 'ठाकुर' से ही सम्बोधित करते हैं। नायको की स्त्रियों का पहनावा, पर्दा, व्यवहार, चाल ढाल, बोली और सम्बोधन, राजपूतो से मिलता-जुलता है।

रावल पूनपाल की बेटी पद्मिनी का विवाह चित्तौड के राणा रतनसिंह के साथ सन् 1300 ई मे हुआ था। इसी पद्मिनी ने सन् 1303 ई मे चित्तौड मे जौहर किया था। (कृपया परिशिष्ट 'क' देखें)

वंशावली

राव चाचगदेव (प्रथम)

(सन् 1218–1242 ई)



1 केलण पूगल गए (1414–1430 ई) 2 सातल 3 लक्ष्मण रावल बने (1396–1427 ई)

4	5	6	7	8
सोम	कलकरण	सावतसी	गोयदा	ईशर

9	10	11	12
मेहजब	तेजसिंह	परबत	तणु

रावल पूनपाल के, सन् 1290 ई में, जैसलमेर छोडने के बाद के पन्द्रह वर्षों मे जैसलमेर को घोर विपदाओ का सामना करना पड़ा था। दस वर्ष के अन्तराल मे दो साके हुए, जैसलमेर खालसे भी हो गया। ऐसी बिगडती हुई स्थिति मे रावल पूनपाल के लिए बीकमपुर या पूगल पर अधिकार करना आसान नही था। रावल घडसी स्वय राज्यविहीन होकर सन् 1305 से 1316 ई तक बीकमपुर मे रहे। उधर दिल्ली मे केवल थोडे समय मे, सन् 1290 से 1320 ई में, खिलजी वश ही समाप्त हो गया, क्योकि अल्लाउद्दीन खिलजी ने जल्दबाजी मे न केवल भारत मे राजवशो की पुरानी जडें उखाडी, उन्होने स्थिर प्रबन्ध और प्रशासन के अभाव मे स्वय के वश का भी क्षय किया।

सन् 1292 ई से भारत पर मगोलो के आक्रमणो की लहर शुरू हुई थी। अल्लाउद्दीन खिलजी के समय लगभग एक दर्जन आक्रमण हुए। खिलजी वश के बाद म तुगलक वश दिल्ली में सत्ता मे आया (सन्1320-1414 ई)। इस वश के पहले दो शासक, ग्यासुद्दीन तुगलक और मोहम्मद तुगलक पूर्णतया असफल रहे। जैसलमेर मे रावल घडसी (सन् 1316 1361 ई) और रावल केहर (सन् 1361-1396 ई) के शासनकाल के 80 वर्षों का शान्ति का युग रहा। दिल्ली म केवल सुलतान फिरोज तुगलक (सन् 1351 88 ई) का युग शान्ति का रहा। बाद मे जब जैसलमेर मे स्थिरता आई तो साथ मे दिल्ली के शासन मे भी स्थिरता आई। इसलिए रावल पूनपाल के बेटे पोतो के लिए मुलतान से पूगल लेना कठिन था। यह तो सुलतान फिरोज तुगलक के भाटियो का भानजा होने के नाते, जैसलमेर के रावलो ने उनका सिन्ध मे समर्थन किया जिससे वह विजयी रहे। इसी नाते को निभाते हुए उन्होने राव रणकदेव द्वारा पूगल पर सन् 1380 ई मे अधिकार करने की घटना को गम्भीरता से नही लिया।

रावल पूनपाल के पडपौत्र राव रणकदेव सन 1380 ई मे पूगल से नायको को निकालने मे सफल हुए।

इस प्रकार राव रणकदेव और राव केलण, रावल चाचगदेव (प्रथम) के वशज थे। राव रणकदेव रावल चाचगदेव के पुत्र करण की पाचवी पीढी मे हुए। राव केलण रावल चाचगदेव के पुत्र तेजसिंह की छठी पीढी मे हुए। राव केलण राव रणकदेव के गोद आए, लेकिन वह उनसे सात पीढी दूर थे।

मेवाड़ की पद्मिनी

ावल पूनपाल माटी की बेटी थी। मरवण (ढोला-मारू) पूगल के पवार राजा गजमल ी बेटी थी। पूगल की पद्मिनी विश्वविख्यात है, इतिहास मे इसका सम्बन्ध किसी जाति वेशेष या प्रदेश से नही रहा।

यह सच है कि पूगल प्रदेश की कन्याएँ, रूपवती, मोहिनी, व्यवहार कुशल, डील-डौल म सुदृढ़, सुन्दर, लुभावनी कद-काठी एव तीखे नाक-नक्शो वाली, मासल शरीर एव मृदु भाषी रही हैं। किसी भी घराने मे ब्याहने के बाद मे इन्होंने नये घर को अपनाया और उसमे सुख और समृद्धि का संचार किया। यह गुण जहा रेगिस्तान की विकट परिस्थितियो मे जीवन निर्वाह, पानी और अन्न के अभाव के साथ समझौता, अकाल की विषमता से जूझना, सहनशीलता, गर्मी, सर्दी, आंधी जैसी भयावह दैविक प्रकोपो से सघर्ष करने से आये, वहा इन गुणो को पनपान मे ऐतिहासिक सत्यता भी कम सार्थक नही रही।

यदुवशी गजनी मे शासन करते थे, इनके राज्य की सीमाएँ उजबेकिस्तान (बोखारो), ईरान, कश्मीर, मथुरा और पजाब तक फैली हुई थी। इनके शादी विवाह उजबेक, अफगान, पठान, कश्मीरी, ईरानी, पजाबी आदि हिन्दू जातियों के साथ होना स्वाभाविक था। सामान्यत. ठडी जलवायु के क्षेत्रो में बसने के कारण इन लोगो का रग गोरा और गेहुआ होता था। इनके खानपान मे उत्तम पौष्टिक भोजन, मास, मेवे और फल बहुतायत मे होने मे शरीर मासल होता था और खून की ललाई गोरे गेहुंए रंग के कारण कपोलो और होठो मे झलकती थी। अच्छी आबोहवा होने के कारण शारीरिक बीमारिया कम लगती थी। स्वास्थ्य अच्छा रहने से कद काठी का विकास सुन्दर और सुदृढ होता था। इन्ही शारीरिक गुणों से सम्पन्न भाटी लोग गजनी छोडकर पंजाब और सिन्ध प्रान्तो मे आए। इन्होंने अच्छे खानपान और परिश्रम के कारण अपने अगो एवं आकृति को बनाए रखा। भाटियो के इन प्रान्तो में बसने के बाद मे इनके शादी विवाह स्थानीय राजपूत जातियों के साथ होने लगे। इनमें पंवार, जोइया, खीची, पडिहार, मुट्टा, लगा, बलोच, खोखर, दईया आदि जातियें प्रमुख थी। इनके साथ शादियों से आपसी शारीरिक आदान प्रदान हुआ और इनके अनुरूप गुणों वाली सन्तानें हुई। क्योकि स्थानीय जातिया भी भाटियों जैसे वातावरण मे ही पनप रही थी, इसलिए शारीरिक मिश्रण से उनके गुणों मे कुछ उभार आया, क्षति नही हुई। इन प्रदेशो की जलवायु शुष्क थी, वर्षा कम होती थी, दोमट मिट्टी थी, इसलिए रग रूप, स्वास्थ्य अच्छा रहता था। मनुष्य की तरह ही भाटी प्रदेश और पजाब प्रान्त के पशु भी स्वास्थ्य की दृष्टि से सागोपाग होते थे।

इसके विपरीत, राठोड़, कच्छावा, हाडा, सिसोदिया, आदि क्षत्री जातियें, अत्यधिक

वर्षा, उमसयुक्त हवा, भारी चिकनी मिट्टी, घने जगलो से घिरे हुए गाँव और नगर, कीड़े मकोड़ो वाले प्रदेशो से थे। इनका भोजन मुख्यतया चावल रहा था। इस प्रकार इनका रहन-सहन, खानपान, जलवायु एव वातावरण ऐसा था कि वह अच्छे शारीरिक विकास मे सहायक नहीं था। यही कारण था कि इन लोगो का रग कम गोरा, कद काठी मध्यम, अविकसित ढाचा, ललाई की कमी और मासपेशिया सिकुडी हुई होने के कारण इनके शरीर मासल नहीं बन पाये। केवल मनुष्य ही क्यो, पूर्वी राजस्थान, मालवा, कोटा, उदयपुर आदि क्षेत्रो के पशु भी कद मे छोटे, कम दूध वाले, दुबले और सुन्दर नही होते।

पूगल, जैसलमेर और पश्चिमी भारत के लोगो के जब इन पूर्व के लोगो से शारीरिक सम्बन्ध हुए, तब जहा भाटियो की बेटियाँ इनकी बहुएँ बनकर गई, वहा इनकी सन्तानो मे शारीरिक गुणो मे माता के अनुकूल विकास हुआ, वही इन जातियो के असर से भाटी माता के गुणो का ह्रास भी हुआ। अब वह पूगल की पद्मिनी वाली बात नही रही, क्योकि राठौडो, हाडो, सिसोदियो, कच्छावो की कन्याओ का भाटियो की माताएँ बनने से उनसे उत्पन्न बेटियो मे उन प्रारम्भ के गुणों का आशिक लोप हुआ।

मेवाड के राणा रतनसिंह की पत्नी पद्मिनी कहाँ की थी, इस विषय म अनावश्यक विवाद वर्षों से चला आ रहा है। पद्मिनी को बेटी के रूप मे कोई भी जाति अपनाने को तैयार थी, किन्तु पूगल की पद्मिनी का सर्वविदित नाम सुनकर सभी बिदक जाते थे, क्योकि वह लोग अपने आप को पूगल से किसी प्रकार से जोडने मे असमर्थ थे। इस सारे सकट का एकमात्र कारण यही था कि जिस पूगल प्रदेश और भाटी जाति की वह बेटी थी, उसका लिखित म कोई इतिहास नही था, जबानी कहने से कौन माने, किस किस को बताएँ और मनाएं। आज के युग मे लिखित बात ही प्रामाणिक है, चाहे वह सफेद झूठ ही क्यो न हो। कौनसी राजपूत जाति है जो पद्मिनी जैसी बेटी को अपना कर गौरवान्वित नही होगी? उसमे अवगुण क्या था, वह तो रूप, गुण और बलिदान की देवी थी।

इतिहासकार उनके पूगल के भाटियो के इतिहास के बारे मे अज्ञानता के कारण उसे कही न कही फिट करने के प्रयास करते और अटकलबाजियाँ लगाते रहते थे। जहाँ वह कुछ नया जुगाड नही बैठा पाते, वहा 'हारे को हरिनाम' का सहारा लेकर राणा रतनसिंह और पद्मिनी के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा देते थे ताकि न रहे बांस और न बजे बासुरी।

राणा रतनसिंह का विवाह जैसलमेर के पदच्युत रावल पूनपाल की बेटी पद्मिनी से हुआ था। यह सन् 1288-90 ई मे जैसलमेर के रावल थे। इधर सुलतान जलालुद्दीन खिलजी के भतीजे और जवाई अल्लाउद्दीन खिलजी की सेनाएँ जैसलमेर के किले का घेरा कस रही थी, उधर रावल पूनपाल के बीकमपुर पूगल क्षेत्र के अस्थाई घरो मे पद्मिनी रम खेल रही थी और बेटी की जात बडी हो रही थी। सन् 1294 ई के जैसलमेर के साके के बाद किशोरावस्था मे प्रवेश कर रही पद्मिनी के रूप सौन्दर्य की ख्याति सब ओर फैल चुकी थी। सन् 1299 ई मे खिलजी के जैसलमेर पर आक्रमण के समय रावल पूनपाल को चिन्ता हुई कि कही मुसलमान आक्रमणकारी उनकी पुत्री का बन्धन न माँग ले। उनके पास न सिर ढकने के लिए झोपडा था, न युद्ध करने के साधन। इसलिए रावल को बेटी की शादी की चिन्ता लगी। उन्हे मेवाड के राणा लक्ष्मणसी (वि स 1331) के पुत्र राणा रतनसिंह अपनी

बेटी के लिए योग्य वर लगे। उनके पास देने के लिए कन्या के सिवाय कुछ नही था, स्वय राज्यविहीन थे, रहने का कोई ठिकाना नही था। उन्हे यह विश्वास था कि पद्मिनी का सौन्दर्य ही उनकी निधि थी। राणा रतनसिंह ने सन् 1300 ई मे पद्मिनी से विवाह करके अपने आप को धन्य और भाग्यशाली समझा, ऐसी अनुपम सुन्दरी और कही नही थी। उन्हे यह क्या पता था कि जिस सुन्दरी को वह भाग्यसूचक मान बैठे थे वही उनके विनाश का कारण बनेगी। जब सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी ने पद्मिनी के रूप, लावण्य, गुणो का बखान सुना तो वह उसे देखने और अपनाने के लिए आतुर हो उठे। लेकिन 26 अगस्त, सन् 1303 ई मे उनके हाथो उजडा हुआ चित्तौड का किला और बुझती हुई जौहर की आग और उसमे सुलगते अगारे लगे।

वास्तव मे पद्मिनी का जन्म, राजकुमार पूनपाल के जैसलमेर मे रहते हुए सन् 1285 ई मे हुआ था। यह सन् 1288 ई मे रावल बने। पद्मिनी का विवाह 14 15 वर्ष की आयु मे, सन् 1300 ई मे राणा रतनसिंह के साथ हुआ।

भाटियो के लिए मेवाड या मेवाडियो के लिए भाटी नए नही थे। इनके पीढियो से शादी विवाह के आपसी सम्बन्ध थे। रावल सिद्ध देवराज की तीसरी शादी मेवाड के गहलोत राव सूरजमल की पुत्री सूरज कवर से, रावल मुधजी की छठी शादी रावल अडसीजी की पुत्री राम कुवर से, रावल लाखो विजेराव की दूसरी शादी रावल कर्ण समसीजीयोत की पुत्री शिव कवर से, रावल शालिवाहन की चौथी शादी रावल जैसिंह की पुत्री राज कवर से हुई थी। मेवाड के शासक सन् 1201 ई के बाद मे राणा कहलाए। बाद म रावल केहर के समय, कुमार जैतसी बारात लेकर मेवाड जा रहे थे, लेकिन वह मार्ग मे पूगल मे मारे गए। इसी प्रकार राव रिडमल राठौड की शादी पूगल हुई थी, उनकी बहन हसा मेवाड के राणा लाखा को ब्याही हुई थी। बाद के वर्षो मे और पीढियो मे यह आपसी शादी विवाह का सिलसिला चलता रहा।

जायसी ने केवल कल्पना के सहारे पद्मिनी को सजाया था, किसी ने उसे लका द्वीप से जोडा, कुछ ने उसका अस्तित्व ही नकारा। लेकिन चित्तौड के किले मे पद्मिनी के महल, गोरा बादल की छतरिया, वहा पद्मिनी के होने के प्रतीक हैं।

हम गर्व है कि मेवाड की पद्मिनी पूगल के भाटियो की बेटी थी। इतिहासकार इसलिए अटकलबाजियें लगा रहे थ क्योकि पद्मिनी के पीहर पूगल से कोई आवाज नही उठी थी। पूगल की पद्मिनी चाहे वह बेटी पवारो की हो या भाटियो की, हमेशा पूगल की ही थी। पूगल की एक से ज्यादा पद्मिनिया भी विभिन्न शताब्दियो म हुई थी। पूगल म पद्मिनी, इस भाटी राजकुमारी से पहले भी हुई थी। पूगल मे भाटियो से पहल पवार राज्य करते थे। राजा धरणीवराह ने अपने भाई गजमल पवार को पूगल दी थी। पूगल की प्रसिद्ध राजकुमारी मरवण पवार वश की थी। पूगल के पवार राजा चौहान सम्राटो के अधीन थे। पवारो की राजकुमारी पद्मिनी का नाम मरवण था। ढोला मारू की प्रेमगाथा पूगल की मरवण और नरवर के कछवावा राजकुमार ढोला के प्रेम प्रसग पर आधारित है

मा उमादे देवडी, नाना सामन्त सिंह।
पिगल राय परमार री, कवरी मारवणीह ॥

पूगल के बारे में अन्य कवित्त भी हैं, जिनमें से कुछ नीचे दिए गए हैं

'माणी राव हमीरदे,
सोढे छत्र धारी,
चूहड़ समजे हदीया,
बाल नारी करी।'

×

'अठै जोइया जनमिया,
पुत नालक बारी,
जेसम नाणा रातिया,
टक साल बुहारी।'

×

'सोची दस दिन वस गये,
खरला विण चारी,
केर वसाई भाटिया,
अत करे पियारी।'

×

सुख का पर्याय भटियाणी

'ओढणी झीणी तोवडी,
जीवारा री वाण,
जे सुख चावें जीवरो,
घण भटियाणी माण।'

×

बाबा रामदेवजी की बहन सुगना

पूगल के पडिहारो को ब्याही हुई थी न कि भाटियो को :

जन मानस मे यह आम धारणा है कि रामदेवरा के बाबा रामदेवजी तवर, (जन्म सन् 1404 ई , समाधि सन् 1458 ई) की बहन सुगना बाई का विवाह पूगल के पडिहार राजा से हुआ था। इन लोगो ने सुगना बाई को अमानवीय यातनाएँ दी, जिन्हें बढा चढ़ा कर भोपे और कथाकार अपने गीतो और भजनो मे तरह तरह के रग देकर गाते, सुनाते हैं, ताकि भोले भक्तगण करुणा और भक्ति मे विभोर हो जाए। जहा तक जन जानस और भावना का प्रश्न है, यह सही है, इसमे दो राय नही। वह युग भक्ति अभियान का युग था। बाबा रामदेव के समकालीन या इनसे आगे पीछे चौदहवी और पन्द्रहवी शताब्दी मे अनेक प्रमुख ईश्वर भक्त हुए थे।

ऐतिहासिक तथ्य यह है कि सन् 1404 से 1458 ई के बीच मे पूगल मे भाटी ही राव हुए थे, पडिहार कभी भी वहा के राजा या राव नही थे। सन् 1380 ई से आज तक भाटी वश का पूगल पर अटूट राज रहा है। राव रणकदेव (1380-1414 ई), राव केलण (1414-1430 ई), राव चाचगदेव (1430 1448 ई) राव बरसल (1448-1464 ई), और राव शेखा (1464 1500 ई) पूगल के राव थे, जो बाबा रामदेव (1404-1458 ई) के जन्म से पहले, उनके जीवनकाल मे, या समाधि लेने के तुरन्त बाद मे हुए। उस समय पूगल मे कोई पडिहार शासक नही हुए और न ही इनमें से पूगल के किसी भाटी राव को सुगना बाई ब्याही थी। इन पहले के शासको के समय पूगल राज्य का क्षेत्र विस्तृत था, पूर्व मे नागौर, पश्चिम मे सतलज और सिन्ध नदियो के पश्चिमी पार तक, उत्तर मे भटिंडा, अबोहर, भटनेर तक और दक्षिण मे फलोदी, मालाणी तक था। हा, यह सम्भव था कि सुगनाबाई का विवाह पूगल के इतने विस्तृत क्षेत्र के किसी प्रमुख पडिहार सामन्त, अमीर, उमराव, जागीरदार, सेना नायक से हुआ हो और उसे पूगल के राजा की सज्ञा दे दी गई हो।

निवेदन है कि सुगनाबाई को दी गई यातनाओ के लिए पूगल या पूगल के भाटियो को दोषी नहीं ठहरावें।

कुछ तवर भाइयो का यह कहना है कि तवरो के लिए पूगल को बेटी देनी या पूगल की बेटी लेनी वर्जित है। इसकी इनको बाबा रामदेव की 'आन' है। वह अनजाने मे पूगल के भाटिया को इस आन से जोड लेते हैं। निवेदन है कि पूगल के भाटियो के साथ यह अन्याय नहीं करें, अगर 'आन' है तो पूगल के किन्ही पडिहारो के प्रति होगी।

अध्याय–आठ

पूगल के भाटियो का इतिहास

राव रणकदेव (सन् 1380–1414 ई.)

रावल पूनपाल ने जब सन् 1290 ई मे राजगद्दी से पदच्युत किए जाने के पश्चात् जैसलमेर छोडा उस समय उनकी आयु लगभग 35 वर्ष की थी, क्योंकि उस समय उनके पुत्र कुमार लखमन भी उनके साथ थे। रेगिस्तान के कठिन और कष्टदायक जीवन को झेलने के लिए कुमार की आयु पन्द्रह वर्ष से कम नही हो सकती थी, अन्यथा वह छोटी आयु मे पिता के साथ नहीं आ पाते। रावल पूनपाल का अभियान राज्य स्थापित करने का था जिसमे बालक का साथ रहना उनके लिए बाधक होता। रावल पूनपाल का जन्म लगभग सन् 1255 ई मे होना चाहिए। रावल पूनपाल का जीवन अधरझूल म ही बीता, न तो नायको से पूगल छुडाने मे वह सफल हुए और न ही वह अपने लिए स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर सके। कुमार लखमन ने भी अपने पिता क दुर्भाग्य की साझेदारी की और लखमन के पुत्र ने भी अपने पिता और दादा की भांति सकटमय और अभाव का जीवन जीया। रावल पूनपाल के पडपौत्र और लखमन के पौत्र रणकदेव को पूगल मे भाटी राज्य स्थापित करने का और भाटी वश को एक नया राज्य देने का सारा श्रेय था। इन्होने नायको से पूगल का गढ छुडवाया और लगाओ और बलोचों को उस सारे क्षेत्र से मार भगाया। यह पूगल के प्रथम राव, सन् 1380 ई मे हुए। इनके पडदादा रावल पूनपाल ने सन् 1290 ई म जैसलमेर छोडा था। राव रणकदव रावल चाचगदेव (प्रथम) से सात पीढ़ी दूर थे।

राव रणकदेव के जन्म के वर्ष के बारे मे कोई निश्चित अभिलेख उपलब्ध नही है। उस समय का पूगल का अपना कोई अभिलेख नही था और जैसलमेर ने रावल पूनपाल को निष्कासित करके भुला दिया, उनकी भावी पीढियों का अपने इतिहास म कही वर्णन नही किया।

जिस समय राव रणकदेव, अथक सघर्ष और प्रयासो के बाद पूगल आए, उस समय उनकी आयु पच्चीस वर्ष से कम नहीं हो सकती थी। राव रणकदेव के पुत्र राजकुमार शार्दूल (या सादा) ने, जब सन् 1413 ई में वीरगति पाई, उस समय वह अपनी युवा अवस्था की चरम सीमा पर थे और उत्साह व जोश से भरे हुए थे, उनकी आयु पच्चीस वर्ष से अधिक नही थी। इसलिए राजकुमार का जन्म सन् 1388 ई मे हुआ था। उस समय राव रणकदेव की आयु 35 वर्ष की मानें, तब उनके जन्म का वर्ष, सन् 1355 ई उचित प्रतीत होता है। इस तर्क के अनुसार राव रणकदेव रावल पूनपाल के पडपौत्र होने चाहिए, न कि पौत्र। सन् 1355 ई मे कुमार लखमन की आयु 80 वर्ष बैठती थी, इसलिए राव रणकदेव इनके पुत्र नहीं हो सकते, यह उनके पौत्र थे। एक या दो पीढी की आयु के फेरबदल मे

इतिहास पर कोई विपरीत प्रभाव नही पडता, यह निश्चित है कि राव रणकदेव रावल पूनपाल के वशज थे जो स्वय रावल चाचगदेव के वशज थे ।

राव रणकदेव के समकालीन शासक राव रणकदेव, सन् 1380-1414 ई

जैसलमेर	राठौड	दिल्ली
1 रावल घडसी, 1316 61 ई	1 मेहवा में राव मल्लीनाथ, इनके भाई वीरमदे 1383 ई मे मारे गए ।	1 फिरोज तुगलक, सन् 1351-88 ई
2 रावल केहर, 1361-96 ई	2 नागौर म बीरमदे के पुत्र राव चून्डा, 1375-1418 ई । यह सन् 1418 ई मे राव केलण द्वारा मारे गए थे । बीरमदे की मृत्यु के समय यह आठ वर्ष के थे ।	2 इनके और सुलतान खिजर खां सैयद (1414 ई) के बीच मे अनेक शासक हुए ।
3 रावल लक्ष्मण, 1396-1427 ई		

राव रणकदेव को सफलता सुगमता से नही मिली थी और न ही उन्हे यह ईश्वरीय देन थी । इनके पूर्वजो की तीन पीढियो ने कष्ट देखे, समस्याओ से जूझे, साधनो और अर्थ के अभाव मे रहे, दर दर की ठोकरें खाई और अपने व्यक्तिगत जीवन की खुशिया त्यागी । इन सब कष्टो के होते हुए भी इन्होने अपना आत्मविश्वास नही डिगने दिया, लक्ष्य प्राप्ति के निश्चय स नही हटे और अपनी गरिमा को बनाये रखा । इन गुणो के कारण इन्हे स्थानीय जनता का साथ और सहानुभूति मिलती रही । गजनी का तख्त इनके पास रहने से इन्हे सारे भाटियों की स्वामिभक्ति मिली, वह मन ही मन इन्हे शासक स्वीकार करते थे । इनके राजवश का राजपुरुष होने मे किसी को सन्देह नही था ।

राव रणकदेव एक कुशल बलशाली योद्धा और समझदार व्यक्ति थे । इनका व्यक्तित्व असाधारण था । स्थानीय जैतुग और पाहू भाटियो, पवारो, खरलो (पडिहारो) और अन्य जातियो ने इनका नेतृत्व प्रसन्नता से स्वीकार किया, क्योकि यह सभी जातियें अर्द्धविकसित नायको के अत्याचार, अराजकता और उनके दुर्व्यवहार से छुटकारा पाना चाहती थी । यह एक सामूहिक आवाज थी या माग थी कि नायको की अति का अन्त होना चाहिए । इस जन-आक्रोश का राव रणकदेव ने लाभ उठाया और नायको को पूगल छोडने पर बाध्य किया । इस अभियान मे खरलो और पवारो का विशेष योगदान रहा । उच्च जाति और युद्ध कौशल मे पारगत राजपूतो के सामने नायको ने आत्मसमर्पण कर दिया । उन्होने भाटियो के प्रति निष्ठा, ईमानदारी और स्वामिभक्ति की दुहाई दी ।

वैदिक मन्त्रोच्चार के साथ पूगल के गढ को शुद्ध किया गया और लगभग एक सौ वर्ष से नायकों के आवास रहे गढ को पवित्र किया गया । यह एक इतिहास का पटाक्षेप था । उस युग मे छुआछूत एक बहुत प्रबल सामाजिक विचार था, इसलिए सामाजिक मान्यताओ के अनुसार गढ का शुद्धिकरण करना जरूरी था । इसके पश्चात् गजनी का तख्त, सिंहराव और उत्तैराव भाटियो के सरक्षण मे, समारोह म गढ में लाया गया और इसे विधिपूर्वक उचित स्थान पर स्थापित किया गया । समारोह के समय सभी जातिया के स्त्री और पुरुष गढ मे

आए, यह एक उत्सव था जिसमे समस्त पूगलवासी, ऊच नीच, छुआछूत, हिन्दू मुसलमान, छोटे बडे का भेदभाव भूल कर शामिल हुए। वर्षो के बेलगाम उद्दण्ड वातावरण के बाद पूगल पुन सभ्रात राजवश के अधिकार मे आया था। राजपुरोहितो ने वैदिक परम्परा के अनुसार रणकदेव को उनके पूर्वजो के गजनी के तख्त पर आसीन किया। अब यह तख्त योग्य एव बलिष्ठ हाथो मे था, इसकी भी एक सौ वर्ष लम्बी यात्रा थी, जिसकी अब इति हुई। आज भी यह तख्त पूगल के गढ़ को सुशोभित कर रहा है।

राजतिलक के पश्चात् रणकदेव ने अपने आप को पूगल का 'राव' घोषित किया। वैसे रावल पूनपाल के उत्तराधिकारी होने के नाते वह अपने आप को 'रावल' घोषित करने के अधिकारी थे। परन्तु 'रावल' शासक की व्यक्तिगत उपाधि नही थी, यह जोगीराज रतननाथ द्वारा भाटियो के शासको को दी हुई उपाधि थी। इस सम्बोधन का उपयोग उसी वश परम्परा की कड़ी के शासक ही कर सकते थे, पदच्युत शासक के वशज नही कर सकते थे। राव रणकदेव ने रावल पद की गरिमा रखी, ऐसे अगर प्रत्येक नये राज्य के भाटी शासक अपने आप को 'रावल' कहने लग जाते तब 'रावल' पद की गरिमा ही समाप्त हो जाती। क्योकि राव रणकदेव के पास भाटियो का तख्त था, इसलिए अगर वह अपने आप को 'रावल' कहते तब जैसलमेर से सीधे टकराव की स्थिति बन जाती। ऐसी स्थिति से निपटना रणकदेव के लिए इस शैशवावस्था मे सम्भव नही था और वह भी रावल केहर जैसे निर्भीक और शक्तिशाली शासक के समय ? यह राव रणकदेव की समझदारी थी कि जैसलमेर को वरिष्ठ मानते हुए उन्होने वहा के रावल के प्रति निष्ठा और स्वामिभक्ति की दुहाई ली। इस शपथ को उनके वशजो ने सदैव निभाई। जैसलमेर ने भी बड़े होने का उत्तरदायित्व हमेशा निभाया, पूगल के प्रति स्नेहपूर्ण आस्था रखी। जब भी पूगल पर सकट आया, उन्होने तन मन-धन से उसे सहायता और शरण दी व धन-दौलत का मोह त्याग कर पूगल के अधिकार दिलाए। पूगल की शासन-सत्ता सम्भालने के तुरन्त बाद म राव रणकदेव ने नायको को अपने नियन्त्रण और अनुशासन मे किया। उन्होने स्थान स्थान पर घोषणा करवाई कि पूगल की प्रजा की जान और माल की सुरक्षा करना उनका दायित्व था, जिसे वह पूरी तरह जी-जान से निभाएँगे, उनके भूमि सम्बन्धी अधिकार यथावत रहेगे, जागीरदारो और भोगतो को पदच्युत नही किया जाएगा। वह बिखरे और बिगडे हुए प्रशासन मे एकरूपता लाए, उसे सक्रिय बनाया। जागीरदारो, भोगतो, खानो और प्रधानो के अधिकार और सुविधाए यथावत रखते हुए उनसे प्रजा के प्रति मानवीय दृष्टिकोण और नरम रुख अपनाने का आग्रह किया। पूगल क्षेत्र में स्थिरता लौटने लगी, जो लोग पश्चिम की ओर पलायन कर गये थे वह धीरे-धीरे अपने गावो और घरो मे लौटने लगे, उजडे हुए गांव और घर फिर से आबाद होने लगे, व्यापार और माल के लेन-देन मे गति आई, लोगों के चेहरो पर सन्तुष्टीकरण और समृद्धि के भाव उभरने लगे। लगाओ और बलोचो के सताप मे ठहराव आया और जहा उन लोगो ने आक्रामक रुख अपनाया वहा उन्हो उनका सामना करके समाधान किया। उन्होने शक्तिशाली मुलतान के शासको को ऐसा कोई मौका नही दिया जिससे वह यह समझें कि पूगल उनके लिए नई समस्या बन गई या भाटियों के पड़ोसी राज्य से उन्हें कोई दुविधा थी। एक नव स्थापित राज्य के शासन के लिए यह आवश्यक था

कि उनके शक्तिशाली पडोसी उनके प्रति आक्रामक रवैया नही अपनायें और उनसे आशंकित भी नही होवें। एक लम्बे समय के बाद मे पूगल और मुलतान के मार्गो पर माल से लदे हुए लम्बे और सुरक्षित काफिले नजर आने लगे, व्यापारियो की हुडियो का लेन देन होने लगा और पूगल को चूंगी और जकात से आय होने लगी।

पवार, पडिहार (खराल), खोखर, खीची, जोइया और पाहू भाटी इस क्षेत्र के मूल राजपूत निवासी थे। पूगल गजमल पवार और पिंगल राय परमार का राज्य था। यहा जोइया, खीची, खराल, बारी-बारी से राज्य करते रहे। भाटियो ने इस क्षेत्र पर अधिकार करके, मूमनवाहन (519 ई), मरोठ (599 ई), देरावर (852 ई) के गढ बनवाये और सिद्ध देवराज ने सन् 857 ई में पूगल पर अधिकार किया। पूगल, देरावर, मरोठ क्षेत्र मे राव हमीरदे दसोढ़ा का स्वतन्त्र सार्वभौमिक सत्तायुक्त राज्य था। सतलज नदी के पूर्व का सारा क्षेत्र इस राज्य के अधीन था। यह भूमि सुन्दर और सुहावनी कन्याओ के लिए प्रसिद्ध थी, चूहड समेजा राज्य का भाग थी। जोइया राजपूतो की बपौती होने से यह भूमि इनकी मातृभूमि थी। खीचियो ने यहा दस वर्ष और खरालो (पडिहारो) ने चार वर्ष राज्य किया। पाहू भाटियो ने इसे सन् 1046 ई मे पवारो से जीतकर, सन् 1277-88 तक, लगभग 230 वर्ष यहा राज्य किया। इसके बाद इन्हें यह भूमि त्यागनी पडी और इनका रिक्त स्थान नायकों ने ले लिया। उस समय मरोठ मे जोइयो का शासन था, इनके मुलतान के साथ अच्छे सम्बन्ध होने के कारण लगाओ और बलोचो ने इन्हें परेशान नही किया। मुलतान के इशारे पर जोइया पूर्व मे पूगल के नायकों पर अकुश रखते थे।

पूगल में अपनी स्थिति सुदृढ करने के बाद मे राव रणकदेव ने स्थानीय लोगो की सेना का सगठन किया और मरोठ, जो छः सौ वर्ष पहले सन् 770 ई तक, उनके पूर्वजो की राजधानी थी, की ओर बढे। यहा जोइया राजपूतो का राज्य था। उन्होने खरालो की सहायता से मरोठ पर अधिकार किया और इसी अभियान मे पश्चिमी सीमा की सुरक्षा के लिए उन्होने मूमनवाहन पर भी अधिकार कर लिया। कुछ समय बाद मे मरोठ के पूर्व शासक बीकमपाल जोइया ने मरोठ वापिस अपने अधिकार मे ले ली। भाटियो के साथ सम्पर्क मे आने से जोइया को मालूम पडा कि इनका वर्ताव और शासन मुलतान से कही अच्छा था। मुलतान हमेशा उनसे अनाप-सनाप कर वसूली करता था और अनेक प्रकार की अन्य बाधाएँ पहुचाता था, जब कि पूगल का नया राज्य शान्तिमय और सभ्य आचार वाला था। इस प्रकार राव रणकदेव ने कुछ ही दिनो में जोइयो का विश्वास और मित्रता जीत ली। भाटी और जोइये अच्छे मित्र और पडोसी की तरह रहने लगे।

सलखा राठौड के पुत्र रावल मल्लीनाथ (मालदेव) मेहवा मे राज्य करते थे, वीरमदे राठौड इनके छोटे भाई थे और कुमार जगमाल, मल्लीनाथ के पुत्र थे। सलखा राठौड की बहन विमलादेवी की सगाई सिरोही के देवडा राजवश में की हुई थी। एक बार सन् 1305 ई मे जैसलमेर के रावल घडसी युद्ध से घायल अवस्था मे मेहवा आए और उपचार के लिए वहा कुछ दिन रुके। इस अवधि मे विमलादेवी ने उनकी सेवा की, उनसे निकट का सम्पर्क होने से आपस मे प्रेम और सहवास हो गया, इनका रावल घडसी से विवाह कर दिया गया। उस काल मे राजपूत समाज अन्यत्र सगाई होने के बाद भी इस प्रकार के विवाह को हिकारत

से नहीं देखता था। विमलादेवी ने सन् 1361 ई. में केहर को गोद लिया और छः माह पश्चात् स्वयं सती हो गई। इसलिए विमलादेवी की रावल घड़सी के प्रति निष्ठा और आचरण में कोई कमी नहीं थी।

वीरमदे राठौड़ के पास जागीर आदि नहीं होने से जीविका का कोई साधन नहीं था, इसलिए वह लखबेरा (लखुवाली) के शासक डाला जोइया की सेवा में चले गए। डाला जोइया और फिरोज तुगलक (सन् 1351-88 ई.) के मामा, भुकन भाटी अबोहरिया, भटनेर और अबोहर के आस-पास के क्षेत्र के शासक थे। एक बार अवसर पा कर, वीरमदे ने भुकन भाटी के राज्य पर अधिकार करने की नीयत से, उन्हें मार दिया। इससे पहले कि वीरमदे कोई अन्य हानि करते, डाला जोइया ने सूचना मिलते ही उनका पीछा किया और पकड़े जाने पर, सन् 1383 ई. में, उन्हें मिहाणकोट (बडोपल) के पास मार दिया। वीरमदे के उक्त कुकृत्य से जोइयों के मित्र भाटी भी बहुत खिन्न हुए। वीरमदे के वध के समय उनके पुत्र देवराज, गोगादे और चूंडा अपने ननिहाल बेदेरन में अपनी माता के साथ थे। सबसे छोटे पुत्र चूंडा, जिनका जन्म सन् 1375 ई. में हुआ था, को उनके पिता की मृत्यु के पश्चात् कालाऊ गांव के अल्हा चारण की देख-रेख में रहना पड़ा। वहीं वह बड़े हो कर एक दिलेर योद्धा और वीर राजपूत बने। उन्होंने एक के बाद एक युद्ध जीतकर, मंडोर, नागौर और आसपास के क्षेत्रों पर अधिकार किया। जिस राज्य की स्थापना किए बिना ही वीरमदे राठौड़ मर गए थे, वह कार्य उनके छोटे पुत्र चूंडा राठौड़ ने पूर्ण किया।

राव चूंडा के ज्येष्ठ पुत्र राव रिड़मल थे। राव रिड़मल के द्वितीय पुत्र राव जोधा थे और राव बीका, राव जोधा के ज्येष्ठ पुत्र थे।

पश्चिम में जोइयों से अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने के पश्चात् राव रणकदेव ने पूर्व के जांगलू राज्य के सांखलों की ओर ध्यान दिया। इन्होंने सांखलों की भूमि पर अधिकार नहीं करके, उन्हें मित्रता और अच्छे सम्बन्धों का आश्वासन दिया। जोइयों की भांति सांखले अपनी पैतृक भूमि और राज्य से वंचित नहीं होना चाहते थे, इसलिए इस भय से उन्होंने भाटियों की मित्रता स्वीकार की और पड़ोसी के प्रति भाटियों के व्यवहार की सराहना की। सांखलों के पूर्वज पंवार देरावर व पूगल क्षेत्र के शासक थे। पंवारों को पहले रावल सिद्ध देवराज ने पूगल में सन् 857 ई. में परास्त किया और इन्हीं के वंशज पाहू भाटियों ने इन्हें सन् 1046 ई. में पूगल में दुबारा परास्त किया। इसलिए सांखलों के मन में नव आगन्तुक राव रणकदेव के प्रति ईर्ष्या और वैमनस्य होना स्वाभाविक था। इनकी सुषुप्त भावनाओं को समझते हुए और उन्हें विश्वास दिलाने के लिए इन्होंने सुरजड़ा गांव के मुखिया माहेराज सांखले को पूगल राज्य में प्रधान का पद दिया। इससे सांखले सन्तुष्ट नहीं हुए, उनकी आशंकाएं बनी रही। वह नहीं चाहते थे कि उनके पड़ोस में अन्य कोई शक्ति उदारता से शासन करे। सांखले पीढ़ियों से रेगिस्तान में स्वच्छन्द विचरण करते थे, उन्हें कोई रोक-टोक नहीं थी। पश्चिम में मुलतान और उनके बीच पड़ने वाले रेतीले प्रदेश का उन्हें संरक्षण प्राप्त था, इसे पार करना मुलतान के लिए दुष्कर था और फिर उन्हें इधर आने की आवश्यकता भी कहां थी? बीकानेर, जोधपुर राज्य अभी स्थापित ही नहीं हुए थे। पूर्व में मन्डोर और नागौर में राठौड़ों की मामूली सी हलचल थी। इसलिए जांगलू और मुलतान

के बीच मे पूगल मे नई शक्ति के उभरने से सांखले प्रसन्न नहीं थे और माहेराज सांखला भी भाटियो के प्रति आसक्त नही थे। वह हमेशा भाटियो के प्रति अहित की सोचते थे क्योंकि इनके पूर्वजो से इन्होने पूगल दो बार छीना था।

जैसलमेर के राजवंश और गुजरात के सोलंकिया, मेवाड के सिसोदिया, अमरकोट क सोढो, अजमेर के चौहान, आदि के पारिवारिक और वैवाहिक सम्बन्ध शताब्दियो से थे। भाटियो के अन्य भाइयो और शाखाओ के सम्बन्ध अपने अपने स्तर पर स्थानीय या पडोसी राठौडो, पवारो, पडिहारा, खीचियो, जोइयो, सोढा आदि राजपूत जातियो से थे। बीकानेर, जोधपुर और मारवाड के राठौड और आमेर क कच्छावा अभी भाटियों के समान शक्ति के रूप म नही उभरे थे।

सन् 1361 ई म रावल घडसी की मृत्यु के पश्चात् उनकी राणी विमलादेवी ने कुमार केहर का इस शर्त के साथ गोद लिया कि उनकी (कहर की) मृत्यु के बाद वह अपने बडे भाई हमीर के पौत्र कुमार जैतसी को जैसलमेर की राजगद्दी देंगे। सन् 1361 ई म कुमार जैतसी अभी अवयस्क थे और वह उस समय की बिगडी हुई स्थिति को सम्भालने के योग्य नही थे। हमीर ने सन् 1294 ई मे खिलजी की सेना के विरुद्ध अद्भुत वीरता दिखाई थी। रावल केहर ने कुमार जैतसी को जैसलमेर के भावी शासक के रूप मे देखते हुए इनकी सगाई मेवाड के राणा लाखा (1382 1421 ई) की पुत्री राजकुमारी लाला मेवाडी स की। कुछ इतिहासकारा का मत है कि लाला मेवाडी राणा कुम्भा की पुत्री थी, किन्तु यह सही नही है। सन् 1382-1421 ई म राणा लाखा मेवाड के शासक थ, इनके बाद मे राणा मोकल (1421-1433 ई) हुए और राणा कुम्भा इनके बाद मे (सन् 1433 68 ई) हुए। इसलिए राणा कुम्भा रावल केहर के समकालीन नही थे। लाला मेवाडी की कुमार जैतसी के साथ सगाई के कुछ समय पश्चात्, नागोर के राव चूडा की पुत्री राजकुमारी हसा का विवाह राणा लाखा से हुआ था। कुमारी हसा राव रिडमल की बहन थी। राव रिडमल इनके पास चित्तौड मे रहते थे।

सन् 1390 ई म कुमार जैतसी अपने छोटे भाई लूणकरण और अन्य 120 साथियो के साथ बारात लेकर जैसलमेर से चित्तौड के लिए रवाना हुए। मार्ग म सुरजडा गाव के पूगल के प्रधान माहेराज सांखला (गोपालदास के पुत्र), बारात के साथ हो लिए। यह अच्छे और बुरे सुगनो के जानकार थे। मार्ग मे दाएँ बाएँ मिलने वाले पशुओ और चिडियाओ को देखकर यह भविष्य की घटनाओ का बोध कराते थे। इन्होने ऐसे ही कुछ सुगनों का विश्लेषण करके निष्कर्ष निकाला कि कुमार जैतसी और लाला मेवाडी का विवाह घोर सकट का सूचक था और इस बन्धन से दोनो परिवारो और राजवशा का नाश होना अवश्यभावी था। वह अन्धविश्वास का युग था, लोगो को पूगल के प्रधान की वाणी पर विश्वास भी था, उन्हे गलत साबित करके कौन सकट मोल ले? बारात वही मार्ग मे ही ठहर गई, माहेराज सांखले ने उनकी अच्छी आवभगत की। बारात कई दिनो तक वही रुकी रही। धीरे धीरे माहेराज साखले ने कुमार जैतसी और उनके साथियों के मन मे यह बात बैठाई कि कवारी बारात का जैसलमेर लौटना राजघराने के लिए अशोभनीय होगा। इसलिए किसी न किसी वधू को ब्याहकर साथ लेकर जाने से उनकी प्रतिष्ठा बनी रहेगी। येन केन प्रकारेण उन्होने

अपनी पुत्री के साथ कुमार जैतसी के विवाह का प्रस्ताव रखा। बाराती वैसे ही कई दिनों से परेशान और दुविधा में थे, उन्होंने यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। माहेराज सांखले का इस सम्बन्ध के पीछे यह ध्येय था कि इससे पूगल सांखलों का लिहाज रखेगा और कुमार जैतसी के जैसलमेर का रावल बनते ही, वह उनकी सहायता से पूगल से भाटियों को उखाड़ बाहर करेंगे। रावल केहर अब बूढ़े हो चले थे (मृत्यु सन् 1396 ई.) और पूगल को स्थापित हुए केवल दस वर्ष ही हुए थे। इस प्रकार सांखलों के ध्येय की निकट भविष्य में प्राप्ति उन्हें सम्भव लगती थी।

जब रावल केहर को समाचार मिला कि कुमार जैतसी की बारात मेवाड़ पहुंची ही नहीं, बीच मार्ग में ही पूगल के प्रधान माहेराज सांखले की पुत्री को ब्याह कर सुरजड़ा से लौट रही थी, तो वे आग बबूला हो गए। इससे राणा लाखा को दिया हुआ उनका वचन भंग हो रहा था, साथ में मेवाड़ और जैसलमेर के राजपरिवारों की प्रतिष्ठा का प्रश्न भी था। इसे मेवाड़ शायद गलत समझकर बदला लेने की सोचे और अकारण आपस में रक्तपात हो। दूसरे, माहेराज सांखले की औकात ही क्या थी कि वह अपनी बेटी के लिए इतने ऊंचे घराने के सपने सजोये बैठे थे? उनके सामने नवगठित पूगल के राज्य के प्रधान की हैसियत ही क्या थी? अनुभवी रावल केहर शायद सांखले की बदनीयत भाप गए हो और वह अपने वंश के नव स्थापित पूगल राज्य का अहित नहीं होने देना चाहते हो। रावल केहर ने कुमार जैतसी को देश निकाला दिया और उन्हें आदेश भिजवाये कि वह भविष्य में अपना मुंह उन्हें कभी नहीं दिखाएँ।

इस प्रकार माहेराज सांखले की सारी योजना अधरझूल में रह गई। परन्तु वह चालाक और होशियार थे। वह इस प्रकार से जल्दी हार मानने वाले नहीं थे। उन्होने योजना बनाई कि उनकी पुत्री जैसलमेर की न सही, पूगल की रानी अवश्य बन सकती थी। उन्होने पक्का निश्चय किया कि वह अपने जवाई के लिए राज्य प्राप्त करके रहेंगे और रावल केहर को उनके प्रति उनकी भावनाओं के कारण नीचा देखना पड़ेगा। उन्होंने सोचा कि राव रणकदेव के स्थान पर कुमार जैतसी के राव बनने से जहां सांखलों की स्थिति सुदृढ़ होगी, वहा उनके जैसलमेर और पूगल दोनो के शासक बनने के आसार उभरेंगे और रावल केहर शायद अपना रानी विमला देवी को दिए हुए वचन को निभाने के लिए बदली हुई परिस्थितियों से समझौता कर लें।

उन्होने उपरोक्त सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए रात्रि में पूगल के गढ़ पर अचानक आक्रमण करने की योजना बनाई। इसमे माहेराज सांखले के पुत्र आलमसी, कुमार जैतसी व लूणकरण और रतनसी देवड़ा के अलावा, अन्य बाराती और सांखलों की सेना शामिल थी। राव रतनसी देवड़ा सिरोही के राव थे और कुमार जैतसी की पहली पत्नी के भाई थे, यह बारात में मेवाड़ जाने के लिए जैसलमेर आए हुए थे। योजना के अनुसार कुमार जैतसी ने उचित अवसर देख कर पूगल के गढ़ पर धावा बोल दिया। पूगल गढ़ के प्रहरी सचेत थे, क्योंकि नायक, लगा और बलोच कभी भी वहां आक्रमण कर सकते थे। उन्हें अपने प्रधान माहेराज सांखला या अपने वंशज कुमार जैतसी से ऐसी कोई आशंका नहीं थी। गढ़ के रक्षकों ने आक्रमणकारियों का डटकर सामना किया। रात के अन्धेरे में कुमार

जैतसी, कुमार लूणकरण और राव रतनसी देवडा मारे गए। इनके अलावा दोनो ओर के कई आदमी काम आये। जब सुबह मृतको की पहचान हुई तब राव रणकदेव अपने वशजो, जैतसी और लूणकरण, की लाशें देखकर अत्यन्त दुखी हुए। उन्हें वहा लगाओ और बलोचो की लाशें मिलने की उम्मीद थी। उन्होने अपने वशजो एव राव रतनसी देवडा और अन्यो का दाह सस्कार सत्कारपूर्वक किया। जब उन्हें इस सारे षड्यन्त्र के पीछे माहेराज साखले के होने का मालूम पडा, तब उन्होने प्रधान के पद से उन्हें बरखास्त किया और उनको दी हुई जागीर और मानद जब्त कर ली।

अपने ही वश में दो राजकुमारो की हत्या का अपराध बोध राव रणकदेव को सताने लगा। उन्होने इस अपराध को जनता के सामने स्वीकार किया, जबकि राजकुमारो की हत्या उनके द्वारा की ही नही गई थी, वह गढ़ पर अधिकार करने के कुप्रयास मे मारे गए थे। हत्या के लिए प्रायश्चित करने के लिए राव तीर्थयात्रा पर गए और आवश्यक क्रिया-कर्म करके उचित दान पुण्य किया। उन्हें आशका थी कि उन्होने जैसलमेर के भावी शासक को मारकर अपने आप को अनजाने म रावल केहर का दोषी बना लिया था। इसके लिए रावल केहर उनसे अप्रसन्न होगे और उन्होंने अगर पूगल को दण्ड देने की ठान ली तो उनका नया राज्य समाप्त हो जाएगा। यही चिन्ता बार बार उन्हे सता रही थी। उनके मन मे यह विचार भी आ रहा था कि कही रावल केहर, इसे उनके पूर्वजों द्वारा रावल पूनपाल के साथ किए गए अनुचित वर्ताव के लिए, अब राव रणकदेव द्वारा बदला लिये जाने की कार्यवाही नही समझें। इसी उलझन के समाधान के लिए तीर्थयात्रा से लौटने पर वह साहस बटोर कर जैसलमेर क्षमा याचना करने गए और वहा रावल केहर को वस्तुस्थिति से अवगत कराना चाहा। उन्होंने शोक के काले वस्त्र धारण किए और जैसलमेर पहुचे। उस समय रावल केहर देग रायजी के दर्शनार्थ गए हुए थे। राव रणकदेव उनके पीछे वहा गए और मार्ग म रासलो गांव के पास उनकी वापिस आते हुए रावल से भेंट हुई। राव रणकदेव ने दुखान्त घटना पर अफसोस किया और उनके द्वारा अनजाने में की गई घोर भूल के लिए उनसे क्षमा मागी। रावल केहर ने उन्हे गले लगाया, स्नेह दर्शाया और उनकी उचित आव-भगत की। रावल ने उन्हे आश्वस्त किया कि उन्हें घटना की पूरी जानकारी मिल गई थी। माहेराज साखले ने ही षड्यन्त्र करके अपनी बेटी का विवाह राजकुमार जैतसी से रचाया था और उन्होंन ही अपनी महत्वाकाक्षा की पूर्ति के लिए पूगल के गढ पर आक्रमण करवाया था। रात के अन्धेरे मे दोनो राजकुमार मारे गए थे, इसमें उनका कोई दोष नहीं था। उन्होने राव रणकदेव को मान सम्मान दिया और परम्परागत पोशाक और सिरोपाव भेंट करके पूर्ण राजकीय सत्कार के साथ विदा किया। राव रणकदेव के मन का घाव धुल गया।

इस सारी घटना का हम रावल केहर के दृष्टिकोण से विश्लेषण करें। राजकुमार जैतसी को राजगद्दी देने के लिए उनके द्वारा दिए गए वचन को तीस साल हो चुके थे (1361-1390 ई), उनके स्वय के राजकुमार अब जवान हो गए थे और वह योग्य भी थे। हर एक पिता की इच्छा रहती है कि उनके बाद मे उनका पुत्र उनका स्थान ग्रहण करे। शायद रावल केहर वचनबद्धता को निभाने और पुत्र स्नेह के असमजस म पड़े थे, कि कुमार जैतसी द्वारा माहेराज सांखले की पुत्री से विवाह करने से, अपने वचन से मुक्ति पाने का

अपनी पुत्री के साथ कुमार जैतसी के विवाह का प्रस्ताव रखा। बाराती वैसे ही कई दिनो से परेशान और दुविधा में थे, उन्होंने यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। माहेराज साखला का इस सम्बन्ध के पीछे यह ध्येय था कि इससे पूगल साखलों का लिहाज रखेगा और कुमार जैतसी के जैसलमेर का रावल बनते ही, वह उनकी सहायता से पूगल से भाटियो को उखाड बाहर करेंगे। रावल केहर अब बूढ़े हो चले थे (मृत्यु सन् 1396 ई.) और पूगल को स्थापित हुए केवल दस वर्ष ही हुए थे। इस प्रकार साखलो के ध्येय की निकट भविष्य मे प्राप्ति उन्हे सम्भव लगती थी।

जब रावल केहर को समाचार मिला कि कुमार जैतसी की बारात मेवाड पहुची ही नही, बीच मार्ग मे ही पूगल के प्रधान माहेराज साखले की पुत्री को ब्याह कर सुरजडा से लौट रही थी, तो वे आग बबूला हो गए। इससे राणा लाखा को दिया हुआ उनका वचन भग हो रहा था, साथ में मेवाड और जैसलमेर के राजपरिवारो की प्रतिष्ठा का प्रश्न भी था। इसे मेवाड शायद गलत समझकर बदला लेने की सोचे और अकारण आपस मे रक्तपात हो। दूसरे, माहेराज साखले की औकात ही क्या थी कि वह अपनी बेटी के लिए इतने ऊचे घराने के सपने सजोये बैठे थे? उनके सामने नवगठित पूगल के राज्य के प्रधान की हैसियत ही क्या थी? अनुभवी रावल केहर शायद साखले की बदनीयत भाप गए हो और वह अपने वश मे नव स्थापित पूगल राज्य का अहित नही होने देना चाहते हो। रावल केहर ने कुमार जैतसी को देश निकाला दिया और उन्हे आदेश भिजवाये कि वह भविष्य मे अपना मुह उन्हें कभी नही दिखाएँ।

इस प्रकार माहेराज साखले की सारी योजना अधरझूल मे रह गई। परन्तु वह चालाक और होशियार थे। वह इस प्रकार से जल्दी हार मानने वाले नही थे। उन्होने योजना बनाई कि उनकी पुत्री जैसलमेर की न सही, पूगल की रानी अवश्य बन सकती थी। उन्होने पक्का निश्चय किया कि वह अपने जवाई के लिए राज्य प्राप्त करके रहेगे और रावल केहर को उनके प्रति उनकी भावनाओ के कारण नीचा देखना पडेगा। उन्होने सोचा कि राव रणकदेव के स्थान पर कुमार जैतसी के राव बनने से जहा साखलो की स्थिति सुदृढ होगी, वहा उनके जैसलमेर और पूगल दोनो के शासक बनने के आसार उभरेंगे और रावल केहर शायद अपना रानी विमला देवी को दिए हुए वचन को निभाने के लिए बदली हुई परिस्थितियो से समझौता कर लें।

उन्होने उपरोक्त सम्भावनाओं को ध्यान मे रखते हुए रात्रि मे पूगल के गढ़ पर अचानक आक्रमण करने की योजना बनाई। इसमे माहेराज साखले के पुत्र आलमसी, कुमार जैतसी व लूणकरण और रतनसी देवडा के अलावा, अन्य बाराती और साखलों की सेना शामिल थी। राव रतनसी देवडा सिरोही के राव थे और कुमार जैतसी की पहली पत्नी के भाई थे, यह बारात मे मेवाड जाने के लिए जैसलमेर आए हुए थे। योजना के अनुसार कुमार जैतसी ने उचित अवसर देख कर पूगल के गढ पर धावा बोल दिया। पूगल गढ़ के प्रहरी सचेत थे, क्योकि नापर, लगा और बलोच कभी भी वहां आक्रमण कर सकते थे। उन्हें अपने प्रधान माहेराज साखला या अपने वशज कुमार जैतसी से ऐसी कोई आशका नहीं थी। गढ़ के रक्षको ने आक्रमणकारियो का डटकर सामना किया। रात के अन्धेरे मे कुमार

जैतसी, कुमार लूणकरण और राव रतनसी देवडा मारे गए। इनके अलावा दोनो ओर के कई आदमी काम आये। जब सुबह मृतको की पहचान हुई तब राव रणकदेव अपने वशजो, जैतसी और लूणकरण, की लाशें देखकर अत्यन्त दुखी हुए। उन्हें वहा लगाओ और बलोचो की लाशें मिलने की उम्मीद थी। उन्होने अपने वशजो एव राव रतनसी देवडा और अन्यो का दाह सस्कार सरकारपूर्वक किया। जब उन्हे इस सारे षड्यन्त्र के पीछे माहेराज साखले के होने का मालूम पडा, तब उन्होने प्रधान के पद से उन्हे बरखास्त किया और उनको दी हुई जागीर और मानद जब्त कर ली।

अपने ही वश के दो राजकुमारो की हत्या का अपराध बोध राव रणकदेव को सताने लगा। उन्होने इस अपराध को जनता के सामने स्वीकार किया, जबकि राजकुमारो की हत्या उनके द्वारा की ही नही गई थी, वह गढ़ पर अधिकार करने के कुप्रयास मे मारे गए थे। हत्या के लिए प्रायश्चित करने के लिए राव तीर्थयात्रा पर गए और आवश्यक क्रिया-कर्म करके उचित दान पुण्य किया। उन्हें आशका थी कि उन्होने जैसलमेर के भावी शासक को मारकर अपने आप को अनजाने मे रावल केहर का दोषी बना लिया था। इसके लिए रावल केहर उनसे अप्रसन्न होगे और उन्होंने अगर पूगल को दण्ड देने की ठान ली तो उनका नया राज्य समाप्त हो जाएगा। यही चिन्ता बार बार उन्हे सता रही थी। उनके मन में यह विचार भी आ रहा था कि कही रावल केहर, इसे उनके पूर्वजो द्वारा रावल पूनपाल के साथ किए गए अनुचित वर्ताव के लिए, अब राव रणकदेव द्वारा बदला लिये जाने की कार्यवाही नहीं समझें। इसी उलझन के समाधान के लिए तीर्थयात्रा से लौटने पर वह साहस बटोर कर जैसलमेर क्षमा याचना करने गए और वहा रावल केहर को वस्तुस्थिति से अवगत कराना चाहा। उन्होने शोक के काले वस्त्र धारण किए और जैसलमेर पहुचे। उस समय रावल केहर देग रायजी के दर्शनार्थ गए हुए थे। राव रणकदेव उनके पीछे वहा गए और मार्ग मे रासलो गाव के पास उनकी वापिस आते हुए रावल से भेंट हुई। राव रणकदेव ने दुखान्त घटना पर अफसोस किया और उनके द्वारा अनजाने मे की गई घोर भूल के लिए उनसे क्षमा मागी। रावल केहर ने उन्हे गले लगाया, स्नेह दर्शाया और उनकी उचित आव-भगत की। रावल ने उन्ह आश्वस्त किया कि उन्ह घटना की पूरी जानकारी मिल गई थी। माहेराज साखले ने ही षड्यन्त्र करके अपनी बेटी का विवाह राजकुमार जैतसी से रचाया था और उन्होन ही अपनी महत्वाकाक्षा की पूर्ति के लिए पूगल के गढ पर आक्रमण करवाया था। रात के अन्धेरे मे दोनो राजकुमार मारे गए थे, इसमे उनका कोई दोष नही था। उन्होने राव रणकदेव को मान-सम्मान दिया और परम्परागत पोशाक और सिरोपाव भेंट करके पूर्ण राजकीय सत्कार के साथ विदा किया। राव रणकदेव के मन का घाव धुल गया।

इस सारी घटना का हम रावल केहर के दृष्टिकोण से विश्लेषण करें। राजकुमार जैतसी को राजगद्दी देने के लिए उनके द्वारा दिए गए वचन को तीस साल हो चुके थे (1361-1390 ई.), उनके स्वय के राजकुमार अब जवान हो गए थे और वह योग्य भी थे। हर एक पिता की इच्छा रहती है कि उनके बाद मे उनका पुत्र उनका स्थान ग्रहण करे। शायद रावल केहर वचनबद्धता को निभाने और पुत्र स्नेह के असमजस मे पडे थे, कि कुमार जैतसी द्वारा माहेराज साखले की पुत्री से विवाह करने से, अपने वचन से मुक्ति पाने का

अपनी पुत्री के साथ कुमार जैतसी के विवाह का प्रस्ताव रखा। बाराती वैसे ही कई दिनो परेशान और दुविधा मे थे, उन्होंने यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। माहेराज साख का इस सम्बन्ध मे पीछे यह ध्येय था कि इससे पूगल साखलों का लिहाज रखेगा और कुमार जैतसी के जैसलमेर का रावल बनते ही, वह उनकी सहायता से पूगल से भाटियों क उखाड़ बाहर करेंगे। रावल केहर अब बूढ़े हो चले थे (मृत्यु सन् 1396 ई.) और पूग को स्थापित हुए केवल दस वर्ष ही हुए थे। इस प्रकार साखलो के ध्येय की निकट भविष्य म प्राप्ति उन्हे सम्भव लगती थी।

जब रावल केहर को समाचार मिला कि कुमार जैतसी की बारात मेवाड़ पहुची ही नही, बीच मार्ग मे ही पूगल के प्रधान माहेराज साखले की पुत्री को ब्याह कर मुरजड़ा से लौट रही थी, तो वे आग बबूला हो गए। इससे राणा लाखा को दिया हुआ उनका वचन भग हो रहा था, साथ मे मेवाड और जैसलमेर के राजपरिवारो की प्रतिष्ठा का प्रश्न भी था। इस मेवाड शायद गलत समझकर बदला लेने की सोचे और अकारण आपस मे रक्तपात हो। दूसरे, माहेराज साखले की औकात ही क्या थी कि वह अपनी बेटी के लिए इतने ऊचे घराने के सपने सजोये बैठे थे? उनके सामने नवगठित पूगल के राज्य के प्रधान की हैसियत ही क्या थी? अनुभवी रावल केहर शायद साखले की बदनीयत भाप गए हो और वह अपने वश के नव स्थापित पूगल राज्य का अहित नही होने देना चाहते हो। रावल केहर ने कुमार जैतसी को देश निकाला दिया और उन्हे आदेश भिजवाये कि वह भविष्य मे अपना मुह उन्हे कभी नहीं दिखाएँ।

इस प्रकार माहेराज साखले की सारी योजना अधरझूल म रह गई। परन्तु वह चालाक और होशियार थे। वह इस प्रकार से जल्दी हार मानने वाले नही थे। उन्होंने योजना बनाई कि उनकी पुत्री जैसलमेर की न सही, पूगल की रानी अवश्य बन सकती थी। उन्होंने पक्का निश्चय किया कि वह अपने जवाई के लिए राज्य प्राप्त करके रहेंगे और रावल केहर को उनके प्रति उनकी भावनाओं के कारण नीचा देखना पड़ेगा। उन्होंने सोचा कि राव रणकदेव के स्थान पर कुमार जैतसी के राव बनने से जहा साखलो की स्थिति सुदृढ़ होगी, वहा उनके जैसलमेर और पूगल दोनो के शासक बनने के आसार उभरेंगे और रावल केहर शायद अपना रानी विमला देवी को दिए हुए वचन को निभाने के लिए बदली हुई परिस्थितियो से समझौता कर लें।

उन्होंने उपरोक्त सम्भावनाओ को ध्यान मे रखते हुए रात्रि म पूगल के गढ़ पर अचानक आक्रमण करने की योजना बनाई। इसमे माहेराज साखले के पुत्र आलमसी, कुमार जैतसी व लूणकरण और रतनसी देवड़ा के अलावा, अन्य बाराती और साखलो की सेना शामिल थी। राव रतनसी देवड़ा सिरोही के राव थे और कुमार जैतसी की पहली पत्नी के भाई थे, यह बारात मे मेवाड जाने के लिए जैसलमेर आए हुए थे। योजना के अनुसार कुमार जैतसी ने उचित अवसर देख कर पूगल के गढ़ पर धावा बोल दिया। पूगल गढ़ के प्रहरी सचेत थे, क्योकि नायक, लगा और बलोच कभी भी वहां आक्रमण कर सकते थे। उन्हे अपने प्रधान माहेराज साखला या अपने वशज कुमार जैतसी से ऐसी कोई आशका नही थी। गढ़ के रक्षको ने आक्रमणकारियों का डटकर सामना किया। रात के अन्धेरे मे कुमार

जैतसी, कुमार लूणकरण और राव रतनसी देवडा मारे गए। इनके अलावा दोनो ओर के कई आदमी काम आये। जब सुबह मृतको की पहचान हुई तब राव रणकदेव अपने वशजो, जैतसी और लूणकरण, की लाशें देखकर अत्यन्त दुखी हुए। उन्हे वहा लगाओ और बलोचो की लाशें मिलने की उम्मीद थी। उन्होने अपने वशजों एव राव रतनसी देवडा और अन्यो का दाह सस्कार सत्कारपूर्वक किया। जब उन्हे इस सारे षड्यत्र के पीछे माहेराज सांखले के होने का मालूम पडा, तब उन्होने प्रधान के पद से उन्हें बरखास्त किया और उनको दी हुई जागीर और मानद जब्त कर ली।

अपने ही वश के दो राजकुमारो की हत्या का अपराध बोध राव रणकदेव को सताने लगा। उन्होंने इस अपराध को जनता के सामने स्वीकार किया, जबकि राजकुमारो की हत्या उनके द्वारा की ही नहीं गई थी, वह गढ़ पर अधिकार करने के कुप्रयास मे मारे गए थे। हत्या के लिए प्रायश्चित करने के लिए राव तीर्थयात्रा पर गए और आवश्यक क्रिया-कर्म करके उचित दान पुण्य किया। उन्हे आशका थी कि उन्होने जैसलमेर के भावी शासक को मारकर अपने आप को अनजाने मे रावल केहर का दोषी बना लिया था। इसके लिए रावल केहर उनसे अप्रसन्न होंगे और उन्होने अगर पूगल को दण्ड देने की ठान ली तो उनका नया राज्य समाप्त हो जाएगा। यही चिन्ता बार-बार उन्हे सता रही थी। उनके मन मे यह विचार भी आ रहा था कि कही रावल केहर, इसे उनके पूर्वजों द्वारा रावल पूनपाल के साथ किए गए अनुचित वर्ताव के लिए, अब राव रणकदेव द्वारा बदला लिये जाने की कार्यवाही नहीं समझें। इसी उलझन के समाधान के लिए तीर्थयात्रा से लौटने पर वह साहस बटोर कर जैसलमेर क्षमा याचना करने गए और वहा रावल केहर को वस्तुस्थिति से अवगत कराना चाहा। उन्होंने शोक के काले वस्त्र धारण किए और जैसलमेर पहुचे। उस समय रावल केहर देग रायजी के दर्शनार्थ गए हुए थे। राव रणकदेव उनके पीछे वहा गए और मार्ग मे रासलो गाव के पास उनकी वापिस आते हुए रावल से भेंट हुई। राव रणकदेव ने दुखान्त घटना पर अफसोस किया और उनके द्वारा अनजाने मे की गई घोर भूल के लिए उनसे क्षमा मागी। रावल केहर ने उन्हे गले लगाया, स्नेह दर्शाया और उनकी उचित आव-भगत की। रावल ने उन्हें आश्वस्त किया कि उन्हें घटना की पूरी जानकारी मिल गई थी। माहेराज सांखले ने ही षड्यत्र करके अपनी बेटी का विवाह राजकुमार जैतसी से रचाया था और उन्होन ही अपनी महत्वाकाक्षा की पूर्ति के लिए पूगल के गढ़ पर आक्रमण करवाया था। रात के अन्धेरे मे दोनों राजकुमार मारे गए थे, इसमे उनका कोई दोष नही था। उन्होंने राव रणकदेव को मान-सम्मान दिया और परम्परागत पोशाक और सिरोपाव भेंट करके पूर्ण राजकीय सत्कार के साथ विदा किया। राव रणकदेव के मन का घाव धुल गया।

इस सारी घटना का हम रावल केहर के दृष्टिकोण से विश्लेषण करें। राजकुमार जैतसी को राजगद्दी देने के लिए उनके द्वारा दिए गए वचन को तीस साल हो चुके थे (1361-1390 ई.), उनके स्वय के राजकुमार अब जवान हो गए थे और वह योग्य भी थे। हर एक पिता की इच्छा रहती है कि उनके बाद में उनका पुत्र उनका स्थान ग्रहण करे। शायद रावल केहर वचनबद्धता को निभाने और पुत्र स्नेह के असमंजस मे पडे थे, कि कुमार जैतसी द्वारा माहेराज सांखले की पुत्री से विवाह करने से, अपने वचन से मुक्ति पाने का

एक अच्छा बहाना उन्हें मिल गया। वैसे राजपुत्र के लिए इस विवाह का होना कोई अनहोनी घटना नहीं थी। जब समाज अनेक विवाह करने की मान्यता देता था तब इस एक और विवाह करने मे कोई दोष नही था। अगर रावल केहर चाहते तो अब भी कुमार जैतसी को ब्याहने मेवाड भेज सकते थे। रावल केहर की अपने पुत्र को राज्य देने की इच्छा राव रणकदेव ने कुमार जैतसी को मारकर पूरी कर दी। इसलिए वह मन ही मन राव रणकदेव का अहसान भी मानते होगे। रावल केहर के मानस का इससे स्पष्ट मालूम पड़ता था कि इस घटना के तुरन्त बाद मे उन्होने अपने ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार केलण के स्थान पर छोटे पुत्र कुमार लक्ष्मण को अपना उत्तराधिकारी बनाया। इससे स्पष्ट था कि उनके मन मे कुछ समय पहले से कुमार लक्ष्मण का हित और राजकुमार केलण का अहित घर किए हुए था और कुमार जैतसी की असमय मृत्यु से उनका ध्येय अपने आप पूर्ण हो गया। राजकुमार केलण अपने पिता के जीवनकाल में ही जैसलमेर छोड कर अपनी जागीर आसिणकोट चले गए थे।

राव रणकदेव की नीति, भाईचारे, मित्रता और शान्त रहने की थी। उन्होने जैसलमेर जा कर रावल केहर का मन जीत लिया था और बातचीत म रावल केहर ने उन्हे पूर्ण सहयोग का वचन दिया। मुलतान के विरुद्ध उन्होने दुबके रहने की नीति अपनाई ताकि अकारण शक्तिशाली पडोसी को क्यो उकसाया जावे ? अब जागलू के साखले उनसे नाराज थे, जिनसे निपटने की क्षमता उनमे थी। लेकिन पूगल एक साथ जैसलमेर, मुलतान और जांगलू से निपटने म सक्षम नही था। इसलिए उनके द्वारा अपनाई गई नीति पूगल के हित मे थी।

जिस समय राव रणकदेव (सन् 1380 ई) पूगल क्षेत्र म अपना अधिकार जमा रहे थे, उस समय सुलतान फिरोज तुगलक (सन् 1351 88 ई) दिल्ली के शासक थे। फिरोज तुगलक ग्यासुद्दीन तुगलक के भाई रजब के पुत्र थे। रजब का विवाह अबोहर के भाटी प्रमुख राय रणमल की पुत्री बीबी नायला से इस शर्त पर हुआ था कि दिल्ली के शासक [illegible] बीबी नायला के पुत्र थे।

[illegible] था

अबोहरिया के पुत्र थे। एक भाई हिन्दू भाटी रहा दूसरा मुस [illegible] [illegible] किन

ज्यादातर मत उसके भाटियो के भानजे होने के पक्ष मे है।

उस समय की मुलतान और सिन्ध प्रदेशो की बिगडी हुई राजनैतिक और सैनिक स्थिति का लाभ उठाते हुए राव रणकदेव ने अपने राज्य का विस्तार किया। सन् 1351 ई में सिन्ध मे मोहम्मद तुगलक की मृत्यु के बाद भाटियों की सहायता से ही सुलतान फिरोज तुगलक सन् 1363 ई म सिन्ध पर नियन्त्रण कर सके थ। इसम पहले सन् 1361–62 मे सुलतान फिरोज तुगलक ने एक विशाल सेना के साथ सिन्ध पर आक्रमण किया था। इस सेना मे भयानक महामारी फैलने के कारण उन्होंने अपनी सेना को गुजरात की तरफ पीछे हटाने का निर्णय लिया। यह सेना कच्छ और जैसलमेर के क्षेत्र मे भटक गई, इसका छ माह तक अता पता ही नही लगा। इस समय सुलतान फिरोज तुगलक की जैसलमेर के भाटियो ने बहुत सहायता की, जिससे वह बची हुई सेना को उबार सके।

राव रणकदेव ने मूमनवाहन और मरोठ अधिकार मे लिए और उनके पास पडोस का क्षेत्र जीतकर अपने राज्य मे मिलाया। भाटियों का मानजा होने के नाते और जैसलमेर के अहसान के कारण सुलतान ने राव रणकदेव की हरकतो की अनदेखी की। अपनी माटी माता के कारण, सुलतान फिरोज तुगलक मे राजपूतो के अनेक अच्छे गुण थे और उनका हिन्दुओ के प्रति रवैया सहनशीलता का था।

जैसलमेर के रावल केहर का देहान्त सन् 1396 ई मे हो गया, इनके स्थान पर राजकुमार लक्ष्मण रावल बने, जिन्होने सन् 1427 ई तक राज्य किया। राव रणकदेव की मृत्यु सन् 1414 ई मे हुई थी और नागौर के राव चून्डा को राव केलण ने सन् 1418 ई. मे मारा था।

तैमूर ने सन् 1398 ई मे भारत पर आक्रमण किया। उनका इस आक्रमण के लिए कोई ध्येय या स्पष्ट लक्ष्य नहीं था। वह एक महत्वाकांक्षी योद्धा थे, जिन्हें अधिक से अधिक क्षेत्र पर विजय करने मे सतोष था और इन क्षेत्रो की धन सम्पदा को लूटकर अपने देश मे ले जाने का ही उनका एकमात्र ध्येय था। इसी दौरान जितने गैर मुसलमानो को वह मार सकते थे, मारते थे। उनके पौत्र पीर मोहम्मद ने, जो उनसे पहले सन् 1397 ई. मे भारत पर आक्रमण करने रवाना हुए थे, छ माह के घेरे के बाद मुल्तान पर अधिकार किया। वहां से वह दिपालपुर और पाकपट्टन पर अधिकार करते हुए सतलज नदी के पश्चिमी किनारे पर रुके। वहा सन् 1398 ई मे तैमूर सेना लेकर उनसे आ मिले। तैमूर ने वहा से भटनेर पर आक्रमण किया। सन् 1396 ई मे रावल केहर की मृत्यु के बाद मे उनके अयोग्य और कमजोर उत्तराधिकारी भाटियो को सशक्त नेतृत्व प्रदान करने मे असफल रहे। जैसलमेर से भटिंडा, भटनेर, अबोहर तक फैले हुए माटी राज्यों मे रावल केहर के सिवाय कोई ऐसा शासक नही था कि जिसके निर्देशन मे भाटी एक ध्वज के नीचे एकत्र होकर किसी आक्रमण-कारी से लोहा ले सकते थे। राव रणकदेव अभी रावल केहर के विकल्प नही बने थे। समय के साथ राव केलण अपने पिता (रावल केहर) की तरह एक शक्ति बन कर अवश्य उभरे थे। राव रणकदेव का स्थानीय राठौडो, बीरमदे, गोगादे, अरडकमल, चूडा, आदि के साथ उलझे रहना भी उनकी शक्ति सगठन के लिए हानिकारक रहा।

इन कमजोर परिस्थितियो मे तैमूर ने भटनेर के शासक राय दुलीचन्द माटी पर 9 नवम्बर, सन् 1398 ई. मे भयानक और सुनियोजित आक्रमण किया। इससे पहले सन् 1397 के मुल्तान के छ माह के घेरे से तैमूर भाटियो के युद्ध कौशल से परिचित हो चुके थे। इसलिए भटनेर पर आक्रमण करने के लिए उन्होने बडी सतर्कता बरती और वह सभी उपाय किए जिससे माटी सेना को शीघ्र पराजित किया जा सके। तैमूर युद्ध मे विजयी हुए, भाटियो की पराजय हुई। भारी मारकाट और लूट खसोट के बाद मे, 13 नवम्बर, सन् 1398 ई. को तैमूर ने भटनेर से प्रस्थान किया। एक ही झटके मे शताब्दियो और पीढ़ियो की संचित सम्पदा, शान्ति, न्याय व्यवस्था और जनता की समृद्धि को ऐसा तहस-नहस किया कि भविष्य मे वह सुन्दर स्थिति कभी नहीं लौटी। तैमूर ने अपने राजवश के एक पुरखाई दारटर को भटनेर सौंपा। 6 मार्च, सन् 1399 ई. मे लाहौर के दरबार मे उन्होने सैयद खिज्र खां को मुल्तान, लाहौर और दिपालपुर का सूबेदार नियुक्त किया और स्वय

ने समरकान्द के लिए प्रस्थान किया। उपरोक्त प्रान्तों के सूबेदार होने से सैयद खिजर खां के हाथों में अपूर्व शक्ति, साधन और अर्थव्यवस्था आई। उन्होंने दल बल सहित दिल्ली पर आक्रमण किया, दौलत खां लोदी ने उनका चार माह तक विरोध किया, लेकिन आखिर उन्हें आत्मसमर्पण करना पड़ा। 28 मई, सन् 1414 को सैयद खिजर खां ने दिल्ली में विजेता बन कर प्रवेश किया। उन्होंने सन् 1421 तक, सात साल शासन किया। इनके बाद में कमजोर सैयद शासक होने से, लोदी वंश ने सन् 1451 ई में दिल्ली का शासन सैयदों से छीन लिया।

रणकदेव के समय मुलतान पर एक ऐसे शासक का अधिकार था जो बाद में दिल्ली के शासक बने। भटनेर के शासक राय दुलीचन्द भाटी इतने शक्तिशाली थे कि तैमूर ने दिल्ली पर आक्रमण करने से पहले इनकी शक्ति को चकनाचूर करना आवश्यक समझा। ऐसे ही सिन्ध के भाटी शासक भी कम शक्तिशाली नहीं थे। तैमूर की सेना ने, नवम्बर, दिसम्बर सन् 1397 ई मे सिन्ध नदी को पार करके, सिन्ध में उछ के भाटियों के किले को घेरा और बड़ी कठिनाई से वहां विजय पाई। इसलिए राव रणकदेव की मुलतान के प्रति छोटे रहने की नीति ही सबसे सावधान नीति थी। राव केलण सन् 1414 ई में पूगल के राव बने उसी वर्ष सैयद खिजर खां दिल्ली के शासक बने।

राव रणकदेव के सन् 1390 में, जैसलमेर के रावल केहर से मिलकर आने के छः वर्ष पश्चात् सन् 1396 ई में, रावल केहर का देहान्त हो गया। राजकुमार जैतसी के सन् 1390 ई में पूगल में मारे जाने से, रावल केहर द्वारा रानी विमला देवी को दिया गया वचन, कि उनके बाद में कुमार जैतसी को शासक बनाया जायेगा, से वह मुक्त हो गए थे। राजकुमार केलण रावल केहर के बारह पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र थे, इसलिए वह उनके उत्तराधिकारी बनने के अधिकारी थे। लेकिन कुमार केलण ने राव मल्लीनाथ राठौड़ की पुत्री (जगमाल की बहन) से अपने पिता की सहमति के बिना विवाह कर लिया था और अपनी सगी बहन कल्याण कंवर का विवाह कुमार जगमाल से कर दिया था, इसलिए रावल केहर उनसे बहुत नाराज हुए। जैसे कि कुमार जैतसी के उनकी सहमति के बिना, माहेराज सांखला की पुत्री से विवाह करने पर वह नाराज हुए थे। कुछ का विचार है कि यह दोनों शादियां कुमार केलण को रावल नहीं बनाने का केवल बहाना थी, यह रावल केहर ने स्वयं तय की थी। वास्तव में वृद्धावस्था में वह तीसरे कुमार लक्ष्मण की माता के वश में थे और रानी की इच्छा, जैसी कि सभी माताओं की होती है, से उनके पुत्र लक्ष्मण को रावल बनाना चाहते थे। उपरोक्त कारणों से पिता पुत्र के सम्बन्धों को ठेस लगी। आखिर रावल केहर ने राजकुमार लक्ष्मण को रावल बनाने के निर्णय से राजकुमार केलण को अवगत कराया। पिता की इच्छा का आदर करते हुए राजकुमार केलण ने अपना अधिकार त्यागा और जैसलमेर से बारह कोस दूर स्थित अपनी जागीर आसिणकोट चले गए। उनके परिवार के अलावा उनके साथ स्वामिभक्त महीपाल के पुत्र सातल सिहराव भी थे। वहां उन्होंने अपना किला बनवाया और रावल केहर को संदेशा भेजा कि इस किले से लक्ष्मण को डरने की कोई आवश्यकता नहीं थी। यहां राजकुमार केलण के कुमार चाचगदेव और कुमारी कोडमदे का जन्म हुआ।

जैसलमेर से आसिणकोट जाते हुए राजकुमार केलण अपने साथ अल्लाउद्दीन खिलजी की रत्नजड़ित तलवार ले गये। यह तलवार राणा रतनसिंह ने खिलजी के सेनापति कमलुद्दीन से प्राप्त की थी। सन् 1294 ई में युद्ध से पहले रतनसिंह और कमलुद्दीन मित्र और धर्मभाई बन गए थे। अल्लाउद्दीन खिलजी ने, दिल्ली के शासक बनने से पहले, किसी युद्ध में वीरता दिखाने के लिए सेनापति कमलुद्दीन को यह तलवार भेंट की थी। यह तो सेवा की व्यथा और बेबसी थी कि दोनों धर्मभाइयों ने एक दूसरे के विरुद्ध युद्ध का संचालन किया। युद्ध के बाद में कमलुद्दीन ने रतनसिंह के पुत्री को संरक्षण दिया था। यह तलवार राव केलण अपने साथ पूगल ले आए थे। पूगल से यह तलवार सत्तासर चली गई और आखिरी बार इसे लोगों ने सत्तासर के राव बलदेवसिंह के पास देखी थी। अब इसका कोई अता पता नहीं है।

सन् 1396 ई मे रावल केहर की मृत्यु के पश्चात् कुमार लक्ष्मण जैसलमेर के रावल बने। पिता की मृत्यु का संदेश पाकर कुमार केलण शोक मनाने जैसलमेर गए। वह स्वेच्छा से हर्षपूर्वक अपने छोटे भाई लक्ष्मण के राज्याभिषेक समारोह मे शामिल हुए। उन्होने अपने हाथ से उनके रावल की गद्दी पर बैठने के बाद तिलक किया और नजर भेंट की। उन्होंने अपने भाई को सहायता और सद्भावना का आश्वासन दिया और विश्वास दिलाया कि वह रावल लक्ष्मण और उनकी भावी पीढ़ियो के प्रति वफादार रहेंगे। केलण के इस प्रकार के व्यवहार से रावल लक्ष्मण पानी-पानी हो गए, किन्तु वह यह साहस नहीं जुटा पाए कि बड़े भाई के लिए राजगद्दी त्याग दें।

केलण के आसिणकोट मे रहने से रावल लक्ष्मण कुछ असमंजस और भय की भावना से ग्रसित रहते थे। उनके उचित अनुचित कार्यों के समाचार उनके पास पहुंचते रहते थे, कोई निर्णय लेते हुए वह संकुचित होते और उन्हें यह वहम रहता कि असन्तुष्ट सामंत उनके पास जाते होंगे। उनके मन में हरदम एक अपराध की भावना बनी रहती थी कि पिता के अनुचित निर्णय के कारण उन्होंने बड़े भाई के अधिकार पर कुठाराघात किया था। इस निर्णय के कारण बड़े भाई अभाव की स्थिति में सत्ताहीन होकर आसिणकोट में निवास कर रहे थे। उधर केलण अपने वचन के पक्के थे, वह ऐसा कोई कार्य नहीं करते थे जिससे रावल लक्ष्मण दुविधा में पड़ें। उनके प्रधान सातल सिंहराव रावल लक्ष्मण की समस्या भांपने और समझने लग गए थे। उन्होंने रावल को उनकी रोज की समस्या से उबारने के लिए, केलण से आग्रह किया कि वह आसिणकोट छोड़कर जैसलमेर से 140 मील दूर बीकमपुर चलें। वहां के क्षतिग्रस्त किले की मरम्मत करवा कर उसमे रहें। लखमीचन्द ने लिखा है कि रावल केहर का शोक मनाने के बाद केलण भूमनवाहन जा कर रहने लगे। यह सम्भव था क्योंकि उस समय भूमनवाहन राव रणकदेव के अधिकार मे था और उनकी सहमति से केलण वहां रह कर किले की व्यवस्था मे उनकी सहायता कर सकते थे और सीमा पार से होने वाले आक्रमणो से निपट भी सकते थे।

केलण के छोटे भाई सोम पहले से ही बीकमपुर क्षेत्र मे निवास कर रहे थे। इनके वंशज सोम भाटी हुए। केलण भी अपनी पत्नी, राव मल्लीनाथ राठौड की पुत्री, और पुत्र कुमार चाचगदेव व पुत्री कुमारी कोडमदे के साथ सन् 1397 ई मे राव रणकदेव की



राहमति से बीकमपुर आए। उन्होने किले की मरम्मत करवाई और उसम रहने लगे। यह कुमारी कोडमदे केलण की पुत्री थी, दूसरी वाडमदे माहिलो की बेटी थी। केलण की पुत्री कोडमदे राव रिडमल राठौड को ब्याही गई थी और राव जोधाजी की माता थी। पहले बीकमपुर, राव तणुराव (सन् 805 820 ई) के वशज, जैतुग भाटियो के अधीन था। मुलतान की सेना ने काला जैतुग को बीकमपुर स निकाल कर वहा के किले पर सन् 1270-80 ई मे अधिकार कर लिया था। उन्होने किले मे एक मस्जिद का निर्माण भी कराया था। इसी समय मुलतान की सेना ने पाहू भाटियो को भी पूगल से निकाला था। यह मुलतान बलबन (1266 86 ई) के समय मे हुआ था। मुलतान के सैनिक ज्यादा दिनो तक बीकमपुर और पूगल मे नही रह सके। यहां का रेतीला क्षेत्र, आंधिया, सर्दिया, दुर्गम मार्ग, मीठे पानी का अभाव, जीवित रहने के लिए विकट सघर्ष आदि ऐसे कारण थे कि वह स्वय यहा से परेशान होकर वापिस मुलतान के क्षेत्र मे लौट गए। इनके जाने के कुछ समय बाद म पूगल के किले पर नायको ने अधिकार कर लिया और बीकमपुर का गढ खाली पडा रहा। राव रणकदेव ने सन् 1380 ई मे पूगल पर अधिकार किया और कुछ समय पश्चात् उन्होने बीकमपुर पर भी अधिकार कर लिया। सन् 1414 ई मे राव रणकदेव बीकमपुर क्षेत्र के अपने राज्य के गाव सिरडा के पास मारे गए थे, इसलिए बीकमपुर के पूगल के राज्य का भाग होने मे कोई सदेह नही था।

राव रणकदेव, जिनके पितामह रावल पूनपाल को जैसलमेर छोडना पडा था, स्वय जानते थे कि राज्य छोडने के बाद में क्या कठिनाइया आती थी, कितने अभाव मे रहना पडता था, कौन दुख सुख मे साथी होता था। केलण भी रावल पूनपाल की तरह जैसलमेर की राजगद्दी से वचित किए गए थे। इसलिए बीकमपुर मे रहने देने के लिए केलण का सदेशा ज्योही उनके पास पूगल पहुचा, उन्होने इसकी सहर्ष अनुमति दे दी। उन्हे प्रसन्नता थी कि उन्ही के वश के एक राजपुरुष उनके क्षेत्र मे बसने आ रहे थे। उन्हान यह भी सोचा कि चूकि इस क्षेत्र पर उनका अधिकार अभी नया नया हुआ था इसलिए केलण का सहयोग उनके लिए लाभकारी रहेगा। उन्हे ऐसा कोई भय नही था कि केलण उन्हें धोखा दे, क्योकि वह स्वय अपने छोटे भाई को जैसलमेर जैसा राज्य सौप कर आए थे। उन्हें सपने मे भी कभी यह ध्यान नही आया कि यही केलण, जो आज बीकमपुर मे रहने के लिए उनसे अनुमति माग रहे थे, वही कुछ वर्षों के बाद मे, उन्ही के गोद आकर पूगल के एक विशाल राज्य के स्वामी होंगे।

केलण अपने 700 घुडसवारों के साथ बीकमपुर आए। उनके साथ पालीवाल (ब्राह्मण) साहूकारो के सामान और परिवारों से लदे गाडे भी आए। यह पालीवाल इनके साथ जैसलमेर और आसिणकोट से अपना भाग्य आजमाने आए थे। उन्होंने इनकी सुविधा के लिए बीकमपुर से वाप तक और आसपास के मगरा क्षेत्र में बीठनोक, फलोदी आदि स्थानो को जोडने वाले खुले और चौडे मार्ग बनवाये। इनसे जहा पालीवालो को आवागमन और व्यापार मे सुविधा हुई, वही इन मार्गों ने भविष्य के लिए बीजनोत और देरावर पर उनके अधिकार करने के मार्ग सुगम बनाए। पालीवालो ने वाप और मोजा गाव बसाए वहा तालाब और कुए खुदवाये और उस क्षेत्र को समृद्ध बनाने मे बहुत बडा योगदान दिया।

केलण ने अपने छोटे भाई सोम भाटी को बीकमपुर के बदले मे गिराधी गाव की जागीर दी। यह केलण द्वारा प्रदान की हुई पहली जागीर थी।

चूडा राठौड और उनके भाई, सन् 1383 ई मे उनके पिता वीरमदे राठौड की डाला जोइया के हाथो हुई मृत्यु का बदला लेने के लिए प्रतिशोध की अग्नि मे जल रहे थे। उनका ध्येय वृद्ध डाला जोइया को मारकर बदला लेने से ही पूरा होता था। चूडा राठौड के बडे भाई गोगादे राठौड ने डाला जोइया का वध करने का प्रण किया हुआ था। चूडा राठौड अभी राव नही कहलाते थे, उन्हे काफी समय बाद मे इदा राजपूतो ने दहेज मे मडोर दी थी, उसके बाद मे वह राव कहलाने के अधिकारी हुए।

गोगादे राठौड डाला जोइया से बदला लेने की ताक मे थे। सन् 1411 ई मे डाला जोइया के पुत्र धीरदे जोइया, काफी सख्या मे जोइया सरदारो और अन्य रिश्तेदारो को अपनी बारात मे साथ लेकर राव रणकदेव की पुत्री से विवाह करने पूगल गए हुए थे। उन्हे गोगादे राठौड के 28 वर्ष पुराने प्रण का ध्यान नही रहा। गोगादे राठौड ने विश्वस्त सूत्रों से जानकारी प्राप्त करके लखबेरा पर द्रुतगति से आक्रमण किया और सन् 1411 ई मे डाला जोइया को मारकर, अपने पिता की मृत्यु का 28 वर्षों बाद में बदला चुकाया। यह कार्य गोगादे के लिए आसान था, क्योकि अधिकाश योद्धा धीरदे की बारात मे पूगल गए हुए थे और गोगादे विवाह की सूचना पाकर, वही आसपास मे लुकते छिपते डोल रहे थे।

धीरदे जोइया को डाला जोइया के गोगादे राठौड द्वारा मारे जाने की सूचना पूगल मे मिली। इससे पहले उनका विवाह सम्पूर्ण हो चुका था। धीरदे न अपने साथ आए हुए बारातियो को इस अनर्थ की जानकारी दी और वह सब शस्त्रो से लैस होकर गोगादे को मारने के लिए तुरन्त रवाना हो गए। राव रणकदेव भी अपने अभिन्न मित्र और सम्बन्धी की मृत्यु से बहुत दुखी हुए। अनुभवी राव ने अपने जवाई को अकेले जाने देना उचित नही समझा। वह गोगादे की चालो से परिचित थे। उन्हे भय था कि कही मौका पाकर गोगादे धोख स धीरदे को मार देंगे। इसलिए वह भी सेना लेकर धीरदे के साथ हो लिए। उन्हे अपने क्षेत्र के भूगोल और मार्गों का बढिया ज्ञान था। वह उन्ही भू-मार्गो मे भ्रमण करते रहते थे। जैसे पूगल क्षेत्र के विस्तार म वह लगे हुए थे वैसे ही राठौड भी, भाटिया, साखलो, जोइयो और मोहिलो के क्षेत्र को कुतर कुतर कर अपना क्षेत्र बढाने मे लगे हुए थे। इस प्रकार क्षेत्र विस्तार के लिए राठौडो और भाटियो मे होड लगी हुई थी, इसके लिए उनके आपस म सघर्ष होते रहते थे। राव रणकदेव भ्रमण करके अपने क्षेत्र मे चौकसी रखते थे।

पूगल से भाटियो और जोइयो की सेना मुख्य मार्गों को छोडकर छोट किन्तु कम लम्बे कठिन मार्गों से गोगादे का रास्ता रोकने के प्रयास में थी। उन्हें भय था कि समय बीतने पर गोगादे अपने क्षेत्र की सुरक्षा पकड लेंगे या उनके पास सहायता पहुच जायेगी, जिससे उनसे बदला लेने का कार्य कठिन हो जायेगा। इधर गोगादे ने साचा कि जोइये बडी बारात लेकर भाटियो के मेहमान बनकर गए हुए थे, उनकी अच्छी खातिर चाकरी हो रही होगी, वह वापिस लखबेरा आने पर ही आगे की कार्यवाही के बारे मे सोचेंगे। तब तक वह अपने क्षेत्र म सुरक्षित पहुच जायेंगे। उन्हे सपने मे भी ख्याल नही आया कि जोइये इतनी जल्दी जवाबी

कार्यवाही करेंगे और वह भी पूगल के सहायोग से। वह बीकानेर (वर्तमान, उस समय बीकानेर नहीं बसा था) से 10 मील पश्चिम मे नाल गाव के पादुलाई तालाव पर रुके हुए थे। वहा उनके आदमियो और घोडो के लिए पानी पीने की सुविधा थी। उन्होंने लखवेरा से मालाणी जाते हुए यहा पडाव किया था। रात्रि मे उन्होने घोडो की काठिया और सरजाम उतार कर एक तरफ रख दिए और घोडो को तालाव मे पानी पीने और पास के मैदान मे घास चरने के लिए खुला छोड दिया। अपने शस्त्रो को भी उन्होने एक तरफ रख दिया। खा-पीकर वह सब चैन से निश्चित होकर सो गए। अनुभवी और जानकर राव रणकदेव को ज्ञान था कि वह किसी तालाब की सुविधा देखकर वहा पडाव अवश्य करेंगे। इसलिए उन्होने नाल के पास गोगादे का रास्ता रोकने की योजना बनाई। ज्योही जोइयो और भाटियो की सेना रात्रि मे नाल गाव पहुची, उन्हें सूचना मिली कि थके मादे गोगादे और उनके साथी उसी दिन शाम को वहा पहुचे थे और पादुलाई तालाब के पास उनका पडाव था। भाटियो और जोइयों के लिए युद्ध करने का इससे अच्छा अवसर नहा था। उन्होने घोडो को थोडा आराम दिया, साजा संवारा, अस्त्र शस्त्रो को सम्भाला और तैयार किया। जासूसो ने लौटकर बताया कि राठौड बेधडक सोये हुए थे, वहा कोई प्रहरी नही थे और उनके घोडे उनसे दूर मैदान मे चर रहे थे। उन्होने आक्रमण करने की योजना बनाई, सेना को छोटी छोटी टुकडिया बनाकर उनका नेतृत्व अनुभवी योद्धाओ को सौपा। उन्होने अचानक आक्रमण करके शत्रु को मारने की योजना से उन पर धावा किया। घोडो की टापो की आवाज मे कुछ लोग जागे लेकिन उससे पहले ही जोइया और भाटी उनके सिर पर जा पहुचे थे। रात्रि के अन्धेरे म राठौड इधर-उधर हडबडा कर भागने लगे, इससे पहले कि वह अपने शस्त्र समालते या मैदान मे चर रहे घोडो तक पहुचते, भाटियो और जोइयो ने राठौडों को भालो और सेलो मे बीध डाला। बचे हुए राठौडों ने मुश्किल से अपने शस्त्रो को पकडा और भागकर वह घोडो तक पहुचे। भाटियो और जोइयो ने उनकी घेराबन्दी कसी और वर्तमान बीकानेर गजनेर सडक के ग्यारहवें मील के पत्थर के पास स्थित लच्छवेग तालाब के समीप युद्ध हुआ। इस एक तरफा युद्ध मे अनेक राठौड मारे गए। गोगादे राठौड धीरदे जोइया के हाथों मार गये। लेकिन वीर राठौड ने मरने से पहले डाला जोइया के भतीजे हसू को मार गिराया। इसमे कोई शक नही था कि राठौडो ने मरते दम तक वीरो की तरह सघर्ष किया। अन्य मरने वालो मे, डाला जोइया का पुत्र साहू भी था जिसे गोगादे के पुत्र ऊदा ने मारा। गोगादे के भाई हमीर और नरपत, उनका पुत्र ऊदा और माहेराज साखले का पुत्र आलमसी, राव रणकदेव के राजकुमार शार्दूल (सादा) द्वारा मारे गए।

यहा यह बताना आवश्यक है कि पूगल से निष्कासित होने के बाद षड्यन्त्रकारी माहेराज साखला भाटियो के शत्रु राठौडो से जा मिले थे। वह बदला लेने की भावना मे ग्रस्त थे, जवाई जैतसी की मृत्यु और पूगल मे अपने निष्कासन का बदला लेने का वह अवसर ढूढ रहे थे और राव रणकदेव को नीचा दिखाने का प्रयास कर रहे थे। इन दुष्ट ने अपनी नासमझी से पहले जवाई जैतसी को मरवाया और अब पुत्र आलमसी को भी मरवा दिया।

मरने से पहले गोगादे राठौड ने चालाकी और समझौते की भावना से कहा कि राठौड और जोइया अब एक दूसरे से बदला लेकर बराबर हो गए थे, इसलिए उनको

आपस की वैर की भावना का अन्त होना चाहिए और भविष्य मे उन्हे अच्छे मित्रो की तरह रहना चाहिए। शरारतपूर्ण रवैये से यह भी कहा कि भाटियो से राठौडो की कोई शत्रुता नही थी, उन्होने नाहक जोइयो का साथ देकर राठौडो से शत्रुता उधार मे मोल ले ली। वह भूकन भाटी की मौत को जान-बूझ कर भुला रहे थे। यह मरते हुए गोगादे की ललकार थी कि भविष्य मे भाटियो को राठौडो से निर्णायक युद्ध लडने होगे, उनके लिए अब राज्य का विस्तार करना पहले की तरह आसान नही होगा। उनकी नीयत भाटियों और जोइयो के बीच मे सदेह उत्पन्न करने की थी, कि इसके बाद जोइयो और राठौडो मे कोई शत्रुता शेष नही रही थी, अब तो राठौडो को केवल अकेले भाटियो से ही निपटना होगा। यह एक प्रकार से उनके भाई-भतीजो के लिए सदेश था कि उन्हे उनकी और उनके भाई, भतीजो, पुत्रों की मृत्यु का बदला राव रणकदेव और राजकुमार शार्दूल को मारकर लेना था।

केलण की पुत्री कोडमदे, जिनका जन्म सन् 1396 ई. से पहले उनके आसिणकोट मे निवास के समय हुआ था, का विवाह मडोर के कुमार रिडमल राठौड से सन् 1413 ई में हुआ। उस समय इनकी आयु 17-18 वर्ष की थी। कुमार रिडमल मन्डोर और नागौर के राव चून्डा के ज्येष्ठ पुत्र थे। राव चून्डा की इच्छा थी कि उनकी मृत्यु के बाद म उनकी चहेती राणी का पुत्र, कुमार कान्हा राव बने। राव चून्डा ने कुमार रिडमल को जोजावर की जागीर देकर राजगद्दी से वचित कर दिया। इस सौतेले व्यवहार से रिडमल बहुत खिन्न हुए, लेकिन पिता से अपना अधिकार मागने मे असमर्थ थे, इसलिए वह मन्डोर छोडकर मेवाड चले गए। मेवाड के राणा लाखा को रिडमल की बहन हसा ब्याही हुई थी। राव चून्डा के इस सौतेले व्यवहार से, भाटी और साखले, दोनो ही, उनसे बहुत अप्रसन्न हुए। साखले इसलिए अप्रसन्न हुए क्योकि उनके भानजे को राजगद्दी नही देकर दूसरी राणी के पुत्र को राव बनाया जा रहा था और भाटी इसलिए अप्रसन्न हुए क्योकि केलण ने जब कुमार रिडमल को अपनी बेटी ब्याही थी तब उन्होंने यह सम्बन्ध इसी विचार से किया था कि उनके जवाई राव बनेंगे। अन्यथा वह अपनी बेटी रिडमल को नही ब्याहते। अब सारी स्थिति ही बदल गई थी। यह तो सन् 1418 ई मे राव केलण द्वारा राव चून्डा को मारे जाने से स्थिति फिर से अनुकूल बदली। राव चून्डा के बाद मे कान्हा और सत्ता राव बने। रिडमल ने सन् 1427 ई मे सत्ता स मन्डोर नागौर छीन कर अपना पैतृक अधिकार प्राप्त किया।

युवरानी कोडमदे के सन् 1415 ई. मे राजकुमार जोधा जनमे। उस समय कुमार रिड़मल राणा लाखा की सेवा मे मेवाड मे रहते थे। राजकुमार जोधा आगे चल कर जोधपुर के स्वामी हुए और उनके पुत्र बीका, बीकानेर के स्वामी हुए। राव रिडमल का देहान्त सन् 1438 ई. मे चित्तौड मे हुआ, इन्हें षड्यन्त्र करके मारा गया था।

केलण सन् 1396 ई से 1414 ई. तक बीकमपुर में 18 वर्ष रहे। इन्होने गढ की मरम्मत करवाई, महल आदि बनवाए। इन्होने राजकाज बडे सुचारु रूप से चलाया जिससे जनता का इनके प्रति स्नेह और विश्वास बढा। यह हमेशा अपने आपको पूगल का सेवक कहते थे और राव रणकदेव के प्रति पूरी निष्ठा और ईमानदारी रखते थे।

तैमूर ने भारत से प्रस्थान करने से पहले, सन् 1399 ई. मे सैयद खिजर खा को मुलतान और पजाब का सूबेदार नियुक्त किया था। उस समय बीकमपुर मे रहते हुए केलण के

मुलतान के शासक खिजर खां से अच्छे सम्बन्ध हो गए थे। यह एक दूसरे के मित्र थे, खिजर खां को केलण पर काफी विश्वास था। सन् 1414 ई में सैयद खिजर खां ने दिल्ली पर अधिकार किया और वह वहां के सुलतान बने। केलण भी इसी वर्ष पूगल के राव बने।

सिहराव भाटी, लुद्रवा के रावल बाछूजी (सन् 1056 ई) की सन्तान हैं। कुमार सिहराव का विवाह रोड के राण प्रतापसिंह गोहिल की पुत्री से हुआ था। इन्होंने अपने नाम से सिन्ध प्रान्त मे रोहडी से सोलह मील दूर सिहरोड का किला बनवाया और नगर बसाया। इस उपलक्ष्य मे इन्होंने मुसलमान सैयदो को चौबीस गाव दान मे दिए। सिहराव के वशज सच्चाराव, भोला राव, रतना और गज थे। गज ने मन्डोर के राजा जगन्नाथ पडिहार से युद्ध करके उनकी सांढें छीन ली थी। सातल सिहराव केलण के प्रथम प्रधान थे। इनकी समझदार राय मानकर केलण आसिणकोट छोडकर बीकमपुर आए थ। अगर सिहराव की सलाह केलण नही मानते और बीकमपुर मे आकर नही बसते, तो निश्चित था कि राव रणकदेव से इनके घनिष्ठ सम्बन्ध नही बनते और न ही उनकी राणी पेखणा को बीकमपुर भेजकर उनको बुलाती और उन्हे गोद लेती। यह हम सब भाटियो का सौभाग्य था कि पहले केलण आसिणकोट छोडकर बीकमपुर मे आ कर बसे और बाद मे राव रणकदेव की राणी ने इन्हे वहा से बुलाकर गोद लिया और पूगल का राव बनाया। अगर केलण पूगल नही आते तो हम, उनकी सन्तानें, शायद जैसलमेर के ही किसी भाग मे रहते या भाग्य हमे जोधपुर या गुजरात ले जाता।

सिहराव भाटियो ने राव केलण (सन् 1414–30 ई) की तन-मन धन से सेवा की। उनके बाद मे इन्होने पूगल की अच्छे और बुरे समय मे त्याग और समर्पण की भावना से सेवा की। इस समय यह भाटी जोधासर (डेली), मोतीगढ, मकेरी, सियासर पच कोसा गावो में है। लद्धासर के सिहराव मकैरी और रामडा गावो मे आकर बस गए थे। प्रेमसिह सिहराव ने राव रामसिह के लिए अपने प्राण न्योछावर किए। मेघराज राव रामसिह के राजकुमारो, रणजीतसिह और करणीसिह, को सुरक्षित जैसलमेर ले गए। सियासर के मघजी, जोधासर के लाधुसिह, हमीरसिह, जवाहरसिह, प्रतापसिह, आदि की सेवाओ को पूगल कभी नही भूल सकता।

जिस समय केलण बीकमपुर आए उसी समय राव रणकदेव साखलो और राठौडो से सघर्ष कर रहे थे। राठौड, भाटियो के सहयोगी जोइयो को परेशान कर रहे थे। जब-जब राव रणकदेव कठिनाई मे होते तब जोइया, पवार, पडिहार, खराल, पाहू और जैतूंग इनकी सहायतार्थ आते और सभी प्रकार का इन्हे सहयोग देते। बीकमपुर पूगल के राव के अधीन था और केलण वहा उनके आश्रित थे। फिर भी सन् 1396 से 1414 ई तक इन्होने पूगल के पक्ष मे कोई सक्रिय भाग नही लिया और न ही कभी पूगल के प्रति कोई उत्साह दर्शाया। वह वीर योद्धा और अच्छे प्रशासक थे और योग्यता मे किसी से कम नहीं थे, परन्तु फिर भी क्या कारण था कि वह चुपचाप, निष्काम भाव से बीकमपुर मे अपना समय बिताते रहे?

वह अपने भविष्य के प्रति आशान्वित नही थे। जैसलमेर और वहा का राज्य उनसे छूट चुका था, वचनबद्धता के कारण वह रावल लक्ष्मण का विरोध भी नही कर सकते थे। राव

रणकदेव ने उन्हे आसरा दिया था, वह उन्ही के वशज थे, फिर उनका पूगल पर अधिकार करने का ध्येय कैसे होता ? इस प्रकार जैसलमेर और पूगल के रास्ते धर्मसंकट के कारण उनके लिए रुके हुए थे। वह अपने भाइयो के राज्य मे नया राज्य स्थापित कैसे करते ? उधर खेड के जगमाल राठोड को अपनी बहन और नागौर-मडोर के शासक राव चूडा राठोड के राजकुमार रिडमल को पुत्री ब्याही हुई थी। स्वय के घर मे जगमाल राठोड की बहन, इनकी पत्नी थी। राव चूडा के पिता बीरमदे राठोड और जगमाल राठोड के पिता रावल मल्लीनाथ सगे भाई थ। केलण इस प्रकार राठोडों के बहुत नजदीकी सम्बन्धी थे, उनस झगडा करके वह अपनी साख नही गवाना चाहते थे। मुलतान सिन्ध के शासक शक्तिशाली थे, सैयद खिजर खा उनके मित्र थे और वह उनके विश्वासपात्र थे। इसलिए केलण करे तो क्या करे ? वह अपने सम्बन्धो, नैतिकता, मित्रता, आदि के बन्धनो मे बधे हुए थे। फिर उनके पास सत्ता नही, उन्हे सत्ता का साथ नहीं, धन और साधनो का अभाव था। किसी से बखेड़ा करके मात खाने और साख खोने से कोई लाभ नही था। इसी उधेड बुन मे केलण अशान्त रहते थ, उन्हें अपना भविष्य अन्धकारमय लगता था। उन्होने बडे धैर्य, सयम और सहनशीलता से अपना वक्त गुजारा और अगर उन्हे सन् 1414 ई मे पूगल से सोढ़ी राणी का निमन्त्रण नही आता तो शायद समय ऐसे ही चलता रहता। केलण योग्य, महत्वाकाक्षी, योद्धा, नियोजक होते हुए भी अठारह वर्ष शान्त बैठे रहे और अपनी साख नही खोई। यह उनके चरित्र की गरिमा और सस्कारो की महानता थी, उनके नैतिक स्तर का परिचायक थी।

इसके विपरीत ज्योही सन् 1414 ई मे वह पूगल के राव बने, उन्होने पजाब, सिन्ध, भटनेर, नागौर में तहलका मचा दिया।

राव चूडा के द्वितीय पुत्र कुमार अरडकमल (जगल का कमल) की सगाई छापर की मोहिल राजकुमारी कोडमदे के साथ हुई थी। यह अपने समय की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी और लुभावनी कुमारी थी, कोई भी राजकुमार ऐसी राजकुमारी को पाकर अपने आप को भाग्यशाली और धन्य मानता और अन्य योग्य वरो का ईर्ष्या का पात्र बनता। कोडमदे के पिता राव माणकराव मोहिल अपनी पुत्री की सगाई राव चूडा के पुत्र कुमार अरडकमल से करने के लिए उत्सुक थे, राव चूडा ने यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। राव माणकराव का विचार था कि इस प्रस्ताव से एक शक्तिशाली और उद्दण्ड पडोसी से उनके सम्बन्ध अच्छे रहगे और उनसे उन्हें यातनाए सहनी नही पड़ेगी।

एक बार कुमार अरडकमल शिकार करने गए हुए थे। जगली सूअर का पीछा करते हुए वह छापर के ओरियन्न गाव के निवासी कानाराव के बाडे मे सूअर के पीछे घोडे पर चढे हुए घुस गये। यद्यपि कुमार अरडकमल युवा, बलिष्ठ, लम्बे चौडे डील डौल वाले थे, किन्तु देखने मे वह कुरूप थे। उनका शारीरिक गठन भी आकर्षक नहीं था। राजकुमारी कोडमदे अपनी सहेलियो के साथ कानाराव की हवेली की ऊपरी मजिल पर खडी हुई थी। उसने कुमार अरडकमल को सूअर का पीछा करते देखा। उसे क्या मालूम था कि इसी युवा पुरुष से उसकी सगाई हुई थी। उसने अपनी साथिनो से कहा कि देखो यह पुरुष कितना कुरूप और भौंडा था, इन्हे धरती की कौनसी लडकी अपना पति बनायेगी। कुमार अरडकमल को

लड़कियां की ओर देखने और उनकी बातें सुनने का समय वहां था, उन्होंने बिजली की गति से चकाचौंध करता हुआ भाला सूअर पर पल भर में दे मारा, सूअर को बींधता हुआ भाला दो फुट जमीन में धंस गया। सभी लड़कियां उनके इस अचूक वार से बहुत प्रभावित हुईं।

कुछ समय पश्चात् कोडमदे को मालूम पड़ा कि यही राव चूंडा के पुत्र, कुमार अरड़कमल थे, जिनसे उसकी सगाई तय हुई थी। क्योंकि कोडमदे साक्षात् कुमार अरड़कमल को काफी पास से देख चुकी थी, इसलिए उसने अपनी माता से स्पष्ट कह दिया कि वह इन कुमार से किसी हालत में विवाह नहीं करेगी। उस युग में लड़के लड़कियां का विवाह शादी माता पिता ही तय करते थे और वह उसे सहर्ष स्वीकार करते थे, कोडमदे का इस प्रकार मना करना उन्हें बड़ा अखरा। इससे उसके चरित्र की दृढ़ता और अडिग निश्चय का बोध होता था। यह बात राव माणकराव के पास पहुंची। माता पिता ने बेटी को समझाने की कोशिश की, उसे ऊंच नीच और सामाजिक परम्पराओं से अवगत कराया। उन्होंने उनके द्वारा वचन भंग करने के दोष और लांछन की दलील दी। सगाई की पहल उन्होंने की थी इसलिए राव चूंडा की प्रतिष्ठा का प्रश्न भी उभरेगा, आदि। सबसे बड़ा कारण उन्होंने यह दिया कि राव चूंडा उनके शक्तिशाली पड़ोसी थे, उनसे बैर बांधने में मोहिलों का बड़ा भारी अहित होगा, वह किसी समय आक्रमण करके उनसे राज्य छीन सकते थे और साथ में उसका अपहरण भी कर सकते थे। परन्तु इन सब बातों का कोडमदे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा उसने साफ साफ बता दिया कि वह मर जायेगी लेकिन अरड़कमल से विवाह नहीं करेगी। आखिर मां बाप क्या करते, उन्हें और उनके परिवार को बेटी का मन रखना पड़ा।

पूगल के राजकुमार शार्दूल एक बार शिकार के अभियान में अपने पिता राव रणकदेव की चहेती घोड़ी ले गए थे। शिकार करते समय घोड़ी के पांव का नुकसान हो गया। यह जानकर राव बड़े अप्रसन्न हुए और राजकुमार को उलाहना दिया कि अगर उन्हें घोड़े घोड़ियों और शिकार का इतना ही शौक था तो वह अपनी घोड़े घोड़ियां क्यों नहीं रखते और उन्हें प्रशिक्षण क्यों नहीं देते?

पिता का यह उलाहना सुनकर राजकुमार घोड़े घोड़ियां लाने के अभियान पर अरावली शृंखलाओं की ओर निकल पड़े। वहां आडावाला नाले के पास एक घास के मैदान में गंगड़ निरवान के घोड़े घोड़ियां स्वच्छन्द विचर रहे थे और चर रहे थे। उन्होंने इनमें से एक सौ चालीस घोड़े घोड़ियां छांटी और अपने साथियों की सहायता से उन्हें पूगल की दिशा में हांक ली। गंगड़ निरवान ने काफी दूर तक इनका पीछा किया लेकिन वह उन्हें पकड़ नहीं सके और हताश हो कर वह लौट गए। कई दिनों के बाद में शार्दूल और उनके साथी घोड़े घोड़ियों को लिए हुए औरियन्त गांव पहुंचे, वहां के तालाब के किनारे पड़ाव किया। वहां राव माणकराव मोहिल ने उनकी अच्छी खातिर चाकरी की और उनके आग्रह पर शार्दूल कई दिन वहीं ठहरे रहे।

सावण भादो का महिना था तालाब के पास के पेड़ों पर झूले लगे हुए थे। तीज के त्योहार पर एक दिन कोडमदे अपनी सहेलियों साथिनों के साथ तालाब पर झूला झूलने जा

रही थी। उन्हे दूर से देखकर शार्दूल ने घोडी के ऐडी मारी, और उसे अपनी राना मे कस कर एक खाली पडे झूले से घोडी सहित झूला खा लिया। कोडमदे उनका यह करतब देखकर अचम्भे मे पड गई कि क्या कोई इस प्रकार से घोडी को रानो मे उठा सकता था? कुमार शार्दूल और कुमारी कोडमदे की आखे चार हुई, दोनो एक दूसरे पर माहित हो गय। कुमार शार्दूल का गोरा रग, तीखे नाक नक्श, सुडौल शरीर और वीरोचित हाव भाव देखकर कोडमदे ने मन ही मन उन्हे वर लिया। उसके मन मे एक उमग थी, एक प्रकार की हलचल थी और आज वह बहुत प्रसन्न थी। उसने भाटी राजकुमार से ही विवाह करने की ठानी, किसी और से कभी नहीं करेगी। उसके रोम रोम में कुमार शार्दूल का रूप और व्यक्तित्व समा गया था। उसने अपनी माता को अपने मन की इच्छा बताई। एक बार फिर माता ने बेटी को सभी प्रकार से समझाने की कोशिश की। अरडकमल से विवाह नही करने के दुष्परिणाम भी बताए मोहिल जाति का हित अहित समझाया। लेकिन वह अपने निश्चय से टस से मस नही हुई। अब उसे अपना सुकुमार मित्र मिल गया था। अब प्रश्न अरडकमल से विवाह नही करने का नही था, अब तो प्रश्न राजकुमार शार्दूल से विवाह करने का था। मा बाप को हार कर बेटी की बात माननी पडी। शायद शार्दूल से विवाह करने के कोडमदे के प्रस्ताव को वह भी मन ही मन सराहते होग। राजकुमार उनकी बेटी की जोडी के थे, इससे सुन्दर मिलन और नहीं हो सकता था।

राव माणकराव न इस कार्य मे विलम्ब करना उचित नहा समझा। उन्हाने अपने कुल पुराहित का शादी का प्रस्ताव समझा कर और नारियल दे कर पूगल के राव रणकदेव के पास भेजा। पुरोहित ने राव को सारी कहानी से अवगत कराया। राव रणकदेव समझदार शासक थे, उन्हें राठौडो के व्यवहार, स्वभाव, चरित्र और क्षमता का ज्ञान था। वीरमद और गोगादे की मृत्यु की शत्रुता अभी भाटियो स उन्हे लेनी शेष थी। इसलिए राव रणकदव न उसी परिवार के राठौडों को शत्रुता को न्योता देना व्यवहारिक नही समझा, यह उन्ह युद्ध के लिए खुली चुनौती होती। सारी बात पर विचार करके राव रणकदेव ने पुरोहित स राव मोहिल से उन्ह क्षमा कराने के लिए कहा और नारियल स्वीकार नही किया। पुरोहित को उन्होंने उचित दान दक्षिणा भेंट करक विदा किया। अभी पुरोहित पूगल से कुछ दूर गये ही थे कि उन्ह सामने से राजकुमार शार्दूल और उसके साथी घोडे-घोडिया सहित आते हुए मिल गये। आपस मे कुशल क्षेम पूछी। पुरोहित ने अपने आने का कारण और निराश होकर लौटने का कारण भी बताया। कुमार स्वय भी कोडमदे पर मोहित थे, फिर इस प्रकार से आए हुए नारियल को लौटाना कायरता थी। उन्होंने पुरोहित से क्षमा मागी और उनसे वापिस पूगल चलने के लिए आग्रह किया।

उन्होंने पूगल पहुच कर नारियल वापिस करने की घटना के बारे म अपने पिता से बात की। पिता ने समझाया कि अकारण राठौडो को चुनौती देना उचित नही था, कोडमदे की सगाई कुमार अरडकमल से हो चुकी थी, यह उनकी माग थी जिसे ब्याहना राठौडों के लिए जीवन मृत्यु का प्रश्न होगा। राठौड वैसे ही गोगादे की मृत्यु का भाटियों से बदला लेने के अवसर का इतजार कर रहे थे। जानबूझ कर उन्हे ऐसा अवसर देना उचित नही था। शार्दूल ने बताया कि पूगल आए हुए नारियल को स्वीकार नही करने का तात्पर्य

मोहिलो के विश्वास को धक्का पहुंचाना ही नहीं होगा, परोक्ष रूप से भाटियों को राठौड़ो से युद्ध करने के भय को स्वीकार करना होगा। और क्या राठौड़ इस नारियल को भाटियों द्वारा स्वीकार नहीं किये जाने का कोई अहसान मानेंगे? क्या उनकी शत्रुता में उतार आएगा? अगर नहीं, तो वह कितने दिनों तक राठौड़ो से डरकर रहेंगे या उनसे युद्ध को टालेंगे? वह गोगादे की मृत्यु का बदला अवश्य लेंगे। अगर वह बदला उनके (राव के) जीवनकाल में नहीं ले पाए तो उन्हें (कुमार को) यह बदला चुकाना ही पड़ेगा। इसलिए यह अवसर था कि वह नारियल को स्वीकार करें और राठौड़ों को भाटियों से बदला लेने के लिए ठोस कारण दें। इससे उनके जीवन काल में ही बदला लेने वाली कार्यवाही हो जायेगी और उसके जैसे परिणाम होंगे वह स्वयं देख लेंगे। कुमार के तर्कों में सार था। मोहिलो का नारियल स्वीकार कर लिया गया। शादी का दिन तय करके, पुरोहित राजी-खुशी छापर लौट गए।

शुभ मुहूर्त में राजकुमार शार्दूल को दूल्हा बनाया गया। उन्होंने जरी आदि की पोशाक धारण की। पिता राव रणकदेव ने अपनी सबसे अच्छी घोड़ी मोरा पर शार्दूल को बैठा कर निकासी कराई। बारात में चुने हुए सात सौ घुड़सवार थे, जिनमें नजदीकी सम्बन्धियों और रिश्तेदारों के अलावा, जोइया, खीची, पड़िहार, जैतुग, पाहू, पवार और अन्य जाति के लोग भी थे। बारात की शोभा एवं श्रेष्ठता के लिए जहां वृद्ध एवं वरिष्ठ गण थे, वहां युद्ध के लिए अनुभवी योद्धा, कुशल नौजवान और उत्साही युवक भी शामिल थे। यह बारात जहां विवाह की तैयारी करके गई थी, उससे ज्यादा युद्ध के लिए सम्भल कर गई थी। भाटियों को यह अन्देशा था कि राठौड़ बारात पर छापा या औरियन्त गांव पहुंचने के पहले धावा बोलेंगे ताकि कुमार शार्दूल के कोडमदे से फेरे नहीं होने दिए जाएं। उनकी यह कट्टर धारणा थी कि, 'भाग जाए मरे हुए की', इसलिए राठौड़ मर कर ही अपनी मंगेतर से भाटियों को ब्याहने देंगे। उन्हें माहेराज सांखले की भूमिका का भी ध्यान था, वह दुष्ट राठौड़ों को भाटियों से लड़वा कर ही सन्तुष्ट होते। उनका अपना कुछ भी दाव पर नहीं था, वह बदले की भावना से मरे जा रहे थे। बारात की प्रगति में कोई बाधा नहीं पड़ी, तेज सांढो पर सवार राईके आसपास के क्षेत्र की टोह ले रहे थे, मार्गों की जासूसी कर रहे थे। उन्हें कहीं किसी विपरीत हलचल का पता नहीं लगा। ऐन वक्त पर बारात औरियन्त गांव पहुंची।

यह विवाह मोहिलो की राजधानी छापर के स्थान पर उनके गांव औरियन्त में रचा गया था। राव माणकराव की पत्नी और कोडमदे की सौतेली माता जैसलमेर के रावल केहर की पुत्री थी। उन्होंने कोडमदे का विवाह छापर में नहीं होने देने की जिद कर रखी थी, इसलिए उनका विवाह औरियन्त के मोहिल कानाराव के घर पर रचा गया। कोडमदे वहीं रहती थी। कोडमदे की माता राणा खेता की पुत्री थी। औरियन्त में सारे मोहिल सरदार, सम्बन्धी, रिश्तेदार आमन्त्रित थे। मोहिलों को भी भय था कि राव चूंडा राजी खुशी विवाह सम्पन्न नहीं होने देंगे। इसलिए वह भी किसी प्रकार के विघ्न से निपटने के लिए तैयार थे। लेकिन विवाह के सारे निर्धारित कार्यक्रम निर्विघ्न पूर्ण हुए, हर्षोल्लास के साथ फेरे हुए, वर वधू को दोनों ओर के बुजुर्गों ने आशीर्वाद दिया।

जब नागौर में राव चूंडा को शार्दूल और कोडमदे की सगाई का मालूम पड़ा तो उनके

क्रोध की कोई सीमा नहीं रही। माहराज साखले के कटाक्ष और तानों ने आग मे घी डालने का काम किया। यह राठौड वश और जाति के लिए बडी शर्म की घटना थी। लेकिन वह चाहते हुए भी इस विवाह को रोकने का साहस नही जुटा पा रहे थे, क्योंकि उन्हें उनके पूर्वजों की भाटियो द्वारा की गई दुर्गति अभी तक याद थी। विवाह करने जा रही बारात को रोकने के प्रयास असफल होने से सारी बात बिगडती थी और फिर शादी अवश्य होती ही। छापर या औरियन्त पर सीधा आक्रमण करके उनके लिए जीतना कठिन था, क्योंकि वहा उन्हें मोहिलो और भाटियो की सयुक्त शक्ति का सामना करना पडता। इसलिए दुष्टो ने दुष्टता की सोची, शादी करके लौटती हुई बारात पर आक्रमण करके कुमार शार्दूल को मारने की योजना बनाई ताकि उनका विवाह का स्वाद भी अधूरा रहे और कोडमदे को वैधव्य का जीवन जीना पडे। उसका पल-पल कुमार शार्दल की याद मे कटे और इस दुख से वह पल-पल मे घुल घुल कर मरे। इस योजना मे सांखले का पूर्ण योगदान था, वह अपने जवाई जैतसी और पुत्र आलमसी की मृत्यु का बदला राव रणकदेव से लेना चाहते थे। सत्य यह था कि यह दोनो सांखले की मूर्खता के कारण मारे गये थे, वह बेकार मे औरो के सिर दोष मढ़ रहे थे।

इस सारी घटना से कुमार अरडकमल को सबसे कडवा आघात पहुचा। उनके कुरूप होने या सुडौल नही होने से क्या फर्क पडता था, एक बार सगाई होने से वह विवाह को अपना दैविक अधिकार समझते थे। उन्होंने प्रण किया कि वह स्वय कुमार शार्दूल का सिर धड से अलग करेंगे। भीमा नाम के अनुभवी योद्धा को पाच सौ घुडसवारों का नेतृत्व दिया गया और उसे लौटती बारात का रास्ता रोक कर युद्ध के लिए ललकारने का काम सौंपा गया। जगह जगह भेष बदल कर खुफिया तैनात किए गए ताकि वह बारात के लौटने के बारे मे सूचना भेजें। कुमार अरडकमल ने अपने बादामी रग के पच कल्याण घोडे को साज सवार कर तैयार किया, इसके चारो पाव सफेद थे, नाक सफेद थी और ललाट पर सफेद चन्द्र था। सेना मे भोजराज, भगोती प्रसाद चौहान, जेठी मुहणोत आदि नामी और अनुभवी योद्धा शामिल किए गए। माहेराज सांखला भी बेमन से, डरते हुए, अपनी नाक के लिए, अपने आदमियो के साथ सेना मे शामिल हुए।

राव माणकराव, राठौडो के पडोसी होने के कारण उनकी रीति नीति के भुक्तभोगी रहे थे, इसलिए उन्होंने बारात के मुखियों को सलाह दी कि वह अपने साथ कुछ मोहिलो को ले जाए। उन्हे आशका थी कि लौटती बारात पर आक्रमण करके राव चूडा दोहरा घाव करेंगे। भाटियों ने नम्रता से उनके प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। ज्यादा आग्रह करने पर वह उनके पुत्र मेघराज के नतृत्व मे पचास मोहिल सैनिक अपने साथ ले जाने के लिए तैयार हुए। कोडमदे के सात भाई थे, अकेले मेघराज को साथ ले जाने से बाकी छ भाई रुष्ट हो गए।

इधर बरात की बढिया खातिर चाकरी हो रही थी, सभी बाराती सत्कार का आनन्द ले रहे थे। राजकुमार शार्दूल जीवन जीना जानते थे, वह मोहिलो के यहां उत्सव मे सहयोग देकर सभी को मोहित किए हुए थे। औरतों और आदमियो की भीड शार्दूल से बातें करने और उन्हें पास से देखने के लिए उमड रही थी।

इधर कानाराव के घर उत्सव मनाया जा रहा था, उधर गांव की एक अधेड़ उम्र की राईकणी यह सब देखकर ईर्ष्या से अकारण मरी जा रही थी। घर का और बारात का सारा भेद लेकर वह आधी रात में अपनी सांढ पर चढी और उसने हवा की गति से नागौर की राह ली। उसका नाम दूति था। वह चुगली करने के लिए और भेद देने लेने के लिए प्रसिद्ध थी। जब लोगों ने सुबह गांव से दूति को नदारद पाया तो सबको शंका हुई, इसका समाधान पागियों ने नागौर की राह पर उसकी सांढ के पावों के निशान पहचान कर किया। यह निश्चय हो गया कि बारात का सारा कार्यक्रम और भेद नागौर पहुंच चुका था। दूति की मोहिलों से कोई दुश्मनी नहीं थी, यह उसका गुण था कि वह दूसरे पक्ष को भेद दे, वह इसे अपना कर्त्तव्य समझती थी। इसी के अनुरूप बारात की विदाई की तैयारियां की गई।

गाजे बाजे के साथ मोहिलों ने कोडमदे को विदा किया। उसने अश्रुपूरित आंखों से साथिनों, सहेलियों से विदाई ली। फिर माता पिता से गले मिली, बड़ी मुश्किल से उनकी छाती और कन्धों से लिपटी हुई वह दूर हुई। पास ही छहों भाई खड़े थे, उनसे जब वह मिलने गई तब उन्होंने कहा कि तुम हमें कहां छोड़ रही हो, हम तो तुम्हें पहुंचाने साथ चल रहे हैं। राव माणकराव पुत्रों की जिद समझ गए, विदाई के मौके पर उन्होंने कुछ कहना या उन्हें मना करना उचित नहीं समझा। राजकुमार शार्दूल और राजकुमारी कोडमदे रथ में बैठे, बाकी बाराती घोड़ों और ऊंटों पर सवार हुए। ढेर सारा दहेज, बर्तन, भांडे आदि ऊंटों पर लादे गए और सुरक्षित बांधे गए। सारा गांव दूर तक बारात के साथ गया, सगे-सम्बन्धी आपस में मिले, इष्ट देवियों की दुहाई दी, फिर मिलने के वायदे किए और बारात को टीबों के पीछे ओझल होता देखकर लौट आए। सौ भाटी और अन्य सैनिक रथ की रक्षार्थ उसके साथ चल रहे थे। इनमें प्रमुख मेदाई डाडालोत (जैतुंग भाटी), सीया लूणावत (सोम भाटी), देदा पाहू भाटी का पुत्र लखमनसी, बीका जोइया, आदि थे।

राठौड़ों ने बारात को शान्ति से नहीं लौटने दिया। वह रेतीले टीबों के पीछे छिपे रहते और भड़काने वाली कार्यवाही करते थे ताकि भाटी सेना उनका पीछा करके तितर बितर हो जाए। कभी चौराहों पर दूर से रास्ता रोकते, थोड़ी मुठभेड़ करते, और नौ दो ग्यारह हो जाते। कूओं पर एकत्र होकर हंसी ठिठोली करते और बारातियों के पानी पीने में बाधा डालते। रात के समय भी पास के मैदान में घोड़े और ऊंट दौड़ाते, दूर टीबों पर आग के मिरचे जलाते और ढोल और चंग पर अश्लील मारवाड़ी गीत गाते। भाटी इस सारे बरतब से पूरे जानकार थे, वह संयम से काम ले रहे थे। साला मोहिल भाई क्रोध लाते लेकिन अनुभवी भाटी उन्हें शान्त रखते। वर्तमान चूरू जिले के तेहनदसर, जसरासर, साधासर गांवों के पास गम्भीर झड़पें हुईं, कई राठौड़ मारे गए, कुछ भाटी भी काम आए। अनेक घायल भी हुए। भाटियों की तलवारें म्यानों से बाहर रहतीं और उनके घुड़सवारों के भाले वार के लिए सधे रहते थे, क्योंकि राठौड़ टीबों की ओट से या रास्ता के मोड़ों से निकल कर छापे मारते थे, उनका उत्तर नंगी तलवारें और सधे हुए भाले ही दे सकते थे। राठौड़ भाटियों से डट कर युद्ध करने को जानबूझ कर टाल रहे थे, भाटी यह जानते थे। उन्हें पूर्व नियोजित स्थानों से पहले युद्ध नहीं करना था। वहां उन्हें और कुमुक, सेना आदि मिलने का प्रबन्ध था। उन्होंने स्थान, भूमि की बनावट, पानी की सुविधा आदि का ध्यान रख कर ऐसा

लिया। इधर ज्योंही राठौड टीबों के पीछे से प्रकट होते, बारात के साथ में चल रहे ढोली और नगारची विवाह और खुशी के गीत राग छोड कर तुरन्त सिन्धु राग (युद्ध का आह्वान) पर आ जाते थे, जिसमे दूर तक फैला हुआ बारातियों का काफिला सम्भल कर सतर्क होकर अपनी टोली के नायक के साथ हो जाता।

जैसे जैसे बारात मोहिलों के क्षेत्र से दूर होती गई और पूगल के क्षेत्र के नजदीक पहुचती गई, राठौडो के हमले अधिक होते गये। आखिर बारातियो द्वारा यह तय किया गया कि इस प्रकार से हो रही क्षति को देखते हुए ऐसे काम नही चलेगा। भाटी बारात और रथ को लेकर आगे आगे तेज चलें, मोहिल भाई और उनकी सेना राठौडो को रोकेगी, केवल मेघराज मोहिल बहन के रथ के साथ रहेगे। भाइयो की सेना की सख्या राठौडो से बहुत कम होते हुए भी उन्होने जगह जगह उनका रास्ता रोका, कई स्थानो पर उनका इन्तजार किए बिना आगे बढकर उनसे युद्ध किया। एक एक करके छहो भाई औरियन्त और नाल के मार्ग मे शत्रुओ से लडते हुए मारे गए, छठा भाई नाल के पास मारा गया। इन छहो भाइयो के स्मृति चिह्न, जहा उन्होंने वीरगति पाई थी वहा बने हुए थे। सातवें भाई मेघराज बाद मे कोडमदेसर मे मारे गए थे।

भाटियो की सेना जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी पूगल के पास पहुचने के प्रयास में थी, लेकिन कोडमदे के रथ की धीमी गति उसके प्रयासों मे बाधा हो रही थी। उनके घोडे, ऊट और बैल भी बहुत थक चुके थे। कुछ बरातियो ने सुझाव दिया कि राजकुमार शार्दूल चुने हुए साथियो को साथ लेकर आगे निकलें और पूगल शीघ्र पहुचें, वह रथ के साथ पीछे आएगे। यह सुझाव उन्हे मान्य नही था, वह वीर योद्धा अपनी वधू को पीछे अकेली छोडकर कायरो की तरह मैदान छोडने वाले कहा थे? जब शत्रु सेना पास दिखाई देने लगी तो कुमार रथ छोडकर युद्ध करने के लिए मोरा घोडी पर सवार हुए। राठौडो को भय था कि अगर भाटी पूगल पहुच गए तो उनकी नाक गई सो गई, कुमार अरडकमल का कुमार शार्दूल को मारने का प्रण भी अधूरा रह जायेगा। राजकुमार शार्दूल के मोरा घोडी पर सवार होने से वह ढोल नगारो की लय पर नाचने लगी, इसके लिए उसे पूगल मे अभ्यास कराया हुआ था। नाचने समय उसके पैरो के आगे पीछे उठने मे ऐसा अहसास हो रहा था कि वह गाने वाली थी।

राठौड सेना योजना के अनुसार नाल गाव के पश्चिम के ऊचे धरातल पर आ गई और बाराती पश्चिम मे कोडमदेसर के पास के नीचे मैदान मे थे। ऊचे स्थान से उन्हें भाटी सेना की तमाम गतिविधिया दिखाई दे रही थी, जबकि भाटियो को नीचे से केवल शत्रु सेना का आगे का भाग ही दिख सकता था।

मोरा घोडी की आतुर चाल देखकर अरडकमल को लगा कि अगर कहीं यह घोडी शार्दूल को मैदान मे ले निकली तो इसका पीछा करके उसे पकडना उनके घोडों के लिए असम्भव था, इसलिए उन्होने कुमार शार्दूल को द्वद्व युद्ध के लिए ललकारा। कुमार शार्दूल ने आतुर मोरा को थापथपा कर शान्त किया और एक सच्चे वीर योद्धा और निडर क्षत्री की तरह उनकी ललकार को स्वीकार किया। बारात के वयोवृद्ध मुखिया यह जानकर स्तब्ध रह गए। वह चाहते थे कि येन केन-प्रकारेण पूगल नजदीक सी जाए। अगर कुमार को

युद्ध हो गया तो राव रणकदेव उन्हें क्या कहेंगे ? शार्दूल ने मोरा को ऐडी से इशारा किया और वह भाटी सेना में जा मिले । रथ को सुरक्षित स्थान पर खड़ा करके उन्होंने कोडमदे के लिए कुछ अंगरक्षक छोड़े । ऊंचे भूमि तल से राठौड़ों ने अपने घोड़े भाटी सेना पर आक्रामक मुद्रा में दौड़ाये, भाटी भी अपने बचाव के लिए व्यूह रचना करके उनका स्वागत करने को तैयार थे । भगोतीप्रसाद चौहान के मारे जाने से राठौड़ सेना में क्षणिक ठहराव आया, लेकिन फिर आपसी मारकाट आरम्भ हो गई ।

भाटियों को इस युद्ध में अपने अस्तित्व के लिए लड़ना था, अन्यथा सारे मारे जायेंगे, जीने वालों को कोई क्षमा नहीं करेगा । उनकी अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न था, वह जानबूझ कर राठौड़ों की मंगेतर ब्याह कर लाए थे, अब मरने से डरने से काम नहीं चलेगा । दूसरे की मंगेतर लाना ही मौत को न्योता देना था । और अब वर और वधू को सुरक्षित पूगल पहुंचाना उनके लिए अत्यन्त आवश्यक था । यह अन्तिम कार्य अगर सम्पूर्ण नहीं हुआ तो सगाई का नारियल स्वीकार करने से लेकर अब तक का सारा अभ्यास व्यर्थ जायेगा । राठौड़ों के क्रोध का एक कारण यह भी था कि भाटी कुमार न केवल अरड़कमल की मोहिल मंगेतर को ब्याह कर ले आए थे बल्कि वह लगभग पूगल पहुंच चुके थे । नाल में इस मैदान में उनके लिए यह अन्तिम अवसर था कि वह राजकुमार शार्दूल को मार लें और कोडमदे को वैधव्य का दुख जीवन भर भोगने दें ।

युद्ध में योद्धा किसी कार्य और लक्ष्य की पूर्ति व प्राप्ति के लिए लड़ता है । उपरोक्त लक्ष्या के वशीभूत और उनसे प्रेरित हो कर सेदाई जेतुंग, सीया लूणावत सोम, लखमनसी पाहू, बीका जोइया आदि बहादुरी से लड़े और उन्होंने राठौड़ सेना के अनेक योद्धाओं को मारा या घायल किया । कुमार शार्दूल ने जेठी मुहणोत को मारा ।

इससे पहले कि कुमार शार्दूल अरड़कमल से द्वन्द्व युद्ध में भिड़ पड़ते, उन्होंने एक अन्तिम बार कोडमदे के मुख को देखने के लिए मोरा को रथ की ओर मोड़ा, उससे आंखें चार हुई और अलविदा ली । उन्होंने मोरा की पीठ रथ की ओर की, ऐडी से उसे इशारा किया और वह पथ कल्याण घोड़े पर सवार अरड़कमल के समीप पहुंच गई । उन्हें सशक्त अंगरक्षकों ने घेर रखा था । कुमार शार्दूल ने भाले के वारों से अंगरक्षकों की अग्रिम पंक्ति को बेधा, बाकी काम उनके साथियों ने पूरा किया । अरड़कमल अपने सामने दुधारी तलवार लिए कुमार शार्दूल को देख कर एक बार घोड़े की काठी में सिहर उठे, लेकिन वह भी सच्चे योद्धा थे, क्षण भर में सम्भल गये और बचाव व आक्रमण की मुद्रा में आ गए । दोनों ने गर्जना की, हुंकार भरी और एक दूसरे को पहला वार करने के लिए आमन्त्रित किया । युद्ध के मैदान में दोनों प्रतिद्वंद्वी आक्रोश में थे किन्तु जल्दबाजी में दोनों ने अपना सन्तुलन नहीं खोया । दोनों क्षत्री थे, इनकी रगों में राजपूतों का रक्त दौड़ रहा था । अब यह धर्मयुद्ध था, धोखे या कपट के लिए यहां स्थान नहीं था, कुछ ही क्षणों में दोनों में से एक की मौत अवश्यम्भावी थी । इस द्वन्द्व युद्ध का सारा दृश्य कोडमदे रथ में बैठी हुई देख रही थी और परिणाम के इन्तजार में सांस थामे बैठी थी । आक्रमणकारी कुमार अरड़कमल थे, इसलिए पहला वार करने का अधिकार राजकुमार शार्दूल का था । शार्दूल ने अपने आप को घोड़ी की काठी पर आश्वस्त किया और पूरे वेग से अरड़कमल की गरदन पर वार किया । चपल

राठौड वार के लिए तैयार थे, उन्होने ढाल से वार को झेला और दोनो एक दूसरे पर टूट पडे। दोनो के लिए अब प्रश्न प्रतिष्ठा का था, जीवन और मृत्यु का नहीं था। दोनो बराबर के योद्धा थे और शस्त्र विद्या मे पारगत थे। इसी दौरान शार्दूल वार करके सन्तुलन मे और अपने बचाव की मुद्रा मे आने मे क्षण भर का विलम्ब कर गये। उनके जीवन का यही एक क्षण निर्णायक सिद्ध हुआ। वीर राठौड ने बिजली की गति मे शार्दूल की गर्दन पर वार किया और उनकी तलवार उनके सिर को धड से उडा ले गई। कुमार अरडकमल भी गम्भीर रूप से घायल हो गए थे। वह भी शार्दूल के साथ ही अपने घोडे से युद्ध के मैदान मे गिर पडे। इस युद्ध मे लगे हुए उनके घाव ठीक नही हुए और वह भी छ माह पश्चात् मर गए। यह युद्ध सन् 1413 ई मे बीकानेर से बीस मील पश्चिम में कोडमदेसर के पास हुआ था। यह भाटियो और राठौडो का कोडमदेसर का पहला युद्ध था।

उपरोक्त द्वद्व को कोडमदे रथ मे बैठी देख रही थी, उसे गर्व था कि उसके पति अरडकमल से कम योद्धा नही थे। उनके वार, उनके बचाव और घोडी पर नियन्त्रण उसे मुग्ध किए हुए थे। उनके द्वारा अरडकमल पर किए वारो के निर्णायक होने मे उसे कोई सन्देह नही था, केवल शार्दूल की एक क्षण की चूक घातक सिद्ध हुई। आखिर जब अरडकमल घायल हो कर पच कल्याण घोडे से गिर पडे थे तो उनके यह घाव शार्दूल की तलवार से ही तो थे ?

किन्ही लोगो का कहना है कि शार्दूल युद्ध का मैदान छोड कर पहले पूगल की ओर चले गए थे, वह बाद में लौट कर युद्ध स्थल पर आए। यह सम्भव जान नही पडता, वह कोडमदे को अकेली रथ मे छोडकर जाने वाले व्यक्ति नहीं थे। अगर वह कायर होते या उन्हे युद्ध का भय होता तो वह अपने पिता को सगाई का नारियल स्वीकार करने के लिए क्यो प्रेरित करते ? राव रणकदेव ने घर आई बला को नारियल लौटा कर उनकी अनुपस्थिति मे टाल दिया था, यह तो वह स्वय पुरोहित को मार्ग मे से वापिस पूगल लाकर बला साथ ले आए थे। अगर वह कमजोर पडते तो द्वद्व युद्ध मे अरडकमल के घातक घाव कैसे लगते ? वह केवल आखिरी एक बार कोडमदे से मिलने के लिए उसके रथ तक अवश्य गए थे, रथ को युद्ध के मैदान से मील आधा मील दूर ही खडा किया होगा ? रथ तक जाकर लौटने को युद्ध का मैदान छोडने की सज्ञा नही दी जा सकती। अपनी प्रेयसी से अन्तिम बार मिलने जाने को कायरता कैसे कहें ?

इस युद्ध मे दोनो ओर के योद्धाओ ने अद्‌भुत पराक्रम और शौर्य का परिचय दिया। सेदाई जैतूंग ने भारी भरकम जाघा चौहान को युद्ध के लिए ललकारा, लेकिन वार चूकने पर भारी शरीर के कारण चौहान सन्तुलन खो बैठे और घोडे से धान की बोरी की तरह नीचे लुढक गए। जैतूंग के भाले की नोक ने ही उन्हे अन्तिम बार जीवित देखा। जैतूंग भाटी युद्ध मे इतने उत्साह और उमग से प्रेरित थे कि जो उनके सामने आता उस पर करारे वार करते। एक बार तो कुमार अरडकमल स्वय उनके वार की मार मे आ गये थे, यह तो पच कल्याण घोडे की चपलता और अगरक्षकों की सतर्कता थी कि वह बच गए। लखमनसी पाहू सहित अन्य अनेक योद्धा मारे गए। राठौडो की सेना मे भी काफी योद्धा खेत रहे।

कुमार अरडकमल उनके शरीर पर लगे हुए घावो से इतने अधिक पीडित थे कि उनकी दशा कोडमदे के रथ तक जाकर उसे छूने तक जैसी नही थी, या सच्चे राजपूत की भाति

उन्होंने दूसरे की ब्याहता की आंख उठाकर देखना भी पाप समझा था कोडमदे में उमड़ते सत ने उन्हें किसी शाप के प्रति सचेत कर दिया। कारण जो भी हो, कुमार अरड़कमल कोडमदे से मिले नहीं।

राजकुमार शार्दूल की मृत्यु होने से राठौड़ों के लिए युद्ध का उद्देश्य पूर्ण हो गया और भाटियों के लिए अब युद्ध करने के लिए कुछ शेष नहीं रहा। इसलिए युद्ध विराम हो गया। दोनों पक्षों ने अपने हथियार रख दिए। कोडमदे ने सती होने का निश्चय किया। थोड़े समय पहले के प्रतिद्वंद्वियों ने चिता के लिए सूखी लकड़ियां इकट्ठी कीं, चिता बनाई। यही सच्चे राजपूतों की परम्परा रही थी कि युद्ध के मैदान के शत्रु, शान्ति के समय मित्र होते थे। जीवित शत्रु शत्रु था, वीरगति पाने के बाद दोनों पक्ष उसे शहीद के समान सम्मान देते थे और सम्मिलित रूप से उसका अन्तिम क्रिया-कर्म करते थे।

राजकुमारी कोडमदे ने अपने परिचारक को आदेश दिया कि वह उसका दाहिना बाजू तलवार के वार से काटे और एक अंगरक्षक, सेढे भाटी, को बुलाकर कहा कि वह इस गहनों से सजे हुए और खून टपकते हाथ को लेकर शीघ्रातिशीघ्र पूगल पहुंचे और इसे पूगल के गढ के द्वार पर खड़े हुए वह का उत्सुकता से इन्तजार कर रहे, उसके बूढ़े सास-ससुर के पांवों लगा दे। और उन्हें सन्देशा देना कि उनकी बहू ऐसी वीरांगना थी। फिर उसने परिचारक को आदेश दिया कि वह उसका बायां हाथ काटे और युद्ध में जीवित बचे अपने पीहर के एक मोहिल से कहा कि वह यह हाथ लेकर माता पिता के पास जाए और इस हाथ को बेटी को दिए हुए गहनों से पहचानें। उनसे कहना कि कोडमदे ने उनके घर में जन्म लेकर और राजकुमार शार्दूल को वर करके उन्हें और उनके परिवार को गर्वित किया था, उसने ऐसा कोई काम नहीं किया जिसके लिए उन्हें नीचा देखना पड़े। मेरी माता से कहना कि जिस बेटी के जन्म पर उन्होंने थाली तक नहीं बजाई थी, अब उसके सती होने के उत्सव के उपलक्ष में नगाड़े अवश्य बजवावें। उसने सास ससुर और माता पिता से यह भी निवेदन किया कि उसके हाथ का दाह संस्कार करने से पहले हाथ के गहने उतार लें, और उन्हें चारणों को विधिवत दान में दे दें, ताकि वह पीढी-दर पीढी उसके और कुमार शार्दूल के प्रणय और बलिदान की यश गाथा, आने वाली भाटी और मोहिल पीढियों को सुनाते रहें, जिससे वह ऐसे ही बलिदानों के लिए प्रेरित होते रहें। इस प्रकार से अपनी इच्छा प्रकट करने के बाद कोडमदे चिता पर बैठी, उसने राजकुमार शार्दूल का सिर अपनी गोद में लिया और उनका शरीर पास में रखा। उसकी चिता के आस पास अन्य वीरगति प्राप्त भाटियों, राठौड़ों, मोहिलों और अन्य सरदारों की चिताएं तैयार की गई। सूर्यास्त से थोड़े समय पहले सबसे पहले कोडमदे की चिता को अग्नि दी गई, फिर बारी बारी से अन्य चिताओं को प्रज्वलित किया गया। कुछ समय के लिए आकाश अग्नि की लपटों और चिनगारियों से जगमगा उठा, फिर धुएं के गुब्बार उठने लगे और रात पड़ते पड़ते केवल अंगारों के ढेर शेष रह गए। अगले दिन सूर्योदय पर केवल गरम राख रह गई। दोनों पक्षों ने अपने अपने योद्धाओं की अस्थियां चुगीं। एक प्रकार की निःस्तब्धता का वातावरण छाया हुआ था, निर्जन वन सिसकियें भर रहा था। भाटी और राठौड़ अस्थाई शान्ति निभाते हुए, पूगल और नागौर के विपरीत मार्गों पर ओझल हो गए।

राव रणकदेव का भविष्य अन्धकारमय हो गया। उन्होंने दिल पर पत्थर रखकर वीर पुत्र और वीरांगना पुत्रवधू का शोक मनाया। उन्होंने सती के शक्ति स्थल पर कोडमदे की स्मृति में एक बड़ा तालाब बनवाया और, शार्दूल और कोडमदे के नाम का शिलालेख तालाब के किनारे स्थापित किया। इस स्थान का नाम कोडमदेसर रखा, सती कोडमदे आज भी इस तालाब के कारण चिर अमर है। शार्दूल और कोडमदे के बलिदान के प्रसंग पर युग युग में अनेक गीत और भजन लिखे गए, और गाए गए, और आज भी इन गीतों के माध्यम से वह अमर हैं। राजपूतों के मध्य युग के गौरवमय इतिहास में ऐसी दूसरी कोई घटना नहीं हुई कि जब एक जीवित सती ने इस प्रकार अपने दोनों हाथों को स्वेच्छा से विच्छेद करके ससुराल और पीहर भेजे हों। जल कर मरना एक जानी मानी घटना होती आई थी और जन मानस सती के होने को मानसिक स्वीकृति देता आया था, लेकिन ऐसी घटना, जिसमें अंगों का विच्छेद किया गया हो और कहीं नहीं हुई। ऐसा करना मोहिलों की बेटी और भाटियों की पुत्रवधू के लिए ही सम्भव था। इससे दोनों घरानों के सिर गर्व से कितने ऊँचे हुए होंगे, यह वही लोग जानते हैं, आप केवल कल्पना ही कर सकते हैं।

कुछ लोगों का विचार है कि सन् 1411 ई. में गोगादे के वध के समय राव रणकदेव के जवाई धीरदेव जोइया भी मारे गए थे। यह कथन सत्य नहीं है, और अगर सत्य है, तब राव रणकदेव के लिए दो सालों के अन्तराल से घटने वाली इन दुखान्त घटनाओं को सह सकना कितना कठिन हुआ होगा।

राव चूंडा को अपने पुत्र कुमार अरडकमल का शोक छः माह बाद में मनाना पड़ा।

कुछ समय पश्चात् राव रणकदेव कुछ आश्वस्त हुए तब उनकी बदले की भावना आक्रोश के साथ जाग्रत हुई। उन्होंने अपने जीवनकाल में दो वैर चुकने की ठानी। पहला, माहेराज सांखले का वध। उन्हें दुःख था कि आखिर उनके प्रधान उनसे किस अपराध का बदला ले रहे थे? पहले उन्होंने कुमार जैतसी को मरवा कर उन्हें खराब किया, फिर उन्होंने गोगादे का उनके विरुद्ध साथ दिया, और अब यह राव चून्डा के साथ मिलकर राजकुमार शार्दूल के वध का षड्यन्त्र रचा। दूसरा, अब उन्हें राव चून्डा से स्वयं से वैर चुकना था। भाटी इनके पिता वीरमदे राठौड़ और भाई गोगादे को मार चुके थे, अब इनके मरने की बारी थी। अगर राव अपने जीवनकाल में यह वैर नहीं ले सके तो वह यह उधार उनके उत्तराधिकारी के लिए अमानत स्वरूप चुकाने के लिए छोड़ जायेंगे। इन्हें विश्वास था कि उनके भाटी पुत्र यह वैर अवश्य लेंगे।

राव रणकदेव के पास अभी इतनी शक्ति और साधन नहीं थे कि वह नागौर पर सीधा आक्रमण करके राव चून्डा राठौड़ और माहेराज सांखले, दोनों को मार सकते। इसलिए उन्होंने आधा कष्ट काटने के लिए पहले माहेराज सांखले पर उनकी जागीर मुन्डाला में आक्रमण किया। इसमें जैठी पाहू भी राव के साथ गए थे। इस आक्रमण की सूचना मिलते ही माहेराज सांखले ने अपने भतीजे सोम रेवनिया को नागौर के लिए रवाना करके कहा कि वह राव चून्डा को इस आक्रमण की सूचना दे और वह अति शीघ्र उनकी सहायतार्थ पहुँचें। इससे पहले कि राव चून्डा मुन्डाला पहुचते, राव रणकदेव माहेराज सांखले का काम तमाम कर चुके थे और वहां से दूर निकल चुके थे।

जब राव चून्डा मुन्डाला पहुचे तो सोम रेखनिया भी उनके साथ आया। उसने राव को उनके चाचा का बदला लेने के लिए उकसाया, उन्हे वीरमदे राठौड और गोगादे के वध की याद दिलाई। भतीजे मे चाचा के सभी गुण थे। इन सब बातो का ध्यान करके राव चून्डा ने राव रणकदेव का फुर्ती से पीछा किया। पागियो ने मार्गदर्शन कराया। राव रणकदेव और जेठी पाहू को यह अदेशा नही था कि राठौड़ इतना शीघ्र उनका पीछा करेंगे। उनका यह विचार सही नही था। जब गोगादे राठौड डाला जोइया को मारकर नाल पहुचे थे तब उनका भी विचार था कि जोइये देर से पहुचेंगे, तब तक वह सुरक्षित निकल जायेंगे। परन्तु राव रणकदेव की सहायता से धीरदे जोइया तुरन्त नाल पहुच गए। अब राव चून्डा ने उनके साथ वैसा ही किया जैसा वह पहले गोगादे के साथ कर चुके थे। उनके विचार मे वह अगली मुठभेड होने पर माहेराज की मृत्यु का बदला लेने का सोचेंगे। माहेराज साखला उनके वंश के नही थे और न ही उनके नजदीकी रिश्तेदार थे। उस समय राव रणकदेव पूगल से पचास मील पश्चिम मे सिरडा गाव के तालाब के पास डेरा डाले हुए थे। राव चून्डा को मार्ग मे एक जाम्भ नाम का बागोड (चौहान) राजपूत मिल गया, वह सारे क्षेत्र का और आडे ऊभे मार्गों का जानकार था। उसकी सहायता से राव चून्डा शीघ्रता से सीधे सिरडा के तालाब पर पहुचे। उन्होंने पहुचते ही राव रणकदेव से कहा कि वह अपने बडे भाई गोगादे की मृत्यु का बदला लेने आये थे और उनसे स्पष्टीकरण मागा कि उन्होने गोगादे और माहेराज साखले को किस कारण से मारा था? इन दोनों ने भाटिया की क्या हानि की थी जिसके कारण इन्हे मारा गया? राव रणकदेव ने सोचा कि स्पष्टीकरण या बहस से राव चून्डा कौनसे मानने वाले थे। यह उन्हे मारने आये थे, मारने का प्रयास अवश्य करेंगे, इसलिए विलम्ब करने से क्या लाभ। उन्होने कोई उत्तर नही दिया और राव चून्डा की चुनौती को स्वीकार किया। आपस मे झडपें हुई, राव रणकदेव के पास सेना बहुत कम थी, जेठी पाहू और वह मारे गए। सिरडा गाव के तालाब के पास शिलालेख लगा हुआ था जिसमे इस घटना का वर्णन था। माहेराज सासले का वध और राव रणकदेव की मृत्यु सन् 1414 ई मे हुई।

इसके बाद राव चून्डा ने पूगल क्षेत्र म लूटपाट की और पूगल के गढ पर अधिकार कर लिया। वह कुछ दिन वहां रुके। अपने बडप्पन के कारण राव रणकदेव की सोढ़ी राणी के निवेदन पर वह गढ छोड कर नागौर आ गए और सोढी राणी को वही निवास करने दिया। उन्हे क्या पता था कि उनकी यह छोटी सी भूल और मेहरबानी, अगले कुछ ही वर्षों म उनकी ही मौत का कारण बनेगी।

इस प्रकार भाटियों के लिए एक युग समाप्त हुआ। एक योद्धा अपने अस्तित्व के लिए कितना जूझा, कितनी यातनाएँ सही, कितने बलिदान दिए और कितनी कठिनाइयो के बाद, 90 वर्ष पश्चात्, रावल पूनपाल की नया राज्य स्थापित करने की लालसा पूर्ण की।

लेकिन केवल 34 वर्षों मे ही सब कुछ स्वाहा हो गया। 124 वर्षों (1290-1414ई) मे रावल पूनपाल की लम्बी यात्रा की इतिश्री हो गई। पूगल पर रावल करण के वशजो का अधिकार एक पीढी मे समाप्त हो गया। रावल करण के भाई तेजसिह के वशज केलण के राव रणकदेव की सोढी राणी के गोद आने से, अब पूगल पर उनके वश के राव हुए और

आज तक होते आए हैं। रावल करण और तेजसिंह रावत चाचगदेव के पुत्र थे। राव रणकदेव, राव चाचगदेव से छः पीढ़ी बाद में हुए और राव केलण उनसे सात पीढ़ी बाद में हुए। इस प्रकार राव रणकदेव से राव केलण सात पीढ़ी दूर हुए। लेकिन राव भाग्य का फेर है, कौन बनाता है, कौन भोगता है। राव केलण सन् 1397 ई में बीकमपुर आए थे, उधर सन् 1399 ई में तैमूर ने खिजर खां सैयद को मुलतान में सिन्ध और पंजाब का सूबेदार नियुक्त किया। दोनों का सन् 1414 ई में भाग्योदय हुआ, एक पूगल के शासक हुए, दूसरे दिल्ली के सुलतान बने। सैयद वंश सन् 1451 ई में समाप्त हो गया, राव केलण का वंश आज 575 वर्ष बाद में भी पूगल में यथावत कायम है।

भाटियों के रत्न राव रणकदेव के भाग्य का सूर्यास्त सन् 1414 ई में हुआ, साथ ही युग पुरुष राव केलण के भाग्य का सूर्योदय भी हुआ। राव रणकदेव अपने पीछे राजकुमार तणु को छोड़ गए थे। उनकी सोढ़ी राणी और विश्वासपात्र प्रधान मेहराव हमीरोत भाटी राज्य की बागडोर सम्भालने के लिए पीछे रहे। राव रणकदेव एक प्रतिभाशाली पुरुष थे जिनमें उस समय के अनुसार सभी आवश्यक गुण थे। वह होशियार, चतुर, चपल और धैर्यवान शासक थे। वह मुलतान के शासकों के प्रति शान्त और मैत्रीपूर्ण रवैया अपनाये हुए थे, पूगल विजय के पश्चात् कुछ वर्षों तक वह पश्चिमी सीमा पर निष्क्रिय से रहे। फिर उचित अवसर का लाभ उठाकर मरोठ और भूमनवाहन पर चुपचाप ऐसा अधिकार किया कि पड़ोसियों को अखरे नहीं। लेकिन वह स्वयं के आश्रित रहे, प्रधान माहेराज साखले के राजद्रोह और विश्वासघात को सहने के लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने साखले पिता पुत्र दोनों को मृत्युदण्ड देकर चैन लिया, चाहे इस कार्य की पूर्ति के बाद में उन्हें अपने प्राण भी देने पड़े हो। उन्होंने भटनेर के शासक राव दुलीचन्द भाटी से अच्छे सम्बन्ध रखे, किन्तु वह कमजोर होने के कारण तैमूर के विरुद्ध उनकी सहायता नहीं कर सके। वह राठौड़ों की विस्तारवादी नीति के कट्टर विरोधी थे। वह नहीं चाहते थे कि नागौर और मण्डोर के राठौड़ उनकी या उनके मित्रों व सम्बन्धियों की भूमि पर अधिकार करें। इसी उद्देश्य के लिए वह जीवन-पर्यन्त राठौड़ों से संघर्ष करते रहे और उन्हें अपनी एक भी बीघा भूमि पर अधिकार नहीं करने दिया।

कोडमदे और कुमार शार्दूल के प्रेम की कहानी अब केवल भाटियों या मोहिलों तक ही सीमित नहीं रही, वह पूरे प्रदेश की धरोहर हो गई। इस गाथा पर युग-युग में अनेक गीत, छन्द, दोहे और कवित्त लिखे गए और गाये गए। यह इस प्रदेश के लोक गीतों और लोक कथाओं में समा कर जन मानस पर पीढ़ी दर-पीढ़ी छाई रही। दुर्भाग्य से इन सबने कुमार अरडकमल राठौड़ को खलनायक की भूमिका देकर उनके साथ पूरा न्याय नहीं किया। अगर द्वंद्व युद्ध में कुमार अरडकमल मारे जाते तब यह कोडमदे और शार्दूल की अमर कहानी बनती ही नहीं। प्राचीन समय में सभी सामाजिक कुरीतियों और अन्य बाधाओं के होते हुए भी यह प्रेम की ज्वाला को नहीं दबा सके। प्रेम की कोई सीमा नहीं, कोई बन्धन नहीं होता। किस प्रकार एक साहसी कोडमदे ने कुरूप और दैत्यरूप वर को नकार करके एक सुन्दर सुडौल राजकुमार को प्रणय सूत्र में बन्धने के लिए स्वेच्छा से चुना, केवल मरने के लिए, भोग विलास के लिए नहीं। अपना चुनाव करने से पहले मोहिलों और भाटियों ने

अपनी सन्तानो को सम्भावित खतरे के प्रति सचेत कर दिया था, लेकिन इसकी दोना ने जानबूझ कर परवाह नही की। दोना के माता पिता ने उनके दृढ निश्चय और एक दूसरे के प्रति समर्पण की भावना का आदर करते हुए विवाह करने के लिए सहमति दी। वह वीरागना रथ मे बैठी हुई सारी घटना देख रही थी, होनहार के प्रति आश्वस्त थी, भाग्य की रेखा को विधाता भी लिखने के बाद नही मिटा सकता। कुमार शार्दूल उनकी आखो के सामने मारे गए, लेकिन उन्होने अपने मन पर और धैर्य पर नियन्त्रण रखा, भावनाओ को प्रबल नहीं होने दिया। उन्होन मरणोपरान्त क्रियाकर्म शीघ्र सम्पूर्ण कराने की सोची ताकि इस त्रासदी से उन्हें शीघ्र मुक्ति मिले। इसी साहस और धैर्य से उन्होने परिचारको से अपने दोना हाथ कटवाए और भाटियो और मोहिलो को उन्हें उनके ससुराल और पीहर लेकर जाने के आदेश दिए। उन्हें सती के सत ने ओतप्रोत कर रखा था इसलिए उनके लिए शारीरिक पीडा बेमानी थी। उनके लिए सासारिक और शारीरिक कष्ट समाप्त हो चुके थ, चारा ओर चिरमिलन की आभा थी। उनके पति को मारने वाले कुमार अरडकमल उनके सामने घायल अवस्था मे पडे थे लेकिन उन्हाने उन्हे कोई कड़ा वचन नही कहा और न ही उनकी मर्यादा को नीची दिखानी चाही। वह स्वय युद्ध को देख रही थी, अरडकमल का कोई दोष नही था। इस दिन को देखने के लिए ही उन्होने कुमार अरडकमल के स्थान पर शार्दूल को वरा था। द्वद्व युद्ध म एक का मरना निश्चित था, बारी कुमार शार्दूल की आई, अरडकमल को कोसने से क्या लाभ?

भाटी कोडमदेसर के इस प्रथम युद्ध मे परास्त अवश्य हुए, लेकिन कोडमदे जैसी वीरांगना को पा कर आखिर विजय उनकी ही रही। शार्दूल और कोडमदे के प्रेम की वीरगाथा जन-जन में सदियो से रम गई, यही भाटिया की विजय रही। अगर कुमार शार्दल नही मारे जाते तो कोडमदे को कौन याद करता। सैकडो राजकुमारो की शादिया हुई थी, उनकी पत्नियो के नाम और जाति का कहीं उल्लेख नही। यह एक ऐतिहासिक परम्परा थी कि बेटियो और बहुओं के नाम ठिकाने इतिहास मे नही आते थे। इसलिए कोडमदे का सौभाग्य था कि वह आज इतिहास से लोप नही हुई, वह घर घर की बेटी और बहू है। वह भाटियो के भविष्य की धरोहर है। यह केवल कोडमदे का अद्भुत बलिदान था जिससे राव केलण ने प्रेरणा ली, और इसी से प्रेरित होकर उन्होने राव चूण्डा राठौड से कुमार शार्दूल और राव रणकदेव की मृत्यु का सन् 1418 ई मे बदला लिया।

राठौड इतिहासकारों का मत है कि कोडमदेसर मे सती होने वाली कोडमदे, मोहिलो की बेटी कोडमदे नहीं थी। उसका नाम कोडमदे न होकर नौरगदे था। सती होने वाली कोडमदे राव केलण की बेटी और राव रिडमल राठौड की पत्नी थी। इसके प्रमाण के लिए उन्होंने कोडमदेसर मे शिलालेख भी बरामद करवाया। उनके अनुसार जब सन् 1438 ई मे राव रिडमल की मृत्यु चित्तौड मे हुई, उस समय उनकी पत्नी कोडमदे अपने पीहर म मिलने आई हुई थी। उस समय उनके भाई चाचगदेव पूगल के राव थे। राव रिड़मल की मृत्यु का समाचार उन्हे उनके पुत्र राव जोधा ने वर्तमान कावनी गाव (पूगल के पास) मे दिया। वह राव रिडमल की पाग के साथ कोडमदेसर मे आ कर सती हुई। मेरा कहना है कि अगर कोडमदे को अपने पति की पाग के साथ सती होना था तो वह सोजत जाकर,

जहा राव जोधा के परिजन रहते थे, सती होती या पीहर मे ही सती हो जाती। उनका कावनी मे सती होना उनके ससुराल पक्ष वाले शुभ नही मानते थे, इसलिए वह कावनी से दस बारह मील दूर नागौर के मार्ग पर पडने वाले कोडमदेसर के स्थान पर सती हुई। वास्तव मे हुआ यह था कि सन् 1413 ई मे सती हुई कोडमदे का प्रसग उनके ध्यान मे था। जब वह कोडमदेसर पहुची तब उन्होने विचार किया कि अगर सोजत मे सती होकर प्राण ही त्यागने थे तो यही सती होकर प्राण त्यागना शुभ होगा। कम से कम यह स्थान पवित्र था जहा कोडमदे जैसी वीरागना अभी पच्चीस वर्ष पहले सती हुई थी। यह सब विचार करके राव जोधेजी की माता कोडमदेसर मे सती हुई।

इसमे दो राय नही कि कोडमदे कोडमदेसर मे सती हुई थी। यहा तालाब अब भी है, चाहे राव रणकदेव ने अपने पुत्र और बहू की स्मृति मे इसे बनवाया हो या राव जोधे ने अपनी माता कोडमदे की स्मृति मे इसे बनवाया हो। भाटियो को दोनो बातें मानने मे गर्व है, एक भाटियो की पुत्रवधू थी, दूसरी उनकी बेटी थी। इसलिए यह मानने में अतिशयोक्ति नही होगी कि दोनो बातें सही हैं। सन् 1413 ई में इस स्थान पर मोहिलो की बेटी और भाटियों की पुत्रवधू कोडमदे सती हुई थी, उनके श्वसुर राव रणकदेव ने तालाब बनवाया, और इसी स्थान पर पच्चीस वर्ष बाद मे, सन् 1438 ई मे, भाटियो की बेटी और राठोडो की बहू कोडमदे सती हुई थी। राव जोधे ने राव चाचगदेव की अनुमति से पहले के खुदे हुए तालाब को बडा और गहरा करवाया ताकि उसकी पानी भरने की क्षमता बढे, जिससे ज्यादा समय तक पशु और पास के गांवो वाले पानी का उपयोग कर सकें। राठोड, मोहिल कोडमदे को मान्यता देने से कतराते थे क्योकि यह राठौडो की मगेतर थी जिसे भाटी ब्याह लाए थे।

कोडमदे की यशगाथा अनेक कवियो ने लिखी है। श्री मेघराज मुकुल, जो सन् 1949ई मे मेरे हिन्दी के गुरु रह चुके थे, की ओजस्वी कविता 'कोडमदे' को परिशिष्ट 'क' मे उद्धृत किया गया है।

राव रणकदेव ने आरम्भ मे साखलो के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनाई जो बाद मे उनके और पूगल के लिए अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हुई। जहां तक उनकी नीति मुलतान के प्रति दबकर और छोटा बनकर रहने की थी वह सही थी, इसके कारण मुलतान ने कभी पूगल पर आक्रमण नही किया और न ही उनके द्वारा पूगल से नायको को निकाले जाने की कार्यवाही या मूमनवाहन और मरोठ पर जोइयो से युद्ध करके अधिकार करने की घटनाओं मे हस्तक्षेप किया। उनकी जैसलमेर के प्रति निष्ठा और स्वामिभक्ति के सकल्प को उचित ठहराना चाहिए, आखिर एक छोटा होगा तभी दूसरा बडा होगा। सभी बराबर कैसे हो सकते हैं, जैसलमेर उनकी मातृभूमि थी, इसे सम्मान देकर राव रणकदेव ने अच्छा किया। लेकिन कुमार जैतसी के प्रकरण मे निर्दोष होते हुए भी, उनका जैसलमेर जाकर क्षमा याचना करना या गिडगिडाना उचित नही था। हा, उनके पश्चाताप करने या तीर्थयात्रा पर जाने मे कोई दोष नही था। उनके या उनके आदमियो द्वारा कुमार जैतसी और लूणकरण मारे गए थे, उनकी आत्मा की शान्ति के लिए यह कार्यवाही उचित थी।

माहेराज साखले को प्रधान नियुक्त करके उन्होने साखलो का तुष्टीकरण करना चाहा, यह उचित नही किया। जब वह मुलतान और जैसलमेर की ओर से आश्वस्त हो गए थे,

तब उन्हें जागलू आदि सांखलों के प्रदेश पर अधिकार कर लेना चाहिए था, जिसके लिए वह सक्षम भी थे। इससे राठौड़ पूगल से काफी दूर रहते और राव रणकदेव को उनसे उलझने के कम अवसर मिलते। जब सन् 1390 ई. में पूगल पर किए गये आक्रमण में प्रधान माहेराज सांखले का षड्यन्त्र में स्पष्ट हाथ था, तब उन्हें पूगल से केवल निष्कासित करना ही पर्याप्त सजा नहीं थी। उन्होंने पूगल के प्रधान के पद पर कार्यरत होते हुए एक सेवक की गरिमा नहीं निभायी, उन्होंने पहले राजद्रोह किया और फिर किले पर अधिकार करने में सक्रिय सहयोग देकर देशद्रोह किया। इन अपराधों का दण्ड, मृत्यु दण्ड ही था। राव रणकदेव ने उन्हें क्षमा करके जीवन दान दिया। यह उनकी बड़ी भूल हुई, जिसके कारण उन्हें आगे का सब कुछ भुगतना पड़ा। उनके उकसाने से गोगादे ने डाला जोइये को मारा, इस कार्यवाही में उनके पुत्र आलमसी साथ थे, वह ताल में मारे गये। उन्होंने राव चूण्डा को कुमार शार्दूल पर आक्रमण करने के लिए उकसाया, जिसके कारण शार्दूल मारे गए और कोडमदे को सती होना पड़ा। क्योंकि माहेराज जीवित थे, इसलिए राव रणकदेव को उन्हें मारने के लिए उनके गांव भुन्डाला जाना पड़ा। उन्होंने ही अपने भतीजे सोम रेसनिया को राव चून्डा के पास भेजा, उनके बुलाने पर राव चून्डा आए, और आखिर राव रणकदेव मारे गए। अगर माहेराज सांखला जीवित नहीं होते तब यह घटनाएँ इस श्रृंखला में नहीं होती।

अगर राव रणकदेव अपने पुत्र शार्दूल को घोड़ी के लिए उलाहना नहीं देते तब न तो वह गगड़ निरवान की घोड़े-घोड़िया लेने जाते, न वह औरियन्त के तालाब के किनारे रुकते और न कोडमदे उन्हें देखती। राव रणकदेव ने नारियल लौटाकर आयी बला को एक बार टाल दिया था, लेकिन लौटते हुए पुरोहित का रास्ते में शार्दूल से मिलना, उनका वापिस पूगल आना, और राव रणकदेव द्वारा नारियल स्वीकार करने के लिए राजी होना, आदि घटनाएँ ऐसी हुई जैसे कि कोई अदृश्य शक्ति इन सबका संचालन और नियन्त्रण कर रही थी। यह सब भाग्य में लिखा था, टाले नहीं टाला जा सकता था।

सब ठीक हुआ, अगर कोडमदे नहीं होती तो आज पूगल थोड़ी छोटी पड़ती, लेकिन उसके होने से पूगल बहुत ऊंचे शिखर पर है।

इन घटनाओं का सम्मिलित प्रभाव ही राव केलण को पूगल लाया। जब तक राजकुमार शार्दूल जीवित थे तब तक राव रणकदेव को अपने बाद पूगल की कोई चिन्ता नहीं थी। उसकी मृत्यु के बाद वह अवश्य चिन्तित हुए, क्योंकि वह जानते थे कि कुमार तणु उनका योग्य उत्तराधिकारी नहीं होगा। इसलिए माहेराज सांखले को मारने के लिए जाने से पहले उन्होंने अपनी व्यथा सोढ़ी राणी को अवश्य बताई होगी और इच्छा प्रगट की होगी कि वह कुमार केलण को गोद लेंगे। क्योंकि राव रणकदेव वापिस जीवित नहीं आए, इसलिए उनकी राणी ने केलण को गोद लेकर उनकी अन्तिम इच्छा पूरी की ताकि दिवगत आत्मा को शान्ति मिले।

कोडमदे

रचयिता श्री मेघराज 'मुकुल'

(1)

दळ बादळ उमड्यो हेल्यां रो, लश्कर थाम्यो भी थमै नहीं।
कँवरी रा मँहदी रँग-राता, डग मग पर डिगता जमै नहीं।।
धीमैं धीमैं हळवा हळवा, सपना रो दिवलो संजोया।
चाली कोडमदे नैण भर्यां, दुविधा मे अपणी सुध खोया।।

(2)

सादूळ बाघ मीठा सपना, उजळी रजणी में याद करै।
साथ्या रो साथ कदे लेवै, पुणि कदे लारनै कदम धरै।।
बावल रो हियो भर्‌यो आयो, नैणा में समदर सो उमड्यो।
काळे डूगर री धरती पर, कुण विरह बादळी ले घुमड्यो।।

(3)

ममता री तणिया सी खीचै, भीजै पलका होवै गळ गळ।
सिरकै, थिरकै, हिरखै मन मे, उळझे गठ बन्धन मे पल पल।।
घर नै सूनो सूनो छोड्या, पाख्या पसार चिड़कोली जा।
फिर आणै री आसा बिसार, मुख मोड्या या कुण जा कुण जा।।

(4)

ओळयू रा भुर धोमा पड़ग्या, डोली पूगळ कानी चाली।
सिझ्या झुरमुटियां मे लुक-छिप, ल्याई दुखरी रजणी काळी।।
डगमग डगमग डोलै डोली, हळवा-हळवा चालै डोली।
दोना रै हिवड़ै हूक उठै, पण दोउ मुख निकळै ना बोली।।

(5)

ज्यू होठ हिलै, त्यू सास चलै, फिर हाथ बढै, धड़कै छाती।
सरमाणै री है बात किसी, जद इक-दूजै रा म्हे साथी।।
सूनै मार्ग पर चाद ऊग, रजणी रो अँधियारो धोवै।
डोली आगै, दाये-बाये, सादूळ साथियां ने जोवै।।

(6)

ज्यू चाद चादणी लिया सग, नभ कै तारा मे राज रह्यो।
सादूळ लिया कोडमदे ने, साथ्या में वैसो साज रह्यो।।

इतणै मे सूनै मारग पर, ठर ठर टाप सुण्या भारी।
आख्यां रा डोरा लाल कर्या, रतनारा नैण तण्या भारी।।

(7)

नस-नस मे खून जम्यो पिघळ्यो, कडकी बिजळी, धडकी छाती।
कट तड करतां टूट पड्यो, अरडक री सेना मदमाती।।
लप लप करती तलवार थाम, सादूळ चढ्यो हो सावधान।
रणबाला कमर कस्या निकळी, सब छोड लाज ले एक आण।।

(8)

सुण शंखनाद, गज चिंघाड्यो, हय हीस्या म्याना खिंचो खड्ग।
कडकी बिजळी सी नस-नस मे, छेड्यो बंका विकराल जङ्ग।।
बण महाकाळ भिडग्या भैरव गरज्या आपस मे ठोक ताल।
माला सू गीची लाल-लाल, तीरा सू बींध्या बाळ-बाळ।।

(9)

लोही-लुहाण, चलती कृपाण, चमकी ले छींटा लाल-लाल।
मदमत्त वीरा धर रुद्र रूप, डाटी तलवारा अडा ढाल।।
असवार पड्या खा-खा पछाड, ली भेंट भवानी रुण्डमाळ।
झट शीश कट्यो आई सुवाल, धड पड्यो धरा पर खा उछाळ।।

(10)

बादळ गाज्यो, अम्बर काम्प्यो, फिर एक बार हुंकार उठी।
वर और वधू के हाथा मे, प्रलयकारी तलवार उठी।।
खुल दूर पड्यो कांगण-डोरो, बहग्यो सिन्दूर पसीने मे।
मेंदी रा हाथ कटारी ले, चलग्या कितणा के सीने मे।।

(11)

सादूळ और अरडक दोन्यू, लड-लड के थक-थक हुया चूर।
दोन्यू था कुल की आण लियां, रण म बांका मदमत्त शूर।।
इतणें में बिजळी सी चमकी, बस आख झपी, तलवार चली।
सादूळ हुयो दो टूक, शीश जा पड्यो दूर, फौजा मचळी।।

(12)

लुटग्यो सुहाग रणदेवी रो, पण एक नही आंसू ढळक्यो।
गमगमाट करतो मुख सुन्दर, ज्यूं भोर हुई, त्यूं-त्यूं मळक्यो।।
ले शीश गोद मे चिता सजा, जा बैठी 'शिव हर-हर' करती।
बलि खड्ग खीचली हाथ बढा, चुचकारी बार-बार धरती।।

(13)

बोली, बाबल थो दान कर्यो, पति नै यो हाथ, हाथ मे दे।
पण, पिया जा बस्यो दूर देश, के करस्यू हाथ साथ मे ले।।
सासू ड्योढी पर खडी-खडी, मग जोती होसी आंख लगा।
मेरी मरवण घर री राणी, तू वेगी आज्या पांख लगा।।

(14)

जा हाथ, सास रै घर तू जा, कह खड्ग चलाई एक वार।
नान्हो सो गोरो हाथ दूर जा पड्यो, खून री वही धार॥
पुणि लाल लाल आंख्या फेरी, सेवक नै बोली, 'चला खड्ग।'
दे काट हाथ दूजो मेरो, मत देर करै, क्यू खड्यो दग॥

(15)

वह झटपट सीधो कर्यो हाथ, पण सेवक नटग्यो नवा माथ।
पुणि गरजी, 'सेवक काट हाथ', वस खड्ग उठी, झट गयो हाथ॥
दगदग् करती छूट पड़ी, लोही री तुर्री लाल लाल।
यो हाथ भेजद्यो बापू नै, कहज्यो बाई री ल्यो सम्हाल॥

(16)

फिर कट्यै शीश कानी देख्यो, चूंदड़ी मे ढकली बरमाला।
धक-धक लपटा मे धधक उठी, भारत री बेटी रण बाला॥

अध्याय–नौ

राव केलण
सन् 1414-1430 ई

सन् 1414 ई में राव रणकदेव की मृत्यु के पश्चात् राव चून्डा ने पूगल के गढ पर अधिकार कर लिया, लेकिन किन्ही कारणो मे उन्होने पूगल मे अपनी सेना नही छोडी और न ही वहां नागौर का थाना बिठाया, वह जैसे आए थे वैसे ही पूगल से चले गए। उन्होने राव रणकदेव की विधवा सोढ़ी राणी को यथावत गढ मे रहने दिया। उनके जीवन की यह सबसे बडी भूल, चार साल बाद मे उनकी मृत्यु का मुख्य कारण बनी।

राव रणकदेव के बचे हुए एक मात्र पुत्र तणु और प्रधान मेहराव हमीरोत भाटी दोनो अशान्त रहते थे और उन्हे हरदम राव रणकदेव और राजकुमार शार्दूल की मृत्यु का राव चून्डा से बदला लेने की लगन रहती थी। सोढ़ी राणी भी उन्हे इस कार्य के लिए कोसती रहती थी और उन्ह इसकी पूर्ति के लिए उकसाती। कुमार तणु मूलत अयोग्य थे, इसलिए राणी ने इन्हे तब तक राजगद्दी पर बैठने की स्वीकृति नही दी, जब तक वह अपने भाई और पिता की मृत्यु का बदला नही ले लें। इन दोनों ने अपनी सैन्य शक्ति और नेतृत्व व साधनो का आकलन किया और इस निष्कर्ष पर पहुचे कि वह अकेले अपने उद्देश्य की पूर्ति मे सफल नही हो सकते थ। अगर वह ऐसा करने का प्रयास करते तो उनकी दशा भी वही होती जो पहले भाई और फिर पिता की हो चुकी थी। राव चून्डा से बदला लेना उनके लिए कठिन कार्य था। इसके लिए कुमार तणु ने बीकमपुर मे रह रहे अनुभवी केलण से कोई विचार-विमर्श नही किया और न ही जैसलमेर जा कर रावल लक्ष्मण से सहायता लेने की पेशकश की।

सोढी राणी चाहती थी कि किसी प्रकार तणु और हमीरोत अपने कार्य मे विफल रह, ताकि वह राव रणकदेव की इच्छा के अनुसार केलण को गोद लेकर राव बना सके। इन दोनो ने मुलतान जा कर वहा के शासक मे सहायता देने के लिए याचना करना उचित समझा, इसलिए दोनो वहा गये। वह काफी दिनो तक वहां रुके रहे और शासक से सहायता उपलब्ध कराने के लिए आग्रह करते रहे। वहा के शासक दिल्ली के सुलतान खिजर खां सैयद के अधीन थे। सुलतान सैयद केलण के मित्र थे। इस कार्य के लिए अगर तणु केलण को साथ लेकर जाते तब बात और होती। अकेले तणु को मुलतान मे कोई खास मान्यता नही मिली। वहा के शासक ने सारी समस्या पर ध्यान से विचार किया। मुलतान से नागौर सैंकडा मील दूर था, बीच मे पडने वाले रेगिस्तान को लाघ कर वहा जाना उनकी सेना के लिए कठिन कार्य था। मार्ग मे सेना के लिए रसद, दाणे, घास, पानी की अर्थाभाव मे व्यवस्था करना तणु के लिए सम्भव नही था। उन्हे राव चून्डा की सैन्य शक्ति का पूरा

अन्दाजा भी नही था। इसलिए मुलतान अपनी सेना को ऐसे कार्य मे नही धकेलना चाहता था जिसके परिणाम शीघ्र प्राप्त होने के आसार नहीं थे और शायद परिणाम उलटे भी पड सकते थे। इसके अलावा सेना के लिए पर्याप्त खर्चे का प्रबन्ध करने में भी तणु समर्थ नही थे। इन सभी समस्याओं का विश्लेषण करके उन्होने सहायता देने मे तणु को अपनी असमर्थता बताई।

कुमार तणु और हमीरोत इतने दिनो बाद म खाली हाथ पूगल लौटने लायक भी नही रहे। मुलतान से खाली लौटने पर वह जैसलमेर या केलण के पास सहायतार्थ या विचार विमर्श करने के लिए कैसे जाते? केलण एक बहुत घाघ और चालाक व्यक्ति थे। कोई बडी बात नही थी कि उन्होंने बीकमपुर से मुलतान सदेशा भेज दिया हो कि इन्हे सहायता के लिए मना कर देना। मुलतान के शासक अब्दुर रहीम ने केलण की मित्रता का मान रखते हुए उन्हे खाली हाथ लौटा दिया हो।

जहा तणु और हमीरोत म योग्यता की कमी थी, वहा वह अपने निश्चय के पक्के थे। जब वह अब्दुर रहीम को सहायता देने के लिए किसी प्रकार से राजी नही कर सके तब उन्होंने सब कुछ दाव पर लगाने के लिए आखिरी हथियार काम में लिया। उन्होंने अपना धर्म परिवर्तन करके इस्लाम धर्म स्वीकार किया और दोनो मुसलमान बन गए। उनका विचार था कि ऐसा करने से अब्दुर रहमान अवश्य पसीजेगा। उन्होने बेकार मे अपनी जात गवाई, उन्हें कोई सहायता नही मिली। सहायता नही मिलने के जहां सामरिक, भौगोलिक और आर्थिक कारण तो थे ही, केलण के सदेश वाला कारण शायद सबसे बडा हो। यह भी सम्भव था कि अब्दुर रहीम ने बहाना बना लिया हो कि इतने बडे सैनिक अभियान के लिए सुलतान सैयद की स्वीकृति आवश्यक थी या यह कि नागौर दिल्ली से पास था, उनके लिए वही से सहायता लेनी उचित रहेगी। वस्तुत तणु के भाई या पिता की मृत्यु का बदला दिलवाने की मुलतान को क्या पीडा थी? मुसलमान शासक समझदार थे, अगर एक राजपूत इस तरह स्वार्थ साधने के लिए अपना धर्म भी दाव पर लगा सकता था तो उसका विश्वास कैसा, उसकी साख कैसी? सुलतान खिजर खा के समय धार्मिक सहिष्णुता थी, कट्टरवाद नहीं था। वह स्वय सैयद थे, अन्य धर्मों के प्रति श्रद्धा रखते थ। इसलिए तणु और हमीरोत का मुसलमान बनना मुलतान के शासक के ऊपर कोई एहसान नहीं था, यह उनकी दुर्बलता का द्योतक था। कारण जो भी हो, तणु और हमीरोत को मुलतान से सहायता नहीं मिल सकी, वह मुसलमान बनकर पूगल लौट आए।

इस प्रकार मुल्तान से उनके खाली हाथ मुसलमान बनकर लौटने से सोढी राणी अत्यन्त क्रोधित हुई और उनकी मूर्खता पर वह मन ही मन हसी भी। राणी ने उन्हें राजगद्दी पर बैठाने से साफ मना कर दिया। गजनी के तख्त को इतनी कठिनाई और बलिदान से भाटियो की पीढ़ियों ने हजारा साल तक इस दिन के लिए सुरक्षित नहीं रखा था कि एक अयोग्य मुसलमान इस तख्त पर बैठे। राव रणकदेव की इच्छानुसार सोढ़ी राणी ने 'पेराणा' को आवश्यक सदेश और आदेश देकर, केलण को बीकमपुर से बुलाकर लाने के लिए भेजा। केलण और राव रणकदेव एक ही भाटी राजवश के थे, दोनो ही रावल चाचगदेव के यशस्वी वशज थे। पेराणे ने बीकमपुर में प्रवेश करते ही पहले उनके पूर्वजो का यशोगान किया,

केलण ने श्रद्धा से उसकी आवभगत की, नेग दस्तूर भेंट किया और उसके आने का तात्पर्य बताने के लिए आग्रह किया। पेमणा ने सोढी राणी का संदेश उन्हें दिया, सारे समाचार बताए और पूगल की समस्या से उन्हें अवगत कराया।

केलण राव रणकदेव के अहसानो से अभिभूत थे, उनकी कृपा से ही पिछले अठारह वर्षों से वह बीकमपुर में ठाटबाट से रह रहे थे। उनके प्रति राव का स्नेहपूर्ण व्यवहार था, जिसके कारण उन्हें कभी किसी प्रकार का अभाव नहीं रहा। उन्हें तणु और हमीरोत की असफलता और मूर्खता का पहले से ज्ञान था। उन्होंने सोचा कि गजनी के तख्त पर एक ऐसे अयोग्य और मूर्ख के बैठने के बाद उनका बीकमपुर में रहना सम्भव नही होगा, और राणी के बुलावे पर अगर अब वह पूगल नही गए तब कसूर उनका होगा, न कि राणी का। गजनी का तख्त उनकी अपनी पैतृक धरोहर थी, वह किसी व्यक्ति विशेष की सम्पदा नही थी। उस पर भागी होने के नाते उनका अधिकार था और उसके प्रति उनका कुछ कर्तव्य भी था। इस निमन्त्रण को देखते हुए यह कोई नही कहेगा कि वह पूगल की गद्दी पर धक्के से बैठ गए या उन्होने स्थिति का अनुचित लाभ उठाया। बुद्धिमान और जागरुक व्यक्ति होते हुए उन्होंने इस आकस्मिक आई ईश्वरीय देन को ठुकराना उचित नही समझा। वह अपने साथ कुछ विश्वासपात्र आदमियो और सैनिकों को लेकर पूगल के लिए चल पड़े।

उनके पूगल पहुचने पर भाटी प्रधानो और जनता ने वहां उनका समारोह मे स्वागत किया। उन्हें बुलाने के लिए पेमणे को भेजे जाने की सूचना सब को पहले से थी। उन्हे पूगल गढ़ के द्वार पर गाजे बाजे के साथ तिलक करके अन्दर लिया गया। जनता मे उत्साह था कि राव रणकदेव के स्थान पर उनके नये अभिभावक ने पूगल म पदार्पण किया। उन्हें उनके विषय म पूर्ण ज्ञान था और विश्वास था कि यह पुरुष पूगल को डूबने से बचायेंगे। सोढी राणी ने उनका पुत्रवत स्वागत किया और उन्हें गोद लेने की अपनी इच्छा से अवगत कराया। वह उन्हें पूगल के राव रणकदेव की राजगद्दी देना चाहती थी। उन्होने उन्ह समझाया कि जैसलमेर मे पहले भी ऐसा हो चुका था। विधवा राणी विमलादेवी ने रावल घडसी की मृत्यु के पश्चात् उनके (केलण के) पिता केहर का गोद लेकर रावल बनाया था। इसी प्रकार पूगल की राजगद्दी पर उनका सीधा अधिकार नही बनता था किन्तु समय की माग को उन्हे पूरा करना होगा। केलण ने श्रद्धा से राणी के पाव छुए और आश्वस्त हुए। राणी ने उन्हे आशीर्वाद देकर उनसे दो वचन मागे।

वह उनके पुत्र कुमार तणु और प्रधान मेहराव हमीरोत के भरण पोषण का उचित प्रबन्ध करेंगे और उनके राज पद की गरिमा का ध्यान रखते हुए उन्हें सम्मानित जागीरें आदि देकर स्थापित करेंगे। दूसरा, राव रणकदेव और राजकुमार शार्दूल की मृत्यु का बदला उन्हे अपने जीवनकाल मे राव चूडा से लेना होगा। कुमार शार्दूल की मृत्यु का बदला लने के प्रयास मे राव रणकदेव ने प्राण त्यागे थे और बदला लेने मे असफल रहने के कारण तणु को राजगद्दी से वचित रहना पड रहा था। केलण ने पहले वचन को शीघ्र पूरा करने का आश्वासन दिया और दूसरे वचन की पूर्ति के लिए नगी तलवार निकाल कर उन्होने शपथ खाई कि प्राण रहते हुए वह यह काम स्वय पूर्ण करेंगे। दूसरे प्रण को अन्यो से गुप्त रखा गया।

इसके बाद मे प्रमुखो और प्रधानो की सहमति से केलण को गजनी के तख्त पर पूगल की राजगद्दी पर बैठाया गया। इसी तरत पर बैठकर कभी इनके पूर्वज रावल चाचगदेव जैसलमेर के रावल बने थे। विधिपूर्वक राजतिलक करके केलण को पूगल का नया राव घोषित किया गया। प्रमुखो और प्रधानो ने उन्हे नजरें मेंट की और उनके प्रति निष्ठा, ईमानदारी और स्वामिभक्ति की शपथ ली। ढोलियो, गायको और चारणों ने परम्परागत गीत, यशगाथा और विरुदावली गाई। वहा कई दिनो तक उत्सव मनाया जाता रहा, सभी प्रजागण, भाटी और अन्य राजपूत इसमे भाग लेते रहे। अब राव केलण पूगल के राव थे और उसका सारा क्षेत्र उनके अधिकार और नियन्त्रण मे था।

कुछ इतिहासकारो ने लाछन लगाया है कि सोढी राणी ने केलण को पूगल बुलाकर उनसे विवाह करने का प्रस्ताव रखा था जिसे केलण ने राज्य मिलने के लालच मे तत्काल मान लिया। लेकिन एक बार गद्दी पर बैठने के बाद मे उन्होने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया और उन्हे माता का सम्मान दिया। या वह कहते हैं कि उन्होने उसे दीवार मे जिन्दा चिनवा कर सौगन्ध खाई कि उनके वश की भविष्य मे कभी भी सोढा राजपूतो के यहा शादी नही होगी। यह लाछन गलत था क्योकि इसके बाद म भी पूगल के अनेक भाटियो की शादिया सोढो मे हुई थी। यह लाछन उन्होने इसलिए लगाया क्योकि राव केलण को दादी, राणी विमलादेवी, रावल मल्लीनाथ राठौड की बुआ थी और सिरोही के देवडा की मगेतर थी जिससे रावल घडसी ने विवाह किया था। सन् 1414 ई मे सोढी राणी की आयु पचास साल से ऊपर थी और राव केलण की आयु 56 वर्ष की थी। इसलिए शारीरिक सुख की अभिलाषा उन्हे नहीं होनी चाहिए थी। दूसरे, राव रणकदेव और राव केलण एक ही भाटी वश के थे, इस प्रकार के वैवाहिक सम्बन्ध को समाज कभी होने नही देता और ऐसा करने से राव केलण के लिए भाटियो का सम्मान नही रहता और वह उन्हे गद्दी से उतार देते। उन्हे भाटियो ने एकमत होकर राव इसलिए स्वीकार नहीं किया था कि वह उन्ही के दिवगत राव की राणी से सहवास करें। इसलिए इन इतिहासकारो ने व्यर्थ मे अपनी शक्ति और समय गवाया। ईर्ष्या की भी गरिमा होनी चाहिए, युग पुरुषो को इस प्रकार बदनाम करना शोभा नही देता।

राव केलण (सन् 1414-1430 ई) के समकालीन शासक निम्न थे—

जैसलमेर	राठौड (मडोर-नागौर)	दिल्ली
1 रावल लक्ष्मण सन् 1396 1427 ई	1 राव चून्डा सन् 1418 ई तक।	1 सैयद खिजर खा, सन् 1414-1421
2 रावल बरसी, सन् 1427-1448 ई	2 राव कान्हा और मालन, सन् 1418-27 ई	2 मुबारक शाह, सन् 1421-34 ई
	3 राव रिडमल, सन् 1427-1438 ई	

अभी जोधपुर और बीकानेर राज्य स्थापित नही हुए थे। राठौड, नागौर, मन्डोर और मालाणी मे छोटे छोटे राज्यो के शासक थे। रावल केहर के बारह पुत्र और तीन

पुत्रिया थी

1. केलण 2 सातल 3 लक्ष्मण (रावल बने) 4 गांग 5 कलकरण 6 रावतसी 7. गोयन्दा 8. ईसर 9 माहाजाल 10 तेजसिंह 11 परवत 12 तणु। कुमारी राजकुंवर का विवाह मेवाड के राणा लाखा (सन् 1382-1421 ई) के साथ, कुमारी कल्याण कुंवर का विवाह मेहवा के रावल मल्लीनाथ राठौड के पुत्र जगमाल मालावत के साथ और एक पुत्री का विवाह मोहिल राव माणकराव के साथ हुआ, यह कोडमदे की सौतेली माता थी।

राव केलण के छोटे भाई सोम और उनके पुत्र सहसमल बीकमपुर के पास गिराजी आदि गांवो से अपनी गायें लेकर देरावर क्षेत्र म चराने गए हुए थे और कई दिनो से उसी घास बाहुल्य क्षेत्र मे निवास कर रहे थे। एक बार सतलज नदी के पश्चिम से आए हुए मुसलमान लुटेरो ने उनकी बहुत सी गायें चरवाहो से छीन ली और हाककर अपने साथ ले जाने लगे। सोम ने इस डाके का समाचार मिलते ही डाकुओ का पीछा करके गायो को उनस छुडवाया, परन्तु डाकुओ के साथ हुए सघर्ष मे सोम मारे गए। राव केलण अपने भाई के मारे जाने का सुनकर बहुत क्षुब्ध हुए और उनका शोक मनाने क लिए वह देरावर गए।

नैनसी के अनुसार सहसमल को शक हो गया कि अगर राव केलण देरावर के किले मे प्रवेश कर गए तब वह किले पर अधिकार कर लेंगे, इसलिए उसने उन्हे किले म प्रवेश करने से रोका। उसका विचार था कि अगर राव केलण अपन आदमियो सहित एक बार किले मे आ गए तब वापिस बाहर नही जायेंगे। उनका विचार हो कि इसी प्रकार राव केलण ने एक बार पूगल के गढ म प्रवेश पाने के बाद मे उसे खाली करने से मना कर दिया था, और सोढी राणी को विवश करके उनके गोद आए और राव बन गए। यह केवल सहसमल की मानसिक स्थिति थी जिससे वह अनेक भावी सम्भावनाओ के बारे म सोच रहे हो। नैनसी ने यह नही बताया कि सोम भाटी ने वहा के दहियो को कब परास्त करके देरावर के किले पर अधिकार किया था ? वह तो वहा गायें चराने गए हुए थे।

नैनसी के अनुसार राव केलण द्वारा बार-बार आग्रह करने पर और झूठी सौगन्धें खाने पर सहसमल ने उन्हें किले म आने दिया। राव केलण वहा कई दिन रुके रहे और उन्होने वापिस पूगल जाने का नाम तक नही लिया। राव केलण के समक्ष मे इस किले की सामरिक स्थिति और उपयोगिता आ गई थी। उन्होने सोचा कि इतना महत्वपूर्ण किला अगर उन्ह सघर्ष किए बिना उपहार की तरह मिल गया था, इसलिए अब इसे खाली करना उनकी मूर्खता होगी। सहसमल ने उनसे बार-बार चले जाने के लिए निवेदन किया लेकिन राव केलण किले को खाली करने से साफ मुकर गए। आखिर सहसमल को ही हार मानकर किला खाली करना पडा, वह अपना सामान और परिवार लेकर सिन्ध प्रदेश की ओर चले गए। उनके साथ मे भादा पाहू का पुत्र रूपसी भी गया। राव केलण ने सोम के वशजो को गिराधी की जागीर बख्शी। नैनसी का यह कथन भी सत्य नही है, क्योकि केलण सोम को गिराजी की जागीर सन् 1397 ई मे पहले ही दे चुके थ। इस प्रकार नैनसी का राव केलण पर यह लाछन निराधार लगता है।

नथमल के अनुसार पूगल की गद्दी पर बैठने के कुछ समय पश्चात् राव केलण ने सन् 1415 ई मे देरावर पर आक्रमण किया। उन्होने भादा पाहू की सहायता से देरावर के

शासक अजा दहिया को परास्त किया। इस युद्ध में मादा पाहू का पुत्र रूपसी और सोम भाटी का पुत्र सहसमल मारे गए। इन दोनों भाटियों की छतरियां अभी भी देरावर में सुरक्षित खड़ी बताते हैं।

इस प्रकार से नैनसी के राव केलण पर लगाए गए आरोप निराधार हैं। इसमें इतनी सच्चाई अवश्य है कि गायों को छुड़ाते हुए देरावर क्षेत्र में सोम भाटी मारे गए थे और अपने भाई की मृत्यु पर राव केलण उनके पुत्र सहसमल के पास सात्वना देने गए।

पूगल में अपनी स्थिति सुदृढ करने के पश्चात् दहियों से देरावर पर अधिकार करने से राव केलण की स्थिति में कुछ सुधार हुआ। राजकुमार शार्दूल के मारे जाने के बाद में राव रणकदेव निष्क्रिय में हो गए थे। उनकी विवशता का लाभ उठाकर लगाओं और बलोचों ने मरोठ के किले पर अधिकार कर लिया था और बीकमपाल चौहान को यहां से मार भगाया था। अब राव केलण का ध्यान अपनी पश्चिमी सीमाओं की ओर गया, उन्होंने जान बूझ कर पूर्व में राठौड़ो या सांखलों की उपस्थिति की ओर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने अपने छोटे पुत्र रणमल को पूगल का प्रशासक बना कर पूगल की सुरक्षा का भार उन्हें सौंपा। फिर उन्होंने मरोठ के किले पर आक्रमण किया। बीकमपाल चौहान की सहायता से उन्होंने किले पर शीघ्र अधिकार कर लिया। अब मूमनवाहन, देरावर और मरोठ के किलों के अलावा सतलज नदी के पूर्वी किनारे तक का क्षेत्र राव केलण के अधिकार में था। मरोठ के क्षेत्र में उन्हीं के वंशज पाहू भाटी अधिक संख्या में निवास करते थे। राव केलण ने मरोठ में एक बड़े दरबार का आयोजन किया जिसमें उन्होंने पाहू भाटियों को विशेष प्रकार से बुलाया। सन् 1270-80 ई तक पाहू भाटी पूगल और इस क्षेत्र के शासक रह चुके थे। उन्होंने दरबार में घोषणा की, और आश्वासन दिया कि उनकी जान माल की सुरक्षा का दायित्व उनका था, वह पूरे क्षेत्र में न्याय और शान्ति की व्यवस्था करेंगे, जिसके लिए उन्होंने सभी जातियों का सहयोग मांगा। वह किसी को उसकी भूमि, गांव, जागीर और सम्पदा से बेदखल नहीं करेंगे। वह सभी रीति-रिवाजों, हक-हकूको, सनदों, ताम्रपत्रों आदि का सम्मान करेंगे। इन विश्वासों और आश्वासनों के बदले में पाहू भाटियों ने इन्हे अपना शासक स्वीकार किया और इनके प्रति निष्ठा, ईमानदारी और स्वामिभक्ति की शपथ ली।

मरोठ विजय से लौटते हुए राव केलण ने खारबारा, हापासर, मोटासर आदि गावों और इनके अधीन अन्य 140 गावों पर अधिकार किया। इस क्षेत्र के विजय से पूगल के राज्य की सीमाएँ भटनेर, मुलतान, जैसलमेर और नागौर के राज्यों की सीमा से लगने लगी।

इसके पश्चात् राव केलण ने नानकरोट और बीजनोत के भोमियों के गावों पर अधिकार करना आरम्भ किया। एक बार किलो के बाहरी क्षेत्र पर अधिकार होने से इन किलों के शासकों की स्थिति दयनीय हो गई और उन्होंने युद्ध किए बिना आत्मसमर्पण करके अपने किले राव केलण को सौंप दिए। राव केलण ने इन किलो म अपने थाने बिठाए। उन्होंने भोमियों और जागीरदारों की स्थिति यथावत रहने दी।

राव केलण के विचार में रक्षा का सर्वश्रेष्ठ तरीका शत्रु की सीमा में आक्रमण करना था। उन्होंने मूमनवाहन के पास सतलज नदी को पार किया और केहरोर के किले पर आक्रमण किया। कुछ प्रारम्भिक विरोध के बाद वहां के रक्षकों ने हथियार डाल दिए

और किला राव केलण को सौंप दिया। मूमनवाहन वर्तमान बहावलपुर नगर के स्थान पर था। अब यहा सतलज नदी पर आदम वाहन पुल बना हुआ है। केहरोर का किला सन् 731 ई. मे राव मझमराव के पुत्र कुमार केहर ने बनवाया था, यह बाद मे रावल केहर (प्रथम), 107 वें भाटी शासक मरोठ मे बने। सन् 1416 ई मे केहरोर संभाग मुलतान के अधीन पजाब प्रान्त मे था। यह मुलतान से 50 मील दक्षिण मे पुरानी व्यास नदी के पेटे मे एक ऊचे स्थान पर स्थित है। अब यह पाकिस्तान के पजाब प्रान्त के मुलतान जिले की लोदरान तहसील मे है। केहरोर का किला लगभग सात सौ वर्ष पहले का बना होने के कारण टूटा-फूटा था, राव केलण ने इसकी मरम्मत करवाई और सुरक्षा की दृष्टि से इसे सुदृढ बनवाया।

केहरोर विजय ने राव केलण की प्रतिष्ठा को बहुत ऊचा उठा दिया। अब वह मुलतान की देहरी पर थे और मुलतान उनके विरुद्ध अब सुरक्षित नहीं रहा। वह किसी वक्त मुलतान पर दबाव डाल सकते थे। इन विजय अभियानो के फलस्वरूप पश्चिम मे सतलज और व्यास नदियो के पश्चिमी किनारो तक राव केलण का अधिकार हो गया था, इधर पजनद और सिन्ध नदी के पूर्व तक इनका राज्य था।

कुछ लोगो को व्यास नदी के मुलतान और केहरोर के बीच मे होने से शका हो सकती है। वर्तमान मे व्यास नदी फिरोजपुर के पास हरिके मे सतलज नदी मे आकर मिलती है। चौदहवी, पन्द्रहवी शताब्दी मे ऐसा नहीं था। उस समय व्यास नदी, सतलज की सहायक नदी नही थी, यह चिनाब नदी मे जाकर मिलती थी। इस पुरानी नदी का बहाव क्षेत्र अभी भी स्थित है और स्वतन्त्रता के पहले के मानचित्रो मे इस नदी का छूटा हुआ पुराना बहाव मार्ग दर्शाया गया है। उस समय व्यास नदी हरिके के उत्तर से होती हुई, फिरोजपुर और कसूर के बीच मे से, लोदरान नगर के उत्तर मे चिनाब नदी मे मिलती थी। इस प्रकार पुरानी व्यास नदी रावी और सतलज नदियो के बीच के दोआब मे होती हुई, आगे जाकर चिनाब नदी मे मिलती थी।

इधर राव केलण पश्चिम के अपने विजय के अभियानो में व्यस्त थे, उधर तणु और हमीरोत पूगल मे दुबके हुए बैठे थे। उन्हें ईर्ष्या थी कि अगर वह आज राव होते तो इन सारी विजयो का श्रेय उन्हें मिलता और यह सारा क्षेत्र उनका कहलाता। उनको स्वयं की मूर्खता, अयोग्यता, कमजोरी और मुसलमान बनने की कार्यवाही का ख्याल न होकर, राव केलण की उपलब्धियो से ईर्ष्या थी, उनकी चिन्ता थी। कहते हैं कि राव केलण की कीर्ति को वह सह नही सके और मायूसी मे पूगल छोडकर मटनेर चले गए। तणु का नाम कहीं-कहीं 'तीराडा' भी लिखा गया है। मटनेर जा कर वह अबोहरिया भाटी मुसलमानो से मिले और वहां रहने लगे। तीराडा (तणु) के पुत्र मूमन के वशज मूमानी भाटी मुसलमान हुए और मेहराव हमीरोत के वशज हमीरोत भाटी मुसलमान हुए। यह तणु और मेहराव के अपने आप मटनेर चले जाने वाली घटना सही नही है।

राव केलण अपनी पश्चिमी सीमाओं को सुरक्षित करके वापिस पूगल आये। इन पिछले तीन वर्षों में इन्होंने अपने राज्य की सीमाओं का काफी विस्तार किया था और अनेक नए किलों पर अधिकार किया। इससे इनके साधनो मे सुधार हुआ, आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हुई

और सैन्य शक्ति बढ़ी। फिर भी राव चून्डा से बदला लेने में इन्होंने जल्दबाजी नही की। उन्होंने पूगल आकर सारी स्थिति का आकलन किया, उनके विजय अभियानों के कारण तणु और मेहराव अपने आपको सुरक्षित नही समझ रहे थे। उन्हें भय था कि इनकी अयोग्यता और धर्म परिवर्तन की घटना से नाराज हो कर भाटी सरदार कहीं उन्हें मार न दें। राव केलण उनकी दुविधा भाप गये। उन्हें भी लगा कि जैसे उनका आसिणकोट में रहना उचित नहीं था वैसे ही तणु का अब पूगल मे रहना उचित नही था। फिर उसकी माता भी जीवित थीं। इसलिए सन् 1417 ई मे उन्होंने तणु और मेहराव को साथ लेकर भटनेर पर आक्रमण किया। भटनेर पर सन् 1398 ई के तैमूर के आक्रमण के बाद मे शासन की सुव्यवस्था नही रही, वहां की सुरक्षा और प्रशासन मे दिल्ली या पजाब के शासकों की कोई रुचि नही होने से वहा की व्यवस्था स्थानीय लोगों के हाथ मे थी। राव केलण का कोई खास विरोध नही हुआ, भटनेर के किले पर उनका आसानी से अधिकार हो गया। राय दुलीचन्द के वशजो, अन्य स्थानीय भाटियों और हिन्दुओं से उन्हें भरपूर सहयोग मिला। वह अभी बीस साल पहले हुए तैमूर के अत्याचार और रक्तपात को नही भूले थे। भटनेर के साथ ही हिसार और सिरसा का क्षेत्र भी राव केलण के प्रभाव मे आ गया।

राव केलण ने तणु को भटनेर मे स्थापित करके उसकी सुरक्षा का प्रबन्ध किया और अर्थव्यवस्था आदि के अन्य साधन जुटाए। मेहराव हमीरोत को भी अच्छी जागीर बख्शी। कुछ दिन पश्चात् राव केलण पूगल लौट आए। उनके आने के बाद तणु और मेहराव ने वही किया जिसके वह योग्य थे। उन्होंने अपने राज्य और जागीर के प्रबन्ध की अवहेलना की, वहां कुशासन रहा और जनता पर अन्याय बढा। जनता के असतोष से परेशान हो कर वह उत्तर मे अबोहर जाकर रहने लगे। उन्हें चाहिए था कि वह अपनी कठिनाई पूगल आकर राव केलण को बताते और उनसे उसके समाधान हेतु सहायता देने के लिए कहते। अबोहर जा कर वह अबोहरिया भाटी मुसलमानो मे मिल गए। समय के साथ वह उन्ही मे लोप हो गए और उनमे उनका विलय हो गया। आज वह ऐतिहासिक अनाथ कहा गये, किसी को खबर नही। इस प्रकार राव रणकदेव के वंश का कुछ ही वर्षों मे नामोनिशान मिट गया।

राव केलण के पश्चिम से लौटने के बाद मे उनके मन में राव चून्डा से बदला लेने की योजना थी। लेकिन उन्होने सोचा कि राव चून्डा शक्तिशाली विरोधी थे, उनके साथ युद्ध का परिणाम उनकी पराजय या मृत्यु भी हो सकती थी। ऐसी स्थिति में सोढी राणी को दिए गए उनके दानो वचनों मे से एक की भी पालना नही होगी। इसलिए उन्होने पहले वचन की आसान पूर्ति हेतु भटनेर विजय करके वहा तणु और मेहराव को स्थापित किया। अब केवल राव चून्डा से बदला लेने के वचन को पूरा करना बाकी रहा।

जिस समय राव केलण पूगल आए, लगभग उसी समय सन् 1414 ई मे, सैयद खिजर खा लगातार युद्धो मे जीतते हुए तुगलक वश को समाप्त करके दिल्ली के सुलतान बने। राव केलण पहले से ही सुलतान के मित्र और विश्वासपात्र थे। उनके सुलतान बनते ही जौनपुर, गुजरात और मालवा के शासको ने अपने आप को स्वतन्त्र घोषित किया और वह आपस मे लडने लगे। मेवात ने उन्हे कर चुकाना बन्द कर दिया। मुलतान और लाहौर के क्षेत्र मे खोखरो ने लूटपाट करके तहलका मचा रखा था। उन्हे सन् 1414 ई मे हरिसिंह

के विरुद्ध दोआब मे सेना भेजनी पडी, सन् 1416 ई मे बयाना और ग्वालियर के विरुद्ध और सन् 1418 ई मे कटिहार सेना भेजनी पडी।

उनकी इन समस्याओ का लाभ राव केलण ने उठाया। मुलतान, पजाब मे खोखरो से उलझा होने के कारण पूर्व के रेगिस्तानी क्षेत्र की ओर पर्याप्त ध्यान नही दे सका। उसे यह भय भी था कि अगर खोखर और भाटी मिल गये तो वहा का शक्ति सतुलन मुलतान के विरुद्ध हो जाने से उसकी कठिनाइया बढेंगी। वह राव केलण की योग्यता और कुशल नेतृत्व प्रदान करने की क्षमता को जानते थे। इसलिए मुलतान के शासक अब्दुर रहीम राव केलण से उलझे नही। उन्हे रेगिस्तान से कोई कर प्राप्ति थी नही, इसलिए उन्होने राव केलण को बर्दाश्त किया। राव केलण की सैयद खिजर खा से मित्रता भी उनकी सहायक रही। जब राव केलण ने भटनेर के किले पर अधिकार करके हिसार और सिरसा मे अपना प्रभाव बढाया तब भी सुलतान ने कुछ नही किया क्योकि मेवात मे उनकी स्थिति खराब थी, और मेवो के साथ राव केलण के सहयोग की स्थिति बनने से दिल्ली भी सुरक्षित नही रहती। राव केलण उनके मित्र थे और वह वचन के पक्के थे, इसलिए उन्होने सोचा कि इनकी चिन्ता उन्हे नही करनी चाहिए। उन्होने पहले खोखरो और मेवो से निपटने की सोची। वह अपने जीवनकाल (मृत्यु सन् 1421 ई) मे यह कार्य पूर्ण नही कर सके। खिजर खा मे सैयदो के सस्कार होने से उन्होने सोचा कि अगर राव केलण अपने पूर्वजो के क्षेत्र पर पुन अधिकार कर रहे थे तो उन्हें करने दो, आखिर वह ऐसा करके खोखरो और मेवो के विरुद्ध उन्ही की लडाई लड रहे थे। राव केलण एक चतुर व्यक्ति थे, वह सुलतान को आश्वासन भेज कर आश्वस्त करते रहते थे कि उनसे सुलतान को आशकित होने की कोई आवश्यकता नही थी, वह उनकी सत्ता को चुनौती नही दे रहे थे।

अब राव केलण का राज्य पश्चिम में सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के पार था, उत्तर मे भटनेर, भटिंडा, अबोहर, हिसार, सिरसा तक, पूर्व में नागौर और दक्षिण मे जैसलमेर की सीमा तक था। उनके अधिकार मे मरोठ, देरावर, मूमनवाहन, केहरोर, बीजनोत, नानवकोट, भटनेर के किले थे। उस समय इतना विस्तृत राज्य जैसलमेर का भी नहीं था, लेकिन उन्होने रावल लक्ष्मण को कोई तकलीफ नहीं दी। उन्होंने साखलो की ओर थोडा ध्यान दिया, उन्होने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली, इसलिए राव केलण ने उनका राज्य (जागलू) नही छीना।

राव केलण ने भी राव रणकदेव की नीति का अनुसरण किया। वह वीर थे और निश्चय के पक्के थे, वचनबद्धता उनका गुण था, अथक परिश्रमी और घाघ थे, सतर्क और अवसरवादी थे, बुद्धिमान और अपनी बात को मनाकर रहने वाले थे। उन्ह समयानुसार और अवसर के अनुसार पैंतरा बदलने मे कोई झिझक नहीं थी। उन्हें प्रजा का अपूर्व सहयोग मिलता रहा, जिसका लाभ उन्होंने राज्य की नीव मजबूत करने में और राज्य विस्तार करने मे उठाया। जाइयों और सासलो की आपसी शत्रुता समाप्त करवा करके दोनों को अपने पक्ष मे किया। उनमे गरिमा और सुसस्कृत होने में कोई कमी नही थी, वह मानवीय विफलताओ को ध्यान म रखते हुए भूलो की अनदेखी करते थे। जहां उनमे प्रशासनिक और सामरिक योग्यता थी, वहां शत्रु को भी सरलता से मित्र बना लेते थे। उन्होंने बिखरे हुए

राज्य को सजोया, सगठित किया। भोमतो, जागीरदारो, व्यवसायियों के अधिकार यथावत रख। पीढियो से चले आ रहे रीति रिवाजो और अधिकारो को मान्यता दी। सुलतान सैयद खिजर खा से मित्रता बनाये रखी और उनका विश्वास कभी नही खोया। सुलतान ने अपने एक फरमान में इन्हे 'पूगल के राव किलजो' के नाम से सम्बोधित किया था।

निरन्तर सफलताएँ मिलने के साथ राव केलण ने राव चून्डा से बदला लेने का अपना वचन बिसराया नही था। इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए वह अपनी शक्ति बढा रहे थे और आर्थिक स्थिति सुदृढ कर रहे थे। राव चून्डा का राज्य अशान्त था, वहा अराजकता फैल रही थी और न्याय व्यवस्था टूट चुकी थी। प्रजा मे भारी असन्तोष था। उन्होंने अपने भाई जयसिंह से फलोदी का परगना छीन कर उसे विद्रोही बना दिया, ज्येष्ठ पुत्र रिडमल को राजगद्दी से वचित करने से वह रुष्ट हो कर मेवाड चले गए थे। राव केलण की पुत्री कोडमदे का विवाह रिडमल से हुआ था। रिडमल के स्थान पर कान्हा को राजगद्दी देने के निर्णय से राव चून्डा के अन्य पुत्र भी उनसे राजी नही थे। राव चून्डा के चौथे पुत्र रणधीर और दूसरे पुत्र सत्ता के पुत्र नरबद एक दूसरे के जानी दुश्मन बने हुए थे। कुमार अरडकमल की मृत्यु हो चुकी थी। इस पारिवारिक असन्तोष के कारण राव चून्डा दुखी रहते थे। युद्धो की थकान और बढती आयु के कारण वह राज्य पर नियन्त्रण खो रहे थे और उन्हे अपने प्रमुख जागीरदारो का पूर्ण सहयोग नही मिल रहा था। यह सारे कारण राव केलण के सहायक थे। इससे पहले राव चून्डा द्वारा एक के बाद एक किले विजय किये जाने के अभियान से सुलतान खिजर खा आशकित हो रहे थे, उनके आपसी तालमेल के अभाव का लाभ राव केलण उठा रहे थे। वह राव चून्डा के विषय मे भ्रम पैदा करने वाले समाचार बढा-चढा कर दिल्ली दरबार मे भेजते रहते थे। इससे राव चून्डा के विषय मे और अधिक सूचना प्राप्त करने के लिए सुलतान की उत्सुकता बढती रहती थी, जिसकी पूर्ति राव केलण के आदमी करते थे और यह सूचनाएँ आग मे घी का काम करती थी। इससे सुलतान, राव चून्डा के शत्रु बनते गए। वह अपने साम्राज्य मे उलझे हुए थे, इसलिए वह राव चून्डा को दण्ड देने के लिए पर्याप्त सेना नही जुटा पा रहे थे।

राव केलण क राव चून्डा के विरुद्ध सहायता प्रस्ताव पर सुलतान खिजर खा ने मुलतान मे एक दरबार का आयोजन किया। इस दरबार मे जैसलमेर के रावल लक्ष्मण के अलावा भाटियो, जोइयो, साखलो और पडोस के शासको को आने के लिए कहा गया। राव केलण ने राव चून्डा पर आक्रमण करने की योजना पेश की। सुलतान ने इसके लिए तुरन्त सहमति दे दी और राव केलण के सुझाव पर उन्होने मुलतान के सूबेदार नबाब सलीमा खा को आदेश दिया कि वह इस कार्य के लिए पर्याप्त सेना भेजें।

राव केलण ने जैतुग और पाहू भाटियो मे गुप्त तैयारी करने के लिए कहा। चौहान, पडिहार, साखलो, जोइयों से उन्होंने सहायता मागी। स्थानीय मुसलमानों से भी तैयार हो कर सेना के साथ चलने के लिए कहा। यह जरूरी था, इससे मुलतान की सेना पर अनुकूल प्रभाव पडा। यह सारा सैन्य सगठन गुप्त रूप से किया गया, राव चून्डा को इसकी भनक तक नही लगी।

कुछ इतिहासकारो का मत है कि राव केलण ने अपने भाटी परिवार की एक कन्या का

विवाह राव चूण्डा से करने के लिए प्रस्ताव उन्हे भेजा, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। फिर उन्होने सन्देशा भेजा कि क्योंकि उनके राजकुमार रिडमल का विवाह उनकी पुत्री से हुआ था और वह उनके वरिष्ठ सम्बन्धी थे, इसलिए उन्हें विवाह करने के लिए पूगल बारात लेकर आना शोभा नही देगा। वह स्वय शुभ मुहूर्त में कन्या का डोला लेकर नागौर आएगे और वहीं विवाह कर देंगे। उन्होने आग्रह किया कि इस रिश्ते के बाद मे भाटियो और राठौडो की आपस की शत्रुता समाप्त हो जानी चाहिए, कोई किसी से पुराना बदला नही लेगा और न ही वह एक दूसरे के राज्यों पर आक्रमण करेंगे। इस प्रकार के प्रस्तावो और आश्वासनो से राव चूण्डा का राव केलण के प्रति विश्वास और मित्रता बढी। अगर किसी ने राव चून्डा को राव केलण की सैन्य तैयारी के विषय मे कोई सूचना दी भी तो वह यह सोच-कर सतोष कर लेते थे कि यह तैयारी उनके विरुद्ध थोडे ही हो रही थी। इससे पहले भी राव केलण इसी प्रकार की तैयारियां करके अपना उद्देश्य पूर्ण करते आए थे। और अब तो भाटी और राठौड़ पुरानी शत्रुता भुलाने मे लगे हुए थे, उनके बीच युद्ध का प्रश्न ही नहीं उठता था। इस प्रकार राव चून्डा गुमराह होकर मन ही मन आश्वस्त होते रहे।

राव केलण ने मुलतान के सैनिक अधिकारियो से मिलकर एक बडी सेना को वहा से कूच कराया। वह पूगल मे बैठकर सारे सैनिक अभियान का सचालन कर रहे थे। देवराज साखले ने जागलू मे सेना एकत्रित की। जैसलमेर से कुमार चाचगदेव के नेतृत्व में एक हजार घुडसवार आए। पूगल और जागलू क्षेत्र के स्थानीय मुसलमानो को सेना मे आने के लिए उत्साहित किया गया। मुलतान की सेना ने नबाव सलीमा खा के नेतृत्व मे पजनद नदी को पार करके मरोठ मे पडाव डाला। राजकुमार चाचगदेव भी मुलतान की सेना के साथ मरोठ मे आकर मिल गये। इसी प्रकार जैलूग, पाहू, पडिहार, जोइया आदि भी मुलतान की सेना के साथ मरोठ से हो लिए। राव केलण की बडी चाल थी जिससे राव चून्डा को भ्रम मे रखा जा सके। राव केलण स्वय कोई सेना एकत्र नही कर रहे थे, पूगल मे सेना की कोई हलचल नही थी। आक्रमणकारी सेना के कैम्प जागलू तक फैले हुए थे। जागलू के केशोलाव तालाब को सेना के लिए पानी से भरवाया गया, जगह-जगह कुओ और कुन्डों से सेना के पीने के लिए पानी का प्रबन्ध किया गया।

कुछ इतिहासकारो का मत है कि खिजर खा ने हिसार से भी सेना भिजवाई थी, क्योंकि ऐसा वर्णन आता है कि नागौर विजय करने के बाद मे सुलतान खिजर खा और हिसार के सूबेदार ववान खां साथ मे वापिस लौटे थे।

राव केलण पूगल मे रह कर आक्रमण की योजना बना रहे थे। दायी तरफ से मरोठ, पूगल, जागलू को और बायी तरफ से हिसार, चूरू, लाडणू को धुरी बनाया गया और मध्य में जांगलू को केन्द्र रखा गया। इस प्रकार मुलतान, हिसार और जागलू से आक्रमण की योजना बनाई गई, इन सेनाओं का नेतृत्व नबाब सलीमा खां, ववान खा और देवराज साखला ने सम्भाल रखा था। राव केलण ने सुलतान खिजर खा को समझाया कि राव चून्डा एक शक्तिशाली, चतुर और चालाक सेना नायक थे, उन पर विजय पाने के लिए योजनाबद्ध कार्यवाही आवश्यक थी। अगर उन्हें सेना सगठित करने का समय मिल गया तब वर्षों तक युद्ध का निर्णय नही हो सकेगा। जोरदार अचानक आक्रमण के लाभ को दर्शाते हुए उन्होंने

उन्हे यह भी समझाया कि राव चून्डा की पराजय से उनके भाई-भतीजे अपना सिर नही उठायेंगे, राठौड पडोसी राज्यो की सीमा में घुसकर उनसे छेड छाड नही करेंगे और दिल्ली के सुलतान का प्रभाव और संरक्षण एक इतने विस्तृत क्षेत्र पर हो जायेगा जो अभी तक उनकी पहुच से बाहर था और स्वतन्त्र राज्य था। उन्होने सुलतान को यह कह कर आश्वस्त किया कि पूगल तो पहले से ही उनकी अधीनता स्वीकार कर चुका था और आगे भी उनके यह सम्बन्ध यथावत रहेंगे। राव चून्डा इन सब गतिविधियो से अनभिज्ञ थे।

राव केलण ने पुरोहित को नागौर भेजकर विवाह की तिथि आदि की सूचना भेजी, साथ मे यह भी कहलवाया कि कन्या पक्ष के पचास रथ होंगे, जिनमे परिवार की स्त्रिया और दासिया होगी, कुछ अगरक्षक, सेवक आदि अलग से ऊटो और घोडो पर साथ होगे। इस सारे लवाजमे के ठहरने का प्रबन्ध नागौर के किले से थोडी दूर उचित स्थान पर करवा दें, ताकि परदानशीन स्त्रिया आराम से ठहर सकें। निश्चित तिथि को पचास रथो मे शस्त्रो से युक्त सैकडो भाटी सैनिक भेष बदल कर नागौर पहुच गये। साथ के अगरक्षक और सेवक भी कुशल सैनिक ही थे। अगले दिन राव केलण भी नागौर पहुच गये। कर्नल टाड और नथमल दोनो का विचार है कि राव केलण का सोढी राणी और सहसमल के साथ पूगल और देरावर मे किए गए व्यवहार को ध्यान मे रखते हुए, उनके लिए ऐसा छल-कपट करना कोई अनहोनी बात नही थी।

इधर से भाटियो, सांखलो और मुलतान की सेना ने निश्चित समय पर नागौर की सीमा पर आक्रमण की प्रक्रिया आरम्भ की। सीमा के कुछ थानों ने आत्मसमर्पण किया और कुछ नागौर की ओर पीछे हटते गये। राव चून्डा भी इस तीन तरफ से किए गए आक्रमण से अवाक् रह गए और किसी एक स्थान पर डट कर आमने सामने युद्ध करने की स्थिति उनके लिए नही बन रही थी। योजनाबद्ध तरीके से नागौर क्षेत्र पर आक्रमण का दबाव बना रहा। राव चून्डा की रक्षापंक्ति सिकुड रही थी। राठौडो ने अपनी शक्ति बिखेर कर स्थान-स्थान पर युद्ध करने से अच्छा यही समझा कि नागौर मे ही निर्णायक युद्ध लडा जाये। इससे राठौड सभी प्रकार से अच्छी स्थिति में होंगे और शत्रु सेना जितनी दूर आएगी उनकी कठिनाइया निरन्तर बढती रहेंगी। इधर नागौर मे बैठे भाटी सैनिक राव केलण से संकेत मिलने का इन्तजार कर रहे थे।

राव केलण ने राव चून्डा को दुलहा बनकर आने का न्योता दिया। साथ मे यह भी निवेदन किया कि वह विवाह के लिए पैदल चलकर आवें, इसमे भाटियो की शोभा होगी, क्योंकि भाटी पहले ही पूगल से नागौर तक बेटी का डोला देने आ गए थे। राव चून्डा को कहा मालूम था कि जो राव उनके मेहमान बने नागौर मे बैठे थे, वही सारे आक्रमण का संचालन कर रहे थे। ऐन वक्त पर राव चून्डा पैदल चलकर भाटियो के कैम्प मे आए, उनके साथ मे थोडे से साथी थे और कुछ सेवक और गाने बजाने वाले थे। राव चून्डा को भी विवाह से निपटने की जल्दी थी क्योंकि शत्रु नागौर की ओर अग्रसर हो रहे थे। उन्हे आशा थी कि इस विवाह के बाद मे राव केलण भी उनकी सहायता मे अवश्य जुट जायेंगे।

राव केलण ने उनकी अगवानी की, उचित सत्कार किया और परम्परागत नजर पेश की, वह उनकी बेटी के ससुर जो थे। इतने में सतर्क राव चून्डा को षड्यन्त्र का कुछ आभास

हुआ, वह पैदल ही किले की ओर भागे। राव केलण अवसर चूकने वाले कहा थे, उनका घोडा पहले से ही तैयार था, वह फुर्ती से उसकी पीठ पर लपके और इससे पहले कि राव चून्डा किले मे घुसते वह उनके सिर पर थे। उन्होंने राव चून्डा की बगल मे से खाली भाला निकाल कर ललकारा कि, 'सगाजी कभी यह मत कहना कि पीठ मे पीछे से भाला मार दिया।' वह चाहते तो पीठ मे भाला मारकर उन्हें मार सकते थे। किन्तु पीठ पीछे वार करना उनकी कायरता होती, इसीलिए उन्होने उन्हें ललकारा ताकि वह अपना मुख उनकी तरफ करें। ज्योही राव चून्डा ने पीछे मुड़कर देखा, त्योही राव केलण की लपलपाती अचूक तलवार बिजली की तरह उनकी गर्दन को उडाकर ले गई। ऐसे ही चार वर्ष पहले कुमार अरडकमल ने कुमार शार्दूल की क्षणिक चूक के समय उनकी गर्दन को उडाया था। राव चून्डा वैशाख बदी एकम, वि स 1476, सन् 1418 ई मे मारे गए थे। इस प्रकार कुमार शार्दूल और राव रणकदेव की मृत्यु का बदला लेकर राव केलण ने सोढी राणी को दिए हुए दूसरे वचन को भी पूरा किया। अब वह अपने वचनो से मुक्त हुए।

राव चून्डा की मृत्यु का सुनकर राठौडो ने किले के द्वार खोले और भाटियो पर पिल पडे। भाटी सैनिक ऐसे आक्रमण के लिए पहले से नागौर मे तैयार थे। राव चून्डा के साथ उनकी आठ राणिया सती हुई, भाटी कन्या इस सताप से बच गई। राव केलण के सकेत पर मुलतान और हिसार की सेनाएँ जहा थी वही रुक गई। अब उन्होने राठौडो से सम्पर्क किया और उन्हे समझाया कि राव चून्डा का वध तो उन्हे अपना प्रण पूरा करने के लिए करना ही था। वह इस समय पूरा हो गया, अच्छा हुआ, वरना भविष्य मे कही भी कभी भी यह काम तो उन्ह करना ही था। अब भाटिया की राठौडो से शत्रुता शेष नही थी। इसलिए वह क्यो लड रहे थे और किससे लड रहे थे ? उन्ह युद्ध समाप्त करके, भाटिया और राठौडो को एक हो जाना चाहिए। इसी प्रकार मोहिल, साखले और जोइये अब हमारे मित्र थे, शत्रु नही थ।

उन्होने राठौडो से आग्रह किया कि अब वह मिलकर मुसलमान सेना को नागौर पूगल और जागलू क्षेत्र से बाहर निकालें। अगर इनके पाव यहा नागौर मे जम गए तो भाटियो और राठौडा दोनो के हित मे नही होगा। अभी वह एक होकर इन्हें निकाल सकते थे, भविष्य मे न तो वह एक हागे और न ही वह इन्हे निकालने मे सफल होग। यह बात राठौडो के स्वार्थ की बात थी। अगर वह नही मानते तो राव केलण नागौर का किला सुलतान की सेना को सौंपकर चले जाते। फिर राठौड जानें और सुलतान जानें। ऐसा करने से सुलतान को केलण की सहायता के बदले मे नागौर मिल जाता, राव केलण का राव चून्डा को मारने का उद्देश्य पहले ही पूर्ण हो चुका था। राठौडा ने राव केलण की बात मान ली, उनका आपस का युद्ध समाप्त हो गया।

अब भाटियो और राठौडो ने सुलतान की सेना को लौट जाने का आग्रह किया। राव केलण ने उन्ह यह सदेशा दिया कि उन्होने अपना काम कर लिया था, नागौर ने सुलतान की अधीनता स्वीकार कर ली थी और पूगल पहले से ही उनका मित्र था। नबाब सलीम खा, कवान खा और सैयद खिजर खा समझदार सेना नायक थ, उनका उद्देश्य पूर्ण हो चुका था। वह यह भी भाप गए कि अब राठौडा और भाटियो के एक होने के आसार थे इसलिए रक्तपात करने मे कोई लाभ नही था और जब दोनो सुलतान की अधीनता स्वीकार कर रहे थे, तब

युद्ध किसलिए किया जाए ? इसके बाद में राठोड़ो और भाटियो ने मिलकर राव चून्डा के देहान्त का मातम मनाया। प्रमुख भाटी और राठोड़ सरदार मुलतान और हिसार की सेना के साथ सीमा तक गए और उन्हें विदाई देकर वापिस आए। उनका सेना के साथ जाने का उद्देश्य विदाई देना नही था, वह सुनिश्चित करना चाहते थे कि लौटती हुई सेना क्षेत्र में लूटपाट करके उसे उजाड़े नही। मुलतान सैयद खिज़र खां और सूबेदार नवाब खां एक साथ हिसार होकर दिल्ली लौटे और नवाब सलीम खां मुलतान लौट गए। राव चून्डा का मातम मनाकर राव केलण पूगल लौटे।

राव चून्डा का वध सन् 1418 ई में हुआ था। कुछ इतिहासकारो का मत है कि यह घटना सन् 1423 ई की थी। यह वर्ष नवाब खां और सुलतान सैयद खिज़र खां की मृत्यु के वर्षो से मेल नही खाता। सैयद खिज़र खां की मृत्यु, 20 मई, सन् 1421 ई में हुई थी, नवाब खां का देहान्त इससे पहले हो गया था। हमें इन तारीखो से उलझने की आवश्यकता नही, खास मुद्दा राव केलण द्वारा राव चून्डा को मारकर राव रणकदेव और कुमार शार्दूल की मृत्यु का राठोड़ो से बदला लेने का था, सो पूरा हो गया।

केलण नाम को ही वरदान था कि उन्हे राजगद्दी से वंचित होना पड़ता, कुछ समय पश्चात् उन्हे गद्दी मिलती और वह अपनों की मृत्यु का बदला उसी शत्रु को मारकर लेते जिसने उन्हे मारा था। सन् 1168 ई में रावल जैसल खिज़र खां बलोच द्वारा मारे गए थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र कुमार केलण को राजगद्दी से वंचित करके छोटे कुमार शालीवाहन को रावल बनाया गया था। इन्हे भी खिज़र खां बलोच ने सन् 1190 ई में देरावर में मार दिया था। भाग्यवश रावल शालीवाहन के स्थान पर रावल जैसल के पुत्र केलण रावल बने। इन्होने सन् 1205 ई में खिज़र खां बलोच को मारकर अपने पिता और भाई की मृत्यु का उससे बदला लिया।

अपनी राठोड़ो के विरुद्ध इस अप्रत्याशित विजय और मुलतान की सेना के राजी-खुशी लौट जाने के पश्चात् राव केलण पूगल में चैन से नही बैठे। उन्हें भय था कि अगर उन्होंने मुलतान से लगने वाली पश्चिमी सीमा को नही सम्भाला और पूर्ण सतर्कता नही बरती तो वहा वह लोग गड़बड़ी कर सकते थे, जिनका पहले वहा राज्य था और जिसे उन्होंने युद्ध करके या कपट से छीन लिया था। उन्हे यह भी भय था कि मुलतान के शासक जिनसे पहले उन्होंने सहायता की याचना की थी और फिर वह उन्ही के विरुद्ध राठोड़ों से मिल गए थे, कही उनसे बदला लेने की न सोचें। मुलतान की तुलना में वह उस समय कमजोर पड़ते थे। उन्होने फिर से मुलतान के प्रति चतुराई और चालाकी का रुख अपनाया।

उन्होंने चुने हुए घुड़सवार छापामार अपने साथ लिए और समा बलोचो के मुखिया जाम इस्माइल खां पर डेरा गाजी खां में अचानक आक्रमण कर दिया। डेरा गाजी खां सिन्ध नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित है, मुलतान चिनाव नदी के पूर्वी किनारे पर स्थित है। दोना के बीच की दूरी लगभग चालीस मील है, लेकिन मुलतान से डेरा गाजी खां पहुचने के लिए चिनाव और सिन्ध, दोना नदिया को पार करना पड़ता है। बलोच मुखिया जाम इस प्रकार के प्रहार के लिए कतई तैयार नहीं थे, राव केलण के आदमियो ने वहां

तहलका मचा दिया और निर्दयता से रक्तपात किया । इस नरसंहार को जाम इस्माइल खा ज्यादा देर तक नही सह सके, उन्हें मुलतान से शीघ्र सहायता मिलने की कोई आशा नहीं थी । इसलिए उन्होने सन्धि का प्रस्ताव भेजा, जिसे राव केलण ने ठुकरा दिया । उन्होंने कहला भेजा कि उनका प्रस्ताव तभी मान्य होगा अगर वह अपनी बेटी जावेदा का विवाह उनके साथ कर दें । सन्धि की शर्तों को क्रियान्वित कराने के लिए जावेदा उनकी बन्धक (पक्ड) होगी और साथ मे परनी भी । उन्होंने जाम के दो युवा शहजादों को अपने कैम्प मे रखा, स्वय बारात लेकर गढ़ मे गए । विवाह करके सकुशल कैम्प मे जावेदा के साथ लौटने पर शहजादो को सम्मान से वापिस भेज दिया । इसमे राव केलण ने मुसलमान विजेताओं की नीति का अनुसरण किया, वह भी पराजित विरोधी को वैवाहिक सम्बन्ध क लिए विवश करते थे । जाम इस्माइल खां ने जावेदा का विवाह राव केलण से करके उन पर कोई अहसान नहीं किया था, बल्कि ऐसा करके उन्होने अपने राज्य को पूगल राज्य मे विलय होने से बचाया । उस युग मे सत्ता और राज्य का सुख सर्वोपरि था, सन्तान का सुख, धर्म या रिश्ते नाते अपने स्थान पर थे ।

समा बलोच जाति मुसलमान इतिहास मे विख्यात जाति थी, इस जाति ने उस युग मे *सिन्ध प्रान्त को शासक बना दिया था । 'यह यदुवो की प्रमुख शाखा, श्रीकृष्ण के पुत्र साम्मा* के वशज थे, इनकी दूसरी शाखा ने जबुलिस्तान मे जाकर निवास किया था, मूल वश के नाम को रखते हुए यह यदु कहलाये । साम्मा के वशजा ने अपने पूर्वजो का नाम सिस्तान और दक्षिणी सिन्ध घाटी में अमर किया । सम्माकोट उनकी राजधानी थी । कच्छ प्रदेश के जोडेचा और सौराष्ट्र व सिन्ध प्रान्त के 'जाम' इसी समा शाखा से जुडे हुए हैं । जब इन्होने इस्लाम धर्म स्वीकार किया तब से यह अपने आप को 'समा' के स्थान पर 'जाम' कहने लगे । इससे इनके पूर्वजो के हिन्दू यदुवशी होने पर कोई असर नही पडा । कर्नल टाड का मत है कि वि स 1436 (सन् 1380 ई)तक यह राजपूत थे, इसलिए लगभग चालीस वर्ष बाद में जब राव केलण भाटी न इस जाति म विवाह किया तब इन्हे भी केलण से अपनी बेटी का विवाह करने मे कोई हिचकिचाहट नही हुई, क्योकि इनके परिवारो म पूर्व मे विवाह होते आए थे ।

राव केलण ने मुलतान को एक तरफ टाल कर आगे डेरा गाजी खा पर आक्रमण करने की पहल इसलिए की कि कही मुलतान के शासक उन पर पहल आक्रमण नही कर दें । वहा जाने से राव केलण मुलतान के चालीस मील पश्चिम मे पहुच गए, मुलतान से पचास मील दक्षिण मे केहरोर पर वह पहले से अधिकार किए हुए थे । इस प्रकार दोनो तरफ से मुलतान राव केलण के शिकजे मे था और साथ म जावेदा भी उनके पास थी । मुलतान के शासक जान गये कि अब राव केलण उनके बराबर के सशक्त विरोधी होने की स्थिति मे थे, इसलिए उनसे पहले की भाति मित्रता बनाए रखना उनके लिए अच्छा रहेगा । उधर पजाब और मुलतान मे खोखरा के बढते हुए प्रभाव और उनके उत्पात के कारण सैयद खिजर खा की स्थिति वहा कमजोर हो रही थी, इसलिए राव केलण को विरोधी बनाना उन्होने उचित नही समझा ।

राव केलण डेरा गाजीखा से ब्यास नदी के पेटे मे स्थित केहरोर गढ गए । वहा उन्होने किले की मरम्मत पूरी करवाई और बदलते हुए सत्ता सन्तुलन को ध्यान मे रखते

हुए किले का विस्तार किया ताकि उसकी सामरिक उपयोगिता बढ़ सके। उनके इस कार्य से मुलतान के शासक ने अप्रसन्नता दर्शायी और उनके लगा पड़ोसियों ने विरोध प्रकट किया। लेकिन थोड़े दिन पहले बलोच शहजादी के साथ हुई उनकी शादी के कारण उन्होंने इस अप्रसन्नता और विरोध की परवाह नहीं की, क्योंकि अब उनके बलोच जाम के साथ निकट के सम्बन्ध होने के कारण उनका कुछ नहीं होगा। वह मुलतान के शासक फतह अलिशाह से मिलने वहां गए, उन्हें मित्रता का आश्वासन दिया और दिल्ली के सुलतान के प्रति निष्ठा का वचन देकर उनके अधीन यथावत रहने के वायदे को दोहराया। उनकी जाम की पुत्री से हुई शादी को ध्यान मे रखते हुए और आश्वासनों मे विश्वास करते हुए फतह अलिशाह ने भी उनके मित्र रहने का वायदा किया।

मुलतान और केहरोर से आकर उन्होने मायेलाव (मायनकोट) के किले पर अधिकार किया। यह स्थान पजनद और सिन्ध नदियो के सगम से पश्चिम की ओर स्थित है। यह किला उनके डेरा गाजी खा जाने के लिए सुविधाजनक था, अन्यथा वहा जाने के लिए उन्हें हर बार मुलतान होकर जाना पड़ता था, जो व्यावहारिक और सामरिक दृष्टि से उचित नहीं था। उन्होने पश्चिमी सीमा की सुरक्षा को ध्यान मे रखते हुए मूमनवाहन का प्रशासन अपने अधिकार मे लिया, यह स्थान कभी उनके पूर्वजो (मगलराव, सन् 519 ई.) की राजधानी था। उन्होने चतुराई और सतर्कता बरतते हुए सिन्ध और मुलतान की सीमा कुतर-कुतर कर अपने राज्य को सामरिक दृष्टि से सुदृढ किया। उन्होंने सिन्ध प्रदेश मे स्थित नादहो का गढ भी ले लिया। इस प्रकार वह पश्चिम मे सिन्ध, चिनाब और सतलज नदियो के सगम पजनद पर जाकर रुके, उधर व्यास नदी के पेटे मे मुलतान की देहरी तक पहुच गए थे और उत्तर मे डेरा गाजी खा उनके प्रभाव क्षेत्र मे था।

उनके लिए इन नदी घाटियों पर अधिकार करना अत्यन्त आवश्यक था, क्योंकि सिन्ध, सतलज और व्यास नदियो की उपजाऊ घाटियो से उन्हें सेना के लिए अच्छे वीर सैनिक और बढिया नसल के घोडे उपलब्ध होते थे, घोडो के लिए दाना यहीं से मिलता था और उनके चरने के लिए यहा घास बाहुल्य लम्बे चौडे मैदान थे। उनका पूर्वी रेगिस्तान यह सब सुविधाए जुटाने मे असमर्थ था। इन उपजाऊ क्षेत्रो के कारण ही उनके लिए बडी सेना का रख-रखाव सम्भव था। इन क्षेत्रों से कर, जकात, लगान और अन्य शुल्को के रूप मे अच्छी धनराशि प्राप्त होती थी, जिससे राज्य और सेना का रख-रखाव, सैनिकों को वेतन आदि देने मे सहूलियत रहती थी। नदी घाटियो के सिवाय पूगल के रेगिस्तान मे धन प्राप्ति का अन्य कोई साधन नहीं था। अर्थाभाव से कोई राज्य नही चल सकता, चाहे वहा के लोग कितने ही वीर और ईमानदार क्यो न हों। अर्थ ही सब गुणो का गुण है, वही दुखों मे पहला दुख भी है। इस प्रकार राव केलण ने अपने अहकार को गिरने नही दिया, उन्होंने अपने अधीन मित्र राज्यो और अधीन किए गए पूर्व के शत्रु राज्यो को बता दिया कि उनके आश्रय मे वह सब सुरक्षित थे, शत्रुओ और पडोसी शक्तिशाली राज्यो को भी यह अहसास करवा दिया कि उन पर आक्रमण करने से पहले उन्हें दो बार सोचना पडेगा।

उन्होने मोहिल, जोइयों, खोखरो, जादरों, चाहिलो और लगाओं को अपने शासन का आश्रय दिया। उनकी शक्ति और इरादों की परीक्षा लेने के लिए मुलतान के शासकों ने

अमीर खा कोरी (बलोच) को केहरोर के समीप किला बनवाने के लिए उकसाया। राव केलण ने उसे नम्रता से कहलवाया कि चूंकि यह स्थान उनके प्रभाव क्षेत्र मे था, इसलिए वह यहा किला नही बनवाये, वह किला बनवाने के लिए और कोई सूना स्थान देख ले। कोरी ने उत्तर भिजवाया कि यह सब शक्ति का चमत्कार था, उसे किला बनाने से रोकना अच्छा नही होगा। राव केलण अवसरवादी थे, केहरोर के किले से अपने 350 साथियो को साथ लेकर अचानक कोरी पर धावा बोल दिया। वह युद्ध के लिए कहा तैयार था, उसने सोचा कि इस प्रकार की धमकियां चलती रहती थी। इस आक्रमण मे अमीर खा कोरी अपने अनेक साथियो सहित मारा गया और राव केलण ने उसके निर्माण कार्य को समतल करवा दिया। इसके बाद मे कोरियो ने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली और वह उनकी प्रजा के भाग बन गए। यह कोरी बलोच थे।

इनके ससुर जाम इस्माईल खा का राज्य सिन्ध नदी से पश्चिम की ओर दूर तक फैला हुआ था। इन्होंने अपने नाम से डेरा इस्माइल खा नाम का नगर बसाया और वहा किला बनवाया। यह स्थान डेरा गाजी खा से 130 मील उत्तर मे सिन्ध नदी के पश्चिमी किनारे पर है। जाम इस्माईल खा अपने पीछे एक वयस्क पुत्र और एक दूसरे दिवगत पुत्र से अवयस्क पौत्र सुजात खा को छोडकर मर गए। इन दोनो मे उत्तराधिकार के लिए झगडा होने लगा। राव केलण ने इनके बहनोई होने के नाते झगडे मे हस्तक्षेप किया। इन्होंने राज्य को दो भागो मे बाटा, वयस्क शहजादे को उसका स्वतन्त्र भाग दे दिया, अवयस्क शहजादे का भाग अपने अधिकार मे रखा और इसकी सुरक्षा के लिए अपनी घुडसवार सेना के एक हजार सैनिको का एक दस्ता डेरा इस्माइल खा मे तैनात किया। सेना को वहा रखना चाचा भतीजे के झगडे को शान्त रखने के अलावा इसलिए भी आवश्यक था कि कही कोई बाहरी मनचला शासक बिगडी हुई स्थिति का लाभ उठाकर इस राज्य को नही हथिया ले। उन्होंने अवयस्क शहजादे के राज्य का प्रशासन अपने विश्वासपात्र सुलतान खा को सौंपा और सुरक्षा का दायित्व अपने नियन्त्रण मे रखा। वह दस वर्षीय शहजादे सुजात खा को अपने साथ उसकी बुआ जावेदा की देख-रेख मे रखने के लिए पूगल ले आए, क्योंकि उन्हें डर था कि इस बालक को उसका चाचा मरवा देगा। जब सुजात खा वयस्क हो गया तब इसे राव केलण ने इसका राज्य सौंपकर सारे शासनाधिकार दे दिए। लेकिन दुर्भाग्यवश सुजात खा जाम बनने के कुछ समय बाद मे मर गया। राव केलण ने अवसर देख कर उसके राज्य को अपने राज्य मे मिला लिया। इस कार्य मे उन्हें बेगम जावेदा का पूरा सहयोग मिला। वह सुजात खा के चाचा से झगडा पहले ही निपटा चुके थे, इसलिए यह भाग अब उसे नही सौंपना चाहते थे। अब राव केलण का राज्य पजाब के सिन्ध सागर के पार मुलतान से दो सौ मील उत्तर तक चला गया था। मुलतान के शासक बडी कसमकस और अजीब स्थिति मे पड गए। राव केलण ने चतुराई मे उन्हें परोक्ष रूप से घेरे मे ले लिया था।

अब समय निकाल कर वह भटनेर गए, जिसे उनके अयोग्य भाई तणु और मेहराव हमीरोत गया बैठे थे। वहा उनका कोई विरोध नही हुआ, लोगो ने उनको शासक मान लिया, क्योंकि थोडे दिन पहले ही वह तणु और मेहराव हमीरोत को वहा स्थापित करके गए थे।

अब राव केलण बूढे हो चले थे, उनमे बुढापे के लक्षण दिखने लगे थे, वह सत्तर वर्षों के लगभग हो गए थे। निरन्तर युद्धो मे रहने, दूर-दूर के अभियानों का सचालन करने, आराम कम मिलने आदि कारणो से वह थक गए थे और स्वास्थ्य उनका साथ नही दे रहा था। उनके बेगम जावेदा से, खुमाण और थीरा नाम के, दो पुत्र हुए थे। यह मुसलमान राणी के पुत्र अभी अवयस्क थे। उन्हें चिन्ता थी कि उनके बाद मे इनका क्या होगा ? इनके अन्य भाई इनके भरण पोषण की व्यवस्था नही करेंगे और अगर मुसलमान होने के नाते यह मारे मारे फिरे या मुलतान के शासको की शरण मे चले गय, तब मृत्यु के बाद मे उनकी प्रतिष्ठा गिरेगी। साथ ही बेगम जावेदा के भविष्य का प्रश्न भी जुडा हुआ था, शायद अभाव की स्थिति मे वह किसी और से शादी कर ले। इससे इनकी मौत बिगडती। इस समस्या पर उन्होने गम्भीरता से विचार किया। वह अपने रहते हुए बेगम जावेदा और उनके दोनो कुमारो को भटनेर ले गए और दोनो भाइयो को उनकी माता के सरक्षण मे वहा का स्वतन्त्र राज्य दे दिया। भटनेर मे उन्होने अपनी कुछ सेना छोडी और कुमारो के वयस्क होने तक वहा के प्रशासन की देख-रेख के लिए विश्वासपात्र भाटी नियुक्त किए।

खुमाण और थीरा योग्य पुरुष थे, यह तणु और मेहराव की तरह अयोग्य नहीं थे। इनके वशज भट्टी केलणोत मुसलमान हैं। यह भट्टी मुसलमान, पाकिस्तान के पजाब प्रान्त मे और भारत के पजाब, हरियाणा और राजस्थान प्रान्तो मे फल-फूल रहे हैं। आज यह लोग समृद्ध जमीदार हैं, सेना और पुलिस मे उच्च पदो पर हैं, नागरिक सेवा मे कार्यरत हैं। इनम अब भी भाटी राजपूतो और राव केलण के गुण हैं। हमे गर्व है कि हमारे यह मुसलमान भाई खुशहाल है और भारत और पाकिस्तान मे इन्होने अपने परिश्रम, सेवा और देशभक्ति के कारण विशिष्ट स्थान बना रखा है।

इन्होंने अपने छोटे कुमार रणमल को पूगल के प्रशासक रहते हुए सराहनीय कार्य करने के लिए मरोठ की अलग जागीर प्रदान की। पूगल केवल नाममात्र की प्रतीक स्वरूप राजधानी थी, उसका कोई प्रशासनिक या सामरिक महत्व नही था। वास्तव मे सारा राज-काज देरावर और मरोठ से चलाया जाता था। सीमा के विभिन्न किलो मे सेना रहती थी, वहीं सैनिको की भर्ती, अभ्यास, रख-रखाव की व्यवस्था थी। राजस्व अधिकारी इन किलो के साथ रहते थे, वही से सारी अर्थ व्यवस्था चलती थी।

राव केलण ने राज्य मे व्यापार और व्यवसाय की वृद्धि और नियन्त्रण के लिए मुलतान से बजाज खत्री बुलाये। उन्हें पूगल और अन्य किलो मे मोदीखाने के प्रभारी बनाए, उचित मान सम्मान दिया। शाह मुबारक शाह (सन् 1421-34 ई) के समय मे दिल्ली के शासन में खत्रियों का बोलबाला था और वहा उनका बडा हस्तक्षेप था। सन् 1434 ई मे कागू और काजवी नाम के खत्रियो ने ही किन्ही कारणो से मुबारक शाह का वध कर दिया था। राव केलण ने इन खत्रियो को अपने यहाँ आदर से बसाकर मुलतान और दिल्ली के खत्रियो से सदेशो का माध्यम बनाया ताकि उनकी शोभा मुलतान और दिल्ली के शासको के पास उनके चाह अनुसार पहुचे। इन्ही पूगल के खत्रियो के भानजे, श्री मेघराज कालरा, सिंचित क्षेत्र विकास विभाग मे मुख्य अभियता के पद पर रह चुके थे और उनकी सराहनीय सेवाओं के कारण केन्द्र सरकार ने इन्ह उच्च पद पर नियुक्त किया था।

राव केलण के जवाई, रिड़मल, सन् 1427 ई. में मन्डोर के शासक बने। सन् 1418 ई. में इनके पिता राव चून्डा की मृत्यु के पश्चात् राजगद्दी के लिए इन्हें छोटे भाइयों, कान्हा और सत्ता, से संघर्ष करना पड़ा। सन् 1418 ई. में राव केलण ने सुलतान खिजर खां को नागौर से वापिस जाने के लिए इसलिए राजी किया था ताकि भविष्य में अवसर पाकर उनके जवाई नागौर और मन्डोर के शासक बन सकें। सुलतान की सेनाओं के नागौर में रहते हुए यह सम्भव नहीं था। राव केलण द्वारा राव चून्डा को मारने के अन्य उद्देश्यों के अलावा एक प्रमुख उद्देश्य यह भी रहा था कि उनकी मृत्यु से रिड़मल के राव बनने का मार्ग शीघ्र प्रशस्त होगा।

राव केलण का देहान्त बहत्तर वर्ष की आयु में सन् 1430 ई. में, पूगल में हुआ।

राव केलण की तीन राणियों से आठ पुत्र थे, छः, दो राजपूत राणियों से और दो समा बलोच बेगम जावेदा से।

पुत्र 1 चाचगदेव–यह ज्येष्ठ पुत्र थे, राव केलण के बाद में राव (सन् 1430-1448 ई.) बने।

2 रणमल–इन्हे राव केलण ने मरोठ की जागीर प्रदान की थी। कुछ समय पश्चात् राव चाचगदेव ने इन्हे मरोठ के बदले में बीकमपुर की जागीर दी।

3 बिक्रमजीत–इनके वंशज खीरवा के क्षेत्र में बसे, यह बिक्रमजीत केलण भाटी कहलाते हैं।

4 अक्ता–इन्हे इन्ही के भानजे और रिड़मल के पुत्र नाथू ने मार दिया था। उसने उसके दादा राव चून्डा के राव केलण द्वारा मारे जाने का बदला लेने के लिए क्रोध में ऐसा किया। इनके वंशज शेखासर क्षेत्र में हैं, इन्हे शेखासरिया केलण भाटी कहते हैं।

5 कलकरण–इन्हे तणु की जागीर प्रदान की गई थी। इन्होंने दीर्घायु ली। यह सन् 1478 ई. में राव बीका राठौड़ के विरुद्ध लड़े गए कोडमदेसर के दूसरे युद्ध में मारे गए थे। उस समय में राव शेखा (सन् 1464-1500 ई.) पूगल के राव थे।

6 हरभाम–इनके वंशज नाचना और सरूपसर (जैसलमेर) क्षेत्र में हैं। यह हरभाम केलण भाटी कहलाते हैं।

7–8 खुमाण और धीरा–इन्हे राव केलण ने अपने शासनकाल में भटनेर का राज्य प्रदान किया था। इनके वंशज भट्टी (केलणोत) मुसलमान हैं। यह पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त में और भारत के पंजाब, हरियाणा और राजस्थान प्रान्तों में बसे हुए हैं।

जब राव केलण जैसलमेर छोड़कर आसणिकोट आए थे तब इनका एक चचेरा भाई, तारकजी का पुत्र राजपाल, इनके साथ में आया था। केलण ने राजपाल से वायदा किया था कि जब वह किले जीतेंगे तब एक किला उसे भी देंगे। राव केलण से पहले राजपाल की मृत्यु हो गई थी, इसलिए यह वायदा पूरा नहीं हुआ। बाद में राव चाचगदेव ने राजपाल के पुत्र कीरतसिंह को पीलीबंगा क्षेत्र में किला और जागीर देकर राव केलण का वायदा पूरा किया।

राव केलण के तीन राणियां थी—

1 माहेची राणी वह खेड के रावल मल्लीनाथ की पुत्री और जगमाल राठौड़ की

यहन थी।

2 सोढी राणी . यह राजकुमार चाचगदेव की माता थी।

3 बेगम जावेदा यह समा बलौच जाम इस्माइल खां की पुत्री थी, खुमाण और थीरा की माता थी।

राव केलण के अधिकार मे निम्नलिखित ग्यारह किले थे

1 पूगल 2 बीकमपुर 3 बीजनोत 4 देरावर 5 मरोठ 6 केहरोर 7 मूमनवाहन 8 भटनेर 9 माथीलाव 10 नानवकोट 11 डेरा गाजी खा।

इन्होने अपने पुत्रो मे से एक को मरोठ का किला और दो को भटनेर के किले के सिवाय अन्य किसी पुत्र को पश्चिम में कोई किला नही दिया। उन्हे खीरवा, नाचना, सरूपसर, तणु, शेखासर आदि ऐसे स्थाना पर उन्होने बसाया जो या तो जैसलमेर की सीमा पर थे या राठौडों के उभरते राज्यो की सीमा पर थे। इससे पगल को जैसलमेर या राठौडो के विरुद्ध सीमा की सुरक्षा मे सहायता मिली।

राव केलण प्रारम्भ से ही जनता की समृद्धि, व्यापार और व्यवसाय मे रुचि रखते थे। इसलिए वह जब आसिणकोट से बीकमपुर आए तब अपने साथ मे पालीवालो को लेकर आए थे। बाद मे वह मुलतान से बजाज खत्रियो को लेकर आए।

तैमूर ने सन् 1398 ई मे भटनेर म हिन्दुओं और मुसलमानो के साम्प्रदायिक दगे करवाए, जिनमे हजारो हिन्दू मारे गए थे। लेकिन राव केलण ने सद्भावना से प्रेरित हो कर सन् 1417 ई में तणु और मेहराव हमीरोत के मुसलमान होते हुए भी उन्हे भटनेर मे बसाया। इसी भावना से उन्होने बेगम जावेदा के पुत्रो, खुमाण और थीरा, को भटनेर का राज्य दिया। उनमे धार्मिक सहिष्णुता और साम्प्रदायिक सद्भावना इतनी अधिक थी कि वह दिल्ली और मुलतान दोनो के मित्र थे। समा बलौचो से उनके वैवाहिक सम्बन्ध थे, जाम इस्माइल खा की मृत्यु के बाद मे उन्होने उनके पुत्रो की राज्य के लिए पचायती की। उनके पूगल के राज्य की अधिकांश प्रजा मुसलमान थी। यह सब तैमूर के आक्रमण के बीस पच्चीस वर्ष बाद मे ही हुआ था, जबकि उस समय तक भाटी उस हादसे को भूले ही नही थे और ऐसे परिवार मौजूद थे जिन्होने उस घटना को स्वय देखा और जीया था।

राव केलण और सुलतान सैयद खिजर खां के सम्बन्धों के बारे मे अनेक प्रश्न और पहलू विचारणीय हैं।

सन् 1399 ई मे तैमूर द्वारा मुलतान के सूबेदार बनाये जाने से पहले खिजर खा वहीं रहते थे और इस अवधि मे केलण पडोस म बीकमपुर मे रहते थे। इन दोनों मे अच्छी मित्रता हो गई थी, दोनो सन् 1414 ई मे एक साथ सत्ता में आए, एक दिल्ली के सुलतान बने और दूसरे पूगल के राव। राव रणकदेव (सन् 1380-1414 ई) के समय वे मुलतान के पूर्व शासको ने और बाद मे खिजर खा (सन् 1399-1414 ई) ने उन्हें मुलतान की एक बीघा जमीन भी नही लेने दो थी। इसी प्रकार राव रणकदेव की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र तणु और प्रधान हमीरोत के विवश होकर इस्लाम धर्म स्वीकार करने पर भी उन्होंने उन्हें किसी प्रकार की सहायता देने का नाम तक नही लिया। इसके विपरीत राव केलण ने सन् 1414 18 ई के बीच मे देरावर, मरोठ, नानवकोट, बीजनोत, केहरोर और भटनेर

के किलो पर अधिकार कर लिया, परन्तु मुलतान में शासकों और दिल्ली के सुलतान ने कहीं हस्तक्षेप नहीं किया। जिन राव चून्डा से बदला लेने के लिए उन्होंने तणु और मेहराव हमीरोत को एक सैनिक तक नहीं दिया था, उन्हीं राव चून्डा को मारने के लिए मुलतान के नवाब सलेमा खां और हिसार के सूबेदार बवान खां, राव केलण की सहायतार्थ आए। जब राव केलण ने नागौर में अपना काम पूरा कर लिया, उन्होंने मुसलमानों की सेना को नागौर के दर्शन तक नहीं करवाए और वह निराश चुपचाप लौट गई (सन् 1418 ई)। इस घटना के बाद में उन्होंने मुमनवाहन और मारोठ पर *अधिकार किया और डेरा गाजी खां के जाम इस्माइल खां के घुटने टिकाए, तब भी* मुलतान इसको चुपचाप सह गया। जाम की मृत्यु के बाद में इन्होंने डेरा इस्माइल खां में सक्रिय हस्तक्षेप किया तब भी मुलतान और लाहौर इनके प्रति निष्क्रिय रहे। यह समझ में नहीं आता कि इस पुरुष में क्या आकर्षण शक्ति थी कि कल के दुश्मन इनके मित्र बन गए थे और सभी परिस्थितियों में अपनी विवशता लिए तटस्थ रहे। यही स्थिति सुलतान मुबारक शाह (सन् 1421–34 ई) के समय में भी रही।

सुलतान खिजर खां की मृत्यु (सन् 1421 ई) के बाद में उनके पुत्र मुबारक शाह (सन् 1421–34 ई) सुलतान बने। सुलतान खिजर खां की मृत्यु का समाचार सुनते ही जसरथ खोखर को दिल्ली का सुलतान बनने के सपने आने लगे। एक बडी सेना के साथ में व्यास और सतलज नदियों को पार करके वह दिल्ली की ओर अग्रसर हुआ। उसने पहले तलवडी पर आक्रमण किया किन्तु परास्त होकर रेगिस्तान में चला गया। उसने फिर सेना का संगठन किया और सरहिन्द को जा घेरा, रोपड व लुधियाना को लूटा, वहां से उसने जम्मू पर आक्रमण किया। उसने लाहौर, दिपालपुर और जलन्धर पर आक्रमण करके इन्हें लूटा। सन् 1432 ई में जब तक जसरथ खोखर मारा नहीं गया, उसने अपनी लूटपाट और आक्रमण की हरकतें नहीं छोडी। इसके अलावा बयाना के सूबेदार मोहम्मद खां और जौनपुर व इटावा के इब्राहिम शरकी ने विद्रोह किया। तुर्क बच्चा ने पंजाब और मुल्तान को लूटा और मेवात में जलाल खां ने बगावत कर दी। यह सारी अराजकता की परिस्थितियां राव *केलण की सहायक थी और जैसा वह चाहते वैसा कर लेते थे। कम से कम राव केलण ने* दिल्ली के सुलतानों के विरुद्ध बगावत तो नहीं की थी, वह सरे आम स्वयं को सुलतानों के अधीन बताते थे। इसी में सुलतान सैयद खिजर खां और सुलतान मुबारक शाह के अहंकार की तुष्टी होती थी।

क्योंकि राव केलण सुलतान खिजर खां के मित्र और विश्वासपात्र थे इसलिए सुलतान मुबारक शाह भी इनको सम्मान देते थे और इन्हें बडा समझ कर इनकी इज्जत करते थे। दरअसल में राव केलण ने सुलतान खिजर खां और मुबारक शाह की कठिनाइयों का भरपूर लाभ उठाया। वह चतुराई और चालाकी से जो चाहते वह कर लेते थे और मौका पडने पर शक्ति प्रदर्शन करने से भी नहीं चूकते थे। सुलतानों को राव केलण को नियन्त्रण में रखने से ज्यादा चिन्ता दिल्ली की अपनी गद्दी की सुरक्षा की थी और उसी को बचाने में पिता-पुत्र ने बीस वर्ष (सन् 1414–34 ई.) बिता दिए।

यह राव केलण का ही सामर्थ्य था कि उन्होंने अपने वंशजों को पंजाब की उपजाऊ

भूमि के अन्न के भण्डार दिए, और घोड़ो और अन्य पशुओ के चरने के लिए नदी घाटियो के मैदान उपलब्ध कराए। भाटियो का पजाब की पाचो नदियो पर अधिकार था और वह इनकी लहरो स खेलते थे। इनके आने जाने के लिए सुलभ जल मार्ग खुले थे, इन पर उनका राजकीय अधिकार था। राव केलण ने केवल पन्द्रह वर्षों मे भाटियो का जीवन स्तर ही बदल डाला। गरीबी, अभाव, अकाल, भूखमरी आदि विपदाओ से उन्हें मुक्ति दिलाकर इनके सामने पजाब सिन्ध की सम्पदा रख दी। कहा पूगल और कहा पजनद का प्रदेश, जहा पजाब की पाचो नदियो के पानी का सगम था। जिन प्रदेशो के लिए भाटी तीसरी सदी से जूझ रहे थे, वही प्रदेश ग्यारह सौ वर्षों बाद मे एक सपूत राव केलण ने एक बार भाटियो के अधिकार में दिला दिये।

राव केलण के हृदय मे अपने पैतृक जैसलमेर के प्रति अपार सम्मान था। उनका पूगल राज्य तत्कालीन जैसलमेर राज्य से काफी बडा था, उनके अधीन कही ज्यादा सुविधाएँ, साधन, सम्पदा, सेना और अर्थव्यवस्था थी। इन सबके होते हुए भी उन्होंने कभी जैसलमेर की अवहेलना नही की, रावल का कभी निरादर नही किया और न ही कभी उनके विवादो मे हस्तक्षेप किया। उनके सफलता अभियानों के कारण उनका जैसलमेर के प्रति दृष्टिकोण नही बदला। उन्होने हमेशा उसे अपने पूर्वजो की भूमि माना और श्रद्धा से सम्मान दिया। उनमें वीरता, सहनशीलता, कठिनाइयो से जूझना, शीघ्र निर्णय लेना आदि के गुण मातृ भूमि की देन थे। सन् 1427 ई म अपने छोटे भाई रावल लक्ष्मण के देहान्त पर शोक मनाने वह जैसलमेर गए और वहा रावल वरसी (सन् 1427 48 ई) के राज्याभिषेक तक रुके रहे। उनके इस भद्र व्यवहार से दोनो के आपस मे सदेह उत्पन्न नही हुए सौहार्द्र बना रहा।

एक अहम प्रश्न उठता है कि अगर नागौर विजय के बाद मे राव केलण मन्डोर और मालाणी पर अधिकार करके अपना विजय अभियान पश्चिम दिशा के स्थान पर पूर्व दिशा की ओर ले जाते तो पूर्वी राजस्थान के राज्यो की क्या गति होती ? क्या राठौडों के जोधपुर और बीकानेर के राज्य अगले पचास वर्षों मे अस्तित्व मे आ सकते थे ? क्या आमेर राज्य की जडें जम सकती थी ? और क्या सिरोही, जालौर और मालाणी से लगने वाले छोटे छोटे स्वतन्त्र राज्य और गढिया उनके प्रहार के आगे टिक सकती थी ? उनके पास सैनिक और आर्थिक साधन थे, कुशल नेतृत्व था, दिल्ली का शासन उनके साथ सहयोग मे था, ऐसी स्थिति म अगर सिन्ध और मुलतान के क्षेत्रो को हथियाने से वह नहीं घबराये तो क्या पूर्वी राजस्थान और उत्तरी गुजरात उनकी विजय मे बाधा बन सकते थे ? इस सबका एक ही उत्तर है कि ऐसी स्थिति मे वह सीधे मेवाड से टकराव मे आते। लेकिन मेवाड की नीति कभी विस्तारवादी नही रही थी, इसलिए शायद मेवाड के राणा उन्हें अपने राज्य की सीमा के बाहर अरावली पर्वत श्रेणी के पश्चिम मे रहने देने के लिए समझौता कर लेते। उन्ह कोई ईर्ष्या नही होती कि राव केलण, आमेर, मारवाड, गोढवाड पर अपना अधिकार रखते, क्योकि मेवाड ने पडोसी होते हुए भी इन्ह अछूता छोड रखा था। इस क्षेत्र मे उस समय तक राजपूतों का कोई बडा राज्य नही था, राठौड और कच्छावा इधर उधर अपने पाव जमाने के प्रयास मे थे। यह अलग अलग छोटे राज्यो मे बिखरे हुए थे, एकछत्र राठौड या कच्छावा राज्य स्थापित होने मे अभी पचास वर्ष शेष थे। अगर राव केलण अपनी तलवार पूर्व की ओर मोड देते तो अधिकाश राजस्थान और गुजरात उनके घोडो की टापो के नीचे

कुचला जाता। सत्ता और शक्ति का सन्तुलन उनके और मेवाड़ के बीच में रहता। ऐसी स्थिति में बाद के अधिकांश छोटे और बड़े रजवाड़े उत्पन्न होते ही नहीं। राव केलण की चतुराई, चपलता और चालाकी के आगे मेवाड़ भी सुरक्षित नहीं रहता। जहां मेवाड़ दिल्ली के शासकों से वर्षों से जूझ रहा था, वहां अब एक और राजपूत शक्ति से उन्हें सतर्क रहना पड़ता या फिर राव केलण और मेवाड़ के राणा में सुखद गठबन्धन के आगे दिल्ली का शासन कहां टिकता ? यह पूर्व में नवस्थापित राज्यों का सौभाग्य रहा कि राव केलण पूगल से पूर्व की ओर नहीं मुड़े। कर्नल टाड के अनुसार राठौड़ों ने मुगलों का आधे से अधिक राज्य जीत कर उन्हें दिया था, उनके राज्य विस्तार में आमेर की बहुत बड़ी भूमिका रही। राठौड़ और कच्छावा मुगल साम्राज्य के स्तम्भ थे। राव केलण और मेवाड़ के संगम से यह सारी स्थिति उत्पन्न होती ही नहीं। भारत का यह दुर्भाग्य रहा कि ऐसी स्थिति पैदा नहीं हुई कि पूगल और मेवाड़ मिलकर दिल्ली से विदेशी की जड़ ही उखाड़ फेंकते। यह एक ऐतिहासिक दुर्घटना थी कि जो व्यक्ति डेरा इस्माइल खां तक सक्रिय हस्तक्षेप कर सकता था, उसने नागौर के राव चूण्डा को मारने के बाद में पूगल से पूर्व की ओर कभी देखा तक नहीं। उन्हें ऐसा करने में कोई भय नहीं था, बस हुआ ही नहीं।

राव केलण केवल उत्कृष्ट योद्धा ही नहीं थे, वह उत्तम प्रशासक और गण नायक भी थे। उन्होंने मरने से पहले अनेक आदेश व उपदेश दिए और पूगल के भावी रावों और अपने केलण भाटी वंशजों से अपेक्षा की कि वह पीढ़ी-दर पीढ़ी इनकी तन, मन, धन से पालना करते रहेंगे। यह हैं

(1) पूगल के राव कभी गढ़ में पड़दायत (पासवान) नहीं रखेंगे।

इससे रावों का चरित्र और वैधानिक राणियों का मान सम्मान बना रहा। नारी को सम्मान देने से उनके कुमारों और प्रजा पर भी अत्यन्त अनुकूल प्रभाव पड़ा। इतिहास साक्ष्य है कि राव केलण के बाद की पच्चीस पीढ़ियों में से किसी एक राव ने भी पूगल के गढ़ में पड़दायत नहीं रखी।

(2) नाथों को प्रथम सम्मान दिया जायेगा।

यह जोगीराज रतननाथ की कृपा थी कि रावल सिद्ध देवराज देरावर में सन् 852 ई में भाटियों का राज्य पुनः स्थापित कर सके। जैसलमेर की परम्परा को निभाते हुए, पूगल के रावों ने भी प्रत्येक उत्सव और समारोह में नाथों को मान सम्मान में प्रथम स्थान दिया। अमरपुरा भाटियान में नाथों की गद्दी व जागीर थी।

(3) मन्दिरों, मस्जिदों और खानगाहों को बराबर मानते हुए इनकी रक्षा की जाए। दोनों के रख रखाव और भरण पोषण के लिए एक समान साधन दिए जायें और प्रबन्ध किए जायें।

(4) रोजगार, धर्म, जायदाद और जागीर के लिए हिन्दू और मुसलमानों के अधिकार समान होंगे।

उपरोक्त से साम्प्रदायिक सद्भावना बनी रही। पूगल ठिकाने की अस्सी प्रतिशत जनसंख्या मुसलमानों की होते हुए भी सन् 1947 ई में वहां से एक भी मुसलमान परिवार

पाकिस्तान नही गया। जिन परिवारो ने पाकिस्तान जाने की तैयारी करली थी, उन्हें भाटियो ने हाथ जोडकर जाने से रोका ताकि राव केलण के आदेशा की मर्यादा रहे। मुसलमानो ने राव केलण की 'आण' मानकर अपने उजडे घर फिर से बसाये। इसका फल यह हुआ कि यह सब मुसलमान भाई आज पहले जैसे ही बसे हुए हैं और नहरो की खुश-हाली का अत्यधिक लाभ वही उठा रहे हैं। जिस साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए आज शासन जूझ रहा है उसके लिए राव केलण अपनी दूरदर्शिता के कारण छ सौ वर्ष पहले जागरूक थे।

(5) किसी राव की मृत्यु क पश्चात् बारह दिन पूरे होने पर, एक जन सभा बुलाई जाएगी, जिसमे जनता के अलावा, खान, प्रधान, प्रमुख भाटी एव अन्य सामन्त उपस्थित होगे। इनकी राय से ही दिवगत राव के उत्तराधिकारी की घोषणा की जायेगी।

इससे स्पष्ट है कि वह जन्म से कर्म और योग्यता को बडा मानते थे और उस समय भी उनके विचार मे किसी न किसी रूप मे जनतन्त्र और गणराज्य का आदर्श था। यह इसलिए होगा क्योकि इन्ह राव रणकदेव या उनकी सोढी राणी ने योग्यता के आधार पर ही राव चुना था। जन्म से राव बनने का अधिकार राजकुमार तणु का था, लेकिन उसके योग्य नही होने के कारण उसे राव रणकदेव की मृत्यु के बाद में राव नही बनाया गया। उसके द्वारा धर्म परिवर्तन की घटना, उस अयोग्यता के कारण राव नही बनाने का, मात्र एक बहाना थी।

(6) वादको, गायको एव अन्य कलाकारो को सम्मान, सरक्षण और प्रोत्साहन दिया जाये। इन्हे आदरपूर्वक 'राणा' और 'राणो' विरुद और विशेषण से सम्बोधित किया जाये।

यह सम्भवत इसलिए किया क्योकि 'पेराणा' (गायक, वादक) सोढी राणी का सदेशा और निमन्त्रण लेकर वीकमपुर से इन्हें पूगल लाने गया था।

(7) निजी सेवको को प्यार और स्नेह दिया जाये, इनके साथ मानवीय व्यवहार किया जाये, इनकी भूलो के बजाय गुणो को उजागर किया जाये। इन्ह 'रशालवाला' विशेषण से सम्बोधित किया जाये।

(8) नायको की भाटियो के प्रति स्वामिभक्ति और निष्ठा का आदर करते हुए, इन्हे प्रत्येक दशहरे पर रावण का पुतला बनाने का अधिकार दिया गया।

चूकि राव रणकदेव ने नायको से पूगल छीनकर अधिकार किया था, इसलिए बुराई पर अच्छाई की विजय का प्रतीक नायको को बनाकर इनका तुष्टीकरण किया गया। इससे नायको को समाज मे विशिष्ट स्थान मिला।

(9) राज्य के प्रशासन मे खानो और प्रधानो का सभी स्तरो पर हस्तक्षेप होगा।

इससे राव पर अकुश रहता था और वह स्वेच्छा से मनमानी या अत्याचार नही कर सकते थ।

(10) सिहराव भाटी और पडिहार मुसलमान राज्य के पैतृक प्रधान और खान हागे।

यह इसलिए आवश्यक समझा गया कि भविष्य मे कोई राव क्षणिक क्रोध के कारण मुसलमानो का अहित या उनक साथ अन्याय नही कर सके। इससे मुसलमानों का राज्य म विशिष्ट स्थान मिला और उनके आत्मसम्मान को ठेस नही पहुची।

(11) मूरासर के पडिहार मुसलमान भोगते पूगल में गढ़ के किलेदार बनाए गए। किले की रक्षा करना इनके लिए जीवन मरण का प्रश्न बन गया, इन्होंने कभी इसमें चूक नही की। इन्हें ऐसा पद देने से अन्य मुसलमान भी इनके साथ एक कडी की तरह जुड़ते गए, विद्रोह का प्रश्न सदैव के लिए समाप्त हो गया।

(12) सिहराव भाटी हमेशा ड्योढ़ीदार और जनाने कक्षों के रक्षक होंगे।

(13) उत्तराव भाटी मुसलमानों को, यह मरोठ के 101 वें भाटी शासक राव मडमराव (559 ई) के वशज थे, गजनी के तख्त का प्रहरी नियुक्त किया गया।

इस प्रकार पूगल का गढ और तख्त दोनो मुसलमान राजपूतो के सरक्षण मे रखे गये। समय को देखते हुए यह आवश्यक भी था। नजदीक का कोई भाटी वशज यदि गढ़ और तख्त का रक्षक होता तो वह उन पर अधिकार करने का दुस्साहस कर सकता था, लेकिन अन्य भाटी और राजपूत कम से कम मुसलमानो को ऐसा कभी नही करने देते। जैसलमेर मे पहले ऐसा हो चुका था। दूदा जसोड तो रावल बन ही गए थे और तेजसिंह जसोड ने रावल घड़सी को मारकर रावल बनने का प्रयास किया था।

(14) राज दरबार म दाहिनी ओर पहला स्थान मोतीगढ़ के सिहरावो के प्रमुख (प्रधान) को दिया गया और बायी ओर पहला स्थान घोघा के प्रमुख (खान) पडिहार मुसलमान को दिया गया।

(15) रामड़ा के पडिहार मुसलमान राव के अगरक्षक होंगे।

किसी भाटी परिवार को यह दायित्व जानबूझ कर स्पष्ट कारणो से नही दिया गया।

(16) रशालों मे से एक समझदार व्यक्ति को चवर बरदार के पद पर लगाया जायेगा, इसे 'कोटवाल' कहा जायेगा। यह सब धार्मिक अनुष्ठानो और समारोहो का सचालक भी होगा। गणगौर और तीज के त्योहारो पर इसकी पत्नी गवर की प्रतिमा को अपने सिर पर धारण करके समारोह मे आगे चलेगी।

(17) रशालो के एक वर्ग की देखरेख में घोडे और घुडसाल रहेगी। इन्हें 'स्याणी' कहा जायेगा। राज्य का निशान इन्हें सौंपा जायेगा और सब समारोहो और युद्धो मे यह निशान उठा कर साथ चलेंगे।

(18) गणगौर और तीज के त्योहारो पर स्याणियो की पत्नी ईशर की प्रतिमा अपने सिर पर धारण करके समारोह मे आगे चलेगी।

(19) भाटी केवल स्याणियों को धर्म भाई बनायेंगे, अन्यो को नहीं।

(20) रतनू चारणो और पुष्करणा पुरोहितो को उचित सम्मान और स्थान दिया जायेगा, इनकी मान्यता अपने बुजुर्गों से अधिक होगी।

यह इसलिए किया गया क्योकि पुष्करणे पुरोहित देवायत्त ने देवराज की प्राण रक्षा करके भाटी वश को नाश होने से बचाया था, इस प्रक्रिया मे उन्होंने अपने एक पुत्र की आहुति दी, इस पुत्र के वशज रतनू चारण हुए।

(21) चमारो को 'चमार' नही कहा जायेगा, इन्हें 'मेहनर' नाम से पुकारा जायेगा। महतर अपनी गवर अलग निकालेंगे, इस गवर का भाटियो की राजकीय गवर के बराबर सम्मान होगा। महतरो के प्रमुख की पत्नी इस गवर को अपने सिर पर धारण करेगी और इस गवर की सवारी भी भाटियों की गवर के साथ उसके बायें पासे चलेगी।

आज के युग से उस समय के भाटी कितने आगे थे। अब अनुसूचित जाति और जन जाति कहलाने वाले समुदाय को उन्होने कितनी बड़ी मान्यता दी थी। जिन देवी-देवताओं को सवर्ण हिन्दू पूजते थे, चमारो को भी उन्हें पूजने की बराबर छूट थी और इसका खुला प्रदर्शन समारोह में वह बिना किसी बाधा के कर सकते थे।

(22) प्रत्येक ऐसा भोगता जो अपने परिवार या समुदाय का मुखिया था, उसके अधिकारो को मान्यता दी गई। उसका उत्तरदायित्व था कि वह अपने गाव का दैनिक प्रशासन बुजुर्गों की राय से चलाय। वह आपसी विवाद शान्तिपूर्ण ढग से निपटायेगा, प्रत्येक व्यक्ति या परिवार को गाव की आबादी मे रिहाइशी भूमि आवटन करेगा और सेती करने योग्य पर्याप्त भूमि बतायेगा। एक बार मेती या रिहाइशी भूमि देने के बाद मे वह इसे नही बदलेगा। वह प्रत्येक घर से चूल्हा कर (धुआ), हल हलासिया (बेगार), खेल लगाई (कुए की मरम्मत), घरत और मापा लेने का अधिकारी होगा।

(23) भोगता प्रत्येक दिवाली पर प्रति घर के पीछे एक रुपया राव या उनके प्रतिनिधि को कर का भेंट करेगा।

राव मेहतावसिंह (सन् 1890 1903 ई) के समय यह कर सात रुपये प्रतिघर कर दिया गया था। इसका प्रजा ने विरोध किया। राव जीवराजसिंह के (1903–1925ई) के समय इसे बढाकर ग्यारह रुपये कर दिया गया था। इसके विपरीत प्रभाव पड़े, प्रजा इतना कर चुकाने मे असमर्थ थी, अनेक लोग अपने गाव छोड़ कर चले गए।

(24) जिन विवादो को भोगता नही सुलझा सकते थे, वह उसी जाति की पचायत को सौंपे जायें। फिर भी अगर पेचीदे मामले नहीं सुलझ सकें तो इन्हें पडोस के गावो के वरिष्ठ जनों को बुलाकर सुलझाया जाये। प्रत्येक गाव के भोगते को पूर्ण राजस्व और न्यायिक अधिकार थे, वह उनका उपयोग जन हित मे कर सकेगा।

(25) राज्याभिषेक के समय नए राव, राव केलण की पाग धारण करेंगे, अन्य पाग या साफा मान्य नही होगा। राजगद्दी पर बैठने के बाद मे नए राव को उनके भाई बन्धु (केवल भाटी) उसी वरिष्ठता के क्रम में नजरें पश करेंगे जिस क्रम मे वह उनके स्थान पर उत्तराधिकारी बनने के अधिकारी थे। उनके पश्चात् अन्य भाटी, अन्य राजपूत, खान, प्रधान, अधिकारी, अपनी सामन्ती वरिष्टता के अनुसार नजरें भेंट करेंगे। पुरोहित और चारणो से नजर नहीं ली जायगी। लेकिन उस समय के दरबार में उपस्थित सब लोग निछरावल अवश्य करेंगे।

(26) प्रत्येक दशहरे के त्योहार पर दरबार का आयोजन किया जायेगा। निवर्तमान राव के पुत्र दिवगत राव के पुत्रो के बाद मे दरबार मे स्थान पायेंगे।

(27) दशहरे के दिन एक बडी परात मे चूरमा बनाया जायेगा। दशहरे के राजकीय जलूस के प्रारम्भ होने से पहले प्रत्येक केलण भाटी को इस परात (थाल) मे से

पूगल के राव के साथ चूरमे का एक ग्रास लेने का अधिकार होगा। अगर किसी केलण भाटी को किसी अन्य केलण भाटी की जात-पात, नानी-कानी या आचरण मे कोई शंका हो तो वह ऐसे भाटी द्वारा थाल में से ग्रास लेने पर एतराज करेगा और उस शका का समाधान वहीं करना पडेगा। शका सही पाये जाने पर आरोपित भाटी असल केलण भाटी की श्रेणी से गिर जायेगा और थाल मे से ग्रास लेने का उसका अधिकार स्वत समाप्त हो जायेगा। ऐसे ही चूरमे के थाल का आयोजन रतनू चारणो के लिए किया जायेगा। वह अमरपुरा भाटियान गाव के चारण ठाकुर के साथ थाल मे से ग्रास लेंगे। किसी को एतराज होने पर शका का समाधान भाटियो की तरह होगा।

(28) प्रत्येक धार्मिक और राजकीय समारोह मे पूगल के राव, राव केलण की पाग धारण करेंगे और अपने दाहिने हाथ मे उनका खाडा (तलवार) रखेंगे।

(29) धाडक पूगल के पैतृक अधिकार से मोहता (दीवान) रहेंगे और उनमे से वरिष्ठ धाडक, चौधरी के पद पर रहेंगे। यानी दीवान का पद पिता के बाद मे उसके पुत्र को मिलेगा, चौधरी के पद पर अन्य वरिष्ठ धाडक, आयु या अनुभव के अनुसार होगा।

(30) राव केलण द्वारा मुलतान से लाये गए बजाज खत्रियो के पास मोदीखाना रहेगा।

(31) देवी सागियाजी और सालिगराम की दैनिक पूजा का कार्य पुरोहित करेंगे। प्रत्येक पुरोहित के घर की बारी बाधकर उन्हे यह कार्य सौंपा जायेगा।

(32) सन् 1418 ई. मे राव केलण की राव चून्डा पर विजय के उपलक्ष मे महिषासुरमर्दिनी की मूर्ति की स्थापना पूगल के गढ मे उन्होंने कराई। इसकी पूजा अर्चना का कार्य सेवगो को सौंपा गया।

(33) कमाल पीर पेखणा राव केलण को पूगल आने का निमन्त्रण देने बीकमपुर गया था, उसके वंशजों को पूरा मान-सम्मान दिया जायेगा। प्रत्येक दशहरे के उत्सव मे पेखणा 'जस जल्लो' का गान करेगा, इसे राष्ट्रीय गान के समान आदर दिया जायेगा।

(34) प्रत्येक दशहरे के समारोह के समापन पर चारण भाटियो के पूर्वजों की यश गाथा और वीर गाथा का गुणगान करेंगे। इसके पश्चात् राव चारणो को सबसे पहले अफीम की मनुहार करेंगे।

(35) इसके पश्चात् सिहराव भाटियो के प्रमुख राव को अफीम की मनुहार करेंगे और बदले मे राव उन्हे मनुहार करेंगे। इनके बाद मे राव उस समारोह मे आए हुए सभी लोगों को अफीम की मनुहार करेंगे।

इस प्रकार राव केलण ने प्रत्येक आयोजन और कार्य के लिए अपने वंशजो द्वारा पालना हेतु निर्देश दिए। सन् 1954 ई तक इनकी पालना की गई, इसके पश्चात् पूगल का विलय राजस्थान राज्य मे होने से इनकी मूल उपयोगिता ही समाप्त हो गई।

इन आदेशों मे दो बातें प्रमुख हैं। भाटियो मे अब अछूत समझी जाने वाली जातियो के प्रति कोई छुआछूत का भाव नही था। नायक, चमार, मेहतर, सबको बराबर का स्थान दिया गया था, धार्मिक कार्यों मे उन्होंने उनको अपने बराबर समझा। सेवक कहे जाने वाले

वर्ग का विशेष ध्यान रखकर उन्हें प्रतिष्ठित कार्य सौंपे गए। साम्प्रदायिक एकता और सद्भावना का इसमे सुन्दर उदाहरण भारत म अन्यत्र कही नही मिलेगा। पूगल एक मुस्लिम बाहुल्य राज्य था, इसलिए मुसलमान प्रजा को उचित सत्कार दिया गया और श्रेष्ठ दायित्व सौंपा गया, ताकि उनका प्रत्येक कार्य मे सहयोग प्राप्त हो सके। पूगल के पडोस म मुलतान मे शक्तिशाली मुसलमान शासक थे, इसलिए अगर पूगल की मुसलमान जनता क्षुब्ध रहती तो उन्हें हस्तक्षेप करने का बहाना मिलता। राव केलण ने सारा आवश्यक कार्य ही उन्हें सौंप दिया, तब शिकायत क्यों और किससे करे? पूगल क्षेत्र म हिन्दुओ की सख्या कम थी, और राजपूत और भी कम थे। इसलिए सेना म बहुत बडा भाग मुसलमान सैनिको का होता था, जिन्हें हिन्दू और मुसलमान, दोनो के विरुद्ध युद्ध करना पडता था। इसलिए मुसलमानो को उचित सम्मान देकर ही उनसे निष्ठा और स्वामिभक्ति की अपेक्षा की जा सकती थी। इसी कारण से पूर्वजो ने भाटियो के लिए सूअर का शिकार करना निषेध किया था।

राव केलण के विरुद्ध अनेक भ्रान्तियां फैलाई गई या आश्रित इतिहासकारो से लिखवाई गई। यह इसलिए किया गया कि भाटियो को नीचा दिखाने से अमुक वश ऊचा उठेगा। यह गणित गलत थी। वीरता ऊचे से ऊचा होने मे है, परन्तु इसके लिए परिश्रम करना पडता है।

उनके अनुसार राव केलण ने सोढी राणी से विवाह करने का वायदा किया था। दोनो की आयु 55-60 वर्षों के लगभग थी। फिर राव को शारीरिक सुख की क्या कमी थी? जिस व्यक्ति ने अपने निर्देशो म पासवान तक नही रखने का कहा, वह ऐसा निन्दनीय कार्य कैसे कर सकता था?

दहियो से देरावर विजय म सहसमल और पाहू भाटी मारे गए थे। फिर सोम के पुत्रो के अधिकार मे देरावर कब थी और इसे छल कपट से लेने की नौबत कहां आई? राव केलण चाहते तो सोम के पुत्रो से जोर जबरदस्ती करके देरावर ले सकते थे। परन्तु उनके पास देरावर कहा थी और अपनो के साथ छल करने की आवश्यकता कहा थी?

राव केलण ने राव चून्डा को उमडते हुए युद्ध मे ललकार कर मारा था। भाटियो की बेटी उन्हें ब्याहने की बात इन इतिहासकारों की मात्र एक बनावटी बात थी। राव चून्डा इतने मूर्ख नहीं थे कि वह नागौर मे ही किसी ऐसे षड्यन्त्र के चक्र मे आ जाते। क्या उन्हें मालूम नही था कि नागौर पर आक्रमण करने की तैयारियां कई दिनो से की जा रही थी और विरोधी सेनाए नागौर की तरफ अग्रसर हो रही थी? उन्हें यह भी मालूम था कि राव केलण उन्हें मारने के अपने प्रण को पूरा करने के लिए इन सेनाओ को लेकर आए थे और वही उनका नेतृत्व कर रहे थे। भाटियों द्वारा राव चून्डा को युद्ध मे मारे जाने वाली घटना बाद के राठोड़ों के गले नही उतरी। उन्हें विश्वास करने में कठिनाई आ रही थी कि जोधपुर और बीकानेर राज्यों के भावी सस्थापको के पूर्वज को भाटियो ने कैसे मार दिया? यह तो युद्ध था, दोनो मे से कोई भी मारा जा सकता था। बेटी देने वाली हल्की घटना का आविष्कार करके राव केलण द्वारा चून्डा की मौत को नहीं मिटाया जा सकता। तात्पर्य यह था कि राव चून्डा को धोखा देकर मारा गया था, वरना वह इतने वीर थे कि राव केलण से मारे जाने वाले नहीं थे। तो क्या उन्हें अमर रखना था? और अगर वह अमर रहते तो उनके अन्य वशजों की राज्यों को भोगने की बारी कब और कैसे आती? सरल सी बात थी कि युद्ध मे

राव केलण ने राव चून्डा को मारकर राजकुमार शार्दूल और राव रणकदेव की मृत्यु का बदला लिया।

इस सबके ऊपर तुर्रा यह कि यह तो मुलतान और दिल्ली के शासको की सेनाओ ने राव चून्डा को परास्त किया, भाटियो की क्या मजाल थी कि उन्हे हराते ? सत्य यह था कि इन सहायक सेनाओ के नागौर पहुचने से पहले ही भाटियो और साखलो की सेनाओ ने राव चून्डा को मार लिया था। इतिहास साक्षी है कि इस युद्ध मे मुसलमान सेना नागौर तक पहुंची ही नही थी। राव केलण का ध्येय राव चून्डा को मारने का था, न कि नागौर पर अधिकार करने का। इसीलिए कान्हा राठौड राव बने, वरना वह किसी भाटी को राव बना सकते थे। राठौडो ने फिर शाबासी ली कि उनकी और भाटियो की संयुक्त सेना ने मुसलमान सेना को नागौर से बाहर खदेडा। जब वह सेनाए नागौर पहुची ही नही तो उन्हे बाहर खदेडने का प्रश्न ही कहा उठता था ? यह सेनाए राव केलण की सहायतार्थ आई थी और उनके कहने से वापिस हो गई। इसमे राठौडो की बात बनाने के सिवाय कोई भूमिका नही थी।

एक लाछन यह भी है कि राव केलण ने सुलतान खिजर खा के साथ अपनी मित्रता का लाभ उठाया। इसमे दोष क्या था ? राठौडो ने तो मुगलो की सात पीढियों से मित्रता निभाई और क्या उन्होने कोई लाभ नही उठाया ? भाटियो की बीस वर्ष की मित्रता से ईर्ष्या क्यो ? कोई यह तो हिसाब लगाए कि कितने राठौड शासक अपने राज्य से बाहर मरे और किसलिए ? केवल मित्रता निभाने के लिए ? अगर एक भाटी शासक ने कुछ रेगिस्तान का क्षेत्र दबा लिया, कोई बात नही हुई, परन्तु मित्रता का नाजायज लाभ उठाकर राव चून्डा को कैसे मार लिया, इसलिए उनके दृष्टिकोण से यह मित्रता का गलत लाभ था।

राव केलण की प्रशसा करनी होगी कि पहले उन्होने तणु और हमीरोत को भटनेर क्षेत्र मे बसाया और बाद मे जावेदा राणी के पुत्रो, खुमाण और थीरा, को वहा बसाया। यह उनकी दयालुता और मानवीय दृष्टिकोण था कि राव रणकदेव की और अपनी मुसलमान सन्तानो को यथास्थान सम्मानपूर्वक बसाया। भारतवर्ष के इतिहास मे सैकडो हजारो उदाहरण होगे कि राजपूत राजकुमारियो और हिन्दू स्त्रियो को मुसलमानो ने तलवार के जोर से ब्याहा या अपहरण किया। उनकी सन्तानें अनाथो की तरह भीड मे विलय होकर इतिहास से लुप्त हो गईं। राजपूत राजाओ मे राव केलण का पहला और आखिरी उदाहरण था कि उन्होने तलवार के बल से एक मुसलमान जाम शासक को अपनी पुत्री का विवाह उनसे करने के लिए बाध्य किया। परन्तु वह इतने उदार थे कि मुस्लिम पत्नी से उत्पन्न अपनी सन्तानो को उन्होने तिरस्कारा नहीं, उन्हे इतिहास से लुप्त नही होने दिया। भट्टी मुसलमान इतिहास मे बार-बार उभरे और इन्होने भटनेर की रक्षा के लिए सन् 1805 ई. तक अनेक बार अपने प्राण दिए। अन्य अनेक राजपूत जातियो ने अपनी बहनें और बेटियें मुसलमानो को अवश्य दी, एक बार नही अनेक बार दी। आज उनकी सन्तानों की पहचान ही नही है। उनके दोहिते, दोहितियो और भाणजे, भाणजियो का कही अस्तित्व ही नही है। राव केलण के पौत्र, भट्टी मुसलमान, आज भी फल-फूल रहे हैं। हमे हमारे इन भाइयों पर गर्व है कि यह ऐतिहासिक अनाथ नही बने, इन्होने अपनी पहचान खोई नही।

श्रीकृष्ण की तरह राव केलण का व्यक्तित्व विविधता लिए हुए था। जिस कोण से देखें, भिन्न लगता है। एक तरफ अट्ठारह बीस वर्ष का सन्यास, धैर्य, नियति के साथ समझौता और इतने लम्बे समय तक आशावान रहना कि कभी तो उनकी तकदीर पलटेगी। उधर पिता की आज्ञा की चुपचाप पालना करना और छोटे भाई से स्नेह। इधर सोढी राणी को दिए वचनों की जी जान से पालना करना, उधर जावेदा से विवाह, जाम इस्माइल के राज्य में हस्तक्षेप। इन सब बातों को जिस निगाह से देखें वैसे ही गुण दोष मिलेंगे। लेकिन उन्होंने अपना लक्ष्य हमेशा प्राप्त किया।

केलण अच्छा भी है, बुरा भी है। झांसेबाज है, चतुर है, चपल है, चालाक है, लेकिन साथ में वह वचनबद्ध है, आज्ञाकारी है, स्नेहमय है, धैर्यवान है, विश्वासपात्र मित्र भी है। राव केलण के निर्देश श्रीकृष्ण की गीता जैसे उपयोगी हैं, भारत के बीसवी सदी के आधुनिक सविधान की तरह हैं। केलण पूर्ण पुरुष थे, देखने वाले की जैसी बुद्धि और श्रद्धा होगी, वैसे ही वह उन्हें पहचानेगा।

पाठको के लिए यहा स्थानो की दूरिया बताना आवश्यक है ताकि वह राव केलण क राज्य के विस्तार को समझ सकें।

पूगल से मरोठ 50 मील, मरोठ से बहावलपुर 40 मील
पूगल से देरावर 50 मील, देरावर से बहावलपुर 50 मील
पूगल से मुलतान 140 मील, देरावर से मरोठ 65 मील
पूगल से डेरा गाजी खा 160 मील, डेरा गाजी खा से मुलतान 40 मील
पूगल से मिथानकोट 140 मील, मिथानकोट से डेरा गाजीखा 90 मील
मुलतान से बहावलपुर 60 मील, डेरा गाजीखा से डेरा इस्माइल खा 130 मील
मुलतान से केहरोर 50 मील, पूगल से डेरा गाजी खा वाया मिथानकोट 230 मील
पूगल से नागौर 120 मील, पूगल से भटनेर 160 मील।

पुस्तक के साथ मे दिए गए मानचित्र मे उपरोक्त सारे स्थान दर्शाये गए हैं।

एक अनुत्तरित प्रश्न यह है कि राव केलण न जावेदा और उसके दोनों पुत्रो को भटनेर मे क्यो बसाया, वह उन्हे डेरा गाजी खा या डेरा इस्माइल खा म बसा सकते थे? भटनेर भाटियो का पैतृक स्थान था, राव केलण की मुसलमान सन्तानो ने इसे अपना समझा, और सन् 1805 ई. तक जी जान से इसकी रक्षा की। डेरा गाजी खा इनके नाना का राज्य था, इसलिए अन्य मुसलमान इन्हे वहा नही बसने देते, या यह बलोचों और लगाओं के बहकावे मे आकर पूगल पर अधिकार करने का प्रयास करते। भटनेर मे ऐसा वातावरण बनने की सम्भावना नही थी। इसके अलावा मुस्लिम बाहुल्य प्रदेश में भाटी मुसलमानों की अलग औकात नही बनती, उन्हे नीची निगाहों से देखा जाता। भटनेर मे वह अपने पैतृक अधिकार स्वरूप रह रहे थे, इसलिए उन्होंने अपनी पहचान नहीं खोई। बेगम जावेदा को भी अभिमान रहा कि वह अपने भाटी पति का दिया हुआ राज्य भोग रही थी, न कि अपने पिता के टुकड़ो पर पल रही थी। मुलतान के पश्चिमी क्षेत्र म यह सदा के लिए लोप हो जाते और कष्ट भी उठाते, क्योकि वह बाहरी आक्रमणो और आन्तरिक उथल पुथल का

मुख्य केन्द्र था। राव केलण का यह निर्णय बहुत सोच समझ कर लिया गया था और इसमें उनके अनुभव की दूरदर्शिता थी।

कमाल पीर पेमणा पूगल से दिवंगत राव रणकदेव की सोढ़ी राणी का संदेशा लेकर केलण को बुलाने बीकमपुर गया था। केलण पूगल पधारे, सोढ़ी राणी के गोद गए और दिवंगत राव रणकदेव के दत्तक पुत्र के रूप में पूगल के राव घोषित हुए। राव केलण ने राज्याभिषेक के पश्चात् प्रसन्न होकर कमाल पीर से मुंहमांगा इनाम मांगने के लिए कहा। कमाल पीर कम नहीं था, बोल पड़ा

आधी पूगल पेमणों, आधी रणकदेव,
आधो गढ़ रो कांगरो, आधी माय जवात,
धणी केलण, राणी पेमणो, कांरी पूछे तात।

राव चाचगदेव
सन् 1430-1448 ई.

राव केलण की सन् 1430 ई मे हुई मृत्यु के पश्चात् किस राव बनाया गया, इस विषय मे इतिहासकारो में कुछ मतभेद है। कुछ का मत है कि ज्येष्ठ राजकुमार चाचगदेव के स्थान पर राव केलण ने अपने जीवनकाल मे अपने दूसरे पुत्र कुमार रणमल का मरोठ मे पूगल के राव के पद पर बैठा दिया था।

राव केलण ने अजय दहिया से देरावर लेने के बाद मे मरोठ पर अधिकार करने का निश्चय किया था। यह कठिन कार्य था। इस अभियान पर प्रस्थान करने से पहले उन्होंने कुमार रणमल का पूगल का प्रशासक नियुक्त किया। इस प्रकार पूगल की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध करके उन्होंने बीकमपाल चौहान के सहयोग से मरोठ पर अधिकार कर लिया। इसके बाद मे वह एक के बाद एक करके, नानककोट, बीजनोत, केहुरार, भटनेर आदि किलो पर अधिकार करते गए। इससे सिन्ध नदी की घाटी के बडे प्रदेश पर और हिसार सिरसा तक इनका प्रभाव हो गया। इनकी इन अभियानो पर पूगल से अनुपस्थिति के समय कुमार रणमल ने वहां की सुरक्षा और प्रशासन का बहुत अच्छा कार्य किया। इससे प्रसन्न होकर राव केलण ने कुमार रणमल को मरोठ की जागीर प्रदान की। यह किला और जागीर चुनिंदा प्रतिष्ठानों मे थी।

नैनसी के अनुसार राव केलण की मृत्यु के पश्चात् उनके दूसरे पुत्र कुमार रणमल मरोठ या बीकमपुर म पूगल के राव बने। यह सही प्रतीत नहीं होता। पूगल के राव राजगद्दी पर केवल पूगल स्थित गजनी के तख्त पर खानो, प्रधानों, प्रमुखों की राय स बैठ सकते थे। बीकमपुर म रणमल के राव घोषित किये जाने का प्रश्न इसलिए नही उठता क्योकि बाद मे राव चाचगदेव ने ही इन्हे मरोठ के बदले मे बीकमपुर की जागीर दी थी। इसस पहले बीकमपुर रणमल के पास नही था।

नयमल के अनुसार राव केलण ने अपने जीवनकाल म ही कुमार रणमल को मरोठ म राजतिलक करके पूरे पूगल राज्य का शासक बना दिया था। यह उनके लिए सम्भव नहीं था। किसी को राव बनाने से पहले खानो, प्रधानो और प्रमुखो की राय लेनी आवश्यक थी, दूसरे, पूगल का राव गजनी के तख्त पर बैठने से ही भाटियो को मान्य होता था। अगर राव केलण की इच्छा कुमार रणमल को राव बनाने की होती तो वह इसकी सार्वजनिक घोषणा करके पूगल में इनका राज्याभिषेक कर सकते थे। अगर रायल केहर द्वारा केलण को राजगद्दी से वंचित किए जाने पर इन्होंने विरोध नहीं किया, तो क्या राजकुमार चाचगदेव राव केलण की इच्छा का विरोध करते ? शायद वह भी यह जानकर विरोध नहीं करते

कि इनके परिवार मे ऐसी परम्परा रही थी। इसके अलावा राव केलण इतने वृद्ध या अपाहिज नही हो गये थे कि अपने जीवनकाल म कुमार रणमल को राव बनाने की आवश्यकता उन्होने समझी हो। उन्हें किसका भय था कि वह पूगल के बजाय मरोठ म रणमल को राव बनाने की रस्म पूरी करते ? वैस भाटियो म शासक को अपने जीवनकाल मे अपना उत्तराधिकारी घोषित करने का अधिकार रहा था, लेकिन किसी शासक के जीवित रहते हुए उनके स्थान पर दूसरे को स्वेच्छा से राजगद्दी पर बैठाने का अधिकार उन्ह कभी नही रहा।

कर्नल टाड के अनुसार रणमल का बीकमपुर आने के दो माह पश्चात् सन्निपातग्रस्त होने से देहान्त हो गया था। यह बात मानने योग्य है।

राव केलण की मृत्यु के तुरन्त बाद, सन् 1430 ई म, चाचगदेव पूगल की राजगद्दी पर बैठे। जैसा कि प्रत्येक शक्तिशाली और योग्य शासक की अकस्मात् मृत्यु के पश्चात् एक अनिश्चितता और खालीपन का दौर आता है, वैसा ही पूगल म भी हुआ। कुछ गडबड होनी स्वाभाविक थी। लेकिन समझदार और अनुभवी प्रमुखो ने चाचगदेव को राव बनाकर स्थिति को बिगडने नही दिया। पूगल के प्रशासक और मरोठ के जागीरदार होने से रणमल की राव बनने की महत्वाकाक्षा अवश्य रही होगी। राव चाचगदेव ने राव बनने के कुछ समय पश्चात् मरोठ को अपनी अस्थायी राजधानी बनाया ताकि वह रणमल को नियन्त्रण म रख सकें और साथ म मुलतान के सम्भावित आक्रमण से पश्चिमी सीमा की सुरक्षा कर सकें, यह कनल टाड के भी विचार हैं। उनके लिए ऐसा करना इसलिए भी आवश्यक था कि कही मुलतान के शासक जो शक्तिशाली राव केलण का विरोध करने मे असमर्थ रहे थे, अब उनकी मृत्यु का लाभ उठाकर दुस्साहस नही कर बैठें, या आन्तरिक कलह का लाभ उठाने के उद्देश्य से रणमल की सहायता करने की सोच लें। वैसे मुलतान के शासक उनके इतने नजदीक मरोठ म भाटियो की राजधानी होने से प्रसन्न नही थे।

पूगल के राव चाचगदेव, सन् 1430 1448 ई, के समकालीन शासक निम्न थे

जैसलमेर	राठौड मन्डोर मे	दिल्ली
रावल वरसी सन् 1427 1448 ई	1 राव रिडमल, सन् 1427-1438 ई	1 सुलतान मुबारक शाह, सन् 1421-1434 ई
	2 मन्डोर पर मेवाड का अधिकार, सन् 1438 1453 ई	2 मुहम्मद शाह, सन् 1434-1444 ई
	3 राव जोधा, (जोधपुर) सन् 1453 1488 ई	3 अल्लाउद्दीन आलमशाह, सन् 1444-1451 ई

चूकि राव चाचगदेव ने राव बनने के बाद मे अपनी अस्थाई राजधानी सामरिक और आर्थिक कारणा स मरोठ म रखी इसलिए नैनसी और नथमल ने निष्कर्ष निकाला कि रणमल, जिनकी मरोठ की जागीर थी, को राव केलण ने राव बनाया था। अगर वह राव चाचगदेव के अधीन नही होते तो उन्होंने उन्हें मरोठ मे अपनी राजधानी कैसे स्थापित करने दी ?

राव केलण ने अपने समय मे ही पुत्रो को पैतृक जागीरें प्रदान कर दी थी, इसलिए उनके बाद में यह किसी विवाद का कारण नही बना। राव केलण के पुत्र अखा को राव रिडमल के पुत्र नायू (उनका भानजा) ने मार दिया था। लेकिन जब अखा के पुत्रो ने नायू से बदला लेने की सोची तो राव रिडमल ने बीच बचाव किया, अखा के पुत्रो को अपने पुत्र नायू को मारने से रोका। अखा के पुत्र शेखा ने शेखासर गाव बसाया और वहा तालाब भी खुदवाया। अखा के वशज शेखसरिया केलण भाटी कहलाए।

राव केलण के पाचवें पुत्र कलकरण तणु के पैतृक जागीरदार थे, यह सन् 1478 मे राव शेखा के समय, राव बीका राठौड से युद्ध करते हुए कोडमदेसर के दूसरे युद्ध मे मारे गए थे। उस समय इनकी आयु अस्सी वर्षों के लगभग थी। कुछ इतिहासकारो का मत है कि कलकरण राव केलण के पांचवें पुत्र नही थे, यह उनके पाचवें छोटे भाई थे। रावल केहर के पाचवे पुत्र का नाम भी कलकरण था। लेकिन रावल केहर का देहान्त सन् 1396 ई मे हुआ था, उनके कुल बारह पुत्र थे। इसलिए सन् 1478 ई मे वीरगति पाने वाले कलकरण का रावल केहर के पाचवें पुत्र होना सम्भव नही था। यह वीर कलकरण राव केलण के पाचवें पुत्र थे।

बहलोल लोदी ने सन् 1451 से 1489 ई तक दिल्ली पर शासन किया। यह लोदी वश के सस्थापक थे, इस वश ने सन् 1451 से 1526 ई तक दिल्ली पर शासन किया। यह लोदी जाति की एक उप-जाति शाहु खेल के थे। इनके दादा मलिक बहराम सुलतान फिरोज शाह तुगलक के शासनकाल मे बाहर से मुलतान आए थे और वहा के सूबेदार मलिक मर्दान दौलत के पास सेवा करने लगे थे। मलिक बहराम के पाच पुत्रो म से केवल दो पुत्र, मलिक सुलतान शाह और मलिक काला, प्रसिद्ध हुए और ख्याति अर्जित की। बहलोल के पिता मलिक काला ने जसरथ खोखर को पराजित करके पजाब मे अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया था। मलिक काला के बडे भाई सुलतान शाह ने सन् 1405 ई मे पाकपटन के पास, मुलतान के शासक सैयद खिजर खा के शत्रु मल्लू इकबाल को मारकर उनका विश्वास प्राप्त किया। सुलतान सैयद खिजर खा ने सन् 1419 ई मे सुलतान शाह को 'इस्लाम खा' का खिताब देकर सरहिन्द का सूबेदार बनाया। इस प्रकार इन दोनो भाइयो ने सैयदो के जानी दुश्मनो, जसरथ खोखर को पराजित करके और मल्लू इकबाल को मारकर इनका विश्वास पाया। काला लोदी को सुलतान ने दाउराला का सूबेदार नियुक्त किया। सुलतान खिजर खा के समय इन्हे हाथियो के बेडे का प्रभारी भी रखा गया था। धीरे धीरे मलिक काला लोदी अपनी योग्यता से इतने शक्तिशाली हो गए थे कि अन्तिम सैयद सुलतान आलम शाह (सन् 1444-1451 ई) से इन्होंने अपने पुत्र बहलोल लोदी के लिए बाजवाडा और लाहौर के परगने प्राप्त किए।

अपने पिता मलिक बहराम के समय और उनके बाद मे मुलतान मे लम्बे प्रवास के कारण काला लोदी की लगाओं से अच्छी खासी मित्रता हो गई थी। काला लोदी को लगाओ ने शिकायत की कि पूगल के भाटियों ने न केवल उनसे भूमि छीन कर उस पर अधिकार कर रखा था, उन्होंने दिल्ली के सुलतान की भूमि पर भी अधिकार जमा रखा था। इसलिए वह अपने पद का उपयोग करके भाटियों से भूमि वापिस लेने मे उनकी सहायता करें। उसने

अमीर खा लगा को अधिकृत किया कि वह स्थानीय शासको और सूबेदारो से आवश्यकतानुसार सेना की सहायता लेकर भाटियो पर आक्रमण करे और उनसे लगाओ और मुलतान की भूमि जीतकर उनके स्वामियों को लौटाने का प्रबन्ध करे। कर्नल टाड के अनुसार ज्योही राव चाचगदेव को मरोठ मे इस प्रस्तावित योजना की सूचना मिली, त्योही वह अपनी सेना सहित सतलज नदी पार करके मेहरोर गये और वहा सुरक्षा के उचित प्रबन्ध किये। वह वहा से व्यास नदी पार करके मुलतान के समीप पहुच गये। उनका इस प्रकार पहल करने का उद्देश्य यह था कि अगर युद्ध करना ही था तो शत्रु के क्षेत्र मे लडा जाये, जिससे स्वय के राज्य की प्रजा की सम्पत्ति, फसल आदि नही उजडे। इससे शत्रु सेना पर उनकी जनता का विपरीत असर पडेगा और राव की सेना का शत्रु की भूमि पर लडने से उत्साह बना रहेगा। इस प्रकार राव चाचगदेव युद्ध की विभीषिका अपने राज्य से मुलतान क्षेत्र मे ले गए।

कर्नल टाड के अनुसार राव चाचगदेव चौदह हजार पैदल और सत्रह हजार घुडसवार सेना को गतिशील करके मुलतान के विरुद्ध डट गये। इनके लिए यह शक्ति प्रदर्शन करना इसलिए भी आवश्यक था क्योकि राव केलण की मृत्यु के बाद यह पूगल का पहला बडा सैनिक अभियान था और शत्रु यह नही समझे कि पूगल की सैन्य शक्ति या नेतृत्व म राव केलण के बाद कोई कमी आ गई। इस युद्ध मे विजयी होना भाटियो के लिए अति आवश्यक था। बडा घमासान युद्ध हुआ, अनेक योद्धा मारे गए। भाटियो के लिए यह जीवन मरण का प्रश्न था, राव केलण के बाद उनके लिए यह परीक्षा की घडी थी। अगर उनकी पराजय होती तो राव रणकदेव और केलण के पचास वर्षों के अथक प्रयासो पर पानी फिर जाता। सन् 1380 ई मे, केवल पचास वर्ष पहले, स्थापित हुए राज्य से उन्हे वचित होना पडता। उनकी पराजय के परिणाम बहुत भयानक होते। इसलिए भाटी यह युद्ध जीतन के उद्देश्य स लडे, इस विजय के बाद मुलतान के लिए इनसे टक्कर लेनी कठिन होगी। देवी सागियाजी की कृपा से विजय राव चाचगदेव की हुई। अमीर खां लगा की निर्णायक पराजय हुई। दिल्ली की शाही सेनाओ को मुह की खानी पडी, उन्हे बहुत नीचा देखना पडा। इस प्रकार काला लोदी और अमीर खा के विरुद्ध राव चाचगदेव द्वारा लडे गए पहले युद्ध की विजयश्री भाटियो को मिली। विजयी राव चाचगदेव मरोठ लौट आए।

अमीर खा लगा ने पहली पराजय का बदला लेने और अपने सैनिको के गिरे हुए मनोबल को उबारने के लिए 29,000 घुडसवारो की एक सेना का सगठन करके भाटियो पर आक्रमण करने के लिए उसे गतिशील किया। राव चाचगदेव अपने अनुभवो से जानते थे कि उन पर अगला बड़ा आक्रमण कुछ ही दिनो बाद म होने वाला था। इसलिए उन्होने जोइया, पाहू, जैतूग भाटियो और स्थानीय मुसलमानो की सेना सगठित की। सम्भावित आक्रमण के विरुद्ध इनकी बीस हजार घुडसवार सेना तैयार थी। क्योकि मुलतान की सेना को अपनी प्रतिष्ठा को उबारना था इसलिए आक्रमण करने की जल्दबाजी उन्होने की। भाटी सेना अपनी सामरिक सुविधानुसार मोर्चे पर डटी हुई थी। भाटियो पर बडा करारा प्रहार हुआ लेकिन वह सम्भले हुए थे, उन्होंने प्रहार को सयम और धैर्य से झेला। भाटी एक लक्ष्य के लिए लड रहे थे, मुलतान की सेना का लक्ष्य केवल पहली पराजय का बदला लेने का था। जब मुलतान की सेना मोर्चे में डटी हुई भाटी सेना से टक्कर लेकर कुछ हतोत्साहित

हुई, तब राव चाचगदेव की केहरोर की आरक्षित सेना ने उन पर अचानक धावा बोल दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण के आगे मुलतान और सुलतान की सेना के पाव उखड गये। काला लोदी के साथ यह दूसरा निर्णायक युद्ध दुनियापुर नगर के समीप लडा गया था। दुनियापुर मुलतान जिले की लोधरान तहसील मे केहरोर के पास मुलतान की तरफ उत्तर मे है। दुर्भाग्यवश अमीर ना लगा इस युद्ध मे मारा गया। काला लोदी हार कर मुलतान की ओर पीछे हट गये। राव चाचगदेव ने फुर्ती से दुनियापुर के किले पर अधिकार किया, सुरक्षा के प्रबन्ध किए और अगले सम्भावित आक्रमण से निपटने के लिए तैयार हो गए। उन्होंने दुनियापुर के किले और नगर की सुरक्षा का दायित्व अपने ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बरसल को सौंपा और स्वय पूगल प्रस्थान कर गए।

कर्नल टाड के अनुसार इस युद्ध मे 740 भाटी योद्धाओ ने वीरगति पाई। वापिस मरोठ(पूगल) लौटने से पहले उन्होने थामा और असनीकोट मे काफी सेना तैनात की और मुलतान की सीमा से लगने वाले क्षेत्र मे चौकसी रखने और शत्रु का भेद लेने के लिए विश्वासपात्र आदमी रखे। थामा और असनीकोट व्यास नदी के पश्चिम मे मुलतान के पास थे। इस विजय से भाटियो ने लगाओ के काफी बडे क्षेत्र पर अधिकार कर लिया और मुलतान का भी बडा भू भाग उनके पास आ गया।

जब विजयी राव चाचगदेव मरोठ होकर पूगल पहुचे तो उनका अभूतपूर्व स्वागत हुआ। कई दिनो तक उत्सव मनाए गए। राव केलण के समय मे भी इतने बडे निर्णायक युद्ध नहीं लडे गए थे और न ही युद्धो म इतनी सख्या मे पैदल और घुडसवार सेना ने भाग लिया था। राव चाचगदेव दोनो युद्धो मे वीरगति पाए योद्धाओ को कैसे भूलते, उन्होंने उनके परिवारो के भरण-पोषण का प्रबन्ध किया, जागीरें दी और तत्काल आर्थिक सहायता सुलभ कराई।

कर्नल टाड के अनुसार इन दोनो मुठभेडो म, प्रत्येक मे, दोनो ओर के मिलाकर लगभग 50,000 घुडसवारो ने भाग लिया। यह सख्या बढाचढा कर दर्शायी गई है ताकि युद्धो का महत्व बढे। इतनी बडी घुडसवार सेना के लिए अनेक व्यवहारिक कठिनाइयो का समाधान उस समय सम्भव नही था, जैसे, सेना का प्रशासन, आवास, घास, दाना, रसद, हथियार, पानी सचालन सम्पर्क आदि ऐसे महत्वपूर्ण अग थे जिनका समाधान दोनो पक्षो के बूते के बाहर था। कहते हैं कि हल्दीघाटी के युद्ध मे दोनो पक्षो के लगभग तीन हजार घोडे थे, तब केहरोर और दुनियापुर के युद्धो मे पचास हजार घोडों का होना सही प्रतीत नही होता।

इन युद्धो के पश्चात् मलिक काला लोदी ने भाटियो की वीरता, युद्ध कौशल, सगठन शक्ति, नियन्त्रण, आक्रमण क्षमता, आचार, विचार और चपलता की सराहा, क्योकि वह स्वय माने हुए योद्धा थे और वीरो के प्रशसक थे। इससे उनकी शत्रुता पिघल कर मित्रता म अवश्य बदल रही थी।

इन अभूतपूर्व विजयो से प्रभावित और प्रसन्न होकर सेता कबीले के प्रमुख सूमरा खान सेता ने अपनी पौत्री और पुत्र हबित खान की बेटी, सोनल सेती का विवाह राव चाचगदव म किया। यह लोग स्वाति या स्वात क्षेत्र के रहने वाले थे। कर्नल टाड के अनुसार यह लोग

अमीर खां लगा को अधिकृत किया कि वह स्थानीय शासकों और सूबेदारों से आवश्यकतानुसार सेना की सहायता लेकर भाटियों पर आक्रमण करे और उनसे लगाओं और मुलतान की भूमि जीतकर उनके स्वामियों को लौटाने का प्रबन्ध करे। कर्नल टाड के अनुसार ज्योंही राव चाचगदेव को मरोठ में इस प्रस्तावित योजना की सूचना मिली, त्योंही वह अपनी सेना सहित सतलज नदी पार करके केहरोर गये और वहां सुरक्षा के उचित प्रबन्ध किये। वह वहां से व्यास नदी पार करके मुलतान के समीप पहुंच गये। उनका इस प्रकार पहल करने का उद्देश्य यह था कि अगर युद्ध करना ही था तो शत्रु के क्षेत्र में लड़ा जाये, जिससे स्वयं के राज्य की प्रजा की सम्पत्ति, फसल आदि नहीं उजड़े। इससे शत्रु सेना पर उनकी जनता का विपरीत असर पड़ेगा और राव की सेना का शत्रु की भूमि पर लड़ने से उत्साह बना रहेगा। इस प्रकार राव चाचगदेव युद्ध की विभीषिका अपने राज्य से मुलतान क्षेत्र में ले गए।

कर्नल टाड के अनुसार राव चाचगदेव चौदह हजार पैदल और सात हजार घुड़सवार सेना को गतिशील करके मुलतान के विरुद्ध डट गये। इनके लिए यह शक्ति प्रदर्शन करना इसलिए भी आवश्यक था क्योंकि राव केलण की मृत्यु के बाद यह पूगल का पहला बड़ा सैनिक अभियान था और शत्रु यह नहीं समझें कि पूगल की सैन्य शक्ति या नेतृत्व में राव केलण के बाद कोई कमी आ गई। इस युद्ध में विजयी होना भाटियों के लिए अति आवश्यक था। बड़ा घमासान युद्ध हुआ, अनेक योद्धा मारे गए। भाटियों के लिए यह जीवन मरण का प्रश्न था, राव केलण के बाद उनके लिए यह परीक्षा की घड़ी थी। अगर उनकी पराजय होती तो राव रणकदेव और केलण के पचास वर्षों के अथक प्रयासों पर पानी फिर जाता। सन् 1380 ई. में, केवल पचास वर्ष पहले, स्थापित हुए राज्य से उन्हें वंचित होना पड़ता। उनकी पराजय के परिणाम बहुत भयानक होते। इसलिए भाटी यह युद्ध जीतने के उद्देश्य से लड़े, इस विजय के बाद मुलतान के लिए इनसे टक्कर लेनी कठिन होगी। देवी सांगियाजी की कृपा से विजय राव चाचगदेव की हुई। अमीर खां लगा की निर्णायक पराजय हुई। दिल्ली की शाही सेनाओं को मुंह की खानी पड़ी, उन्हें बहुत नीचा देखना पड़ा। इस प्रकार काला लोदी और अमीर खां के विरुद्ध राव चाचगदेव द्वारा लड़े गए पहले युद्ध की विजयश्री भाटियों को मिली। विजयी राव चाचगदेव मरोठ लौट आए।

अमीर खां लगा ने पहली पराजय का बदला लेने और अपने सैनिकों के गिरे हुए मनोबल को उबारने के लिए 29,000 घुड़सवारों की एक सेना का सगठन करके भाटियों पर आक्रमण करने के लिए उसे गतिशील किया। राव चाचगदेव अपने अनुभवों से जानते थे कि उन पर अगला बड़ा आक्रमण कुछ ही दिनों बाद में होने वाला था। इसलिए उन्होंने जोइया, पाहू, जंतुग भाटियों और स्थानीय मुसलमानों की सेना सगठित की। सम्भावित आक्रमण के विरुद्ध इनकी बीस हजार घुड़सवार सेना तैयार थी। क्योंकि मुलतान की सेना को अपनी प्रतिष्ठा को उबारना था इसलिए आक्रमण करने की जल्दबाजी उन्होंने की। भाटी सेना अपनी सामरिक सुविधानुसार मोर्चे पर डटी हुई थी। भाटियों पर बड़ा करारा प्रहार हुआ लेकिन वह सम्भले हुए थे, उन्होंने प्रहार को सयम और धैर्य से झेला। भाटी एक लक्ष्य के लिए लड़ रहे थे, मुलतान की सेना का लक्ष्य केवल पहली पराजय का बदला लेने का था। जब मुलतान की सेना मोर्चे में डटी हुई भाटी सेना से टक्कर लेकर कुछ हतोत्साहित

हुई, तब राव चाचगदेव की केहरोर की आरक्षित सेना ने उन पर अचानक धावा बोल दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण के आगे मुलतान और मुलतान की सेना के पाव उखड़ गये। काला लोदी के साथ यह दूसरा निर्णायक युद्ध दुनियापुर नगर के समीप लड़ा गया था। दुनियापुर मुलतान जिले की लोधरान तहसील मे केहरोर के पास मुलतान की तरफ उत्तर मे है। दुर्भाग्यवश अमीर खां लगा इस युद्ध मे मारा गया। काला लोदी हार कर मुलतान की ओर पीछे हट गये। राव चाचगदेव ने फुर्ती से दुनियापुर के किले पर अधिकार किया, सुरक्षा के प्रबन्ध किए और अगले सम्भावित आक्रमण से निपटने के लिए तैयार हो गए। उन्होंने दुनियापुर के किले और नगर की सुरक्षा का दायित्व अपने ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बरसल को सौंपा और स्वय पूगल प्रस्थान कर गए।

कर्नल टाड के अनुसार इस युद्ध मे 740 भाटी योद्धाओ ने वीरगति पाई। वापिस मरोठ(पूगल) लौटने से पहले उन्होंने थामा और असनीकोट मे काफी सेना तैनात की और मुलतान की सीमा से लगने वाले क्षेत्र मे चौकसी रखने और शत्रु का भेद लेने के लिए विश्वासपात्र आदमी रखे। थामा और असनीकोट व्यास नदी के पश्चिम मे मुलतान के पास थे। इस विजय से भाटियो ने लगाओ के काफी बड़े क्षेत्र पर अधिकार कर लिया और मुलतान का भी बड़ा भू-भाग उनके पास आ गया।

जब विजयी राव चाचगदेव मरोठ होकर पूगल पहुचे तो उनका अभूतपूर्व स्वागत हुआ। कई दिनो तक उत्सव मनाए गए। राव केलण के समय मे भी इतने बड़े निर्णायक युद्ध नहीं लड़े गए थे और न ही युद्धो मे इतनी सख्या मे पैदल और घुड़सवार सेना ने भाग लिया था। राव चाचगदेव दोनो युद्धो मे वीरगति पाए योद्धाओ को कैसे भूलते, उन्होंने उनके परिवारो के भरण-पोषण का प्रबन्ध किया, जागीरें दी और तत्काल आर्थिक सहायता सुलभ कराई।

कर्नल टाड के अनुसार इन दोनो मुठभेड़ो मे, प्रत्येक मे, दोनो ओर के मिलाकर लगभग 50,000 घुड़सवारो ने भाग लिया। यह सख्या बढ़ाचढ़ा कर दर्शायी गई है ताकि युद्धो का महत्व बढ़े। इतनी बड़ी घुड़सवार सेना के लिए अनेक व्यवहारिक कठिनाइयो का समाधान उस समय सम्भव नहीं था; जैसे, सेना का प्रशासन, आवास, घास, दाना, रसद, हथियार, पानी सचालन, सम्पर्क आदि ऐसे महत्वपूर्ण अग थे जिनका समाधान दोनो पक्षो के बूते के बाहर था। कहते हैं कि हल्दीघाटी के युद्ध मे दोनो पक्षो के लगभग तीन हजार घोड़े थे, तब केहरोर और दुनियापुर के युद्धो मे पचास हजार घोड़ो का होना सही प्रतीत नही होता।

इन युद्धो के पश्चात् मलिक काला लोदी ने भाटियो की वीरता, युद्ध कौशल, सगठन शक्ति, नियन्त्रण, आक्रमण क्षमता, आचार, विचार और चपलता को सराहा, क्योंकि वह स्वय माने हुए योद्धा थे और वीरो के प्रशसक थे। इससे उनकी शत्रुता पिघल कर मित्रता मे अवश्य बदल रही थी।

इन अभूतपूर्व विजयो से प्रभावित और प्रसन्न होकर सेता कबीले के प्रमुख सूमरा खान सेता ने अपनी पौत्री और पुत्र हबित खान की बेटी, सोनल सेती का विवाह राव चाचगदेव से किया। यह लोग स्वाति या स्वात क्षेत्र के रहने वाले थे। कर्नल टाड के अनुसार यह लोग

भारतीय मूल के थे, पहले जलालाबाद के आसपास इनके राज्य थे। स्वात नाम किसी अन्य शब्द से अपभ्रंश हो गया था।

राव चाचगदेव की दोनों विजयों ने लगाओं को प्रभावित किया और उनका हृदय परिवर्तन हुआ। उन्होंने तसल्ली कर ली कि इस शत्रु के विरुद्ध अपने योद्धाओं को मरवाना बेकार था। भाटियों द्वारा अपने पूर्वजों की पुन जीती हुई भूमि को उनसे छीनना, उनके लिए सम्भव नहीं होगा और न ही ऐसा करना न्यायसंगत होगा। लड़ाई तो वह कर रहे थे, भाटियों को विवश होकर बचाव के लिए लड़ना पड़ रहा था। अपनी मित्रता और विश्वास का परिचय देते हुए लगाओं (कोरियों) ने भी अपनी एक पुत्री का विवाह राव चाचगदेव से कर दिया। इस अनोखे सम्बन्ध से उनका एक मुखिया ब्रह्मवेग लगा अत्यन्त अप्रसन्न हुआ। उसने क्रोध मे आकर एक बड़ी सेना सगठित करके दुनियापुर पर आक्रमण कर दिया। उसकी सेना ने उस क्षेत्र और नगर को खूब लूटा और अनेक नागरिकों को अनावश्यक रूप से मारा। इस सफलता से ब्रह्मवेग लगा और उसकी सेना को राव चाचगदेव के प्रति गलतफहमी हो गई। उन्होंने सोचा कि राव उनसे घबरा गए थे या उनकी युद्ध करने की क्षमता अब नहीं रही। वह लूटा हुआ माल असबाब पशुओं पर लाद कर साथ ले गए।

राव चाचगदेव कोरी कुमारी से विवाह करने के बाद ब्रह्मवेग लगा की नाराजगी जान गए थे, वह उसकी प्रतिक्रिया से अनभिज्ञ नहीं थे। उन्हीं के लगा सम्बन्धियों ने उन्हें सारी सूचनाएँ दे दी थी। उन्होंने उसकी सेना से दुनियापुर में युद्ध करना सामरिक दृष्टि से ठीक नहीं समझा। वह चाहते थे कि युद्ध का स्थान और समय वह चुनें। इसलिए उन्होंने दुनियापुर को लगाओं को लूटने के लिए अरक्षित छोड़ दिया और उनकी सेना ने दुनियापुर से लगभग दस मील पश्चिम मे उपयुक्त स्थान पर मोर्चा सम्भाला। उन्हें मालूम था कि लूट की खुशी में अस्त व्यस्त लगाओं की सेना इसी स्थान के पास के मार्ग से वापिस जायेगी। भाटी चतुर, होशियार और चपल थे। लगाओं ने अपनी सुरक्षा के प्रबन्ध ढीले किए हुए थे। उनकी आधी सेना आगे बढ़ गई थी और बाकी की आधी सेना लूट के माल के साथ धीरे धीरे पीछे आ रही थी कि भाटियों ने अगली और पिछली सेना के मध्य भाग में आक्रमण कर दिया। सेना का आपस का तालमेल, सचालन और नियन्त्रण टूट गया। अनेक लगा मारे गए, कुछ इधर-उधर तितर बितर हो गये और बचे हुए बन्दी बना लिए गये। इस भगदड़ मे ब्रह्मवेग लगा भी मारा गया। लूट के माल से लदे हुए पशु भाटियों ने सम्भाले और उन्हें वापिस दुनियापुर ले गए। अब नागरिकों के अचम्भे का ठिकाना नहीं रहा, चारों और खुशियां मनाई जाने लगी। जो लोग थोड़े समय पहले राव चाचगदेव और भाटियों को कोस रहे थे, गालियां दे रहे थे कि डरपोक उन्हें लगाओं के भरोसे लुटने के लिए छोड़कर कायरता दिखा कर दुनियापुर खाली करके चले गए, वही लोग अब शर्मिन्दा थे, अपना मुह छिपा रहे थे, उन्हें आशीर्वाद दे रहे थे और राव की जय जयकार कर रहे थे। राव चाचगदेव ने आदेश दिए कि नागरिक अपना लुटा हुआ माल स्वयं पहचान कर ईमानदारी से अपने घर ले जाएं। नागरिकों की खुशी का बांध टूट गया उनकी आंखों में राव के प्रति कृतज्ञता के आंसू बहने लगे। ऐसा था भाटियों का युद्ध कौशल और न्याय। इस प्रकार दुनियापुर के तीसरे युद्ध में विजयश्री पूगल के पक्ष में रही।

इस विजयोत्सव के उपलक्ष मे राव चाचगदेव ने अपने साथियो को अस्त्र-शस्त्र दिए और उन्हे घोडे भेंट किए। उन्होने उन्हें युद्ध मे जीत मे प्राप्त हुए माल को भोगने की छूट दे दी।

यह कहने मे अतिशयोक्ति नही होगी कि केहरोर की भूमि अमीर खा नाम को रास नही आई। थोडे वर्षों पहले राव केलण ने केहरोर के पास किला बनाने के प्रयास मे लगे हुए अमीर खा कोरी को मारा था और राव चाचगदेव के समय केहरोर दुनियापुर के दूसरे युद्ध मे अमीर खां लगे की मरने की बारी आई थी।

केहरोर सदैव भाटियों की भावनात्मक एकता और लक्ष्य का प्रतीक रहा। यहां सन् 731 ई. मे कुमार केहर (प्रथम) ने किला बनवाया था। सात सौ वर्ष बाद मे राव केलण ने इस किले पर अधिकार करके इसकी मरम्मत करवाई और इसे सुदृढ़ बनवाया। अब केहरोर दुनियापुर क्षेत्र भाटियो के लिए कुरुक्षेत्र पानीपत की तरह बन गया था। यहा राव चाचगदेव ने ही थोडे से अन्तराल में तीन खूनी युद्ध जीते और मुलतान के हौसले पस्त किये। जहां युद्ध थे, वहा प्रशसा भी थे। राव चाचगदेव की सेतो न सोनल सेती और कोरियां ने कोरी कुमारी स्वेच्छा से ब्याही थी। कितना सुन्दर हिन्दू मुस्लिम सद्भाव और समन्वय था कि एक ही आंगन मे हिन्दू और मुसलमान राणियो की सन्तानें बिना भेदभाव के खेलती थीं और उसी आंगन मे उनके मुसलमान नाना नानी, मामा मामी उनसे मिलने आते थे। इससे पहले राव केलण ने शहजादी जावेदा से तलवार की नोक पर और डके की चोट से विवाह किया था। बाद के यह दोनों विवाह भिन्न थे, इनमे आपसी मेलजोल, सद्भावना, प्रशसा का समन्वय था, कटुता नही थी।

यहा यह आकलन करना आवश्यक है कि मलिक काला लोदी का पुत्र बहलोल लोदी सन् 1451 ई. मे दिल्ली का सुलतान बनने से पहले कितना शक्तिशाली था। ऐसे शक्तिशाली पुत्र के पिता से युद्ध मोल लेना और विजय प्राप्त करना राव चाचगदेव को किस भाव पड़ा होगा। दिल्ली के सुलतान मोहम्मद शाह सैयद (सन् 1434-45 ई.) के समय बहलोल लोदी सरहिन्द का सूबेदार था और उसका प्रभाव सारे पजाब प्रान्त पर था। उसन सुलतान को कर और पेशकश देनी बन्द कर दी थी। उस समय सभी प्रान्तो मे सुलतान के विरुद्ध विद्रोह हो रहे थे, अधीनस्थ शासक कर आदि चुकाना बन्द करके अपने आप को स्वतन्त्र शासक घोषित कर रहे थे। मालवा के सूबेदार महमूद शाह खिलजी ने दिल्ली की ओर बढ़ना शुरू किया, सुलतान मोहम्मद शाह सैयद ने बहलोल लोदी से खिलजी के विरुद्ध सहायता मागी। उसने अपनी शर्तों पर सहायता देने के बदले मे सैयद सुलतान से भारी कीमत चुकी। सुलतान ने उसे दिपालपुर और लाहौर के परगने दिए और उसे अपने आप को 'सुलतान' बहलोल लोदी से सम्बोधित करने का अधिकार दिया। शाह आलम (सन् 1445-1451 ई.) अपने पिता के स्थान पर सुलतान बने। इन्हे सुलतान बनने के लिए बहलोल लोदी की सहमति और मान्यता प्राप्त करनी पडी। इन सुलतान की अनुपस्थिति मे दिल्ली का शासन बहलोल लोदी चलाता था। अन्तत सुलतान शाह आलम को सन् 1451 ई. मे पद त्याग कर बहलोल लोदी दिल्ली को सुलतान बनाना पडा। राव चाचगदेव को ऐसे शक्तिशाली बहलोल लोदी के पिता से सन् 1430 से 1448 ई. तक लोहा

लेना पडा। इसी से अन्दाजा लगाया जा सकता था कि उनकी क्या कठिनाइयें थी, सेना का संगठन क्या था और कितनी सतर्कता और सुरक्षा के दायरे में उन्हे केहरोर, दुनियापुर और मरोठ मे रहना पडता था।

इधर राव चाचगदेव मुलतान के काला लोदी के विरुद्ध संघर्ष करके विजय के अभियान और उत्सव मनाने मे लगे हुए थे, उधर सन् 1438 ई मे इनके बहनोई राव रिडमल राठौड को सिसोदियों ने चित्तौड मे मार दिया। राव चून्डा की पुत्री और रिडमल राठौड की बहन कुमारी हसा का विवाह मेवाड के राणा लाखा से हुआ था। सन् 1427 ई म मन्डोर के राव बनने के बाद मे भी राव रिडमल मेवाड के आश्रय मे चित्तौड मे रह रहे थे। वहां उन्होंने अपने भानजे के राज्य मे अनावश्यक हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया था और राज्य हथियाने के प्रयास किये। इस रोग का मेवाडियों ने राव रिडमल को मारकर निदान किया। उन्होने राठौडो को मेवाड से सोजत तक खदेड़ा और मन्डोर तक उनका पीछा करके वहा पर अधिकार कर लिया। मन्डोर पर सन् 1438 ई. से 1453 ई तक मेवाड का अधिकार रहा। राव रिडमल के दूसरे पुत्र जोधा और उनके साथी मारे हारे आखिर पूगल के (वर्तमान) कावनी गाव के पास पहुचे और यहा उन्होंने अपने मामे राव चाचगदेव के राज्य मे शरण ली। कावनी, कोडमदेसर, लूणकरणसर आदि का घास बाहुल्य क्षेत्र था, जोधा इस क्षेत्र मे अपने पशु और घोडे चराते थे और मेवाडियो से दूर छिपे हुए रहते थे। मेवाडियो का अगर वश चलता तो वह यहा भी उन्हे नही टिकने देते, लेकिन जोधा के मामा राव चाचगदेव का खूटा बहुत तगडा था। उनकी लगातार विजयो के कारण मेवाड को भय था कि कही उन्होने जोधे के लिए राव चाचगदेव से बखेडा किया तो भाटी उनकी पोल खोल देंगे। मेवाड अपने अविजित होने की चादर ओढे हुए था, उन दिनो राव चाचगदेव के पासे सीधे पड रहे थे, मेवाड इनसे चादर मे छेद करवाने का साहस नही कर सकता था। राव जोधा और अन्य राठौड (कान्धल, बीदा, नाथा आदि) भाटियो के सरक्षण म स्वच्छन्द विचरण कर रहे थे, किसी की क्या मजाल थी कि राव चाचगदेव के होते हुए इनका कोई बाल बाका कर सके। राव जोधा, सन् 1453 ई तक, पन्द्रह वर्ष इस क्षेत्र मे रहे।

'सुपह नवा गढ वैर सी पिडअरि देयपण प्रबोध।
राव मडार राखियो जैसरणा जोध।
तवे वमध लखमण सुतन नरपति गाड नरेश।
निज उपर कर जोध ने दीध मडोवर देश।।'

वास्तव मे राव जोधा पूगल के आश्रय मे रहते थे, किन्तु इसका सारा श्रेय परोक्ष रूप स जैसलमेर को भाटियो की पैतृक भूमि होने के कारण दिया गया।

राव जोधा ननिहाल मे रहते हुए पुन मन्डोर लेने के लिए असफल प्रयास करते रहे किन्तु मन्डोर पर अधिकार करने मे उन्हे सफलता सन् 1453 ई मे राव बरसल की सहायता से ही मिल सकी। बीकानेर राज्य के भावी सस्थापक और शासक बीका का जन्म उनके पिता के ननिहाल पूगल म या उनके ननिहाल जागलू (साखला) मे पाच अगस्त, सन् 1438 ई को हुआ था। राव बीका अगले पचास वर्षों तक राज्य की स्थापना करने के लिए

जूझते रहे, आखिर उन्हें सन् 1488 ई. में सफलता मिल गई (वैशाख सुदि 2, वि सं 1545)।

बाला लोदी के विरुद्ध निरन्तर विजय अभियानों के बाद में राव चाचगदेव की जैसलमेर जाने की बड़ी प्रबल इच्छा हुई। वह अपनी मातृभूमि के दर्शनों के लिए बेताब थे। उनका जन्म सन् 1396 ई. से पहले आसिणकोट में हुआ था। वह अपने पिता केलण के साथ दादा रावल केहर की मृत्यु के समय जैसलमेर गए थे और चाचा रावल लक्ष्मण (सन् 1396-1427 ई.) के राज्याभिषेक तक वहीं ठहरे थे। उस समय वह बालक थे, ज्यादा समझदार नहीं हुए थे। वह अपने भाई बन्धुओं से मिलने अब जैसलमेर गए। वह अपनी सफलताओं के प्रदर्शन के लिए वहां नहीं गए थे, केवल मेल-मिलाप करने और आपसी जान पहचान बढ़ाने गए थे। उन्होंने रावल बरसी (सन्1427-1448 ई.) को आश्वस्त किया कि किसी भी समय वह उनकी सेवाएँ अधिकार स्वरूप ले सकते थे। जैसलमेर में उनका भव्य स्वागत किया गया। जैसलमेर के रावल ने पूगल के राव को अपने बराबर की मान्यता दी। एक बड़ा दरबार बुलाया गया और एक वरिष्ठ भाई के नाते उन्हें नजरें और निछरावलें भेंट की गईं। इस अनूठे सत्कार ने राव चाचगदेव को गद्‌गद् कर दिया। बदले में उन्होंने अपने चचेरे भाई रावल बरसी को उनकी जेब खर्च के लिए आसिणकोट की जागीर भेंट की, यह जागीर रावल केहर ने कुमार केलण को प्रदान की थी। जब राव चाचगदेव वापिस आने लगे तो उन्हें रावल ने सिरोपाव, पोशाक और आभूषण भेंट किए। सम्मान स्वरूप एक तलवार भी उन्हें भेंट में दी।

रावल केहर ने अपने दूसरे पुत्र कुमार सातल को जिस क्षेत्र में जागीर प्रदान की थी, वहां उन्होंने सातलमेर नाम से गढ़ बनवाया और नगर बसाया। राव चाचगदेव जैसलमेर से पूगल लौटते हुए बाप गाव में रुके। वहां उन्हें बताया गया कि पोकरण के राव बजरंग राठौड़ ने सातलमेर के किले और नगर पर बलपूर्वक अधिकार कर रखा था। इस नगर में धनी व्यापारी और अन्य समृद्ध लोग रहते थे। यह उस क्षेत्र के लिए व्यापार का मुख्य केन्द्र था। सातल, राव चाचगदेव के सगे चाचा थे। उन्होंने पूगल आकर अपने ससुर हबित खां, जिनके पिता सूमरा या सेता स्वात प्रदेश के कबीले के प्रमुख थे, को संदेश भेजा कि वह अमुक स्थान पर और अमुक दिन पोकरण पर अचानक आक्रमण करने के लिए तीन हजार घुड़सवार सेना भेजे। स्वात से पोकरण पास पड़ता था, मरोठ या केहरोर से पोकरण दूर था। इधर राव चाचगदेव पूगल से अपनी सेना लेकर चल पड़े। स्वात और पूगल की संयुक्त सेनाओं ने सातलमेर पर धावा किया। इस अचानक किए गए आक्रमण में राव बजरंग राठौड़ के तीन पुत्र बन्दी बना लिए गए। इनके अलावा पोकरण और सातलमेर के 350 चान्डकों और भूतड़ों महेश्वरियों को आदर से बंधक बनाया गया। इन धनिक बंधकों ने राव चाचगदेव को अपनी मुक्ति के लिए एक बड़ी राशि भेंट करने का प्रस्ताव किया जिसे उन्होंने विनम्रता से अस्वीकार कर दिया। उन्होंने इन धनिकों और व्यापारियों से पूगल प्रदेश में चल कर बसने का आग्रह किया ताकि वह उनके राज्य के वाणिज्य और व्यापार के विकास में सहयोग देकर उसकी आर्थिक स्थिति सुधारें। इससे पूगल की जनता में समृद्धि और खुशहाली आयेगी। इसके बदले में उन्होंने उन्हें सुरक्षा, मान-सम्मान, भूमि एवं अन्य

सुविधाए उनकी इच्छानुसार देने का सकल्प किया। इन व्यापारियो पर राव मे अपनी प्रजा के प्रति भलाई के उत्तम विचारो, उनकी ईमानदारी और सच्चाई का अनुकूल प्रभाव पडा। वह उनके साथ पूगल आ गए। राव ने उन्ह पूगल, मरोठ, देरावर आदि स्थानो पर बसाया और उनके चाह अनुसार उन्ह सभी सुविधाए दी और सुरक्षा उपलब्ध कराई। इन व्यापारियो को मुल्तान, सिंध और पजाब के प्रदेशो से व्यापार करने का अवसर मिला। इन प्रदेशो की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी, यहा अन्न व अन्य वस्तुओ के भण्डार थे। इसके अलावा पश्चिम म ईरान, गजनी तुर्की आदि प्रदेशो के लिए माल असबाब का आवागमन मुलतान से हो कर होता था। यहा यह व्यापारी आर्थिक दृष्टि से बहुत सतुष्ट हुए और इन्होने वापिस अपने देश जाने का नाम तक नही लिया। राव चाचगदेव अपने प्रदेश के विकास और समृद्धि के प्रति इतने जागरूक थे कि उन्होंने फलोदी और पोकरण से और अधिक व्यापारियो को बुलवाया। पहले इन व्यापारियो का व्यापार का क्षेत्र मारवाड और जैसलमेर का रेगिस्तान था, जहा लोगो की अकालो के कारण आर्थिक स्थिति अच्छी नही रहती थी, उत्पादन के साधन नही थे, बाहर से व्यापार नगण्य था। इस प्रकार पूगल राज्य म आने के बाद म चाडक और भूतडा साहूकार बहुत फले फूले अच्छा धन कमाया और अपनी ईमानदारी के कारण अच्छी ख्याति पाई।

राव चाचगदेव ने राव बजरग राठौड स मित्रता और सद्भावना बनाए रखने के लिए उनके तीनो पुत्रो का विवाह भाटी कन्याओ से करके उन्हे मुक्त कर दिया। सातलमेर का राज्य सातल के पुत्रो को सौंप दिया।

उनके पोकरण सातलमेर के अभियान से लौटने पर उन्ह सूचित किया गया कि उनके एक भाटी भाई दीपा की अनेक घोडे घोडिया जोइया का चराने के लिए दी हुई थी, भटनेर के पास पीलीबगा के थिरराज खोखर ने इन्हे चुरा लिया था और दो वर्ष हो गए, वह उन्हे लौटा नही रहा था। राव ने खोखर के पास चुराए हुए पशु लौटाने के लिए सदेशा भेजा लेकिन उसने इसकी कोई परवाह नही की। तब राव चाचगदेव ने थिरराज खोखर पर आक्रमण किया, उससे घोडे घोडिया मुक्त कराई और उसके क्षेत्र को लूटा। उन्होंने पीलीबगा के महीपाल दूदी (पवारो की एक शाखा) को पूगल के आदेशो को नही मानने के कारण दडित किया।

इसी विषय म दूसरी कहानी यह है कि राजपाल (इनका वर्णन राव केलण के पुत्रो के साथ देखें) के बेटे कीरतसिंह भाटी ने खोखरो के चार घोडे चुराए, जिन्ह उन्होने लूणा जोइये को सौंपे। खाखरो की सना आई और बदले म जोइयो के पचास घोडे व माल छीन कर ले गई। राव चाचगदेव के कहने से आपस म शान्ति हुई और राव थिरराज (या थिरपाल) खोखर ने अपनी बेटी का विवाह कीरतसिंह भाटी के साथ कर दिया। इनके वशज बादशाह अकबर की सेवा म रहते थ और उनके कहने मे मुसलमान बन गए थे। लेकिन इन्होने अपने रीति रिवाज नही छोडे, भाटियो की तरह होली, दिवाली आखातीज के त्योहार मनाते थ। जैसलमेर की तरफ सलाम करके गद्दी पर बैठते थे। जब यह जैसलमेर गये तो रावल ने इनका सत्कार किया, इन्ह मान सम्मान दिया। लौटते समय इन्ह 'राव' की पदवी दी और उसी के अनुरूप इन्ह सिरोपाव, पोशाक तलवार भेंट की।

इधर राव चाचगदेव पीलीवगा क्षेत्र मे खोखरो के विरुद्ध व्यस्त थे, उधर उनके शत्रु लगाओ और सिन्ध नदी के पश्चिम मे गक्खड प्रदेश मे रहने वाले खोखरो ने मिल कर दुनियापुर से पूगल की सेना (थाने) को मार भगाया। और उनके द्वारा थोडे समय पहले अधिकार मे लिए गए नये प्रदेशो पर अधिकार कर लिया। लेकिन उन्होंने शीघ्र ही आक्रमण करके लगाओ और खोखरो को परास्त किया और दुनियापुर पर पुन अधिकार कर लिया।

राव चाचगदेव अपने शासनकाल के अट्ठारह वर्षो की अधिकाश अवधि मे मरोठ मे रहे, वह पूगल कम समय रह पाए। उनका अधिकाश समय घूमने फिरने और राज्य की सुरक्षा व्यवस्था करने म बीतता था। लगातार के युद्धो, लडाइयो, छापो और छुट-पुट झपटो ने उनके शरीर का विनाश करना शुरु कर दिया था। व्यस्त योद्धा का जीवन व्यतीत करते हुए बढी हुई उम्र मे इन्हें कोई असाध्य रोग लग गया। इससे उन्हे शारीरिक पीडा रहती थी। उनम वह पहले वाली स्फूर्ति नही रही। वह अपाहिज का लम्बा जीवन व्यतीत नही करना चाहते थे। वह युद्ध के मैदान मे योद्धा का जीवन जीना चाहते थे और योद्धा की मौत मरना चाहते थे। उनकी प्रबल इच्छा थी कि किसी अन्धकारमय कोने मे घुट-घुट कर मरने मे युद्ध मे शत्रु के हाथो मरना कही ज्यादा श्रेयस्कर होगा।

उन्होने मृत्यु को बुलावा भेजने के लिए अपने पुराने शत्रु और मित्र मलिक काला लोदी को युद्ध के लिए निमन्त्रण भेजा। दोनो वीर योद्धा थे, वर्षों से एक दूसरे के पडोस मे रहने से उनमे आपस मे आदर का भाव बन गया था। वह एक दूसरे के आचार विचार और चरित्र को पहचान गए थे, उनका आपस का सम्यजनो जैसा व्यवहार था, उनमे स्वत एक आपसी विश्वास उपज गया था। जब मुलतान मे काला लोदी को राव चाचगदेव का निमन्त्रण मिला कि वह उनसे युद्ध करें और उन्हे युद्ध के मैदान में मारें तो वह स्तब्ध रह गये। उनके मानस मे शका उत्पन्न होनी स्वाभाविक थी, उन्होने सोचा कि कही उनके साथ विश्वासघात हो गया तो स्थिति बडी जटिल बन जायेगी। लेकिन राव ने दुबारा दूत भेजकर अपने असाध्य रोग से उन्हें अवगत कराया और विश्वास दिलाया कि वह धोखा नहीं करेंगे, अपने वचन को निभायेंगे। इस प्रकार आश्वस्त हो कर काला लोदी ने युद्ध के लिए उनका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। दोनो पक्षों ने केवल पाच सौ घुडसवार साथ लाने का वायदा किया।

राव चाचगदेव ने युद्ध की पोशाक धारण की, अपने साथ जाने वाले पाच सौ योद्धाओ को चुना। यह उन योद्धाओ में से थे जो उनके साथ अनेक युद्धो में गये थे, सदैव विजयी हो कर लौटे थे। उन्होने शपथ ली कि प्राण रहते हुए वह युद्ध के मैदान में पीठ नही दिखाएँगे। राव ने देवी सागियाजी की पूजा अर्चना की और अपनी पूर्व की भूलो के लिए उनसे क्षमा मागी। जान अनजाने मे किए गए पापो के लिए प्रायश्चित किया। युद्ध के लिए प्रस्थान करने से पहले खानो, प्रधानों, प्रमुखो स विचार विमर्श करके उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बरमल को जनता के सामने अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। उन्होंने अपने पूर्वजों की तलवार गजनी के तख्त पर रखी, स्वय ने पूगल कभी जीवित नही लौटने के लिए विदाई ली। जनसमूह ने उन्हें अश्रुपूर्ण विदाई दी और उन पाच सौ एक अभागे योद्धाओ को

जब तक देखते रहे, उनकी जय जयकार करते रहे, तब तक वह उत्तर के रेतीले टीबों के पीछे हमेशा के लिए आंखल नहीं हो गए।

राव पड़ाव करते हुए खुशी खुशी दुनियापुर पहुंचे, उनमे मरने के लिए अपार उत्साह था। जब उन्हें बताया गया कि मलिक काला लोदी केवल चार मील दूर थे तो उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उनके हृदय मे काला के प्रति आदर की भावना जाग उठी। उन्होंने सोचा कि वह भी उनकी तरह वचनो और वायदो के कितने पक्के थे। दुनियापुर मे उन्होंने अपने पच कल्याण घोडे और तलवार की पूजा की, फिर विधिवत अपने पूर्वजो के देवी-देवताओ की पूजा करवाई। इसके पश्चात् पुरोहितो, चारणो, राणाओ और अन्य श्रेणी के लोगो को अपने हाथ से दान दक्षिणा दी। उन्होंने अपने मस्तिष्क और हृदय से समस्त सासारिक इच्छाओ को भुलाकर ईश्वर से मुक्ति की प्रार्थना की।

दोनो सेनाएँ केहरार के समीप, अब बरसल के नाम से जाने जानेवाले स्थान के पास, आमने सामने हुई। ललकारो और नगारो के जयघोष के साथ सैनिक एक दूसरे पर टूट पडे। थोडी देर मे राव चाचगदेव ने एक वीर योद्धा की मृत्यु को प्राप्त किया, यह उनकी अन्तिम इच्छा थी। रणक्षेत्र म सैकडो भाटियो और लगाओ न वीरगति पाई। हिन्दुओ और मुसलमानो के रक्त आपस म मिलकर धरती माता की उपज बढ़ा रहे थे कि हे माता तू इसी प्रकार ऐसे ही वीरो को उत्पन्न करती रहना। कल के शत्रु पास पास मे चिरनिद्रा म सो रहे थे। अब न कोई हिन्दू था न कोई मुसलमान, न कोई भाटी था न कोई लगा या बलोच, सब इस धरती माता की सन्तानें थी, इसी की गोद मे लेट गई। यह सब इसी मरने के दिन के लिए जनमे थे, आज इन्हे अपना लक्ष्य मिल गया।

इस प्रकार सन् 1448 ई म राव चाचगदेव ने 55 वर्ष की आयु मे स्वेच्छा से वीरगति पाई। आज गजनी के अष्टचक्र के लकडी के तख्त पर बैठने वाले पूगल के राव काठ की चिता पर सो रहे थे। युद्ध बन्द हो गया था, सेनाएँ विश्राम करके अपने अपने योद्धाओ की अत्येष्टी करने मे लग गयी। काला लोदी न राव को आदरपूर्वक सलाम किया और उन्हे अश्रुपूर्वक विदाई दी।

इस पराजय के फलस्वरूप भाटियो को माथेलाव, मूमनवाहन, केहरोर और भटनेर के किले मलिक काला लोदी को सौंपने पडे। लेकिन नैनसी के अनुसार भाटियो ने पूगल, मरोठ, केहरोर, देरावर और भटनेर के किले लोदी के अधिकार मे नही दिए, अपने पास ही रखे।

इस प्रकार राव चाचगदेव न हसते हसते स्वेच्छा से मौत को गले लगाया। भारत के इतिहास म ऐसा दूसरा उदाहरण नही मिलेगा जब कि एक शत्रु ने, दूसरे शत्रु को मारने के लिए मित्रता से आमन्त्रित किया हो और उसने मित्रता से निमन्त्रण स्वीकार करके शत्रु की कामना पूर्ण की हो।

राव चाचगदेव अपने पूर्वजो, राव रणकदेव और राव केल्हण, से भी महान् थे क्योकि इन्होने बार बार मुलतान और दिल्ली के शक्तिशाली शासको की चुनौती को स्वीकार किया और मैदानी युद्धो मे उन्हे परास्त किया। दुनियापुर से आगे बढकर मुलतान के पास तक के क्षेत्र पर अधिकार जमाया, मुलतान के विवश शासक उन्हें वहां से नही हटा सके।

उन्होंने सूझबूझ से युद्धों का इस भांति संचालन किया कि सारे युद्ध शत्रु की सीमा में लड़े गए, इससे पूगल राज्य की जनता के जान माल की क्षति नहीं हुई, युद्ध से होने वाली सारी हानि और विपदा शत्रुओं की जनता ने उठाई। इससे मुलतान की स्थानीय सत्ता के प्रति जनता में असंतोष और आक्रोश होना स्वाभाविक था।

वह अपने पूर्वजों की धरती के प्रति असीम श्रद्धाभाव रखते थे। जैसे राव केलण आसिणकोट क्षेत्र से पालीवालों और मुलतान से बजाज रानियों को लाए थे, उसी प्रकार राव चाचगदेव पोकरण, फलोदी और सातलमेर क्षेत्र से चान्डक और भूतड़ा साहूकारों को पूगल लाए। इससे स्पष्ट था कि वह प्रजा की समृद्धि के लिए कितने जागरूक और सचेत थे। इन व्यवसायियों में से चान्डकों को इन्होंने दीवान और चौधरी के पैतृक पद दिए। यह पद इन्हें सन् 1954 ई. तक प्राप्त थे। अनेक मोहतों और चौधरियों ने पूगल की जनता को अपना परिवार समझ कर निष्ठा, लगन और ईमानदारी से पीढ़ियों तक देश की सेवा की।

इन्होंने मेवाड़ियों द्वारा सताये गए भानजे जोधा, उसके अन्य भाइयों और साथियों को पूगल क्षेत्र में शरण दी और मेवाड़ियों को सावधान किया कि यह उनके रिश्तेदार थे, इन्हें हाथ डालने से पहले मेवाड़ को पूगल की ताकत को तलवारों से आंकना होगा। इस चेतावनी के बाद में मेवाड़ी मन्डोर से आगे नहीं बढ़े और राव जोधा, सन् 1438 से 1453 ई. तक पन्द्रह वर्ष, इस क्षेत्र में स्वच्छन्द विचरते रहे। राव चाचगदेव का जीवन में एक ही मलाल रहा कि वह अपने भानजे राव जोधा को अपने जीवनकाल में मन्डोर नहीं दिला सके। यह कार्य इनके पुत्र राव बरसल ने इनकी मृत्यु के पांच साल पश्चात्, सन् 1453 ई. में, सफलतापूर्वक पूरा कराया। राव चाचगदेव भी यह कार्य कर सकते थे, लेकिन वह मुलतान से पश्चिमी सीमा पर ऐसे उलझे हुए थे कि वहां से अधिकांश सेना पूर्व की ओर नहीं हटा सकते थे। दूसरा, राव जोधा स्वयं अभी इतना साहस नहीं जुटा पाये थे कि मामा की सहायता होते हुए भी वह सिसोदियों से युद्ध करके मन्डोर जीत सकें।

राव चाचगदेव के चार राणियां थी, दो हिन्दू राजपूत और दो मुसलमान :

(1) राणी लाल कंवर सोढी
(2) राणी सूरज कंवर चौहान
(3) राणी सोनल सेती
(4) राणी लगा, कोरियों की पुत्री।

इनकी सोढी राणी लाल कंवर से तीन पुत्र थे

(1) बरसल—यह राव चाचगदेव के पश्चात् राव बने।

(2) मेहरवान—इन्हें *बल्लर की सीमा के पास रुकनपुर की जागीर प्रदान की।* इनके वंशज मेहरवान केलण भाटी कहलाये। इनके वंशज राव बरसिंह (सन् 1535-53 ई.) के समय मुसलमान हो गए थे।

(3) भीमदे—इन्हें बीजनोत की जागीर प्रदान की। इनके वंशज भी मुसलमान हो गए और राव बरसिंह के समय यह बीजनोत छोड़कर सिन्ध प्रदेश में चले गए। अब इनका कोई पता नहीं कि कहां गये, वहां हैं? इनके कुछ वंशज जैसलमेर चले गए थे, वह भीमदेओत केलण भाटी कहलाये।

इनको चौहान राणी सूरज कंवर के केवल एक पुत्र रणधीर हुए। इन्हें राव चाचगदेव ने देरावर की महत्वपूर्ण जागीर दी थी। इस जागीर में देरावर से लगने वाला खदाल का क्षेत्र भी शामिल था। राव चाचगदेव ने रणधीर को देरावर का स्वतन्त्र राज्य दिया था। किन्तु उनके वंशज इस स्वतन्त्र राज्य को ज्यादा समय तक नहीं भोग सके। यह राज्य पूगल के शक्तिशाली राज्य का आश्रित ही रहा। कुमार रणधीर के चार पुत्र थे, बीरमदे, लक्ष्मण, मूला और अजो। बीरमदे के पुत्र बीजो के पुत्र नेता के वंशज नेतावत केलण भाटी कहलाये। नेतावत भाटी बीकमपुर के पास नोख, सेवडा आदि गावो में बसे हुए हैं। नेता में योग्यता की कमी के कारण वह देरावर को सिन्ध प्रान्त से लगने वाली सीमा की ज्यादा समय तक रक्षा नहीं कर सके। इसलिए राव बरसिंह ने सन् 1540 ई. में देरावर से इन्हें हटाकर नोख, सेवडा आदि गावो में बसाया। राव बरसिंह ने देरावर को अपने पूगल के राज्य में मिला लिया।

पाचवा पुत्र कुम्भा, लगा (कोरी) राणी से हुआ था। इसे मुलतान की सीमा से लगने वाले दुनियापुर की महत्वपूर्ण जागीर बख्शी गई। जिस समय काला लोदी और हेबत खा लगा ने इसके पिता, राव चाचगदेव को दुनियापुर के युद्ध में मारा, उस समय यह देरावर में कुमार रणधीर के पास था। इसने अपने पिता की मृत्यु का बदला काला लोदी और हेबत खां लगा को मारकर लेने का प्रण किया। यह उसने अपने पिता के प्रति असीम प्यार और लगाव की भावना होने से किया, जबकि तथ्य यह था कि राव स्वयं मरने की कामना संजोये हुए युद्ध करने गए थे। पिता की मृत्यु कुम्भा के हृदय में ऐसी चोट कर गई जिसे वह सह नहीं सका। ऐसा कहते हैं कि वह आनन-फानन में घोड़े पर लदवा और एक सेवक को साथ लेकर मुलतान की सेना के पड़ाव पर आधी रात में पहुच गया। वहा उसने घोड़े को ग्यारह गज चौड़ी खाई के पार कुदाया, सोये हुए काला लोदी के तम्बू में हरम में घुस कर उसका सिर काटा, फिर उसी खाई के ऊपर से कूदा और सिर लेकर वह देरावर पहुच गया।

छठे और सातवें पुत्र, गर्जसिंह और राता, सोनल सेती के पुत्र थे। कर्नल टाड के अनुसार अपने मृत्यु के अभियान पर निकलने से पहले राव चाचगदेव ने राणी सोनल सेती और पुत्र गर्जसिंह को, राणी के पीहर स्थान, सूमरा खा सेता के पास भेज दिया था। कुछ का कहना है कि इन भाइयो को उन्होंने डेरा इस्माइल खा का राज्य दिया। यह सही लगता है, क्योंकि राव केलण के सालो का यह राज्य इनके पास था।

इतिहास के उस युग में भाटी शासक अपने पड़ोस के मुसलमान मुख्यो, प्रधानो और नवाबो के साथ विवाह का सम्बन्ध करना कोई सामाजिक बाधा नहीं मानते थे। और न ही इनसे उत्पन्न सन्तानो पर कोई सामाजिक लाछन या कुठाराघात होता था। इन सन्तानो को सार्वजनिक रूप से वही अधिकार, मान-सम्मान और जागीरें मिलती थी जो राजपूत राणियो से उत्पन्न सन्तानो को मिलती थी। जिस धर्म निरपेक्ष समाज और राज्य का आज हम जोर-शोर से प्रचार कर रहे हैं वह भाटियो के आचार-विचार में सैकड़ो वर्षों पहले से निहित था। जैसे कुम्भा समझता था कि वह पहले भाटी पिता का पुत्र था पीछे मुसलमान माता का। उसने हिन्दू पिता के बन्धन के कारण दूसरे मुसलमान को मारा। उसने यह कभी नहीं सोचा कि वह मुसलमान माता से जन्मा पुत्र था। यह संकीर्ण भावनाएँ उस समय

नही थी, यह बाद की राजनीति की देन है। धर्म एक बन्धन नही था, केवल जीवन जीने के लिए एक रिवाज था। इसीलिए मेहरवान और भीमदे के वशजो ने राजपुत्र होते हुए भी इस्लाम धर्म स्वीकार किया। उन्हें अपनी पैतृक जागीरें भोगने मे कोई कठिनाई नही थी और न ही उन पर इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिए कोई दबाव या मजबूरी आई थी, और अगर ऐसा होता तो पूगल राज्य उन्हे अवश्य सरक्षण प्रदान करता। लेकिन यह सब स्वेच्छा से किया गया, बस एक रिवाज था कि मुसलमान बन गये और क्योकि सर्वमान्य आम रिवाज था, इसलिए अन्य भाटियो ने इसका विरोध नही किया।

यहा यह ध्यान देने योग्य बात है कि जहा राव केलण ने केवल एक पुत्र रणमल को मुलतान और सिन्ध प्रान्त से लगने वाली सीमा पर मरोठ की जागीर दी थी और अन्य पुत्रो को जैसलमेर और राठौड राज्यो की सीमा पर जागीरें दी थी, वहा राव चाचगदेव ने अपने पुत्रों को देरावर, दुनियापुर, रुकनपुर, बीजनोत और डेरा इस्माइल खा की जागीरें देकर मुलतान, पजाब और सिन्ध प्रान्तो की सीमा पर उन्हे बसाया था। उन्हे यह भय था कि इन पश्चिम के प्रदेशो से मुसलमान निरन्तर पूगल राज्य पर आक्रमण करते रहेंगे, इसलिए अपने वशजो को सीमा पर बसाना सुरक्षा की दृष्टि से अच्छा रहेगा। लेकिन बाद मे उनका यह निर्णय पूगल राज्य के हित मे नही रहा।

अध्याय–ग्यारह

राव बरसल
सन् 1448-1464 ई.

राव चाचगदेव की सन् 1448 ई मे दुनियापुर मे मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र बरसल पूगल की राजगद्दी, गजनी के अष्टचक्र वाले तख्त पर बैठे। इनके पिता ने मलिक काला लोदी से युद्ध करने के लिए प्रस्थान करने से पहले विधिवत इन्हें अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था।

राव बरसल, सन् 1448-1464 ई, के समकालीन शासक निम्न थ

जैसलमेर	मन्डोर और जोधपुर	दिल्ली
1 रावल बरसी, सन् 1427-1448 ई	1 मेवाड के अधिकार मे, सन् 1438-1453 ई तक	1 सुलतान अल्लाउद्दीन आलम शाह, सन् 1444-1451 ई
2 रावल चाचगदेव, सन् 1448-1467 ई	2. राव जोधा, मडोर मे, सन् 1453-1459 ई	2 सुलतान बहलोल लोदी, सन् 1451-1489 ई
	3 राव जोधा, जोधपुर मे, सन् 1459-1488 ई	

राव चाचगदेव की मृत्यु के पश्चात् उनके अविरल शत्रु काला लोदी, जिन्हे उनके विरुद्ध एक भी निर्णायक सफलता नही मिल सकी थी, अब इस प्रयास मे लगे कि जो कुछ उन्होने अट्ठारह वर्षों के शासनकाल म अर्जित किया था उसे मिट्टी मे मिलाकर बराबर कर दिया जाये। काला लोदी के हाथो राव चाचगदेव के मारे जाने पर उनका और उनके साथी लगाओ का साहस आसमान पर था, इसी उत्साह मे उन्होने दुनियापुर और मूमनवाहन पर अधिकार कर लिया। एक शक्तिशाली शासक के उठ जाने के बाद मे सदैव ऐसा हुआ है कि कुछ काल अव्यवस्था, शून्य और विश्राम का रहता था, जिसका अल्पकालीन लाभ शत्रु और प्रतिद्वन्द्वी उठाते थे। मुलतान के शासकों और लगाओ ने अथक प्रयास किया कि वह किसी प्रकार पूगल के भाटियों को राव केलण और राव चाचगदेव द्वारा अधिकार मे लिए गए क्षेत्रों से बाहर निकाल दें। राव बरसल ने, जिन्हे राव चाचगदेव ने केहरोर के किले और क्षेत्र की सुरक्षा का उत्तरदायित्व सौंपा हुआ था, 17,000 सैनिकों और घुडसवारो की एक शक्तिशाली सेना का सगठन किया और मुलतान की सेना पर एक साथ दोहरा आक्रमण कर दिया। उन्होने पश्चिम मे दुनियापुर पर और पूर्व मे सतलज नदी पार मूमनवाहन पर आक्रमण किया। इस दोहरे आक्रमण का परिणाम यह हुआ कि शत्रु सेना दो भागो मे बट गई और उनका आपस का सम्पर्क टूट गया। क्योकि दुनियापुर और मूमनवाहन के बीच का क्षेत्र और सतलज नदी पार करने का स्थान राव बरसल के नियन्त्रण मे था, इसलिए मुलतान

की सेनाए अलग-थलग पड गई। युद्ध मे राव बरसल की विजय हुई, काला लोदी और हेबत खा लगा को राव चाचगदेव का पर्याय मिल गया। भाटियो के लिए सतलज नदी के पार के क्षेत्र अपने अधिकार मे रखने सामरिक और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थे, इससे मुलतान के शासक हमेशा असुरक्षित महसूस करते थे।

इधर राव बरसल दुनियापुर और मूमनवाहन के युद्ध के संघर्ष मे उलझे हुए थ, उधर हेबत खा लगा ने हशिम खा बलोच को उकसा कर बीकमपुर पर आक्रमण करवा दिया। राव ने काला लोदी और हेबत खा को दुनियापुर मे पराजित करने के बाद उस क्षेत्र का *प्रबन्ध अपने आदमियो को सम्भलाया और स्वय तुरन्त बीकमपुर की राहत के लिए चल* दिए। उन्होने हशिम खा को वहा से मार भगाया और बीकमपुर की सुध बुध ली।

उन्हे बीकमपुर के किले की खस्ता हालत देख कर बहुत अफसोस हुआ। रणमल के पुत्रो ने कभी किले की मरम्मत और रख-रखाव की ओर ध्यान नही दिया था। वह किला जीर्ण शीर्ण अवस्था मे था और रही-सही कसर हशिम खा के आक्रमण ने पूरी कर दी थी। राव बरसल ने किले की मरम्मत का कार्य करवाना आरम्भ किया। उन्होंने किले के टूटे-फूटे क्षतिग्रस्त किवाडो के स्थान पर नये सुदृढ फाटक लगवाये ताकि किला सुरक्षित रह सके। उन्होने किले मे रावो के रहने योग्य अच्छे महल भी बनवाये।

राव चाचगदेव रणमल के पुत्र गोपा केलण से अप्रसन्न रहते थे। वह उसके कुप्रबन्ध, निष्क्रियता और अयोग्यता के लिए उसे टोकते रहते थे, लेकिन गोपा इसकी ओर कोई ध्यान नही देता था।

जिस समय राव बरसल बीकमपुर मे थे, जैसलमेर के राव बरसी उनके पिता राव चाचगदेव का शोक करने वहा आए और साथ ही उन्हे मुलतान के शासक और लगाओ के विरुद्ध विजय के लिए बधाई भी दी।

कुछ इतिहासकारो का मत है कि राव बरसल बीकमपुर से पूगल आए और बाद मे *अपने दिवगत पिता के पीछे धार्मिक क्रिया-कर्म करवाये। यह उचित भी लगता है। राव* चाचगदेव की मृत्यु के समय कुमार बरसल पास मे केहरोर मे थे। उन्होंने उनकी अन्त्येष्टी दुनियापुर मे करने के बाद मे मातम केहरोर मे रखा। इससे पहले कि वह केहरोर से पूगल आते, दुनियापुर और मूमनवाहन का युद्ध आरम्भ हो गया था और उसके समाप्त होते ही बीकमपुर पर हशिम खा का आक्रमण हो गया था। चूकि राव बरसल के बीकमपुर आने की सूचना रावल बरसी को जैसलमेर म मिल चुकी थी इसलिए उन्होने वहा आकर सात्वना देने की औपचारिकता पूर्ण की। उनका विचार था कि पूगल जाने पर शायद राव वहा उपलब्ध नही होंगे। उनका यह विचार पूगल नही जाने के लिए तो ठीक था, परन्तु उचित विचार नही था। पूगल के राव जैसलमेर के शासको को सभी प्रकार से बडा मानते आए थे, इसलिए रावल बरसी का बडप्पन पूगल आने मे ही था, न कि मार्ग के किसी स्थान पर राव से मिलकर मातम की औपचारिकता को पूरा करने मे।

बीकमपुर स राव बरसल पूगल आये और दिवगत राव के अन्तिम धार्मिक क्रिया कर्म पूर्ण करवा कर दान दक्षिणा दी। राव चाचगदेव की मृत्यु के समय रणधीर अपनी जागीर देरावर मे थे। उन्होंने पिता का शोक वही रखा। उन दिनो कुम्भा भी अपने भाई

से मिलने के लिए देरावर मे पहले से आए हुए थे । यही उन्होने पिता की मृत्यु का समाचार सुना । इससे वह भडक उठे और कुछ समय पश्चात् काला लोदी को मारकर उन्होने पिता की मौत का बदला लिया ।

जैसलमेर के रावल वरसी राव चाचगदेव के समकालीन थे, वह उनसे भली भाति परिचित थे । वह उनकी शक्ति और युद्ध कौशल से कतराते थे । अब उन्होने सोचा कि राव बरसल के विषय मे आरम्भ से ही जानकारी लेना उनके लिए ठीक रहेगा क्योंकि वह अपना पहला निर्णायक युद्ध मुलतान के विरुद्ध जीत चुके थे और तत्परता से बीकमपुर की सहायता करने भी पहुच गये थे । इसलिए आपस की जानकारी, नीति और भविष्य की योजना के बारे मे नए राव से विचार विमर्श करना आवश्यक था । इसे चाहे उनकी अपनायत समझें या कूटनीति ? दुर्भाग्यवश थोडे दिनो बाद मे राव वरसी का देहान्त हो गया । इनके स्थान पर चाचगदेव जैसलमेर के रावल बने ।

मुलतान क्षेत्र मे अपने पिता काला लोदी का राव चाचगदेव और राव बरसल द्वारा बार-बार परास्त किया जाना, उनके पुत्र सुलतान बहलोल लोदी की प्रतिष्ठा पर दाग था, लेकिन वह दिल्ली की राजनीति मे इतने उलझे हुए थे कि स्वय पूगल के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए समय नही निकाल पाये । उनका सन् 1451 से 1489 ई तक का लम्बा शासन काल, राव बरसल (सन् 1448-1464 ई) और राव शेखा (सन् 1464 1500 ई) के लिए हितकारी नही रहा ।

राव बरसल दूरदर्शी व्यक्ति और योग्य शासक थे । राव जोधा उनके पिता के समय मे (सन् 1438 ई से) पूगल के कावनी क्षेत्र में शरण लिए हुए बैठे थे । मेवाडियो का क्रोध ज्यादा भाटियो पर रहता था, क्योकि इनकी छत्रछाया में बैठे हुए राव जोधा पर वह मन्डोर से हाथ नही डाल सकते थे । मेवाडी मन्डोर से और जोधा पूगल क्षेत्र स एक दूसरे से पजा लडाने से नहीं चूकते थे । मेवाडी भाटियो के वहम से उनके क्षेत्र मे जोधे के पीछे नही आते थे और जोधे के पास इतनी शक्ति नही थी कि वह स्वय के बलबूते पर मेवाड को परास्त करके मडोर पर अधिकार कर सकें । राव चाचगदेव ने अपने भानज क उत्पात को अपने जीवनकाल (देहान्त सन् 1448 ई) के शेष दस वर्षों तक सहा । राव बरसल जानते थे कि उनकी बुआ की सन्तानें अगर इसी प्रकार उनके क्षेत्र मे लम्बे समय तक जमी रही तो वह उनके साथ आखिर वही सलूक करेंगे जो इन्होने मेवाड मे अपने भानजो के साथ किया था और उस स्थिति स उबरने क लिए उन्हे अपने ही मामा राव रिडमल को मारना पडा था । राव जोधा या तो उनके राज्य के काम काज और प्रशासन मे हस्तक्षेप करेंगे, या स्वय और अपनी सन्तानो के गुजारे के लिए अलग राज्य की मांग करेंगे । पूगल के लिए दोनो स्थितिया अनुकूल नही थी ।

राव बरसल के शासन के पहले चार पाच वर्ष पश्चिम मे केहरोर और दुनियापुर के क्षेत्र मे काला लोदी से निपटने मे लगे और कुछ समय बीकमपुर की सुरक्षा के लिए उन्हें देना पडा । सन् 1452-53 ई मे इन्हे कुछ राहत मिली और राज्य में शान्ति स्थापित हुई । अब इन्होंने शुभ अवसर जानकर राव जोधा से पिंड छुडाने की योजना बनाई । वह पिछले चौदह वर्षों (सन् 1438 52 ई) मे कावनी के सुख के आदी हो गए थे । उन्हाने मन्डोर पर

वापिस अधिकार करने के अपने प्रयास लगभग छोड़ दिए थे। राव बरसल ने राव जोधा के साथ मन्डोर पर आक्रमण करने की योजना बनाई। उन्होने राव जोधा को भरपूर आर्थिक सहायता दी और मुलतान की मंडी से अन्य साज सामान का प्रबन्ध करके, उन्हे शीघ्र सेना सगठित करने का आग्रह किया। स्वय ने भी वचन दिया कि इस आक्रमण मे उनकी सेना भी उनके साथ रहेगी। राव जोधा ने जांगलू और नागौर की दिशा से मन्डोर पर सीधा आक्रमण किया। राव बरसल की सेना ने उन्हे दायें और बायें क्षेत्र मे सुरक्षा का आधार प्रदान किया। भाटियो और राठौडो के सुनियोजित प्रहार के सामने मेवाड की सेना नही ठहर सकी, उन्हें मन्डोर से पीछे हटना पडा। राव जोधा का सन् 1453 ई मे मन्डोर पर अधिकार हो गया।

राव जोधा स्वय वीर पुरुष थे, उनमे योग्यता की कमी नही थी। एक बार मन्डोर उनके अधिकार मे आने के बाद मे उन्होने अपनी योग्यता और कठोर परिश्रम व बलिदान से अपने राज्य का उत्तर, दक्षिण और पूर्व मे विस्तार किया। पश्चिम मे उन्होंने पूगल की ओरें विस्तार नही किया। उन्होने यह इसलिए नही किया क्योंकि पूगल उनका ननिहाल था, वनवास के पन्द्रह वर्षों तक पूगल मे उन्होने शरण पायी थी, वहा का अन्न पानी खाया था और पूगल ने मन्डोर लेने मे उनका साहस बधाया था और सहायता की थी। सबसे बडा कारण यह था कि वह पूगल की शक्ति और राव बरसल की क्षमता और युद्ध कौशल से परिचित थे। वरना वह उधर बढने से चूकने वाले नही थे। इसका स्पष्ट उदाहरण यह था कि राव बरसल की मृत्यु (सन् 1464 ई) के तुरन्त बाद मे राव जोधा ने राव शेखा का टटोला और पाया कि अब वह पहले वाली बात नही थी। राव शेखा की अनेक कठिनाइया थी, उनमे राव बरसल की तरह योग्यता भी नही थी। इसलिए राव जोधा ने अपने पुत्र बीका को समझाया कि उन्हें नया राज्य स्थापित करने के लिए पश्चिम मे पूगल मे ही पोल हाथ आएगी। कावनी मे रहते हुए बीका कोई बालक नही थे, जब राव जोधा मन्डोर आए थे, तब उनकी आयु पन्द्रह वर्ष की थी। इसलिए उन्हे पूगल के क्षेत्र का पूरा ज्ञान था। अपने पिता के समझाने से ही वह राव बरसल की मृत्यु के एक वर्ष बाद मे पूगल की ओर, 30 सितम्बर, सन् 1465 ई को, जोधपुर छोड़ कर रवाना हुए थे। यह राव जोधा की कृतघ्नता थी कि उन्होंने अपने पुत्र को पूगल की ओर प्रस्थान करने का सुझाव दिया, उन्हें रोका नही। अगर उनमे पूगल के प्रति कृतज्ञता होती तो वह अपने पुत्र को अन्य प्रदेशो में राज्य स्थापित करने के लिए कहते। इससे स्पष्ट था कि राव बरसल की आशका कि अगर राव जोधा को कावनी से शीघ्र दूर नही भेजा तो वह पूगल को दुख देंगे, ठीक थी।

रावल केहर के पुत्र और राव कैलण के छोटे भाई कलकरण के पुत्र कुमार जैसा ने भी राव जोधा की मन्डोर लेने मे महत्वपूर्ण सहायता की थी। इसके बाद मे जैसा और उनके वशजो की सेवाओं के लिए उन्हे मारवाड मे बडी बडी जागीरें मिली। इन जैसा के वशज जैसा भाटी हैं, इनमे लवेरा के जैसा भाटी मुख्य हैं।

जब राव जोधा ने काफी बडा क्षेत्र जीत लिया तब वह सामरिक कारणो से अपनी राजधानी मन्डोर से जोधपुर, सन् 1459 ई मे, ले गए। वहा उन्होने पहाडी पर किला बनवाया और नगर बसाया, जिसका नाम अपने नाम पर 'जोधपुर' रखा।

पनरै से पनरोतरै जेठ मास पख च्यार।
जोधे रचियो जोधपुर ग्यारस सनिवार।।

कनल टाड के अनुसार, 'टाड राजस्थान' भाग दो, पृष्ठ 1224, राव बरसल ने सन् 1474 ई मे बरसलपुर बसाया और वहा किला बनवाया। यह सही नही है। राव बरसल का देहान्त सन् 1464 ई म हो गया था, सन् 1469 ई म तो इनके पुत्र राव शेखा को मुलतान के शासको ने बन्दी बना लिया था। सही स्थिति यह थी कि राव बरसल ने बरसलपुर नगर और किले की स्थापना की थी। इस कार्य को राव शेखा ने पूर्ण करवाया।

कोडमदेसर म सन् 1413 ई मे राजकुमार शार्दूल की युवरानी मोहिल कोडमदे सती हुई थी। इनकी स्मृति मे उनके ससुर राव रणकदेव ने वहा एक बडा तालाब बनवाया था। इसी स्थान पर राव रिडमल की रानी और राव जोधा की माता भटियाणी कोडमदे सन् 1438 ई म, सती हुई थी। राव जोधा ने सन् 1459 ई मे जोधपुर की स्थापना के बाद मे, राव बरसल स स्वीकृति प्राप्त करके कोडमदेसर के लगभग चालीस साल पुराने तालाब का जीर्णोद्धार करवाया इसकी मिट्टी निकलवाई और इसे खुदवाकर बडा बनवाया।

राव बरसल का देहान्त सन् 1464 ई मे पूगल मे हुआ। इन्होने केवल सोलह वर्ष राज्य किया। इनसे पहले राव केलण ने भी सोलह वर्ष राज्य किया था और राव चाचगदेव ने अट्ठारह वर्ष राज्य किया। राव केलण और राव बरसल प्राकृतिक मौत मरे, राव रणकदेव और राव चाचगदेव युद्धो मे मारे गए थे।

इनके चार पुत्र थे

1 *राजकुमार शेखा ज्येष्ठ पुत्र थे, यह इनके बाद मे पूगल के राव बने।*

2 कुमार जगमाल इनके दूसरे पुत्र थे। इन्हे मूमनवाहन की जागीर प्रदान की गई। इसके अलावा राव बरसल ने इन्हे और तीसरे पुत्र जोगायत को बरसलपुर की जागीर मे भी आधा आधा हिस्सा दिया। जगमाल की मृत्यु के बाद मे मुसलमानो ने मूमनवाहन पर अधिकार कर लिया था।

3 तीसरे पुत्र कुमार जोगायत को केहरोर की जागीर प्रदान की गई थी। राव चाचगदेव के समय स्वय कुमार बरसल केहरोर के प्रब धक थे। इसके अलावा बडे भाई जगमाल के साथ बरसलपुर की जागीर मे भी इन्हे आधा हिस्सा दिया गया। जोगायत बडे दानी और वीर पुरुष थे। इनके विषय मे कहा गया था

जोगायत जीआर, पाना उथलसी परम।
तेने बीजी प्यार नहरो होसी वैरउत।।

जोगायत के पुत्रो से मुसलमानो ने केहरोर छीन लिया था। बाद मे इनके वशजो ने इस्लाम धर्म स्वीकार करके पूगल से अपने सम्बन्ध समाप्त कर लिए और दशहरे के त्योहार पर पूगल आना बन्द कर दिया।

4 कुमार तिलोकसी को राव बरसल ने मरोठ की जागीर प्रदान की। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण जागीर थी। यहा राव चाचगदेव और राव बरसल के समय मे पूगल राज्य की अस्थाई राजधानी थी। इनके पौत्र भैरवदास के नि सन्तान मरने से राव जैसा

(सन् 1553-87 ई.) ने मरोठ की जागीर का अधिग्रहण करके इसे पूगल राज्य मे मिला लिया।

राव बरसल और उनके पुत्रो के विषय मे निम्न कवित्त और दोहे प्रसिद्ध हैं।

साख रो कवित्त[1]

दुय तिरि चन्दण अढार, वरे जलबद मोताहल[2]।
सेर एक सोवन्न[3], पच रुपक झाला हल[4]।।
बारह जूध नर-महिष[5] चादर खट चीरह[6]।
च्यार तुरी[7] चतर ऊठ[8], एक सौ गाय सलीरह[9]।।
भाटिया राय हुवसी भुवण, लाभ धम्म सोभाग तुव।
बेरसल हाथ माडवियो, चायइ एतै चाचग सुव[10]।।

1 साखी का कवित्त, 2 मोती, 3 सुवर्ण, 4 पाव सेर चमकती चादी, 5 बारह जोडे भैस, 6 छहो प्रकार के चादर आदि वस्त्र, 7 चार घोडे, 8 चार ऊट, 9 एक सौ दूध देती गाय, 10 माटी।

दोहा

खीदे समो न बारहठ, बेरड समो न राय।
जाते जुग जासी नही, दूहो चवे पसाय।।

बारहठ पसायत कहता है कि खीदे के समान कोई बारहठ नही और बरसल के समान कोई राजा नही। इनकी कीर्ति युगों तक नही मिटेगी।

बेटा री साख रो दूहो

सेखो राव निलोकसी, जोगायत जगमाल।
वे रागर रा दीकरा, एक एक हू मल्ल।।

बरसल के बेटे एक से एक मले हैं।

राव बरसल स्वय कवि थे, अच्छे पढे लिखे और ज्ञानी पुरुष थे। उन्होने लेखको, कवियो, चारणो और सगीतकारो को सरक्षण दिया और आवश्यकता पडने पर उन्हें आर्थिक सहायता भी दी। वैसे यह समय समय पर दान और पुरस्कार सत्कार्य के लिए देते रहते थे।

राव बरसल एक साहसी लेकिन अडियल शासक थे। वह अपने विरोधियो को उचित दण्ड देते हुए हिचकिचाते नही थे। उनके गद्दी पर आने के तुरन्त बाद मे इन्होने मुलतान के शासको और लगाओ का कडा विरोध किया और बीकमपुर से हशिम खां बलोच को मार भगाया। इसके बाद मे उनकी पश्चिमी सीमा पर इनके शासनकाल मे शान्ति बनी रही। यह अपने सम्बन्धियों और भाइयो के लिए बहुत उदार थे। इसीलिए इन्होने गोपा केलण के लिए हशिम खां बलोच से बीकमपुर मुक्त कराया और राव जोधा की सहायता करके उनके लिए मन्डोर को मेवाड से मुक्त कराया और वहा उनका स्वतन्त्र अधिकार करवाया। इन्होंने योग्यता से अपने राज्य का सुचारु शासन चलाया। जितनी भूमि इन्हे पिता राव चाचगदेव से उत्तराधिकार मे मिली थी, उसमे से इन्होने शत्रुओ को एक बीघा भूमि भी नही लेने दी और उसे ज्यो की त्यो अपने पुत्र शेखे को अमानत के रूप में सम्मला दी।

पूगल के राव रणकदेव, केलण और चाचगदेव ने पूगल के राज्य का विस्तार किया। राव बरसल ने उस राज्य मे जोडा कुछ नही परन्तु इसमे कमी भी नही होने दी, इस यथा वत स्थिर रखा। इनके बाद के रावो ने राज्य खोया ही खोया, उसमे जोडा कुछ नही।

अपने पिता राव चाचगदेव की तरह इन्होंने भी अपने पुत्रो जगमाल, जोगायत और तिलोकसी को राज्य के पश्चिमी भाग मे मूमनवाहन, केहरोर और मरोठ की जागीरें दी, ताकि इनके वशज पूगल राज्य की इस सीमा की रक्षा कर सकें। लेकिन दुर्भाग्यवश उनका ऐसा सपना साकार नही हुआ। जगमाल के वशजो से मुसलमानो ने मूमनवाहन छीन ली और केहरोर के जोगायत के वशज स्वय ही मुसलमान बन गये। यह सब राव बरसल के बाद मे पूगल की शक्ति शनै शनै क्षीण होने के कारण हुआ था। पूगल अपने भाई भतीजो का उचित नेतृत्व और सरक्षण प्रदान करने मे असमर्थ होता गया।

अध्याय–बारह

राव शेखा
सन् 1464-1500 ई.

सन् 1464 ई में पूगल के राव बरसल की मृत्यु के पश्चात् इनके ज्येष्ठ पुत्र राव शेखा पूगल की राजगद्दी पर बैठे। इन्हें पिता ने लगभग उतना ही राज्य क्षेत्र विरासत मे दिया था, जितना इनके पितामह राव चाचगदेव छोड़ कर गए थे। इनके समकालीन शासक निम्न थे, राव शेखा ने सन् 1464 से 1500 ई तक राज्य किया।

बीकानेर	जोधपुर	जैसलमेर	दिल्ली
राव बीका, सन् 1485-1504 ई	1 राव जोधा, मन्डोर 1453-59 ई जोधपुर 1459 88 ई	1 रावल चाचगदेव, सन् 1448 67 ई.	1 बहलोल लोदी, सन् 1451-89 ई
	2 राव सातल, सन् 1488-1491 ई	2 रावल देवीदास, सन् 1467-1524 ई	2 सिकन्दर लोदी, सन् 1489-1517 ई
	3 राव सूजा, सन् 1491-1516 ई.		

देवी करणीजी का जन्म सन् 1387 ई मे हुआ था और इन्होंने सन् 1538 ई मे समाधि ली। इनके सक्रिय जीवनकाल मे प्रमुख शासक; पूगल के राव बरसल, शेखा और हरा हुए, जोधपुर के राव जोधा, और बीकानेर के राव बीका और लूणकरण हुए। यह देवी अद्भुत पराक्रम वाली, साहसी और दूरदर्शी थी, इन्हें दैविक शक्तियां प्राप्त थी। यह जांगल प्रदेश मे शान्ति, सद्भावना और भाईचारे का वातावरण स्थापित करना चाहती थीं। आपस के स्थानीय झगड़े, मन मुटाव छोटी मोटी झड़पें, धोखा धड़ी आदि निपटा कर यह एक सुन्दर वातावरण लाने की पक्षधर थी। चारण जाति की होने के कारण यह सभी राजपूत जातियो की पूजनीय थीं और सब इनका मान सम्मान करते थे। इनके कहने और करने मे फर्क नहीं होने से यह सभी की श्रद्धा की पात्र थीं। गायें चराते हुए यह गांव गांव का भ्रमण करती थी और सब को सदोपदेश देती थीं। इनका मुख्य ध्येय लोगों मे धैर्य, सहनशीलता, अहिंसा और नैतिकता का प्रचार करने का था। इनका उपदेश था कि बदले की भावना छोड़ो, आपस मे रक्तपात नहीं करो, झगड़ों और विवादों का आपस में या पंचायत से समाधान करो। राजपूतों को अहंकार का त्याग करना चाहिए, इसी के कारण उनकी अनेक पीढ़ियों का क्षय हुआ था। इनका धाम बीकानेर जिले के देशनोक नगर में है।

उस समय जांगलू में साखलो का राज्य था। यह कमजोर शासक थे। इनके चारों ओर पूगल, जैसलमेर, नागौर और मोहिलो के शक्तिशाली राज्य थे। यह अपने पैतृक प्रदेश पर बड़ी मुश्किल से अधिकार बनाये हुए थे। वह कमजोर होने के कारण अपना अस्तित्व रखने के लिए शक्ति का उपयोग नही कर सकते थे। इसलिए इन्होंने पड़ोस के राज्यों से अपनी पुत्रियों के वैवाहिक सम्बन्ध किए या इन राज्यों की निष्ठा और ईमानदारी से सेवा की। जांगल प्रदेश के शासक नापाजी साखले ने अपनी बहन नौरंगदे का विवाह मन्डोर के शासक राव जोधा से किया था, इन्ही के सन् 1438 ई में बीका नाम के पुत्र पैदा हुए। नौरंगदे जांगलू के माणकपाल साखले की पुत्री थी। बीका के जन्म स्थान का सही अभिलेख नही है, यह या तो अपने ननिहाल जांगलू मे पैदा हुए या अपने पिता के ननिहाल पूगल में जन्मे थे। माहेराज सांखले के कारण पूगल के भाटियों और जांगलू के सांखलों के सम्बन्ध अच्छे नहीं थे, परन्तु राव केलण को इनके द्वारा दिए गये सहयोग और सहायता के कारण राव बरसल इनसे प्रभावित थे और इनका विशेष मान रखते थे। राव शेखा एक वीर और साहसी योद्धा थे, साथ ही वह अड़ियल, अभद्र और बदमिजाजी भी थे। इन्होंने जांगल प्रदेश पर छुट पुट आक्रमणों को प्रोत्साहन दिया और उस क्षेत्र में लूटपाट करने के लिए भाटियों को उकसाया और उन्हें आश्रय दिया। नापा सांखला अपनी बहन राणी नौरंगदे के पास जोधपुर गए और भाटियों के विरुद्ध अपने दृष्टिकोण से बढ़ा-चढ़ा कर उन्हें शिकायत की। उन्होंने अपनी बहन को बताया कि पूगल के भाटी डाका डालकर उनके क्षेत्र से पशुओं और अन्य माल असबाब को जबरदस्ती ले जाते थे। इन वारदातों के कारण अनेक किसान और अन्य वर्ग के लोग उनके राज्य से पलायन करके अन्यत्र जाकर बस गए थे। इससे इनके राज्य की अर्थव्यवस्था चरमरा गई थी और राज्य में समृद्धि के स्थान पर भाटियों ने कंगाली ला दी थी। उन्होंने उन्हें यह भी सुझाव दिया कि अगर उनका पुत्र राजकुमार बीका उन्हें भाटियों से बचाने उनके साथ चले तो वह अपने राज्य का अधिकार स्वेच्छा से भानजे को सौंप देंगे, वरना अवसर पाकर भाटी उस पर अधिकार कर ही लेंगे। उन्होंने कहा कि इसके बजाय कि भाटी शक्ति से उनका राज्य छीनें, उससे अच्छा यही था कि वह अपना राज्य राठौड़ो को सौंप दें। इससे उनके भानजे कुछ एहसान अवश्य मानेंगे भाटी उनका मान-सम्मान क्यों करेंगे?

राव जोधा की समस्या यह थी कि वह अपने अनेक पुत्रों, भाइयों और भतीजों को अपने राज्य में से कम से कम भूमि बांटना चाहते थे। उन्हें भूमि की इतनी भूख थी कि वह कभी पूरी नही हुई और वह इतने स्वार्थी और कन्जूस थे कि जीती हुई भूमि स्वयं रखते थे, उसमें से किसी को जागीर नही देना चाहते थे। उन्हें भूमि की इतनी लालसा थी कि अपने भाई कांधल की मृत्यु का बदला लेने के लिए सारंग खां को मारकर लौटते हुए जब वह द्रोणपुर में रुके तो उन्हें अपने पुत्र राव बीका से लाडनू का परगना मांगते हुए हिचक नही हुई। जब उनकी राणी ने उन्हें अपने भाई नापा की व्यथा सुनाई और उनका प्रस्ताव उनके सामने रखा तो उन्होंने इसे ईश्वरीय देन समझा। उन्होंने यह नहीं सोचा कि अगर उनके साले दुविधा में थे तो उन्हें उनकी सैनिक सहायता करनी चाहिए; पूगल के भाटी कौनसे उनके पराये थे जिनसे मिल बैठकर बात नही की जा सकती थी। उन्होंने न तो अपने ननिहाल

का ध्यान आया और न पुत्र बीका के ननिहाल का। उन्होने यह कभी नही सोचा कि उनके कारण उनके साले अगर भूमिविहीन हो गए तो उन्हे क्या शोभा मिलेगी ? बीका न भी पिता का समर्थन किया, क्योकि वह भी राज्य के भूखे थे, चाहे वह मामे का हो या बुआ के पुत्रो का। बीका ने दिनाक 30 सितम्बर, सन् 1465 ई (सम्वत 1522, आश्विन सुदी 10) को जागलू जाने के लिए जोधपुर छोडा। उनके साथ मे चाचा कांधल, भाई बीदा और मामा नापा सांखला थे। इनके अलावा उनके साथ चाचा मडला, रूपा, माडणा और भाई जोगा भी थे। राव जोधा ने मन ही मन नापा साखला को धन्यवाद दिया कि उनकी कृपा से उनकी काफी भीड छट गई थी, आगे जैसी उनकी किस्मत थी।

जब बीका अपने समूह और साथियो के साथ जागलू की राह पर थे, उन्हे सौभाग्य से देशनोक के स्थान पर देवी करणीजी के दर्शन हुए और उनसे साक्षात्कार हुआ। देवी ने कुमार बीका के साहस, धैर्य, आशावाद और पक्के विचारो की मुक्त कठ से सराहना की। बीका तुरन्त उनके भक्त और शिष्य बन गये, देवी ने उन्हे सफलता के लिए आशीर्वाद दिया। वहा से वह जागलू पहुचे, जहा मामा नापा साखले ने अपने उजडे हुए राज्य के 84 गाव उन्हे भेंट किये और अपनी सेवाए उन्हे अर्पित की। इस प्रकार बीका, सन् 1465 ई मे, देवी कृपा से जागलू के स्वामी बन गए। मामा भूमिविहीन हुए, भानजा भूमिधारी बने। जोधपुर म नापा की बहन व बीका की माता ने उत्सव मनाया कि उनके बेटे को भाई का जागलू का राज्य मिल गया।

पूगल के राव शेखा, जागल प्रदेश, फलौदी, पोकरण आदि क्षेत्रों मे अपने विभिन्न अभियानो मे घूमते रहते थे, इसी क्षेत्र मे देवी करणीजी रहती थी और अपनी गायें चराती थी। इसलिए इनका आपस मे मिलना प्राय होता रहता था। इनमे आपस मे एक दूसरे के लिए आदर था, राव शेखा देवी से काफी प्रभावित थे और उनके अनन्य भक्तो म से थे। वह उनके धर्म भाई बने हुए थे और बहन भाई के पवित्र रिश्ते को श्रद्धा से निभाते थे। उनकी तरह ही, जैसलमेर के रावल चाचगदेव और बाद में रावल देवीदास भी देवी करणीजी के अनन्य भक्तों और शिष्यो मे से थे। देवी करणीजी की प्रसिद्धि, उनका आत्मिक ज्ञान, उच्च नैतिकवाद और व्यक्तिगत प्रभाव दूर-दूर तक फैला हुआ था। इनकी अच्छाइयो और दैविक शक्तियो का प्रचार सिध और पजाब प्रदेश तक मे था, मुलतान भी इनके प्रभाव से अछूता कैसे रहता ? वहा के पीर और सिद्ध पुरुष इनके प्रति आदर की भावना रखते थे। इस प्रकार देवी करणीजी का प्रभाव भाटी, राठौड और सांखलो के प्रदेशो को लाघ कर, हिन्दू मुसलमान के सकीर्ण दायरे स निकल कर, दूर-दूर तक फैला हुआ था।

देवी करणीजी राव शेखा के व्यक्तिगत शौर्य और साहस की प्रशसक थी। राव शेखा की योग्यता और कार्य कुशलता मे वह सार्थकता नही थी जिससे वह अपने अधीन भाई-भतीजो और सामन्तो पर अकुश रखकर उन पर नियन्त्रण कर सकें और उनकी बढ़ती हुई महत्वाकाक्षाओं और लालसाओं की पूर्ति कर सकें। इन लोगो की पूगल के प्रति निष्ठा मे कमी थी और राव के प्रति वह ईमानदार भी नहीं थे। देवी करणीजी के आकलन के अनुसार पूगल राज्य म स्थिति विस्फोटक थी और उसे सम्भालना राव शेखा के वश की बात नहीं थी। इधर उनके विचार से बीका का भविष्य उज्ज्वल बन रहा था, उनमे युग

पुरुष के गुण उभर रहे थे और आने वाले समय में वह महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले थे। समय और भाग्य दोनों उनका साथ दे रहे थे। इसलिए उन्होंने राव शेखा को सलाह दी कि वह अपनी पुत्री रंगकंवर का विवाह कुमार बीका से कर दें। यह सम्बन्ध उनके राज्य और बीका के नव स्थापित राज्य के लिए शुभ होगा और उनके आपसी हित में रहेगा, लेकिन राव शेखा के स्वभाव और आचरण के अनुसार ऐसी नेक सलाह का स्थान उनके मस्तिष्क में नहीं था। अभी वह बीका के अस्तित्व के बारे में आशावान नहीं थे, उनके पास राज्य के नाम पर केवल मामा नापे साखले की दी हुई भूमि थी, जिसे उनसे कोई किसी भी समय छीन सकता था। वह केवल राव जोधा के पुत्र थे, राज्य के नायक या स्वामी नहीं थे। इसलिए पूगल जैसे सशक्त और विस्तृत राज्य की राजकुमारी का हाथ ऐसे कुमार बीका को सौंपना उनकी गरिमा को गिराना होगा। उनके विचार में कुमार बीका उनकी पुत्री के लिए योग्य वर नहीं थे। दूसरे, कुमार बीका पूगल की भटियाणी कोडमदे के पौत्र भी थे।

राव बरसल की मृत्यु के पश्चात् पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर मुलतान और मुसलमानों का प्रभाव और दबाव फिर से बढ़ रहा था। वह पूगल क्षेत्र में धावे करने लगे थे और सीमा पर छुट-पुट वारदातों का होना एक दैनिक सिलसिला बन गया था। इसी बीच हुसैन खान लंगा (सन् 1469-1502 ई) मुलतान का शासक बन गया। पूर्व के कड़े अनुभवों के कारण उसे पूगल का राज्य फूटी आंख भी नहीं सुहाता था। पूगल के सतलज और व्यास नदियों के पार के मुलतान की देहरी पर दुनियापुर और केहरोर के किले, एक प्रकार से मुलतान के शासन को चुनौती थे और यह उसकी प्रतिष्ठा को आंच थी। राव शेखा अपने पश्चिमी क्षेत्रों और किलों का प्राय दौरा करते रहते थे और चौकसी बरतते थे। दुनियापुर में कुम्भा, केहरोर में जोगायत, मूमनवाहन में जगमाल, मरोठ में तिलोकसी और देरावर में रणधीर, अपना सुरक्षा का कार्य सम्भाले हुए थे। यह सब जागीरें मुलतान से सटी हुई सीमा पर थी। सिन्ध प्रदेश की सीमा पर रुकनपुर में मेहरवान और बीजनोत में भीमदे के वंशज सुरक्षा व्यवस्था को सम्भाले हुए थे। एक बार राव शेखा अपनी सीमा के क्षेत्र के निरीक्षण पर गए हुए थे, उनकी गतिविधियों की जानकारी हुसैन खान लंगा को रहती थी। भाटियों की चौकसी में गफलत और सतर्कता की कमी का लाभ उठाकर हुसैन खान लंगा ने उन पर छापा मारा और उनकी पर्याप्त सुरक्षा के अभाव के कारण, उन्हें बंदी बना लिया। वह कड़ी सुरक्षा में मुलतान के किले में रखे गए। केलण भाटियों के लिए यह सबसे बड़ी शर्मनाक घटना थी। राव चाचगदेव और राव बरसल ने उन्हें सीमा क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण जागीरें इसलिए नहीं दी थी कि इनसे कमाई करके वह और उनके वंशज मौज मस्ती मारें, बल्कि इसलिए प्रदान की थी कि वह पूगल राज्य के सुदृढ़ रक्षा स्तम्भ होंगे और सीमा के अडिग प्रहरी रहेंगे। इस संताप से कि उनकी भूल के कारण पूगल के राव आज उसी मुलतान के बन्दी थे, जो कभी राव केलण, चाचगदेव और बरसल की ओर आंख उठाकर भी नहीं देख सकता था, वह पूगल आकर मुंह दिखाने लायक नहीं रहे। उन्हें यह दुख खा रहा था कि राव शेखा युद्ध में पराजित हुए बिना बन्दी बना लिए गए थे। उन्होंने अपने स्तर पर सभी प्रकार से अनुनय विनय और चतुराई का प्रयोग किया, लेकिन हुसैन खां लंगा उनके जाल में अब फंसने वाला नहीं था। बड़ी कठिनाई से पूगल के राव उनके कब्जे में आये थे, उन्हें आसानी से छुड़ाना असम्भव था।

राव शेखा की धर्म बहन इस सारी बदलती स्थिति से अनभिज्ञ नहीं थी। वह दूरदर्शी होने के साथ में दैविक शक्ति से भविष्यवक्ता भी थी। वह पूगल गई, वहां राव शेखा की राणी, प्रधान गोगली भाटी और दीवान उपाध्याय से सारी समस्या के बारे में बात की और इसके निराकरण का सुझाव भी उन्हें दिया। उन्होंने उन्हें समझाया कि अगर वह कुमारी रंगकंवर का विवाह कुमार बीका से करने के लिए सहमत हो तो वह राव शेखा की मुलतान से मुक्ति का उपाय करेंगी। उन सबको मालूम था कि राव शेखा पहले से ही इस वैवाहिक सम्बन्ध के विरुद्ध थे, इसलिए इस प्रस्ताव से उनका सहमत होना अपनी मृत्यु को न्योता देना था। देवीजी ने विस्तार से सारी योजना उन्हें समझाई, अच्छे बुरे का बोध कराया, राव शेखा को मुलतान में दी जा रही यातनाओं से अवगत कराया और वह स्थिति भी उजागर की कि अगर राव की मुलतान में मौत हो गई तो इसके क्या परिणाम होंगे? इस प्रकार देवी करणीजी के स्पष्ट विवेचन में और उनके प्रकोप और प्रभाव से राणी, गोगली और उपाध्याय की स्थिति समक्ष में आ गई। उन्होंने विचार विमर्श करके देवी करणीजी को राजकुमारी रंगकंवर का विवाह कुमार बीका के साथ कर देने का वचन दिया और पुरोहित से विवाह का शुभ मुहूर्त निकलवाया। देवी करणीजी इस सम्बन्ध के लिए बीका की सहमति पहले से प्राप्त कर चुकी थी। उन्होंने पूगल द्वारा इस वैवाहिक सम्बन्ध के लिए सहमत होने से और विवाह की तिथि से बीका को जांगलू में अवगत कराया।

इसके पश्चात् देवी करणीजी मुलतान गई और वहां के मुसलमान पीरों के मठ में उनकी अतिथि बनी। उन्होंने पीर को अपने वहां आने का उद्देश्य बताया। देवी करणीजी की प्रखर बुद्धि, ज्ञान, उदार आचरण, दैविक भाव, गरिमा और चमत्कारिक प्रवृत्ति से पीर बहुत प्रभावित हुए। उन्हें उच्च श्रेणी की अलौकिक शक्तियों से युक्त देवी माना और बहुत स्नेह से उनका आदर सत्कार किया और उन्हें मान सम्मान दिया। पीरों की इच्छा से देवी ने उनकी धर्म बहन बनना स्वीकार किया। मुलतान के पीरों की परम्परागत गद्दी ने इस बहन भाई के पवित्र रिश्ते को, हिन्दू मुसलमान का भेदभाव करते बिना, सन् 1947 ई. तक साल दर-साल निभाया। आसोज माह के नवरात्रों के पक्ष में प्रत्येक वर्ष मुलतान के पीर बकरों की एक जोड़ी देवी करणीजी के चढावे के लिए मुलतान से देशनोक भेजते थे। इसे देशनोक के चारण बन्धु 'मामजी री सिलाड' के नाम से पुकारते थे और नवरात्रों में इस सिलाड के देशनोक पहुंचने का भक्तगण बड़ी उत्सुकता से इन्तजार करते थे। सन् 1947 ई. के बाद में राजनैतिक बाधाओं के कारण यह सिलाड आनी बन्द हो गई। इसे चालू रखने के लिए न तो मुलतान के पीर के शिष्यों ने प्रयास किए और न ही देशनोक के चारण बन्धुओं ने इस विषय में कोई रुचि दिखाई। भाटी इस रिश्ते को सत्ता के लोप के साथ भुला चुके थे।

देवी करणीजी राव शेखा को छुड़ाने के लिए कई बार मुलतान शासन के अधिकारियों और हुसैन खां लंगा से मिली। उन्होंने राव शेखा के विरुद्ध अपनी आपत्तियां उनके समक्ष रखीं, उन्हें राव के आचरण, व्यवहार, विचार या आश्वासनों पर कोई विश्वास नहीं था। वह पिछले पांच वर्षों से उनके क्षेत्र में हस्तक्षेप कर रहे थे, मुलतान की भूमि पर अपने पूर्वजों का अधिकार जताकर उनकी जनता और काश्तकारों से कर वसूल करते थे और जहां आवश्यकता पड़ती वहां बल प्रयोग करने में नहीं चूकते थे। इस प्रकार वह और उनकी प्रजा

राव शेखा से परेशान थी, अत उन्हे मुक्त कर देने से वह थोड़े समय बाद मे उन्ही पुराने हादसो की पुनरावृत्ति करेंगे। देवीजी निराश होकर वापिस मठ मे आई और लौट जाने की तैयारी करने लगी। उनके हावभाव और व्यवहार से पीर समझ गए की बहन का कार्य सिद्ध नही हुआ था। अगर वह उदास और निराश होकर वापिस पूगल जायेंगी तो न केवल इनकी साख और प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा बल्कि साथ ही पीरों की गद्दी को भी धब्बा लगेगा। पीर ने देवीजी से रुकने का आग्रह किया और विनम्र निवेदन किया कि उनके धर्म भाई राव शेखा (और अब पीर के भी धर्म भाई)को छुडाने के प्रयास करने के लिए उन्हे कुछ समय दें। पीर ने हुसैन खा लंगा को मठ मे बुला भेजा। उससे उन्होंने कहा कि राव शेखा उनके धर्म भाई थे और अमुक तिथि को इनकी पुत्री का विवाह होने से उनका पूगल मे उपस्थित रहना राजपूत परम्परा के अनुसार अत्यन्त आवश्यक था। लगा ने अपनी आपत्ति भी बताई। इसके आधार पर पूगल के राव के साथ एक सन्धि की रूप-रेखा तैयार की गई। हुसैन खा लगा, राव शेखा, देवी करणीजी और मुलतान के पीर के समक्ष दोनो राज्यो की भौगोलिक सीमाएँ निर्धारित की गई, दोनो पक्षो द्वारा अनाधिकृत भूमि और गांवो की अदला-बदली की नीति तय की गई। दोनो ने शपथ ली कि वह इस निश्चित सीमा को नहीं लाघेंगे, एक दूसरे के राज्य म लूटपाट और डाको को प्रोत्साहित करके अराजकता नही फैलायेंगे और दूसरे राज्य के विद्रोहियों, भगोडो आदि को आश्रय नही देंगे। दोनो पक्ष भविष्य मे भाईचारे और मित्रता की भावना से रहेंगे। आपसी विवादो को निपटाने के लिए वह देवी करणीजी और मुलतान के पीर की सहायता लेंगे। इसके बाद मे देवी करणीजी के आश्वासन और पीरो की जमानत पर, हुसैन खा लगा ने राव शेखा को मान सम्मान से अपने बराबर के शासक का आदर देते हुए मुक्त किया।

इस सारे नाटक और दिखावे का एक स्पष्ट कारण यही था कि मुलतान के पीर जान गये थे कि देवी का मुलतान आकर उनके मठ मे ठहरना, शेखा की मुक्ति के लिए शासक लगा से आग्रह करना आदि उनकी दुनियादारी की व्यवहारिकता थी। अगर वह अपनी दैविक शक्ति से राव शेखा को मुक्त करके ले गई तो उनकी साख भी जायेगी और शासक का हठ भी। केवल जग हसाई उनके पल्ले पडेगी।

देवी करणीजी जब राव शेखा को साथ लेकर मुलतान से पूगल के लिए रवाना होने लगी तो पीर ने उन्हे अकेले नही जाने दिया। उन्होने कहा कि अब वह उनकी बहन थी, यह मठ और मुलतान उनका पीहर था। इसलिए अपनी बहन को पूगल तक छोडकर आने के लिए उनके साथ मे उनके पांच चेले जायेंगे, यह मार्ग मे इनके रहने सहने, खान-पान और सुरक्षा का प्रबन्ध करेंगे। देवीजी ने अपने पीर भाई की बात सहर्ष मान ली और उनसे विदाई ली। पीर के पाचो चेले उनके साथ पूगल आए। मुलतान के पीर को हुसैन खा लगा की वचनबद्धता पर कुछ सदेह था, उन्हे आशका थी कि मार्ग मे लगा घात लगाकर राव शेखा को मरवा सकता था, इसलिए उन्होने अपने पांच पीर चेले उनके साथ मे किए थे।

देवी करणीजी और राव शेखा का दुनियापुर, केहरोर, मूमनवाहन, मरोठ और पूगल पहुचने पर अभूतपूर्व स्वागत किया गया और जनता ने भावविभोर होकर देवी की

जयजयकार की। कुम्भा, जोगायत, तिलोकसी जगमाल और रणधीर ने पूगल आकर अपनी भूल और लापरवाही के लिए क्षमा याचना की। पूगल पहुच कर देवी करणीजी ने किले के पूर्वी प्रवेश द्वार पर विश्राम किया और द्वार की दाहिनी दिवार के पास अपने हाथ की त्रिशूल को जमीन मे गाड कर स्थापित किया और वचन दिया कि जब तक यह त्रिशूल यहां गडी रहेगी तब तक पूगल मे भाटियो का राज बना रहेगा। यह त्रिशूल पिछले पाच सौ वर्षों से उसी स्थान पर गडी हुई है। कहते हैं कि जब इसे देवी ने भूमि मे गाडा था तब इसकी ऊचाई आदमी के बराबर थी, अब यह जमीन से केवल एक या डेढ़ फुट ऊपर है।

पूगल पहुचने के बाद देवी करणीजी और राव शेखा ने पाचो पीरो को वापिस नही जाने दिया, उन्हे आग्रह विनय करके पूगल मे ही रोक लिया। वह वही रहने लगे और पूगल मे ही अपने प्राण त्यागे। इन्हे किले के बाहर एक ऊचे स्थान पर दफनाया गया। पूगल के भाटियो और मुसलमानो ने इनकी यादगार मे वहा एक खानगाह बनवाई, जहा हिन्दू और मुसलमान श्रद्धा से इनकी पूजा करते हैं, मनौती मागते हैं और इबादत करने वालो की पीर इच्छापूर्ति करते हैं।

पूगल पहुचने पर राजकुमारी रगकवर के विवाह की तैयारियो को देखकर राव शेखा को कौतुहल हुआ। उन्हे देवीजी ने सारी बात समझाई लेकिन स्वभाव से अड़ियल राव शेखा ने एक बारगी इस विवाह के लिए मना कर दिया। उनका तर्क था कि बीका राजकुमार और राव जोधा के पुत्र अवश्य थे, परन्तु उनके पास न राज्य था, न सम्पत्ति और सेना थी। वह केवल अपना भाग्य अजमाने निकले हुए थे। यह पूगल के बराबर का रिश्ता नही था, एक घुमक्कड को वह अपनी बेटी देकर जवाई कैसे बना सकते थे? उनकी दादी राव केलण की पुत्री थी और वह स्वय राव केलण के परपौत्र थे, ऐसी स्थिति म बीका को पूगल ब्याहने मे पारम्परिक और सामाजिक बाधा थी। इस कारणो से दूसरे भाटी उनका विरोध करेंगे, जनता हसी उडायगी और सम्बन्धी ताने मारेंगे। इन तर्कों को सुनने के बाद भी देवी करणीजी ने अपना धैर्य और सयम रखा। आखिर देवी के समझाने बुझाने पर वह वह विवाह करने के लिए राजी अवश्य हुए, किन्तु अपने स्वभाव के अनुसार वह अपनी राणी, गोगली भाटी और उपाध्याय ब्राह्मण पर अत्यन्त क्रोधित रहने लगे। राजकुमारी रगकवर का कुमार बीका से विवाह सन् 1469 ई मे हुआ था। देवी करणी जी विवाह सम्पन्न करवा कर देशनोक के लिए प्रस्थान कर गई। इस समय कुमार बीका की आयु 31 वर्ष थी। इससे पहले छोटे परिवारो म उनके अनेक विवाह हुए थे परन्तु उनका कही उल्लेख नही मिलता।

बीका के साथ ही उनके छोटे भाई बीदा का विवाह भी पूगल की कुमारी सोहन कवर से कर दिया गया।

युवरानी रगकवर ने सन् 1470 ई मे राजकुमार लूणकरण को जन्म दिया, यह बीकानेर के भावी शासक (सन् 1505-1526 ई) बने।

रगकवर के विवाह के बाद म राव शेखा ने गोगली भाटी और उपाध्याय को उनके पदों से हटाकर, उन्हें देश निकाला दिया। यह दोनो बीकाजी की शरण और सेवा में गए, जिन्होंने इन्हें आश्रय दिया। उन्होंने गोगली भाटी को जेगला, और उपाध्याय को कोलासर

और मेघासर की जागीरे प्रदान की। बीकानेर राज्य के इतिहास में यह सबसे पहले बख्शी गई जागीरें थी।

देवी करणीजी के इस वैवाहिक सम्बन्ध मे अत्यधिक रुचि लेने का कारण यह था कि भाटियो के संरक्षण के बिना बीका के पाव इस क्षेत्र मे नही जम सकेंगे। उन्हे भविष्य का ज्ञान था, जहां राठौड शक्ति का उदय होना सुनिश्चित था, वहीं भाटियो की शक्ति का क्षय होना भी अवश्यभावी था। दोनो का शक्ति सतुलन बनाये रखने के लिए यह विवाह आवश्यक था, अन्यथा भाटियों और राठौडो के झगडो का लाभ उठाकर तीसरी शक्ति हस्तक्षेप करके इस क्षेत्र पर अधिकार कर लेगी। देवी के इन प्रयासो को बीका गलत समझ बैठे, उन्होने इस विवाह को अपनी शक्ति का प्रमाण मान लिया और भाटियो की कमजोरी।

जन मानस मे अन्धविश्वास से यह भावना बैठाई गई कि देवी करणीजी चील के रूप मे मुलतान गई, वहा उन्होने जेल के सीखचे तोड़कर राव शेखा को मुक्त कराया। वहा से वह अपनी (चील की) पीठ पर राव शेखा को बैठाकर वायु मार्ग से पूगल ले आई। जब मुलतान से राव शेखा को लेकर वह वापिस उडान भरने लगी तब वहा के पीर को दैविक शक्ति से उनके वहा आने का मालूम पड गया। पीर ने अपने पाच पीर शिष्यों को उनका पीछा करने भेजा, जिन्हे देवी ने वायु मडल मे ही समाप्त कर दिया और विजयी होकर वह राव शेखा के साथ पूगल पहुच गई।

चील देवी करणीजी के वाहन का प्रतीक है, इसमे सतर्कता, गति, चपलता, बल और आक्रमण करने का शौर्य है। राव शेखा की मुक्ति इनके प्रयासो से हुई थी और वह उन्हें मुक्त करवाकर पाच पीरो के साथ पूगल आई। यह भी सही है कि इन पाचो पीरो ने पूगल मे समाधि ली और उनकी खानगाह अब भी पूगल मे है। चील की पीठ पर चढ़ाकर राव शेखा को लाना हास्यास्पद है, वह भूमि मार्ग से देवी के साथ पूगल आए थे। पीर देवी के विरोधी नही थे, वह उनके धर्म भाई बन गए थे। तभी तो सन् 1947 ई तक मुलतान से 'मामाजी की सिलाड' देवी के चढावे के लिए देशनोक आती थी। पाचो पीरो ने न तो देवी का पीछा किया था और न ही उनसे युद्ध किया। वह तो मुलतान से अपनी बहन को पूगल तक पहुचाने आए थे, फिर यही रहकर यही के हो गए। इन्हे देवी ने नहीं मारा था, वृद्धा अवस्था आने से यह पूगल मे मर गए थे। इनकी खानगाह इसका प्रमाण है। आज वह पूगल की मिट्टी के साये म है।

कुछ लोगो का आरोप है कि सन् 1469 ई म राव शेखा के बन्दी बनाये जाने मे मरोठ के शासक तिलोकसी का हाथ था। वह लगाओ से मिल गए थे और राव शेखा की गतिविधियो की जानकारी उन्हे देकर उन्हे पकडवा दिया था। इस षड्यन्त्र से वह स्वय पूगल के राव बनना चाहते थे। अगर यह सत्य था तब क्या राव शेखा के बन्दी बनाये जाने के बाद मे उन्होने पगल पर अधिकार करने का कोई प्रयास किया था? क्या इसकी जानकारी देवी करणीजी को नही थी, जो रगकवर का विवाह रचाने के लिए इस अवधि मे पूगल मे थी और वहा से राव शेखा को मुक्त कराने मुलतान गई? अगर किला तिलोकसी के अधिकार मे था तब राव शेखा और देवी करणीजी को उन्होने किले मे प्रवेश कैसे करने दिया? और अगर तिलोकसी इसके लिए लेश मात्र भी दोषी थे तब उनके पौत्र भैरवदास तक मरोठ

को जागीर कैसे भोगते रहे, उसे राव शेखा पहले ही खालसे कर सकते थे। यह केवल बनाई हुई बातें थी।

अनेक वेतनभोगी और किराए के इतिहासकारों ने यह निष्कर्ष निकाला था कि राव शेखा डाकू थे, मुलतान की ओर से डकैती करके आते हुए वह बन्दी बना लिए गये थे। उनका यह विचार रहा था कि भाटियों की इस प्रकार से छवि खराब करके, उन्हें नीचा दिखाने से, उनके स्वामी बड़े दिखेंगे। यह केवल उनका घोर अज्ञान था, भाटियों को नीचा दिखाने से वह तो वहीं रहे, ऊंचे कैसे हुए और किससे ऊंचे हुए ? उन्हें ऐसे शर्मनाक और निन्दनीय कार्य में सहयोग करके इतिहास को नहीं बिगाडना चाहिए था। जिस समय शेखा पूगल के राव थे उस समय बीकानेर का अस्तित्व ही नहीं था, इसलिए उनका आपस में कैसे टकराव था, जिसके कारण उन्हें राव शेखा को बदनाम करने की आवश्यकता पडी। भाटियों ने अपने राज्य का विस्तार युद्धों में विजय प्राप्त करके किया था। डाकू, धन सम्पत्ति व पशु आदि लूट सकते थे, लूटपाट में भूमि नहीं मिलती। इसके लिए बलिदान देना पडता था। सन् 1947 ई में जोधपुर, बीकानेर, बहावलपुर और जैसलमेर राज्यों का क्षेत्रफल क्रमश 35066, 23317, 15000, 16062 वर्गमील था। बीकानेर राज्य के क्षेत्रफल में सात हज़ार वर्गमील पूगल के भाटियों का क्षेत्र था। इसे निकालने से बीकानेर राज्य का शेष क्षेत्रफल सोलह हज़ार वर्गमील रहता था। राव शेखा के समय पूगल राज्य का क्षेत्रफल बत्तीस हज़ार वर्गमील था, वह बीकानेर राज्य के क्षेत्रफल से ड्योढा था। इतने बड़े राज्य का स्वामी, जिसके पास सतलज, व्यास, पजनद और सिन्ध नदियों की घाटियों का उपजाऊ क्षेत्र था, अगर वह डाकू कहलाया जाये तो राज्य का शासक किसे कहेंगे ?

असली डाकू वह थे जिन्होंने मामा की विवशता का लाभ उठाकर उसके 84 गावों के राज्य को समेटा, ससुर की भूमि पर बलपूर्वक अधिकार करके किला बनाना चाहा और भाटियों से मार खाई। सारण और गोदारा जाटों की स्त्री के लिए आपसी कलह का लाभ उठाकर उनकी भूमि छीनी। महाजन, चूरू, रावतसर आदि ठिकानों के किलों को घेरकर रुपया ऐंठा और इस लूट का नाम दिया 'पेशकश'। या फिर मुगल सेनाओं के साथ जाकर दक्षिण भारत, गुजरात, सूरत और सौराष्ट्र के हिन्दुओं को लूटा और उनके मन्दिरों में रखे हुए विपुल धन पर डाका डाला। यह सरासर हिन्दुओं और उनके धर्म की लूट थी। फिर भी यह लोग हिन्दू धर्म के रक्षक होने का दम भरते थे। दक्षिण में मध्यकाल में मुसलमान बहुत कम थे, जो थे, वह गरीब तबके के थे, और फिर क्या मुगल मुसलमानों को हिन्दुओं से लुटवाते ? ऐसे अनगिनत उदाहरण थे जिनसे मालूम पडेगा कि किसने क्या लूटा और क्या छोड़ा ?

उस समय राव शेखा के अधिकार में पूगल के अलावा, भटनेर, बीकमपुर, बीजनोत, देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, केहरोर, दुनियापुर के प्रसिद्ध किले थे। उनके पास नदी घाटियों का इतना बड़ा क्षेत्र था, जो आज की गग, भाखडा और राजस्थान नहर के सिंचित क्षेत्रों से कहीं अधिक था। वह क्षेत्र उस समय भी उपजाऊ था, जबकि बीकानेर ने सिंचाई के पानी के दर्शन पाच सौ वर्ष बाद में, सन् 1927 ई में किए।

भाटियों और सिन्ध नदी घाटी के लोगों के बीच में टकराव और सीमा सम्बन्धी युद्ध

सन् 400 ई से चलते आ रहे थे। भाटी उस क्षेत्र में प्रवेश करने का प्रयत्न करते थे और स्थानीय जातिया उन्हें ऐसा करने से रोकती थी। इसका परिणाम सघर्ष और युद्ध होता था। सिद्ध देवराज ने तो देरावर का किला सन् 852 ई मे बनवाया था, इससे बहुत पहले भाटी भूमनवाहन, मरोठ और केहरोर के किले बनवा चुके थे। उस समय न तो इस्लाम धर्म के पैगम्बर साहब जन्मे थे और न ही भारत मे इस्लाम धर्म आया था। पैगम्बर साहब सन् 570-632 ई के बीच हुए थे। मुसलमानो के सिन्ध और मुलतान प्रदेशो पर प्रारम्भिक आक्रमण सन् 712 ई के बाद मे हुए। जब इस क्षेत्र मे मुसलमान नही थे तब भी भाटियो के स्थानीय हिन्दुओ और राजपूतो मे झगडे चलते रहते थे। भूमि पर अधिकार करने और उसे छुडाने का यह सिलसिला निरन्तर चलता रहता था। इसे डाकुओ की सज्ञा नही दें। राव शेखा के आर्थिक साधन विपुल थे, उन्हे डकैती करने की आवश्यकता कभी नही पडी।

इधर, उसी बहाव मे इतिहासकर लिख जाते है कि उस समय लोदी शासको के काल मे पजाब मे शान्ति व्यवस्था नही थी, अराजकता का बोलबाला होने से व्यापारियो का धन और माल सुरक्षित नही था। इसलिए व्यापारियो के काफिले मुलतान से पूगल होकर दिल्ली और भारत के अन्य भीतरी मागो मे जाया करते थे। तो क्या भाटी इन काफिलो को अपने क्षेत्र मे नही लूटते थे? या इसे यो समझ लें कि तब तक राठौड इतने शक्तिशाली हो गये थे कि बीकानेर क्षेत्र मे आने जाने वाले काफिलो को हाथ डालते हुए भाटी उनसे डरते थे?

निवेदन है कि इन इतिहासकारो की बातो मे नही जायें वह ऐसा नही लिखते तो भूखे मर जाते। राव शेखा एक बहुत बडे राज्य के शासक थे, उन्हें डाकू की सज्ञा नही दें। यहा यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि राव शेखा के अधीन पूगल राज्य का उतना ही बडा क्षेत्र था जितना उनके पूर्वज राव केलण, चाचगदेव और बरसल छोड कर गए थे। अगर पहले के यह तीनो राव डाकू नही थे तब राव शेखा को डकैतिया करने की क्या आवश्यकता पड गई थी? सलग्न मानचित्र मे उस समय के पूगल के राज्य की सीमाएँ दर्शायी गई हैं।

इतिहासकार राव शेखा को डाकू की सज्ञा देकर पूर्ण सन्तुष्ट नही थे, उनमे से कुछ इतने उत्साहित हुए कि उन्होने यहा तक लिख दिया कि राव शेखा को बीका मुलतान से बलपूर्वक छुडाकर लाये थे। कुछ ने उत्साह मे यहा तक उडान लगाई कि बीका हाथियो का बेडा लेकर मुलतान पर आक्रमण करने गये थे। सन् 1465 ई मे बीका जोधपुर छोडकर आए थे, उनके पास कुछ गाव चाण्डासर के थे और 84 गांव जागलू प्रदेश के थे। चार वर्ष मे, सन् 1469 ई तक, उन्होने ऐसी कौनसी सेना का सगठन कर लिया जो जागलू से दो सौ मील दूर मुलतान पर आक्रमण कर सकती थी? उनके बीच मे लम्बा चौडा रेगिस्तान और पूगल का राज्य पडता था, जहा पानी एव रसद की अनेक कठिनाइया थी। बीका के आर्थिक साधन नगण्य थे। मुलतान कोई चान्डासर या नही कि थोडे से सैनिक उस पर अधिकार कर लेते, इस आक्रमण के लिए उनके पास मुलतान की सेना से कही अधिक सेना का होना आवश्यक था। मुलतान का हुसैन खा लगा बहुत शक्तिशाली शासक था। बीका जैसो की मुलतान लेने की औकात कहा थी और न ही भविष्य मे बीकानेर के किसी शासक की ऐसी शक्ति थी कि वह मुलतान जीत सके। अगर हम यह मान लें कि बीका ने मुलतान पर अधिकार कर लिया था, तब वह ऐसे उपजाऊ और सरसब्ज क्षेत्र को छोडकर वापिस

रेगिस्तान मे क्या लेने आए थे ? वह वहीं बसते, रहते, ताकि आने वाली पीढ़ियों को अकाल और अभाव से राहत मिलती।

अभी तक बीका का विवाह पूगल नही हुआ था, उन्ह अपने भावी ससुर के लिए इतना बडा खतरा मोल लेने की क्या पीडा थी ? उन्हें अपने विषय मे राव शेखा के विचार मालूम थे, अगर वह उन्हें छुडाकर ले भी आते तब भी राव शेखा कुमारी रगकवर का विवाह उनके साथ करने वाले नही थे। यह तो देवी करणीजी की कृपा थी कि राव शेखा इस विवाह के लिए सहमत हुए।

जहा तक हाथियो का बेडा साथ लेकर मुलतान जाने का प्रश्न था, क्या बीका हाथियो स मुलतान के शासक को डराना चाहते थे, जैसे कि उन्होने कभी हाथी देखे ही नही हो ? बेडे मे बीस तीस हाथियो से कम क्या होंगे ? बीकानर की पुरानी बहियो से मालूम करें कि बीकानेर राज्य ने पहले पहल हाथी कब खरीदा था, क्योकि बीकानेर क्षेत्र के जगलो मे हाथी होते नही थे कि वह उन्हें जगल से पकड कर ले आते। इसलिए हाथियो का बेडा हाथी खरीदने से ही बन सकता था। जागलू से मुलतान के बीच मे हाथियो ने क्या खाया ? उनके खाने योग्य घास इस क्षेत्र मे होती नही थी, हाथी फोग और खेजडी खा नही सकते थे, इसलिए मुलतान जाते हुए और वापिस आते समय इस बेडे का भरण पोषण कैसे हुआ ? यह केवल इन इतिहासकारों की बुद्धि की उडान और अज्ञान था, हम इसे इतिहास की सच्चाई नहीं मान बैठें।

बीका का राजकुमारी रगकवर से विवाह होने से उनका अहकार आसमान छूने लगा, वह अपने आप को पूगल के बराबर का शासक समझने लगे थे। सन् 1472 ई में वह पूगल राज्य के कोडमदेसर स्थान पर गये और वहा अपने आपको स्वतन्त्र राज्य का राजा घोषित कर दिया। राजा होने के लिए किला होना चाहिए, काफी बडा भूमि का क्षेत्र अधिकार मे होना चाहिए और उस क्षेत्र की प्रजा, जनता का उन्हे सहयोग होना चाहिए। इनके पास इन तीनों मान्यताओ का केवल अभाव ही नही था, कोडमदेसर तक भी इनके अधिकार मे नही था। इसलिए पूगल राज्य के एक कोने में राजा घोषित होने का क्या औचित्य था ? इतिहासकारों की भूल रही कि वह बीका को सन् 1472 ई मे राजा मान बैठे, फिर तो वह इन्हें सन् 1465 ई से ही राजा मान लेते।

बीका ने कुछ वर्ष तक जागलू प्रदेश मे रहने के बाद म सन् 1478 ई म कोडमदेसर मे किला बनवाना आरम्भ कर दिया। भाटियो ने इस पर आपत्ति की। राव शेखा ने अपने जवाई को समझाया कि वह उनके राज्य की सीमा म किला नही बनवायें, और निवेदन किया कि यह किला अवश्य बनवायें लेकिन अपने क्षेत्र मे। बीका ने ससुर के निवेदन को ठुकरा दिया और किले का निर्माण कार्य चालू रखा। उन्होंने सोचा कि मामा ने राज बख्शा था, ससुर किले के लिए भूमि बख्श देंगे। उन्हें कोडमदेसर स्थान इसलिए भाया, क्योकि वह दस मील दूर कावनी में रहकर बडे हुए थे और सारा क्षेत्र उनका जाना पहचाना था।

इधर किले का निर्माण कार्य चल रहा था, उधर सारे भाटी इसके विरोध में उत्तेजित हो रहे थे। राव शेखा अपने जवाई के विरुद्ध कुछ भी करने मे असमर्थ थे, क्योंकि उनके हस्तक्षेप का मतलब युद्ध था। वह अपनी बेटी रगकवर से अत्यन्त प्यार करते थे, उन पर

उनका बहुत स्नेह था। इस मोहवश वह बीका का अहित नही कर सकते थे। आखिर राव चेलण के 80 वर्षीय पुत्र कलकरण, जो उस समय अपने गाव तणु मे रह रहे थे, से यह सब नही सहा गया। राज्य किसी राजा की निजी सम्पत्ति नही होती, वह पूरे वश और प्रजा की धरोहर होती है, इसकी रक्षा मे मोह का क्या लेना देना? उन्होने कोडमदेसर में बीका को किला बनाने से रोकने का व्रत लिया, 2000 आदमियो की एक सेना का सगठन किया और राव शेखा से इसका नेतृत्व सम्भालने के लिए कहा। राव बुखार का बहाना बनाकर युद्ध मे जाना टाल गये। उनके सामने धर्मसकट था कि वह अपने ही जवाई के विरुद्ध तलवार कैसे उठाते? फिर युद्ध का परिणाम बीका की मौत भी हो सकती थी। ऐसी भयावह स्थिति का सामना वह नही करना चाहते थे। ऐसी परिस्थितियो मे अस्सी वर्षीय वीर कलकरण ने स्वय भाटियो की सेना का नेतृत्व सम्भाला। उन्होने पहले बीका को चेतावनी दी कि वह किले का निर्माण कार्य बन्द करें, लेकिन ऐसी चेतावनियो की वह कहा परवाह करने वाले थे और वह भी भाटियो से। वीर कलकरण ने बीका को युद्ध के लिए ललकारा। घमासान युद्ध हुआ, दोनों ओर के अनेक योद्धा मारे गए। कलकरण ने इस युद्ध मे वीरगति पाई। इसमे निर्णायक विजय पराजय किसी की नही हुई। राठौडो के इतिहासकारो का कहना है कि विजय उनकी हुई थी, लेकिन भाटियो के निरन्तर छापो से उकता कर उन्होने कोडमदेसर मे किला बनाने का विचार छोड दिया और रातीघाटी मे नया किला बनवाया। यह स्थान जागलू प्रदेश मे था।

वास्तव मे वीर कलकरण की मृत्यु के बाद मे बीका ने घबराकर भाटिया को सदेश भेजा कि उन्होंने कोडमदेसर मे किला बनवाने का विचार त्याग दिया था, इसलिए अब भाटियो के लिए उनसे युद्ध करने का कोई कारण नही था। वह अपनी सेना पीछे हटाकर रातीघाटी चल गये। उनके पीछे हटने का राजनीतिक बहाना था, क्योंकि पहले दिन के युद्ध से वह भाप गए थे कि भाटी उन्हे हरायेंगे, इसलिए इज्जत से वहां से हटना ही उचित रहेगा। इसके पश्चात् भाटियो ने निर्माणाधीन किले को तोडकर समतल कर दिया।

राव बरसल ने सन् 1464 ई मे बरसलपुर मे किला बनवाना आरम्भ किया था, उसे राव शेखा सन् 1478 ई से पहले पूर्ण करा चुके थे। परन्तु किले के किवाड नही लगे थे। सुदृढ किवाड बनवाने मे उन्हे कठिनाई आ रही थी। बीका के कोडमदेसर के अधूरे किले के किवाड भाटियो के हाथ लग गये। उन्होने यह किवाड बरसलपुर ले जा कर किले मे लगवा दिए। यह किवाड टूटी-फूटी अवस्था मे अब भी वहां लगे हुए हैं। क्योंकि इस युद्ध मे जैसलमेर के रावल देवीदास (सन् 1467-1524 ई) का पूर्ण सहयोग वीर कलकरण को प्राप्त था, इसलिए कोडमदेसर के किले की तुला उपहार स्वरूप जैसलमेर भेजी गई, जिसे वहा प्रजा के समक्ष प्रदर्शित किया गया।

यह भाटियो और राठौडो का कोडमदेसर का दूसरा युद्ध था, जिसे वीर कलकरण और बीका के बीच लडा गया। इसमे भाटी कलकरण मारे गए थे। इससे पैंसठ वर्ष पहले, सन् 1413 ई. म, राठौड अरडकमल और भाटी कुमार शार्दूल के बीच कोडमदेसर का प्रथम युद्ध लडा गया था। उसमे भाटी कुमार शार्दूल मारे गए थे। इन दोनो युद्धो में विजय पराजय के विषय म पाठक अपना निष्कर्ष स्वय निकाल लें।

काडमदेसर स पीछे हटकर बीका कई वर्षों तक नए किले के लिए उपयुक्त स्थान ढूढते रहे। सात वर्ष बाद मे, सन् 1485 ई मे, उन्होने वर्तमान बीकानेर के दक्षिण मे राती घाटी नाम से जाने जानेवाले ऊबड खाबड पत्थरीले से स्थान पर एक किला बनवाया। यह लक्ष्मी नारायणजी के मन्दिर के पास था। बीकानेर का जूनागढ का किला राजा रार्यासिह (सन 1574-1612 ई) ने बादशाह अकबर की स्वीकृति से बनवाया था। उस समय किसी अधीनस्थ शासक द्वारा किला बनवाने के लिए दिल्ली के शासक से स्वीकृति लेनी आवश्यक थी। इसकी नीव दिनाक 17 फरवरी, सन् 1589 ई म रखी गई थी। इसका कार्य सन् 1594 ई मे पूर्ण हुआ था। राव बीका ने सन् 1488 ई मे वर्तमान बीकानेर नगर बसाया था।

पनरै से पैंताळवै, सुद बैसाख सुमेर ।
थावर बीज थरप्पियो, बीकै बीकानर ।।

बीकानेर नगर की स्थापना, शनिवार, बैशाख सुदी 2, वि स 1545 (सन् 1488ई) को हुई थी।

दुर्भाग्यवश सन् 1488 ई मे राव जोधा की मृत्यु हो गई, उनके स्थान पर राजकुमार सातल जोधपुर के राव बने। सातल से राव बीका के सम्बन्ध अच्छे नही थे। राव बीका के बडे भाई नीबोजी का देहान्त राव जोधा के समय मे हो गया था, इसलिए उनके दूसरे पुत्र बीका जोधपुर की राजगद्दी के अधिकारी थे। लेकिन राव जोधा ने इनके स्थान पर इनके सौतेले भाई सातल को राज्य दिया। राव शेखा भी बीका से अप्रसन्न थे, क्योकि कोडमदेसर मे किला बनवाने के प्रकरण मे उन्होने राव की सलाह को सम्मान नही दिया था, जिसके फलस्वरूप वीर कलकरण ने इन्हें वहा से किला अधूरा छोडकर चले जाने के लिए विवश किया। राव सातल ने सन् 1490 ई मे बीकानेर पर आक्रमण किया। जैसलमेर के रावल देवीदास और पूगल के राव शेखा ने उपरोक्त कारणों से राव सातल का साथ दिया। राव शेखा ने सोचा कि उन्होने अगर राव बीका का साथ दिया तो उनकी शक्ति बढेगी और वह राव सातल के साथ समझौता करने की उनकी सलाह नही मानेंगे। देवी करणीजी समझ गयी कि राव बीका इन तीनो की सेना का सामना करने में समर्थ नही थे। इसलिए उन्होने राव बीका का पक्ष लेते हुए राव सातल को समझा बुझा कर वापिस जोधपुर भेजा।

राव बीदा का मोहिलो और हिसार के नबाब सारग खा से झगडा हो गया था। उन्होने बीदा को द्रोणपुर क्षेत्र से बाहर निकाल दिया। राव बीदा ने अपने ससुराल पूगल से सहायता मागी। राव शेखा और राजकुमार हरा आठ हजार सैनिको की सेना लेकर राव बीदा की सहायतार्थ पहुचे। कडे सघर्ष के बाद म नबाब सारग खा को पीछे हटना पडा। इस युद्ध मे मोहिल राणा बरसल और नरबद मारे गए थे। बीदा ने सन् 1488 ई में द्रोणपुर पर पुन अधिकार किया।

सन् 1491 ई मे जोधपुर के राव सातल कोसाणा के युद्ध म मारे गये थे। इस युद्ध में उन्होने मेडता के दूदाजी और बरसीग की सहायता से अजमेर के सूबेदार मल्लूखा के चगुल से 140 हिन्दू कन्याओं को मुक्त कराया था। तभी से औरतें दिवाली के त्योहार पर 'घुडला' का त्योहार मनाती हैं, और उस शुभ दिन की याद मे गाती हैं, घुडलो घूमे छै जी

घूमे छैं'। राव सातल के बाद में उनके छोटे भाई सूजा जोधपुर के राव बने। राव बीका, जोधपुर के राव सातल और राव सूजा से, उन्हें जोधपुर की राजगद्दी नहीं दिए जाने के ऐवज में वहां के राजचिह्न बार बार मांग रहे थे, जिन्हें राव सूजा ने उन्हें देने से इनकार कर दिया। इसलिए राव बीका ने इन्हें बलपूर्वक लेने की योजना बनाई। सन् 1478 ई. में भाटियों के साथ हुए युद्ध से और सन् 1490 ई. के राव सातल के आक्रमण से राव बीका समझदार हो गए थे। उन्होंने जोधपुर पर आक्रमण करने से पहले राव शेखा को अपनी योजना से अवगत कराया और उनसे सहायता मांगी। राव शेखा ने अपनी सेना राजकुमार हरा के नेतृत्व में राव बीका की सहायतार्थ भेजी। किन्तु जोधपुर में युद्ध नहीं हुआ क्योंकि राव सूजा की माता ने बीच बचाव करके, राव बीका को जोधपुर के राजचिह्न दिलवा दिए। इन्हें लेकर राव बीका सन् 1492 ई. में बीकानेर लौट आए।

दयालदास ने अपने स्वामी महाराजा रतनसिंह की इच्छानुसार, उन्हें प्रसन्न करने के लिए और पुरस्कार पाने के लिए, राव शेखा को 'बीकानेर का चाकर' लिखा। राव शेखा पूगल के शासक थे, उन्होंने पूगल का स्वतन्त्र राज्य उत्तराधिकार में तब (सन् 1464 ई.) पाया था जब बीका जोधपुर छोड़कर आए ही नहीं थे। उन्होंने यहीं आनारानी के बाद रंगकवर का विवाह बीका से किया था, बीका के राज्य की स्थापना बीस वर्ष बाद, सन् 1485 ई. में, हुई थी। इसलिए यह दयालदास और उनके गरक्षक की ओछी बातें थी कि उन्हें 'चाकर' कहा गया। अगर राव शेखा बीकानेर के 'चाकर' थे तो क्या राव लूणकरण चाकर की बेटी के पुत्र थे? अगर महाराजा रतनसिंह और उनसे पूर्व के वंशज चाकर पुत्र थे तो भाटियों का चाकर कहलाने में कोई शर्म नहीं। अगर वह यह मानें कि प्रत्येक ससुर अपने जवाई का चाकर ही होता है, तो जहां जहां बीकानेर की राजकुमारियों का विवाह हुआ था, क्या बीकानेर अपने आप को उनका 'चाकर' कहलवाने के लिए तैयार है?

इन्होंने अपने पिता राव बरसल की भांति पूगल राज्य की एक भी बीघा भूमि शत्रुओं के अधिकार में नहीं जाने दी। इनका देहान्त सन् 1500 ई. में हुआ।

इनके तीन पुत्र थे, राजकुमार हरा, कुमार बाघसिंह और कुमार खेमाल। राजकुमार हरा इनके बाद में पूगल के राव बने।

खेमालजी को इन्होंने बरसलपुर सहित 68 गांव प्रदान किए। इन्होंने अपना मुख्यालय बरसलपुर रखा। इन्हें पश्चिम और उत्तर से होने वाले आक्रमणों को रोकने का दायित्व सौंपा गया। इनके वंशज खीया केलण भाटी हैं, जिनका विवरण अलग से दिया जा रहा है।

बाघसिंह को इन्होंने पैतृक जागीर में बाहू बेरा क्षेत्र के 140 गांवों के साथ में रायमलवाली और हापासर गांव भी दिए। इन्होंने अपना मुख्यालय हापासर में रखा ताकि वह उस क्षेत्र में राठौड़ों के विस्तार को रोक सकें। इनके वंशज नामी किसनावत केलण भाटी हुए, जिनका विवरण अलग से दिया जा रहा है।

भाटियों के प्रथम चार रावों, केलण, चाचगदेव, बरसल और शेखा ने अपनी-अपनी समझ से अच्छे कार्य किए और उस समय के अनुसार सही निर्णय लिए। अब पांच सौ वर्ष पीछे देखें तो हमें ऐसा लगेगा कि अगर वह अमुक निर्णय ऐसा नहीं लेकर ऐसा लेते तो

शायद इतिहास कुछ और ही होता। मैं उनकी उपलब्धियों को नीचा नहीं दिखा रहा, वह अपने आप मे महान थे। केवल पाठको के विचार के लिए कुछ प्रश्न उठा रहा हूं।

अगर सन् 1418 ई. मे राव केलण राव चून्डा को मारकर नागौर के किले पर अधिकार करके मन्डोर और मारवाड मालाणी की ओर बढ जाते तो शायद जोधपुर बीकानेर राज्य स्थापित होते ही नहीं। उन्होने स्वार्थवश अपने जवाई रिडमल के राव बनने के अवसर को समाप्त नहीं किया। यहां उनका निजी स्वार्थ भाटियो के आडे आया।

अगर सन् 1438 ई. मे राव चाचगदेव अपने भानजे राव जोधा को शरण नहीं देते और उन्हे मेवाडियो से पिटवा देते तो उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता। या, वह उन्हे अपने राज्य मे कावनी क्षेत्र के बजाय पश्चिम दिशा मे बीजनोत मे बसने का कह देते तो वह मुसलमानो के आक्रमणो को सह नहीं सकने के कारण स्वय इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेते। ऐसा भाटी मेहरवान, मीमदे, जगमाल आदि के वशजो ने किया भी था। लेकिन राव चाचगदेव ने अपने भानजों के साथ अपनायत रखते हुए मानवीय व्यवहार किया और उन्हे मन्डोर के ज्यादा से ज्यादा नजदीक रहने का अवसर दिया ताकि उनकी मन्डोर वापिस जाने की उत्कठा बनी रहे।

राव जोधा को सन् 1453 ई तक पूगल क्षेत्र मे रहते हुए पन्द्रह वर्ष हो गए थे। वह समय व्यतीत होने के साथ अपने आप को मन्डोर पुन. लेने मे अयोग्य समझने लग गए थे। राव बरसल अगर अपने जीवनकाल (सन् 1464 ई तक) मे उन्हे मन्डोर दिलाने मे सहायता नहीं करते तो वह अन्य राजपूतो की तरह पूगल के जागीरदार बनकर तसल्ली कर लेते या अपना डेरा डाडा उठाकर कहीं और पलायन कर जाते। यहां भी राव बरसल का स्वार्थ आडे आया, उन्होने सोचा कि राव जोधा का लम्बे समय तक यहां रहना पूगल के लिए खतरनाक हो सकता था, इसलिए उन्होने इन्हे मन्डोर दिलाकर ही छुटकारा पाया।

राव शेखा को चाहिए था कि ज्योंही सन 1465 ई मे बीका चान्डासर, जागलू आए, उन्हें वापिस लौटने के लिए बाध्य करते। उन्हे समझाते कि वह अभी बारह वर्ष पहले (सन् 1453 ई) ही कावनी से गये थे, उनका वापिस उसी क्षेत्र मे आना उचित नहीं था। राव बरसल ने बडी मुश्किल से उनसे निजात पाई थी, लेकिन राव शेखा ने ऐसा कुछ नहीं किया और उन्हे वहां पांव जमाने दिए। इधर देवी करणीजी ने राजकुमारी रगकवर का विवाह बीका के साथ मे करवाकर राव शेखा के पांवो मे बेडियां डाल दी।

इस प्रकार राव चून्डा की मृत्यु (सन् 1418 ई) के केवल चालीस वर्ष पश्चात्, सन् 1459 ई मे, जोधपुर का सशक्त राज्य उभरा और सत्तर वर्ष बाद, सन् 1485 ई. मे, बीकानेर का सशक्त राज्य उभरा। इस तीस वर्ष के थोडे अन्तराल मे एक नगण्य स्थिति से, राठौडों के जोधपुर और बीकानेर के दो सशक्त राज्य उभरे और वह पलते फूलते गये। यही पूगल का दुर्भाग्य रहा।

राव बीका द्वारा जोधपुर से लाए गए राजचिन्ह, वस्तुस्थिति

बीकानेर के शासक राव बीका द्वारा जोधपुर से पैतृक राजचिह्न प्राप्त किए जाने की घटना को एक ऐतिहासिक घटना के रूप मे लेकर उसकी प्रशसा करते हुए नही अघाते और उसकी विश्वसनीयता को उजागर करने के लिए प्रयास करके इसके अनेक रगीन चित्र भी बनवाए। इस प्रकरण का निष्पक्ष दृष्टिकोण से विश्लेषण करना आवश्यक है।

राव रिडमल राठोड उनके पिता राव चूडा के सन् 1418 ई मे मारे जाने के लगभग दस वर्ष पश्चात् मडोर के शासक बने, परन्तु वह ज्यादा समय अपनी बहन राणी हसा के आश्रय मे मेवाड में रहते थे। वहा इनका सन् 1438 ई मे वध कर दिया गया। इनके भाइयो और पुत्रो को मेवाड की सेना ने वहां से खदेडकर सोजत और मडोर पर अधिकार कर लिया। राव जोधा मडोर से भागकर हडबूजी सांखले की शरण मे गए किन्तु मेवाडियों के विरुद्ध वह उन्हे सरक्षण देने मे असमर्थ थे। इसलिए राव जोधा अपने आदमियो सहित मामा राव चाचगदेव के पास अपने ननिहाल पूगल पहुचे। इनके भाई-बन्धुओ, साथियों, सेवको की सख्या चार पांच सौ के लगभग होगी। इसलिए राव चाचगदेव ने इनके रहने सहने, खाने-पीने का प्रबन्ध पूगल से कुछ दूर, कावनी गाव के पास कर दिया। वहां तालाब के पास उनके मकानो के अवशेष अभी भी हैं।

यह शरणार्थी भानजे, राव बरसल के समय, सन् 1453 ई तक, इसी घास बाहुल्य क्षेत्र मे विचरते हुए अपने घोडे, ऊट, गायें, भैसें, चराते थे। इनके स्वय के पास किसी प्रकार के धन-द्रव्य का होना सम्भव नही था क्योकि चित्तौड से भागे हुए यह सोजत और मडोर मे विश्राम भी नही कर सके थे। मेवाड से केवल तन के वस्त्र और व्यक्तिगत हथियार (तलवार, ढाल, कटार, भाला) लेकर यह पूगल पहुच पाए थे। कावनी मे यह पन्द्रह वर्ष, सन् 1438 से 1453 ई तक रहे, जहा इनके स्वतन्त्र आय के साधन होने का प्रश्न ही नही था। इनका सारा खर्चा पूगल राज्य वहन करता था।

जब कुछ सैकडे व्यक्ति पूगल से कावनी मे रहने के लिए जाने लगे तो स्वाभाविक था कि इनके मामे ने इन्हे सारे बरतन-भाडे (थाल, चरू, देगें, गुणिये, परातें आदि) उपलब्ध कराए ताकि वह नई जगह पहुचते ही भोजन पकाने खाने की व्यवस्था कर सकें। उनके पास तो पानी भरने या खीचडा पकाने के बरतन भी नही थे।

जब यह मडोर छोडकर चले थे तो इनके साथ किसी प्रकार के ढोल नगारो का होना बेमानी था, क्योकि यह तो युद्ध के आह्वान के उपकरण थे, पराजित शरणागत के लिए युद्ध कैसा? इसी प्रकार इनके झडे झोली छत्र, ध्वज मेवाड और मडोर के बीच मे ही

फट चुके थे, अब गिरे हुए मनोबल और आत्मबल को संवारने के लिए इन्हें पूगल का ही संबल था। इसी फटेहाल मे यह पन्द्रह वर्ष पूगल के आश्रित रहे, उस समय पूगल के लिए चार पांच सौ आदमियो के लिए सदावर्त का प्रबन्ध करना कोई कठिन कार्य नहीं था।

आखिर सन् 1453 ई. मे राव बरसल के उत्साहित करने से और प्रयासो से राव जोधा ने सैनिक शक्ति जुटाई। उन्होंने उन्हें सभी प्रकार की सैनिक और आर्थिक सहायता का आश्वासन देकर मंडोर विजय के लिए आश्वस्त किया। क्योंकि राव बरसल का सहयोग होते हुए मंडोर विजय सुनिश्चित थी, इसलिए राव जोधा का मनोबल उभरने लगा। राव बरसल ने पूगल के मानजों का मान रखते हुए उन्हें अच्छे हथियार, नए ढोल, नगारे, बाजे उपलब्ध कराए, नई राज्योचित पोशाकें बनवा कर दी, और नए झंडे व ध्वज बनवा कर दिए। पन्द्रह वर्षों में पूगल ने उन्हें कई बार नए घोडे खरीदवाए। घोड़ो के लिए साज-शृंगार बनवाए। इन सारे ताम-झाम से जहां मार्ग मे पडने वाले गावों की जनता प्रभावित होती वहीं सेना का मनोबल भी ऊंचा रहता। सबसे बडी बात ढोल-नगारो के गाजे बाजे के साथ झडों और ध्वजो की छत्र छाया मे उनका मंडोर मे प्रवेश करना भी था। इससे उनकी पूर्व की प्रजा अहसास कर सके कि उनके शासक फिर भी अच्छे हाल मे थे। इस सेना के साथ बरतन भांडों से लदे हुए ऊंट और बैलगाडे भी थे ताकि सेना के ठहरने के स्थानों पर खाने-पीने की व्यवस्था की जा सके। आखिर यह सारा लवाजमा विजयी सेना के साथ-साथ कावनी से मंडोर पहुचा।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि एक बारगी सारा प्राथमिक सामान पूगल के राव बरसल ने उपलब्ध करवाया था। वह उन्हें मंडोर मे तब तक आर्थिक सहायता देते रहे जब तक उनकी आय के अपने स्रोत स्थापित नहीं हुए। ज्यो ज्यो समृद्धि आई, त्यों त्यों नए साज सामान ने पुराने का स्थान लिया। मारवाड विजय के पश्चात् सन् 1459 ई. मे जोधपुर की स्थापना की गई। राठौड मोहवश अपने पुराने हथियार, साज-सामान, बरतन-भांडे, ढोल, नगारे, छत्र आदि सम्भाल कर मंडोर से जोधपुर ले आए। समय के साथ उनके घाटे के यह साथी पूजनीय बनते गए क्योंकि इन्होने ही उनका मनोबल बढाकर मंडोर विजय के लिए प्रेरित करके उन्हें सबल दिया था।

इस प्रकार पूगल द्वारा उपलब्ध कराई गई या बनवाई गई वस्तुएं समय के साथ जोधपुर मे संग्रहालय की शोभा बढाने लगी और पचास वर्ष (सन् 1438–1488 ई) पश्चात् उनमे से अनेको का रूपान्तर राजचिह्नो और प्रतीको मे हो गया। जिन मूर्तियों को राठौड मंडोर मे छोड आए थे वह उन्हे यथावत सुरक्षित अवश्य मिल गई क्योंकि इनकी मूर्तियां सिसोदियो के लिए भी पूजनीय थी।

मेरे विचार से राव बीका द्वारा सन् 1492 ई. मे प्राप्त किए गए अनेक राजचिह्न पूगल की ही देन थे, जिन्हें वह बलपूर्वक जोधपुर से बीकानेर वापिस ले आए।

बरसलपुर

पूगल के राव शेखा (सन् 1464-1500 ई) के तीन पुत्र थे, राजकुमार हरा, खेमालजी और बाघसिंह। राव शेखा के देहान्त के बाद में राजकुमार हरा पूगल के राव बने (सन् 1500-1535 ई)। राव शेखा ने अपने पुत्र खेमालजी को पैतृक बंट में बरसलपुर सहित 68 गांव प्रदान किए थे और इन्हें 'रावत' की पदवी से सम्मानित किया। इन्हें बरसलपुर देकर पूगल की सिन्ध प्रदेश से लगने वाली सीमा की सुरक्षा का दायित्व इन्हें सौंपा। कुमार बाघसिंह को राव शेखा ने पाहुवेरा क्षेत्र, हापासर, रायमलवाली, रानेर, गारबारा के 140 गांव पैतृक बंट में प्रदान किए थे। पूगल की बही के पृष्ठ संख्या 71 पर लिखा था कि बरसलपुर को 41 गांव दिए गए थे और रायमलवाली को 184 गांव दिए गये थे। यह सही नहीं है, वास्तव में जागीर में दिए गए गांवों की संख्या क्रमशः 68 और 140 ही सही थी। बरसलपुर के 68 गांवों में से बाद में 27 गांव जयमलसर को दिए जाने से बरसलपुर के पास शेष 41 गांव रह गए थे।

बरसलपुर गांव राव बरसल (सन् 1448-1464 ई) द्वारा सन् 1464 ई में बसाया गया था। इसके थोड़े दिनों बाद में इनका देहान्त हो गया। बरसलपुर के गढ़ का कार्य राव शेखा ने सन् 1474 ई में पूर्ण करवाया। इसका कार्य सन् 1478 ई में, बीकाजी के कोडमदेसर में ध्वस्त किए गए गढ़ के दरवाजे लाकर लगाने पर सम्पूर्ण हुआ। यह आज भी जीर्ण-शीर्ण अवस्था में वहां लगे हुए हैं। यह दरवाजे अब भी याद दिलाते हैं कि कैसे वीर कलकरण ने कोडमदेसर के किले को ध्वस्त करके उसके दरवाजे बरसलपुर के नवनिर्मित गढ़ में लगाने के लिए भेजे और गुला जैसलमेर में प्रदर्शित कराई।

राव शेखा और उनके पुत्र वीर योद्धा थे, इन्होंने अनेक युद्धों में भाग लिया था। राव हरा ने जहां पूर्व दिशा में स्थित बीकानेर, बीदासर, जयपुर, जोधपुर राज्यों के शासकों की सहायता करके उनके राज्य विस्तार में योगदान किया, वहीं उनके शत्रुओं के साथ युद्धों में उनकी सहायता करके विजय दिलाई। इनके भाई खेमालजी और बाघसिंह ने पश्चिम और उत्तर पश्चिम की सीमा पर प्रहरी का काम करके शत्रुओं को पूगल की सीमा से बाहर रखा। इन्होंने पूगल राज्य की सीमा से लगने वाले सिन्ध मुलतान, पंजाब प्रदेशों की सीमाओं पर शान्ति व्यवस्था बनाए रखी और पूर्वजों द्वारा जीती हुई धरती की रक्षा की। दिल्ली में लोदी वंश का अच्छा शासन होने से उनके अधीन स्थानीय शासक भी पड़ोसी राज्यों में कम हस्तक्षेप करते थे। इस प्रकार आपस में अमन चैन बना रहता था।

सन् 1534 ई में, हुमायु के छोटे भाई और पंजाब, काबुल आदि प्रान्तों के शासक, कामरान ने बीकानेर पर आक्रमण किया। बीकानेर के राव जैतसी अकेले इतने सशक्त शत्रु

का सामना करने में सक्षम नहीं थे। उन्होंने पूगल के राव हरा से तुरन्त सहायता प्रदान करने के लिए निवेदन किया। वृद्ध राव हरा समस्या की गम्भीरता को भांप गए। उन्होंने अपनी सेना का नेतृत्व स्वयं सम्भालने का निर्णय लिया और बीकानेर आकर राती घाटी (लक्ष्मीनारायणजी के मन्दिर के पास) से बीकानेर के किले की रक्षा का दायित्व सम्भाला। उनके साथ में उनके दोनों भाई, रावत खेमालजी और बाघसिंह थे। उनके पुत्र बीदा और पौत्र दुर्जनसाल भी इनके साथ थे। रावत खेमालजी के पुत्रों, धनराज और करण, के अलावा धनराज का युवा पुत्र सीमल भी उनके साथ था। यह युद्ध निर्णायक रहा, विजय राव जैतसी की हुई। इतिहास इसे गर्व से राठौड़ों की एक शाही शत्रु पर विजय के गीत गाता है, वह यह भूल जाते हैं कि पूगल के राव हरा की तीन पीढ़ियां इस युद्ध में बलिदान देने आई थी।

रावत खेमालजी और राव हरा के ज्येष्ठ पुत्र, राजकुमार बरसिंह को पश्चिमी सीमा, केहरोर, दुनियापुर, मरोठ, मूमनवाहन आदि की रक्षा का दायित्व सौंपा हुआ था। मुलतान के शासक ने सीमान्त क्षेत्र पर आक्रमण किया, इस युद्ध में मूमनवाहन के जगमाल का पुत्र जैतसी केल्हण भाटी मारा गया। इससे क्रुद्ध होकर रावत खेमालजी ने बदला लेने के लिए मुलतान पर जवाबी आक्रमण किया। दोनों ओर के अनेक सैनिक काम आए। रावत ने अचानक छापा मारकर मुलतान ले जाए जा रहे शाही खजाने को मार्ग में लूट लिया और जल्दी से खजाने सहित बरसलपुर के किले में लौट आए। मुलतान इस दोहरी मार से तिलमिला उठा। वहां के शासक ने पराजय का बदला लेने के लिए और खजाना वापिस छीनकर लाने के लिए फत्तुशाह और मूलछक खां के नेतृत्व में बरसलपुर पर आक्रमण करने के लिए अपनी सेना भेजी। मुलतान और पूगल की सीमा पर ही भाटियों और मुलतान के आपस में झड़पें शुरू हो गई थी। भाटी मुलतान की सेना की प्रगति में बाधाएं डाल रहे थे ताकि बरसलपुर पहुंचे हुए खजाने को उनके आदमी ठिकाने लगा सकें। भाटी सेना पीछे हटती गई, वह सशक्त मुलतान की सेना से आमने सामने युद्ध करने में असमर्थ थी। आखिर मुलतान की सेना ने बरसलपुर के किले को घेर लिया। भाटियों ने कई दिनों तक मोर्चा सम्भाले रखा और कड़ा विरोध किया। बरसलपुर के युद्ध में रावत खेमालजी और उनके तीसरे पुत्र करण ने वीरगति पाई। उस समय पूगल में राव बरसिंह (सन् 1535-1553 ई) थे। यह युद्ध सन् 1543 ई में हुआ था। कुछ इतिहासकारों का मत है कि यह युद्ध सन् 1503 ई में लड़ा गया था। यह सही प्रतीत नहीं होता, क्योंकि सन् 1534 ई में कामरान के विरुद्ध युद्ध में रावत खेमालजी और उनके पुत्र कुमार करण, बीकानेर की रक्षा करने के लिए राव हरा की सेना के साथ थे।

बरसलपुर के युद्ध में रावत खेमालजी झुझार होकर भोमिया हुए। इनकी अनेक स्थानों पर देवलियां हैं, जहां विधिवत इनकी पूजा होती है, चढावा चढाया जाता है। यह लोगों की आस्था पूर्ण करते हैं।

बरसलपुर का किला मजबूत रोड़े पत्थर से बना हुआ है। इसके सोलह बुर्ज हैं, पूर्वमुखी दरवाजा है। इसमें लक्ष्मीनाथजी और पारसनाथजी के जुड़वा मन्दिर हैं। तीन मन्दिर, देवी महिषासुरमर्दिनी, सांगियाजी और सांवलदे के हैं। अन्य मन्दिर रामदेवजी, खेतपाल के हैं, अनेक देवलियां स्थानीय भोमपालों की हैं।

बरसलपुर

रावत सेमालजी के पुत्र कुमार करण के वीरोचित साहस एवं बलिदान के लिए पूगल के राव बरसिंह (सन् 1535 1553 ई) ने उनके पुत्र अमरसिंह को जयमलसर की अलग जागीर प्रदान की। इन्हें रावत सेमालजी की पैतृक जागीर बरसलपुर म से 27 गांव दिए गए। अब बरसलपुर के पास 68 गावों म से शेप 41 गांव रह गए थे। राव बरसिंह ने अमरसिंह को उनके दादा रावत सेमालजी की 'रावत' की पदवी से सम्मानित किया। रावत सेमालजी के बलिदान के लिए उनके पुत्र जैतसी को राव बरसिंह ने पदोन्नत करके 'रावत' से 'राव' बनाया। इस प्रकार जैतसी बरसलपुर के प्रथम राव' हुए और अमरसिंह जयमलसर के प्रथम 'रावत' हुए। बरसलपुर के राव जैतसी के वशज, जैतावत सोया भाटी कहलाए और जयमलसर के रावत अमरसिंह के वशज करणोत सोया भाटी कहलाए। रावत अमरसिंह को बीकानेर के राठौडो के विरुद्ध पूगल क्षेत्र की रक्षा का दायित्व सौंपा गया।

रावत सेमालजी के चौथे पुत्र धनराज मारवाड के राव मालदेव (सन 1532-1564 ई) की सेवा में फलौदी के हाकिम के पद पर कार्यरत थे। राव मालदेव ने इन्हें अपने राज्य म बीकमकोर की बारह गांवो की जागीर दी हुई थी। पूगल के राव जैसा (सन् 1553-1587 ई) का पूगल क्षेत्र के गाव पीलाप के पास मे जोधपुर के राव मालदेव और करणू गाव के राव रणकदेव पातावत की सेना से युद्ध हुआ था। पीलाप, फलौदी के समीप के क्षेत्र मे होने से धनराज को भी मारवाड की तरफ से अपनी सेना के साथ युद्ध मे मे आना पडा। इस युद्ध मे मारवाड की सेना को राव जैसा ने पराजित किया और राव रणकदेव पातावत ने युद्ध म वीरगति पाई। राव जैसा के धनराज बहुत नजदीक के चाचा थे, राव जैसा, राव शेखा के पडपौत्र थे और धनराज राव शेखा के पौत्र थे। इस युद्ध म धनराज का दिखावा मारवाड की तरफ था परन्तु सामरिक दृष्टि से उन्होने राव जैसा को जिताने का प्रयास किया, राव जैसा ने भी अपने चाचे को युद्ध म आच नही आने दी। मारवाड की पराजय के बाद मे धनराज राव जैसा के साथ पूगल आ गए। कुछ का विचार है कि इस युद्ध मे राव जैसा गम्भीर रूप से घायल हो गए थे, उन्हे लेकर चाचा धनराज पूगल आए।

राव मालदेव समझ गए थे कि इनका रिश्ता इतना नजदीक होने से धनराज और राव जैसा एक दूसरे के घातक नही हो सकते थे। यह स्वाभाविक था। धनराज के पूगल चले जाने के पश्चात् राव मालदेव ने उनकी बीकमकोर की जागीर वापिस ले ली। मारवाड की इस जागीर के बदले मे राव जैसा ने धनराज को पूगल मे बीठनोक की जागीर प्रदान की। उन्हें इस जागीर म 30 गाव दिए। धनराज के द्वितीय पुत्र, ठाकुरसी को उन्होने खीदासर की जागीर प्रदान की। राव जैसा ने धनराज और उनके वशजो को मारवाड के विरुद्ध पूगल क्षेत्र की रक्षा का काम सौंपा। जागलू की जागीर भी धनराज के वशजो के पास रही। बीठनोक की अजब कवर का विवाह बीकानेर के राजा करणसिंह से हुआ था।

धनराज के वशज, गोपालदास, हेमराज, लिखमीदास आदि भटनेर क युद्ध मे काम आए थे। इनके अन्य वशज, खगार के पुत्र तेजमाल, जोधपुर राज्य मे ही रहे। तेजमाल के पुत्र काना को जोधपुर द्वारा मिठड़िये की जागीर सन् 1615 ई (वि स 1672)म प्रदान की गई, चामू भी इनकी जागीर मे था। वीरदेव को सन् 1602 ई मे मारवाड म कलाणा

को चौदह गांवो की जागीर प्रदान की गई। इनके एक वशज गगादास को रायमलवाली क्षेत्र मे पूगल द्वारा जागीर दी गई थी।

धनराज के वशज, धनराजोत खीवा भाटी कहलाए। इस प्रकार रावत खमालजी के पुत्रो के नाम से तीन नख, जैतावत, करणोत और धनराजोत खीवा केलण भाटियो के हुए। बरसलपुर, जयमलसर, बीठनोक, खीदासर और जागलू की खीवा भाटियों की जागीरो को पूगल के राव शेखा, वरसिंह और जैसा ने लगभग एक सौ गाव प्रदान किए थे।

मारवाड के मोटा राजा उदयसिंह के आदमियो ने जगात वसूल करने के विवाद मे बीकमपुर के राव डूगरसिंह के भाई बाकीदास को सन् 1581 ई मे मार दिया था। राव डूगरसिंह ने अपने भाई की मृत्यु का बदला लेने के लिए राजा उदयसिंह पर आक्रमण किया और उन्हें पराजित किया। राव डूगरसिंह की सहायता के लिए बरसलपुर के राव मडलीकजी भी अपनी सेना सहित युद्ध मे गए हुए थे। कुडल गाव के पास राजा उदयसिंह की सेना से युद्ध करते हुए राव मडलीकजी ने वीरगति पाई। राव मडलीकजी का विवाह बीकानेर के शासक कल्याणमल (सन् 1542-1571 ई) की पुत्री सुगनादे से हुआ था। सुगनादे के नाम से सुगनादेसर कुआ खुदवाया गया था। इस कुए के पास बसे हुए गाव को अब तवरा वाली के नाम से जाना जाता है।

सन् 1625 ई मे समा बलोच ने पूगल पर आक्रमण किया। उस समय पूगल मे राव आसकरण (सन् 1600 1625 ई) थे। पूगल की सहायता करने के लिए राव मडलीकजी के पुत्र राव नेतसिंह बरसलपुर से सेना लेकर आए थे। पूगल के किले की रक्षा करते हुए राव आसकरण मारे गए। इससे क्रुद्ध होकर राव नेतसिंह दुगने उत्साह से लडने लगे, अन्त में उन्होंने भी पूगल की रक्षा करते हुए वीरगति पाई। मरने वालो मे सुमान गा उत्तेराव भी थे। इस प्रकार जहा पिता राव मडलीकजी ने बीकमपुर के अपने भाई के लिए प्राण दिए, वहा उनके पुत्र राव नेतसिंह ने अपनी पैतृक भूमि के लिए प्राण देकर मातृभूमि का ऋण चुकाया। ऐसा अद्भुत भाईचारा था पूगल के वशजो मे। कुछ समय पश्चात्, राव जगदेव (सन् 1625-1650 ई) के शासनकाल मे, समा बलोच ने बीकमपुर पर आक्रमण किया। उसे विजय का स्वाद आने लगा था या मौत उसके सिर पर सवार थी जिससे वह भाटियों को ललकार रहा था। उस समय बीकमपुर मे राव उदयसिंह थे। वह बलोच के साथ युद्ध मे राव आसकरण और राव नेतसिंह के बलिदान को भूले थोडे ही थे। उन्होंने समा बलोच को युद्ध मे मार डाला। इसमे जहा राव आसकरण और राव नेतसिंह की मौत का बदला उन्होंने अवश्य ले लिया, वहीं राव मडलीकजी की मृत्यु का ऋण भी आंशिक रूप से चुकाया।

बीठनोक के ठाकुर धनराज की प्रपौत्री का विवाह बीकानेर के राजा सूरसिंह (सन् 1614–1631 ई) से हुआ था। उस समय पूगल के राव आसकरण या जगदेव थे। उपरोक्त प्रपौत्री, धनराज के वशज, श्रीरगसिंह या राघोदास की पुत्री होनी चाहिए थी।

जैसलमेर के रावल अमरसिंह (सन् 1659-1702 ई) ने सन् 1698 ई. मे बीकानेर पर आक्रमण किया। उस समय बीकानेर के शासक महाराजा अनूपसिंह (सन् 1667-1698 ई) थे। इस आक्रमण के फलस्वरूप रावल अमरसिंह ने जैसलमेर और बीकानेर राज्यो

की सीमा झनू गांव के पास निर्धारित की। इस आक्रमण में समय बरसलपुर के राव और बीकमपुर के राव सुन्दरदास व उनके भाई दलपत भी जैसलमेर की सेना में साथ थे। इस अभियान म पूगल के राव विजयसिंह (सन् 1686–1710 ई) जैसलमेर की सेना के साथ मे नही आए थे। इनकी अनुपस्थिति पर रावल अमरसिंह ने उनसे अपनायत के नाते अप्रसन्नता दर्शायी।

मथेन जोगीदास द्वारा रचित, 'बरसलपुर रासो' म, महाराजा सुजानसिंह (सन् 1700–1736 ई) द्वारा सन् 1712 ई म पूगल के राव दलकरण (सन् 1710–1741 ई) के समय, बरसलपुर पर किए गए आक्रमण का वर्णन है। कथानुसार, मुलतान से बीकानेर आते हुए व्यापारियो के एक काफिले को मार्ग मे बरसलपुर के भाटियो ने लूट लिया था। इस पर व्यापारियो ने बीकानेर दरबार से फरियाद की। महाराजा ने अपनी सेना भेजकर बरसलपुर पर अधिकार कर लिया और किले को घेर लिया। भाटियो ने महाराजा से क्षमा मागी, लूटा हुआ माल व्यापारियो को वापिस दिया, उसकी क्षतिपूर्ति की और सेना का खर्चा दिया। इसके बाद मे महाराजा की सेना वापिस बीकानेर लौट गई। (बीकानेर राज्य का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ 56, दीनानाथ खत्री) इस कथा म कुछ विसगति है। उस समय बरसलपुर पूगल के स्वतन्त्र राज्य के अधीन था व्यापारियों को पूगल के राव से बरसलपुर के विरुद्ध शिकायत करके न्याय की माग करनी चाहिए थी। उनका बीकानेर जा कर फरियाद करने वाली बात जचती नहीं। अगर उन्होने बीकानेर से शिकायत कर भी दी तो बीकानेर द्वारा इसके समाधान के लिए पडोसी राज्य मे सेना भेजने का कोई औचित्य नही था। बरसलपुर के जैसलमेर से भी सम्बन्ध बहुत अच्छे थे। सन् 1698 ई म जैसलमेर द्वारा बीकानेर पर किए गए आक्रमण के समय बरसलपुर के राव जैसलमेर क रावल के साथ थे। कुछ वर्ष पहले (सन् 1698 ई) बीकानेर को जैसलमेर से मजबूरन सन्धि करनी पडी थी, केवल 14 वर्ष बाद (सन् 1712 ई) मे बीकानेर बरसलपुर पर आक्रमण करने का साहस नही कर सकता था।

पूगल मे राव अमरसिंह, (सन् 1741 1783 ई) के समय परिस्थितिया उनके अनुकूल नही थी। पश्चिम मे देरावर राज्य मे अशाति के स्पष्ट आसार थे। वहा दाऊद पुत्र ताक लगाए हुए थे। बीकमपुर मे भाइयो मे आपसी झगडे और खून खराबे हो रहे थे। बीकानेर पूगल को हडपने मे प्रयत्नशील था। जैसलमेर, बीकमपुर और बरसलपुर को हथियाने मे रुचि ले रहा था। इन सबको अपने उद्देश्य प्राप्त करने म सफलता मिली। जैसलमेर के रावल अखैसिंह ने सन् 1749 ई मे बीकमपुर के राव कुम्भा को मारकर बीकमपुर खालसे कर लिया। उन्होने सन् 1761 ई तक इसे खालसे रखकर बाद म सरूपसिंह को बीकमपुर का राव बनाया। दाऊद पुत्रो ने रावल रायसिंह को सन् 1763 ई मे देरावर से निकाल दिया और स्वय देरावर के शासक बन बैठे। बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने सन् 1783 ई मे पूगल के राव अमरसिंह को मारकर वहा अधिकार कर लिया और उज्जैणसिंह (सन् 1790-1793 ई) को नाममात्र का शासक बना दिया था। इन सब अस्थिर वातावरणो का आकलन करके बरसलपुर ने जैसलमेर के सरक्षण मे जाने का निर्णय लिया। यह निर्णय सन् 1749 ई म जैसलमेर द्वारा बीकमपुर को खालसे किए जाने के बाद लिया गया था। क्योकि बरसलपुर के राव को भय हो गया था कि जैसलमेर ने

रावल बीकमपुर की तरह उन पर भी किसी न किसी कारण से अधिकार करके उनकी जागीर को खालसे कर सकते थे, इसलिए वह जैसलमेर द्वारा किसी प्रतिकूल कार्यवाही करने से पहले ही अपनी जागीर को खालसे होने से बचाने के लिए उनके सरक्षण मे चले गए। यह उन्होने समझदारी की। उनकी पश्चिमी सीमा देरावर राज्य के साथ लगती थी। उन्हे भय था कि कही दाऊद पुत्र बरसलपुर पर अधिकार नही कर बैठें। उनका यह भय सही था, क्योकि कुछ समय पश्चात् दाऊद पुत्रो न जैसलमेर राज्य मे अनेक भागो पर अधिकार कर भी लिया था। बरसलपुर के राव ने न केवल अपनी जागीर को खालसे होने से बचाया, उन्होने इसे दाऊद पुत्रो द्वारा लिए जाने की स्थिति से भी बचा लिया। बरसलपुर अपनी जागीर के 41 गावों सहित जैसलमेर राज्य के साथ चला गया।

एक बार बीकमपुर और बरसलपुर के स्वेच्छा से जैसलमर राज्य के सरक्षण मे चले जाने के बाद म वहा के शासको ने इन जागीरो के प्रति कठोर रुख अपनाना प्रारम्भ कर दिया। बीकमपुर, पूगल से पैतृक बट में प्राप्त सभी 84 गावो, और बरसलपुर, पूगल के पैतृक बट मे प्राप्त सभी 41 गांवो, को लेकर जैसलमेर राज्य म मिल गये थे। क्योकि यह 125 गाव मूलरूप मे पूगल द्वारा प्रदान किए हुए इन जागीरो के पैतृक गाव थे इसलिए इन पर जैसलमेर राज्य का कोई अधिकार नही बनता था। परन्तु जैसलमेर ने इस नैसर्गिक अधिकार को ताक मे रखा और सन् 1868 ई तक बीकमपुर के 62 गाव और बरसलपुर के 23 गाव किसी न किसी बहाने दण्डस्वरूप उनसे छीन लिए, इन जागीरो क पास शेष गाव, क्रमश 22 और 18 रह गए।

सन् 1783 ई में पूगल के राव अमर सिंह के महाराजा गजसिंह द्वारा मारे जाने के पश्चात् पूगल का प्रभाव निढाल सा होने लगा था। इसलिए जैसलमेर राज्य ने अब अपनी बीकमपुर और बरसलपुर की जागीरो के प्रति रुख बदलना शुरू कर दिया। सन् 1830 ई मे पूगल के राव रामसिंह के महाराजा रतनसिंह द्वारा मारे जाने के पश्चात्, जैसलमेर राज्य इन दोनो जागीरों पर और ज्यादा हावी हो गया। इस असहाय स्थिति का रावल गजसिंह सन् (1820 1845 ई) और रावल रणजीतसिंह (सन् 1845-1863 ई) ने भरपूर लाभ उठाया। इनके 85 गाव (62+23) उन्होने इनस छीन लिए। इन नीति से तग आकर बरसलपुर ने वापिस पूगल (बीकानेर) राज्य मे आने का प्रयास किया। बरसलपुर के राव मानसिंह और राव साहिब सिंह की मृत्यु के पश्चात् बीकानर के शासको ने कुचाल से तत्कालीन राव रणजीत सिंह को बरसलपुर को स्वेच्छा स बीकानेर मे विलय करने के लिए राजी कर लिया था। परन्तु राव साहिबसिंह की माता ने किसी सम्भावित खतरे के भय से जैसलमेर जाकर रावल से फरियाद की। रावल रणजीतसिंह स्थिति की गम्भीरता और बीकानेर राज्य के षड्यन्त्र को समझ गए। उन्होने तत्काल श्यामसिंह मोहता के नेतृत्व म बरसलपुर की बीकानेर से रक्षा करने के लिए सना भेजा।

उस समय तक ब्रिटिश शासन और जैसलमर व बीकानेर राज्या के बीच, सन् 1818 ई म, हुई सन्धि क्रियान्वित होने लग गई थी। इसलिए बीकमपुर और बरसलपुर अब जैसलमेर राज्य से टूट कर बीकानेर राज्य मे नहीं जा सकते थ, ऐसा होने स सन्धि की मूल शर्तों और भावना का उल्लघन होता था। बरसलपुर के राव रणजीतसिंह के बीकानेर राज्य

मे विलय के प्रार्थना-पत्र और आग्रह को तत्कालीन पोलीटिकल एजेन्ट, मिस्टर रोनाल्ड, ने उक्त सन्धि की मान्यताओ के अनुसार उचित नहीं समझा। अब बरसलपुर स्थायी रूप से जैसलमेर राज्य का भाग हो गया और उसे उनके अधीन रहना पडा। बीकानेर राज्य की वकालत, प्रभाव और प्रयास किसी काम नही आए। ऐसी ही चाल बीकानेर ने देरावर राज्य के कुछ किलो को अपना बताकर चली थी परन्तु वह भी ब्रिटिश न्याय के सामने सफल नही हुई। राव रणजीतसिंह को बीकानेर के बहकावे में आने के कारण जैसलमेर का कोपभाजन बनना पडा।

बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह (सन् 1787-1828 ई) का विवाह बरसलपुर की कुमारी श्याम कवर से हुआ था। महाराजा सरदारसिंह (सन् 1851-1872 ई) का भी एक विवाह बरसलपुर हुआ था। सन् 1849 ई मे रोज-रोज के सीमा सम्बन्धी विवादो, झगड़ों और झडपो को समाप्त करने के लिए ब्रिटिश शासन ने जैसलमेर, बीकानेर और बहावलपुर राज्यों को आपस मे मिलाने वाली सीमा का स्थाई निर्धारण कर दिया। इस कार्यवाही से बरसलपुर की जागीर की बीकानेर और बहावलपुर से लगने वाली सीमा भी मौके पर अकित हो गई। इससे ब्रिटिश शासन के अभिलेखो मे बरसलपुर जैसलमेर राज्य का अभिन्न अग हो गया। सन् 1947 ई मे भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात् सन् 1949 ई मे राजपूताने के राज्यो का भारतीय सघ मे विलय हो गया। इसके पश्चात् प्रशासनिक कारणो से जैसलमेर जिले के बरसलपुर सहित 45 गाव बीकानेर जिले मे मिलाए गए थे।

बीकानेर राज्य मे महाराजा गगासिंह के शासनकाल मे कुछ वर्षो तक प्रधानमन्त्री के पद पर रहे, महाराज भैरूसिंह का विवाह बरसलपुर हुआ था और महाराज जगमालसिंह के पुत्र तेजसिंह का विवाह भी वही हुआ था।

बरसलपुर के राव पृथ्वीसिंह योग्य एव लोकप्रिय व्यक्ति थे। वह अनेक वर्षो तक कोलायत (मगरा) पचायत समिति के प्रधान के पद पर रह चुके थे। इनका देहान्त दिनाक 5-8-1988 को हो गया। बरसलपुर के राव मोतीसिंह के पुत्र ठाकुर भूरसिंह भी ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे। भारत पाक सीमा पर डाकू उन्मूलन अभियान मे इनका राज्य सरकार और पुलिस विभाग के साथ मे अच्छा सहयोग और तालमेल रहा। इस सराहनीय कार्य के लिए इन्हें शासन द्वारा अनेक प्रशसा पत्र भी दिए गए थे। दुर्भाग्य स डाकू उन्मूलन कार्य मे यह डाकूओ के साथ सघर्ष मे मारे गए। इनके पुत्र देवीसिंह भाटी पिछले दस वर्षों से कोलायत क्षेत्र से जनता पार्टी के प्रत्याशी रहे हैं और कांग्रेस के विरुद्ध लोकमत के बहुमत से राजस्थान विधान सभा के चुनाव जीतते आए है। यह जन सेवक लोकप्रिय नेता हैं। इनकी आवाज राजस्थान विधानसभा मे अनक सामाजिक और राजनैतिक मामलो मे गूजती है। इनका विवाह आसपालसर के जानेमाने डाक्टर रूपसिंह की पुत्री से हुआ। डाक्टर रूपसिंह सेवा निवृत होने के पश्चात् हनुमानगढ टाउन मे रहते थे, वहीं इनका निधन हुआ। देवीसिंह भाटी के तीन बहनें हैं। एक बहन का विवाह सुरनाणा गाव के ठाकुर लक्ष्मण सिंह से हुआ। दूसरी बहन का विवाह ठाकुर प्रभुसिंह से हुआ, इनके पिता ठाकुर सुलतान सिंह, राजस्थान पुलिस के महानिदेशक के पद पर अनेक वर्षों तक रहे थे। केवल यही नही ठाकुर प्रभुसिंह की माता, श्रीमती रतनकवर, राजस्थान विधानसभा की सदस्या भी हैं। तीसरी बहन का

विवाह ठाकुर मानसिंह इन्दा से हुआ, यह राजस्थान के सिचाई विभाग मे वरिष्ठ अभियन्ता हैं।

जैसलमेर राज्य के बरसलपुर की जागीर के 41 गावो मे से, 23 गाव खलासे कर लिए थे। शेप निम्नलिखित 18 गाव इनके ठिकान मे रहे

(1) बरसलपुर,	(2) मूसेवाना,	(3) गन्नीवाला
(4) मगनवाला,	(5) भेरूवाला,	(6) रोहिड़ावाला,
(7) भाटियावाला,	(8) दोहरिया,	(9) निसूमा
(10) तवरावाली,	(11) मिश्रीवाला,	(12) जगासर,
(13) अलावाला,	(14) मोडिया,	(15) बिकानरी,
(16) आखुसर,	(17) कबरवाला,	(18) चीला काशमीर।

'बिठी घायल जो मो मुवो त्रिकाणे,
महले राव चूडो नगाणे।
बरसलपुर खेमाल बरखाण,
किधो मरण जिसो कलियाण।'

बरसलपुर के राव

पूगल के राव शेखा, सन् 1464-1500 ई
इनके ज्येष्ठ पुत्र हरा, राव बने, सन् 1500-1535 ई,
राव हरा के छोटे भाई खेमालजी और वाघसिंह थे।

1 रावत खेमालजी बरसलपुर के प्रथम जागीरदार हुए।	10 केसरी सिंह
	11 लखधीर सिंह
2 राव जैतसी, यह बरसलपुर के प्रथम 'राव' हुए।	12 अमरसिंह
	13 मानसिंह
3 मालदेव	14 साहिबसिंह
4 मन्डलीकजी	15 रणजीत सिंह
5 नेत सिंह	16 धन्नेसिंह
6 पृथ्वीसिंह	17 मोतीसिंह
7 दयालदास	18 वनेसिंह
8 करणीसिंह	19 पृथ्वीसिंह
9 मानीसिंह	20 सज्जन सिंह

राव हरा सहित पूगल म 22 राव हुए हैं। राव उज्जीणसिंह और सादूलसिंह को अगर शामिल नही करें, तब पूगल और बरसलपुर की पीढिया बराबर, 20, हैं।

भक्ति का सम्मान किया। उनके धारण किए हुए शस्त्र, ढाल, सेला, तीर, कमाण, गदा और बख्तर को आदरपूर्वक रखा गया। राजा सूरसिंह की आज्ञा से प्रत्येक दशहरा-दिवाली के उत्सव मे इन शस्त्रो के राजा स्वय तिलक करके पूजा किया करेंगे। यह राजा सूरसिंह द्वारा अपने विरोधियो के प्रति अपनायी गई स्वस्थ परम्परा थी। इसी प्रकार राजा दलपतसिंह को अजमेर के किले से मुक्त कराने के प्रयास मे चापावत हठीसिंह मारे गए थे, तब राजा सूरसिंह की आज्ञा से चापावत हठीसिंह गोपालदासोत के वशज बीकानेर के किले मे हाथी पोळ (सूरज पोळ) तक सवारी पर चढ़े हुए जा सकते थे। जब कि अन्य सरदारो को किले के मुख्य द्वार, करण पोळ, पर सवारी से उतरना पडता था। यह अच्छी परम्पराएँ थी, इसमे बदले की भावना को भुला दिया गया था।

रावत बीरमदेव की मृत्यु के बाद मे राजा सूरसिंह ने उनके छोटे भाई चन्द्रसिंह को उनकी सेवाओ के कारण रावत बनाया। इन्हें राज के खालसे के सात गाव और देकर, ग्यारह गावों की ताजीम दी गई। रावत चन्द्रसिंह, राजा रायसिंह की आज्ञा की पालना करते हुए, राजा सूरसिंह की सेवा मे ही रहे।

राजा सूरसिंह के समय जयमलसर के भाटियो ने सन् 1616 ई से उनके अनेक सैनिक अभियानो मे साथ दिया। उन्होने अद्‌भुत वीरता दिखाई और स्वामिभक्ति का परिचय दिया। इससे प्रसन्न होकर राजा ने रावत चन्द्रसिंह को सन् 1628 ई मे बीकानेर के सिलहखाने का प्रभारी नियुक्त किया। बीकानेर के किले के सारे अस्त्र शस्त्र इनकी निगरानी और देखरेख मे रहते थे। प्रत्येक दशहरे के त्यौहार पर बीकानेर के शासक इन शस्त्रो की पूजा करने के पश्चात् जयमलसर के रावतो को उनकी सेवाओ के लिए धन्यवाद देते थे और हाथ जोडकर उन दिनो की कृतज्ञता से याद करते जब इन रावतो ने बीकानेर के राठौडो का उनकी दुर्दशा के बुरे दिनो मे साथ दिया था। बीकानेर के शासक जयमलसर के रावतो के उपकारो को भूले नही, यह उनका बडप्पन था और शासको की गरिमा के अनुरूप था। कुछ समय पश्चात् राजा सूरसिंह के विद्रोहियो ने रावत चन्द्रसिंह को मार दिया। इनके बाद मे इनके ज्येष्ठ पुत्र जुगतसिंह रावत बने और उनके बाद मे उनके ज्येष्ठ पुत्र मुकनदास रावत बने। रावत मुकनदास के ज्येष्ठ पुत्र उदयसिंह थे।

बीकानेर के राजकुमार जोरावरसिंह और जयमलसर के कुमार उदयसिंह के बीच मे किसी बात को लेकर तकरार हो गई। उस समय महाराजा सुजानसिंह (सन् 1700-1736 ई) बीकानेर के शासक थे। ओझा का कथन है कि उदयसिंह रावत नही बने थे, दयालदास का कथन है कि वह रावत बने थे। वास्तव मे उस समय रावत मुकनदास थे, उदयसिंह उनके ज्येष्ठ पुत्र थे, यह उनके बाद मे रावत नही बन सके। उदयसिंह को दण्ड *देने के लिए राजकुमार जोरावरसिंह सेना लेकर जयमलसर गए। उदयसिंह ने उस समय* हार मान ली, जिससे झगडा टल गया। परन्तु उदयसिंह ने मन मे बदला लेने की ठान ली। उन्होने बीकानेर को जोधपुर से पराजित करवाने का प्रण किया। नागौर के शासक बख्तसिंह की आख बीकानेर पर पहले से ही लगी हुई थी। उदयसिंह ने नागौर जाकर बख्तसिंह से मिल कर षड्‌यन्त्र रचा। नापा साखले के वशज वश-परम्परा से बीकानेर के किलेदार हुआ करते थे। उस समय के किलेदार दौलतसिंह साखले को लालच देकर उदयसिंह ने अपने साथ

मिला लिया। उनके प्रयास से कुछ और सरदार भी उनके साथ मिल गए। उन दिनों राजकुमार जोरावरसिंह ऊदासर में थे। वहां एक गोठ में शराब के नशे में उदयसिंह ने षड्यन्त्र का भेद राजसी पडिहार पर प्रकट कर दिया। वह राज्य का सच्चा हितैषी था, इसलिए वह षड्यन्त्र विफल हो गया। इस प्रकार उदयसिंह का उद्देश्य पूर्ण नहीं हुआ। यह घटना सन् 1733 ई. की है।

महाराजा सुजानसिंह ने इस घटना के दण्डस्वरूप रावत मुकनदास को पदच्युत किया और उनके ज्येष्ठ पुत्र उदयसिंह को जयमलसर के उत्तराधिकार से वंचित किया। उन्होंने रावत मुकनदास के सबसे छोटे, पांचवें भाई, किशोरसिंह को उनके स्थान पर रावत बनाया इस प्रकार उदयसिंह कभी रावत नहीं बने।

जोधपुर में महाराजा रामसिंह और उनके भाई बख्तसिंह के बीच में गृह-युद्ध चल रहा था। बीकानेर के महाराजा गजसिंह (सन् 1745-87 ई.) ने बख्तसिंह की सहायता के लिए बीकानेर से सेना भेजी। इसमें रावत किशोरसिंह, उनके बड़े भाई मुकनदास, महाजन के ठाकुर, रावतसर के रावत और अन्य सरदार भी थे। महाराजा रामसिंह युद्ध में हार गए, विजयी बख्तसिंह जोधपुर के शासक बने। रामसिंह ने बीकानेर से बदला लेने के लिए बीकानेर पर आक्रमण किया। इस युद्ध में रावत किशोरसिंह मारे गए। रावत किशोरसिंह के कोई पुत्र नहीं था, इसलिए इनके स्थान पर इनके बड़े भाई देईदास के पौत्र और खड़गसिंह के पुत्र, हिन्दूसिंह को रावत बनाया गया।

एक बार छोटी उम्र में हिन्दूसिंह कहीं जा रहे थे। उन्हें मार्ग में माता करणीजी मिली। उन्होंने हिन्दूसिंह से कहा कि कल एक सुनार उनकी मूरत लेकर आएगा, उससे वह मूरत ले लें। हिन्दूसिंह ने कहा कि उनके पास मूरत की कीमत देने के लिए रुपये नहीं थे। माता करणीजी ने कहा कि रुपयों की कोई बात नहीं, फिर कभी दे देना। दूसरे दिन नेरजी सुनार का रूप धारण करके हिन्दूसिंह को मूरत दे गए। बाद में वह सुनार उन्हें ढूंढने पर भी गांव में कहीं नहीं मिला। यह माता करणीजी द्वारा दी हुई मूरत अब भी जयमलसर ठिकाणे के पास है। रावत भोजन करने से पहले इसकी धूप जलाकर पूजा करते हैं, उसके बाद में भोजन ग्रहण करते हैं।

सन् 1761 ई में बहावलपुर (देरावर) के दाऊद पुत्रों ने मोजगढ़ और अनूपगढ (चूडेहर) के किले किसनावत भाटियों से छीन लिए थे। इस सेना का नेतृत्व मुबारक खां दाऊद पुत्र कर रहा था। अनूपगढ के किलेदार मथुरा जोशी को उसने किला सौंपने के लिए विवश किया और किले पर अधिकार कर लिया। पहले चूडेहर लारवारा के किसनावत भाटियों के पास था, जिसे महाराजा अनूपसिंह के समय सन् 1678 ई में उनके दीवान मुकुन्द राय ने धोखे से उनसे छीन लिया था और उसने वहां वर्तमान अनूपगढ का किला बनवाया था। बाद में भाटियों ने फिर से इस किले पर अधिकार कर लिया था। बीकानेर के महाराजा गजसिंह (सन् 1745–1787 ई.) ने उपरोक्त दोनों किलों को लेने के लिए रावत हिन्दूसिंह को सेना देकर भेजा। रावत हिन्दूसिंह ने मोजगढ़ पर आक्रमण करके किले को घेर लिया। इन्होंने रात्रि के समय सीढ़ियों के सहारे किले में प्रवेश करके प्रहरियों पर आक्रमण किया और किले पर अधिकार कर लिया। उस किले के मुखिया मीर हमजा को

सीधे-सादे भाटी सरदार थे। खीदासर गाव के उम्मेदसिंह लोकप्रिय जननेता है, अच्छे राजनैतिक कार्यकर्ता व कर्मठ व्यक्ति है। यह पचायत समिति, कोलायत (मगरा) के लोकप्रिय प्रधान रह चुके है।

बीठनोक, खीदासर व जागलू के धनराजोत खीया भाटियो के पास पूगल द्वारा दिए गए निम्नलिखित तीस गाव थे :—

(1) बीठनोक (2) नाथूसर, (3) बान्धा, (4) सूरपुरा। (कुल चार)

(1) खींदासर (2) हदा, (3) मियाकोर, (4) खीचनिया, (5) साले री ढाणी, (6) लामाणा का वास, (7) खारूसर का वास। (कुल सात)

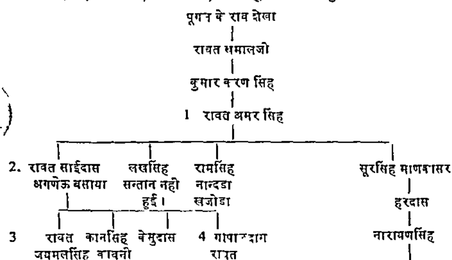
(1) जांगलू का वास (2) खारी वाला 1/2, (3) तेलियो का वास 1/2, (कुल तीन)। जागलू के दो ठाकुर थे।

खीया भाटियो की भाई बन्ट की अन्य जागीरें थी

(1) कावनी, (2) अगणेऊ, (3) गोविन्दसर, (4) सजोडा, (5) खेतोलाई भाटियान, (6) खेतोलाई शम्भु, (7) लाडखान, (8) लामाणा, (9) भडाल भाटियान, (10) नान्दडा, (11) पावूसर, (12) पृथ्वीराज का वेरा, (13) राणासर, (14) मोरखाणा पश्चिम, (15) सियाणा बडा वास, (16) सियाणा वास जोधासर, (17) रणधीस•, (18) सुरजडा, (19) सिन्दूको, (20) हाडला, (21) वाला कुआ (जोधपुर), (22) मुरज, (23) धरनोक, (24) जैसिंगसर, (25) साईसर, (26) नाथूसर, (27) ववलीसर, (28) स्यामसर, (29) भाटियो का वेरा।

इस प्रकार करणोत और धनराजोत खीया भाटियो के जागीरो के कुल चालीस गाव थे। वरसलपुर के जैतावत खीया भाटियो के पास अट्ठारह गाव थ।

रावत हरिसिंह तक, जयमलसर के पहले रावत अमरसिंह से कुल सतरह रावत हुए हैं। इस प्रकार पूगल के और हरिसिंह के बीच मे उन्नीस पीढ़ी हैं। जयमलसर के करणसिंह, रावत साईदास, जयमलजी, वीरमदेवजी, चन्द्रसिंह, किशोरसिंह युद्धो मे मारे गए थे।



गोपालदास रावत

5 वीरमदेव रावत — 6 चन्द्रसिंह रावत — डूँगरसिंह — जगन्नाथसिंह

7 जुगतसिंह रावत

8 मुकनदास रावत — दईदास — प्रेमसिंह — हिम्मतसिंह — 9. किशोरसिंह रावत (सतान नहीं थी हिन्दूसिंह गोद आए)

खड्गसिंह

10 हिन्दूसिंह रावत (किशोरसिंह के गोद गए)

हीरसिंह — 11 खेतसिंह रावत — रूपसिंह — रामसिंह — भोमसिंह — रतनसिंह — देईदानसिंह

अमरसिंह — कल्जी — कानोराय — प्रतापसिंह — गोविन्दसिंह — मदनसिंह

12 भोमसिंह रावत — मूणसिंह — हठीसिंह — भैरूसिंह — उमेदसिंह — बीझराज सिंह — मोहबतसिंह

13 हणुतसिंह रावत — पृथ्वीसिंह — शेरसिंह

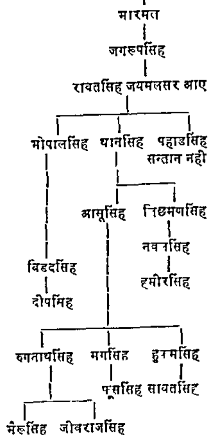
14 करणीसिंह रावत — नवलसिंह

शिवदानसिंह — 15 तेजसिंह रावत — जेससिंह — सुगनसिंह — सगतसिंह — विजयसिंह — बिमालसिंह

16 मेहताबसिंह रावत

17 हरिसिंह

18 यदुसिंह — किशनसिंह — प्रभुसिंह — कुशालसिंह — भैरूसिंह



किसनावत भाटी, खारबारा, राणेर

राव शेखा के तीसरे पुत्र कुमार वाघसिंह, पूगल के राव हरा के छोटे भाई थे। रावत सेमाल और वाघसिंह समय समय पर अपनी जागीरो, बरसलपुर और रायमलवाली, के क्षेत्रो में जाते आते रहते थे। वह अधिकाश समय अपने पिता के पास पूगल म रह कर उनको प्रशासन चलाने मे सहायता करते थे। वह पश्चिमी सीमा क्षेत्रो की सुरक्षा व्यवस्था भी सम्भालते थे। उन्होने बाद मे अपने पिता की आज्ञानुसार पूगल छोड़ा और स्थाई रूप से अपनी जागीरों मे रह कर वहा का प्रशासन सुनियोजित किया और पूगल राज्य की सुरक्षा का भी ध्यान रखा। इनकी पूगल के प्रति निष्ठा और ईमानदारी सदैव बनी रही और इन दोनो ने अपने ज्येष्ठ भाई राव हरा को पूर्ण सहयोग और समर्थन दिया।

वाघसिंह के पास रायमलवाली, हापासर आदि 140 गांवा की जागीर थी। इनकी जागीर मे दूर-दूर स्थित छोटे छोटे गाव थे जिनकी आबादी मुख्यत बहुसख्यक मुसलमानो की थी। इनका मूल पेशा पशुपालन का था। वह इन गांवो मे अच्छी वर्षा के वर्षों मे आते थे, अभाव व अकाल के वर्षों मे इनके गाव उजडे हुए रहते थे। पूगल राज्य की राठौड़ा के आक्रमणो के विरुद्ध रक्षा करने के लिए वाघसिंह का मुख्यालय आरम्भ म हापासर मे रखा गया था।

वाघसिंह के पुत्र किसनसिंह के नाम से उनके वशज किसनावत भाटी कहलाये। वाघसिंह की 140 गांवो की जागीर दूर दूर तक फैली हुई थी। इसमे खारबारा, राणेर, चूडेहर (अनूपगढ), करणपुर, रायसिंहनगर, सूरतगढ और लूणकरणसर तहसीलो के भाग, पदमपुर, विजयनगर, गगानगर और भटनेर के पास का क्षेत्र शामिल था। उपरोक्त सूची मे से अनेक नगर उस समय बसे नही थे।

किसनसिंह के तेजमालसिंह और रायसिंह दो पुत्र थे। तेजमालसिंह के वशजा के बट मे खारबारा का क्षेत्र आया और रायसिंह के वशजो के बट मे रायमलवाली व राणेर का क्षेत्र आया। खारबारा और राणेर गाव पास-पास मे थे ऐसा सुरक्षा की दृष्टि से किया गया था। दोनों की जागीरें सैकडो मील दूर दूर तक फैली हुई थी और इन्हें किसनसिंह के वशजो ने अपनी सहूलियत से बांट रखा थी।

बीकानेर के राजा रायसिंह के समय (सन् 1571-1612 ई) उनके पुत्र राजकुमार दलपतसिंह ने कई बार उनके विरुद्ध विद्रोह किया। उस समय पूगल म राव आसकरण (सन् 1600-1625 ई) का शासन था। विद्रोही राजकुमार को दबाने के लिए राव आसकरण ने कई बार बीकानेर राज्य को सहायता की। राजा रायसिंह ज्यादातर मुगलो की सेवा में बीकानेर से सैकडो मील दूर दक्षिण मे या अन्यत्र रहते थे, उनकी अनुपस्थिति

के समय राव आसकरण की सहायता राजकुमार को बीकानेर से खदेड़ने में बहुत उपयोगी रहती थी। इस कारण से राजकुमार दलपतसिंह पूगल के भाटियों को अपना शत्रु समझते थे। राजा रायसिंह के बाद में जब दलपतसिंह राजा बने (सन् 1612-1614 ई.) तब इन्होंने भाटियों से अपनी पुरानी शत्रुता का बदला लेने की भावना से उनके क्षेत्र में चूडेहर (अब अनूपगढ) में एक किले का निर्माण करवाना शुरू कर दिया। चूडेहर का सभाग पूगल के वंशज किसनावत भाटियों की जागीर के क्षेत्र में पड़ता था। अपने क्षेत्र में इस प्रकार अनाधिकृत रूप से किले के बनाये जाने का भाटियों और उनके सहयोगियों ने बड़ा विरोध किया, परन्तु राजा दलपतसिंह के आदमी नहीं माने। उन्हें बीकानेर से कार्य चालू रखने के आदेश थे। इस पर भाटियों और जोइयों (मुसलमानो) के 300 आदमी वहा एकत्र हो गए। दिन भर मे जितना निर्माण कार्य राजा दलपतसिंह के आदमी कराते थे, उसे भाटी और जोइये मिलकर रात मे ध्वस्त कर देते थे। यह प्रक्रिया कई दिनों तक चलती रही। अनेक बार आपस मे विवाद और तकरार के कारण दोनो ओर की सेनाओं के बीच रक्तपात भी हो जाता था। किसनावत भाटियो की सहायता के लिए पूगल से आई हुई सेना मे राव आसकरण के भाई रामसिंह भी थे। वह सन् 1612 ई. मे चूडेहर मे बीकानेर की सेना के साथ हुए संघर्ष मे मारे गए। इसके बाद मे भाटियों के और सक्रिय हस्तक्षेप से किले के निर्माण की प्रगति लगभग शून्य के बराबर थी और बीकानेर का व्यर्थ मे खर्चा हो रहा था। रामसिंह के मारे जाने से आपसी संघर्ष मे बहुत कटुता आ गई थी, इसलिए बीकानेर के आदमी किले का कार्य बीच मे छोडकर वहा से चले गए। परन्तु चूडेहर का विवाद समाप्त नहीं हुआ, यह आगे की पीढियो मे भी चलता रहा।

राजा दलपतसिंह को सन् 1613 ई. मे मुगल सेना ने अजमेर मे बन्दी बना कर रखा हुआ था। वह बन्दीगृह से मुक्त होने के प्रयास मे, 25 जनवरी, सन् 1614 ई. को मारे गए। उनके स्थान पर उनके छोटे भाई सूरसिंह (सन् 1614-1631 ई.) बीकानेर के राजा बने। इन्हें राजा बनाने मे भाटियों और उनके सहयोगी मुसलमानो का बहुत बड़ा योगदान रहा। राजा सूरसिंह भाटियों के पराक्रम को पहले कई बार देख चुके थे और उन्होंने उसे सराहा भी था। भाटियों द्वारा पूर्व में दिए गए सहयोग को ध्यान मे रखते हुए और भविष्य मे इनसे मित्रता बनाए रखने के उद्देश्य से, इन्होंने सन् 1614 ई. मे राव आसकरण की पुत्री रतनावती से विवाह किया। सन् 1631 ई. मे राजा सूरसिंह के देहान्त पर, रानी रतनावती उनके साथ सती हुई थी। भाटियों के प्रभाव और शक्ति को अपने पक्ष मे रखने के लिए इन्होंने मारवारा के ठाकुर तेजमाल के छोटे भाई की पुत्री रगकवर से भी विवाह किया था।

पावलेट ने लिखा है कि मारवारा के ठाकुर तेजमाल ने राजा रायसिंह को उनकी मृत्यु शय्या पर आश्वासन दिया था कि वह समस्त विद्रोही सरदारों को उनके समक्ष लाकर उनसे क्षमा याचना करवाएँगे। इस वचन को ठाकुर तेजमाल और बीकानेर के दीवान करमचन्द निभा नहीं सके। राजा सूरसिंह को सन्देह था कि इन दोनो के भी विद्रोही सरदारों के साथ राजकुमार दलपतसिंह से मिले हुए होने के कारण इन्होंने राजा रायसिंह की अन्तिम इच्छा पूर्ण नहीं होने दी। इसलिए जब राजा दलपतसिंह के बाद मे सूरसिंह

राजा बने तो उन्होने ठाकुर तेजमाल और दीवान करमचन्द को मरवा दिया। पावलैट ने दयालदास के कथन पर विश्वास करके उपरोक्तानुसार लिख दिया। उन्होने ऐतिहासिक तथ्यों की सत्यता जाचे बिना घटना की नकल कर दी। जी एच ओझा ने, बीकानेर का इतिहास-भाग एक, मे खारबारा के तेजमाल को मरवाये जाने का वर्णन नहीं किया। यह सही था कि राजा सूरसिंह ने दीवान करमचन्द और उसके परिवार का वध अवश्य करा दिया। राजा रायसिंह का देहान्त दक्षिण मे बुरहानपुर मे हुआ था इसलिए ठाकुर तेजमाल का उनके पास होने का प्रश्न ही नहीं था।

राजा दलपतसिंह के समय का चूडेहर के किले का विवाद बीकानेर की अगली तीन पीढियो को सताता रहा। बादशाह औरगजेब ने राजा करणसिंह और अनूपसिंह की दुर्दशा कम नहीं की थी, फिर भी चूडेहर के किले का छोटा सा विवाद इनके गले मे हड्डी की तरह अटका हुआ था। बादशाह न पिता पुत्र, राजा करणसिंह और अनूपसिंह, को अपनी मातृभूमि म मरने तक का सुख नही लेने दिया, एक ने औरगाबाद के पास अपनी जागीर में और दूसरे ने आदूणी मे अपने प्राण त्यागे। 'जय जगलधर बादशाह' की तथाकथित उपाधि लेने वालो की बादशाह ने बहुत बुरी गत की थी। फिर भी इन्हें गिला था कि पूगल के राव सुदरसेन ने देरावर का राज्य इन्हें नही देकर रावल रामचन्द्र को क्यो दे दिया? महाराजा अनूपसिंह ने अपने दक्षिण के प्रवास से अपने दीवान को बीकानेर सदेशा भेजा कि वह चूडेहर पर अधिकार करके वहा के अधूरे किले का निर्माण कार्य पूर्ण करावें। महाराजा अनूपसिंह (सन् 1667-1698 ई) के समय पूगल के शासक राव गणेशदास (सन् 1665-1686 ई) थे। बीकानेर ने चूडेहर के अभियान का नेतृत्व करने के लिए मोहता मुकन्ददास को नियुक्त किया। उसने चार हजार आदमियो की सेना साथ मे लेकर खारबारे पर आक्रमण किया। बीकानेर के इतिहासकारो का यह आरोप कि खाराबारा के ठाकुर रतनसिंह के पुत्र भागचन्द ने बीकानेर की सेना का साथ दिया था, गलत है। ऐसा कोई स्पष्ट कारण नही था जिसके लिए भागचन्द, मोहता मुकन्ददास का साथ देता।

खारबारे के भाटियो ने भी बीकानेर की सेना का सामना करने के लिए दो हजार आदमियो की सेना तैयार की। उन्होने अपने पीढियो के सहयोगी जोइया मुसलमानों को भी सहायता भेजने के लिए सदेश भेजा। लखवेरा से जोइयो की कुमक आई। ठाकुर तेजमालसिंह के वशजो ने मोहता मुकन्ददास को स्पष्ट बता दिया कि वह किसनावत भाटियो के क्षेत्र मे अनुचित हस्तक्षेप नही करें, हाकडा नदी तक का क्षेत्र पिछली दसो पीढियों से भाटियो के अधीन रहा था और उसी मे से राव शेखा ने अपने पुत्र बाघसिंह को जागीर प्रदान की थी। पश्चिम म चूडेहर, फूलडा, मरोठ इसी नदी के किनारे बसे हुए थे, उस क्षेत्र पर कभी भी राठौडो का अधिकार नही रहा था। परन्तु वह किसी प्रकार का तर्क मानने के लिए सक्षम नही था, उसे तो दक्षिण से शासक के आदेश मिले हुए थे जिनकी पालना करना उसका उत्तरदायित्व था।

पूगल की भाटियो की सेना का नेतृत्व स्वय राव गणेशदास कर रहे थे। इनके साथ मे इनके पुत्र कुमार केसरीसिंह और राजकुमार विजयसिंह भी थे। उस समय खारबारे मे ठाकुर भागचन्द थे और रायमलवालो (राणेर) म ठाकुर जगरूपसिह थे। भाटियो ने अपने

मोर्चे गार्वता से सभाले हुए थे। कुछ सैनिक चूडेहर के अधूरे किले मे थे, बाकी बाहर रह कर बीकानेर की सेना को परेशान कर रहे थे। बीकानेर की सेना दो माह तक चूडेहर की घेराबन्दी किये बैठी रही। उसे किले के अन्दर से मार पड रही थी और बाहर से मैदान मे बिखरी हुई भाटियो की सेना उस पर छापे मार रही थी। बीकानेर की इतनी बडी सेना के लिए रसद-रसाव, रसद, सम्पर्क आदि की कठिनाइयाँ आने लगी। इन सब विपदाओ से मोहता मुकन्ददास परेशान हो गया। मोहता ने भाटियो को अपनी 'धर्म कर्म' की शपथो से प्रभावित किया, वह उसके कथनो पर विश्वास करने लगे। दो माह के लम्बे घेरे का उन पर भी प्रतिकूल असर पड रहा था। भाटियो ने मोहता की शपथो और बातो पर विश्वास करके सतर्कता के उपायो मे कुछ ढील कर दी और स्थिति का सुधरी हुई जानकर काफी सैनिको को वापिस अपने गावो मे लौटने दिया। मोहता इस घटती हुई शक्ति की बराबर जानकारी अपने जासूसो से प्राप्त कर रहा था। उसने एक दिन उचित अवसर जानकर चूडेहर पर अचानक आक्रमण कर दिया। भाटियो ने उसके इस विश्वासघात का डटकर मुकाबला किया। इस सघर्ष मे रायमलवाली (राणेर) के ठाकुर जगरूपसिह और बिहारी दास भाटी मारे गए। बीकानेर की सेना की सख्या अधिक होने स उन्होने चूडेहर पर अधिकार कर लिया। यहा मोहता मुकन्ददास ने सन् 1678 ई म एक सुदृढ किला बनवाया, और चूडेहर का नाम बदल कर उसने महाराजा अनूपसिह के नाम पर इसका नाम 'अनूपगढ' रखा। यही नगर वर्तमान अनूपगढ है और वहा का किला वही है जिसे मोहता मुकन्ददास ने सन् 1678 ई मे बनवाया था। यह किला अब 310 वर्ष पुराना है।

बीकानेर के इतिहासकारो का कहना है कि, 'बीकानेर की सेना के साथ म सारवारा के ठाकुर भागचन्द के अलावा खडगसिह का पुत्र अमरसिह भी था। मुकन्ददास ने अमरसिह आदि के साथ भाटिया पर आक्रमण किया। भाटी चूडेहर के किले मे थे। दो मास तक सेना ने किले को घेरे रखा। किले में रसद की कमी हो जाने पर जगरूपसिह तथा बिहारीदास ने लखवेरा के जोइयो से सहायता मागी। जोइया रसद और गोला बारूद लेकर आ रहे थे कि बीकानेर की सेना ने उन पर आक्रमण करके उन्हें भगा दिया। रसद का सामान और गोला बारूद राज्य की सेना के हाथ लगा। कुछ दिनो बाद मे अन्न के अभाव से तग आकर भाटियो ने सधि का प्रस्ताव भेजा और एक लाख रुपया पेशकशी देने का वायदा किया। इस आश्वासन पर बढे हुए खर्च का कम करने के लिए भाटियों ने सेना में कमी कर दी और जोइयो को भी वहां से हटा दिया। इस प्रकार भाटियो की शक्ति कम हो जाने पर मुकन्ददास ने एक दिन आधी रात को उन पर अचानक आक्रमण कर दिया। जगरूप तथा बिहारीदास और उनके साथी मारे गए और गढ पर राज्य का अधिकार हो गया। सारवारे की जागीर भागचन्द के नाम करदी।'

उपरोक्त दोनो वर्णन समान हैं। केवल बीकानेर की शेखी इतनी ही झूठी है कि उन्होने एक लाख रुपये पेशकशी के लिये या ठाकुर भागचन्द उनकी सेना के साथ था। बिहारीदास नाम का सारवारे का कोई वशज नहीं हुआ था। खडगसिह ठाकुर भागचन्द के पौत्र थे। खडगसिह भागचन्द के पुत्र भूपतसिह के पुत्र थे, इसलिए भागचन्द के पडपौत्र अमरसिह का सेना के साथ होने का प्रश्न ही नहीं था। बीकानेर का यह दावा सही नहीं है।

फिर आगे लिखा है कि, 'पर कुछ समय बाद ही जोइयो की सहायता से बिहारीदास के पुत्र ने पुन उस पर अधिकार कर लिया। तब राज्य की ओर से खारबारा महाजन के नाम कर दिया गया।' (बीकानेर राज्य का सक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ 48, दीनानाथ खत्री, समर्पण डा करणीसिह, महाराजा, बीकानेर)

सन् 1678 ई से कुछ समय बाद म महाजन के ठाकुर अजबसिह ने महाराजा अनूपसिह को आश्वासन देकर लालच दिया कि अगर वह खारबारे की जागीर उन्हे दे दें तो वह बीकानेर राज्य की सीमा का विस्तार सतलज नदी तक कर देंगे। सतलज नदी और बीकानेर राज्य की सीमा के बीच म उस समय देरावर का रामचन्द्रोत भाटियो का राज्य पडता था। इससे स्पष्ट था कि जिस देरावर के राज्य को पूगल के राव सुदरसेन ने राजा करणसिह को नही देकर, रावत रामचन्द्र को दे दिया था, उसे महाजन के ठाकुर अजबसिह अब जीतकर बीकानेर राज्य मे मिलाना चाहते थे। इस प्रस्ताव से बीकानेर के राजाओं की देरावर राज्य को अपने अधिकार मे लेने की एक बहुत बडी महत्वाकाक्षा पूर्ण होती थी, इसलिए बीकानेर ने ठाकुर भागचन्द से खारबारा छीनकर महाजन के ठाकुर को सौंप दिया। अगर भागचन्द ने बीकानेर की सेना का साथ दिया होता तो उनसे खारबारा छीनने की नौबत ही नही आती।

महाराजा अनूपसिह की इस कार्यवाही से भाटियो की प्रतिष्ठा को बहुत ठेस पहुची और उनकी देरावर राज्य के विरुद्ध प्रस्तावित कार्यवाही से भाटी चिन्तित हुए। इसलिए इस समस्या की जड काटने के लिए भाटियो ने जोइयो का सहयोग लिया और महाजन के ठाकुर अजबसिह पर आक्रमण करके उसे जान से मार डाला और उसके बालक पुत्र मोकमसिह को बन्दी बना लिया। बाद मे जोइयो के आग्रह पर भाटियो ने बालक मोकमसिह को छोड दिया। इस प्रकार बीकानेर राज्य की सीमा तो सतलज नदी के पूर्वी किनारे से कभी नही टकराई, परन्तु महाजन के ठाकुर ने इस युक्ति से भाटियो के द्वारा अपने मारे जाने का प्रबन्ध अवश्य कर लिया था। जब ठाकुर मोकमसिह जवान हुए तब उन्होने अपने पिता की मृत्यु का बदला फरीद खा जोइया को मार कर लिया। कुछ कथाकारो का कहना है कि ठाकुर मोकमसिह ने जोइयो को बुरी तरह परास्त किया और क्योकि फरीद खा जोइया इनके जवान होने से पहले मर चुका था, इसलिए वह उसकी कब्र पर गये और क्रोध से उन्होने कब्र पर तलवार से कई बार वार किए। ऐसा वर्ताव उनके लिए सम्भव था।

जोइयो की इस आशिक पराजय से बीकानेर और महाजन के लिए भयानक परिणाम हुए, जिनकी क्षतिपूर्ति कभी नही हो सकी। इससे भाटी राजपूतो और जोइयो व भाटी मुसलमानो का गठबन्धन और ज्यादा घनिष्ठ हो गया। जोइयो और भाटियो ने सयुक्त रूप से बीकानेर के अधीन सिरसा हिसार के भाग पर आक्रमण किया। महाजन के ठाकुर उदयभानसिह के बीस पुत्र इन युद्धो म काम आए और यह उपजाऊ क्षेत्र हमेशा के लिए बीकानेर के नियन्त्रण से निकल गया। बीकानेर द्वारा सन् 1857 ई म अग्रेज सरकार को दी गई सहायता के बदले म, सन् 1861 ई मे, इस क्षेत्र के 41 गाव उन्हे वापिस बख्शे गए।

सन् 1761 ई म देरावर राज्य के दाऊद पुत्रो ने किसनावत भाटियों से मोजगढ और अनूपगढ के किले छीन लिए। बीकानेर के महाराजा गजसिह को देरावर के राज्य पर

अधिकार करने का एक अवसर और मिल गया। उन्होंने जयमलसर के रावत हिन्दूसिंह भाटी के नेतृत्व में एक सेना इन किलों पर अधिकार करने के लिए भेजी। रावत हिन्दूसिंह ने अदम्य साहस और सूझबूझ का परिचय देते हुए रात्रि के समय निसरनी लगाकर मौजगढ के किले में प्रवेश किया और शत्रुओं से संघर्ष करके किले पर अधिकार कर लिया। अगले वर्ष, सन् 1762 ई मे, बीकानेर ने अनूपगढ के किले पर भी अधिकार कर लिया। बीकानेर राज्य ने वहा अपने थाने स्थापित किए और मोहता शिवदानसिंह और मूलचन्द को वहा के प्रभारी अधिकारी नियुक्त किए। किसनावत भाटी राठौडो के इस हस्तक्षेप से राजी नही थे, वह इन थानो को परेशान करने लगे। सन् 1763 ई मे भाटियो ने अपन सदैव के साथियो जोइयों से सहायता लेकर अनूपगढ पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण मे साडवा के ठाकुर धीरसिंह व मालेरी के बदनसिंह (या बहादुरसिंह) मारे गए। भाटियो और जोइयो ने किले पर अधिकार कर लिया। उन्होने तत्कालीन प्रभारी मोहता मूलचन्द को जीवन दान दिया और पराजय की सूचना देने के लिए उसे सुरक्षित बीकानेर भिजवाया।

सन् 1783 ई मे महाराजा गजसिंह ने पूगल के राव अमरसिंह को अकारण मारकर पूगल सात वर्ष खालसे रखो (सन् 1783 90 ई) और बाद म सादोलाई के ठाकुर उज्जीणसिंह भाटी (सन् 1790-93 ई) को उन्होने राव बना दिया। इस अवधि म बीकानेर राज्य ने पूगल राज्य के सारे गाव खालसे कर लिए। भाटियो के पास केवल 55 गांव रहने दिए, जिनमे स खारबारा और राणेर के पास निम्नलिखित ग्यारह गाव रहने दिए –

खारबारा–भाणसर, शेरपुरा, मगरा श्योपुरा, सरेह हमीरान, देवासर, जगमालवाली, राडेवाली और खारबारा। (कुल सात गाव)

राणेर–लाखणसर, भोजावास, गेगडा और राणेर। (कुल चार गाव)

खारबारे के गावो का कुल रकबा 1, 54,000 बीघा था, इनकी आय रु 2500/- थी और बीकानेर राज्य को दी जाने वाली रकम रु. 1050/- थी। राणेर के गावो का कुल रकबा 2 0 लाख बीघा था, इनकी आय रुपये 3200/- थी और इन्ह रु 1176/- रकम के देने होते थे।

सन् 1846 ई मे बीकानेर राज्य ने अंग्रेजो की सहायता करने के लिए अपनी सना प्रथम सिख युद्ध मे भेजो। इस सेना के साथ में अन्य सरदारो के अलावा खारबारा के ठाकुर भोपालसिंह और केला के ठाकुर मूलसिंह भी गए थे। इनके प्रशसनीय कार्यों के लिए बीकानेर राज्य ने इन्ह सिरोपाव भेंट करके सम्मानित किया।

सन् 1830 ई मे महाराजा रतनसिंह ने पूगल पर आक्रमण करके वहा के राव रामसिंह को युद्ध मे मार डाला था। उन्होंने करणीसर के ठाकुर सादूलसिंह भाटी (सन् 1830 37 ई) को पूगल का राव बना दिया। सन् 1837 ई में उन्हें पूगल वापिस राव रामसिंह के पुत्रो, रणजीतसिंह व करणीसिंह, को देनी पडी। खारबारा के किसनावत भाटियो को राजी करने के लिए महाराजा रतनसिंह ने उन्ह बाद म ताजीम के जागीरदार की श्रेणी प्रदान की।

महाराजा सरदारसिंह (सन् 1851-72 ई) ने खारबारा ठाकुर के स्वतन्त्र आचरण और स्वाभिमानी स्वभाव से रुष्ट होकर उनसे खारबारा छीन लिया। भादरा के ठाकुर बाघसिंह से पेशकश लेकर उन्होंने यह जागीर उन्हे बख्शी। स्वाभिमानी किसनावत भाटियो

से यह अन्याय नही सहा गया। उन्होने खारवारे पर अचानक आक्रमण कर दिया। ठाकुर बाघसिंह को उन्होने ऐसा बुरी तरह खदेडा कि वह यहा से अपने प्राण बचाकर नगे सिर भाग निकले। उनकी पाग खूटी पर टगी रह गई।

खारवारे सू भादरा भाजगी, गई उघाडे ढोल।
बापाजी जीवडो बालोर, भाटी सू धीस गयो भालो र॥

ठाकुर बाघसिंह की दुर्गति कम नही हुई, परन्तु वह महाजन के ठाकुर अजबसिंह और साडवा के ठाकुर धीरसिंह की भांति मारे नही गए, बच निकले।

इस घटना से महाराजा सरदारसिंह बडे खिसियाने हुए। उन्हाने सन् 1865 ई (वि स 1922) मे खारवारे के कानोलाई सहित कई गाव खालसे कर लिये। यह एक बार फिर किसनावत भाटियो के लिए खुली चुनौती थी। वह शक्तिशाली बीकानेर राज्य का अब सैनिक सामना करने मे समर्थ नही थे। इस समय तक भारत म ब्रिटिश शासन स्थापित हो चुका था, समस्त देशी राज्य उनकी अधीनता व सरक्षण स्वीकार कर चुके थे और ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की सर्वत्र प्रशसा थी। इसलिए खारवारे के ठाकुर तख्तसिंह ने बीकानेर राज्य द्वारा जागीर को खालसे किए जाने की कार्यवाही को चुनौती देते हुए, न्याय प्राप्ति के लिए युद्ध छेडा। उन्होने खारबारा, कानोलाई आदि को खालस किए जान की कार्यवाही को गलत बताते हुए, बीकानेर राज्य के विरुद्ध ब्रिटिश पालीटिकल एजेन्ट, आबू, के न्यायालय मे अपील कर दी। इससे बीकानेर राज्य की प्रतिष्ठा को बडी ठेस पहुची, क्योकि यह एक छोटे से जागीरदार द्वारा सार्वभौमिक सत्ता का दावा करने वाले राज्य के अधिकार पर प्रश्नचिह्न था। इस घटना स पडोस के राज्य भी थोडे सचेत हुए, वह भी अपने जागीरदारो को खालस की धोस दिखाने से थोडा डरने लगे। इससे पुश्तैनी जागीरदारो के अधिकारो को बल मिला और वह राज्यो के अत्याचार और अन्याय का दृढता से विरोध करने लगे। इस मुकदमे को सुनवाई के लिए खारवारे के ठाकुर पशी तारीख पर ऊटो और घोडो पर आबू जाया करते थे। उस समय रेलगाडी या सडक से आवागमन की सुविधा नही थी। मार्ग म पडने वाले गावो मे ठहरते हुए उनका काफिला पन्द्रह बीस दिनो म आबू पहुचता था और इतना ही समय वह वापिस खारवारा आने म लेते थे। एक वर्ष मे मुश्किल से एक पशी पडती थी। ठाकुर पीढी-दर-पीढी, लगभग बीस वर्षो तक, राज्य के विरुद्ध यह मुकदमा लडते रहे। उनके साहस, धैर्य और लगन की प्रशसा करनी पडेगी कि वह इतने वर्षों बाद भी हार नही माने। बीकानेर खालसे के निर्णय पर हठधर्मिता से डटा रहा, ठाकुर साहुकारो मे कर्जा लेकर अपने सीमित साधनो से भूखे प्यासे राज्य के खिलाफ न्याय के लिए युद्ध लडते रहे। इनके स्थान पर कोई दूसरा होता तो थक कर हार मान लेता और राज्य की शर्तों पर उनसे कुछ समझौता कर लेता। परन्तु खारवारे के स्वाभिमानी ठाकुर लडना जानते थे, किसनावत भाटियो के खून म झुकना और मुडना था ही नही। इस बीच बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह और डूगरसिंह का देहान्त हो चुका था। 31 अगस्त, सन् 1887 ई से महाराजा गगासिंह बीकानेर के शासक बने।

अन्त म अन्याय पर न्याय की विजय हुई। सन् 1887 ई (वि स 1944) मे न्यायिक फैसला खारबार के हक मे हुआ, बीकानेर राज्य द्वारा की गई खालसे की कार्यवाही

को गलत करार दिया गया। निर्णय का सार यह था कि खारबारे की जागीर इनके स्वयं के द्वारा अर्जित जागीर थी, यह इन्हें अपने अधिकार स्वरूप पूगल राज्य से पैतृक बंट में प्राप्त हुई थी। यानी पूगल राज्य से यह जागीर लेना इनका जन्मसिद्ध अधिकार था, यह कोई पूगल द्वारा उन्हें बख्शी हुई जागीर नहीं थी। इसलिए इसे स्वयं किसनावत भाटियों द्वारा अर्जित जागीर कहा गया। जो जागीरें बीकानेर राज्य के द्वारा उस क्षेत्र पर अधिकार करने से पहले से कायम थीं और जिन्हें बीकानेर राज्य द्वारा उनके स्वामियों को प्रदान नहीं की गई थीं, उन्हें छीनने या खालसे करने का अधिकार राज्य को नहीं था। यह भाटियों के पक्ष में बीकानेर के विरुद्ध ब्रिटिश शासन का दूसरा न्यायिक निर्णय था। सन् 1835 ई. में ट्रेविलियन द्वारा पूगल के पक्ष में बीकानेर के विरुद्ध पहला निर्णय दिया गया था। इस फैसले के अनुरूप खारबारे ने नाराँवाली, ढाबा, डाबर गावों के लिए दावा किया जिसे राज्य ने उन्हें विजयनगर की 30,000 बीघा भूमि देकर सुलझाया।

इस मुकदमे के लम्बे दौर में खारबारे के ठाकुरों पर बीकानेर के साहूकारों का बहुत कर्जा हो गया था। खारबारे के ठाकुर ने न्यायिक निर्णय को क्रियान्वित करवाने के लिए राज्य पर जोर डाला और निवेदन किया कि पिछले बीस वर्षों की खालसे के समय की जागीर की आय ब्याज समेत उन्हें लौटाई जाए ताकि वह साहूकारों का कुछ कर्ज चुकाकर ब्याज में राहत ले सकें। बीकानेर राज्य की नाक तो ब्रिटिश शासन के द्वारा उनके विरुद्ध दिए गए निर्णय से कट चुकी थी, अब वह बीस साल की आय ब्याज सहित भाटियों को लौटा कर कहीं के नहीं रहते। उस समय महाराजा गंगासिंह अवयस्क थे, राज्य का प्रशासन एक रीजेंसी कौंसिल के अधीन था। इसके सदस्य, दो राठौड़, एक मेहता और एक कविराज थे और दीवान अमीन मुहम्मद खा थे। इन लोगों ने राज्य की प्रतिष्ठा बहाल रखने के लिए छल और कपट का सहारा लिया। ठाकुर रावतसिंह कर्जे से दबे हुए थे। उन्हें फुसला बहला कर राज्य द्वारा साहूकारों को उनका कर्ज चुकाये जाने के लिए सहमत कर लिया। राज्य द्वारा कर्जा चुकाए जाने के बाद कौंसिल ने अपना पैंतरा बदला और असली राठौड़ी रूप में आ गए। राज्य ने जागीर के गाव खालसे रखने के बजाय उन्हें कर्जे के बदले में गिरवी रख लिया। इस प्रकार की अनैतिक कार्यवाही ने न्यायिक निर्णय की एक प्रकार से पालना कर दी गई, परन्तु जागीर का राज्य के पास गिरवी रहने से पूर्व की खालसे की स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया। जागीर चाहे खालसे थी या गिरवी रखी हुई, वह ठाकुरों को तो नहीं मिली। बेचारे ठाकुर क्या उपाय करते, स्वयं राज्य द्वारा कर्ज चुकाए जाने के लिए सहमति देकर षड्यन्त्र के शिकार हो गए। खारबारे के ठिकाने को कोर्ट ऑफ वार्ड्स में रख दिया गया। पिछले बीस साल की आय और उस पर ब्याज राज्य खा गया। महाराजा गंगासिंह के शासनाधिकार सम्भालने के बाद भी उन्होंने अपने पूर्वजों की नाक रखने के लिए खारबारा उसके ठाकुरों को नहीं दिया। महाराजा सादूलसिंह ने भी पूर्व की नीति का पालन किया। 7 अप्रेल, सन् 1949 को बीकानेर राज्य का राजस्थान में विलय हो गया। इस अवसर पर बीकानेर राज्य ने राजस्थान सरकार को 4 करोड़ 87 लाख रुपये की नकद राशि सौंपी थी, 9 करोड़ रुपये की रेलवे सम्पत्ति भारत सरकार को सौंपी। परन्तु उन्होंने खारबारे को मुक्त नहीं किया, वह भी बीकानेर राज्य के साथ राजस्थान में चला गया। सन् 1954 ई. में

क्र. सं.	पूगल	खारबारा	राणेर
13	गणेशदास	भूपतसिंह	महासिंह
14	विजयसिंह	खड़गसिंह	कीरतसिंह
15	दलकरण	साहिबसिंह	जालमसिंह
16	अमरसिंह	शेरसिंह	जगमालसिंह
	खालसे		
	उज्जीणसिंह		
17	अभयसिंह	भोपालसिंह	बाघसिंह
18	रामसिंह	तख्तसिंह	प्रतापसिंह
	सादूलसिंह		
19	रणजीतसिंह } भाई	गणपतसिंह	हुकमसिंह
20	करणीसिंह	लालसिंह	गणपतसिंह
21	रघुनाथसिंह	भैरूसिंह	लालसिंह
22	मेहताबसिंह	महेन्द्रसिंह	
23	जीवराजसिंह		
24	देवीसिंह		
25	सगतसिंह		

पूगल से पीढ़ी	क्र स	पूगल	बरसलपुर	जयमलसर	बीठनोक	खीदासर	जागलू	खारबारा	रायमलवाली (राणेर)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
5	1	1 राव हरा	1 रावत खेमालजी	1 रावत खेमालजी	1 रावत खेमालजी	1 रावत खेमालजी	1 रावत खेमालजी	1 ठा बाघ सिह	1 ठा बाघसिह
6	2	2 वरसिह	2 राव जैत सिह	2 कुमार करण सिह	2 ठाकुर धनराज	2 ठाकुर धनराज	2 ठाकुर धनराज	2 ठा किसन सिह	2 ठा किसन सिह
7	3	3 जैसा	3 मालदेव	3 रावत अमर सिह	3 खेतसिह	3 खेतसिह	3 खेतसिह	3 तेजमाल सिह	3 रायसिह
8	4	4 काना	4 मण्डलीक	4 सांइदास	4 श्रीरगसिह	4 श्रीरगसिह	4 श्रीरगसिह	4 चन्द्रभाण सिह या माणसिह	4 इशरदास
9	5	5 आसकरण	5 नेतसिह	5 जयमलसिह	5 राधोदास	5 ठाकुरसिह	5 बाघसिह	5 रतनसिह	5 गोविन्ददास
10	6	6 जगदेवसिह	6 पृथ्वीसिह	6 गोपालदास	6 माधोदास	6 जुगतसिह	6 देवीदास	6 भागचन्द सिह	6 जगरूपसिह
11	7	7 सुदरसेन	7 दयालसिह	7 वीरमदेव	7 अखैसिह (या अमरसिह)	7 भोपालसिह	7 केसरसिह	7 भोपाल सिह	7 अजबसिह
	8	खालसे							
12	9	8 गणपदास	8 करणीसिह	8 चन्द्रसिह	8 किसनसिह	8 गोरधनसिह	8 उदयभाण सिह	8 भूपतसिह (या जुगतसिह)	8 महासिह
13	10	9 विजयसिह	9 मानीसिह	9 जुगतसिह	9 कीरतसिह	9 राजूसिह	9 सरूपसिह	9 खडगसिह	9 कीरतसिह

क्र स	पूगल	खारबारा	राणेर
13	गणेशदास	भूपतसिंह	महासिंह
14	बिजयसिंह	खड़गसिंह	कीरतसिंह
15	दलकरण	साहिबसिंह	जालमसिंह
16	अमरसिंह	शेरसिंह	जगमालसिंह
	लालसिंह		
	उज्जीणसिंह		
17	अभयसिंह	भोपालसिंह	बाघसिंह
18	रामसिंह	तख्तसिंह	प्रतापसिंह
	सादूलसिंह		
19	रणजीतसिंह } भाई	गणपतसिंह	हुकमसिंह
20	करणीसिंह }	लालसिंह	गणपतसिंह
21	रघुनाथसिंह	भैरूसिंह	लालसिंह
22	मेहताबसिंह	महेन्द्रसिंह	
23	जीवराजसिंह		
24	देवीसिंह		
25	सगतसिंह		

पूगल से पीढ़ी	क सं.	पूगल	वरसलपुर	जयमलसर	बीठनोक	खीदासर	जागलू	खारबारा	रायमलवाली (राणेर)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
5	1	1. राव हरा	1. रावत खेमालजी	1. रावत खेमालजी	1. रावत खेमालजी	1. रावत खेमालजी	1. रावत खेमालजी	1. ठा. बाघ सिंह	1. ठा. बाघसिंह
6	2	2 बरसिंह	2. राव जैत सिंह	2. कुमार करण सिंह	2 ठाकुर धनराज	2. ठाकुर धनराज	2. ठाकुर धनराज	2. ठा. किसन सिंह	2. ठा. किसन सिंह
7	3	3. जैसा	3. मालदेव	3. रावत अमर सिंह	3. खेतसिंह	3 खेतसिंह	3. खेतसिंह	3. तेजमाल सिंह	3. रायसिंह
8	4	4. काना	4. मन्डलीक	4 साईदास	4. श्रीरंगसिंह	4. श्रीरंगसिंह	4 श्रीरंगसिंह	4. चन्द्रभाण सिंह या भाणसिंह	4. ईशरदास
9	5	5 आसकरण	5. नेतसिंह	5. जयमलसिंह	5. राधोदास	5. ठाकुरसिंह	5. बाघसिंह	5. रतनसिंह	5. गोविन्ददास
10	6	6. जगदेवसिंह	6. पृथ्वीसिंह	6. गोपालदास	6. माधोदास	6. जुगतसिंह	6. देवीदास	6. भागचन्द सिंह	6. जगरूपसिंह
11	7	7. सुदरसेन	7. दयालसिंह	7. वीरमदेव	7. अखैसिंह (या अभयसिंह)	7. भोपालसिंह	7. केसरसिंह	7. भोपाल सिंह	7. अजबसिंह
	8	खालसे							
12	9	8. गणेशदास	8. करणीसिंह	8. चन्द्रसिंह	8. किसनसिंह	8. गोरधनसिंह	8. उदयभाण सिंह	8. भूपतसिंह (या जुगतसिंह)	8. महासिंह
13	10	9. विजयसिंह	9. मानीसिंह	9. जुगतसिंह	9. कीरतसिंह	9. राजूसिंह	9. सरूपसिंह	9. खड़गसिंह	9. कीरतसिंह
14	11	10. दलकरण	10. केसरी	10 मकनदास	10. [illegible]	10. [illegible]	10. [illegible]		

							सिंह	सिंह	
15	12	11 अमरसिंह	11 लखधीर सिंह	11 किशोरसिंह	11 मोमसिंह	11 सवाईसिंह	11. भगूतसिंह	11. शेरसिंह	11. जगमाल सिंह
	13	खातसे							
	14	उज्जीणसिंह							
16	15	12 अभयसिंह	12 अमरसिंह	12 हिन्दूसिंह	12 मदनसिंह	12 मोमसिंह	12. बहादुर सिंह	12 भोपाल सिंह	12 वाघसिंह
17	16	13 रामसिंह	13 मानसिंह	13 खेतसिंह	13 जगमालसिंह	13 नेतसिंह	13. जवाहर सिंह	13 तख्तसिंह	13 प्रतापसिंह
	17	सादूलसिंह							
18	18	14 रणजीतसिंह	14 साहिब सिंह	14 मोमसिंह	14 मुकनसिंह	14 इन्द्रसिंह (या ईशरसिंह)	14 दीपसिंह	14 गणपत सिंह	14. हुकुमसिंह
19	19	15 करणीसिंह	15 रणजीत सिंह	15 हणुन्तसिंह	15 जोरावर सिंह	15 लिछमण सिंह	15 वेरीसाल सिंह	15 लालसिंह	15 गुणपतसिंह
20	20	16 रघुनाथसिंह	16 धन्नेसिंह	16 करणीसिंह	16 मेहताबसिंह	16 नगराजसिंह		16 भैरूसिंह	16. लालसिंह
21	21	17 मेहताबसिंह	17. मोतीसिंह	17 तेजसिंह	17 बनेसिंह	17 बुलीदान सिंह		17 महेन्द्र सिंह	
22	22	18 जीवराजसिंह	18 बनेसिंह	18 मेहताबसिंह		18 खगारसिंह			
23	23	19 देवीसिंह	19 पृथ्वीसिंह	19. हरिसिंह		19 विजयसिंह			
24	24	20 सगतसिंह	20 सज्जन सिंह	20 यदुसिंह					

अध्याय–तेरह

राव हरा
सन् 1500-1535 ई.

राव शेखा की सन् 1500 ई म मृत्यु के पश्चात् उनके ज्यष्ठ पुत्र राव हरा पूगल की राजगद्दी पर बैठे। उनके समकालीन शासक निम्न थे, राव हरा ने सन् 1500 से 1535 ई तक राज्य किया :

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 रावल देवीदास, सन् 1467-1524 ई	1 राव बीका, सन् 1485-1504 ई	1 राव सूजा, सन् 1491-1516 ई	1 सुलतान सिकदर लोदी, सन् 1489-1517 ई
2 रावल जैतसी, सन् 1524-1528 ई	2 राव नरा, सन् 1504-1505 ई	2 राव गगा, सन् 1516-1532 ई	2 सुलतान इब्राहिम लोदी, सन् 1517-1526 ई
3 रावल लूणकरण, सन् 1528-1551 ई	3 राव लूणकरण, सन् 1505-1526 ई	3 राव मालदेव, सन् 1532-1562 ई	3 बाबर, सन् 1526-1530 ई
	4 राव जैतसी, सन् 1526-1542 ई		4 हुमायु, सन् 1530-1540 ई

राव हरा के समय पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर सामान्यत शान्ति रही। सुलतान सिकन्दर लोदी और इब्राहिम लोदी ने सन् 1526 ई तक, जब तक वह दिल्ली के शासक रहे, मुलतान के शासको को अपने कडे नियन्त्रण मे रखा और उन्हे पडोस के स्वतन्त्र पूगल राज्य मे अनावश्यक हस्तक्षेप करने के लिए बढावा नही दिया। सन् 1526 ई मे बाबर दिल्ली के नये शासक बने और इनके पश्चात्, सन् 1530 ई मे इनके पुत्र हुमायु दिल्ली के शासक बन। राव हरा के भाइयो और उनके वशजो ने डेरा गाजीखा, दुनियापुर और केहरोर से मुलतान के शासको से मधुर सम्बन्ध बनाये रखे, जिससे मुलतान को कभी इनके विरुद्ध कार्यवाही करने की आवश्यकता नही पडी। लगा और बलोच भी मुलतान और दिल्ली के शासकों का रुख देखकर शान्त रहे।

राव हरा को राजकुमार होते हुए कई युद्धो का अनुभव था। यह सन् 1485 ई मे भाटियो और हिसार के नवाब सारग खां के विरुद्ध राव बीका की सहायता करने द्रोणपुर गए थे। सारग खां इसी वर्ष राव बीका और राव कांधल द्वारा मारा गया। बाद में सन् 1492 ई मे यह राव बीका की जोधपुर के राव सूजा के विरुद्ध आक्रमण मे सहायता करने

जोधपुर गए थे। इनके बहनोई राव बीका की सन् 1504 ई म मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र नरा बीकानेर के राव बने। इनका देहान्त थोड़े समय बाद म हो गया। इसलिए सन् 1505 ई मे, राव नरा के भाई और राव हरा के भानजे लूणकरण बीकानेर के राव बने। राव बीका की मृत्यु के बाद म, जैसा कि प्रत्येक योग्य और शक्तिशाली शासक के लुप्त होने के बाद म होता था, बीकानेर की आन्तरिक स्थिति अच्छी नही थी। शासक और शासितो म आपस म कलह के आसार थे, इससे राव हरा चिन्तित हुए और उन्होंने राव लूणकरण को सभी परिस्थितियो म साथ देने का आश्वासन दिया। राव लूणकरण अपने नाना राव घड़सी की तरह अड़ियल, अक्खड़ और अहकारी थे। इसलिए राव हरा के लिए और भी आवश्यक था कि वह उग्र स्वभाव वाले अपने भानजे का साथ देकर उनका सतुलन और नियन्त्रण बनाए रखें।

सन् 1509 ई म राव लूणकरण न दद्रेवा के मानसिह चौहान दयलोत क विरुद्ध युद्ध करने का ठानी। तब इन्होने राव हरा से सहायता देने के लिए निवेदन किया। दद्रेवा के मानसिह ने सात माह तक इनका बड़ा कड़ा विरोध किया। राव लूणकरण क छोटे भाई घड़सी द्वारा मानसिह मार गए थ और स्वय घड़सी ने भी इस युद्ध मे वीरगति पाई। इन्ही घड़सी के वशज घड़सोत बीका कहलाए। यह युद्ध लम्बा इसलिए चला क्योकि चौहानो के 140 गावो पर आसानी से बीकानेर का शीघ्र नियन्त्रण नही हो सका।

सन् 1512 ई म राव लूणकरण ने राव हरा से फतहपुर के दौलतखा और रणखा क विरुद्ध सहायता मागी। फतेहपुर के कायमखानी शासक दौलतखा और रणखा का आपस म भूमि का विवाद चल रहा था (अधिकाश कायमखानी मुसलमान चौहान राजपूत थे)। इसका लाभ उठाकर 22 अप्रेल, सन् 1512 ई को राव लूणकरण ने इन पर आक्रमण कर दिया। आक्रमण के फलस्वरूप इन दोनो ने समझदारी की, आपस का झगड़ा भुलाकर वह दोनो एक हो गए। इसलिए राव लूणकरण को इनसे कड़ा सघर्ष करना पड गया। राव हरा की इस युद्ध म निर्णायक भूमिका रही, क्योकि राव लूणकरण तो उन दोनो की कलह का लाभ उठाने गये थे लेकिन वहा उन्हे उनकी सयुक्त सेनाओ से अचानक सामना करना पड गया। फतेहपुर के नबाब ने राव लूणकरण को 120 गांव देकर सधि की।

राव जोधा की भाति राव लूणकरण की भी भूमि प्राप्त करने की प्रबल इच्छा रहती थी और उनकी भूमि की भूख कभी शात नही हुई। उन्होने सोचा कि उनके राज्य मे आए साल अकाल पडते रहते थे, जिससे प्रजा और जनता भूख और अभाव की स्थिति से कभी राहत नहीं पाती थी और उन्हे पडोस के राज्यो मे आश्रय के लिए पलायन करना पडता था। इन अकालो के कारण राज्य की आय और आर्थिक साधन बिगडते थे। इसलिए उन्होंने हिसार और सिरसा की सीमा पर पड़ने वाले उपजाऊ और समृद्ध चायलों के गावो पर अधिकार करने की योजना बनाई। इन गावो म वर्षा अच्छी होने से उपज और आय अच्छी होती थी। इसके अलावा इन गावो के दिल्ली के पास पडने से उनका दिल्ली से अच्छा सम्पर्क सभव था। उन्होंने अपने स्वभाव के अनुसार यह भी सोचा कि अगर अच्छा मौका पडा तो वह दिल्ली को धक्का मारने से नहीं चूकेंगे। उन्हे यह भी पता था कि उस समय (सन् 1510 15 ई) दिल्ली में बडी उथल पुथल चल रही थी, वहा अस्थिरता के कारण

नियन्त्रण का अभाव भी था। सुलतान सिकन्दर लोदी स्वयं की समस्याओ से जूझ रहे थे। इस प्रकार की अनुकूल स्थिति का लाभ न उठाकर राव लूणकरण घाटे मे रहने वाले नही थे। उन्होने एक बार फिर मामा राव हरा की सहायता का आह्वान किया और सन् 1512 ई म चायलवाडा पर आक्रमण कर दिया। राव हरा के भाई वाघसिंह, रायमलवाली के, इस युद्ध मे उनके साथ थे। राठौडो और भाटियो की सेना के आगे चायल नही टिक सके। इस अभियान मे राव लूणकरण ने चायलो के सिरसा हिसार के 440 गांवो पर अधिकार कर लिया। उनका सरदार पूना चायल वहा से भागकर भटनेर चला गया।

भटनेर में पूना चायल ने वहा के भाटियो की स्थिति को कमजोर पाया। उसने राव हरा के द्वारा राव लूणकरण को उसके विरुद्ध सहायता देने का बदला राव केलण के वशजो, भटनेर के भाटी मुसलमानो से लिया। उसने सन् 1512 ई म ही सेना एकत्र करके भटनेर पर आक्रमण किया और भाटियों से भटनेर छीन लिया।

राव लूणकरण की निरन्तर सफलताओ स नागौर के नवाब मोहम्मद खा को ईर्ष्या होने लगी थी, इसलिए उसने उन्हे सबक सिखाने की नीयत मे सन् 1513 ई म सीधे बीकानेर पर आक्रमण कर दिया। थोड़े समय पहले ही राव लूणकरण फतेहपुर और चायलवाडा से विजयी होकर और वहा के 560 गावो पर अधिकार करके आये थे। नागौर के नवाब के विरुद्ध बीकानेर की रक्षा के लिए उन्होने राव हरा की फिर सहायता ली। उन्होंने रात्रि म नवाब की सेना पर अचानक आक्रमण करके उसे तितर-बितर कर दिया। इस छापे मे नवाब घायल हो गया था। उसकी सेना हार कर वापिस नागौर चली गई, सौभाग्य से बीकानेर का खतरा टल गया।

जैसलमेर के रावल देवीदास (सन् 1467-1524 ई) का एक विवाह बीकानेर के राव बीका की पुत्री से हुआ था। इस रानी के एक पुत्र नरसिंहदास को राजद्रोह के आरोप मे जैसलमेर के रावल जैतसी (सन् 1524-1528 ई) ने देश निकाला दे दिया था। यह अपने मामा राव लूणकरण के पास बीकानेर मे रहने लगा। राठौडो का लाला नामक एक चारण जैसलमेर, बीकानेर के भानजो के पास इनाम पाने गया। वहा जैसलमेर के रावल ने हसी मजाक म बीकानेर के राव लूणकरण की बुराई करते हुए कह दिया कि उसे दान-दक्षिणा की क्या कमी थी, वह तो उसके राव को भी इतनी भूमि दान मे दे सकते थे जितनी भूमि मे वह दिन भर मे घोडे पर चढकर घूम लें। कुछ इतिहासकारों के अनुसार जब लाला चारण वहा गया था, उस समय जैसलमेर के रावल लूणकरण थे, ओझा क अनुसार उस समय रावल जैतसी गद्दी पर थे। दोनो म से कोई भी हो, एक बीकानेर के राव लूणकरण के बहनोई थे, दूसरे उनके भानजे थे। लाला चारण ने बीकानेर आकर राव लूणकरण को जैसलमेर मे उसे कही गई बातों को बढा चढा कर कहा। इससे वह बहुत क्रुद्ध हुए, कुछ नरसिंहदास को वहां से निकाले जाने के कारण पहले से ही वह रावल जैतसी से अप्रसन्न थे। उनकी शत्रुता के यह दो प्रत्यक्ष कारण बने। कुछ पुरानी रजिश भी थी कि जैसलमेर की सहायता से पूगल के भाटियों ने लगभग पचास वर्ष पहले, (सन् 1478 ई), उनके पिता राव बीका को कोडमदेसर मे किला नहीं बनाने दिया था और किले को ध्वस्त करके उनके विवाह बरसलपुर और बुता जैसलमेर ले गये थे। इन कारणो से राव लूणकरण ने पूगल के बजाय

जैसलमेर पर आक्रमण करने का मानस बनाया। उनके मामा राव हरा ने अनेक युद्धा म उन्हे सहायता और सहयोग दिया था, इसलिए उन्होंने पूगल को बख्शा। फिर लाला चारण और नरसिंहदास वाली घटना से उनका क्रोध तो केवल जैसलमेर पर था।

राव हरा ने राव लूणकरण को जैसलमेर पर आक्रमण नही करने के लिए समझाया, लेकिन वह कहा मानने वाले थे और उन्हे यह भी मालूम था कि इस बार राव हरा जैसलमेर के विरुद्ध उनका सहयोग नही करेंगे, इसलिए मामे की बात वह क्यो मानें? राव लूणकरण का दद्रेवा, फतेहपुर, चायलवाड़ा और नागौर की विजयो से हौसला बहुत बढ गया था और सन् 1514 ई मे मेवाड के राणा रायमल की पुत्री से उनका विवाह होने से रही सही कसर भी पूरी हो गई।

राव लूणकरण ने सन् 1526 ई मे जैसलमेर के रावल जैतसी पर आक्रमण किया। बीकानेर की सेना ने मार्ग म सोमला गाव को लूटा। रात्रि मे रावल जैतसी की सेना ने उन पर अचानक आक्रमण कर दिया, जिससे हडबडा कर बीकानेर की सेना तितर-बितर होकर भाग गई, लेकिन सुबह रावल की सेना उनमें से अधिकाश को टीबो मे से ढूढकर ले आई। उनके आपस म सन्धि हो गई। राव लूणकरण ने अपनी पुत्री अमृत कवर का विवाह रावल जैतसी के पुत्र राजकुमार लूणकरण (रावल सन् 1528-51 ई) के साथ करने का वचन दिया। राठौड इतिहासकारो का कहना है कि रात्रि के आक्रमण के बाद रावल जैतसी पकडे गए थे, फिर उन्ह सुबह छोड दिया गया। रावल की पुत्रियो का विवाह राव के पुत्रो से किया गया। इतिहासकारो ने इनके नाम आदि गुप्त क्यो रखे? इसमे कोई सन्देह नही था कि आक्रमणकारी राव लूणकरण अपनी पुत्री भाटियो के राजकुमार को विवाह मे देने के बदले म कुछ भाटियो की पुत्रियो का राठौडो को ब्याहे जान का वचन लेकर आए थे। अगर ऐसा नीचा देखना था तो राव हरा की सलाह के विरुद्ध जैसलमेर पर आक्रमण ही क्यो किया था?

पिछले बारह तेरह वर्षों की बनती बिगडती स्थिति से राव हरा अनभिज्ञ नही थे। वह राव लूणकरण की बढती हुई महत्वाकाक्षाओ और उनके भविष्य के ध्येय का अध्ययन कर रहे थे। साथ ही अपनी सेना के संगठन, अनुभव और तैयारी म वह कमी नहीं होने दे रहे थे। पश्चिमी सीमा पर जहा वह सावचेत थे, वहा बीकानेर की सीमा से वह सावधान भी थे। वह ज्ञानी थे, उनमे दूरदर्शिता, योग्यता और धैर्य था। जैसलमेर पर आक्रमण के बाद मे वह राव लूणकरण से सावचेत रहने लग गये थे, किन्तु उनके विचार मे अभी उन्ह ललकारने का समय नही आया था। वह जानते थे ऐसा क्रोधी व्यक्ति उन्हे अवसर अवश्य देगा और अपने आप देगा।

जैसलमेर के आक्रमण से लौटने के बाद मे राव लूणकरण कुछ परेशान और उदास रहने लगे। वहा से भूमि हथियाने की उनकी भूख शान्त नही हुई थी, वह अतृप्त रह गये थे। इसलिए सन् 1526 ई मे ही इन्होने नारनौल के सूबेदार नवाब अभीमीर पर आक्रमण करने की योजना बनाई। पहले की तरह उन्होने राव हरा का सहायता के लिए आह्वान किया, वह तत्परता से राजी खुशी आ गए। जैसलमेर के भाटी नवाब के साथ थे, क्योंकि वह राव लूणकरण द्वारा उन पर अकारण किए गए आक्रमण को नहीं भूले थे। रायमल भेलावत, पाटन (अब सीकर मे) के तोमर, जोइये और बीदा के पुत्र उदयकरण बीदावत

(द्रोणपुर वा) सभी राव लूणकरण की विस्तारवादी नीति से भयभीत थे, इसलिए यह सब नवाब के साथ थे। इधर राव लूणकरण की सेना में राव हरा की सेना, राव बीदा के पौत्र बीदासर के राव कल्याणमल और सिधाणकोट के तिहुनपाल जोइया थे। राव कल्याणमल, उनके दादा राव बीदा को राव शेखा और राजकुमार हरा द्वारा, मोहिलों और सारंग खां के विरुद्ध सन् 1488 ई. में दी गई अमूल्य सहायता को अभी नहीं भूले थे। राव बीदा का विवाह भी पूगल की सोहन कंवर से हुआ था। राव बीका ने सिधाणकोट (बदोपल) के जोइयों को हराकर उनकी मातृभूमि से उन्हें अपदस्थ किया था और वह हमेशा के लिए राज्यविहीन हो गये थे। क्योंकि जैसलमेर के रावल जैतसी की सेना नवाब के साथ थी, इसलिए पूगल की सेना का उनके विरुद्ध लड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता था। भाटियों, बीदावतों और जोइयों ने गुप्त मन्त्रणा करके नवाब अभीमीर से मिलकर, उन्हें विश्वास दिलाया कि युद्ध के निर्णायक पहर में उनकी सेनाएँ उनमें मिल जायेंगी। सामरिक और राजनीतिक कारणों से इनकी सेनाओं का पहले राव लूणकरण का साथ देना आवश्यक था, क्योंकि युद्ध में अगर राव की सेना जीतने की स्थिति में हुई तब उन्हें जिताना ही उनके और उनके राज्यों के हित में होगा। राज्यों के आपसी सम्बन्धों में स्थायी मित्र या शत्रु जैसी कोई चीज नहीं होती, राज्य का वर्तमान और भविष्य का हित ही सर्वोपरि होता है।

इन तीनों ने यही सोचा कि राव लूणकरण की इस युद्ध में विजय इनके राज्यों के सर्वनाश का कारण बनेगी। राव हरा, राव बीका और उनके पुत्र लूणकरण के स्वभाव, चरित्र और व्यवहार से परिचित थे। उनके उग्र स्वभाव और अहंकार के सामने आपसी रिश्ते नाते गौण थे। उनका पक्का विचार था कि नारनौल में विजय के बाद में इनका अगला लक्ष्य पूगल होगा। पूगल विजय से बीकानेर राज्य की सीमाएँ मुलतान और सिन्ध प्रदेशों की सीमाओं से जा मिलती थीं और उनके राज्य विस्तार के लिए वृहद उपजाऊ और समृद्ध क्षेत्र उनके सामने होता। इन सब सम्भावनाओं से राव लूणकरण अनभिज्ञ नहीं थे। वह ऐसे व्यक्ति भी थे कि वह पूगल से कर देने के लिए और स्वेच्छा से अमुक भूमि उन्हें देने का कह सकते थे। इन सब विपदाओं का निराकरण नारनौल के युद्ध में राव लूणकरण की करारी पराजय या मौत में था।

नवाब से युद्ध आरम्भ होने पर इन तीनों की सेनाओं और सेना नायकों ने लड़ाई में वह उत्साह और साहस नहीं दिखाया जो इनसे अपेक्षित था। केवल दिखावे के लिए उनकी तरफ से काफी मारा मारी का प्रदर्शन हो रहा था, वास्तव में वह पासा बदलने के लिए राव हरा के संकेत के इन्तजार में थे। हरावल में राव लूणकरण और राव कल्याणमल बीदावत की सेनाएँ थीं। जब दोनों विरोधी घुड़सवार सेनाएँ एक दूसरे पर वार, आक्रमण और प्रत्याक्रमण कर रही थीं, तभी राव हरा का संकेत पाकर राव कल्याणमल बीदावत ने अपनी सेना की स्थिति बदल डाली। इससे राव लूणकरण की घुड़सवार सेना की अग्रिम पंक्तियों का वेग और लक्ष्य डगमगा गया। राव हरा और तिहुनपाल जोइया ने राव कल्याणमल के द्वारा इस प्रकार से अपना पक्ष बदलने के किसी पूर्वाभास से जानबूझ कर अनभिज्ञता दर्शायी। कुछ समय पश्चात् इन दोनों की सेनाएँ भी नवाब की सेनाओं में जा मिलीं। राव लूणकरण पूर्ण योद्धा थे, उन्होंने इस विश्वासघात को प्राथमिकता नहीं दी, वह और ज्यादा

मुकाबला करने लगे। उनकी रग-रग में वीरता थी, नवाब की संयुक्त सेनाओं को उनके पहले से ज्यादा करारे वार झेलने पड़े और ज्यादा क्षति उठानी पड़ी। राव लूणकरण विजयश्री के उपासक थे, पराजय शब्द उनके लिए नहीं बना था। अद्भुत पराक्रम दिखाते हुए वह युद्ध का अकेले ही संचालन कर रहे थे। उनकी घुड़सवार सेना बार बार आत्मघाती प्रहार कर रही थी, लेकिन राजपूत विरोधी भी उसी हाड़मांस के बने हुए थे, उनकी रगों में भी वही रक्त प्रवाह कर रहा था। इसलिए टक्कर बराबर की थी। राव लूणकरण अपनी सेना की कम संख्या की पूर्ति साहस और वीरता से कर रहे थे, जो एक सीमा के आगे सम्भव नहीं थी। ऐसी स्थिति में उन्हें नवाब के पास संधि का प्रस्ताव भेजना चाहिए था लेकिन ऐसा करना उनके स्वभाव और जीवन के दृष्टिकोण के विरुद्ध था। वह प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष करना जानते थे, समझौता करना नहीं।

अन्तत दिनांक 31 मार्च सन् 1526 ई को नारनौल के पास ढोसी के युद्ध के मैदान मे उन्होंने वीरगति पाई। स्वर्गीय महाराजा करणीसिंह की पुस्तक, 'बीकानेर राज्य के केन्द्रीय सत्ता से सम्बन्ध, सन् 1465 1949 ई' के पृष्ठ संख्या 30 के अनुसार यह तारीख 26 जून, सन् 1526 ई दर्शायी गई है। इस युद्ध मे इनके तीसरे, पांचवें और छठे पुत्र कुमार प्रतापसिंह, करमसी और बैरसी काम आए। इनके अलावा बीकमसी पुरोहित भी मारे गए। कुमार प्रतापसिंह के वंशजो से प्रतापसिंघोत बीकों की खांप चली। कुमार बैरसी के पुत्र नारण के वंशज नारणोत बीका कहलाए।

सन् 1526 ई में राव लूणकरण के पुत्र जैतसी बीकानेर के राव बने। उन्होंने राव कल्याणमल बीदावत और तिहुनपाल जोइया को राव लूणकरण के साथ विश्वासघात करने के लिए दण्डित किया, उदयकरण बीदावत के स्थान पर द्रोणपुर राव बीदा के पौत्र सांगा को दिया। लेकिन ऐसे कुछ कारण उनके मन में थे जिनसे उन्होंने राव हरा को कुछ नहीं कहा। या तो उन्हें अपनी स्थिति सुदृढ़ रखने के लिए राव हरा का सहयोग जरूरी था, या इस पराजय की स्थिति में वह उनमें भय पाते थे, या उन्हें पूरे तथ्यों की जानकारी ही नहीं थी, जिससे वह राव हरा को दोषी नहीं समझते हो। सबसे बड़ा कारण यह भी हो सकता था कि उन्होंने राव हरा को क्षमा करके सारी घटना को भुला देना ही उचित समझा, क्योंकि जो हानि होनी थी, वह तो हो चुकी थी। कुछ समय पश्चात् राव जैतसी ने सन् 1527 ई में खेतसिंह कांधल को भटनेर के किले पर आक्रमण करने में सहायता करके वहां के शासक भाटी मुसलमान को परास्त किया और खेतसिंह को वहां किलेदार बनाया। इस प्रकार से उन्होंने परोक्ष रूप से भाटियों के प्रति अप्रसन्नता दर्शायी।

सन् 1531 ई मे जोधपुर के राव गगा (सन् 1516 1532 ई) ने अपने चाचा शेखा (राव सूजा के पुत्र) और मेड़ता के जयमल के विरुद्ध, राव जैतसी से सहायता मांगी। राव हरा ने पूगल से सेना देकर राजकुमार बरसिंह को इनके साथ भेजा। मूलनवाहन के जगमाल के पौत्र और जैतसी भाटी के पुत्र पचायन का विवाह मारवाड के शासक, राव सूजा के ज्येष्ठ पुत्र कुमार वाघा की पुत्री, राव गगा की बहन से हुआ था। कुमार वाघा की सन् 1510 ई में सोजत मे मृत्यु हो गई थी। इसलिए राव सूजा (सन् 1491-1516 ई) की मृत्यु के बाद में उनके पौत्र और वाघा के पुत्र गगा मारवाड के राव बने। इस कारण से भी राव हरा ने राव गगा की सहायतार्थ अपनी सेना भेजी।

इस समय तक दिल्ली मे मुगलो के शासन की जडें मजबूत नही हुई थी। बाबर की सन् 1530 ई मे मृत्यु के बाद हुमायु दिल्ली के शासक बने। बाबर के पुत्र और हुमायु के छोटे भाई कामरान, काबुल और कधार के प्रदेशों की सूबेदारी से सन्तुष्ट नहीं थे। हुमायु को विवश होकर उन्हे पजाब (मुलतान) भी देना पडा। अब कामरान ने अपने राज्य का विस्तार करने के लिए रेगिस्तानी क्षेत्र की ओर ध्यान दिया। सन् 1534 ई. म उन्होंने पजाब से भटनेर पर आक्रमण किया। भटनेर का (सन् 1527 ई से) किलेदार खेतसिंह काधल इस युद्ध में मारा गया। कामरान अपनी सेना के साथ बीकानेर पर आक्रमण करने के लिए आगे बढे। इस आक्रमण की सकट की घडी मे राव जैतसी ने अन्यो के अलावा राव हरा से सैनिक सहायता मागी।

राव हरा स्थिति को गम्भीर जानकर अपनी सेना के साथ बीकानेर आए। इनके साथ मे इनके भाई बरसलपुर के रावत खेमाल और रायमलवाली के बाघसिंह थे, और उनके पुत्र बीदा और पौत्र दुरजनसाल भी साथ थे। रावत खेमाल के पुत्र करण और धनराज के अलावा धनराज का पुत्र मीमल (सीहा) भी साथ मे था। इस बार राव हरा तन, मन, धन से बीकानेर की सहायता करने आए थे। वह समझ गए कि बीकानेर को पराजित करके कामरान वापिस पूगल होकर मुलतान से पजाब जायेंगे। वापिस जाते हुए वह पूगल को परास्त करके अधिकार म लेंगे, और मार्ग मे पडने वाले देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, केहरोर, दुनियापुर आदि के किलो पर अधिकार करते हुए मुलतान जायेंगे। इसलिए राव हरा ने सोचा कि वह बीकानेर की सहायता करके परोक्ष रूप से पूगल के बचाव की लडाई लड रहे थे। युद्ध के लिए राव हरा बडे उत्साहित थे, वह अपनी जेठी नाम की घोडी पर सवार हुए। इस घोडी की गति पवन के समान थी, गर्दन पर हाथी की सूड की तरह चौडी मिलवटें थी। राव हरा, जिनमे मुगलो के विरुद्ध आक्रमण, विजय और शत्रु को चकनाचूर करने की क्षमता थी, अपनी जेठी घोडी पर सवार हुए। योजना के अनुसार राव जैतसी ने अलग-अलग मोर्चों पर सेनाएँ लगाई और युद्ध के सचालन के लिए आवश्यक निर्देश दिए। कामरान से सन्धि करने का प्रश्न ही नही था। उस समय तक बीकानेर एक स्वतन्त्र राज्य था। उनसे सन्धि करने की पहली शर्त उनकी अधीनता स्वीकार करनी होती, जिसके लिए राव जैतसी तैयार नही थे।

कामरान के आक्रमण से पहले राव जैतसी ने अपने अधिकाश सैनिक किले से बाहर हटा लिए थे, उन्होने थोडे से सैनिक किले मे छोडे, ताकि कामरान मामूली सघर्ष के बाद किले पर अधिकार करने का सतोष कर लें। बाकी की सारी सेना योग्य सेना नायको के नेतृत्व मे पास के मैदानो मे छिपाकर रखी। उनके विचार से किले मे रहकर शत्रु के घेरे मे आने से उनकी पराजय अवश्य होगी, उनकी सेना मैदान मे रहकर मुगल सेना के चगुल मे कभी नही आएगी और उन्हे छापामार युद्धो मे छकाती रहेगी। उनकी सेना के लिए सारा क्षेत्र जाना पहचाना था, इसलिए बाहर उनके लिए रसद, पानी और आवास की सुविधा रहेगी, जबकि मुगल सेना के लिए यह क्षेत्र नया होगा। उस समय तक जूनागढ का किला नहीं बना था, राव बीका द्वारा बनाया गया राती घाटी का किला था।

कामरान की सेना ने प्रारम्भिक सघर्ष के बाद मे बीकानेर के किले पर आसानी से

अधिकार कर लिया, इस उपलब्धि से उन्हें संतोष हुआ। उनके सैनिक रेगिस्तानी क्षेत्र की कठिनाइयां झेलते हुए, थके हारे बीकानेर पहुंचे थे। वह किले की सुरक्षा पकड़ कर बड़े प्रसन्न हुए। इधर राव जैतसी खुले मैदान से आक्रमण करने का उचित अवसर देख रहे थे। ऐसा अवसर आते ही राठौड़ और भाटियों की सेना ने किले पर धावा कर दिया। रेगिस्तान के शान्त वातावरण मे ऐसे अप्रत्याशित प्रहार से वहां नए आये हुए मुगल घबरा गए। उनके लिए किला खाली करके और कहीं जाने का स्थान भी नहीं था, वह भटनेर और बीकानेर के बीच की भौगोलिक विपदाएँ पहले भुगत चुके थे। इसलिए वह बुरी तरह घबरा गए, मुश्किल से अपना बचाव, रक्षाव करते हुए साज सामान के साथ किले से बाहर निकले और भटनेर से जिस राह से आए थे, उसी जानी पहचानी राह से पंजाब लौटे। विजय राव जैतसी राठौड़ और राव हरा केलण भाटी की रही। राव हरा विजयोत्सव मनाकर अपने पुत्रों और पौत्रों सहित सही सलामत श्रेय लेकर पूगल लौटे।

सन् 1527 ई. म आमेर के राजा पृथ्वीराज का देहान्त हो गया था। रानी रगकवर की पौत्री, राव लूणकरण की पुत्री और राव जैतसी की बहन का विवाह राजा पृथ्वीराज से हुआ था। इस बहन के पुत्र सांगा के साथ अनबन के कारण इनके सौतेले भाई रतनसिंह ने आमेर की गद्दी पर अधिकार कर लिया था। सांगा अपने मामा जैतसी के पास राजा रतनसिंह के विरुद्ध सहायता लेने बीकानेर आए। यह घटना सन् 1534-35 ई. की थी। राव जैतसी ने सांगा की सहायता के लिए आमेर सेना भेजी, उसके साथ पूगल के राजकुमार बरसिंह भी अपनी सेना लेकर गए। इस सहायता के फलस्वरूप सांगा ने आमेर के अधिकांश क्षेत्र पर अधिकार करके आमेर के पास 'सांगानेर' नाम का नगर बसाया। किन्तु राजा रतनसिंह आमेर की गद्दी पर यथावत रहे।

राव हरा का देहान्त सन् 1535 ई. मे हुआ। यह अपने पीछे चार पुत्र बरसिंह बीदा, हमीर और धनराज छोड़ कर गये।

राव हरा ने अपने समय मे राव केलण से उन्हें उत्तराधिकार म मिले राज्य मे क्षति नहीं होने दी। बीकानेर के शासक इनकी सहायता के बिना अपने आपको असहाय और असुरक्षित समझते थे। अपनी योग्यता और चतुराई से इन्होंने राव लूणकरण और जैतसी से अच्छे सम्बन्ध बनाए रखे। राव हरा के बीकानेर के शासकों की सहायता करने मे बराबर लगे रहने के कारण वह अपनी पश्चिमी सीमा की ओर पूरा ध्यान नहीं दे पाये। दिल्ली के शासकों, सिकन्दर लोदी और इब्राहिम लोदी, का सिन्ध और पंजाब प्रदेशों पर नियन्त्रण कमजोर होने से स्थानीय सूबेदार और थानेदार मनमानी करने लगे थे, जिससे पूगल की सीमा भी बाद मे अशान्त और असुरक्षित रहने लगी। बाबर (सन् 1526-30 ई.) और हुमायू (सन् 1530 40 ई.) अपनी स्वयं की राज्य व्यवस्था जमाने मे लगे रहे अभी तक मुगलों का दिल्ली के राज्य पर नियन्त्रण अपेक्षित पूरा नहीं हुआ था, इसलिए पूगल और मुलतान की आपसी स्थिति म लोदियों के समय जैसा ही हाल रहा।

देरावर, रुकनपुर और बीजनोत में, रणधीर, मेहरवान और भीमदे के भाटी वंशज योग्य साबित नहीं हुए। रणधीर को उसके पिता राव चाचगदेव ने देरावर का परगना दिया था। रणधीर के वंशज बीरमदेव, विजय और नेता, राव शेखा, हरा और बरसिंह के

समकालीन थे। नेता, जैसलमेर के रावल लूणकरण का भी समकालीन था। अयोग्य नेता से छुटकारा पाने के लिए राव हरा ने उन्हें देरावर से हटाकर बीकमपुर क्षेत्र के नोख, सवरा आदि गावो मे बसाया और देरावर का अधिकार अपने पुत्र बीदा को दिया। इसी प्रकार इन्होने रुकनपुर और बीजनोत मे मेहरवान और भीमदे के वशजों को वहा से अपदस्थ किया और अपने पुत्रो, हमीर को बीजनोत और धनराज को रुकनपुर की जागीरें दी। इससे मेहरवान और भीमदे के वशज रुष्ट हो कर सिन्ध प्रदेश की ओर पलायन कर गए। कालान्तर में यह मुसलमान बन गए। पूगल से इनके सम्बन्ध धीरे-धीरे समाप्त हो गए, इसलिए इनकी आगे की पीढ़िया स्थानीय लोगो मे लुप्त हो गयी।

लक्ष्मीचन्द के अनुसार जैसलमेर के रावल लूणकरण (सन् 1528-51 ई) ने कुछ समय के लिए देरावर मे निवास किया। देरावर पूगल राज्य का भाग था, इसलिए जैसलमेर के रावल का वहा जा कर रहना सही प्रतीत नही होता। यह सम्भव था कि राव हरा या उनके बाद मे राव बरसिंह ने उन्हे सहायता के लिए बुलवाया हो और वह इस दौरान देरावर मे कुछ समय ठहरे हो, लेकिन शासक की तरह नही। अगर ऐसा होता तो कुछ समय बाद मे राव बरसिंह जैसलमेर की मालानी मे सहायता करने क्यों जाते और उनका मालानी पर पुन अधिकार क्यो करवाते? यह भी सम्भव था कि नेता के समय राव हरा की सहमति से वह वहा गए हों और देरावर के किले की मरम्मत और रख-रखाव की व्यवस्था की हो। बाद म क्योकि वहा लगाओ का आतक बढ गया था, इसलिए राव बरसिंह ने सन् 1550 ई मे यह किला अपने भाई धनराज को दिया था। धनराज की मृत्यु सन् 1587 ई मे राव जैसा के साथ सीमा पर हुई थी। देरावर सन् 1587 से 1650 ई तक पूगल के पास खालसे रहा।

वैसे देखा जाए तो जैसलमेर को देरावर से विशेष लगाव और रुचि थी। रावल शालीवाहन (सन् 1168-90 ई) यहा रहे थे और यहीं जिजर खा द्वारा मारे गए थे। रावल बरसी भी राव बरसल से मिलने मातमपुरसी के बहाने बीकमपुर आए थे, जहा देरावर से अपदस्थ रणमल के वशज गोपा केलण रहते थे। फिर रणधीर के वशजो के पास रावल लूणकरण देरावर गए और वहा से अपदस्थ नेतावतों को बीकमपुर के पास नोख और सेवरा मे लाकर बसाने मे उनका हाथ हो सकता था। वह शायद बीकमपुर का जैसलमेर की सीमा के पास होने से इसे अपने प्रभाव क्षेत्र मे रखना चाहते हों और पूगल से असन्तुष्ट रणमल और रणधीर के वशजो को अपने पड़ोस मे बसाने मे सहयोग देते हो। देरावर से अपदस्थ अयोग्य वशजो को उचित प्रकार से बसाने का उत्तरदायित्व पूगल का था न कि जैसलमेर का। बाद मे सन् 1650 ई मे रावल सबलसिंह ने बीच-बचाव करके पूगल से देरावर रावल रामचन्द्र को दिलवा ही दिया था। इससे स्पष्ट था कि सन् 1448 ई मे राव चाचगदेव के निधन के समय से ही जैसलमेर की निगाह देरावर पर थी, दो सौ वर्ष बाद सन् 1650 ई मे, यह अभिलाषा फलीभूत हुई। जैसलमेर के शासकों की हमेशा उत्कठा रही थी कि कैसे ही उन्हें सतलज और ब्यास नदियो की घाटियो का वह उपजाऊ क्षेत्र दोहन के लिए प्राप्त हो जाये, जिसका लाभ पूगल के राव उठा रहे थे। इस क्षेत्र की प्राप्ति से वह दिल्ली प्रशासन के मुख्य स्तम्भ मुलतान के पडोसी बन जायेंगे। इससे उन्हें दिल्ली के साथ अच्छे सम्बन्ध कायम करने में

सहायता मिलेगी। अन्यथा बीकानेर और जोधपुर का विस्तृत रेगिस्तानी भू-भाग उनके लिए दिल्ली से सरल व शीघ्र सम्पर्क करने में बाधक था। जैसलमेर से रावल कभी पूगल नहीं पधारे, वह देरावर जाने के लिए बीकमपुर, बरसलपुर, रानपुर का मार्ग अपनाते थे, जबकि पूगल के राव यदा कदा जैसलमेर जाते रहते थे। बाबर ने भारत पर अन्तिम आक्रमण नवम्बर, 1525 ई. में किया था। कहते हैं कि बाबर की सिन्ध प्रान्त की मुगल सेना ने देरावर पर आक्रमण करके वहां एक दिन में अधिकार कर लिया था और फिर वह जैसलमेर की ओर आगे बढ़ गई थी। लेकिन यह वापिस देरावर नहीं आई, वहां पूगल का अधिकार यथावत रहा।

राव हरा अपने-आप को पूर्वी सीमा पर जीवन भर व्यस्त रखे रहे। उन्होंने जोधपुर, जैसलमेर, बीदासर, आमेर की सहायता की और जब-जब बीकानेर ने इन्हें निवेदन किया, वह उनकी सहायता करने के लिए गए। उन्होंने राव लूणकरण का विरोध अन्य कारणों के अलावा इसलिए भी किया था कि इन्होंने इनकी सलाह नहीं मानकर जैसलमेर पर आक्रमण कर दिया था। इसकी कीमत राव हरा को बाद में चुकानी पड़ी, जब राव जैतसी ने सेतसिंह कांधल को भटार पर अधिकार करवा दिया। राव हरा की यह नीति रही थी कि राठौड़ अन्यत्र उलझे रहें, उनका पश्चिम की ओर ध्यान देना पूगल के लिए खतरनाक साबित हो सकता था। उनके लिए पंजाब के दोआब का आकर्षण ऐसा लुभावना हो सकता था कि वह बलपूर्वक पूगल को मरोड़ कर मुलतान पर दस्तक दे सकते थे। ऐसी स्थिति में भाटियों का सर्वनाश निश्चित था। इसलिए राठौड़ों को खुश रखकर और अपने रिश्ते का लाभ उठाते हुए इन्होंने उन्हें मुलतान की ओर ध्यान देने का अवसर ही नहीं दिया। राठौड़ों को चाहे बाद में मुलतान से मुंह की खानी पड़ती लेकिन इससे पहले वह पूगल का विनाश अवश्य कर डालते।

क्योंकि राव हरा राठौड़ों से इतने वर्षों तक जुड़े रहे, वह अपनी पश्चिमी सीमा की ओर ध्यान नहीं दे सके और उसे सम्भाल नहीं सके। उस सीमा पर बिखरे हुए केलण भाटियों को उनके केन्द्र की सहायता और नेतृत्व की आवश्यकता थी, जिसके लिए वह समय और साधन नहीं निकाल पाये। उन्होंने उन्हें अकेला अपनी नियति पर छोड़ दिया था। इसका फल यह हुआ कि वह हतोत्साह और हताश रहने लगे। उनमें यह भावना घर करने लग गई थी कि पूगल को अब उनकी आवश्यकता नहीं थी और उन्हें इस्लाम के बढ़ते हुए दबाव, प्रभाव में अपनी लड़ाई स्वयं लड़नी पड़ेगी, जिसके लिए वह अकेले सक्षम नहीं थे। उनके पैतृक सम्बन्धों को गहराई से जोड़े रखने के लिए उन्हें वरिष्ठ केन्द्रीय नेतृत्व की आवश्यकता थी जिससे पश्चिम के सारे केलण उससे जुड़े रहते। किन्तु राव हरा यह नेतृत्व प्रदान करने में असफल रहे। केलण भाटी इस्लाम के प्रभाव के आगे झुकते गये। इसी का प्रभाव था कि बीजनोत, रुकनपुर, मूमनवाहन, दुनियापुर, केहरोर, डेरा गाजीखां इस्लाम धर्म की चपेट में धीरे-धीरे आते गए और वह पूगल से टूटते गए। मूमनवाहन के जगमाल के वंशजों ने जोधपुर में जा कर शरण पायी, बाकी केलण भाटी और उनकी जनता की अन्य हिन्दू जातियें इस्लाम की भेंट होती रहीं।

यहां प्रश्न हिन्दू या मुसलमान का नहीं था, मुख्य प्रश्न अपनी जागीरों में अपना निर्वाह करने का था। अगर उनकी जागीर में उन्हें हिन्दू हो कर रहते हुए भरण-पोषण नहीं

मिले तो उनके लिए धर्म किस काम का ? भूख के आगे मनुष्य का धर्म नही ठहरता । इसलिए अपने निर्वाह के लिए और अपने अस्तित्व के लिए उन्हे इस्लाम की शरण मे जाना पड़ा । अगर कोई अपने धर्म की रक्षा के लिए क्रोध मे आकर अपनी जागीर त्याग देता तो उसे ठौर कहा थी ? एक छोटी सी भूल उन्हे विस्थापित बना सकती थी । उस युग मे ऐसो को सहारा देने वाला कोई नही था । उस समय के राजपूतो और मुसलमानो मे धर्मान्धता नही थी और न ही धार्मिक कट्टरता थी । साम्प्रदायिकता अभी वे नही जानते थे । मुसलमान उन्ही मे से बने थे, उनका आपस मे थोड़े समय पहले का खून का रिश्ता था, फिर झगड़ा काहे की ? उनकी आपस की कुछ वर्षों पहले की शादिया अभी बुजुर्ग भूले भी नही थे । वह एक साथ रहते थे, खेतो मे साथ काम करते थे, साथ मे पशु चराते थे । धर्म ने उन्हे एक दूसरे के लिए अछूत नही बनाया था । इसलिए पश्चिमी सीमा के केलण और अन्य राजपूत धर्म की रक्षा या परवरिश के लिए जमीन जायदाद, घर-बाहर, पड़ोसी, रिश्त-नात छोड़ने को तैयार नही थे । मुसलमान उनके शत्रु नही थे बल्कि कुल के सम्बन्धी थे, इसलिए अधिकांश केलण भाटी और अन्य राजपूत उनमे मिल गए और धीरे-धीरे उनका मुसलमानो मे विलय हो गया ।

मेरे विचार मे ऐसी भावना राव शेखा के समय से, या उनसे पहले, राव बरसल के समय से आने लग गई थी । राव केलण और चाचगदेव के मुसलमान शहजादियो से हुए विवाहो का भी इसमे कम योगदान नही था । अगर शासको को मुसलमानों से स्नेह था, उनसे घृणा नही थी, फिर प्रजा को उनका अनुसरण करने मे क्या आपत्ति हो सकती थी ? उनका मुसलमानो के प्रति सवेदनशील और सहनशील होना, एक ही आंगन मे हिन्दू, मुसलमान रानियो की सन्तानो का खेलना, रिश्तेदारो का मिलने आना, आदि ऐसे बिन्दु थे, जिनसे धार्मिक कट्टरता घुल गई थी । उसमे पैनापन समाप्त हो गया था । भाटियो और मुसलमानो के अब भी पूगल क्षेत्र मे वही सम्बन्ध हैं, जबकि धर्मान्ध लोग इनके बीच भेद-भाव की खाई खोद रहे हैं । इसके उपरान्त भी इनके आपसी भाव व भावना पीढ़ियो पहले जैसी है । इस क्षेत्र मे लगभग अस्सी प्रतिशत मुसलमान है, परन्तु भाटियो के लिए वह लोग आज भी वैसे ही हैं जैसे चार पाच सौ वर्ष पहले थे । भाटी की पीडा उनकी स्वय की पीडा है, इसे वह खुले तौर पर स्वीकार करते हैं ।

कर्नल जेम्स टाड ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ सख्या 208 पर पूगल के भाटियो के लिए विचार व्यक्त किए हैं :

'केलण भाटियो और मुलतान के अधिकारियो (शासको) के आपस के सीमा सम्बन्धी झगड़े और झड़पें निरन्तर चलते रहते थे, एक बार एक आक्रमणकारी होता तो दूसरी बार दूसरा । आखिर केलणो के अनेकानेक वशजों ने गारव (सतलज-व्यास) के दोनो तरफ की भूमि को आपस मे बाट लिया । जब सुलतान बाबर ने लगाओ से मुलतान अन्तिम बार छीन कर अपने सूबेदार वहां स्थापित किए, तब केलण भाटियो ने केहरोर कोट, दुनियापुर, पूगल, मरोठ को धर्म परिवर्तन करके बदले मे रखना उचित समझा । बारठ पूगल और केलणों के प्रति श्रद्धा मे इतने ओत-प्रोत थे कि वह इतिहास को केवल इनकी गाथा मे ही समर्पित कर चुके थे ।' (मेरा अनुवाद)

'मध्यकालीन एव आधुनिक भारत का इतिहास' लेखक डा एन कुन्द्रा ने पृष्ठ 12

पर लिखा है कि 'बाबर धर्म के मामले मे कट्टरपंथी और अधविश्वासी नही था। इसने मन्दिरो को नही तोडा और हिन्दुओ को मुसलमान बनने पर विवश नही किया। हिन्दुओ और मुसलमानो मे मेल बैठा और सगठित सभ्यता और सस्कृति को बल मिला।'

इसलिए मुगलों द्वारा मुलतान पर विजय के पश्चात्, केलणो को धर्म परिवर्तन करने के लिए बाध्य नही किया, वह अपने-आप बहुसख्यक इस्लाम की मुख्यधारा से जुडते गए।

लंगा, भाटियो और मुगलो, दोनो के सामान्य शत्रु थे, इसलिए भाटी और मुगल आपस मे मित्र थे। यह सम्बन्ध कुछ समय के लिए तब विच्छेद हुए जब शेरशाह और लगे मित्र बन गए थे और भाटी शेरशाह के शत्रु हो गए थे। राव वरसिह ने इस शत्रुता का अभिशाप, बलिदान से झेला, उन्हे अनेक केलणो की समय-समय पर आहुति देनी पडी। मुलतान पर लगाओ का नियन्त्रण था, समा बलोचो के नियन्त्रण मे सिन्ध नदी के साथ लगने वाला सिन्ध प्रदेश का क्षेत्र था। लगा और बलोच दोनो अपनी भूमि की भाटियो से सुरक्षा करने के लिए बार-बार भाटियो पर आक्रमण करते रहते थे, ताकि यह उनके क्षेत्रो मे प्रवेश नही कर पायें।

अध्याय–चौदह

राव बरसिंह
सन् 1535-1553 ई

सन् 1535 ई म राव हरा की मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार बरसिंह पूगल की राजगद्दी पर बैठे। इन्होने सन् 1535 से 1553 ई तक राज्य किया। इनके सम कालीन शासक निम्न थे

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 रावल लूणकरण, सन् 1528-1551 ई	1 राव जैतसी, सन् 1526 1542 ई	1 राव मालदेव, सन् 1532-1562 ई	1 हुमायु सन् 1530-40 ई
2 रावल मालदेव, सन् 1551-1561 ई	2 सन् 1542 1544 ई मे बीकानेर जोधपुर के राव मालदेव के पास रहा।	2 सन् 1544 से 1555 ई तक जोधपुर शेरशाह सूरी व अन्यो के अधिकार मे रहा।	2 शेरशाह सूरी, सन् 1540 45 ई
	3. राव कल्याणमल, सन् 1544-1571 ई		3 इस्लाम शाह, सन् 1545-1553 ई

राव बरसिंह राजकुमार रहते हुए भी अनेक युद्धो मे अकेले या अपने पिता, राव हरा के साथ गए, इसलिए इन्हे युद्धो का काफी अनुभव था। यह सन् 1531 ई मे बीकानेर के राव जैतसी की सहायतार्थ, उनके साथ जोधपुर के राव गगा की उनके चाचा शेखा और मेडता के जयमल के विरुद्ध युद्ध म सहायता करने गए। सन् 1534-35 ई म वह राव जैतसी के साथ उनके भानजे सांगा की आमेर के शासक रतनसिंह के विरुद्ध सहायता करने गए। सन् 1534 ई मे काबुल, कन्धार और पजाब के शासक कामरान ने भटनेर पर विजय प्राप्त करके बीकानेर पर आक्रमण किया, तब राव हरा अपने दल बल सहित बीकानेर को रक्षा करने पूगल से गए थे। उस समय राजकुमार बरसिंह ने भी अपने पिता के साथ बीकानेर की रक्षा करने म योगदान किया।

समय के साथ-साथ अपने पिता राव लूणकरण की तरह बीकानेर के राव जैतसी भी महत्वाकांक्षी और अपने बूते से बाहर होने लग गए थे। इनके द्वारा सन् 1531 और 1534 ई में जोधपुर के राव गगा और आमेर के सांगा को दी गई सहायता के कारण यह बीकानेर को काफी महत्वपूर्ण समझने लग गए थे। इन्होने राव कायल के पौत्र खेतसिंह

कामरान का भटनेर पर अधिकार करवाकर भाटियों को नीचा दिखाने का प्रयास किया। सन् 1534 ई की कामरान जैसे शक्तिशाली और साधन सम्पन्न शासक के विरुद्ध विजय ने इनमें अहंकार और महत्व को बहुत ऊंचा चढा दिया। वह बात बात पर अपनी सफलताओं का उदाहरण देकर सामान्य शासकों पर रोब गांठने लग गए थे और किसी को कुछ समझते ही नहीं थे। जबकि इनकी सफलताओं में अन्य शासकों का योगदान भी कम नहीं था। जैसे कि राव हरा भांप गए थे कि राव लूणकरण की नारनौल में विजय पूगल के लिए घातक सिद्ध होगी, इसी प्रकार राव बरसिंह भी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अब राव जैतसी किसी वक्त पूगल पर घात लगा सकते थे। दिल्ली के शासक शेरशाह सूरी की हुमायु के भाई कामरान के साथ शत्रुता का होना स्वाभाविक था। इसलिए राव जैतसी की कामरान पर विजय से शेरशाह सूरी इनसे अत्यन्त प्रसन्न थे। जोधपुर के शासक राव मालदेव से शेरशाह सूरी प्रसन्न नहीं थे क्योंकि इन्होंने सन् 1541 ई में मंगोडे हुमायु को बन्दी बनाने में उन्हें सहयोग नहीं दिया था।

सन् 1540 ई में राव जैतसी ने अपने तीसरे पुत्र जैतपुर के ठाकुरसी और उसके पुत्र बाघा को भटनेर पर अधिकार करने में सक्रिय सहयोग दिया। इसलिए राव बरसिंह इनसे अप्रसन्न थे। कामरान पर अपनी अनपेक्षित विजय के पश्चात् राव जैतसी को चाहिए था कि वह भटनेर के पूर्व शासक भाटियों का वहां अधिकार करवाते।

ईश्वरीय संयोग से सन् 1542 ई में जोधपुर के राव मालदेव ने बीकानेर के राव जैतसी पर आक्रमण कर दिया। पूर्वानुसार राव जैतसी ने राव बरसिंह को सहायता देने के लिए पूगल संदेशा भेजा। राव बरसिंह का विवाह मारवाड में चोतीला के पातावत राठौडों के यहां हुआ था। पातावत, राव मालदेव के घनिष्ठ मित्रों और सहयोगियों में से थे। अपनी पातावत रानी के अनुरोध पर राव बरसिंह ने राव जैतसी का राव मालदेव के विरुद्ध साथ नहीं देने का उन्हें वचन दिया और वह राव मालदेव का साथ देने पहुंच गये। इस व्यक्तिगत कारण से और ऊपर दर्शाये गए कारणों से राव बरसिंह का राव जैतसी का साथ नहीं देने का निर्णय उचित था। वैसे भी राव हरा के द्वारा बार-बार बीकानेर का साथ दिए जाने के बुरे परिणामों का इन्हें अनुभव था। राव मालदेव के साथ युद्ध में राव जैतसी सोहवा में मारे गए और उन्होंने बीकानेर राज्य के आधे भाग पर अधिकार कर लिया। बीकानेर पर राव कल्याणमल का पुनः अधिकार सन् 1544 ई में तभी हुआ जब सन् 1543 ई के अन्त में राव मालदेव शेरशाह सूरी के साथ हुए मेडता के युद्ध में हार गए और उन्हें जोधपुर छोडने के लिए बाध्य होना पडा।

पूगल राज्य की पश्चिमी सीमा पर मुसलमानों का प्रभाव और दबाव निरन्तर बढ रहा था। बाबर के सन् 1526 ई के भारत पर आक्रमण के बाद में पंजाब और सिन्ध पर मुगलों का नियन्त्रण हो गया था। बाबर ने अपने पुत्र कामरान को काबुल और कन्धार का सूबेदार नियुक्त किया था, बाद में इसने अपने भाई हुमायु पर दबाव डालकर पंजाब भी उनसे ले लिया। सन् 1540 ई. में हुमायु को परास्त कर शेरशाह सूरी दिल्ली के शासक बन गये। सूरी की सेना ने हुमायु का लाहौर तक पीछा किया लेकिन उन्हें लाहौर छोडकर भागना पडा क्योंकि उनके भाई कामरान शेरशाह सूरी से युद्ध करने से कतराते थे। शेरशाह

सूरी ने मुलतान मे बलोच प्रधानो द्वारा समर्पण स्वीकार किया। फिर वह सिन्ध और झेलम नदियो के बीच मे पड़ने वाले गक्खड़ो के क्षेत्र को अधिकार मे लेने के अभियान पर गए। उन्होने सिन्ध प्रान्त और मुलतान पर अधिकार करने के बाद मे पजाब, जिसे कामरान छोड़कर चले गए थे, पर अधिकार किया।

पूगल के पश्चिमी सीमा प्रान्तो मे और मुलतान पर नए शासक सूरी का अधिकार होने से वहा की स्थिति अत्यधिक अस्थिर थी। भाटी मुलतान द्वारा बहुत बुरी तरह दबाये जा रहे थे, आक्रमणकारी सेनाए और उनके सहयोगी, भाटियो के शत्रु लगा और बलोच, दुनियापुर, केहरोर, मूमनवाहन, मरोठ और देरावर पर बार बार आक्रमण करके अशान्ति फैला रहे थे। इसके परिणामस्वरूप पूगल का भाटी राज्य बिखर रहा था। इस राज्य के बिखरने का शुभारम्भ तो इसकी स्थापना के साथ ही हो गया था।

राव केलण ने राव रणकदेव के पुत्र तणु और उनके दीवान मेहराव हमीरोत को भटनेर देकर वहा बसाया था। वह स्वय की अयोग्यता के कारण वहा ज्यादा समय तक नही टिक सके, और अबोहर और भटिण्डा जाकर अन्य मुसलमाना के साथ हमेशा के लिए लुप्त हो गए। इनके बाद मे राव केलण ने स्वयं के भाटी मुसलमान पुत्रो, थीरा और खुमान, को भटनेर ले जाकर बसाया। उन्होने धीरे धीरे पूगल से अपने सम्बन्ध समाप्त कर लिए। यह भाटी मुसलमान कभी भी पूगल के सहायक सिद्ध नही हुए और न ही इन्होने पूगल से कभी सहायता मांगी। पूगल ने भी कभी इनकी स्वेच्छा से सहायता नही की और न ही कभी अपना अधिकार इन पर थोपा। इसलिए भटनेर भाटियो का रहते हुए भी, सन् 1430 ई के बाद मे, पूगल के लिए नही होने के समान था। यही स्थिति भटनेर के लिए पूगल की भी थी। इनके आपस मे सहयोग और भाईचारे की भावना कभी नही रही। पूगल के भाटी केवल इतने मे सतोष कर लेते थे कि भटनेर के भाटी मुसलमान उनके पुराने वशज थे।

राव चाचगदेव ने अपने एक पुत्र मेहरवान को बल्लर के समीप रुकनपुर की जागीर दी, दूसरे पुत्र भीमदे को बीजनोत दिया। कुछ समय पश्चात् इन दोनो के वशज मुसलमान बनकर सिन्ध की तरफ चले गए। इन्होने पूगल से अपना कोई सम्पर्क नही रखा, जिससे इनके आपसी सम्बन्ध समाप्त हो गए। इसी प्रकार रानी सोनलसेती के पुत्र, राता और गजसिह, समा बलोचो के साथ स्थानीय मुसलमाना से हिल मिल गए, कभी लौटकर पूगल नहीं आए। समय के साथ यह भी पूगल को भुला बैठे। लगा (कोरी) मुसलमान रानी के पुत्र कुम्भा को दुनियापुर की अत्यन्त महत्वपूर्ण जागीर दी गई थी। लेकिन उनके वशजों ने भी पूगल से सारे सम्पर्क तोड लिए, वह अन्य मुसलमानो के साथ विलीन हो गए, लौट के कभी पूगल नहीं आए।

राव बरसल ने अपने पुत्र जोगायत को केहरोर की जागीर दी थी। इसके वशजों ने भी राव बरसिह के शासनकाल मे इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया था। कर्नल टाड की पुस्तक, भाग-दो, पृष्ठ 554-60, के अनुसार जोगायत के वशजो न राव हरा के शासनकाल मे इस्लाम धर्म ग्रहण किया। इसका मुख्य कारण यह रहा था कि राव हरा ने कभी इन ठिकानों की सम्भाल नहीं की, वह अधिकतर समय बीकानेर की समस्याएं सुलझाने मे लगे रहे। इस प्रकार केहरोर पूगल से भी गया और भाटियो से भी। व्यास और सतलज नदियों के बीच

का मेहरोर और दुनियापुर का उपजाऊ क्षेत्र जोगायत और कुम्मा के वंशजो ने सदा के लिए पूगल से खो दिया, स्वयं से खोया और भाटियों से भी खोया। इसी प्रकार डेरा इस्माइल खां का क्षेत्र सोनल सेती के पुत्रों ने खोया। वास्तव मे इस बिखराव का उत्तरदायित्व पूगल के रावो पर था, जिन्होंने समय पर इनकी सार सम्भाल नही की और मुसलमानों के प्रभाव के विरुद्ध इनकी सुरक्षा के उचित प्रबन्ध नहीं किए। इन स्थानीय भाटियों ने पूगल की अरुचि के कारण विवश होकर अन्य मुसलमानो के साथ समझौते और सम्बन्ध स्थापित करके अपनी सुरक्षा के प्रयास किए। लेकिन यह उपाय अल्पावधि के थे, अस्थिर थे। समय के साथ यह सारे मुसलमान बन गए और इनकी जागीरें भी बिखर गईं।

पूगल की नीति अपने पुत्रो और भाइयो को पैतृक बंट मे स्थाई जागीरें देने की थी। यह नीति सफल नही हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि जागीरदारो ने अपने क्षेत्र की देख भाल नही की और इन्होंने कभी पूगल की परवाह नहीं की। होना यह चाहिए था कि किसी भी जागीर का पट्टा भोगते की मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाना चाहिए था। आगे पूगल के राव वह जागीर किसे दें, यह उनके निर्णय पर निर्भर होना चाहिए था। पूगल को किसी भी कारण से वह जागीर जब्त करने का अधिकार होना चाहिए था। इससे वह जागीरदार पूगल के प्रति स्वामिभक्ति और निष्ठा बनाए रखते।

राठौड़ो के आगमन से पहले पूगल के दो पड़ोसी थे, जैसलमेर पूगल का समर्थक और हितैषी था मुलतान पूगल का शत्रु अवश्य था परन्तु वह इतना शक्तिशाली भी नही था कि स्वयं नुकसान उठाये बिना पूगल का नुकसान कर सके। सन् 1465 ई के बाद मे पूर्वी सीमा भी राठौड़ो के राव बीका के आगमन के कारण सजग हो गई। भाटियो को इनके विरुद्ध इस सीमा पर भी बचाव के उपाय करने पड़े। पूगल ने राठौड़ो को राजी रखने के लिए और उन्हें ठिकाने लगाने मे अपनी शक्ति और साधना का क्षय किया, पश्चिमी सीमा की सुरक्षा और हितो की अनदेखी की। भाटियो मे एक प्रकार से बचाव व पराभव की मानसिक स्थिति उत्पन्न होने लगी थी। यह सन् 1478 ई में राव शेखा के कोडमदेसर के युद्ध में तटस्थ रहने के कारण उभरी और राव हरा के समय पूर्णरूप से विकसित हुई। यह पराभव की ही स्थिति थी जिसके कारण भाटी बचाव की रणनीति पर विश्वास करने लगे थे और वह पूर्व व पश्चिम में पूगल की ओर सिकुड़ने लगे। पूगल ने अपने लिए राठौड़ो के साथ रहने का मार्ग चुना और यही इसके विनाश का कारण बना। राव शेखा और राव हरा को अपने पूर्वजो की तरह विस्तारवादी और आक्रमणकारी होना चाहिए था। पश्चिमी सीमा की सुरक्षा के सुदृढ़ उपाय करके, इन्हें राव बीका और राव लूणकरण का साथ नही दे करके, उन प्रदेशो पर पहल आक्रमण करके अधिकार करना चाहिए था, जिन पर बाद मे यह अधिकार करने की इच्छा करते थे। ऐसा करने से भाटियो और राठौड़ो में टकराव की स्थिति उत्पन्न होती, जिसके लिए पूगल को तैयार रहना चाहिए था। क्योंकि पूगल राठौड़ो से युद्ध करने की स्थिति को टालता रहा इसलिए राठौड़ विस्तार करते गए, पूगल उनके विस्तार मे सहायता करता गया और स्वयं सिकुड़ता गया। पूगल इस क्षेत्र की पुरानी सशक्त शक्ति थी, इसलिए इसे नई शक्ति को पनपने का मौका नही देना चाहिए था। इसे उसे अपने संरक्षण में रखना चाहिए था। लेकिन हुआ उलटा। पूगल ने कभी राठौड़ो को

उसके विरुद्ध शक्ति परीक्षण का मौका नहीं दिया, उन्हें पूगल से दूर रखने के प्रयासों मे उन्होंने पश्चिम मे हानि उठाई।

सन् 1540-43 ई मे शेरशाह सूरी के मुलतान के शासको की सहायता से लगाओं ने मूमनवाहन पर आक्रमण किया और वहा जगमाल के पुत्र जैतसी को मार डाला। जैतसी के पुत्र पचायन ने लगाओं का पीछा किया। अपने चचेरे भाई जैतसी की मृत्यु का दुखद समाचार सुनकर बरसलपुर के रावत खेमाल और उनके पुत्र कुमार करण ने बदला लेने के लिए मुलतान पर छापा मारा और शासक के खजाने को मार्ग मे लूट लिया। जगमाल और राव शेखा, दोनो राव बरसल के पुत्र थे, इसलिए जैतसी और रावत खेमाल सगे चचेरे भाई थे। मुलतान की झडप मे, खमाल और करण, वहा की शक्ति का सामना करने मे सक्षम नही थे। मुलतान के फत्तुखा और मूलचन्द ने उनका पीछा किया। बरसलपुर मे मुठभेड मे पिता पुत्र, खेमाल और करण, दोनो सन् 1543 ई. मे मारे गए। इनके अलावा, इनके साथ गए रुकनपुर के मेहरवान और बीजनोत के भीमदे के वंशज भी मारे गए।

राव बरसिंह ने कुमार करण के पुत्र अमरसिंह को अलग से जयमलसर की जागीर दी और इन्हे इनके दादा खेमाल की 'रावत' की पदवी से सुशोभित किया। इनके वशज करणोत खींया केलण भाटी कहलाए। उन्होंने रावत खेमाल के पुत्र जैतसी को 'राव' की पदवी दी, यह जैतावत खींया केलण भाटी कहलाए।

इन मुठभेडो के बाद मे राव बरसिंह चिन्तित हुए, वह शीघ्र पश्चिमी सीमा पर पहुचे और उन्होंने स्थिति का अध्ययन किया। उन्होने वहा सुरक्षा के उचित उपाय किए और यह पाया कि जहा बरसलपुर, मूमनवाहन, बीजनोत और रुकनपुर के भाटियो न राज्य की रक्षा मे सक्रिय सहयोग करके बलिदान दिया था, वहा देरावर मे इनके भाई बीदा केलण ने निष्क्रियता का परिचय दिया। उन्होने बीदा को कड़ी चेतावनी दी। इनके भाई हमीर और धनराज को राव हरा ने राव चाचगदेव के पुत्रो, मेहरवान और भीमदे, के वशजो को अपदस्थ करके रुकनपुर और बीजनोत की जागीरें दी थी। यह भी राज्य की सीमा की सुरक्षा करने मे अक्षम रहे। परन्तु जब इनके तीनो भाई बीदा, हमीर और धनराज बराबर के अयोग्य और अक्षम निकले तो राव बरसिंह क्या करते?

राव चाचगदेव की भाटी मुसलमान सन्तानो, कुम्मा, राता और गजसिंह को कभी पूगल ने सहायता के लिए नही बुलाया और न ही उनकी अरुचि के लिए उन्हें दडित किया जबकि वह आनन्द से पूगल की दी हुई जागीरें भोग रहे थे। इधर राव हरा ने मेहरवान, भीमदे और रणधीर की सन्तानो को दण्ड देकर अपने जागीरदारो में भेदभाव किया। अब दण्ड लेने की पक्ति मे इन्ही के पुत्र बीदा, हमीर और धनराज खडे थे। किसी समस्या का समाधान एक व्यक्ति को हटाकर वहा दूसरे को लगाने से नहीं होता, वह तो समस्या के कारणो को समाप्त करने से होता है। व्यक्ति बदल जाता है, समस्या वहा की वहा रहती है। इस नीति का परिणाम यह हुआ कि मेहरवान और भीमदे के अनेक वशज रुष्ट हो कर मुसलमान बन गए। जगमाल के वशज परेशान होकर मूमनवाहन छोड़ कर जोधपुर के राव सूरसिंह (सन् 1595-1620 ई) की सेवा मे चल गए।

रावत खेमाल के पुत्र जैतसी, बरसलपुर के पहले 'राव' हुए। करणसिंह के पुत्र अमरसिंह (रावत खेमाल के पौत्र) जयमलसर के पहले रावत' हुए। खेमाल को रावत की पदवी उनके पिता राव शेखा द्वारा प्रदान की गई थी।

राव बरसल के पुत्र जोगायत, जिन्हें केहरोर की जागीर दी गई थी और राव चाचगदेव की मुसलमान रानी के पुत्र कुम्भा, जिन्हें दुनियापुर दिया गया था, को राव बरसिंह ने नहीं छेड़ा। इन दोनों स्थानों के मुल्तान के पास पड़ने से इन्होंने वहां के शासकों से अच्छे सम्बन्ध स्थापित कर लिए थे, इसलिए लंगा इन पर आक्रमण नहीं करते थे। जोगायत ने अपनी केहरोर की जागीर की सलामती के लिए इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था, कुम्भा की माता मुसलमान होने से वह आधा मुसलमान पहले से ही था, अब वह पूरा मुसलमान बन गया, इसलिए उसकी दुनियापुर की जागीर को नहीं छेड़ा गया। इस प्रकार राव चाचगदेव के सात पुत्रों में से दो, बरसल और रणधीर को छोड़कर, बाकी के पांचों पुत्र, मेहरवान, भीमदे, कुम्भा, गजसिंह, राता के वंशज मुसलमान बन गए। राव बरसल के चार पुत्रों में से एक जोगायत के वंशज मुसलमान बने, जगमाल के वंशज जोधपुर चले गए, तिलोकसी का आगे वंश चला नहीं, शेखा राव बने।

राव बरसिंह के समय पश्चिमी सीमान्त जागीरें इस प्रकार थी

1.	मूमनवाहन	पचायन, पुत्र जैतसी
2	मरोठ	भैरवदास, पुत्र तिलोकसी
3	देरावर	बीदा पुत्र, राव हरा, सन् 1550 ई में इनसे यह जागीर लेकर घनराज को दी गई। उनके पास यह सन् 1587 ई तक रही।
4	बीजनोत	हमीर, पुत्र राव हरा
5	रुकनपुर	धनराज, पुत्र राव हरा
6	बरसलपुर	राव जैतसी, पुत्र रावत खेमाल
7	जयमलसर	रावत अमरसिंह, पौत्र रावत खेमाल।

राव बरसिंह ने जैसलमेर के रावल लूणकरण से अपनी पश्चिमी सीमा की सुरक्षा के लिए सहायता मांगी थी, रावल स्वयं सेना लेकर देरावर आए, उन्होंने कई दिनों तक वहां ठहर कर वहां की सुरक्षा व्यवस्था की। बीकानेर के राव जैतसी ने पूगल की किसी प्रकार की सहायता करने के बजाय भटनेर पर अपने तीसरे पुत्र ठाकरसी का अधिकार करवा दिया। इसी कारण इन्होंने राव मालदेव के विरुद्ध युद्ध में राव जैतसी का साथ नहीं दिया था।

जोधपुर के राव मालदेव का सन् 1536 ई में जैसलमेर के रावल लूणकरण की पुत्री मारमति से विवाह हुआ था। कुछ समय पश्चात् रावल की दूसरी पुत्री उमादे से भी इनका विवाह हो गया। रावल लूणकरण का एक विवाह बीकानेर के राव लूणकरण की पुत्री राजकंवर से सन् 1526 ई में सन्धि स्वरूप हुआ था।

हरिदत्त के अनुसार, रावल देवीदास (सन् 1467–1524 ई) ने कोटड़ा-बाड़मेर के माहेचा राठौड़ों को परास्त करके, उनके मालाणी क्षेत्र को जैसलमेर राज्य में मिला लिया था। जब मालदेव (सन् 1532–1562 ई) जोधपुर के शासक बने तब इनके

अधिकार मे केवल जोधपुर और सोजत के परगने ही थे, बाडमेर, कोटडा, खेड, मेहवा आदि क्षेत्र उनके पास नही थे।

नैनसी के अनुसार कुछ समय पश्चात् राव मालदेव ने रावल लूणकरण (सन् 1528-51 ई) से बाडमेर और कोटडा के परगने छीन लिए।

जब राव मालदेव, रावल लूणकरण की पुत्री उमादे से विवाह करने जैसलमेर बारात लेकर गए, तब उन्हें वहा उनके विरुद्ध भाटियों के किसी षड्यन्त्र का आभास हुआ। इससे वह बहुत क्रुद्ध हुए और उन्होने अपने साथियो को आदेश दिए कि वह जैसलमेर के पास स्थित रामनाल बाग के आमो के सब पेड काट डालें। जैसलमेर जैसे शुष्क रेगिस्तानी क्षेत्र मे आमो के पेड लगाना पीढ़ियो की तपस्या थी, जिसे कुछ ही क्षणो मे राव मालदेव ने मटियामेट करवा दी। पूगल के राव वरसिंह इस विवाह मे जैसलमेर गए हुए थे और आमो के पेडो को काटने की घटना को उन्होने स्वय देखा था। वह स्वाभिमानी व्यक्ति थे और भाटियो के गौरवमय इतिहास पर उन्हे बडा गर्व था। लेकिन बेटी के विवाह के समय वह क्या करते, राठौड समझाने बुझाने और विनती करने से मानने वाले कहा थे ?

बीकानेर के राव जैतसी की मृत्यु के बाद मे उनके पुत्र राव कल्याणमल राज्यविहीन होकर सिरसा मे रहते थे। जब शेरशाह सूरी ने सन् 1543 ई मे राव मालदेव पर आक्रमण किया तब राव कल्याणमल और उनके भाई भीमराज भी राव मालदेव के विरुद्ध युद्ध मे लडने गए। इस युद्ध मे राव वरसिंह भी राव कल्याणमल के साथ युद्ध मे गए थे। शेरशाह सूरी ने सन् 1543 ई की विजय के बाद मे सन् 1544 ई मे जोधपुर पर अधिकार कर लिया और बीकानेर का राज्य राव कल्याणमल को लौटा दिया।

रावल लूणकरण ने राव वरसिंह से राव मालदेव के विरुद्ध सहायता मागी, क्योंकि उसने जैसलमेर के मालाणी क्षेत्र के बाडमेर और कोटडा क्षेत्र पर अधिकार कर लिया था। यह दोनो, रावल और राव, आरम्भ से ही एक दूसरे के सहायक थे। जहा रावल ने पूगल की देरावर, मराठ, मूमनवाहन मे सहायता की वहा राव वरसिंह ने मालाणी, बाडमेर, फलोदी मे जैसलमेर की सहायता की। रावल लूणकरण के अनुरोध पर राव वरसिंह ने एक शक्तिशाली सेना का गठन किया और योजनाबद्ध तरीके से राव मालदेव पर आक्रमण किया। इनकी आपसी शत्रुता शेरशाह सूरी के साथ युद्ध के समय से ही पनप रही थी, जिसमे आमो के पेडो को काटने वाली घटना ने आग मे घी का काम किया। राव मालदेव भूल गए थे कि राव वरसिंह ने उनकी बीकानेर के राव जैतसी के विरुद्ध भी सहायता की थी, जिसके कारण उनका बीकानेर पर अधिकार हुआ था।

राव वरसिंह ने द्रुतगामी सांढियों पर सवार राइकों को राव मालदेव की सेना की जासूसी करने पर लगाया। उनकी सेना की सख्या पाच हजार थी। राव वरसिंह ने राव मालदेव की सेना पर आक्रमण किया, घमासान युद्ध के बाद राव मालदेव की सेना बचाव और सुरक्षा का सहारा लेती हुई पीछे हटनी शुरू हुई। राव वरसिंह का दाव ऊपर था, उन्होंने सेना का पीछा नही छोडा और उन्हें शान्तिपूर्वक पीछे भी नहीं हटने दिया। राव मालदेव की सेना ने अत्यधिक हानि उठाकर जैसलमेर राज्य की सीमा छोडी। राव वरसिंह ने बाडमेर, कोटडा, सवद, पोहटन, मवाईयों पर अधिकार किया, यही क्षेत्र पहले राव

मालदेव ने जैसलमेर से छीन लिए थे। वस्तुत राव मालदेव के जोधपुर के शासक बनने से पहले यह क्षेत्र बाडमेर के माहेचा राठौडो के थ जिन्ह जैसलमेर ने उनसे छीन लिया था। इसके पश्चात् सन् 1544 ई मे गिररी और सामेल के युद्ध मे राव बरसिंह न राव मालदेव को निर्णायक रूप से परास्त किया।

सन् 1553 ई मे राव बरसिंह और राव कल्याणमल सेना लेकर मेडता के जयमल की सहायता करने गए। जयमल पर राव मालदेव ने आक्रमण कर दिया था। इस प्रकार राव बरसिंह ने दो बार (सन् 1543 और 1553 ई) राव कल्याणमल की राव मालदेव के विरुद्ध सहायता की। बीकानेर के राठौडो का सक्रिय साथ देकर यह भी वही गलतिया कर रहे थे जो पहले राव हरा ने की थी।

सन् 1553 ई म उन्होने अमरकोट के राणा गगा पर आक्रमण करके उसे परास्त किया और वह क्षेत्र जैसलमेर के अधिकार मे दिया।

इनका देहान्त सन् 1553 ई म हुआ। यह अपने पीछे दो रानिया छोडकर गए, एक चोतीला (मारवाड) की पातावतजी और दूसरी जालौर के खीमा सोनगरा की पुत्री सोनगरी रानी थी। इनके छह पुत्र थे

1 राजकुमार जैसा, ज्येष्ठ पुत्र थे, इनकी माता पातावतजी थी। यह राव बरसिंह के बाद मे पूगल के राव बने।

2 कुमार दुर्जनसाल, यह सोनगरी रानी के पुत्र थे। इन्ह बीकमपुर का ठिकाना दे कर राव की पदवी से *सम्मानित किया गया। इनके वशज पुगलिया दुर्जनसालोत बरसिंह* भाटी कहलाए। बीकमपुर का विवरण अलग से दिया गया है।

3 कुमार कालू इन्ह किराडा और बाप के बीच का क्षेत्र दिया गया। यह भू भाग अब भी, 'कालू की कोटडी' के नाम स जाना जाता है।

4 जझाण–यह नि सन्तान रहे।

5 सातल–यह नि सन्तान रहे।

6 करमचन्द–इनका कोई अता पता नही।

राव शेखा का मुलतान द्वारा बन्दी बनाया जाना पूगल के भाटियो के स्वाभिमान के लिए घातक रहा। उसके बाद म देवी करणीजी और मुलतान क पीरो का उनकी मुक्ति म योगदान ऐसा घृणित था कि उससे भाटियो का मनोबल धराशायी हो गया। रही सही कसर राव शेखा की इच्छा के विरुद्ध रगकवर का देवी करणीजी द्वारा बीका को ब्याही जाने की घटना ने पूरी कर दी। इस प्रकार स स्वाभिमान को ठेस पहुचने से और मनोबल के गिरन के दूरगामी परिणाम हुए। पूगल के राव शासन करने मे असफल होने लगे, जिसके फल स्वरूप सीमान्त क्षेत्र के भाटी पूगल की सत्ता को चुनौती देने लगे। उन्हे यह आभास होने लगा कि पूगल उन्हें सरक्षण देने मे असमर्थ था। इसलिए उन्होने स्वय के सरक्षण के अन्य आधार ढूढे। इस प्रक्रिया म वह पूगल से टूटते गय, दूर होत गय। अन्तत वह क्षेत्र पूगल के आश्रम से हट गए और भाटियो ने इस्लाम धर्म का सहारा लिया। भाटियो को कमजोर होते देखकर और उन्ह सरक्षण देने म अयोग्य होने से, अन्य राजपूत, पडिहार खीची, जोइया, पवार, सांखला, सोनर, भुट्टो, चौहान आदि भी इस्लाम की शरण म चले गए।

राव हरा भी स्थिति को उभारने मे सार्थक साबित नही हुए थे। वह राठौडो के साथ साठ गाठ मे लगे रहे। लेकिन इससे भाटियो को कोई लाभ नहीं हुआ। वह सीमान्त प्रदेशो के भाटियों को पूगल की मूलधारा से जोडने मे विफल रहे। उन्होने स्थिति से उबारने के प्रयास अवश्य किए, लेकिन इनके पुत्रो मे वह योग्यता नही थी जो पूगल राज्य की डग-मगाती स्थिति को एक बार सवार सके।

राव बरसिह इस भयावह स्थिति से चिन्तित और भयभीत हुए। उन्होने स्थिति पर नियन्त्रण पाने के लिए जैसलमेर से सहायता ली। स्थिति मे कुछ सुधार हुआ भी, लेकिन वह पूर्णतया स्थिति को नही सुधार पाये। उन्होने सीमान्त क्षेत्र को सुरक्षा प्रदान करने के प्रयास भी किए और इस प्रक्रिया मे रावत खेमाल, कुमार करण, और जगमाल, मेहरबान व भीमदे के वशजो को बलि चढाया। एक बार क्षति रुकी अवश्य, किन्तु खोखलापन यथावत बना रहा। यहा के क्षेत्रो के भाटियो की पूगल के प्रति आस्था और निष्ठा नही बन पाई।

यह युग ही ऐसा था कि राज्य टूट रहे थे, नए राज्य बन रहे थे। स्वतन्त्र राज्य परतन्त्र हो रहे थे। सारा दोष पूगल या पूगल के भाटियो को देना उचित नही। जोधपुर अपनी स्थापना, सन् 1453 ई, से स्वतन्त्र राज्य था। लेकिन सन् 1543 ई मे राव मालदेव की शेरशाह सूरी के हाथो पराजय के बाद मे, जोधपुर की नब्बे वर्ष की स्वतन्त्रता हमेशा के लिए समाप्त हो गई और इसके बाद मे वह सन् 1950 ई तक वह किसी न किसी रूप मे परतन्त्र बना रहा। इसी प्रकार बीकानेर अपनी स्थापना, सन् 1485 ई, के साठ वर्ष बाद मे ही परतन्त्र हो गया। सन् 1542 ई मे बीकानेर ने अपनी स्वतन्त्रता राव मालदेव से हार कर खोयी, इसके पश्चात् वह परतन्त्र ही रहा। सन् 1544 ई मे शेहशाह सूरी की सहायता से राव कल्याणमल ने बीकानेर पुन ले लिया था। परन्तु उसकी स्वतन्त्रता पर दिल्ली की छाया पडने लग गई थी। वह दुबारा कभी स्वतन्त्र नही हुआ परतन्त्र ही रहा। मुगलो ने इन परतन्त्र और आश्रित राज्यो की यह दुर्गति की कि वह इनके शासको को अपना जागीरदार कहते, ऐसा ही लिखते और इन्हे जागीरदारी के पट्टे और फरमान देते थे। यह पैतृक जागीरें भी नही होती थी शासक की मृत्यु के साथ लोप हो जाती थी। नए शासक को राज्य की जागीर का नवीनीकरण करवाकर नये पट्टे और फरमान प्राप्त करने पडते थे।

पूगल कभी भी मुलतान या दिल्ली का आश्रित नही बना। राव रुगनाथसिंह, सन् 1883 ई, पूगल के पहले राव थे जिन्होने बीकानेर राज्य से पूगल की जागीर का पट्टा लिया। सन् 1890 ई. मे राव मेहताबसिंह पूगल के पहले राव थे जिन्होने राव बनने के लिए बीकानेर के शासक को पेशकश दी। इनके पहले पूगल के स्वामित्व के लिए किसी पडोसी या केन्द्रीय शासक से फरमान या पट्टा नही लिया गया था और राव बनने के लिए किसी अन्य शासक को पेशकश भेंट नही की गई थी। पूगल के राव वहा की राजगद्दी पर अपना जन्म सिद्ध अधिकार समझ कर स्वतन्त्र एव सार्वभौम अधिकारो का उपभोग करते थे। सन् 1380 से 1883 ई पाच सौ वर्षों तक इनके इस अधिकार को किसी शासक ने चुनौती नही दी थी। युद्धों मे रावो का मरना या पूगल का हारना और बात थी।

वीकमपुर

वीकमपुर का किला और नगर वीर विक्रम पवार द्वारा वि स दो मे बनवाया और बसाया गया था। इन्होने सर्वप्रथम इस वीरान पड़े हुए क्षेत्र को आबाद किया और प्रारम्भिक शासन व्यवस्था की नींव डाली। राजा पवार सूर्य भगवान के उपासक थे और सूर्योदय से पहले तालाब किनारे जाकर, सूर्योदय पर सूर्य भगवान की आराधना करके, उपस्थित दीन-हीन गरीबो को दान देते थे। एक दिन इनके दुश्मनों ने इनकी परीक्षा लेने के लिए एक गरीब से दिखने वाले चारण को सूर्योदय के समय तालाब पर भेजा। जब चारण की दान प्राप्त करने की बारी आई तो उसने राजा से घोड़े दान मे माग लिए। राजा इससे तनिक भी विचलित नही हुए, उन्होंने ध्यान लगाकर सूर्यदेव का स्मरण किया। थोडी देर मे तालाब के किनारे 140 घोड़े प्रकट हो गए। इन्हें देखकर चारण कुछ घबरा गया। उन्होने उसे यह 140 घोडे दान मे दिए, साथ मे उसे इन घोडो के एक वर्ष के रख रखाव के लिए धन भी दिया। चारण सन्तुष्ट होकर सहर्ष चला गया।

वीकमपुर में अगली कई शताब्दियो तक पवारो का राज्य रहा। सन् 295 ई मे भटनेर का किला बनाने के बाद, वीकमपुर के उत्तर और उत्तर पश्चिम में भाटियों का प्रभाव बढने लगा। छठी शताब्दी म मूमनवाहन और मरोठ के किलो के बनने से यह प्रभाव और ज्यादा हो गया। उस समय पूगल में भी पवारो का राज्य था। वि स 827 (770 ई) मे राव केहर भाटी तणोत आए और उन्होंने इसे अपनी राजधानी बनाया। इनके पुत्रो ने राज्य विस्तार के लिए पहले अपने पड़ोस के राज्यो पर अधिकार करना आरम्भ किया। *राव तणुजी (सन् 805-820 ई) के पुत्र कुमार जैतूग के पुत्रो, रतनसिंह और चाहड,* ने वीकमपुर पर आक्रमण करके इसे अपने अधिकार मे कर लिया। चाहड के पुत्र कोला ने कोलासर और गिरराज ने गिराजसर नाम के गाव बसाये। इनके वशज जैतूग भाटी कहलाए। सन् 853 ई म रावल सिद्ध देवराज अपनी राजधानी देरावर से लुद्रवा ले आए।

नागौर के पास खाटू के राजा यादुराव खीची ने वीकमपुर पर आक्रमण करके जैतूग भाटियो को परास्त किया था। इसका बदला लेने के लिए राव वाछुजी (सन् 1056 ई) के पुत्र दुसाजी (सन् 1098 ई) ने पूगल और वीकमपुर के क्षेत्र मे अशान्ति फैलाने वाले और लूटपाट करने वाले राजा यादुराव खीची पर आक्रमण करके उसे परास्त किया।

दिल्ली के शासक सुलतान बलबन (सन् 1266-1286 ई) के समय, उनके अधीन मुलतान के शासको ने वीकमपुर पर आक्रमण करके काला जैतूग को परास्त किया और उन्होंने किले पर अधिकार करके, उसमे रहना शुरू कर दिया। इन लोगो ने वीकमपुर के किले में एक मस्जिद भी बनवाई थी। मुलतान से पराजित होने के बाद मे काला जैतूग और

उसके साथी जैसलमेर के रावल पूनपाल के पास सहायता प्राप्त करने गए। सन् 1156 ई से भाटी अपनी राजधानी लुद्रवा से जैसलमेर ले आए थे। इन जैतूगो की सहायता के लिए रावल पूनपाल तुरन्त तैयार हो गए। वह सेना लेकर अपने इन भाइयो के साथ बीकमपुर गए, परन्तु वह किला लेने म सफल नही हुए, मुलतान का वहा अधिकार यथावत बना रहा। रावल पूनपाल की बीकमपुर क्षेत्र मे अनुपस्थिति का लाभ उठाकर उनके विरोधी सामन्तो ने जैसलमेर की गद्दी पर तेजसिंह के पुत्र जैतसिंह को बैठाकर उसे रावल घोषित कर दिया। रावल पूनपाल गजनी का लकडी का बना हुआ अपना पैतृक तख्त साथ लेकर जैसलमेर से बीकमपुर—पूगल क्षेत्र मे पलायन कर गए।

मुल्तान के कुछ सैनिक और छोटे अधिकारी थोडे समय तक बीकमपुर के किले मे रहे। यहा से शासन को कोई राजस्व प्राप्त नही होता था। आधिया, गर्मी, पानी का अभाव और अन्य कठिनाइयो के कारण वह लोग किले को सूना छोडकर मुलतान की तरफ लौट गए। सूने पडे हुए किले पर अनेक छोटी जातिया अधिकार करती रही, सघर्ष करके दूसरी जाति पहले वाली कमजोर जाति को निकाल कर किले पर काबिज होती रही। इस अनिश्चितता के कारण किले की समय पर मरम्मत किसी ने नही करवाई, रख रखाव के अभाव मे किला जीर्ण-क्षीर्ण हो गया। जैसलमेर के पदच्युत रावल पूनपाल ने सन् 1290 ई से इस किले पर अधिकार करने के अनेक प्रयास किए परन्तु वह सफल नहीं हुए। लगभग एक सौ वर्षों तक इसी प्रकार की अराजकता की स्थिति बनी रही। इसी बीच जैसलमेर के सन् 1305 ई के दूसरे साके के बाद मे सुलतान खिलजी की सेना ने जैसलमेर के किले पर अधिकार कर लिया था। रावल मूलराज सन् 1294 ई के पहले साके मे मारे गए थे। इनके बाद मे दूदा जसोड रावल बने, उनके स्थान पर रावल मूलराज के छोटे भाई राणा रतन सिंह के पुत्र घडसी (सन् 1305 61 ई) रावल बने। यह राज्यविहीन रावल बीकमपुर मे रहने लगे। यह वहा ग्यारह वर्ष, सन् 1316 ई तक, रहे। इन्होने रावल मल्लीनाथ राठौड की बुआ, विमला देवी, से विवाह किया था। रावल मल्लीनाथ के पुत्र जगमाल की सहायता स इन्हें सन् 1316 ई मे जैसलमेर का शासन मिला और यह बीकमपुर से जैसलमेर गए।

सन् 1380 ई मे राव रणकदेव ने पहले पूगल पर अधिकार किया और बाद मे उन्होने बीकमपुर के किले का अपने अधिकार मे लेकर, उस क्षेत्र की अराजकता और अशान्ति को समाप्त किया। उन्होने इस पूरे क्षेत्र पर अपना नियन्त्रण जमाया।

जैसलमेर के रावल केहर (सन् 1361-96 ई) के ज्येष्ठ पुत्र, राजकुमार केलण, अपने पिता की आज्ञा से जैसलमेर की राजगद्दी पर अपना अधिकार त्याग कर आसिणकोट चले गए थे। सन् 1396 ई मे रावल केहर के देहान्त के पश्चात् उन्होने आसिणकोट छोडकर जैसलमेर राज्य से अन्यत्र चले जाने की सोची। उन्होने अपने वशज, पूगल के राव रणकदेव से बीकमपुर में रहने के लिए सहमति मांगी। राव रणकदेव ने उन्हे सहर्ष अनुमति दे दी और उनका अपने राज्य म आ कर रहने का स्वागत किया। केलण अपने सात सौ घुडसवारो की सेना और दीवान सातल सिहराव के साथ बीकमपुर आए। इनके साथ इनके चौथे छोटे भाई सोम भी आए। इन्हें इन्होंने गिराधी गाँव की जागीर, राव रणकदेव की सहमति से दी। सन् 1397 ई मे आस पास केलण द्वारा अपने किसी भाटी भाई को दी

गई यह पहली जागीर थी। केलण के व्यवहार और संरक्षण के कारण उसके साथ आसिणकोट से अनेक पालीवाल (ब्राह्मण) साहूकारों के परिवार भी अपना सामान, माल-असबाव आदि गाड़ों में लादकर बीकमपुर आए। केलण ने इनके लिए बीठनोक, बाप, बीकमपुर के क्षेत्र में अच्छी पक्की सड़कें बनवाई, ताकि यह व्यापारी सुगमता से आवागमन कर सकें। उन्होंने इनकी सुरक्षा के भी उचित प्रबन्ध किए। पालीवालों ने बाप, मोजा आदि अनेक गाव बसाए।

सन् 1290 ई के पश्चात्, जैसलमेर पर खिलजियों, जलालुद्दीन खिलजी (सन् 1290–96 ई) व अल्लाउद्दीन खिलजी (सन् 1296-1316 ई), ने दो बार आक्रमण किए, कई वर्षों तक जैसलमेर उनके अधिकार में रहा। यह प्रभावशाली शासक थे और इनके बाद के तुगलक वंश (सन् 1320–1414 ई) के शासक भी कमजोर नहीं थे। इसलिए किसी स्थानीय शासक के लिए यह सम्भव नहीं था कि वह मुलतान के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करके, उनके क्षेत्र को अपने अधिकार में ले ले। इसका परिणाम यह रहा कि इन वर्षों में इस क्षेत्र, पूगल, बीकमपुर, मुलतान, में अपेक्षाकृत शान्ति रही।

सन् 1414 ई में राव रणकदेव को नागौर के राव चूडा राठौड़ ने मार दिया था। तब राव रणकदेव की सोढी रानी ने पूगल से केलण को संदेश देकर बीकमपुर भेजा और केलण को पूगल आने के लिए आमन्त्रित किया। इस निमन्त्रण को स्वीकार करके केलण अपने साथियों और दीवान सातल सिहराव के साथ बीकमपुर से पूगल आ गए। वहा सोढी रानी ने अपने पुत्र तणु, जिसने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था, के स्थान पर इन्हे गोद लिया और पूगल का राव बनाया।

नैनसी के अनुसार राव केलण ने अपने द्वितीय पुत्र रणमल (या रायमल) को मरोठ की जागीर अपने जीवनकाल में दे दी थी। यह सन् 1430 ई मे राव केलण की मृत्यु के पश्चात् बीकमपुर आ गए। नयमल के अनुसार राव केलण ने अपने ज्येष्ठ पुत्र चाचगदेव को राज्य नहीं दिया था, उन्होंने स्वयं ने रणमल का राज्याभिषेक मरोठ में करके पूगल का राज्य उन्हे दे दिया था। कर्नल टाड के अनुसार राव केलण के निधन के बाद में रणमल बीकमपुर आ गए, वहा आने के दो माह बाद मे सन्नीपात से उनकी मृत्यु हो गई। सम्भावनाए जो भी हो, राव चाचगदेव ने अपने छोटे भाई रणमल को पैतृक बट मे मरोठ के स्थान पर बीकमपुर की जागीर प्रदान की, जहा थोड़े समय बाद मे उनका देहान्त हो गया।

रणमल की मृत्यु के पश्चात् उनके छोटे पुत्र जगमाल ने उनके ज्येष्ठ पुत्र गोपा को बीकमपुर नहीं लेने दिया। यह जागीर अन्यों की सहायता से जगमाल ने बलपूर्वक ले ली। जगमाल, रणमल के द्वितीय पुत्र थे, इसके द्वारा गोपा से जागीर छीनना, रणमल के तीसरे पुत्र अचला को बहुत अखरी। यह उसके बड़े भाई के साथ अन्याय था, उसके पैतृक अधिकार का हनन था। अचला ने मुलतान के शासक से सैनिक सहायता प्राप्त करके जगमाल से युद्ध किया। इस युद्ध मे जगमाल मारा गया। अचला ने बीकमपुर की जागीर अपने बड़े भाई गोपा को सौंप दी। अब प्रश्न यह उठता है कि जगमाल की अनुचित कार्यवाही के विरुद्ध गोपा या अचले ने पूगल के राव चाचगदेव से हस्तक्षेप करने के लिए क्यों नहीं निवेदन किया? इसका स्पष्ट उत्तर यही था कि राव चाचगदेव, गोपा को अयोग्य समझते

थे, इसलिए वह इसे जागीर देने के पक्ष मे नहीं थे। ऐसी स्थिति मे अचला उससे सैनिक सहायता की अपेक्षा कैसे कर सकता था, वह मजबूरन मुलतान से सहायता लेने गया। राव चाचगदेव सक्रिय हस्तक्षेप करके तीनो भाइयो के झगडे को सुलझाते, उन्हे तटस्थ रहकर जगमाल को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए था। उनके नहीं चाहते हुए भी अचले ने गोपा को बीकमपुर दिलवा ही दिया। इससे राव की प्रतिष्ठा को धक्का लगा। यही से आने वाले चार सौ वर्षों के लिए बीकमपुर में अस्थिरता के बीज बोये गए, यह राव चाचगदेव के द्वारा निष्पक्ष रह कर न्याय नही करने के कारण ऐसा हुआ। अन्तत सन् 1749 मे बीकमपुर, पूगल से टूट कर, जैसलमेर मे चला गया, पूगल ने उस समय इसका विरोध तक नहीं किया।

राव चाचगदेव द्वारा बीकमपुर म सक्रिय हस्तक्षेप नही करने का एक अन्य कारण यह भी था कि आरम्भ मे उनकी स्वय की स्थिति भी डावाडोल थी। उन वर्षों मे उनकी सैनिक शक्ति कमजोर थी, इसलिए अचले की सहायता मे आई हुई मुलतान की सेना का विरोध करने मे वह असमर्थ थे। इसमे कोई दो राय नही कि गोपा से बीकमपुर की जनता असन्तुष्ट थी, परन्तु जिन परिस्थितियो मे अचले ने अपने भाई का रक्तपात करके उसे जागीर दिलवाई थी, उसे यथावत रहने देना ही राव चाचगदेव ने उचित समझा। उनके विचार मे अयोग्य होते हुए भी गोपा को अब हटाने के परिणाम अच्छे नही रहते।

राव चाचगदेव की काला लोदी के साथ युद्ध म मृत्यु होने के बाद उनके ज्येष्ठ पुत्र, राजकुमार बरसल, सन् 1448 ई मे पूगल के राव बने। यह अपने पिता की मृत्यु और पराजय से उत्पन्न विपरीत स्थिति को सम्भालने म मूमनवाहन और दुनियापुर मे व्यस्त थे, क्योंकि अब यह सीमा अस्थिर हो गई थी। इसी बीच दुनियापुर मे उन्हें हुसैन खा लगा (बलोच) द्वारा बीकमपुर पर आक्रमण करने की सूचना मिली। यह अपने पिता राव चाचगदेव की तरह इस मामले मे तटस्थ नही रहे। उन्होने सीमान्त क्षेत्र की स्थिति सम्भालने का कार्य अपने योग्य केलण सेना नायकों पर छोडा और स्वय चुनी हुई सेना लेकर बीकमपुर पहुचे। वहां उन्होंने हुसैन खा लगा को परास्त किया और लगाओ से किला मुक्त करवाया। रणमल और गोपा के समय मे इन अकर्मण्य शासको ने किले की कभी मरम्मत नही करवाई थी। अचले की सहायतार्थ आई मुलतान की सेना ने और बाद मे हुसैन खां लगा की सेना ने किले का काफी क्षति पहुचाई थी। रही सही किले की कसर अब राव बरसल और हुसैन खा लगा के बीच युद्ध मे हुई क्षति ने पूरी कर दी। राव बरसल ने कुछ दिन वहा ठहर कर किले की पूरी मरम्मत करवाई और वहा शासक के रहने योग्य महल बनवाने के आदेश दिए। उन्होंने किले के क्षतिग्रस्त मुख्य दरवाजो को बदल कर, उनके स्थान पर नये सुदृढ दरवाजे लगवाए।

राव बरसल के बीकमपुर प्रवास की सूचना पा कर जैसलमेर के रावल बरसी (सन् 1427 1448 ई) वहा पधारे। उनका दिखावे के लिए तो अभिप्राय राव चाचगदेव की मृत्यु पर मातमपुरसी करने का था। उन्होने राव बरसल को मुलतान और हुसैन खा लगा के विरुद्ध सफल अभियानों के लिए बधाई भी दी। यह भी सम्भव था कि रावल हुसैन खा लगा को निष्कासित कर स्वय पहले बीकमपुर पर अधिकार करना चाहते हो। उनके ध्यान मे भी

गोपा की अयोग्यता अवश्य थी। परन्तु राव बरसल के वहा उनके पहले पहुच जाने की सूचना मिलने पर उन्होंने अपना अभिप्राय बदल लिया। राव चाचगदेव की मातमपुरसी करने या राव बरसल को बधाई देने के लिए उनका बीकमपुर आने का कोई औचित्य नही था। इन सामाजिक व पारिवारिक कार्यों के लिए उन्हें पूगल जाना चाहिए था। राव केलण के समय से पूगल की निरन्तर बढती शक्ति और सफलताओ से रावल आशकित थे, इसलिए वह स्वय राव बरसल से मिल कर उनसे जानकारी लेना अति आवश्यक समझते थे। राव बरसल ने उनके व जैसलमेर के प्रति अपनी निष्ठा दर्शायी, जिससे आश्वस्त हो कर वह लौट गए।

गोपा केलण के वशजो को बीकमपुर के किले और क्षेत्र का नियन्त्रण सौंप कर राव बरसल पूगल हो कर मरोठ चले गए। मरोठ उनकी सामरिक राजधानी थी। बीकमपुर का शासन गोपा केलण के वशज राव हरा (सन् 1500-1535 ई) के समय तक चलाते रहे। राव हरा ने इनके अन्याय, कुशासन और अयोग्यता से परेशान हो कर, सन् 1530 ई मे बीकमपुर को खालसा करके, इसे सीधा पूगल के नियन्त्रण और प्रशासन मे ले लिया। एक गोगली भाटी ने गोपा केलणो की शह से बीका सोलकी की हत्या कर दी थी। उसके पुत्रो ने इस अपराध के विरुद्ध पूगल जाकर राव हरा से फरियाद की। इनके पौत्र दुर्जनसाल ने उनके साथ बीकमपुर आकर गोगली भाटी और गोपा केलणा को वहा से निकाल दिया। राव हरा ने बीकमपुर को खालसे कर लिया और उन्होंने और उनके पुत्र, राव बरसिह (सन् 1535-1553 ई) ने इसे अपने सीधे अधिकार मे रखा।

बीका सोलकी के वध के अपराध के लिए दण्ड देने के लिए गोपा केलणो को बीकमपुर की गद्दी से उतार कर, उनकी जागीर खालसे की गई थी। उन्ह और गोगली भाटी को देश निकाला दिया गया। इसलिए गोपा केलणो को पदच्युत करने का मुख्य कारण, उनका बीका सोलकी के वध मे हाथ होना था।

रणमल और उसके गोपा केलण वशजो ने बीकमपुर पर लगभग एक सौ वर्ष, सन् 1430 1530 ई, तक राज्य किया। सन् 1414-1430 ई मे राव केलण के शासन-काल मे यह पूगल के सीधे नियन्त्रण मे था। सन् 1380 से 1414 ई के बीच मे यह राव रणकदेव के अधिकार म था, परन्तु उनकी सहमति से, सन् 1396 से 1414 ई तक, केलण वहा रहे। मोटे तौर पर पहले के नौ सौ वर्षों, सन् 850 ई तक, यह पवारो के अधिकार म रहा, फिर सन् 1280 ई तक यह जैतुग भाटियो के अधिकार मे रहा, सन् 1305 से 1316 ई तक रावल घडसी यहा रहे। बीच बीच मे यहां लगा, बलौच, अन्य राजपूत जातिया या मुलतान के शासको का शासन रहा।

राव हरा ने सन् 1530 ई म इसे खालसे करके वहा पूगल के थानेदार और हाकिम को रखा। राव बरसिह (सन् 1535 53 ई) ने इसे अपने पुत्र दुर्जनसाल को पैतृक वट मे दिया, और साथ में इस जागीर मे 84 गाव दिए। राव बरसिह के पुत्र राव जैसा ने अपने छोटे भाई दुर्जनसाल को 'राव' की पदवी से सम्मानित किया। राव जैसा का शासन-काल सन् 1553 1587 ई तक रहा। बीकमपुर के शासक सन् 1553 ई के बाद मे 'राव' कहलाए। राव दुर्जनसाल की माता जालोर के खीमा सोनगरा की पुत्री थी। (सोनगरा चौहानों का इतिहास, पृष्ठ 265, डा हुकमसिह भाटी)

बीकमपुर के राव दुर्जनसाल की पुत्रियो, राजकुमारी पोहपावती और हर कवर, का विवाह मारवाड के मोटाराजा उदयसिंह (सन् 1581-95 ई) के साथ हुआ था।

राव दुर्जनसाल के पुत्र राव डूगरसिंह ने पाया कि व्यापारियो के जो काफिले या कतारें, मोटाराजा उदयसिंह के मारवाड क्षेत्र मे हो कर जाते थे, उनसे वह जकात के रूप मे भारी कर वसूल करते थे। इसलिए राव डूगरसिंह ने अपने भाई बाकीदास को सुझाव दिया कि वह इन व्यापारियो से सम्पर्क करके उन्हें आग्रह करें कि वह अपने काफिलो के मार्ग बीकमपुर-पूगल क्षेत्र में हो कर बदलें, जहा जकात की दरें मारवाड राज्य की दरो से काफी कम थी। इस प्रकार सिन्ध और मुलतान प्रदेशो से आने वाला और इन प्रदेशो को जाने वाला व्यापार-मार्ग बीकमपुर क्षेत्र से हो गया। व्यापारियो के लिए कम कर वसूल करने और सरक्षण देने का प्रलोभन उन्हे प्रोत्साहित करने के लिए काफी था। इस नये व्यापार-मार्ग के बीकमपुर क्षेत्र से बीकानेर हो कर होने से मारवाड की आय का एक बडा स्रोत समाप्त हो गया। इससे क्रुद्ध हो कर राजा उदयसिंह के आदमियो ने मांडरियार गाव के पास बाकीदास को मार डाला। अपने भाई की मृत्यु का बदला चुकने के लिए राव डूगरसिंह ने ढाई हजार सैनिको से राजा उदयसिंह पर आक्रमण कर दिया। राजा उदयसिंह के पास उस समय उस क्षेत्र मे केवल 500-700 सैनिक थे। कुडल गाव मे हुए इस युद्ध मे राव डूगरसिंह की विजय हुई, राजा उदयसिंह अपने बचे हुए सैनिको को लेकर पीछे हट गए। बीकमपुर की सहायता करने के लिए बरसलपुर के राव मडलीकजी भी अपनी सेना लेकर आए थे। कुडल गाव के युद्ध मे राव मडलीकजी ने वीरगति पाई। उपरोक्त युद्ध पूगल के राव जैसा (सन् 1553 87 ई.) के समय अक्टूबर, सन् 1570 ई. मे हुआ था।

राव डूगरसिंह के दो पुत्र, राजकुमार उदयसिंह और मानीदास, थे। राव डूगरसिंह की पुत्री की शादी मारवाड के शासक राजा चन्द्रसेन (सन् 1562-81 ई.) से हुई थी और इनके भाई बाकीदास की पुत्री जसोदा की शादी बीकानेर के राजा रायसिंह (सन् 1571-1612 ई.) से हुई थी।

सन् 1625 ई मे समा बलोचो ने पूगल के किले पर आक्रमण किया। इस युद्ध मे अपने किले की रक्षा करते हुए पूगल के राव आसकरण (सन् 1600-1625 ई) मारे गए। पूगल की सहायता करने आए हुए बरसलपुर के राव नेतसिंह ने भी पूगल के किले की रक्षा करते हुए वीरगति पाई। कुछ समय पश्चात् समा बलोचो का सामना बीकमपुर के राव उदयसिंह की सेना से हो गया। राव उदयसिंह अपने वशजो, राव आसकरण और राव नेतसिंह, की मौत का बदला लेने से नही चूके। उन्होंने युद्ध मे समा बलोचो को मार गिराया। इस प्रकार राव उदयसिंह ने राव मडलीकजी की मृत्यु का भी कुछ ऋण चुकाया।

राव उदयसिंह के छ पुत्र, सूरसिंह, ईशरदास, करण, रामसिंह, अरजनसिंह और कछारू थे। ईशरदास को इन्होने सिढ़ा (सिरड) की जागीर दी। यह फलोदी के हाकिम के पद पर कार्य करते हुए, वि स 1685 (सन् 1628 ई) मे मारे गए थे।

राव सूरसिंह (या सूरजसिंह) योग्य शासक थे। उनके और नागौर राज्य के नवाब महावत खां के बीच मे सीमा पर भूमि का विवाद चल रहा था। उन्होंने नवाब से शान्तिपूर्ण ढग से विवाद को सुलझाने के प्रयास किए किन्तु नवाब अपनी जिद पर अडे रहे। तब राव

सूरसिंह ने ढाई हजार सैनिका से नवाब पर आक्रमण करन की तैयारी की। युद्ध आरम्भ होने से थोडे समय पहले फलौदी के जगन्नाथ मेहता न बीच बचाव करके विवाद को सुलझाया, जिससे अनावश्यक रक्तपात टला।

कुछ समय पश्चात् पृथ्वीराज और अखेराज दलपदतोत ने राव सूरसिंह पर आक्रमण किया। इनकी इनके पिता राव उदयसिंह से पुरानी शत्रुता थी, जिसका बदला इन दोनो ने इनसे लेने की ठानी। इस युद्ध मे राव सूरसिंह और इनके ज्येष्ठ पुत्र बालूसिंह ने वीरगति पाई। इस प्रकार इन शत्रुओ ने पिता पुत्र को मारकर अपनी पुरानी शत्रुता चुकी।

राव सूरसिंह के छ पुत्र, *बालूसिंह, बिहारी दास, मोहनदास, दलपतसिंह, मूलसिंह* और परागदास थे। इनकी मृत्यु के पश्चात्, इनके तीसरे पुत्र मोहनदास अपने से बडे भाई बिहारीदास का पैतृक अधिकार छीन कर, बीकमपुर के राव बने। राव मोहनदास के बाद मे कुछ दिन उनके पुत्र जैतसिंह भी राव बन गए थे। क्योकि राव सूरसिंह के बाद मे मोहनदास और जैतसिंह ने बिहारीदास का राव बनने का अधिकार छीन लिया था, इसलिए वह जैसलमेर के शासक रावल सबलसिंह (सन् 1650-59 ई) की सहायता से अपने छोटे भाई मोहनदास के पुत्र, जैतसिंह के स्थान पर, सन् 1654 ई मे राव बन गए। इस समय पूगल मे राव सुदरसेन थे। पूगल ने बीकमपुर के राजगद्दी के विवादो से अपने आपको पहले गोपा केलण के समय की भाति अब भी दूर रखा क्योकि पूगल अपन पश्चिमी क्षेत्र की सीमा पर मुलतान, लगाओ और बलोचो से झगडो मे उलझा हुआ था। वह उनसे निपटने मे *असमर्थ था, इसीलिए राव सुदरसेन ने रावल सबलसिंह की सलाह मानकर, रावल रामचन्द* को अपने राज्य का आधा भाग देकर, सन् 1650 ई म देरावर का अलग राज्य उन्हें दे दिया। इसलिए पूगल के लिए बीकमपुर मे हस्तक्षेप करना उस समय सम्भव नहीं था।

सन् 1664 ई म राव बिहारीदास अपने पुत्र की बारात लेकर बीकमपुर से कही दूर गए हुए थे। वह किले मे पीछे थोडे से रक्षक छोड गए थे। रक्षको की थोडी सख्या का लाभ उठाकर, बालूसिंह, जिन्होने राव सूरसिंह के साथ युद्ध मे वीरगति पाई थी, के पुत्र किशनसिंह ने बीकमपुर को लूटा। वास्तव मे बालूसिंह, राव सूरसिंह के ज्येष्ठ पुत्र थे, इसलिए इन दोनों पिता पुत्र के एक साथ मारे जाने से, राव सूरसिंह के पौत्र किशनसिंह का ही राजगद्दी पर अधिकार बनता था। जबकि इनके चाचे, मोहनदास और बिहारीदास, बारी बारी से राजगद्दी को अनाधिकृत रूप से भोगते रहे।

वि स 1756 (सन् 1698 ई) म जैसलमेर के रावल अमरसिंह (सन् 1659-1702 ई) ने बीकानेर पर आक्रमण किया। उस समय बीकानेर के शासक महाराजा अनूपसिंह थे। इस आक्रमण मे रावल अमरसिंह के साथ म बीकमपुर के राव सुन्दरदास और बरसलपुर के राव भी थे। रावल अमरसिंह ने बलपूर्वक जैसलमेर और बीकानेर राज्यो की सीमाए झझू गाव के पास निश्चित की। जैसलमेर की इस सेना के साथ मे पूगल के राव बिजैसिंह (सन 1686-1710 ई) नही आए। इसलिए रावल अमरसिंह ने राव बिजैसिंह म अपनी अप्रसन्नता दर्शाई। अब शक्ति का पुन ध्रुवीकरण होने लग गया था। पहले बीकमपुर और बरसलपुर के राव पूगल के साथ रहते थे, अब क्योकि पूगल कमजोर हो गया था, इसलिए यह जैसलमेर की ओर झुकने लग गए थे। केवल यही नहीं, जयमलसर पहले से ही पूगल का साथ छोडकर बीकानेर की सेवा मे चला गया था।

राव बिहारीदास के बाद मे, इनके छोटे भाई मोहनदास के पुत्र जैतसिंह राव बने। राव जैतसिंह के देहान्त पर उनके पुत्र सुन्दरदास राव बने। राव सुन्दरदास के बाद म उनके छोटे पुत अचलसिंह राव बने। इनके बाद मे इनके पुत्र कुम्भा गिराजसर से आकर राव बन गये। इस बिगडती स्थिति का लाभ उठाकर, जैसलमेर के रावल अखैसिंह (सन् 1718-1762 ई) ने सन् 1749 ई मे बीकमपुर पर आक्रमण किया। बीकानेर के इतिहास कारो का कथन है कि बीकमपुर मे भाटियो के उपद्रव को दबाने के लिए महाराजा गजसिंह अपने पिता आनन्दसिंह को रिणी मे मृत्यु शय्या पर छोडकर बीकानेर आए। उन्होने मोहता भीमसिंह को सेना देकर बीकमपुर के विरुद्ध भेजा। इस सेना के सामने बीकमपुर के प्रधान कुम्भा ने सन्धि का प्रस्ताव किया और मोहता को दस हजार रुपये पेशकश मे देना स्वीकार किया। उनके अनुसार उस समय बीकमपुर मे राव सरूपसिंह थे। जब राव सरूपसिंह ने उनके प्रधान कुम्भे के द्वारा दस हजार रुपये पेशकश म दिए जाने के वचन को नही निभाया तो बीकानेर की सेना ने महाराजा की स्वीकृति से राव सरूपसिंह को मारकर, बीकमपुर कुम्भा को सौंप दिया। यह नही बताया कि दस हजार रुपयो का क्या हुआ?

पूगल की स्थिति वैसे ही कमजोर थी, इसलिए जैसलमेर और बीकानेर दोनो राज्य आधारहीन बीकमपुर और बरसलपुर को हडपना चाहते थे। इन दोनो, बीकमपुर और बरसलपुर, के भाटी होने के नाते इनका झुकाव जैसलमेर की तरफ होना स्वाभाविक था। बीकमपुर के राव कुम्भा ने बीकानेर के महाराजा गजसिंह से रावल अखैसिंह के विरुद्ध सहायता मागी। वह इस सुन्दर अवसर को खोना नही चाहते थे इसलिए बीमार पिता को रिणी मे छोडकर वह तुरन्त बीकानेर आए और उन्होने सेना का सगठन करके बीकमपुर के लिए प्रस्थान किया। कुछ दूर जाने पर उन्हें सूचना मिली कि जैसलमेर के रावल अखैसिंह भी सेना सहित उनसे पहले बीकमपुर पहुचने वाले थे। क्योकि बीकमपुर और बरसलपुर, जैसलमेर के वशज थे और पहले से ही उनके प्रभाव क्षेत्र म थे, इसलिए बीकानेर का वहा पहुचना जैसलमेर मे युद्ध के लिए खुली चुनौती होती। बीकानेर जैसलमेर से वहा युद्ध करने की स्थिति म नही था। इधर जोधपुर राज्य के लिए महाराजा रामसिंह और बख्तसिंह के आपस में झगडा चल रहा था। बख्तसिंह ने महाराजा गजसिंह से सहायता मागी, इसलिए वह बीकमपुर के बजाय वहा चले गए। यह बीकमपुर के बीच मार्ग से जोधपुर जाने की बात केवल अपनी शान रखन का मात्र बहाना थी। बीकानेर राव कुम्भा की सहायता करने जा रहा था, परन्तु उनके वहा पहुचने से पहले ही रावल अखैसिंह ने राव कुम्भा को मारकर सन् 1749 ई मे बीकमपुर खालसे कर लिया था। अब गजसिंह के वहा पहुचने का मतलब मृत राव कुम्भा के लिए जैसलमेर से युद्ध करना होता। बीकानेर केवल पेशकश के बदले मे जैसलमेर से युद्ध करने का साहस नही कर सकता था, तभी उन्होने बख्तसिंह को सहायता मे जाने के लिए जोधपुर की ओर मुख मोड लिया।

राव कुम्भा को सन् 1749 ई मे मारकर रावल अखैसिंह ने बीकमपुर खालसे कर लिया था, इसे बारह वर्ष, सन् 1761 ई तक खालसे रखा।

इससे पहले सन् 1448 ई मे भी लगभग ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हुई थी। हुसैन खा लगा द्वारा बीकमपुर पर अधिकार किए जाने की सूचना पा कर रावल बरसी उससे युद्ध

करने के लिए चल पड़े थे। परन्तु उनसे पहले राव वरसल, जिनके संरक्षण में उस समय बीकमपुर था, वहां से लगा को परास्त करके निकाल चुके थे। इसलिए रावल वरसी ने बीकमपुर आने का अपना अभिप्राय बदला, इसे उन्होंने राव चाचगदेव की मृत्यु पर मातम-पुरसी की यात्रा बताया। इसके ठीक तीन सौ वर्ष बाद मे सन् 1749 ई मे जब रावल अर्खैसिंह बीकमपुर पर अधिकार कर चुके थे, तब महाराजा गजसिंह ने भी अपने बीकमपुर प्रस्थान के अभिप्राय को कम महत्व का बताते हुए, जोधपुर जाना ज्यादा महत्वपूर्ण बताया। वास्तव म रावल वरसी और महाराजा गजसिंह, दोनों का अभिप्राय बीकमपुर पर अधिकार करके अपने राज्य का विस्तार करने का था। इस कार्य म जैसलमेर के रावल अर्खैसिंह, सन् 1749 ई मे सफल हुए।

सन् 1761 ई म रावल अर्खैसिंह ने बीकमपुर को बारह वर्ष तक खालसे रखने के पश्चात्, लाड खा भाटी के पुत्र सरूपसिंह को वहा का राव बनाया। लाड खा, राव सुन्दरदास के पुत्र थे। परन्तु राव सरूपसिंह ज्यादा दिनो तक बीकमपुर के राव नही रह सके। भूतपूर्व राव कुम्भा के भाई बाकीदास इन्हे मारकर राव बन गये। राव कुम्भा और नये राव बांकीदास दोनो, राव अचलसिंह के पुत्र थे।

बारू और टेकड़ा गावो के ठाकुर बीकानेर रियासत मे लूटपाट करके, बीकमपुर के क्षेत्र मे हो कर वापिस जैसलमेर राज्य की सीमा मे लौट जाते थे। वह लूटपाट मे राव बाकीदास को कोई हिस्सा नही देते थे, इसलिए वह इन ठाकुरो से नाराज रहते थे। बीकानेर राज्य ने सीमा पर शान्ति बनाए रखने के लिए और इन लुटेरे ठाकुरो को दण्ड देने के लिए बख्तावरसिंह मेहता के नेतृत्व मे अपनी सेना बारू भेजी। राव बाकीदास ने इस सेना का साथ दिया। बीकानेर की सेना उन ठाकुरो को उचित दण्ड देकर वापिस लौट गई। यह घटना कुछ तर्कसगत नही लगती। बीकानेर की सेना का बारू और टेकड़ा तक जाने का तात्पर्य जैसलमेर राज्य की सीमा का स्पष्ट उल्लघन था। सम्भवत बीकानेर के शासक ऐसा साहस नही कर सकते थे और जैसलमेर ऐसा होने पर चुपचाप नही बैठा रहता।

बीकमपुर के राव बाकीदास का बीकानेर की सेना का साथ देने के दो कारण हो सकते थे। पहला, टेकड़ा और बारू के ठाकुरो को यह दिखाना कि लूटपाट मे उन्हे हिस्सा नही देने का क्या परिणाम हो सकता था। दूसरा, क्योकि इनके भाई राव कुम्भा के कहने से महाराजा गजसिंह ने रावल अर्खैसिंह के विरुद्ध सेना कूच कर दी थी, इसलिए उन पर अहसान था। यह दूसरी बात थी कि रावल अर्खैसिंह को बीकमपुर आया जानकर बीकानेर की सेना वख्तसिंह की सहायता मे जाने का बहाना करके जोधपुर की ओर मुड गई।

राव बाकीदास के पश्चात् इनके पुत्र गुमानसिंह और इनके बाद मे नाहरसिंह, बीकमपुर के राव बने। नाहरसिंह को राव बने छ माह ही हुए थे कि दिवगत भूतपूर्व राव सरूपसिंह के पुत्र सूरसिंह (या शेरसिंह) इन्हे मारकर राव बन गए। परन्तु राव सूरसिंह, जैसलमेर के रावल मूलसिंह (सन् 1762-1820 ई) के प्रति वफादार नही थे, उनकी निष्ठा और ईमानदारी सदेहास्पद थी। वह बीकानेर के महाराजा गजसिंह (सन् 1745-1787 ई) के बहकावे मे आकर, जैसलमेर के रावल के आदेशो की अवहेलना करते रहते थे। इस प्रकार का वर्ताव एक अधीनस्थ राव के लिए अवाछनीय था। रावल इसे सहन नही

कर सके। उन्होंने अपनी सेना बीकमपुर भेजी, राव सूरसिंह को सन् 1781 ई में मारा और इनके स्थान पर दिवगत भूतपूर्व राव नाहरसिंह के पुत्र जुझारसिंह को राव बना दिया।

सन् 1820 ई मे बीकानेर के राजकुमार रतनसिंह की जैसलमेर के रावल गजसिंह स मेवाड मे विवाहोत्सव मे तकरार हो गई थी। राजकुमार रतनसिंह अपनी मानहानि का बदला लेना चाहते थे। इसलिए महाराजा गजसिंह ने अपने राजकुमार का मन और मान रखने के लिए जैसलमेर पर आक्रमण किया। बीकानेर की सेना वारू के ठाकुर जवानसिंह को मारकर और ठाकुर मानीसिंह को बदी बनाकर, जैसलमेर क्षेत्र मे लूटपाट करती हुई बीकानेर की ओर लौट गई। उस समय राव जुझारसिंह के पुत्र अनाडसिंह बीकमपुर के राव थे। जैसलमेर को सदेह था कि कहीं राव बाकीदास व सूरसिंह की तरह अनाडसिंह भी बीकानेर के साथ सहयोग नही कर बैठे और वह किसी स्वार्थ के कारण अपना किला बीकानेर को नही सौंप दे। उनके लिए बाद मे किला खाली कराने मे कठिनाई आएगी और बीकानेर के साथ युद्ध भी हो सकता था। इस समस्या को ध्यान म रखते हुए जैसलमेर के रावल गजसिंह ने मोहता उत्तमसिंह को सेना देकर बीकमपुर भेजा। मोहता उत्तमसिंह के बीकमपुर पहुचने से राव अनाडसिंह भडक उठे। उनके द्वारा मोहता के साथ सहयोग करना तो दूर रहा, वह उनके साथ बहुत बुरी तरह पेश आए, दुर्व्यवहार किया और रावल गजसिंह के प्रति निष्ठा और ईमानदारी दर्शाने के स्थान पर अपशब्द कहे, आदि। मोहता भी कम अनुभवी नही थे, वह सेना लेकर रावल के आदेशो की पालना करने वहा आए थे। उन्होंने राव अनाडसिंह को युद्ध के लिए ललकारा और किला उन्हे सौंपने के आदेश दिए और अगर वह उनसे युद्ध को टालना चाहते थे तो आत्मसमर्पण कर दें। इस पर राव अनाडसिंह के पावो तले से जमीन खिसक गई। वह किला छोडकर गडियाले चले गए। रावल गजसिंह का राव अनाडसिंह के प्रति पूर्वानुमान ठीक निकला, वह बीकानेर की सेना का साथ दे सकते थे।

इसके बाद रावल गजसिंह ने बीकमपुर खालसे कर लिया। वहा जैसलमेर का थाना स्थापित कर दिया और राज्य के हाकिम वहां रहने लगे। राव अनाडसिंह गडियाला मे रहने लगे। कुछ समय पश्चात् वहीं उनका चेचक से देहान्त हो गया।

थोडे दिनो बाद मे दिवगत राव अनाडसिंह के छोटे भाई शिवजीसिंह जैसलमेर के रावल गजसिंह (सन् 1820-45 ई) के समक्ष उपस्थित हुए और निवेदन किया कि उनके भाई के देहान्त हो जाने के कारण, बीकमपुर की गद्दी पर उनका अधिकार बनता था, इसलिए उन्हें बीकमपुर का राव बनाया जाए। रावल गजसिंह इन उद्दण्ड भाइयो की मनोवृत्ति और निष्ठा से अनभिज्ञ नहीं थे। उन्होंने नम्रता परन्तु कडाई से उनका निवेदन अस्वीकार कर दिया। शिवजीसिंह ने अपनी उद्दण्डता का परिचय दिया, उन्होंने सन् 1831 ई मे बीकमपुर के किले पर आक्रमण कर दिया। वहां तैनात जैसलमेर की सेना, थानेदार और हाकिम ने उनके आक्रमण का डटकर विरोध किया। शिवजीसिंह किले पर अधिकार करने मे असफल रहे। सन् 1840 ई मे रावल गजसिंह ने उन्हें बज्जू की जागीर देकर शान्ति से वहां बैठे रहने के लिए आग्रह किया।

शिवजीसिंह बज्जू मे शान्ति से बहां बैठने वाले थे, उन्ह तो अपने अधिकारस्वरूप

बीकमपुर का राव बनना था। वह पूगल के राव करणीसिंह और बीकानेर के महाराजा रतनसिंह के पास सहायता के लिए गए। पूगल के राव स्वयं बीकानेर के अधीन थे, उनके द्वारा उन्हें सहायता देने का प्रश्न ही नहीं था। उनके पास सहायता देने के लिए न तो सेना थी और न ही अर्थ व्यवस्था। महाराजा रतनसिंह बासनपीर को और ट्रेविलियन के उनके विरुद्ध फैसले को अभी नहीं भूले थे। वह जैसलमेर से बदला लेने का कोई अवसर नहीं गवाना चाहते थे। उन्होंने तत्काल शिवजीसिंह को सैनिक सहायता दी, बीकमपुर पर आक्रमण किया और सन् 1843 ई. में उन्होंने किले पर अधिकार कर लिया। इस घटना की सूचना मिलते ही जैसलमेर की सेना, जिसके साथ में केसरीसिंह, बिशनसिंह और मोहता उत्तमसिंह थे, ने बीकमपुर पहुंच कर किले को घेर लिया। यह घेरा छः माह तक रहा। बीकानेर की सेना तो जैसलमेर की सेना को आयी देख, शिवजीसिंह को घेरे में देकर, वापिस खिसक गई। आखिर शिवजीसिंह ने हार मानकर रावल गजसिंह से क्षमायाचना करके उनसे जीवन दान मांगा। वह बीकमपुर का किला खाली करके बज्जू चले गए, जैसलमेर की सेना ने किले पर अधिकार कर लिया।

बज्जू में भी शिवजीसिंह शान्ति से नहीं रहे। वह जैसलमेर राज्य में रह कर रावल के प्रति अभद्र और उद्दण्ड व्यवहार करते थे और बीकानेर से साठ-गाठ करके षड्यन्त्र करते और देशद्रोही का रुख अपनाते थे। इसलिए सन् 1847 ई में रावल रणजीतसिंह (सन् 1845-1863 ई) ने अपने चाचा राणा चत्तरसिंह के नेतृत्व में अपनी सेना बज्जू भेजी। इस सेना ने शिवजीसिंह को बज्जू से खदेड़ दिया। वह बीकानेर राज्य की सीमा में रहने लगे। सन् 1851 ई में वह पूगल क्षेत्र में रहने लगे। पूगल के राव करणीसिंह इन्हें पूगल क्षेत्र छोड़कर चले जाने के लिए कहने में असमर्थ थे क्योंकि महाराजा रतनसिंह से इनकी साठ-गांठ सन् 1843 ई से पहले की थी। सन् 1851 ई में महाराजा रतनसिंह का देहान्त होते ही इन्हें बीकानेर और पूगल का क्षेत्र छोड़कर जैसलमेर के क्षेत्र में लौटना पड़ा। वहां घोलिया गांव के ठाकुर जेठमालसिंह ने इन्हें घर दबाया। ठाकुर ने इन्हें केलणसर के पास में मार कर, इनके द्वारा उनके पिता ठाकुर भोजराजसिंह को मारने का बैर लिया। शिवजीसिंह जैसे देशद्रोही के मारे जाने से रावल रणजीतसिंह बहुत प्रसन्न हुए, उन्होंने शिवजीसिंह की जागीर, गिराजसर, का आधा भाग ठाकुर जेठमालसिंह को पुरस्कार के रूप में प्रदान किया।

सन् 1868 ई में जैसलमेर के रावल बैरीसालसिंह (सन् 1863-1891 ई) ने शिवजीसिंह के पुत्र खेतसिंह को बीकमपुर प्रदान किया। सन् 1820 ई में राव अनाड़सिंह को पदच्युत करने के बाद में 48 वर्षों, सन् 1868 ई तक बीकमपुर खालसे था। इस प्रकार रावल गजसिंह (सन् 1820-46 ई) और रावल रणजीतसिंह (सन् 1845-63 ई) के समय बीकमपुर पूर्णतया खालसे रहा। रावल बैरीसालसिंह ने भी शासक बनने के पांच वर्ष बाद में खेतसिंह को बीकमपुर प्रदान किया। रावल ने इनके पिता शिवजीसिंह के सारे अपराध मरणोपरान्त क्षमा किए और जागीर में आठ गांव भी इन्हें दिये।

खेतसिंह को बीकमपुर लौटाने में पूगल के राव करणीसिंह का विशेष योगदान रहा। राव करणीसिंह के कहने पर जैसलमेर के दीवान नथमल ने इस प्रकरण में मध्यस्थता की।

जैसलमेर के रावल रणजीतसिंह का विवाह महाजन के ठाकुर अमरसिंह की पुत्री गुलाब कंवर से हुआ था। इनके उत्तराधिकारी रावल बैरीसालसिंह का विवाह भी गुलाब कवर की छोटी बहन से हुआ था। इधर राव करणीसिंह की माता भी महाजन के ठाकुर शेरसिंह की पुत्री और बैरीसालसिंह की बहन थी। इस प्रकार जैसलमेर और पूगल दोनो की राज माताएँ महाजन की थी और जैसलमेर की तत्कालीन महारानी, रावल बैरीसालसिंह की रानी भी महाजन की थी। राव करणीसिंह ने महाजन की इन तीनो पुत्रियों एवं नथमल की मध्यस्थता से खेतसिंह के साथ न्याय करवा कर उन्हें बीकमपुर का राव बनवाया।

बीकमपुर को खालसे से मुक्त करके, वहा के हाकिम को उनकी प्रशसनीय सेवाओं के कारण, नोख की कचहरी में लगाया गया।

राव खेतसिंह ने जैसलमेर राज्य से लिखित रूप मे इकरार किया कि बीकमपुर का किला व गांवों की मोकूफी, बहाली व पट्टे के गावो मे दीवानी और फौजदारी अधिकार जैसलमेर राज्य के पास रहेंगे। बीकमपुर के राव जैसलमेर के रावल को उनकी अधीनता के प्रतीक के रूप मे रु. 261/- प्रतिवर्ष रकम रेख के देंगे।

पूगल ने बीकमपुर के प्रथम राव दुर्जनसाल को पैतृक बंट मे 84 गांव दिए थे। जैसलमेर ने पूगल द्वारा दिए गए इन गांवो मे से 62 गाव ले लिए, शेष 22 गाव बीकमपुर के पास रहने दिए। इस व्यवहार से बीकमपुर के राव मन ही मन जैसलमेर से अप्रसन्न रहते थे। अब उनकी जागीर पूगल द्वारा उन्हें दी गई जागीर का चौथा भाग रह गई थी। यह 62 गांव पूगल के दिए हुए थे, इन्हें लेने का अधिकार जैसलमेर राज्य को बिलकुल नही था। इसलिए जैसलमेर और बीकानेर राज्यो की ब्रिटिश शासन के साथ सन् 1818 ई मे हुई सन्धि का सहारा लेकर, और बीकानेर के शासको के आशीर्वाद व वकालत से, बीकमपुर के राव खेतसिंह ने वापिस पूगल (बीकानेर) मे मिलने के प्रयास किए। परन्तु बीकमपुर, बीकानेर राज्य के अधिकार या प्रभाव क्षेत्र मे कभी नही रहा था। यह पूर्व के समय मे, सन् 1749 ई. से पहले, पूगल राज्य का भाग था। अब पूगल राज्य भी समाप्त हो गया था, इसलिए बीकमपुर को बीकानेर मे मिलाने का प्रश्न ही नही था। अगर बीकमपुर (या बीकानेर) के तर्क मान लिए जाते तो क्या देरावर का राज्य, जो पहले पूगल राज्य का भाग था और सन् 1763 ई. से बहावलपुर राज्य बन गया था, अब पूगल की ओट मे बीकानेर को लौटाया जा सकता था? ऐसा सम्भव होने से सन् 1818 ई. की सन्धि प्रभावहीन हो जाती। ब्रिटिश शासन के प्रतिकूल निर्णय से जैसलमेर राज्य का बीकमपुर और बरसलपुर पर शिकंजा और ज्यादा कसा गया। इन प्रयासो के बाद वह केवल जैसलमेर राज्य के अधीन साधारण ठिकाने रह गए थे।

बीकमपुर के पास बाकी बचे हुए 22 गांवो मे से, बीकमपुर के राव के पास केवल ग्यारह गांव रहे, शेष ग्यारह गाव बीकमपुर के रावों ने अलग-अलग समय मे अपने पुत्रों और भाइयों को प्रदान कर दिए थे। इन बाईस गावो का विवरण निम्न प्रकार से है—

बीकमपुर के गांव—

(1) बीकमपुर (2) कोलासर (3) पावूसर (4) टांवरीवाला (5) खारा

बीकमपुर का राव बनना था। वह पूगल के राव करणीसिंह और बीकानेर के महाराजा रतनसिंह के पास सहायता के लिए गए। पूगल के राव स्वयं बीकानेर के अधीन थे, उनके द्वारा उन्हें सहायता देने का प्रश्न ही नहीं था। उनके पास सहायता देने के लिए न तो सेना थी और न ही अर्थ व्यवस्था। महाराजा रतनसिंह बासनपीर को और ट्रेविलियन के उनके विरुद्ध फैसले को अभी नहीं भूले थे। वह जैसलमेर से बदला लेने का कोई अवसर नहीं गवाना चाहते थे। उन्होंने तत्काल शिवजीसिंह को सैनिक सहायता दी, बीकमपुर पर आक्रमण किया और सन् 1843 ई. में उन्होंने किले पर अधिकार कर लिया। इस घटना की सूचना मिलते ही जैसलमेर की सेना, जिसके साथ में केसरीसिंह, विशनसिंह और मोहता उत्तमसिंह थे, ने बीकमपुर पहुंच कर किले को घेर लिया। यह घेरा छः माह तक रहा। बीकानेर की सेना तो जैसलमेर की सेना को आयी देख, शिवजीसिंह को घेरे में देकर, वापिस खिसक गई। आखिर शिवजीसिंह ने हार मानकर रावल गजसिंह से क्षमायाचना करके उनसे जीवन दान मांगा। वह बीकमपुर का किला खाली करके बज्जू चले गए, जैसलमेर की सेना ने किले पर अधिकार कर लिया।

बज्जू में भी शिवजीसिंह शान्ति से नहीं रहे। वह जैसलमेर राज्य में रह कर रावल के प्रति अभद्र और उद्दण्ड व्यवहार करते थे और बीकानेर से साठ गांठ करके षड्यन्त्र करते और देशद्रोही का रुख अपनाते थे। इसलिए सन् 1847 ई. में रावल रणजीतसिंह (सन् 1845-1863 ई.) ने अपने चाचा राणा चत्तरसिंह के नेतृत्व में अपनी सेना बज्जू भेजी। इस सेना ने शिवजीसिंह को बज्जू से खदेड़ दिया। वह बीकानेर राज्य की सीमा में रहने लगे। सन् 1851 ई. में वह पूगल क्षेत्र में रहने लगे। पूगल के राव करणीसिंह इन्हें पूगल क्षेत्र छोड़कर चले जाने के लिए कहने में असमर्थ थे क्योंकि महाराजा रतनसिंह से इनकी साठ-गांठ सन् 1843 ई. से पहले की थी। सन् 1851 ई. में महाराजा रतनसिंह का देहान्त होते ही इन्हें बीकानेर और पूगल का क्षेत्र छोड़कर जैसलमेर के क्षेत्र में लौटना पड़ा। वहां धोलिया गांव के ठाकुर जेठमालसिंह ने इन्हें घर दबाया। ठाकुर ने इन्हें केलणसर के पास में मार कर, इनके द्वारा उनके पिता ठाकुर भोजराजसिंह को मारने का बैर लिया। शिवजीसिंह जैसे देशद्रोही के मारे जाने से रावल रणजीतसिंह बहुत प्रसन्न हुए, उन्होंने शिवजीसिंह की जागीर, गिराजसर, का आधा भाग ठाकुर जेठमालसिंह को पुरस्कार के रूप में प्रदान किया।

सन् 1868 ई. में जैसलमेर के रावल वैरीसालसिंह (सन् 1863-1891 ई.) ने शिवजीसिंह के पुत्र सेतसिंह को बीकमपुर प्रदान किया। सन् 1820 ई. में राव अनाड़सिंह को पदच्युत करने के बाद में 48 वर्षों, सन् 1868 ई. तक बीकमपुर खालसे था। इस प्रकार रावल गजसिंह (सन् 1820-46 ई.) और रावल रणजीतसिंह (सन् 1845-63 ई.) के समय बीकमपुर पूर्णतया खालसे रहा। रावल वैरीसालसिंह ने भी शासक बनने के पांच वर्ष बाद में सेतसिंह को बीकमपुर प्रदान किया। रावल ने इनके पिता शिवजीसिंह के सारे अपराध मरणोपरान्त क्षमा किए और जागीर में आठ गांव भी इन्हें दिये।

सेतसिंह को बीकमपुर लौटाने में पूगल के राव करणीसिंह का विशेष योगदान रहा। राव करणीसिंह के कहने पर जैसलमेर के दीवान मयमल ने इस प्रकरण में मध्यस्थता की।

जैसलमेर के रावल रणजीतसिंह का विवाह महाजन के ठाकुर अमरसिंह की पुत्री गुलाब कवर से हुआ था। इनके उत्तराधिकारी रावल बैरीसालसिंह का विवाह भी गुलाब कवर की छोटी बहन से हुआ था। इधर राव करणीसिंह की माता भी महाजन के ठाकुर शेरसिंह की पुत्री और बैरीसालसिंह की बहन थी। इस प्रकार जैसलमेर और पूगल दोनो की राज माताएँ महाजन की थी और जैसलमेर की तत्कालीन महारानी, रावल बैरीसालसिंह की रानी भी महाजन की थी। राव करणीसिंह ने महाजन की इन तीना पुत्रियो एव नथमल की मध्यस्थता से खेतसिंह के साथ न्याय करवा कर उन्हे बीकमपुर का राव बनवाया।

बीकमपुर को खालसे से मुक्त करके, वहा के हाकिम को उनकी प्रशसनीय सेवाओ के कारण, नोख की कचहरी मे लगाया गया।

राव खेतसिंह ने जैसलमेर राज्य से लिखित रूप म इकरार किया कि बीकमपुर का किला व गावो की मोकूफी, बहाली व पट्टे के गावो मे दीवानी और फौजदारी अधिकार जैसलमेर राज्य के पास रहगे। बीकमपुर के राव जैसलमेर के रावल को उनकी अधीनता के प्रतीक के रूप मे रु 261/- प्रतिवर्ष रकम रेख के देंगे।

पूगल ने बीकमपुर के प्रथम राव दुर्जनसाल को पैतृक वट मे 84 गाव दिए थे। जैसलमेर ने पूगल द्वारा दिए गए इन गावो मे से 62 गाव ले लिए, शेप 22 गाव बीकमपुर के पास रहने दिए। इस व्यवहार से बीकमपुर के राव मन ही मन जैसलमेर से अप्रसन्न रहते थे। अब उनकी जागीर पूगल द्वारा उन्हे दी गई जागीर का चौथा भाग रह गई थी। यह 62 गाव पूगल के दिए हुए थे, इन्हें लेने का अधिकार जैसलमेर राज्य को बिलकुल नही था। इसलिए जैसलमेर और बीकानेर राज्यो की ब्रिटिश शासन के साथ सन् 1818 ई मे हुई सन्धि का सहारा लेकर, और बीकानेर के शासकों के आशीर्वाद व वकालत से, बीकमपुर के राव खेतसिंह ने वापिस पूगल (बीकानेर) मे मिलने के प्रयास किए। परन्तु बीकमपुर, बीकानेर राज्य के अधिकार या प्रभाव क्षेत्र मे कभी नही रहा था। यह पूर्व के समय मे, सन् 1749 ई से पहले, पूगल राज्य का भाग था। अब पूगल राज्य भी समाप्त हो गया था, इसलिए बीकमपुर को बीकानेर मे मिलाने का प्रश्न ही नही था। अगर बीकमपुर (या बीकानेर) के तर्क मान लिए जाते तो क्या देरावर का राज्य, जो पहले पूगल राज्य का भाग था और सन् 1763 ई से बहावलपुर राज्य बन गया था, अब पूगल की ओट मे बीकानेर को लौटाया जा सकता था? ऐसा सम्भव होने से सन् 1818 ई की सन्धि प्रभावहीन हो जाती। ब्रिटिश शासन के प्रतिकूल निर्णय से जैसलमेर राज्य का बीकमपुर और बरसलपुर पर शिकजा और ज्यादा कसा गया। इन प्रयासो के बाद वह केवल जैसलमेर राज्य के अधीन साधारण ठिकाने रह गए थे।

बीकमपुर के पास बाकी बचे हुए 22 गांवा मे से, बीकमपुर के राव के पास केवल ग्यारह गांव रहे, शेष ग्यारह गांव बीकमपुर के रावा ने अलग-अलग समय मे अपने पुत्रो और भाइयो को प्रदान कर दिए थे। इन बाईस गावो का विवरण निम्न प्रकार से है—

बीकमपुर के गांव—

(1) बीकमपुर (2) बोलागर (3) वायूसर (4) टांवरीवाला (5) खारा

(6) गोगलीवाला (7) चारणवाला (8) पना (9) भरमलसर (10) बोदाना (11) खैरूवाला।

गोगलीवाला--गोगलिये ने इस गाव को बसाया था। गोपा केलण बीकमपुर कोट मे निकलकर पोकरण के ढढूऊग्रास गाव गए, गोगली बीठनोक जाकर रहे। बाद मे यहा सिंह-रावो की बस्ती हुई।

चारणवाला--गोपा केलण ने यह गाव चारणों को दिया था, इसलिए यह चारणवाला कहलाया। चारण इसे छोडकर अन्यत्र चले गए थे, इसलिए यहां चारणो का अधिकार समाप्त हो गया। गोगलियो ने बीका सोलकी को मारा था। बीका सोलकी के पुत्र लूणे और पने ने पूगल जाकर राव बरसिंह के पास फरियाद की। उन्होने अपने पुत्र दुर्जनसाल को भेजकर गोपा केलणो और गोगलियो को गाव से निकाल दिया। पने सोलकी ने अपने नाम से 'पना' गाव बसाया।

बीकमपुर के वशजो के गांव---

1. वानजी की सिरड	राव डूगरसिंह के पुत्र मानीदास को।
2 जोगीदास की सिरड	मानीदास के पुत्र गोपालदास को।
3 नाथ जी की सिरड	मानीदास के पुत्र गोपालदास को।
4 बडी सिरड	राव उदयसिंह के पुत्र ईशरदास को।
5 गुढा	राव उदयसिंह के पुत्र रायसिंह को।
6 बावडी	राव सूरसिंह के पुत्र दलपतसिंह को।
7 भोजा की बाप	राव सूरसिंह के पुत्र मूलसिंह को।
8 गिराधी	राव सूरसिंह के पुत्र परागदास को।
9 गिराजसर	राव बांकीदास के पुत्र कीरतसिंह को।
10 बीकासर	राव सुन्दरदास के वशजो, लाड खा, सरूपसिंह, शेरसिंह, रतनसिंह, साहितिदान, बुलिदान को।
11 बागडसर	राव बाकीदास के पुत्र मानीदास को। इनके वशज मानीदासोत कहलाये। इनके वशज ये--मूलसिंह, मदनसिंह, जैतसिंह, बीझराजसिंह, हठीसिंह।

सक्षेप में बीकमपुर का इतिहास--

1 वि स 2, ई पू सन् 55, इसे विक्रम पवार ने बसाया और किला बनवाया। पवारो ने यहा नौ सौ वर्ष, सन् 850 ई तक राज्य किया।

2 सन् 850 ई के लगभग राव तणुजी के पुत्र जैतूग के पुत्रो रतनसिंह और चाहड, ने बीकमपुर जीता। चाहड के पुत्रो, कोला ने कोलासर और गिरराज ने गिराजसर गांव बसाये। इनके वशज जैतूग भाटी कहलाए। जैतूगो ने बीकमपुर पर लगभग 430 वर्षों, सन् 1280 ई तक राज्य किया। सन् 1280 ई मे मुलतान ने जैतूगो को हराकर यहां अधिकार किया।

3 सन् 1290 ई मे जैसलमेर क रावल पूनपाल, जैतूगो को बीकमपुर दिलाने गए थे,

किन्तु असफल रहे। वापिस आने पर इन्होंने जैसलमेर की राजगद्दी पर जैतसिंह को बैठा पाया, इसलिए इन्होंने जैसलमेर छोड दिया।

4 सन् 1305-1316 ई तक जैसलमेर खिलजियो के अधिकार मे रहा। राज्य-विहीन रावल घडसी ग्यारह वर्ष बीकमपुर मे रहे।

5 सन् 1380 ई मे राव रणकदेव ने पूगल और बीकमपुर पर अधिकार किया। सन् 1396 से 1414 ई तक केलण यहा रहे।

6 सन् 1414-1430 ई—सीधा पूगल के राव केलण के पास रहा।

7 सन 1430 ई—राव केलण के पुत्र रणमल को मरोठ के बदले मे बीकमपुर की जागीर दी गई। रणमल के छोटे पुत्र जगमाल इनके बाद शासक बने। रणमल के पुत्र अचले ने जगमाल को मारकर ज्येष्ठ पुत्र गोपा केलण को शासक बनाया।

8 सन् 1448 ई—हुसैन खा लगा ने गोपा केलण को परास्त करके यहा अधिकार कर लिया। राव बरसल ने हुसैन खां को हराया, गोपा केलण को बीकमपुर वापिस दिया। जैसलमेर के रावल बरसी यहा पधारे।

9 सन् 1430-1530 ई तक रणमल के वशजो, गोपा केलणो ने शासन किया।

10 सन् 1530 ई, गोपा केलणों द्वारा बीका सोलकी की हत्या मे सहयोग देने के कारण राव हरा ने इसे खालसे किया।

11 राव वरसिंह (सन् 1535-53 ई) ने अपने पुत्र दुर्जनसाल को पैतृक बट मे दिया, कुल 84 गावो की जागीर दी।

12 राव जैसा ने सन् 1553 ई मे अपने भाई दुर्जनसाल को 'राव' की पदवी दी। बीकमपुर के यह पहले राव, सन् 1553 ई से राव' कहलाए।

13 राव दुर्जनसाल की दो पुत्रियो का विवाह, मारवाड के मोटा राजा उदयसिंह से हुआ।

14 राजा उदयसिंह के आदमियो ने जकात वसूल करने के विवाद में राव डूगरसिंह के भाई बाकीदास को माडियार गाव के पास मार दिया।

15 सन् 1570 ई मे राव डूगरसिंह ने राजा उदयसिंह को कुडल गांव के पास पराजित किया। इस युद्ध मे बरसलपुर के राव मदनीकजी मारे गए।

16 राव डूगरसिंह की पुत्री का विवाह मारवाड़ के राजा चन्द्रसेन से हुआ और इनके भाई बांकीदास की पुत्री का विवाह बीकानेर के राजा रायसिंह के साथ हुआ।

17 पूगल के राव आसकरण और बरसलपुर के राव नेतसिंह, सन् 1625 ई मे, समा बलोचो द्वारा पूगल मे मारे गए। थोड़े दिनो बाद मे बीकमपुर के राव उदयसिंह ने समा बलोचो को मारा।

18 राव उदयसिंह के पुत्र ईशरदास फलोदी के हाकिम थे, वह सन् 1628 ई मे युद्ध में मारे गए।

19 राव सूरसिंह ने नागौर के नवाब महावत खां को युद्ध के लिए ललकारा,

फलोदी के मोहता जगन्नाथ ने बीच-बचाव किया। पृथ्वीराज और अगैराज ने राव सूरसिंह और इनके ज्येष्ठ पुत्र बालूसिंह को मारा। राव सूरसिंह के तीसरे पुत्र मोहनदास राव बने, कुछ दिन इनके पुत्र जैतसिंह भी राव रहे।

20 सन् 1654 ई म रावल सबलसिंह की सहायता से राव सूरसिंह के दूसरे पुत्र विहारीदास राव बने।

21 सन् 1664 ई मे राव सूरसिंह के ज्येष्ठ पुत्र बालूसिंह (वीरगति प्राप्त) के पुत्र विसनसिंह ने बीकमपुर लूटा।

22 राव विहारीदास के बाद म इनके छोटे भाई मोहनदास के पुत्र जैतसिंह राव बने। इनके बाद जैतसिंह के पुत्र सुन्दरदास राव बने।

23 राव सुन्दरदास के बाद म इनके छोटे पुत्र अचलसिंह राव बने।

24 राव अचलसिंह के पुत्र कुम्भा गिराजसर से आकर राव बने। सन् 1749 ई मे रावल अखैसिंह ने आक्रमण करके राव कुम्भा को मार डाला। राव कुम्भा की सहायतार्थ बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने सेना भेजी थी, पर वह समय पर बीकमपुर नही पहुची।

25 सन् 1749-1761 ई—खालसे रहा।

26 रावल अखैसिंह ने सन 1761 ई मे राव सुन्दरदास के पौत्र और लाड खां के पुत्र सरूपसिंह को राव बनाया।

27 राव सरूपसिंह को मारकर राव कुम्भा के भाई और राव अचलसिंह के पुत्र बांकीदास राव बने।

28 राव बांकीदास के पुत्र गुमानसिंह राव बने।

29 राव गुमानसिंह के पुत्र नाहरसिंह राव बने। इन्हे राव सरूपसिंह के पुत्र सूरसिंह ने मार डाला और स्वय राव बन गए।

30 सन् 1781 ई मे रावल मूलराज ने देशद्रोह करने के कारण सेना भेजकर राव सूरसिंह को मार डाला।

31 राव सूरसिंह के स्थान पर राव नाहरसिंह के पुत्र जुझारसिंह को राव बनाया।

32 राव जुझारसिंह के बाद म इनके पुत्र अनाडसिंह राव बने। इन्हें सन् 1820 ई म अभद्र आचरण और उद्दण्डता के कारण रावल गजसिंह ने पदच्युत किया और बीकमपुर खालसे कर लिया। यह 48 वर्ष, सन 1820 68 ई तक खालसे रहा।

33 पदच्युत राव अनाडसिंह की मृत्यु के बाद मे उनके छोटे भाई शिवजीसिंह ने बीकमपुर म निज दावा पेश किया। इसे रावल गजसिंह ने ठुकरा दिया। उन्होंने सन् 1831 ई मे बीकमपुर पर असफल आक्रमण किया। सन् 1843 ई मे बीकानेर के महाराजा रतनसिंह की सहायता से इन्होंने किले पर अधिकार कर लिया। जैसलमेर की सेना ने छ माह घेरा रखने के बाद म इनसे किला छीन लिया।

34 सन् 1847 ई म रावल रणजीतसिंह न सेना भेजकर शिवजीसिंह को बज्जू मे

खदेड बाहर किया। वह बीकानेर गए, फिर पूगल के क्षेत्र मे रहने लगे। सन् 1851 ई मे इन्हे यह क्षेत्र छोडना पडा।

35 सन् 1851 ई मे धोलिया के ठाकुर जेठमालसिह ने इनसे पुरानी शत्रुता का बदला लेने के लिए इन्हें मारा।

36 सन् 1868 ई में रावल बैरीसाल ने शिवजीसिह के पुत्र खेतसिह को राव बनाया। इन्हें आठ गांव दिये। इन्होंने जैसलमेर राज्य को अपने दीवानी और फौजदारी अधिकार सौंप दिए रकम रेख के रु 261/- प्रतिवर्ष देना स्वीकार किया।

37 राव खेतसिह जैसलमेर राज्य के साथ रहकर सन्तुष्ट नही थे। इन्होने सन् 1818 ई की सन्धि का सहारा लेकर बीकानेर मे मिलने का प्रयास किया। इसे ब्रिटिश शासन ने स्वीकार नही किया।

राव दुर्जनसाल से राव हनुमानसिह तक बीकमपुर के कुल बाइस राव बने। इनमे से केवल एक राव, सूरसिह ने शत्रुओ के साथ लडते हुए वीरगति पाई। राव मोहनदास और राव अनाडसिह को जैसलमेर के रावल सबलसिह और रावल गजसिह ने पदच्युत किया। राव कुम्भा, रावल अखैसिह द्वारा मरवाये गये, राव सरूपसिह, कुम्भा के भाई बाकीदास द्वारा मार गए, राव नाहरसिह को राव मरूपसिह के पुत्र सूरसिह ने मार डाला, और राव सूरसिह को जैसलमेर के रावल मूलराज ने मारा। पूर्व मे कुछ माह राव रहे शिवजीसिह को धोलिया के ठाकुर जेठमालसिह ने मारा।

बीकमपुर के वर्तमान राव हनुमानसिह बहुत लोकप्रिय हैं। इनका जनता से बहुत अच्छा सम्पर्क है, यह उनके दुख सुख म भागीदार रहते हैं। यह अनेक वर्षों तक बाप पचायत समिति के प्रधान रहे हैं, अब ग्राम पचायत के सरपच हैं। इनके भाई चैनसिह भी राव हनुमानसिह की तरह लोकप्रिय और योग्य हैं।

बीकमपुर की वशावली साथ मे सलग्न है।

बीकमपुर के पहले चार राव योग्य और वीर पुरुष थे। उनके बाद के रावों की कोई ऐतिहासिक भूमिका नही रही। वह या तो पदच्युत हुए या आपस मे कट बढ़ कर मरते रहे। इसे इतिहास नही कहा जा सकता। सन् 1868 ई म राव खेतसिह के समय से सघर्ष की स्थिति मे सुधार आया।

मेजर शैतानसिंह, परम वीर चक्र

मेजर शैतानसिह का जन्म एक दिसम्बर, सन् 1924 ई को जोधपुर जिले की फलोदी तहसील के बानासर गाव मे हुआ था। इनके पिता, ले कर्नल हेमसिह, जोधपुर रिसाले मे सेनाधिकारी थे, यह प्रथम विश्व युद्ध मे फ्रास में लडते हुए गम्भीर रूप से घायल हो गए थ, इन्हें ब्रिटिश सरकार ने ओ बी ई के उच्च खिताब से सम्मानित किया था। यह बीकमपुर की भाइप के दुर्सनमालोत बरसिह भाटी थे।

मेजर शैतानसिह ने राजपूत हाई स्कूल, चौपासनी (जोधपुर) से मैट्रिक की परीक्षा दी और सन् 1947 ई म इन्होने जसवन्त कॉलेज, जोधपुर से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की।

यह अपने स्कूल और कॉलेज में सभ्य, अनुशासित, उद्यमी और निष्ठावान छात्र थे, फुटबाल के अच्छे खिलाड़ी थे।

जोधपुर स्टेट फोर्सेस के दुर्गा हॉर्स में यह कैडेट बने और बाद में भारतीय संघ की सेना की तेरहवी बटालियन, दी कुमाऊं रेजिमेन्ट, में लिए गए। सन् 1955 ई. में इन्हें कैप्टिन के पद पर पदोन्नत किया गया। नागा हिल्स और सन् 1961 के गोआ ऑपरेशन में इन्होंने सराहनीय कार्य किया। जून, सन् 1962 ई. में यह कम्पनी कमाण्डर नियुक्त किये गये।

सन् 1962 ई. के भारत-चीन युद्ध में अद्भुत शौर्य और अदम्य साहस से लड़ते हुए, 18 नवम्बर, सन् 1962 ई. को लद्दाख क्षेत्र के चुमूल गाव के समीप रेजांग ला में इन्होंने वीरगति पाई। रेजांग ला के युद्ध का वर्णन संलग्न है। इनकी वीरता के लिए इन्हें भारतीय सेना का वीरता के लिए सर्वोत्तम पदक, परम वीर चक्र, मरणोपरान्त प्रदान किया गया।

राजस्थान सरकार ने इनके गांव का नाम अब शैतान नगर रख दिया है।

CITATION OF
Major Shaitan Singh, PVC (Posthumous)

Major Shaitan Singh (IC 6400) was commanding Charlie Company of 13 KUMAON deployed at Rezang La, in the Chushul sector at a height of about 18,000 feet The locality was isolated from the main defended sector and consisted of 5 defended platoon positions On night 17/18 November 1962 the Chinese forces subjected the locality to heavy artillery mortar and small arms fire and attacked in overwhelming strength following human wave tactics Magnificent bravery and tenacity were displayed by Major Shaitan Singh and his men and against heavy odds the attack was foiled

The Chinese came again with greater vigour and added strength only to be beaten back During the action Major Shaitan Singh moved at great personal risk from one platoon locality to another sustaining the morale of his men His personal example, unwavering courage and adamantine will were a tonic to his men Major Shaitan Singh was mortally wounded when he received a medium machine gun burst in his stomach but he refused to be evacuated

When the final Chinese onslaught came Major Shaitan Singh had little to defend Rezang La with His handful survivors of the valiant company fought with unprecedented zeal, making a desperate effort to save Rezang La When only a few men were left in his company he ordered them to go back to the battalion headquarters and narrate the saga of the battle fought by Charlie Company 1310 dead Chinese soldiers lay on Rezang La in silent testimony to the courage and daring of 114 Ahirs of Charlie Company

Major Shaitan Singh's supreme courage leadership and exemplary devotion to duty inspired his company to fight gallantly to the last man, last round Thus Major Shaitan Singh laid down his life in setting a record of dauntless daring which is unparalleled in the annals of military history

(Gazette of India Notification No 14 Per/63 dated 26 Jan 63)

Brief Account of Rezang La Battle

An epic battle was fought between 'C' Company of 13 KUMAON commanded by Late Major Shaitan Singh, PVC and a Battalion plus of Chinese Army on 18 November 62 at Rezang La, about 19 miles South of Village Chushul, guarding South East approach to the Chushul valley As per the account narrated by Capt DD Saklani, the then Adjutant of the Battalion (now Major General) the administrative base of 'C' Company at Rezang La was about 6 miles away from battalion headquarters and even from the base it took 4 hours to climb the Rezang La Pass

The attack on Rezang La commenced on 18 November 62 A Patrol from C' Company discovered the Chinese in their forward assembly area at 0400 hours The surveillance elements reported that the Chinese were building up in North and West of Rezang La, hence every man was ordered to take his position, the first attack came at 0500 hours which was beaten back with heavy enemy casualties On failure of their first attack, the Chinese shelled Rezang La with Artillery and Mortar fire with such an intensity that a cook house a mile away collapsed at Tsakala due to the shock waves as per the account given by Capt Prem Singh of 5 JAT Under cover of this fire the Chinese commenced their second attack on 7 and 8 platoons simultaneously but the intensity of own fire forced them to abandon the idea

They took a long detour and attacked 8 platoon from the West The platoon occupied alternative position but the superior number and fire power of the Chinese began to tell and section by section the position fell All men died in their trenches including the medical orderly Sepoy Dharam Pal Dahiya who was found still holding a morphia syringe and a bandage in his hand No 7 platoon was also attacked from the North flank with a superior number the Chinese continued advancing towards the top section where a dozen Ahirs jumped out of their trenches and engaged the enemy in hand to hand fight Two Ahirs, Nk Gulab Singh and Nk Sing Ram charged the enemy Machine Gun, but both fell within a few feet of it

After capturing 7 and 8 platoons the enemy attacked 9 platoon and company headquarters by surrounding it from three sides Major Shaitan Singh resited the Light Machine Guns which kept firing till they were

knocked out from the hands of firers The gallant Company Commander of the valiant Company received two bursts of Machine Gun in his arm and abdomen while moving from bunker to bunker He was picked up by two of his men but since the Chinese had detected them, the escape was not possible and he ordered the men to leave him and save themselves He gave his pistol, belt and pouches to his batman and reclining against a rock, bade them farewell

A mention of 3 inch Mortar section commanded by Nk Ram Kumar Yadav can not be lost sight of This section was supporting 'C' Company when the Chinese launched their attacks and Nk Ram Kumar Yadav kept on reducing the range to an extent of 30-40 yards using no secondaries Of a stock pile of 1000 bombs, all had been fired except 7 and these were kept ready for firing The only survivor from the section was Nk Ram Kumar Yadav whose nose was blown off by a hand grenade and he had eight other wounds from splinters and bullets He managed to reach Battalion Headquarters on 19 November after escaping from Chinese custody.

The enemy ingress was finally stalled beyond Rezang La due to the endless courage, bravery and fighting capabilities of Veer Ahirs We sacrificed one hundred and fourteen heroes which included one officer and two Junior Commissioned Officers, who preferred to die fighting than surrender even an inch of the sacred soil of their motherland

This Battle will be remembered by future generations of Chinese as well as Indians The Chinese will remember it for the incredible heroism they saw and we have every reason to be proud of brave Ahirs Already in the country side of Haryana, UP and Rajasthan, men and women sing heart winning songs in praise of the heroes of Rezang La

There could be no better epitaph for the men who fought and killed at Rezang La In recognition of the sacrifices of Veer Ahirs, the Government conferred on 13 KUMAON, the Battle Honour of Rezang La and the Theatre Honour 'Ladakh 1962' The 'C' Company was renamed as 'Rezang La' Company by the Government

It was at High Ground, the place where 13 KUMAON headquarters had been at the time of the battle, that the heroes of Rezang La were cremated with full military honours after their bodies were recovered Sometimes later, a monument was raised at the spot, inscribed on it are the following lines from Macaulay

How can a man die better
Than facing fearful odds
For the ashes of his fathers
And the temples of his Gods ?'

AWARDS

Param Vir Chakra :
Major Shaitan Singh (Posthumous)

Vir Chakra :
Jemadar Hari Ram (Posthumous)
Jemadar Surja (Posthumous)
Jemadar Ram Chander (Later Honorary Captain)
Naik Hukam Singh (Posthumous)
Naik Gulab Singh (Posthumous)
Naik Ram Kumar Yadav (Later Honorary Captain)
Lance Naik Singh Ram (Posthumous)
Sepoy Nursing Assistant Dharam Pal Dahiya (Posthumous)

Sena Medal :
Company Havildar Major Harphul Singh (Posthumous)
Havildar Jai Narain (Later Subedar)
Havildar Phul Singh (Later Honorary Lieutenant)
Sepoy Nihal Singh (Later Havildar)

Mention in despatches :
Company Quartermaster Havildar Jai Narain (Later Jemadar)

Ati Vishisht Seva Medal :
Lieutenant Colonel HS Dhingra (Later Colonel)

बीकमपुर के रावो की वंशतालिका

6 राव बरसिंह, पूगल
7 राव दुर्जनसाल, बीकमपुर
8 राव डूगरसिंह
9 राव उदयसिंह
10 राव सूरसिंह, वीरगति प्राप्त। साथ मे ज्येष्ठ पुत्र बालूसिंह मारे गए।
11 राव मोहनदास, राव सूरसिंह के तीसरे पुत्र, पदच्युत।
12 राव बिहारीदास, राव सूरसिंह के दूसरे पुत्र। रावल सबलसिंह की सहायता से राव बने।
13 राव जैतसिंह, राव मोहनदास के पुत्र।
14 राव सुदरदास
15 राव अचलसिंह, राव सुन्दरदास के छोटे पुत्र।
16 राव कुम्भा, रावल अखैसिंह ने इन्हे मार डाला। यह राव अचलसिंह के पुत्र थे। बीकमपुर खालसे रहा सन् 1749 61 ई तक।
17 राव सरूपसिंह, राव सुन्दरदास के पुत्र लाडखा के पुत्र को रावल अखैसिंह ने राव बनाया। इन्हे बाकीदास ने मार डाला।
18 राव बाकीदास, राव अचलसिंह के पुत्र, राव कुम्भा के भाई।
19 राव गुमानसिंह
20 राव नाहरसिंह, इन्हे राव सरूपसिंह के पुत्र सूरसिंह ने मार डाला।
21 राव सूरसिंह, राव सरूपसिंह के पुत्र। इन्हे रावल मूलराज ने मार डाला।
22 राव जूझारसिंह राव नाहरसिंह के पुत्र।
23 राव अनाडसिंह, राव नाहरसिंह के पुत्र।
24 खालसे, सन् 1820–1868 ई तक।
25 राव शिवजीसिंह, राव जूझारसिंह के पुत्र, राव अनाडसिंह के भाई। इन्हे धौलिया के ठाकुर जेठमालसिंह ने मार डाला।
26 राव खेतसिंह
27 राव अमरसिंह
28 राव शेरसिंह,खोले आए, यह बागडसर म मूलसिंह के वशज हरिसिंह के पुत्र थे।
29 राव हनुमानसिंह

परिशिष्ट–ख

वीकमपुर की भाड्प के गांवों की वंशावली

क्र सं.	वीक्रमपुर	कानजी की सिरड	जोगीदास की सिरड	माधजी की सिरड	वडी सिरड	गुढा	बावडी	मोजा की वाप	गिराधी	गिराजसर	बीरासर	वागडसर
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
1.	राव बरसिंह पूगल											
2.	राव दुर्जनसाल वीक्रमपुर आए											
3.	राव डूगरसिंह	राव डूगर सिंह	राव डूगर सिंह	राव डूगर सिंह								
4.	राव उदय सिंह	मानीदास	मानीदास	मानीदास	राव उदय सिंह	राव उदय सिंह						
5.	राव सूर सिंह	मानसिंह	गोपाल दास	गोपाल दास	ईशरसिंह	रामसिंह	राव सूर सिंह	राव सूर सिंह	राव सूर सिंह			

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	
6.	राव मोहन दास	भगवान सिंह	सांवल दास	अनोपसिंह	हठीसिंह	गोरसिंह	दलपत सिंह	मूलसिंह	परागदास				
7.	राव विहारीदास	राजसिंह	जयसिंह	नथराज	जुगतसिंह	अजब सिंह	साहिब सिंह	जयसिंह	अखैसिंह				
8.	राव जैत सिंह	अजबसिंह	जोगीदास	भोमसिंह	नथराज	बरतसिंह	विजय सिंह	रामसिंह	वीरभान सिंह				
9.	राव सुन्दरदास	प्रेमसिंह	दिवदान सिंह	रावतसिंह	सरूपसिंह	पेमसिंह	नाहर सिंह	अनोप सिंह	अभयसिंह		राव सुन्दरदास लाडखा		
10.	राव अचल सिंह	अनोपसिंह	संग्रामसिंह	भोजराज सिंह	समेलसिंह	मानसिंह	पेमसिंह	सरदार सिंह	सुखसिंह				
11.	राव कुम्भा	लखधीर सिंह	चैनसिंह	कल्याणसिंह	बनेसिंह	मोतीसिंह	सालम सिंह	लालसिंह	सरदार सिंह		सरूप सिंह		
12.	राव सरूपसिंह	सूरजमाल सिंह	दुर्जनसिंह		मघसिंह		इन्द्रसिंह	ऊमसिंह	इन्द्रसिंह		शेरसिंह		
13.	राव बांकीदास	जालमसिंह	उमेदसिंह		कानसिंह			गोविन्द दास	रूपसिंह	राव बाकीदास	रतनसिंह	राव बांकीदास	
14.	राव गुमान सिंह	मूलसिंह	प्रतापसिंह					उदय सिंह	हरिसिंह	कीरत सिंह	साहिति दान	भानीदास	
15.	राव नाहरसिंह	हीरसिंह	नवलसिंह							दान सिंह	बुलिदान सिंह	मूलसिंह	बागड़सर वसायो
16.	राव सूर सिंह (शेरसिंह)	मूलसिंह	अमरसिंह							मोम सिंह		मदन सिंह	मूल सिंह

1	2	3	6	7	8	9	10	11	12	13	
17.	राव जुझार सिंह	कानसिंह						जोरावर सिंह		जैतसिंह	जुगत सिंह
18.	राव अनाड सिंह							जेठमाल सिंह		बींझराज सिंह	सुलतान सिंह
19.	राव श्योजीसिंह							अमरसिंह		हठीसिंह	हरिसिंह के पुत्र
20.	राव खेत सिंह							डूंगरसिंह			शेरसिंह राव
21.	राव अमर सिंह							मालूसिंह (कुंवर रहते हुए स्वर्गवास)			अमर सिंह के
22.	राव शेर सिंह							भीमसिंह			गोद गए और
23.	राव हनुमान सिंह										बीकमपुर के राव बने।

राव हनुमानसिंह, चैनसिंह, रामसिंह, गजेसिंह, चार भाई हैं, एक बाईसा हैं, जिनका विवाह गघेली किया।

1. हनुमानसिंह के पुत्र हैं – रघुवीरसिंह और यादवेन्द्रसिंह।

2. चैनसिंह के पुत्र हैं – प्रतापसिंह, घनेसिंह, भगवानसिंह, आसूसिंह।

3. रामसिंह के पुत्र हैं – देवेन्द्रसिंह, नारायणसिंह।

4. गजेसिंह के पुत्र हैं – भवानीसिंह, विजयसिंह।

अध्याय–पन्द्रह

राव जैसा

सन् 1553-1587 ई.

सन् 1553 ई. मे राव वरसिंह की मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार जैसा पूगल की राजगद्दी पर बैठे। इन्होने सन् 1553 से 1587 ई. तक राज्य किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे—

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 रावल मालदेव, सन् 1551-1561 ई	1 राव कल्याणमल, सन् 1542-1571 ई	1. राव मालदेव, सन् 1532-1562 ई	1 सुलतान इस्लाम शाह, सन् 1545-1553 ई.
2. रावल हरराज, सन् 1561-1577 ई	2 राजा रायसिंह, सन् 1571-1612 ई (बीकानेर सन् 1542 से 1544 ई मे जोधपुर के पास रहा)	2. राव चन्द्रसेन, सन् 1562-1581 ई	2 सुलतान इब्राहिम शाह, सन् 1553-1555 ई
3 रावल भीम, सन् 1577-1613 ई		3 राजा उदयसिंह, सन् 1581-1595 ई	3 सुलतान सिकन्दर, सन् 1555 ई
			4 बादशाह हुमायु, सन् 1556 ई.
			5 बादशाह अकबर, सन् 1556-1605 ई

रणमल और गोपा केलण के वशज बीकमपुर का शासन कुशलतापूर्वक नहीं चला पा रहे थे, इसलिए राव हरा ने इसे पूगल के सीधे प्रशासन मे ले लिया था। राव बरसिंह ने इसे अपने दूसरे पुत्र दुर्जनसाल को जागीर मे प्रदान किया था।

राव शेखा के भाई तिलोकसी के पौत्र भैरवदास मरोठ म शासन कर रहे थे। इनके नि सन्तान मरने से पूगल के राव जैसा ने इस जागीर को खालसे कर लिया।

राव का पद सम्भालने के तुरन्त बाद मे राव जैसा पश्चिमी सीमान्त क्षेत्रों के कई दिनो के दौरे पर चले गए थे। वह वहा की शासन और सुरक्षा व्यवस्था का स्वय निरीक्षण करना चाहते थे। उनकी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर और उचित अवसर पा कर इनके छोटे भाई कालू पूगल की गद्दी पर बैठ गये। दुर्भाग्यवश कुछ दिनों बाद मे यह अपनी प्राकृतिक मौत मर गए या राव जैसा के समर्थकों ने उन्हें मार डाला। कालू के स्थान पर इनके छोटे भाई सातल पूगल की गद्दी पर बैठ गये। इन्हें दिवगत कालू के समर्थकों ने ही

राव बनाया था। सातल ने कोई छ माह राज्य किया था कि राव जैसा ने उनसे राज्य वापिस छीन लिया।

राव जैसा की पुत्री परमलदे का विवाह जोधपुर में राव मालदेव के पुत्र कुमार चन्द्रसेन से हुआ था। वह अपने चाचा राव दुर्जनसाल से मिलने बीकमपुर आई हुई थी, वहीं उनकी मृत्यु हो गई।

जिस समय राव जैसा के भाइयों, कालू और सातल ने पूगल की गद्दी पर अधिकार किया हुआ था, उस समय राव जैसा मारवाड चले गए थे। वहा राव मालदेव ने इन्हें मेडता मे रायणा (या राया) की जागीर बख्शी। राव जैसा की माता चोतीले के पातावत राठोडो की पुत्री थी, इसलिए वह कुछ समय अपने ननिहाल मे भी रहे। चोतीले में पातावतो ने उन्हें मान-सम्मान और आत्मीय स्नेह से रखा। उनके पुत्र के ससुर होन के नाते राव जैसा को राव माल्देव द्वारा जागीर का दिया जाना कोई बडी बात नही थी। लेकिन यह समझ मे नही आता कि राव मालदेव ने राव जैसा की पूगल वापिस लेने मे सहायता क्यो नहीं की, या उनके स्वभाव को देखते हुए उन्होने स्वय ने पूगल पर अधिकार क्यो नही कर लिया? जोधपुर के बजाय राव जैसा को बीकानेर के राव कल्याणमल या जैसलमेर के रावल मालदेव स सहायता मांगनी चाहिए थी। मेरे विचार मे जोधपुर का उनकी पुत्री का रिश्ता और वहा उनके ननिहाल का मोह उन्हें अपनो के पास खीच कर ले गया। पूगल वापिस लेने मे भी राव मालदेव ने अपने सम्बन्धी की सहायता अवश्य की होगी वरना उन्होन पूगल पर वापिस अधिकार किसकी सहायता से किया? उन्होने जोधपुर जाकर समझदारी की और वहां की सहायता लेकर पूगल पर अधिकार करके अच्छा किया। जैसलमेर या बीकानेर उनसे शरण और सहायता देने की कीमत चुकते और अहसान भी रखते।

जैसलमेर के रावल लूणकरण के समय जोधपुर के राव मालदेव ने बाडमेर, कोटडा, आदि का क्षेत्र उनसे छीन कर इसे अपने राज्य मे मिला लिया था। सन् 1544 ई मे पूगल के राव बरसिंह ने राव मालदेव से यह क्षेत्र जीतकर वापिस जैसलमेर को सौंपे थे। लेकिन राव मालदेव इस प्रकार से वहा मानने वाले थे, उनकी सभी से शत्रुता थी, इधर दिल्ली के शासको स और उधर बीकानेर और जैसलमेर के शासको से। उन्हे किसी रिश्ते, नाते, सम्बन्ध, भाईचारे या जाति का लिहाज कम था, उनके लिए स्वय का स्वार्थ सर्वोपरि था। नैनसी के अनुसार राव मालदेव ने अपन जवाई हाजी खा की सहायता से सन् 1550 ई मे बाडमर क्षेत्र पर फिर अधिकार कर लिया था। जनवरी, सन् 1544 ई मे राव मालदेव शेरशाह सूरी स पराजित हो कर राज्यविहीन हो गए थे किन्तु उनके सौभाग्य से अगले वर्ष, सन् 1545 ई म, शेरशाह सूरी की मृत्यु हो गई। इसका लाभ उठाकर और उचित अवसर पा कर राव मालदेव न जोधपुर पर पुन अधिकार कर लिया। शेरशाह सूरी के बाद मे इस्लाम शाह दिल्ली के शासक बने। उन्होने उस समय के जोधपुर के सूबेदार रवास खा को, जिसने राव मालदेव को वहा पुन अधिकार करने दिया था, दिल्ली बुलवा कर मृत्यु दण्ड दिया। खास खा के स्थान पर उन्होने हाजी खा को सूबेदार बनाकर जोधपुर भेजा। हाजी खा राव मालदेव के जवाई थे, यह उनके कब जवाई बने, इस विषय पर मत-भेद है। परन्तु सन् 1550 ई मे वह निश्चित रूप से जोधपुर मे सूबेदार थे और उसी वर्ष राव मालदेव ने जैसलमेर के बाडमेर के मालाणी क्षेत्र पर अधिकार किया था।

राव मालदेव ने बाडमेर और कोटडा पर अधिकार करके रतनसी सेमावत राठौड और सिघा को वहा के थानदार नियुक्त किए। मालाणी के राव भीम, जिनके अधिकार से राव मालदेव ने यह क्षेत्र छीने थे, जैसलमेर के अधीन थे। इसलिए वह रावल मालदेव (सन् 1551-61 ई) के पास सहायता लेने जैसलमेर गये। रावल मालदेव ने एक सेना का सगठन करवाया और सन् 1553 ई मे अपने राजकुमार हरराज और पूगल के राव जैसा के नेतृत्व मे इसे मालाणी पर अधिकार करके बाडमेर और कोटडा राव भीम को वापिस दिलवाने के लिए भेजा। राव भीम भी इस सेना के साथ वापिस गए। भाटियो की सयुक्त सेना ने राठौडो को वहा बुरी तरह पराजित किया। वहा के थानेदार रतनसी सेमावत और सिघा को न केवल बाडमेर और कोटडा के क्षेत्र राव भीम को लौटाने पडे, उन्हे पूरा मालाणी क्षेत्र विवश हो कर खाली करना पडा। इस प्रकार मालाणी का क्षेत्र फिर से जैसलमेर के अधिकार मे आ गया।

जैसलमेर के रावल मालदेव की एक रानी, राज कवर, बीकानेर के राव जैतसी की पुत्री थी।

कुछ इतिहासकारो का कथन है कि सन् 1536 ई मे जब जोधपुर के राव मालदेव रावल लूणकरण की पुत्री, राजकुमारी उमादे, से विवाह करने जैसलमेर आए, तब उन्हें उनके प्रति किसी षड्यन्त्र का आभास हुआ। इस कारण से उन्होने क्रुद्ध हो कर जैसलमेर के पास स्थित रामनाल बाग के आमो के सब पेड कटवा दिए। दूसरो का मत है कि जब सन् 1553 ई में राजकुमार हरराज और राव जैसा की सेना से मालाणी में वह युद्ध मे हार गए, तब उन्हाने बदले की भावना से जैसलमेर पर अचानक छापा मारकर नगर को लूटा और रामनाल बाग के आमो के पेड कटवा दिए। यह घटना चाहे सन् 1536 ई मे हुई हो या सन् 1553 ई. मे हुई हो, रामनाल बाग के आमो के पेडो को राव मालदेव द्वारा कटवाये जाने की घटना वस्तुत. सही थी।

राव मालदेव का एक विवाह जैसलमेर के रावल लूणकरण की पुत्री भारमति से हुआ था। सन् 1536 ई. मे इनका दूसरा विवाह रानी की छोटी बहन उमादे से हुआ। राव मालदेव न रानी भारमति के साथ बहुत दुर्व्यवहार किया था, जिससे रानी उमादे उनसे बहुत खिन्न थी। वह उनसे रुष्ट हो गई और पूरी जिन्दगी राव मालदेव से बोली तक नही। तभी से यह 'रूठी रानी' के उपनाम से इतिहास मे प्रसिद्ध हुई। परन्तु अपने पतिव्रत धर्म को निभाती हुई, 9 नवम्बर, सन् 1562 ई मे, राव मालदेव की मृत्यु पर, वह उनके साथ सती हो गई।

उपरोक्त आमों के पेडो को काटे जाने की शर्मनाक घटना से रावल मालदेव (सन् 1551-61 ई) अत्यन्त दुखी रहते थे। वह अपने बहनोई जोधपुर के राव मालदेव को क्या कहते और उनका क्या करते? उन्होंने एक बार राव जैसा से राव मालदेव को उचित सबक सिखाने के लिए कहा ताकि वह अपने दुष्कर्म के लिए शर्मिन्दा हो कर उसके लिए पछतावा करें। इस बात के लिए राव जैसा ने सन् 1559 ई. मे अचानक फलौदी पर छापा मारा और राव मालदेव के पाच योद्धाओं को मारकर, जैसे वह प्रगट हुए थे वैसे ही गायब हो गए। राव मालदेव को इस प्रकार से असमजस मे डालकर उनका ध्येय और लक्ष्य मन्डोर जाने

का था। इसलिए इससे पहले कि वह सम्भल सकें और उनके गन्तव्य स्थान मन्डोर उनसे पहले पहुच सकें, राव जैसा मन्डोर के बाग मे थे। वह तीन दिन तक उस बाग मे ठहरे, लेकिन उन्होंने बाग मे एक पेड को भी हानि नही पहुचाई। उन्होने प्रत्येक पेड के नीचे एक कुल्हाडी रखवा कर उसे लाल कपडे से ढकवा दी और उन्होने बागवानो को आदेश दिए कि वह राव मालदेव को सारी घटना की जानकारी दे दें। कुल्हाडी उनके शौर्य और अहिंसा की निशानी थी और लाल कपडा उनकी पेडो के प्रति श्रद्धा और सम्मान का सूचक था।

राव जैसा, राव मालदेव की तरह क्रूर और असभ्य नही थे। अगर वह चाहते तो तीन दिन के समय मे मन्डोर के बाग के सारे पेड कटवा डालते, परन्तु उन्होने ऐसा नही किया। पेडो के प्रति अहिंसा का व्यवहार करते हुए उन्होने उनके प्रति अपनी श्रद्धा दर्शायी। राव जैसा को इस कार्यवाही से राव मालदेव को बहुत नीचा देखना पडा। जिस दूरस्थ जैसलमेर की घटना की जोधपुर की जनता को जानकारी नही थी, वह अब उन सबके ध्यान मे आ गई। इससे जहां राव मालदेव की बदनामी हुई, वहा राव जैसा की शोभा हुई। कहा है, 'बाढ्या नही वृक्ष, केरावत ओठाडे कियो उपकार।'

मन्डोर की इस घटना का बदला लेने की नीयत से राव मालदेव ने पूगल पर आक्रमण करके उसे दण्ड देने की योजना बनाई। पूगल और जोधपुर राज्यो के बीच मे बीकानेर राज्य पडता था, इनकी सीमा आपस मे कही नहीं मिलती थी। बीकानेर के राव कल्याणमल शुरू से ही राव मालदेव के शत्रु थे, इसलिए बीकानेर हो कर उनके द्वारा पूगल पर आक्रमण करन का प्रश्न ही नही था। राव मालदेव ने पातावत राठोडो के गाव चाडी के रास्ते पूगल पर आक्रमण करने की सोची। चाडी के राव भान भोजराजोत राठोड, राव जैसा के शत्रु थे। राव जैसा को राव मालदेव के इस प्रस्तावित आक्रमण की सूचना पूगल मे मिल चुकी थी। इसलिए उन्होने राव मालदेव की सेना का पूगल पहुचने का इन्तजार नही किया, वह स्वय पहल करके उनसे युद्ध करने चाडी पहुच गए। ऐसा नही करने से हानि यह होती कि राव मालदेव की सेना पूगल क्षेत्र को लूटती हुई और बर्बाद करती हुई पूगल पहुचती और वहा राव जैसा के पास निर्णायक युद्ध लडने के सिवाय कोई विकल्प नही रहता। इसलिए उनका चाडी जाने का निर्णय उचित था।

राव मालदेव और राव जैसा की सेनाओ के बीच म तीन मुठभेडें हुईं, तीनो म बाजी राव जैसा के हाथ रही। पहली मुठभेड चाडी गाव के बाहर हुई। इसम राव भान के भाई पृथ्वीराज राठोड मारे गए। दूसरी झडप रिडमलसर गाव के पास हुई। यहां चाडी गांव के सहयोगी करणू गाव के काला रत्नावत (पातावत राठोडो की एक उपशाखा) ने राव जैसा को युद्ध के लिए ललकारा। भाटियो ने उनकी चुनौती को स्वीकार करते हुए उनको उचित उत्तर दिया। काला राठोड युद्ध म घायल हो गये और अपनी एक आंख गंवा बैठे। तीसरी झडप राव भान के पुत्र रणकदेव राठोड के साथ हुई, उस समय वह पोकरण के थानेदार थे। रावत खेमात के पुत्र धनराज भाटी भी राव मालदेव की सेवा मे थे, वह उस समय फलोदी के थानेदार के पद पर नियुक्त थे। उन्हे भी राव जैसा के विरुद्ध पोकरण के थानेदार रणकदेव का साथ देने के लिए सेना लेकर आना पडा। दोनो सेनाओ का आमना सामना बीलायत के पास पीलाप गाव मे हुआ। कुछ का विचार है कि यह मुकाबला बागडसर और

गुढा गावो के पास लखासर गाव मे हुआ था। पोकरण, फलौदी और पूगल की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए, मुझे लखासर गांव सही लगता है।

इस युद्ध मे रणकदेव के सत्रह आदमी मारे गए, वह स्वय भी गम्भीर रूप से घायल हो गए थे किन्तु जीवित वापिस चले गये। इस युद्ध मे धनराज भाटी की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। वैसी ही स्थिति राव जैसा की भी थी। जहा धनराज भाटी राव शेखा के पौत्र थे, वहा राव जैसा उनके पडपौत्र थे। इसलिए यह एक ही मूल परिवार के चाचा-भतीजा थे। इस युद्ध मे धनराज भाटी ने अपनी सेना का सचालन ऐसे किया कि भाटियो का कम से कम नुकसान हो और राव जैसा का बिलकुल नही हो। राव मालदेव ने धनराज भाटी को मारवाड मे बीकमकोर की बारह गावों की जागीर दी हुई थी। इस युद्ध म उनके द्वारा उनके प्रति पूर्ण निष्ठा नही रखने से उन्होने उनकी जागीर वापिस ले ली। राव जैसा उन्ह अपने साथ पूगल ले आए और बीकमकोर की जागीर के बदले मे उन्हें और उनके पुत्र ठाकरसी को बीठनोक और खीदासर की तीस गावो की जागीरें प्रदान की। यह जागीरें इनके वशजो के पास सन् 1954 ई तक रही। राव जैसा ने यह जागीरें इन्हे देकर जोधपुर और बीकानेर स पूगल राज्य की सीमा की रक्षा का उत्तरदायित्व इन्हे सौंपा।

उपरोक्त मुठभेडें और झडपें, राव मालदेव के सन् 1562 ई मे देहा त के थोडे समय पहले, सन् 1560 ई मे हुई थी। इनसे पूगल की कोई हानि नही हुई। पूगल को लाभ यह हुआ कि उसने अपने एक वशज, धनराज भाटी को लाकर बीठनोक और खीदासर मे स्थापित किया। कुछ का कथन है कि पीलाप (लखासर) के युद्ध म राव जैसा बुरी तरह घायल हो गए थे इसलिए धनराज ने अपने वश को प्राथमिकता देते हुए उन्हें प्रश्रय दिया, और उन्ह राठौडो द्वारा मारे जाने या बन्दी बनाए जाने के हादसे स बचाया। इस उपकार के बदले मे राव जैसा ने इन्हें जागीरें दे कर अपना आभार व्यक्त किया। धनराज ने अपने भतीजे का साथ देकर बहुत अच्छा किया।

राव मालदेव की सन् 1562 ई म मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र चन्द्रसेन जोधपुर के शासक बने। राव जैसा ने इन्हें अपनी दिवगत पुत्री परमलदे के स्थान पर, अपने भतीजे और बीकमपुर के राव दुर्जनसाल के पुत्र डूगरसिह की पुत्री और भूमनवाहन के जगमाल के पौत्र पचायन की पुत्री सहोदरा भी उन्ह ब्याही। जैसलमेर के रावल हरराज(सन् 1561-77 ई) का एक विवाह बीकानेर के राव कल्याणमल (सन् 1542 71 ई) की पुत्री मानकवर से हुआ था और दूसरा विवाह जोधपुर के राव मालदेव(सन् 1532 62 ई)की पुत्री सज्जन बाई से हुआ था। रावल हरराज की एक पुत्री गगा बाई का विवाह बीकानेर के राजा रायसिंह के साथ, दूसरी पुत्री नाथी बाई का विवाह बादशाह अकबर के साथ और तीसरी पुत्री चम्पादे का विवाह राजा रायसिह के छोटे भाई पृथ्वीराज के साथ हुआ था। इन घनिष्ठ पारिवारिक सम्बन्धो के कारण बादशाह अकबर ने फलौदी और पोकरण के परगने जोधपुर से लेकर रावल हरराज को दिए। इसी प्रकार बीकानेर के राजा रायसिह का एक विवाह बीकमपुर के राव दुर्जनसाल के दूसरे पुत्र बिहारीदास (सिरडा) की पुत्री से हुआ था। जैसलमेर के रावल भीम (सन् 1572-1613 ई)का एक विवाह राजा रायसिंह की बहन फूलकवर स और एक विवाह बीकानेर के नरसिहदास बीका की पुत्री अजब कवर

से हुआ था। इन विवाहों से बीकानेर और जैसलमेर के शासकों के दिल्ली के बादशाह अकबर से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुए। पूगल की बेटियों के विवाह राव चन्द्रसेन और राजा रायसिंह से अवश्य हुए थे लेकिन इन सम्बन्धों पर दिल्ली की छाया कभी नहीं पड़ी। बीकानेर, जोधपुर और जैसलमेर राज्य पहले कुछ स्वतन्त्र राज्य थे, इन सम्बन्धों ने इन्हें और ज्यादा परतन्त्र बना दिया। यह वैवाहिक सम्बन्ध कराने में आमेर के राजा भगवान दास ने अहम भूमिका निभाई।

26 जून, सन् 1586 ई. को राजा रायसिंह की पुत्री को सलीम (बादशाह जहांगीर) की हरम में प्रवेश कराने के लिए लाहौर ले जाया गया। यह विवाह राजा भगवानदास के डेरे में लाहौर में हुआ था। इसी प्रकार रावल हरराज की पुत्री नाथी बाई को अकबर से ब्याहने, जैसलमेर से राजा भगवानदास ही लेकर आए थे। भगवानदास के पिता भारमल ने अपनी पुत्री बादशाह अकबर का सांभर लाकर ब्याही थी, और 2 फरवरी, सन् 1584 ई. को राजा भगवानदास ने अपनी पुत्री शहज़ादा सलीम को लाहौर में ब्याही।

बीकानेर के राव कल्याणमल ने अपने भाई भोजराज की पुत्री भारमलि का विवाह अकबर के साथ नागौर में किया और कुछ समय बाद में इन्होंने अपने एक भाई कान्हा की पुत्री राजकंवर का विवाह भी अकबर के साथ फतेहपुर सीकरी में किया था। इन सम्बन्धों के उपहार में अकबर ने राजा रायसिंह को जोधपुर दिया। राव मालदेव ने सन् 1542 44 ई. में राव कल्याणमल से बीकानेर छीन लिया था। इस प्रकार अब राजा रायसिंह ने जोधपुर के शासक बन कर उन्होंने राव मालदेव द्वारा बीकानेर पर किए गए कब्जे का बदला लिया। लेकिन इसके लिए इन्हें अपनी बेटियां देकर अमूल्य कीमत चुकानी पड़ी। राव मालदेव ने राव जैतसी को मारकर बीकानेर पर तलवार की ताकत से अधिकार किया था, बेटियों के बदले जोधपुर प्राप्त करके आत्मसन्तोष करने से राव जैतसी की मौत का बदला कैसे चुकता ?

एक तरफ वह अकबर को अपनी बहनें और बेटियां ब्याह कर खुश हो रहे थे दूसरी तरफ जोधपुर, फलौदी पोकरण के परगने पुरस्कार में लेकर राजी हो रहे थे। क्या कभी इन्होंने उन अबलाओं से भी हाल पूछा जिन्होंने अपने पिता और भाइयों के सुख के लिए अपनी जात गवाई, हरमों में हजारों महिलाओं की भीड़ का भाग बनी और जिनकी सन्तानें ऐतिहासिक अनाथ बन गईं ? शायद उन महिलाओं की भीड़ में अकबर और सलीम ने कभी पहचाना भी नहीं होगा कि कौन कहां से लाई गई थी कौन किस राजा की बेटी और बहन थी ?

अकबर द्वारा अधीनस्थ राजाओं की रानियों का लगाया जाने वाला 'मीना बाजार राजा रायसिंह के भाई पृथ्वीराज की शक्तावत रानी ने कटार के जोर से बन्द करवाया था। यह शक्तिसिंह की पुत्री थी, शक्तिसिंह महाराणा प्रतापसिंह के छोटे भाई थे।

उपरोक्त अनेकानेक वैवाहिक सम्बन्धों से राव मालदेव के समय से चले आ रहे राठौड़ों और भाटियों के कटु सम्बन्धों में सुधार हुआ। अब आपस के झगड़े शान्त हुए, सभी राजा दिल्ली की केन्द्रीय सत्ता के पराधीन थे।

राव जैसा के समय मरोठ के भैरवदास की मृत्यु हो गई थी, इनके कोई सन्तान नही होने से पूगल ने मरोठ खालसे कर लिया।

राव मालदेव की सन् 1562 ई मे मृत्यु के पश्चात्, जोधपुर के जैसलमेर और पूगल से झगडे बन्द हो गए और सीमा पर शान्ति रहने लगी। बादशाह अकबर के साथ मे जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर के वैवाहिक सम्बन्धो के कारण इन राजाओ ने आपस मे लडना छोड दिया। अब राव जैसा ने अपनी पश्चिमी सीमा की सार सम्भाल की। इस सीमा पर केलणो और लगाओ के बीच निरन्तर झडपें चलती रहती थी, कभी केलणो का पलडा भारी रहता, तो कभी लगाओ का। कर्नल टाड ने लिखा है कि जैसलमेर का अधिकाश इतिहास, केलणो और मुलतान के शासको के बीच मे होने वाले झगडो और झडपो का अभिलेख था। इन मामूली घटनाओ को शब्दो के जाल से बढा-चढा कर बारठो ने उनके शौर्य और बलिदान का गान किया। जैसलमेर के इतिहास मे भी पूगल की घटनाओ को इतना अधिक महत्व और स्थान दिया गया जैसे कि वह अभिलेख जैसलमेर के न हो कर पूगल के हो।

राव जैसा ने अपने जीवनकाल मे बाईस लडाइयो मे भाग लिया था वह अपने प्रतिद्वंद्वियो पर आक्रमण करने के लिए प्रसिद्ध थे। उन्होने मुसलमानो को कई लडाइयो मे बार-बार परास्त किया, शौर्य और वीरता से लडे और युद्ध से कभी मुख नही मोडा।

सन् 1573 ई मे राजा रायसिंह के साथ गुजरात के युद्ध मे जयमलसर के रावत माईदास भी अपने सैनिक लेकर गए थे। वहा के युद्ध मे रावत माईदास मारे गए।

राजा रायसिंह ने दिल्ली दरबार के साथ घनिष्ठ सम्बन्धो का लाभ उठाकर, अकबर से सन् 1577 ई (दयालदास, पृष्ठ 112) मे, मनसबदारी के खरीतो के अनुसार मुलतान का मरोठ का परगना प्राप्त किया। परन्तु मरोठ परगना कभी भी मुलतान के सूबे का भाग नहीं रहा था। यह सन् 1380 ई से, राव रणकदेव के समय से, पूगल के भाटियों के राज्य का भाग रहा था। यह जानते हुए राजा रायसिंह न मरोठ का परगना अपने नियन्त्रण मे लेने के लिए कोई कार्यवाही नही की।

राव जैसा के पुत्र राजकुमार काना, जिनकी सांढो का टोला चरता हुआ मुलतान की सीमा के क्षेत्र मे चला गया था, उसे छुडाने वह मुलतान गए हुए थे। वहा काना को बन्दी बना लिया गया। जब राव जैसा को इसकी सूचना मिली तो वह राजकुमार को छुडाने के लिए गए। क्योकि इन्होने बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार नही की थी, इसलिए मुलताम के शासको ने राजकुमार काना को मुक्त करने से मना कर दिया। बाद मे हुई लडाई मे राव जैसा, सन् 1587 ई म, मरोठ मे मारे गए। इनके साथ राव हरा के पुत्र धनराज भी मारे गए। इनके लिए कहा गया है

'अण भागो कलह सील सत इधके,
अमह घडा चोरग घड भ्रम।
जो जीवीजो तो जैसा जिम,
जो मरजे तो जैसा जेम॥'

राव हरा के शासनकाल मे, सन् 1534 ई मे, भाटियो ने भटनेर खोया। अब सन् 1587 ई मे मुलतान से पराजय के कारण भाटियो ने जोगायत का केहरोर, कुम्भा का दुनियापुर, डेरा गाजी खां और डेरा इस्माइल खा आदि के साथ सतलज नदी के पश्चिम का पूरा प्रदेश खो दिया। मुलतान मे अकबर का सुदृढ शक्तिशाली शासन था, उसके आगे पूगल के भाटी कहां टिक सकते थे। अब जो भाटियों के पास मे पश्चिम मे किले और क्षेत्र शेष रह गए, वह थे, मरोठ, देरावर, बीजनोत, रूकनपुर और मूमनवाहन। यह सभी सतलज नदी की घाटी के पूर्वी भाग मे थे।

राव जैसा एक चरित्रवान और ईमानदार व्यक्ति थे। आवश्यकता पडने पर उन्होने जैसलमेर राज्य की तन, मन, धन से सहायता की। उन्होने यथासम्भव प्रयास किए कि राव मालदेव, जैसलमेर और पूगल के किसी भाग पर अधिकार नही कर सकें। उन्होंने जीते जी मुलतान के शासकों को पूगल के राज्य की भूमि पर अधिकार नही करने दिया। उन्होंने कभी दिल्ली के आश्रित होने की या अकबर के कृपापात्र बनने की चाह नही की। यह तब था जब पूगल राज्य के पडोसी, जोधपुर, जयपुर, बीकानेर राज्यो म अकबर के सरक्षण मे जाने की होड लगी हुई थी। जैसलमेर के रावल हरराज भी इससे अछूते नही रह सके। राजकुमारियो को अकबर और शहजादा सलीम की हरम मे प्रवेश करवाने म आमेर के राजा भगवानदास और बीकानेर के राजा रायसिंह ज्यादा प्रयास करते थे। इसके बदले मे इनकी मनसबदारिया बढाई जा रही थी, सूबेदारिया दी जा रही थी और इन्हें मालदार परगने बख्शे जा रहे थे। इस प्रकार की खुशहाली से राव जैसा ने अपने आप को दूर रखा। वह चाहते तो दिल्ली दरबार मे अपनी सेवाएँ समर्पित करके और उन्हे अपनी बेटिया भेंट करके पुरस्कार पा सकते थे। लेकिन इन्होने तो बादशाह अकबर की अधीनता घर बैठे भी स्वीकार नही की। अगर वह अकबर की रीति नीति की मूलधारा में बह जाते तो पूगल का राज्य ज्यो का त्यो बना रह जाता। बीकानेर उसके सामने बौना रह जाता, जैसलमेर की काट छाट हो जाती और बहावलपुर राज्य उत्पन्न ही नही होता। राव जैसा के बाद की अनेक पीढियां, सतलज, व्यास, चिनाब और सिन्ध नदियो की घाटियो की सम्पदा का दोहन करती रहती। परन्तु राव जैसा ने अपना चरित्र, स्वाभिमान, शौर्य, सच्चाई और जातीय गौरव अडिग रखा। वह जानते थे कि किस भाव म उनके पडोसी और रिश्तेदार लुट रहे थे और वह क्या लूट रहे थे? वह पीढियो की सचित इज्जत आबरू को अपनी बहन बेटियो के माम के भाव बेच रहे थे और बदले मे सासारिक सुख साधन पा रहे थे।

अकबर पूर्व के शासको की तरह वशो का राज्य स्थापित करने नही जन्मा था, वह सम्राट था, उसका साम्राज्य था और वह आने वाली पीढियो के लिए युगो की नीव डाल रहा था। राव जैसा भी चाहते तो उस नीव का एक पत्थर बनकर अपनी आने वाली पीढिया के लिए प्रबन्ध कर जाते। परन्तु उनके और हमारे भाग्य मे ऐसा कहा लिखा था?

राव जैसा के पास स्वाभिमान, चरित्र, जातीय घमड और सच्चाई के सिवाय कुछ नही था। अधिकाश क्षेत्र रेतीला रेगिस्तान था, अन्न और पानी की कमी थी, अकाल और अभाव का बोलबाला था। पूगल की जनसख्या कम होने से उन्हें सैनिक कम मिलते थे, चारे और दाने के अभाव मे पशु और अच्छे घोडे रखना दुष्कर था। दूसरी ओर मेवाड राज्य म

वर्षा खूब होती थी, नदी नालो मे वर्ष भर पानी का बहाव रहता था। भूमि उपजाऊ होने से धन धान्य, घास, चारे की कोई कमी नही रहती थी। अरावली की समानातर पर्वत श्रेणिया, घने जंगल और गहरे जल भरे नदी नाले अभेद्य दुर्ग थे, जिन्हें कोई सेना नहीं लाघ सकती थी। जनसख्या सघन थी, उसके चारो तरफ हिन्दू क्षेत्र और हिन्दू राज्य थे। इसलिए सैनिकों की कमी नही रहती थी। कमजोर या असन्तुष्ट भाई भतीजो और वशजो द्वारा धर्म परिवर्तन का भय मेवाड को नहीं था। इन सुविधापूर्ण परिस्थितियो के कारण महाराणा प्रताप मुगल शक्ति के सामने अडिग रह सके।

मेवाड के महाराणा प्रताप (सन् 1572-1597 ई), पूगल के राव जैसा (सन् 1553-1587 ई), आमेर के भगवानदास (सन् 1573-1587 ई), लगभग समकालीन थे। परन्तु तीनो के कार्यक्षेत्र मे कितना अन्तर था। पहले दोनो शासक स्वाधीन थे, तीसरा सभी प्रकार से पराधीन था।

महाराणा प्रताप सौभाग्यशाली थे कि वह इतिहास की चरम सीमा पर पहुच गये *सारे विशेषण उनके लिए सचय करके उन्हे सजाया सवारा गया। वह हिन्दुआणा सूरज* कहलाए, हिन्दू धर्म के रक्षक हुए। उन्होने बादशाह अकबर महान् की शक्ति को तलवारो से तोला, उसकी चुनौतियो को भाले की नोक पर उछाला। मेवाड का सिर कभी दिल्ली दरबार मे नही झुका और न कभी अपनी कन्याओं को अकबर की हरम मे दिया। भूखे रहे, कठिनाइया झेली, दर-दर की ठोकरें खाई, लेकिन आन पर आच नही आने दी। मुगलो से कठिनतम परिस्थितियो मे युद्ध लडे। जनता ने, आदिवासियो ने, पग पग पर उनका साथ दिया।

राव जैसा के पूगल के राज्य का क्षेत्र उस समय के मेवाड राज्य से कही अधिक था। व्यक्तिगत स्तर पर द्वद्व मे वह प्रताप से कम नही थे। वह साहस और शौर्य म भी उनसे कम उतरने वाले नही थे। उन्होंने अपने जीवनकाल मे बाईस लडाइया लडी, जो महाराणा द्वारा लडी गई लडाइयो से कम नही थी। उन्होने जैसलमेर के अपने भाटी भाइयो के लिए मालाणी, बाडमेर कोटड़ा, फलोदी की लडाईया लडी। पूगल के लिए राव मालदेव से अनेक युद्ध लडे। पश्चिमी सीमा पर मुलतान के शासको और लगाओं व बलोचा से लडाइयो मे निपटे। उन्हें यह मालूम था कि किस प्रकार से उनके अन्य सगे, सम्बन्धी, भाई, भारत की सम्पदा म हाथ बटा रहे थे, फिर भी वह पथ भ्रष्ट नहीं हुए, अपने हिन्दुत्व को बनाए रखा। जहा तक कठिनाइयो का प्रश्न था, राव जैसा की कठिनाईयां महाराणा प्रताप से कम नही थी, आज चार सौ वर्ष बाद भी पूगल की कठिनाइया वैसी की वैसी हैं।

यह केवल भाग्यरेखा की कटक की करामात थी कि मेवाड और महाराणा प्रताप की मरोड अकबर की आखों म खटक गई और वह जीवन भर महाराणा की मरोड को सीधा करने मे सफल नही हुए। राव जैसा और पूगल म वही विशेषताए थी, जो महाराणा प्रताप और मेवाड म थी। परन्तु राव जैसा शासको की निगाहो म नहीं चढ़ने के कारण अन्धकार म रहे। उन्हे इतिहास ने कभी याद तक नही किया।

अब अगर हम चार सौ वर्ष पीछे मुडकर ठहरें, देखें और सोचें, तो पाएगे कि अगर राव जैसा भी मुगल दिल्ली दरबार म चल जाते तो आज भारत की सीमा सिन्धु नदी के पूर्वी किनारे तक होती, इधर मकरान और ब्यास नदी के पूर्व के प्रदेश भारत में होते।

राव जैसा के केवल एक पुत्र काना थे, वह इनकी मृत्यु के समय मुलतान में बन्दी थे। इनके पहले पूगल के राव शेखा, सन् 1469 ई में, मुलतान द्वारा बन्दी बनाए गए थे। राव काना की अनुपस्थिति में पूगल की राजगद्दी पर पूगल के राया का प्रतीक चिह्न राव केलण का खांडा रखा गया।

राव जैसा की मृत्यु के बाद में पूगल की जनता और प्रजा ने अपनी परम्परागत एकता बनाए रखी। खानों और प्रधानों ने अपना कर्तव्य निभाया वह जागरूक, सतर्क और सावधान रहे, ताकि कोई अन्य सिरफिरा स्थिति का लाभ नहीं उठा सके।

पूगल के वरिष्ठ खान, प्रधान और केलण, जैसलमेर के रावल भीम के पास गए, उन्हें राव काना की मुक्ति में हस्तक्षेप करने का निवेदन किया। रावल हरराज की पुत्री और रावल भीम की बहन नाथी बाई बादशाह अकबर को ब्याही हुई थी। रावल भीम के आग्रह पर अकबर ने राव काना को शीघ्र मुक्त करने के आदेश अपने अधीनस्थ मुलतान के शासक को भेजे। उन्होंने प्रान्तीय अधिकारियों को यह भी आदेश दिए कि भविष्य में पूगल राज्य म हस्तक्षेप नहीं करें। इन आदेशों के फलस्वरूप राव काना को मुलतान से छोड़ा गया। साथ ही पूगल और मुलतान की स्पष्ट सीमाएं निर्धारित की गईं। इसी प्रकार सन् 1469 ई मे जब राव शेखा को मुल्तान से छोड़ा गया था, तब भी दोनों राज्यों की सीमाएं निर्धारित की गई थी। सन् 1587 ई में तय की गई सीमाएं सन् 1763 ई तक यथावत रही। इसके बाद में यही सीमाएं मुलतान और बहावलपुर राज्य के बीच की सीमा हो गई।

अध्याय–सोलह

राव काना
सन् 1587-1600 ई.

राव जैसा के सन् 1587 ई मे मरोठ मे मारे जाने के समय, उनके एक मात्र पुत्र, राजकुमार काना मुलतान मे बन्दी थे। इनके छूटने तक राव का खाडा इनके प्रतीकस्वरूप राजगद्दी पर रखा रहा। राव काना को छुडाने मे जैसलमेर के रावल भीम का प्रमुख योगदान रहा। बीकानेर के राजा रायसिंह ने भी इस प्रकरण मे सहयोग दिया। राव काना की पुत्री जसकवर की सगाई राजा रायसिंह के ज्येष्ठ पुत्र, राजकुमार भोपत (या भोपाल) से हुई थी। इन पारिवारिक सम्बन्धो को ध्यान मे रखते हुए रावल भीम के आग्रह पर बादशाह अकबर ने राव काना की रिहाई के आदेश दिए। काना मुलतान से आ कर सन् 1587 ई. मे पूगल की राजगद्दी पर बैठे और उनका विधिवत राजतिलक किया गया। इन्होंने सन् 1600 ई तक राज्य किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
रावल भीम, सन् 1577-1618 ई	राजा रायसिंह, सन् 1571-1612 ई.	1 राव चन्द्रसेन, सन् 1562-1581 ई 2. मोटा राजा उदयसिंह, सन् 1581-1595 ई. 3 राजा सूरसिंह, सन् 1595-1620 ई	बादशाह अकबर, सन् 1556-1605 ई.

बीकानेर के राजा रायसिंह के बादशाह अकबर के साथ घनिष्ठ पारिवारिक सम्बन्ध थे और इन्होंने अनेक युद्धों मे अपनी वीरता और युद्ध-कौशल का परिचय दिया था। इन कारणो से अकबर ने राजा रायसिंह को निम्नलिखित परगने जागीर में दिए :

बीकानेर, हिसार, अजमेर (द्रोणपुर), सिद्धमुख, वासनलिन, भटनेर (हिसार–सरकार), मरोठ (मुलतान सरकार), सूरत (जूनागढ मय 47 परगने)।

इस प्रकार भटनेर और मरोठ के परगने राजकीय स्तर पर राजा रायसिंह को दिए गए थे। भटनेर इससे पहले से राठौडों के अधिकार में ही था। मरोठ कभी भी मुलतान

(दिल्ली) या बीकानेर के अधिकार मे नही रहा, यह सदैव सन् 1650 ई तक, पूगल के स्वतन्त्र राज्य का भाग रहा और बाद मे सन् 1763 ई तक यह नवस्थापित देरावर राज्य के प्रशासन के नियन्त्रण म रहा। इसका प्रमाण यह था कि मरोठ का परगना बीकानेर को मिलने के बाद मे भी उन्होंने इसे पूगल से अपने अधिकार मे लेने के प्रयास नही किए। और न ही उन्होने कभी अपने थानेदार या पटवारी इस क्षेत्र की सुरक्षा करने के लिए और राजस्व वसूली के लिए भेजे। क्योंकि राजा रायसिंह को मालूम था कि चाहे केन्द्रीय अभिलेखो मे यह परगना उन्हें दिया गया था, परन्तु वास्तव मे यह पूगल के राज्य के अधीन था, इसलिए इसे लेने के इनके प्रयासो का पूगल विरोध करेगा। उनके राजकुमार भोपत की सगाई पूगल हुई थी, इसलिए उन्होंने चुप रहने की नीति अपना कर ठीक किया।

जोधपुर के राव चन्द्रसेन, जिनका विवाह पूगल के राव जैसा की पुत्री परमलदे से हुआ था, को सन् 1578 ई मे बादशाह अकबर ने राजगद्दी से अपदस्थ करके, उनके बडे भाई मोटा राजा उदयसिंह को शासक बनाया। बीकमपुर के राव दुर्जनसाल की दो पुत्रियो, हर कवर और पोपावती, का विवाह भी मोटा राजा उदयसिंह से हुआ था। मोटा राजा उदयसिंह की बेटी मान बाई का विवाह, सन् 1587 ई म, शहजादा सलीम (जहागीर) से हुआ था। यह मान बाई, जिन्हें बाद मे जोधपुर की होने के कारण जोधा बाई कहा गया, बादशाह शाहजहा का माता थी। सन् 1595 ई मे राजा सूरसिंह जोधपुर के शासक बने। मोटा राजा उदयसिंह के यह ज्येष्ठ पुत्र नही होते हुए भी इन्हें बादशाह ने जोधपुर के शासक की मान्यता दी। राजा सूरसिंह का विवाह मूमनवाहन के गोविन्ददास भाटी की पुत्री सुजानदे से हुआ था। इस प्रकार दिल्ली, जैसलमेर, जोधपुर, बीकमपुर और मूमनवाहन के आपसी वैवाहिक सबध होने से इस क्षेत्र मे शान्ति रही, जिससे आर्थिक स्थिति मे बहुत सुधार हुआ। पूगल राज्य की सीमा पश्चिम म मुलतान से और पूर्व और दक्षिण मे बीकानेर, जोधपुर राज्यों की सीमाओ के साथ लगने से शान्ति रही। राव काना पूगल का राज्य सुख से भोगते रहे।

राव काना की पुत्री जसकवर की सगाई राजा रायसिंह के ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार भोपत से हुई थी। राजकुमार भोपत की राजकुमारी जसकवर के साथ विवाह होने से पहले ही दिल्ली मे मृत्यु हो गई थी। राजा रायसिंह के पांच रानिया थी। बडी रानी जसवन्त कवर, उदयपुर के महाराणा उदयसिंह की पुत्री थी इनके बडे राजकुमार भोपत थे और छोटे दलपतसिंह। भोपत चेचक की बीमारी से ग्रस्त थे। कहते हैं कि लक्ष्मण नाई ने इन्हें दवा के साथ जहर पिला दिया था, जिससे इनकी मृत्यु हो गई। यह चेचक से इतनी बुरी तरह ग्रस्त थे कि इनकी रजाई इनके शरीर स चिपक गई थी। इसलिए अचला मेहता के कहने से इनका दाह सस्कार रजाई समेत कर दिया गया। राजकुमार भोपत के चार पत्निया और भी थीं। राजा रायसिंह के बाद मे रानी जसवन्त कवर के दूसरे पुत्र दलपतसिंह राजा बने। राजा रायसिंह की दूसरी रानी, गगा देवी, जैसलमेर के रावल हरराज की पुत्री थी। रानी गगा देवी के पुत्र सूरसिंह बाद मे दलपत सिंह के स्थान पर बीकानेर के राजा बने।

जसकवर मन ही मन राजकुमार भोपत को अपना पति मान बैठी थी। उस समय की मान्यताओ के अनुसार लडकी की सगाई विवाह करने के समान ही होती थी। राजकुमार की

मृत्यु का समाचार सुनकर वह सकते मे आ गई। अभी वह कुआरी थी, भूपत से केवल सगाई हुई थी, शादी नही हुई थी। राजकुमारी जसकवर बीकानेर आ कर राजकुमार भोपतसिंह के पीछे सन् 1587 ई मे सती हो गई। पावलेट के सन् 1874 ई के बीकानेर गजिटियर के अनुसार सती जसकवर की स्मृति म बीकानेर मे प्रत्येक दशमी को 'दशमी का मेला' नाम से मेला भरा करता था।

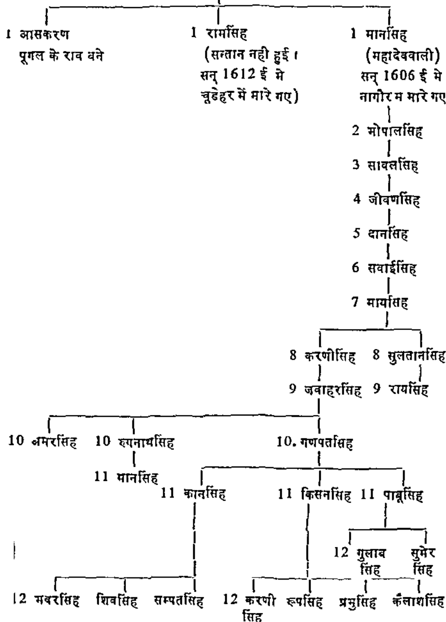
सन् 1413 ई मे मोहिल राजकुमारी कोडमदे सती हुई थी, क्योकि उसने पूगल के राजकुमार शार्दूल को अपना वर चुनकर उनसे विवाह किया था, दूसरी पूगल की राजकुमारी जसकवर, राजकुमार भोपत को वर मानकर, स्वेच्छा से सन् 1587 ई मे सती हुई थी। एक पूगल की युवरानी थी, दूसरी पूगल की राजकुमारी। दोनो के सती होने मे 175 वर्षों का अन्तर था। राव काना ने अपनी बेटी को सती नही होने के लिए समझाया। कुमारी की सगाई होना विवाह के समान तभी सार्थक मानी जाती थी तब तक वर जीवित हो। अब राजकुमार भोपत की असमय मृत्यु हो जाने से उसका अन्यत्र विवाह होने मे कोई सामाजिक बाधा नही थी। परन्तु जसकवर ने आत्मा के एक होने को महत्व दिया, उनके लिए शारीरिक सम्पर्क महत्वहीन था। यह एक आत्मिक सुख था, जिसे देवगति से ही प्राप्त किया जा सकता था। दूसरा शारीरिक मानव सुख क्षणिक था, जिसे पशु भी प्राप्त करते थे। पिता को यह उपदेश दे कर, वह बीकानेर जाकर अपने भावी ससुराल मे सती हुई, पीहर पूगल मे नही हुई। उसने कहा :

'कुआरी बैठ आंगन मे, करसू कुल मे नाम।
तारू पीहर सासरो, तारू पूगल नाम॥

युवरानी कोडमदे के समान, जिसने बारी बारी से अपने दोनो हाथ स्वेच्छा से काट-कर पीहर और ससुराल भेजे थे, दूसरा उदाहरण भारत के इतिहास मे नही था, इसी तरह कुवारी जसकवर जैसा दूसरा उदाहरण भी भारत के इतिहास मे नही होगा, जब एक कुवारी कन्या अपने ऐसे मगेतर के साथ सती हो गई जिसे उसने कभी जीवित या मृत अपनी आखो से देखा तक नही था। इन दोनो सतियो का बलिदान चिरस्मरणीय रहेगा।

बीकानेर का वर्तमान किला, जूनागढ, राजा रायसिंह ने सन् 1589-1593 ई मे बनवाया था। यह दीवान करमचन्द की देखरेख में सम्वत् 1650 मे पूर्ण हुआ था। बीकानेर का पहला किला राती घाटी मे सन् 1485 ई मे बना था, दूसरा किला लगभग एक सौ वर्ष बाद मे बना।

राव काना एक शान्तिप्रिय एव दूरदर्शी शासक थे। वह अपने चारो तरफ के माहौल से अनभिज्ञ नही थे, परन्तु राव जैसा की तरह उन्होने इससे दूर रहकर अपने वश की इज्जत आबरू को दाग नही लगने दिया। पूगल की चद्दर अभी तक साफ सफेद थी, ऐसी चद्दर को दाग जल्दी पकडता है, वह ज्यादा दिखता है, और फिर कभी साफ भी नहीं होता। वह पूगल मे रह कर दशहरा और अन्य त्योहार उत्साहपूर्वक मनाते थे। उनके समय मे पश्चिमी सीमा पर शान्ति रही परन्तु इसका श्रेय राव काना को नही था। बादशाह अकबर के शासनकाल के उत्तरार्द्ध मे सारे भारत मे शान्ति और समृद्धि का वातावरण था। उनका नियन्त्रण और अनुशासन उनकी शक्ति के कारण इतना कठोर था कि कोई भी प्रजा को तग



करने का या उनके विरुद्ध विद्रोह करने का साहस नही कर सकता था। ऐसे सुन्दर वातावरण की पड़ोसी छाया मे, स्वतन्त्र होते हुए भी, पूगल और राव काना सुख की सांस ले रहे थे। उन्होंने अपने आप को पूगल के खोल मे ढक लिया, उनकी बला से दूर के राज्यों या साम्राज्य मे क्या कुछ हो रहा था, उन्हे कोई लेना देना नही था। अकबर भी महान् शासक था, उसने

छोटे छोटे कोनो मे पड़े हुए स्वतन्त्र राज्यो को नही छेड़ा। उनसे उसकी शक्ति को कोई चुनौती नही थी, उसने सोचा ऐसे राज्य अपनी मौत स्वय मर जायेंगे। पूगल ऐसी ही श्रेणी का राज्य था।

राव काना का 13 वर्ष राज्य करने के पश्चात् सन् 1600 ई मे पूगल मे देहान्त हो गया।

इनके तीन पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार आसकरण इनकी जगह पूगल के राव बने। रामसिह और मानसिह दो छोटे कुमार और थे। इन्हे राव काना ने अपने समय मे जागीरें नही दी थी, यह कार्य उन्होने इनके बड़े भाई राजकुमार आसकरण पर छोड दिया था। दुर्भाग्यवश, कुमार मानसिह सन् 1606 ई. के नागौर के युद्ध मे काम आ गए, और कुमार रामसिह सन् 1612 ई के चुडेहर के युद्ध मे काम मे आ गए। रामसिह के सन्तान नही थी, इसलिए इन्हे जागीर देने का प्रश्न स्वत ही समाप्त हो गया। मानसिह के वशजों को महादेववाली गांव की जागीर दी गई।

अध्याय–सतरह

राव आसकरण
सन् 1600-1625 ई.

राव काना की सन् 1600 ई मे मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र आसकरण पूगल के राव बने। इन्होने सन् 1625 ई तक राज्य किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे .

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1. रावल भीम, सन् 1577-1612 ई	1 राजा रायसिंह, सन् 1571 1612 ई	1 राजा सूरसिंह, सन् 1595-1620 ई	1 बादशाह अकबर, सन् 1556-1605 ई
2 रावल कल्याणदास, सन् 1612-1631 ई	2. राजा दलपतसिंह, सन् 1612-1614 ई	2 राजा गजसिंह, सन् 1620-1638 ई	2 बादशाह जहांगीर, सन् 1605-1627 ई
	3 राजा सूरसिंह, सन् 1614-1631 ई		

राव आसकरण को एक शान्तिप्रिय और सुव्यवस्थित राज्य मिला। इनके पश्चिम मे ऐसे कोई शत्रु नही थे जो इन पर आक्रमण करना चाहते हों, पूर्व मे बीकानेर के राजा रायसिंह की पूगल से मित्रता थी, इसलिए उनसे लडाई झगडे का कोई अदेशा नही था। इनके जैसलमेर के रावल भीम के साथ और बाद मे रावल कल्याणदास के साथ मे स्नेहपूर्ण अच्छे भाईचारे के सम्बन्ध थे। रावल भीम के दिल्ली शासन से गहरे सबध होने से उनका वहा अच्छा प्रभाव था। इसलिए पूगल को मुलतान से कोई खतरा नही था।

बीकानेर के राजकुमार दलपतसिंह के अपने पिता राजा रायसिंह के साथ सबध अच्छे नही थे। वह न केवल अपने पिता के प्रति विद्रोही और अनुशासनहीन थे, उनका व्यवहार दिल्ली के शासको के प्रति भी ऐसा ही था। राजा रायसिंह के कारण दिल्ली दरबार इनके प्रति सहनशील था। उन्होने अपनी भटियाणी रानी गगा बाई के कहने से इन्हे समझाने और शान्त रखने के प्रयास किए, क्योंकि उनके प्रति अपने पुत्र के ऐसे उद्दण्ड व्यवहार से दिल्ली के दरबार मे उनकी उच्च प्रतिष्ठा को ठेस पहुचती थी। परन्तु जब दलपतसिंह किसी प्रकार से समझाने बुझाने पर भी ठीक रास्ते पर नही आए, तब राजा रायसिंह ने उन्हे दण्ड देने की सोची। उन्होने राव आसकरण को साथ लेकर राजकुमार पर सन् 1606 ई मे नागौर मे आक्रमण किया। इस युद्ध में राव आसकरण के छोटे भाई मानसिंह काम आए। राजा रायसिंह का साथ देकर राव आसकरण ने अच्छा किया, क्योंकि राव काना की रिहाई

मे इन्होने सहायता की थी और इनकी बहन जसकवर इनके पुत्र राजकुमार भोपत के साथ सती हुई थी। राजा रायसिंह ने विद्रोही और उद्दण्ड पुत्र को दण्ड देकर ठीक किया।

मूमनवाहन के जोगीदास केलण भाटी को मारवाड के राजा सूरसिंह ने उनकी राजोद की जागीर के अलावा बीझवारिया, चन्द्रिया, रावल वास और सुरलाणा, चार गाव दिए थे। राजा सूरसिंह का विवाह मूमनवाहन के गोविन्ददास की पुत्री सुजानदे से हुआ था। इन केलण भाटियो का मारवाड के शासको पर अच्छा प्रभाव था क्योंकि इन्होने मारवाड को अपनी महत्वपूर्ण सेवाए दी थी। मूमनवाहन के जगमाल के पुत्र रुगनाथ भाटी को सन् 1610 ई मे मारवाड मे जागीर मिली। दौलताबाद के सन् 1634 ई के युद्ध मे राजा गजसिंह के साथ मे रुगनाथ भाटी, इनके भाई जगन्नाथ भाटी और पुत्र, अचला और हरनाथ वहा गए थे। यह चारो उस युद्ध मे काम आए। इसके बाद म जगमाल के वशजो ने स्थाई तौर पर मूमनवाहन छोड दिया, वह मारवाड मे अपने शौर्य से प्राप्त जागीरो म बस गए।

राव आसकरण ने अपनी पुत्री राणादे (या रत्नावती) का विवाह बीकानेर के राजा सूरसिंह के साथ किया, दूसरी पुत्री रतन कवर का विवाह आमेर के राजकुमार माहसिंह के साथ किया। माहसिंह, राजकुमार जगतसिंह के पुत्र और प्रसिद्ध राजा मानसिंह के पौत्र थे। यह विवाह सन् 1610–12 ई मे हुए थे। कुछ इतिहासकारो का मत है कि मिर्जा राजा जयसिंह, रतन कवर के पुत्र थे। यह सही नहीं है।

राजा रायसिंह का देहान्त सन् 1612 ई म हो गया। उनके बाद मे राजकुमार दलपतसिंह बीकानेर के राजा बने। यह राव आसकरण के प्रति शत्रुता की भावना रखते थे क्योकि इन्होंने सन् 1606 मे नागौर के युद्ध मे राजा रायसिंह का साथ दिया था। इन्होने भाटियो को युद्ध के लिए उकसाने की नीयत से और उनसे बदला लेने की भावना से, पूगल राज्य के क्षेत्र मे, चुडेहर (वर्तमान अनूपगढ) के पास एक किले का निर्माण करवाना शुरू कर दिया। वह पूगल को बीकानेर के अधीन करने का विचार रखते थे। भाटिया के तीन सौ आदमियो ने इस किले के बनाये जाने का विरोध किया। इनम भाटियो के साथ जोइया भी थे। खारबारा के बिहारीदास और रायमलवाली के ठाकुर जगरूपसिंह किसनावत भाटियो ने इनका नेतृत्व किया। जैसे ही राजा दलपतसिंह के आदमी नीव खोदकर कुछ निर्माण कार्य करवाते, उसे भाटी धावा बोलकर ध्वस्त कर देते थे। यह निर्माण कराने का और ध्वस्त करने का कार्यक्रम कई दिनो तक चलता रहा। किसनावत भाटियो की सहायता के लिए राव आसकरण ने सेना देकर अपने भाई रामसिंह को पूगल से चुडेहर भेजा। वह सन् 1612 ई मे चुडेहर मे मारे गए। इसके बाद मे राजा दलपतसिंह के आदमी वहां से परेशान हो कर किले का काम छोडकर बीकानेर लौट गए। लेकिन यह चुडेहर का विवाद ऐसा चला कि अगली कई पीढ़ियो तक चलता रहा, आखिर इस स्थान पर सन् 1678 ई मे वर्तमान अनूपगढ़ का किला बनाकर ही महाराजा अनूपसिंह ने चैन लिया।

सन् 1613 ई म राजा दलपतसिंह को दिल्ली के सूबेदार ने अजमेर के किले मे बन्दी बना लिया था। इनके स्थान पर बादशाह जहांगीर ने इनके छोटे भाई सूरसिंह को बीकानेर का राज्य दिया। इस अस्थिर अवस्था का लाभ उठाकर सन् 1614 ई म हयात खां भाटी

ने भटनेर के किले पर अधिकार कर लिया। उस समय भटनेर का किला राजा दलपतसिंह के अधिकार मे था, जहां उनकी छ. रानिया निवास कर रही थी। हयात खा भाटी ने उन्हे वही रहने दिया। कुछ समय बाद मे राजा दलपतसिंह अजमेर के बन्दीगृह से चापावत हठीसिंह गोपालदासोत की सहायता से छूटने के प्रयास मे मारे गए। उनकी छहो रानियां, भाटियो की सहमति से, भटनेर के किले मे उनकी पाग के साथ सती हुईं। इन सतियों की देवलिया अब भी भटनेर किले मे हैं, इन्हे राजा सूरसिंह ने बनवाई थीं।

राजा सूरसिंह का एक विवाह राव आसकरण की पुत्री राणादे (रत्नावती) के साथ सन् 1612 ई. मे हुआ था और इनका दूसरा विवाह खारबारे के ठाकुर तेजमाल भाटी की पुत्री रगदे के साथ हुआ। भाटियो के साथ इन सम्बन्धो को ध्यान मे रखते हुए राजा सूरसिंह ने हयात खां भाटी मे भटनेर का किला वापिस लेने के लिए कोई कार्यवाही नही की। भाटियो का भटनेर मे स्वतन्त्र राज्य सन् 1730 ई. तक रहा।

दयालदास और उसके पश्चात् पावलेट ने लिखा है कि खारबारा के ठाकुर तेजमाल ने राजा रायसिंह को उनकी मृत्युशय्या पर वचन दिया था कि वह उनके समस्त विद्रोहियो को उनके समक्ष क्षमा के लिए बुलायेंगे। वास्तव मे ठाकुर तेजमाल, राजा रायसिंह का उनके पुत्र दलपतसिंह के विरुद्ध साथ देकर, अपने जवाई सूरसिंह को बीकानेर का राजा बनाने की भूमिका बना रहे थे। कहते हैं कि ठाकुर तेजमाल स्वयं दलपतसिंह के दीवान करमचन्द बछावत, उनके सलाहकार मानमहेश पुरोहित व चौथदान बारहठ के साथ राजा रायसिंह के विरुद्ध षड्यन्त्र मे शामिल थे। उन्होने इस पर लीपापोती करने के लिए ही अपनी पुत्री का विवाह भी राजा सूरसिंह के साथ किया था। जब यह सारा भेद खुल गया तब राजा सूरसिंह ने अपने ससुर तेजमाल को और बछावत के बेटो को मरवा दिया और अन्यो की जागीरें जब्त कर ली। लेकिन जी. एच ओझा ने 'बीकानेर का इतिहास' भाग एक मे तेजमाल के मारे जाने का नही लिखा है।

दयालदास का यह भी कथन है कि राजा सूरसिंह ने जयमलसर के सांईदास को 'रावत' की पदवी दी। वास्तव मे रावत खेमाल के पौत्र (करणसिंह के पुत्र) अमरसिंह को राव हरा ने 'रावत' की पदवी सन् 1543 ई. मे दी थी और उन्हे बरसलपुर से अलग जयमलसर की जागीर दी। केवल यही नही, रावत साईदास राजा रायसिंह के साथ सन् 1573 ई. मे गुजरात के युद्ध मे गये थे और वह वहा मारे गए थे। इसलिए रावत सांईदास जब राजा सूरसिंह (सन् 1614-1631 ई) के शासनकाल मे जीवित ही नही थे, तब उन्हें इनके द्वारा पदवी दिए जाने का प्रश्न नही था।

सन् 1625 ई. मे कई वर्षो के अन्तराल से लंगाओ और समा बलोचो ने पूगल पर पश्चिमी सीमा से आक्रमण किया। राव आसकरण इनसे अपने राज्य की सुरक्षा के लिए युद्ध करते हुए सन् 1625 ई. मे मारे गए। इनके साथ बरसलपुर के पाचवें राव नेतसिंह और सुमान खा उत्तेराव ने भी वीरगति पाई। पन्द्रह अन्य हिन्दू और मुसलमान राजपूत भी इस युद्ध मे मारे गए थे। राव आसकरण और राव नेतसिंह की मृत्यु का बदला बीकमपुर के तीसरे राव उदयसिंह ने समा बलोच को मारकर लिया। उस समय राव जगदेव (सन् 1625-50 ई, राव आसकरण के पुत्र) पूगल के राव थे। राव उदयसिंह, राव डूगरसिंह के पुत्र और राव दुर्जनसाल के पौत्र थे।

राव आसकरण एक समझदार और योग्य शासक थे। इनके समय मे पूगल की प्रजा की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। पिछले चालीस वर्षो से सीमा पर शान्ति रहने से जनता सुखी थी। अकबर और जहांगीर के शासनकाल मे अराजकता नही थी और लूट खसोट की घटनाए कम होती थीं। पूगल के आमेर, जोधपुर और बीकानेर से वैवाहिक सम्बन्ध होने से इनकी आपस मे शत्रुता नही थी। केवल सन् 1612 ई मे राजा दलपतसिंह ने चुडेहर का किला बनवाना शुरू करके शान्ति भग की थी। हमे गर्व है कि राव आसकरण और इनके दोनो छोटे भाई, रामसिंह (सन् 1612 ई) और मानसिंह (सन् 1606 ई) युद्ध के मैदान म लडते हुए मारे गए। इनके बीकानेर के राजा सूरसिंह के साथ मधुर सम्बन्ध थे। यह भी गर्व की बात है कि बीकमपुर के राव ने पूगल और बरसलपुर के रावो की मृत्यु का बदला तुरन्त ले लिया, इसे ज्यादा समय तक उधार मे नही रहने दिया।

भटनेर के हयात खा केलण भाटी पर भी हमे गर्व है कि उन्होने लगभग अस्सी वर्षो के अन्तराल के बाद मे वहा सन् 1614 ई म भाटियो का स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया।

राव आसकरण के देहान्त के समय अन्य स्थानो के अलावा केलण भाटी, बीकमपुर, बरसलपुर, जयमलसर, खारबारा, राणेर, बीठनोक, खीदासर, मूमनवाहन और भटनेर, मे थे। मरोठ, देरावर, बीजनोत, पूगल के सीधे प्रशासन मे थे।

राव आसकरण के पाच पुत्र, राजकुमार जगदेव, गोविन्ददास, केसोदास, सुलतानसिंह (सुरतानसिंह) और किसनसिंह थे। राजकुमार जगदेव पूगल के राव बने।

राव आसकरण ने अपने पुत्रो गोविन्ददास व केसोदास को लाखुसर, मय बेरिया और बेरा गांवो की जागीर दी। उन्होंने कुमार सुलतानसिंह और किसनसिंह को राजासर, बालासर एव अमारण जागीर मे दिए। इन तीनों भाइयो की सन्तानें अब भी इन गावो मे शान स आबाद हैं। इनका वर्णन अलग से दिया जा रहा है।

परिशिष्ट—क

पूगल के राव	राजासर के ठाकुर	राजासर के ठाकुर	राजासर के ठाकुर	लाखूसर के ठाकुर		कालासर के ठाकुर	
						10 राव आसकरण	
10 राव आसकरण	—	—	—	—			
11 राव जगदेवसिंह	सुलतानसिंह	सुलतानसिंह	किसनसिंह	गोविन्ददासजी		सुलतानसिंह	
12 राव सुदरसेन	तैजमालसिंह	तेजमालसिंह	वीरमानसिंह	प्रतापसिंह		सबलसिंह	
13 राव गणेशदास	जोधसिंह	धनराजजी	गिरधरदास	पूरनसिंह		फतेहसिंह	
14 राव बिजयसिंह	जोरावरसिंह	अभयसिंह	सरूपसिंह	मूलसिंह		गजसिंह	
15 राव दलकरण	थानसिंह	हरिसिंह	जूझारसिंह	सावतसिंह		हिन्दूसिंह	
16 राव अमरसिंह	रामसिंह	दौलतसिंह	सुमेरसिंह	मेघसिंह		उमेदसिंह	
राव उज्जीणसिंह	उज्जीणसिंह	सहिसिंह	अजीतसिंह	बीझराजसिंह		अमरसिंह	अमरसिंह
17 राव अभयसिंह	भैरूसिंह	करणीदानसिंह	गुरदारसिंह	रिडमलसिंह	भाई{	हठीसिंह	मालमसिंह
18 राव रामसिंह	शिवदानसिंह	दलपतसिंह	चिमनसिंह	जसवन्तसिंह		मदनसिंह	लिछमणसिंह
राव सादूलसिंह	खुमानसिंह	शिवदानसिंह	मेघसिंह	हणुन्तसिंह		शिवजीसिंह	बागसिंह
19 राव रणजीतसिंह	किशोरसिंह	तख्तसिंह	बनेसिंह	अर्जुनसिंह	पुत्र हठीसिंह मदनसिंह के गोद आए		
20 राव करणीसिंह	महेन्द्रसिंह	भैरूसिंह	कु भवरसिंह			पृथ्वीसिंह	आईदानसिंह
21 राव रुघनाथसिंह		कु रविराजसिंह				आसूसिंह	नानसिंह
22 राव मेहताबसिंह						भैरूसिंह	
23 राव जीवराजसिंह						(मौजूदा)	
24 राव देवीसिंह							
25 राव सगतसिंह							
26 राजकुमार राहुलसिंह							

कालासर परिवार

कालासर गाव के ठाकुर शिवजी सिंह के बडे पुत्र पृथ्वीसिंह उनके बाद मे गांव के ठाकुर बने, इनके छोटे पुत्र मुकनसिंह लूणकरणसर (सर) के साहूकारो के विश्वासपात्र थे और उनके यहा दिशावर मे सेवा करते थे। ठाकुर मुकनसिंह और उनके पौत्र बिशालसिंह अनेक वर्षो तक आसाम, मेघालय, कालिमपोंग मे रहे, और अपनी निष्ठा और ईमानदारी सदैव बनाए रखी। बिशालसिंह के पुत्र गगासिंह भी परिश्रमी और योग्य हैं। यह गाव मे ही रह रहे हैं। ठाकुर मुकनसिंह के पौत्र मानसिंह व ईसरसिंह शस्त्र सेना मे सेवा कर रहे हैं।

ठाकुर पृथ्वीसिंह के तीन पुत्र, आसूसिंह, पेमसिंह और चन्द्रसिंह थे। इन तीनो भाइयो का देहान्त हो चुका है। ठाकुर पृथ्वीसिंह के बाद मे आसूसिंह गाव के ठाकुर बने, इनके समय मे जागीरें समाप्त हो गई थी। ठाकुर आसूसिंह एक परिश्रमी काश्तकार ठाकुर थे, यह खेती और कारत करने मे जाट काश्तकारो से कम परिश्रमी नही थे। यह मेहनत की कमाई मे अधिक विश्वास रखते थे, इनमे ठाकुरो वाला अहकार नही था। गाव के सभी लोग इनका आदर करते थे। इनके पुत्र भैंरूसिंह भी अपने पिता की तरह परिश्रमी हैं, अच्छे काश्तकार हैं। इनकी गाव में और भाटी समाज मे अच्छी प्रतिष्ठा और पहचान है। भैंरूसिंह के एक छोटे भाई दुर्जनसिंह पहले सेना मे थे, वह दूसरे विश्व युद्ध मे ईरान-ईराक़ भी गए थे। फिर यह बिजलीघर, राष्ट्रीय कैडेट कोर, पोलिटैकनिक और उरमूल डेयरी मे कार्य करते रहे। अब यह सेवानिवृत्त हो कर बीकानेर मे रह रहे है।

ठाकुर पृथ्वीसिंह के दूसरे पुत्र पेमसिंह थे। यह मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके बीकानेर राज्य की सेना मे जमादार के पद पर लगे। अपनी योग्यता के कारण यह तरक्की पाते रहे और दूसरे विश्व युद्ध से पहले कैप्टिन बन गए थे। पहले यह गगा रिसाले मे थे और बाद मे सादूल लाइट इन्फैन्ट्री मे आ गए। यह दूसरे विश्व युद्ध मे अपनी इन्फैन्ट्री के साथ फैजाबाद, क्वेटा, चमन मे मेजर के पद पर रहे। फिर यह अपनी इन्फैन्ट्री के साथ ईरान ईराक गए, वहा तेल शोधक कारखानो और तेल की पाइप लाइनो की सुरक्षा की देख-भाल करते थे। यह लगभग पाच वर्ष भारत से बाहर रहे, वहा अनेक वर्षो तक अपनी युनिट को कमान्ड भी किया। सन् 1945 ई. मे यह वापिस भारत लौटे। सन् 1947 ई के हिन्दू-मुस्लिम दगों के समय इन्होने बीकानेर के मुसलमान बन्धुओ को सुरक्षा का व्यक्तिगत आश्वासन दे कर उन्हें पाकिस्तान जाने से रोका। आज भी बीकानेर के अनेक पुराने मुसलमान उन्हें श्रद्धा और स्नेह से याद करते हैं और उनके प्रति भारत मे सपरिवार बसे रहने के लिए आभार व्यक्त करते हैं। सन् 1950 ई तक यह गगानगर मे सीमा के सैक्टर कमान्डर रहे थे और वहीं से मेजर के पद से सेवानिवृत्त हुए। इनका देहान्त 7 अगस्त, सन्

1975 ई मे बीकानेर म हुआ। यह कठोर अनुशासन वाले परन्तु सरल प्रकृति मे उदार स्वभाव वाले व्यक्ति थे। इनके बीकानेर स्थित निवास पर पाच सात व्यक्ति हमेशा बाहर से आए हुए रहते थे।

इनके पास पाच मुरब्बे सिंचित जमीन श्री विजयनगर के पास चक 45 जी बी. मे थी, अब भी है। एक मुरब्बा बाद म खरीदा था। इनके छ पुत्र हैं, सभी स्नातक, अभियन्ता, चिकित्सक हैं, तीन सेना मे अधिकारी हैं। एक समय, सन् 1955 ई से पहले, इनके छहो पुत्रो की उच्च शिक्षा का व्यय एक साथ पडने से और परिवार का खर्चा पुराने तरीके से रहने से, यह गम्भीर आर्थिक सकट मे आ गए थे। किन्तु इन्होने अपनी पैठ नही खोई, धैर्य और सन्तुलन रखा जिससे यह शीघ्र ही सकट से उबर गए। इन्होने अपने पुत्रो की शादिया बीकानेर के चुने हुए प्रतिष्ठित परिवारों मे बडे ठाट बाट और ठरके से की।

इनका पहला विवाह भेलू गाव के रूपावत ठाकुर पेमसिंह की पुत्री केसर कवर से हुआ था। इनके पुत्र हरिसिंह, दो दिसम्बर, सन् 1932 ई को भेलू मे जनमे। केसर कवर का देहान्त सन् 1933 ई मे हो गया। हरिसिंह को इनकी नानी ने पाल-पोस कर बडा किया। अगले वर्ष इनका दूसरा विवाह सार्दूसर गाव मे पोकरसिंह रूपावत की पुत्री सुगन कवर से हुआ, अब यह परिवार भेलू गाव म आबाद है। सुगन कवर के पाच पुत्र हैं, सुमेरसिंह, नवलसिंह, हुकमसिंह, उदयसिंह और ओकारसिंह, एक पुत्री अनोप कंवर बाल्यकाल मे ही चल बसी थी।

हरिसिंह भाटी राजस्थान राज्य के सिंचाई विभाग मे अधीक्षण अभियन्ता के पद पर कार्यरत हैं, यह सिविल इन्जिनियरिंग मे स्नातक हैं। इनका विवाह कर्नल राजूसिंह मारनोत, गाव कातर, की पुत्री रतन कवर से हुआ। इनके एक पुत्र दलीपसिंह और दो पुत्रियाँ, इन्दु और मीना हैं। दलीपसिंह का विवाह पन्नीवाली (हनुमानगढ) के ठाकुर चन्द्रसिंह बणीरोत की पुत्री से हुआ। इन्दु का विवाह कसारी गाव (जायल) के ठाकुर गगासिंह चाम्पावत के पुत्र नारायणसिंह स हुआ। ठाकुर गगासिंह भूतपूर्व विधायक और एडवोकेट हैं। मीना का विवाह नगली गाव (झुझनू) के डाक्टर जब्बर सिंह शेखावत (सालेदीसिंह के) के पुत्र भवर नरेन्द्रसिंह से हुआ। डाक्टर जब्बरसिंह पशु चिकित्सक हैं और नरेन्द्रसिंह बैंक मे अधिकारी हैं। इन्दु के एक पुत्री सुमन और एक पुत्र लोकेन्द्र हैं, मीना के एक पुत्र हर्षवर्धन है। दलीप सिंह के दो पुत्र, लक्ष्मन और त्रिभुवन हैं।

सुमेरसिंह भाटी राज्य के कृषि विभाग मे अधीक्षण अभियन्ता के पद पर कार्यरत हैं। यह अग्रीकल्चर इन्जिनियरिंग मे स्नातक हैं। इनका विवाह कर्नल रेवन्तसिंह बणीरोत, गाव मोवनसर (सरदारशहर), की पुत्री सुशील कवर से हुआ। इनके दो पुत्र, ऋषिराज सिंह और घनश्यामसिंह, हैं। दो पुत्रिया, देव कवर और अन्जु हैं। ऋषिराजसिंह भारतीय सेना मे ई एम ई मे कैप्टिन के पद पर हैं, इनका विवाह इन्द्रपुरागाव के नाहरसिंह शेखावत (सेवानिवृत्त अधीक्षण अभियन्ता) की पुत्री से हुआ, इनके एक पुत्री रिशा है। देव कवर का विवाह हरसोलाव गाव के हरिसिंह चाम्पावत क पुत्र कैप्टिन दलीपसिंह से हुआ।

नवलसिंह भाटी कृषि मे स्नातक हैं, यह वर्तमान मे एन सी.सी मे ले कर्नल के पद पर कार्यरत है। यह सन् 1965 और 1971 ई के पाकिस्तान के साथ हुए युद्धो मे भाग

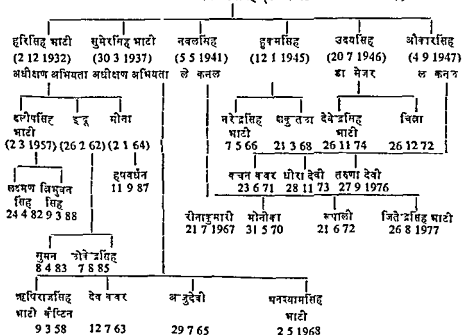
ले चुके हैं। इनका विवाह थैलासर गांव (चूरू) के कर्नल जयसिंह बणीरोत, एस एम, की पुत्री से हुआ है। कर्नल जयसिंह प्रतिष्ठित लेखक भी हैं। कर्नल नवलसिंह के एक पुत्र और तीन पुत्रियां हैं।

हुकमसिंह भाटी कला मे स्नातक हैं। यह चक 45 जी बी मे रह कर काश्त करते हैं। इनका विवाह बीघरान गांव (तारानगर) के राजवी गिरधारीसिंह की पुत्री से हुआ। इनके एक पुत्र और एक पुत्री है। पुत्री शकु तला का विवाह आसरासर (चूरू) गांव के ठाकुर सूरसिंह नारनोत के पुत्र प्रभुसिंह से हुआ।

उदयसिंह भाटी, एम बी बी एस, सीमा सुरक्षा बल मे मेजर डाक्टर के पद पर कार्यरत हैं। यह वहा वरिष्ठ चिकित्सक हैं। इनका विवाह घटेल गांव (चूरू) के ठाकुर प्रतापसिंह बणीरोत (आर पी एस) की पुत्री से हुआ। इनके एक पुत्र और एक पुत्री है।

औंकारसिंह भाटी, पशु चिकित्सा विज्ञान मे स्नातक हैं। यह भारतीय सेना म आर वी सी म ले कनल हैं। इनका विवाह हरपालसर गाव (सरदारशहर) के ठाकुर उत्तमसिंह बणीरोत (आर ए एस) की पुत्री से हुआ। इनके तीन पुत्रियां है।

मेजर पेमसिंह ने उच्च शिक्षा को एक सम्पदा समझ कर अपने सभी पुत्रो को अच्छे विद्यालयो में शिक्षा ग्रहण करने का अवसर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि इनके दो पुत्र अधीक्षण अभियता हैं और तीन पुत्र सेना मे कनल और मेजर के पदा पर है। आज यह परिवार सम्पन्न व समृद्ध है इनके रिश्ते इनके बराबर के प्रतिष्ठित परिवारो मे हुए हैं।



मेजर ठाकुर पेमसिंह, कालासर

जन्म, 12 जुलाई, सन् 1907 ई , सेना मे नियुक्ति 1 जुलाई सन् 1928 ई , सेना से मेजर के पद से सेवानिवृत्ति 15 मई सन् 1951 ई ।

कालासर गाव पहले पाहू भाटियो का था, वहा अब भी काला पाहू भाटी भोमिया की पूजा की जाती है ।

मेजर पेमसिंह द्वारा प्राप्त सेना पदक 1 किंग्स कारोनेशन पदक 1937 ई 2 हिज हाईनेस महाराजा का गोल्डन जुबली पदक 1938 ई 3 हिज हाईनेस का सिंहासनारूढ पदक 1943 ई 4 स्टार ऑफ बीकानेर-1945 ई 5 डिफेन्स मेडल 6 युद्ध सेवा पदक 7 पाईफोर्स पदक 8 भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति पदक 1947 ई 9 प्रमाण पत्र – क उत्कृष्ट सेवा प्रमाण पत्र, ख धन्यवाद पत्र ।

13 रामसिंह लिछमणसिंह भारतसिंह सोहनसिंह बजरंगसिंह 13 भवरसिंह प्रेमसिंह सोहनसिंह गोविन्दसिंह जगमालसिंह कानसिंह

12 हरिसिंह — सुमेरसिंह — कर्नल नवलसिंह — हुकमसिंह — डा मेजर उदयसिंह — डा कर्नल ओंकारसिंह

- हरिसिंह: 13 दलीपसिंह, इन्दुबाई, मीनाबाई
  - दलीपसिंह: 14 लक्ष्मणसिंह, त्रिभुवनसिंह
- सुमेरसिंह: 13 ऋषिराजसिंह, देवकवर, अन्जुबाई, घनश्यामसिंह
  - ऋषिराजसिंह: 14 ऋशाबाई
- कर्नल नवलसिंह: 13 रीनाबाई, मोनिकाबाई, रूपालीबाई, जितन्द्रसिंह
- हुकमसिंह: 13 नरेन्द्रसिंह, शकुन्तला
- डा मेजर उदयसिंह: 13 चित्रा, देवेन्द्रसिंह
- डा कर्नल ओंकारसिंह: 13 कंचनबाई, धीराबाई, तरुणाबाई

अनुलग्नक-2

11 आसूसिंह

12 भैरूसिंह — दुर्जनसिंह — करणीसिंह — वैरीसालसिंह — जीवराजसिंह

- भैरूसिंह: 13 कुमेरसिंह, नत्थूसिंह, प्रतापसिंह
- दुर्जनसिंह: 13 देपालसिंह, सोहनसिंह, जुगलसिंह
  - देपालसिंह: 14 डूगरसिंह, मूलसिंह
  - सोहनसिंह: राजूबाई
- करणीसिंह: 13 फतेहसिंह, चतरसिंह, छोगसिंह
  - फतेहसिंह: 14 [illegible], महेन्द्रसिंह, समसिंह
- वैरीसालसिंह: 13 राधाबाई
- जीवराजसिंह: 13 अनोपसिंह, भानसिंह, रतनसिंह, ईशरसिंह, सम्पतसिंह

अध्याय–अठारह

राव जगदेव
सन् 1625-1650 ई

सन् 1625 ई मे समा बलोचो और लगाओ के साथ पश्चिमी सीमा पर युद्ध मे राव आसकरण मारे गए थे, इनके स्थान पर इनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार जगदेव पूगल की राजगद्दी पर बैठे। इन्होने सन् 1650 ई तक राज्य किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे .

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 रावल कल्याणदास, सन् 1613-1631 ई	1 राजा सूरसिंह सन् 1614-1631 ई	1. राजा गजसिह सन् 1620-1638 ई	1 बादशाह जहांगीर 1605-1627 ई
2. रावल मनोहरदास, सन् 1631-1649 ई	2 राजा करणसिह, सन् 1631-1667 ई	3 महाराजा जसवन्तसिह सन् 1638-1707 ई	2 बादशाह शाहजहां, सन् 1627-1657 ई
3 रावल रामचन्द्र, सन् 1649-1650 ई			

सन् 1631 ई मे करणसिह बीकानेर के राजा हुए। इनकी केलण भाटियो मे दो शादिया हुई थी। एक बीठनोक की कुमारी अजवदे से और दूसरी बीकमपुर (सिरड) की कुमारी कोडमदे से।

सन् 1649 ई मे एक फरमान द्वारा बादशाह शाहजहा ने जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिह को पोकरण का परगना प्रदान किया था। इस फरमान मे नौ अन्य किलो का विवरण भी था, इनमे से एक मे पूगल का नाम दिया हुआ था और शासक का नाम राव जगदेव केलण भाटी लिखा गया था।

इनके समय मे पूगल की स्थिति अच्छी नही थी। परिश्रमी और कठिन कार्य करने वाली जनता और प्रजा के अभाव म राज्य का विकास रुक गया था, इसके आर्थिक साधन समाप्त हो रहे थे। समय पर उचित मरम्मत और देख रेख नही होने से पूगल का किला भी जीर्ण शीर्ण अवस्था म था। बार बार पडने वाले अकालो से हार कर, और मनुष्यो और पशुओ के लिए पीने के पानी तक के अभाव के कारण अधिकाश प्रजा सिन्ध और मुलतान प्रदेशों मे पलायन कर चुकी थी। पूगल और सिन्ध प्रदेश के बीच म कही भी पीने का पानी बहुतायत से उपलब्ध नहीं था।

पूगल, मुलतान और सिन्ध से भारत के आन्तरिक भागो के लिए व्यापार मार्ग पर था। पूगल से हो कर आने जाने वाले माल पर कर के रूप मे पूगल को बारह से पन्द्रह हजार रुपयो की वार्षिक आय होती थी। पूगल की दयनीय दशा के लिए सीमा पार से होने वाले छापे और वहा से पडने वाले डाके भी सहायक थे। यह लोग जनता का धन माल लूट कर ले जाते थे। अगले छापे डाके मे पिछले छापे डाके के बाद संचित किया गया धन माल फिर लूट लिया जाता था। बलोच और लगे, लोगों के पशु, गाय, ऊट, भेड, बकरी हाक कर ले जाते थे। न्याय और व्यवस्था के प्रबन्ध कमजोर होने के कारण गरीब जनता अन्यत्र जीवनयापन के साधन ढूढने निकल पडी। सिन्ध और सतलज नदियो के पार का उपजाऊ क्षेत्र भाटियो के नियन्त्रण से निकल चुका था, उनके पास पीछे अधिकाश रेतीला रेगिस्तानी भाग रह गया था। इस क्षेत्र म वर्षा की कमी के कारण और नगण्य जनसख्या के कारण कोई खास उपज सम्भव नही थी। भटनेर भी पूगल के भाटियो के हाथों से निकल कर भाटी मुसलमानो के पास चला गया था। पूगल को केवल उनके राव केलण के भाटी वशज होने में सतोष था, उनसे अन्य कोई आर्थिक या भौतिक प्राप्ति नही थी।

कमजोर आर्थिक स्थिति और घटती जनसख्या के कारण पूगल के लिए अपने 32,000 वर्गमील के विस्तृत राज्य पर प्रशासन चलाना और नियन्त्रण रखना दुष्कर हो रहा था। अन्य अनेक जागीरो के अलावा देरावर, मरोठ और बीजनोत के क्षेत्र के 15,000 वर्गमील पर पूगल का सीधा शासन था। बाद मे सन् 1763 ई म यही क्षेत्र बहावलपुर राज्य में बदल गया था। राव चाचगदेव के समय में पूगल राज्य मे सतलज नदी के पश्चिम का केहरोर और दुनियापुर का 2,000 वर्गमील का क्षेत्र और था। इस 17,000 वर्गमील के अलावा भटनेर, रायमलवाली, मूमनवाहन बरसलपुर, बीकमपुर, माथेलाव आदि का 15 000 वर्गमील का क्षेत्र भी था। इस प्रकार राव बरसल का राज्य 32,000 वर्गमील के क्षेत्र पर फैला हुआ था। यह क्षेत्र सन् 1947 ई के बीकानेर राज्य के 23,317 वर्गमील के क्षेत्र से कही अधिक था।

पश्चिम मे इस्लाम धर्म और उनके अनुयायी लगा, बलोच, जोइया, खोखर और केलण भाटियो के मुसलमान वशजो का प्रभाव बढ रहा था। थोडे से समय में केहरोर-दुनियापुर का क्षेत्र इस्लाम धर्म के प्रभाव म चला गया। सभी जातिया के स्थानीय लोग, पडिहार, परमार, दहिया, मूटदे (सोलकी), मोहिल, भाटी भी शनै शनै मुसलमान बनते गए। एक सुखद समय था जब राव केलण और चाचकदेव को समा बलोच और लगा (कोरी) अपनी बेटिया चाव से ब्याहा करते थे। जब शासको को यह लोग अपनी बेटिया ब्याहते थे तो इनके भाई भतीजो को भी अवश्य ब्याहते होगे। लेकिन समय के साथ, शक्तिशाली केन्द्र के कारण मुलतान क शासक भी कमजोर नहीं रहे। अब वह पूगल और बरसलपुर पर आक्रमण करने की हिमाकत करने लग गए थे। इन्होने आक्रमण करके राव आसकरण और बरसलपुर के राव नेतसिंह को मार दिया था।

बीकानेर के राजा करणसिंह मुगल बादशाह शाहजहा की सेवा म रहकर बहुत शक्तिशाली हो गए थे। इसमे कोई सदेह नहीं था कि पूगल के राव वीर थे, लेकिन अब उनके राज्य की शक्ति वह नही रही थी जिसका सुदूर क्षेत्रों म राव केलण, चाचगदेव और

बरसल ने प्रदर्शन किया था। पूगल की सत्ता और शक्ति मे पहला उतार राव शेखा के मुलतान मे बन्दी बनाये जाने से आया था और दूसरा उतार राव काना के मुलतान म बन्दी होने से आया।

पच्चीस वर्ष तक राज्य करने के पश्चात् सन् 1650 ई मे राव जगदेव का पूगल मे देहान्त हो गया।

यह अपने पीछे दो रानिया, मानसेभावत और सोनगरी छोडकर गए।

राव जगदेव के तीन पुत्र थे।

राजकुमार सुदरसेन ज्येष्ठ पुत्र थे, यह इनके बाद मे पूगल के राव बने।

कुमार महेशदास दूसरे पुत्र थे। यह सन् 1665 ई मे राव सुदरसेन के साथ, बीकानेर के राजा करणसिंह के विरुद्ध युद्ध मे मारे गए थ। इनकी कोई सन्तान नही रहने से इनका आगे वश नहीं चला।

कुमार जसवन्तसिंह (या जगतसिंह) तीसरे पुत्र थे। इन्हे भानीपुरा की जागीर दी गई थी। इनके वशज भानीपुरा, पीला, मन्डला गांवो मे अब भी आबाद हैं। इनका विवरण अलग से दिया गया है।

---

* इस अध्याय से सम्बन्धित वशावलिया पृष्ठ सख्या 444 के बाद देखें

अध्याय—उन्नीस

राव सुदरसेन
सन् 1650-1665 ई

राव जगदेव की सन् 1650 ई मे मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार सुदरसेन पूगल के राव बने। इनके समकालीन शासक निम्न थे, राव सुदरसेन ने सन् 1665 ई तक राज्य किया।

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1. रावल रामचन्द्र, सन् 1649 50 ई 2 रावल सबलसिह, सन् 1650-1659 ई 3 महारावल अमरसिह, सन् 1659-1702 ई	राजा करणसिह, सन् 1631-1667 ई	महाराजा जसवन्तसिह सन् 1638-1707 ई	1 बादशाह शाहजहां, सन् 1627-1657 ई 2 बादशाह औरगजेब, सन् 1657-1707 ई

राव जगदेव ने अपने तीसरे पुत्र जसवन्तसिह को भानीपुरा, चीला और मन्डला गांवो की जागीर प्रदान की थी। भानीपुरे गांव के कुए का पानी मीठा था। राव जगदेव ने यह नई जागीर राठौडो के विरुद्ध पूगल की सुरक्षा के लिए बनाई थी। यह पूगल और जयमलसर के बीच मे स्थित है। जब सन् 1665 ई मे बीकानेर के राजा करणसिह ने पूगल पर आक्रमण किया था तब भानीपुरे के भाटियो ने बीकानेर की सेना का कुछ समय तक विरोध किया। राव सुदरसेन और उनके दोनो भाई महेशदास और जसवन्तसिह भानीपुरे मे बीकानेर की सेना से लडते रहे। राव सुदरसेन और महेशदास बाद मे पूगल की रक्षा करते हुए मारे गए थे। इनके अलावा रामडा, दन्तौर, मोतीगढ और धोधा के प्रधान भी पूगल की रक्षा करते हुए काम आए। राव सुदरसेन की मृत्यु के पश्चात् जैसलमेर के रावल अमरसिह ने पूगल वापिस लेने मे सहायता की। सन् 1670 ई मे रावल अमरसिह ने पूगल पर आक्रमण करके वहा से बीकानेर की सेना और थानो को हटाया और पुन पूगल पर राव सुदरसेन के राजकुमारो का अधिकार करवाया।

सन् 1650 ई मे बादशाह शाहजहां ने एक फरमान जारी करके दयालदास के पुत्र सबलसिह को जैसलमेर के रावल रामचन्द्र के स्थान पर वहां का शासक बना दिया। इस प्रकार रावल रामचन्द्र को पदच्युत करके सबलसिह जैसलमेर के नये रावल बन गए। सन् 1649 ई मे रावल मनोहरदास की नि सन्तान मृत्यु होने से उनकी विधवा रानी ने रावल हरराज के भाई भानीदास के पौत्र रामचन्द्र को गोद लिया और वह रावल बना दिए गए।

सबलसिंह भी रावल हरराज और भानीदास के छोटे भाई खेतसिंह के पौत्र थे। रावल हरराज के पुत्र रावल भीम के एक पुत्र, रघनाथ भाटी, रावल रामचन्द्र को जैसलमेर की राजगद्दी पर नहीं देखना चाहते थे। इन विपरीत परिस्थितियों को देखते हुए, जब सबलसिंह अपने नाम का जैसलमेर का फरमान लेकर आए तो रावल रामचन्द्र ने राजी खुशी उन्हें राज्य सौंप दिया। पूर्व के राव पूनपाल की भांति इन्होंने भी अपनों से झगडा करके एक दूसरे का खून बहाना उचित नहीं समझा। सबलसिंह को यह आशा नहीं थी कि वह इतनी शान्ति और नम्रतापूर्वक रावल रामचन्द्र जैसलमेर का राज्य सौंप देंगे। उनके विचार से रावल रामचन्द्र के समर्थक उनसे संघर्ष किए बिना गद्दी नहीं छोड़ेंगे। रावल रामचन्द्र के व्यवहार ने सबलसिंह को बहुत प्रभावित किया। इस अहसान के बदले में वह रावल रामचन्द्र को अन्यत्र राज्य दिलाना चाहते थे, इनके द्वारा जैसलमेर वापिस उन्हें सौंपने का प्रश्न ही नहीं था, इसमें इनका स्वयं का स्वार्थ था।

इस विषय पर विचार विमर्श करने वह राव सुदरसेन के पास पूगल गए। रावल सबलसिंह चतुर और दूरदर्शी व्यक्ति थे। उन्हें पास पडोस की और भारत की राजनीतिक गतिविधियों का पूरा ज्ञान रहता था क्योंकि किसनगढ के राजा की सिफारिश पर ही बादशाह शाहजहां ने उन्हें जैसलमेर का राज्य प्रदान किया था। रावल सबलसिंह पूगल के राव जैसा की मृत्यु के कारणों से भी जानकार थे। बाद के राव काना, आसकरण और जगदेव की कठिनाइयों का भी उन्हें पूरा ज्ञान था। पूगल की पश्चिमी सीमा अशान्त थी, राव वहां नियन्त्रण जमाने में सफलता नहीं पा रहे थे। धीरे-धीरे पश्चिम की सीमा पूगल की ओर सिकुड रही थी। केहरोर और दुनियापुर का क्षेत्र पूगल बहुत पहले ही खो चुका था। लंगा और बलोच, मरोठ देरावर और मूमनवाहन पर दस्तक दे रहे थे, बरसलपुर और बीकमपुर भी उनकी मार सह रहे थे। इधर बीकानेर के शक्तिशाली शासक किसी भी समय कमजोर पूगल को दबा सकते थे। मुलतान के शासक भी पहले की तरह पूगल के प्रति अब उदार रुख वाले नहीं रहे थे।

रावल सबलसिंह ने उपरोक्त सारी समस्याओं से राव सुदरसेन को अवगत कराया। पूगल के हित अहित का उन्हें बोध कराया। उन्होंने उन्हें यह भी समझाया कि मरोठ, देरावर, मूमनवाहन, बीजनोत उनसे देर सवेर जाने वाले थे। इससे लंगाओं और बलोचों की समस्या सीधी पूगल की देहरी के समीप आ पहुंचेगी। उन्होंने उन्हें अपने विश्वास में लेकर सुझाव दिया कि वह राजी-खुशी पश्चिम के सीमान्त प्रदेश, देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, बीजनोत, जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र को सौंप दें। इसके कई लाभ थे। लंगाओं और बलोचों के जो झटके अभी तक पूगल असफलता से झेल रहा था, बाद में वह रावल रामचन्द्र को झेलने पड़ेंगे। अब जो जनता की लूट खसोट और क्षति हो रही थी, भविष्य में उसकी सुरक्षा की चिन्ता रावल रामचन्द्र को होगी। जैसलमेर की पूरी शक्ति और समर्थन रावल रामचन्द्र के साथ होने से उस क्षेत्र की स्थिति में सुधार होगा। उनकी पहुंच बादशाह शाहजहां तक होने से वह मुलतान के शासकों पर दबाव डलवायेंगे कि वह नये राज्य के प्रति उदारता और नम्रता का रुख बरतें।

राव सुदरसेन ने इन विचारों पर गहराई से सोच विचार किया। अपनी शक्ति और

अध्याय–उन्नीस

राव सुदरसेन
सन् 1650-1665 ई.

राव जगदेव की सन् 1650 ई मे मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार सुदरसेन पूगल के राव बने। इनके समकालीन शासक निम्न थे राव सुदरसेन ने सन् 1665 ई तक राज्य किया।

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1. रावल रामचन्द्र, सन् 1649 50 ई	राजा करणसिंह, सन् 1631-1667 ई	महाराजा जसवन्तसिंह सन् 1638-1707 ई	1 बादशाह शाहजहां, सन् 1627-1657 ई.
2 रावल सबलसिंह, सन् 1650-1659 ई			2 बादशाह औरगजेब, सन् 1657-1707 ई
3 महारावल अमरसिंह, सन् 1659-1702 ई			

राव जगदेव ने अपने तीसरे पुत्र जसवन्तसिंह को भानीपुरा, घोला और मन्डला गांवो की जागीर प्रदान की थी। भानीपुरे गांव के कुए का पानी मीठा था। राव जगदेव ने यह नई जागीर राठौडो के विरुद्ध पूगल की सुरक्षा के लिए बनाई थी। यह पूगल और जयमलसर के बीच मे स्थित है। जब सन् 1665 ई मे बीकानेर के राजा करणसिंह ने पूगल पर आक्रमण किया था तब भानीपुरे के भाटियो ने बीकानेर की सेना का कुछ समय तक विरोध किया। राव सुदरसेन और उनके दोनो भाई महेशदास और जसवन्तसिंह, भानीपुरे मे बीकानेर की सेना से लडते रहे। राव सुदरसेन और महेशदास बाद मे पूगल की रक्षा करते हुए मारे गए थे। इनके अलावा रामडा, दन्तौर, मोतीगढ और घोधा के प्रधान भी पूगल की रक्षा करते हुए काम आए। राव सुदरसेन की मृत्यु के पश्चात् जैसलमेर के रावल अमरसिंह ने पूगल वापिस लेने मे सहायता की। सन् 1670 ई मे रावल अमरसिंह ने पूगल पर आक्रमण करके वहा से बीकानेर की सेना और थानो को हटाया और पुन पूगल पर राव सुदरसेन के राजकुमारो का अधिकार करवाया।

सन् 1650 ई मे बादशाह शाहजहा ने एक फरमान जारी करके दयालदास के पुत्र सबलसिंह को जैसलमेर के रावल रामचन्द्र के स्थान पर वहा का शासक बना दिया। इस प्रकार रावल रामचन्द्र को पदच्युत करके सबलसिंह जैसलमेर के नये रावल बन गए। सन् 1649 ई मे रावल मनोहरदास की नि सन्तान मृत्यु होने से उनकी विधवा रानी ने रावल हरराज के भाई भानीदास के पौत्र रामचन्द्र को गोद लिया और वह रावल बना दिए गए।

सबलसिंह भी रावल हरराज और भानीदास के छोटे भाई खेतसिंह के पौत्र थे। रावल हरराज के पुत्र रावल भीम के एक पुत्र, रघनाथ भाटी, रावल रामचन्द्र को जैसलमेर की राजगद्दी पर नही देखना चाहते थे। इन विपरीत परिस्थितियों को देखते हुए, जब सबलसिंह अपने नाम का जैसलमेर का फरमान लेकर आए तो रावल रामचन्द्र ने राजी खुशी उन्हें राज्य सौंप दिया। पूर्व में राव पूनपाल की भांति इन्होंने भी अपनों से झगडा करके एक दूसरे का खून बहाना उचित नहीं समझा। सबलसिंह को यह आशा नही थी कि उन्हे इतनी शान्ति और नम्रतापूर्वक रावल रामचन्द्र जैसलमेर का राज्य सौंप देंगे। उनके विचार से रावल रामचन्द्र के समर्थक उनसे संघर्ष किए बिना गद्दी नही छोड़ेंगे। रावल रामचन्द्र के व्यवहार ने सबलसिंह को बहुत प्रभावित किया। इस अहसान के बदले में वह रावल रामचन्द्र को अन्यत्र राज्य दिलाना चाहते थे, इनके द्वारा जैसलमेर वापिस उन्हे सौंपने का प्रश्न ही नही था, इसमे इनका स्वयं का स्वार्थ था।

इस विषय पर विचार विमर्श करने वह राव सुदरसेन के पास पूगल गए। रावल सबलसिंह चतुर और दूरदर्शी व्यक्ति थे। उन्हे पास पडोस की और भारत की राजनीतिक गतिविधियों का पूरा ज्ञान रहता था, क्योंकि किशनगढ के राजा की सिफारिश पर ही बादशाह शाहजहां ने उन्हें जैसलमेर का राज्य प्रदान किया था। रावल सबलसिंह पूगल के राव जैसा की मृत्यु के कारणों से भी जानकार थे। बाद के राव काना, आसकरण और जगदेव की कठिनाइयों का भी उन्हे पूरा ज्ञान था। पूगल की पश्चिमी सीमा अशान्त थी, राव वहां नियन्त्रण जमाने मे सफलता नही पा रहे थे। धीरे-धीरे पश्चिम की सीमा पूगल की ओर सिकुड रही थी। केहरोर और दुनियापुर का क्षेत्र पूगल बहुत पहले ही खो चुका था। लंगा और बलोच, मरोठ, देरावर और मूमनवाहन पर दस्तक दे रहे थे, वरसलपुर और बीकमपुर भी उनकी मार सह रहे थे। इधर बीकानेर के शक्तिशाली शासक किसी भी समय कमजोर पूगल को दबा सकते थे। मुलतान के शासक भी पहले की तरह पूगल के प्रति अब उदार रुख वाले नही रहे थे।

रावल सबलसिंह ने उपरोक्त सारी समस्याओं से राव सुदरसेन को अवगत कराया। पूगल के हित अहित का उन्हें बोध कराया। उन्होने उन्हें यह भी समझाया कि मरोठ, देरावर, मूमनवाहन, बीजनोत उनसे देर सवेर जाने वाले थे। इससे लंगाओ और बलोचो की समस्या सीधी पूगल की देहरी के समीप आ पहुचेगी। उन्होने उन्हे अपने विश्वास मे लेकर सुझाव दिया कि वह राजी-खुशी पश्चिम के सीमान्त प्रदेश, देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, बीजनोत, जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र को सौंप दें। इसके कई लाभ थे। लंगाओं और बलोचो के जो झटके अभी तक पूगल असफलता से झेल रहा था, बाद मे वह रावल रामचन्द्र को झेलने पड़ेंगे। अब जो जनता की लूट खसोट और क्षति हो रही थी, भविष्य म उसकी सुरक्षा की चिन्ता रावल रामचन्द्र को होगी। जैसलमेर की पूरी शक्ति और समर्थन रावल रामचन्द्र के साथ होने से उस क्षेत्र की स्थिति मे सुधार होगा। उनकी पहुच बादशाह शाहजहां तक होने से वह मुलतान के शासकों पर दबाव डलवायेंगे कि वह नये राज्य के प्रति उदारता और नम्रता का रुख बरतें।

राव सुदरसेन ने इन विचारो पर गहराई से सोच विचार किया। अपनी शक्ति और

समस्याओ का आकलन किया। लगाओ, बलोचो और मुलतान से होने वाले रोज रोज के झगडो की ओर ध्यान दिया। अनेक केलण भाटी और अन्य हिन्दू असुरक्षा और भय की भावना स मुसलमान बन गए थे। उन्हे अपनो का पूरा समर्थन भी प्राप्त नही था। उन्होंने दूसरा पहलू भी सोचा कि आज तो रावल सबलसिंह देरावर देने के लिए उनसे आग्रह कर रहे थे, कल अगर वह अपने प्रयासो की विफलता की ओट मे पूगल पर आक्रमण ही कर बैठे तो वह किसकी सहायता लेंगे, उनका सब कुछ ही चला जायेगा। या जैस उन्होने जैसलमेर का फरमान अपने लिए प्राप्त किया था, वैसे ही अगर वह मरोठ, देरावर आदि का फरमान बादशाह शाहजहा से अपने या पदच्युत रावल रामचन्द्र के नाम प्राप्त कर लाये, तो क्या स्थिति बनेगी ? ऐसे फरमान को क्रियान्वित करवाने का जिम्मा मुलतान को दिया जा सकता था, फिर वह क्या करेंगे ? मरोठ के लिए पहले एक ऐसा फरमान राव बाना के समय बीकानेर के राजा रायसिंह को मिल चुका था, लेकिन उन्होने किन्ही कारणो से इसको क्रियान्वित नही करवाया था। इसलिए ऐसी ही सम्भावना अब उत्पन्न कराई जा सकती थी।

इन सारे पहलुओ पर राव सुदरसन ने अन्य केलण भाटियो और अपने खानो, प्रधानो से भी विस्तार स चर्चा की और विचार किया। इसे जैसलमेर के एक ही वश के भाटियो के बीच मे आपसी घरेलू समझौते का रूप दिया गया, किसी एक की हार या जीत के रूप मे नही लिया गया और न ही इसे प्रतिष्ठा का विषय बनाया गया। पूगल इस निष्कर्ष पर पहुचा कि उसे मरोठ, देरावर आदि का राज्य का आधा भाग, 15,000 वर्ग मील क्षेत्र, पदच्युत रावल रामचन्द्र को देने पर सहमत हो जाना चाहिए और शेप आधा, 15,000 वर्ग मील, क्षेत्र, वह अपने पास रखे। इस शेष बचे हुए क्षेत्र म वरसलपुर, बीकमपुर, रायमलवाली, खीया पट्टी और पूगल पट्टी थी। इस प्रकार रावल केहर (सन् 1361-1396 ई) के वशजो ने लगभग ढाई सौ वर्ष बाद, सन् 1650 ई मे, राव केलण के पूगल के राज्य को पूगल की विवशता से दो बराबर भागो मे बांट लिया। इस समझौते से रावल सबलसिंह बहुत सन्तुष्ट हुए पूगल ने आधा राज्य उनके प्रतिद्वद्वी रावल रामचन्द्र को दे दिया और उनका आए हुओ का मान रखा। रावल रामचन्द्र ने देरावर म अपनी राजधानी रखी। इस प्रकार जैसलमेर के पहले पदच्युत रावल पूनपाल को और दूसरे पदच्युत रावल रामचन्द्र को उनके पूर्वजो की धरती, रावल सिद्ध देवराज की भूमि मे शरण दी।

राव सुदरसेन का यह एक ऐतिहासिक निर्णय था, जिसके लिए कोई सघर्ष नही हुआ, आपस म मनमुटाव नही उभरा। स्नेह और प्यार से मिलकर दो भाइयो ने तीसरे भाई के लिए 15,000 वर्ग मील क्षेत्र देने लेने का निर्णय कर लिया। भारतवर्ष के इतिहास मे ऐसा दूसरा अद्भुत उदाहरण नही मिलेगा। अब पूगल, देरावर और पूगल, नाम के दो राज्यो के नाम से जाना जाने लगा। इस प्रकार रा अब भाटियो के तीन, पूगल, देरावर और भटनेर के स्वतन्त्र राज्य हो गए। इस बटवारे और सहयोग से रावल रामचन्द्र और सबलसिंह के आपस के सम्बन्धो म कटुता नही आई। रावल रामचन्द्र महान व्यक्ति थे, जिन्होने अपने चचेरे भाई को जैसलमेर का राज्य राजी खुशी सौंप दिया था। परन्तु इनसे भी महान राव सुदरसेन थे जिन्होंने अपने बारह पीढी दूर के भाई को स्वेच्छा से पूगल का आधा राज्य दे दिया।

कुछ इतिहासकार और राठौड यह कहते आए हैं कि पूगल कभी स्वतन्त्र राज्य नहीं था, वह बीकानेर के अधीन था या उनके संरक्षण मे था। अगर यह सही था, तो पूगल के राव को बिना युद्ध मे पराजित हुए आधा राज्य अन्य को देने का अधिकार किसने दिया? उन्होंने राज्य के दो भाग करने के लिए और एक भाग दूर के अपने वंशज को देने के लिए किस की स्वीकृति ली? अगर यह बटवारा अवैध होता तो बीकानेर, मुलतान या दिल्ली के शासक इसका विरोध अवश्य करते और आवश्यकता पडने पर हस्तक्षेप भी करते। इससे एक बिन्दु और स्पष्ट होता था कि बादशाह अकबर द्वारा राजा रायसिंह को मरोठ का परगना देना अवैध था। जो भूमि दिल्ली के शासकों के अधिकार मे थी ही नही, वह उस भूमि को किसी और को बख्शीस मे कैसे दे सकते थे? अगर मरोठ दिल्ली साम्राज्य का भाग था तो उन्होने रावल रामचन्द्र को इसे कैसे लेने दिया? इससे स्पष्ट था कि पूगल राज्य एक सार्वभौमिक सत्ता प्राप्त राज्य था, उसे अपनी नीति, न्याय और पडोसी राज्यो से सम्बन्ध निर्धारित करने का स्वतन्त्र अधिकार था।

रावल रामचन्द्र और उनके वंशजो ने सन् 1650 से 1763 ई. तक देरावर से राज्य किया। इस नये राज्य की स्थापना से और जैसलमेर, पूगल और देरावर मे सहयोग से लगा और बलोच भी कुछ समय के लिए शंकित हुए। उन्हे सन्देह था कि देरावर की आड मे अब शक्तिशाली जैसलमेर उनके क्षेत्र मे हस्तक्षेप करेगा और पूगल से पूर्व मे उनके द्वारा छीने हुए क्षेत्रो पर अपना हक दर्शायेगा।

अपने पडोसी राज्यो से पूगल अब भी जीत मे रहा। बीकानेर और जोधपुर के राज्य सौ वर्ष पहले (सन् 1550 ई. के आसपास) अपनी स्वतन्त्रता खो चुके थे, पूगल सन् 1650 ई. मे भी स्वतन्त्र राज्य था। इन राजाओ ने अपनी बहनो और बेटियो को मुगलो के पाशविक आनन्द के लिए उनके हरम मे प्रवेश कराया, पूगल ने ऐसा कुछ नही किया, दिल्ली को कोरा धत्ता बताया। मेवाड को भी सन् 1614 ई. मे मुगलो के आगे झुकना पडा था। चाहे जो भी कारण रहे हो, पूगल ने कभी भी दिल्ली की अधीनता स्वीकार नही की और न ही बदले मे तन दिया। अन्य राजाओ की तरह पूगल कभी दिल्ली दरबार का अनुदानी नही रहा और न ही उसने कभी वहा की मनसबदारी के खातिर अपना स्वाभिमान गिराया। 'मनसब' का अर्थ किसी व्यवस्था मे पद और गरिमा ग्रहण करने से था। अकबर पहला सम्राट था जिसने पारसी के 'मनसबदारी' शब्द का प्रयोग भारत मे किया। मनसबदारी का उद्देश्य गुलामी की एक ऐसी परम्परा बनानी थी जिसकी ओट मे विभिन्न श्रेणी के विशिष्ट व्यक्तियो को पद और वेतन दिया जाता था। फिर वह सभी व्यक्ति आपस मे प्रतिद्वंद्वी बनकर अगले उच्च पद पर पहुंचने और वेतन पाने का प्रयास करते थे। मनसबदारी का भूमि से कोई सम्बन्ध नही होता था और न ही यह वंशानुक्रम का पद था। इसी प्रकार सारे राज्य मुगलो द्वारा उनके राजाओं को दी गई जागीरें थी। बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर आदि राज्यो को शाही फरमानो मे 'राज्य' नही लिखा गया था, केवल 'जागीर' शब्द का प्रयोग किया गया था। राजा की मृत्यु के साथ यह 'जागीरें' समाप्त हो जाती थी, नए राजा को राज्य की जागीर का दिल्ली से नया फरमान जारी करवाना पडता था। यह फरमान बादशाह दें या नहीं दें, उनकी इच्छा पर निर्भर करता था। परन्तु सामान्यतः यह नवीनीकरण

हो जाता था। पूगल एक सार्वभौम सत्ता प्राप्त राज्य था, उसने मनसबदारी या राज्य की जागीर के फरमान मुगलो से कभी नही लिए। उसे स्वय द्वारा अर्जित अधिकार था कि उसने देरावर का एक और स्वतन्त्र राज्य कायम कर दिया। अब स्वय द्वारा बनाए गए इस नये राज्य पर पूगल का कोई अधिकार नही रहा, इसके बाद मे देरावर राज्य इतना ही स्वतन्त्र राज्य था जितना कि पूगल राज्य।

रावल सबलसिंह और रावल रामचन्द्र दोनो बहुत चतुर और समझदार व्यक्ति थे। रावल सबलसिंह का विचार था कि रावल रामचन्द्र का जैसलमेर मे रहना उनके लिए खतरनाक होगा। एक मात खाया हुआ रामचन्द्र उनके लिए कही अधिक बडा सिरदर्द होगा बजाय सतोषी और प्रतिष्ठित रावल रामचन्द्र के। रामचन्द्र के वहा रहने से सम्भवत वह उनके असन्तुष्टो का केन्द्र बन सकते थे। इसलिए उनके विचार म रामचन्द्र को जैसलमेर से इतना दूर किया जाये कि वह अकेले पड जायें, उनका जैसलमेर की राजनीति और अन्य घटनाओ से सम्पर्क ही समाप्त हो जाये। इससे वह खुद की मौत स्वय मर जायेंगे। उनका ध्यान एकदम देरावर, मरोठ और पूगल की प्रतिकूल परिस्थितियो की ओर गया। बस यही उनकी समस्या का समाधान हो गया।

रावल रामचन्द्र भले आदमी थे। उन्होने सोचा कि उनके जैसलमेर म रहने से अफवाहो का बाजार गरम रहेगा। असन्तुष्ट उनके पास आएँगे, उन्हे रोकने का उनके पास कोई तरीका नहीं था। उनके वहा रहने से रावल सबलसिंह स्वतन्त्र या कठोर निर्णय लेते हुए हिचकिचाएँगे, इससे उनके प्रशासन और नियन्त्रण मे अवरोध उत्पन्न होगा। ऐसे ही विचार केलण को आसिनकोट मे रहते हुए अपने छोटे भाई रावल लक्ष्मण के प्रति आए थे। तभी वह सातल सिंहराव की सलाह से आसिनकोट छोडकर बीकमपुर आ गए थे। जब रावल रामचन्द्र के सामने देरावर का प्रस्ताव रखा गया, वह इसके लिए तुरन्त राजी हो गए।

इस समझौते स रावल रामचन्द्र की प्रतिष्ठा बनी रही। वह जैसलमेर की राजगद्दी से देरावर जा रहे थे जो उन्ही के पूर्वज रावल सिद्ध देवराज की (सन् 852 ई) आठ सौ वर्ष पहले राजधानी थी। उनकी 'रावल' की पदवी यथावत रही। देरावर उन्ही के वशजो के पूगल के राज्य का भाग था, किसी से अनुदान मे प्राप्त राज्य नही था। वह एक स्वतन्त्र राज्य के शासक हुए जबकि जैसलमेर राज्य दिल्ली के अधीन एक 'जागीर' थी। उन्हे सन्तोष यह था कि उनकी अनुपस्थिति मे रावल सबलसिंह अपनी इच्छा से राजकाज चला पायेंगे। उन्ह 15,000 वर्गमील का राज्य मिल रहा था, यह क्षेत्रफल जैसलमेर राज्य के क्षेत्रफल से कम नही था। सन् 1947 ई म जैसलमेर राज्य का कुल क्षेत्रफल 16,062 वर्ग मील था।

रावल सबलसिंह थोडे समय ही राज्य कर पाए, इनका देहान्त सन् 1659 ई में हो गया। इनके स्थान पर अमरसिंह (सन् 1659-1707 ई) रावल बने, इनकी बादशाह औरगजेब (सन् 1657-1707 ई) से नहीं बनती थी।

बीकानेर के राजा करणसिंह इन नए घटनाचक्र से सन्तुष्ट नहीं थे। वह नए देरावर राज्य के प्रति कुछ शकित हुए। उनके प्रभाव क्षेत्र म जैसलमेर के वशज का आना उन्हें पसन्द नही आया। वह इस नए देरावर-मरोठ राज्य का विरोध करने लगे। पहले पूगल की

स्थिति पश्चिमी सीमा पर लड़खड़ा रही थी, अब उसे देरावर की बैसाखियों का सहारा मिल गया था। जैसलमेर की मध्यस्थता से इस क्षेत्र का शक्ति सतुलन बीकानेर के पक्ष मे नही रहा। पहले बीकानेर ने यह भ्रम फैला रखा था कि पूगल बीकानेर के अधीन था, अब यह भ्रम भी टूट गया। अगर पूगल बीकानेर के अधीन था तो राजा करणसिंह ने रावल रामचन्द्र को देरावर राज्य मे आने से क्यों नही रोका? इन कारणो से सन् 1665 ई म राजा करणसिंह ने पूगल पर आक्रमण कर दिया। उन्होने जयमलसर और भानीपुरे के प्रारम्भिक विरोध से निपट कर, पूगल के गढ को घेर लिया। लगभग एक माह तक घेरा रहने से, पानी और रसद के अभाव मे पूगल के गढ के अन्दर की स्थिति शोचनीय होने लगी। राव सुदरसेन ने आत्मसमर्पण का विचार बिलकुल त्याग दिया था। उन्होने और उनके छोटे भाई महेशदास ने गढ की रक्षा करते हुए वीरगति पाई। उनके साथ मे दीवान मोती बजाज ने भी लडते हुए अपने प्राणो की आहुति दी। मोती बजाज अब भोमिया बनकर पूजे जाते हैं। इनका थडा पूगल गढ के पूर्व मे स्थित है। राव सुदरसेन और उनके भाई महेशदास अमारण के खेजडे के पास लडते हुए अपने प्राण त्यागे थे। उस स्थान पर अब वह खेजडा नहीं है, पहले यह खेजडा पूगल स्थित राजस्थान नहर परियोजना कॉलोनी मे था।

जैसलमेर के महारावल अमरसिंह ने किन्ही कारणो से इस युद्ध मे बीकानेर के विरुद्ध पूगल की सहायता नहीं की। अगर वह इसमे सक्रिय हस्तक्षेप करते तो शायद राजा करणसिंह पूगल के प्रति ऐसा दुस्साहस नहीं करते। उन्होने बाद मे सन् 1670 ई मे राव गणेशदास को पूगल वापिस दिलाने मे सहायता अवश्य की। इस युद्ध मे रावल रामचन्द्र ने भी पूगल की कोई सहायता नही की। वह शायद देरावर मे रावल अमरसिंह के संकेत का इन्तजार करते रहे।

राजा करणसिंह ने पूगल मे बीकानेर का थाना स्थापित किया और जीवनदास कोठारी और लूणा पडिहार को गढ का प्रभारी बनाया। राजा करणसिंह पूगल की सुरक्षा और प्रशासन की व्यवस्था करके बीकानेर लौटे, उन्हे लूट मे जो कुछ मिला उसे वह बीकानेर साथ ले आए।

इस समय पूगल के पास 561 गांव रह गए थे। पूगल पर बीकानेर का पाच वर्षो तक अधिकार रहा। जनता नए शासको के शासन मे सुखी नही थी, उन्होने इनसे सहयोग नही किया और इसे राजस्व व अन्य कर देने बन्द कर दिए। पूगल की जनता के साथ जीवनदास कोठारी का व्यवहार अत्यन्त क्रूर और अभद्र था। भाटियो की जनता इस प्रकार के व्यवहार और आचरण की आदी नही थी, इसलिए उन्हे यह बहुत अखरता था। वह सैकड़ो वर्षों से भाटियों के स्नेहमय आचरण, बराबरी के व्यवहार, सवेदना और सौहार्द्र की आदी हो गई थी। किसनावतों, खीयो, बरसिंहो, केलण भाटियो ने बीकानेर द्वारा पूगल पर अधिकार किए जाने की निन्दा की और अपना विरोध भी दर्शाया। बीकमपुर के राव सुन्दरदास, बरसलपुर के राव दयालदास, बीठनोक के अभयसिंह, सींदासर के सवाईसिंह, जयमलसर के जगतसिंह, किसनसिंह ने बीकानेर की इस कार्यवाही के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई। पूगल के राव सुदरसेन एक शान्तिप्रिय शासक थे, उन्होने बीकानेर के विरुद्ध उकसाने वाली कोई कार्यवाही कभी नही की थी और न ही कभी बीकानेर के शासक का निरादर किया

था। इसलिए राजा करणसिंह ने पूगल पर आक्रमण करके अन्याय किया था और राव सुदरसेन को मारकर घोर अपराध किया। भाटियो के सक्रिय विरोध, आम जनता के असहयोग और रावल अमरसिंह के हस्तक्षेप के कारण राजा करणसिंह के पुत्र महाराजा अनूपसिंह को बाध्य हो कर सन् 1670 ई में राव सुदरसेन के पुत्र गणेशदास को पूगल लौटानी पडी।

राजा करणसिंह ने अपनी करनी और करतूतो का फल अपने जीवनकाल मे भोगा। वह अपने स्वामी और दाता, बादशाह औरगजेब के प्रति निष्ठावान नही थे। बादशाह ने राजा करणसिंह को मुगल सेना के साथ या स्वतन्त्र रूप से अनेक अभियानो म भेजा था। इन अभियानो के दौरान बादशाह को इनके विरुद्ध स्वार्थी होने, भ्रष्टाचार, शाही सत्ता को चुनौती देने और आदेशो की अवहेलना करने की शिकायतें खुफिया तन्त्र और सेनापति करते रहते थे। बादशाह की निगाहो मे यह गिर चुके थे। इसके अलावा इनके द्वारा अटक म नावें तोडने वाली मामूली सी घटना से बादशाह बहुत नाराज थे। उन्होने राजा करणसिंह को बताया कि अगर वह चाहे तो बीकानेर को शाही सेना से मटियामेट करवा सकते थे, उनका अपराध इतना जघन्य था कि वह उन्हे हाथी के पावो तले कुचलवा कर मृत्यु दण्ड दे सकते थे। परन्तु उनके पूर्वजो की मुगलो को दी गई अमूल्य सेवाओ का अहसान और उनके मुगलिया खानदान के साथ पारिवारिक सम्बन्ध उनके लिए न्याय मे बाधा बन रहे थे। इन सब बातो को ध्यान मे रखते हुए बादशाह औरगजेब ने इनके नाम से जारी किए गए बीकानेर राज्य की जागीर के फरमान को खारिज किया और इनके जीवनकाल म ही इनके पुत्र राजकुमार अनूपसिंह को बीकानेर की जागीर देने का फरमान सन् 1667 ई म जारी किया और उन्हे बीकानेर राज्य के पूर्ण शासनाधिकार दिए। यह दूसरा अवसर था तब दिल्ली के बादशाहो ने बीकानेर के शासक को गद्दी से हटाया, उनके शासनाधिकार दूसरे शासक को प्रदान किए। पहला अभागा शासक राजा दलपतसिंह था, जिन्हे सन् 1614 ई म राजगद्दी से उतारा गया। वैसे निष्पक्ष भाव से देखा जाये तो राजा दलपतसिंह और करणसिंह के व्यवहार और आचरण मे कोई अन्तर नही था। इसलिए बादशाह जहागीर और औरगजेब दोनो के फैसले न्यायपूर्ण थे।

बादशाह औरगजेब न इन्हें सन् 1667 ई म देश निकाला दे कर औरगाबाद भेज दिया। वहा बादशाह ने इन्हें गुजारे के लिए भूमि बख्शी। इस भूमि पर इन्होने, करणपुर, केसरीसिंहपुर और पदमपुर, नाम के तीन गाव बसाये। दो वर्ष बाद मे, 22 जून सन् 1669 ई म, निर्वासन मे ही इनकी मृत्यु औरगाबाद के पास करणपुर म हुई। उस समय इनके पास इनका कोई पुत्र, भाई या भतीजा नही था, केवल चुरू के ठाकुर कुशालसिंह थे। उन्होने ही उनका दाह सस्कार करवाया और मृत्योपरात सारे क्रियाकर्म किए और करवाये। सयोगवश जब राजा दलपतसिंह बीकानेर मे अपने भाई सूरसिंह के विरुद्ध युद्ध मे गए थे तब भी उनके पीछे हाथी के हौदे म चुरू के ठाकुर भीमसिंह बैठे थे। युद्ध के समय उन्होने पीछे से दलपतसिंह के दोनो हाथ पकड लिए और उन्हे बन्दी बनाने के लिए मुगल सेनापति को सौंप दिया। राजा करणसिंह के अन्तिम समय मे भी चुरू के ही ठाकुर कुशालसिंह उनके पास थे।

बीकानेर राज्य के पास औरगाबाद के उपरोक्त तीन गाव सन् 1904 ई तक रहे।

अंग्रेजों ने इन गांव के बदले में बीकानेर राज्य को पंजाब के दो गांव, बावलवास और रातासेडा, दिए और मुआवजे के 25,000/- रुपये और दिए। महाराजा गंगासिंह ने इन्ही गांवो के नाम से गंगानगर जिले के नहरी क्षेत्र मे दूसरे तीन गांव, करणपुर, पदमपुर और केसरीसिंहपुर बसाए।

इतिहासकार दयालदास ने पूगल को बहुत नीचा दिखाने के प्रयास किए थे, अन्यो ने इनकी नकल की। उनके अनुसार पूगल के राव सुदरसेन एक उद्दड और अक्खड व्यक्ति थे। वह विद्रोही प्रवृति के थे। उन्होने यह नही बताया कि राव के इन अवगुणो से राजा करणसिंह को बीकानेर मे बैठे क्या पीडा हो रही थी?

उन्होंने फिर लिखा कि पूगल के गढ का एक माह तक घेरा रहने के बाद में राव सुदरसेन वहां से निकल गए और लखवेरा गांव मे जोइयो की शरण लेने पहुचे। वहा के जोइया ठाकुर ने राव को बन्दी बनाकर बीकानेर की सेना को सौंप दिया। राजा करणसिंह ने इनके स्थान पर राजकुमार गणेशदास को पूगल की गद्दी पर बिठा दिया। अगर उनका कथन सही है तो दोनो भाई, सुदरसेन और महेशदास, पूगल म कैसे मारे गए? गणेशदास को मुसलमान कोटवालो की शरण लेने की आवश्यकता क्यो पडी और किस अहसान के बदले मे इन्होने राव बनने पर इन कोटवालो को गणेशवाली गांव दिया? अगर राव सुदरसेन बीकानेर के बन्दी थे तो उन्हे बन्दी बनाकर कहा रखा गया, उन्हे कब रिहा किया गया और उनकी मृत्यु कहा और कैसे हुई?

दयालदास ने गलत बयान करके पूगल के इतिहास को बिगाडा, इसके बदले इनका भौतिक स्वार्थ अवश्य सिद्ध हुआ, परन्तु उन्होंने आने वाली पीढियो को झूठा इतिहास पढने के लिए विरासत मे दिया।

था। इसलिए राजा करणसिंह ने पूगल पर आक्रमण करके अन्याय किया था और राव सुदरसेन को मारकर घोर अपराध किया। भाटियो के सक्रिय विरोध, आम जनता के असहयोग और रावल अमरसिंह के हस्तक्षेप के कारण राजा करणसिंह के पुत्र महाराजा अनूपसिंह को बाध्य हो कर सन् 1670 ई. में राव सुदरसेन के पुत्र गणेशदास को पूगल लौटानी पडी।

राजा करणसिंह ने अपनी करनी और करतूतो का फल अपने जीवनकाल मे भोगा। वह अपने स्वामी और दाता, बादशाह औरगजेब के प्रति निष्ठावान नही थे। बादशाह ने राजा करणसिंह को मुगल सेना के साथ या स्वतन्त्र रूप से अनेक अभियानो मे भेजा था। इन अभियानो के दौरान बादशाह को इनके विरुद्ध स्वार्थी होने, भ्रष्टाचार, शाही सत्ता को चुनौती देने और आदेशो की अवहेलना करने की शिकायतें खुफिया तन्त्र और सेनापति करते रहते थे। बादशाह की निगाहो मे यह गिर चुके थे। इसके अलावा इनके द्वारा अटक मे नावें तोडने वाली मामूली सी घटना से बादशाह बहुत नाराज थे। उन्होने राजा करणसिंह को बताया कि अगर वह चाहे तो बीकानेर को शाही सेना से मटियामेट करवा सकते थे, उनका अपराध इतना जघन्य था कि वह उन्हे हाथी के पावो तले कुचलवा कर मृत्यु दण्ड दे सकते थे। परन्तु उनके पूर्वजो की मुगलो को दी गई अमूल्य सेवाओ का अहसान और उनके मुगलिया खानदान के साथ पारिवारिक सम्बन्ध उनके लिए न्याय मे बाधा बन रहे थे। इन सब बातो को ध्यान मे रखते हुए बादशाह औरगजेब ने इनके नाम स जारी किए गए बीकानेर राज्य की जागीर के फरमान को खारिज किया और इनके जीवनकाल मे ही इनके पुत्र राजकुमार अनूपसिंह को बीकानेर की जागीर देने का फरमान सन् 1667 ई मे जारी किया और उन्हे बीकानेर राज्य के पूर्ण शासनाधिकार दिए। यह दूसरा अवसर था तब दिल्ली के बादशाहो ने बीकानेर के शासक को गद्दी से हटाया, उनके शासनाधिकार दूसरे शासक को प्रदान किए। पहला अभागा शासक राजा दलपतसिंह था, जिन्हे सन् 1614 ई मे राजगद्दी से उतारा गया। वैसे निष्पक्ष भाव से देखा जाये तो राजा दलपतसिंह और करणसिंह के व्यवहार और आचरण मे कोई अन्तर नही था। इसलिए बादशाह जहांगीर और औरगजेब दोनो के फैसले न्यायपूर्ण थे।

बादशाह औरगजेब ने इन्हे सन् 1667 ई मे देश निकाला दे कर औरगाबाद भेज दिया। वहा बादशाह ने इन्हें गुजारे के लिए भूमि बख्शी। इस भूमि पर इन्होने, करणपुर, केसरीसिंहपुर और पदमपुर, नाम के तीन गाव बसाये। दो वर्ष बाद मे, 22 जून सन् 1669 ई मे, निर्वासन मे ही इनकी मृत्यु औरगाबाद के पास करणपुर मे हुई। उस समय इनके पास इनका कोई पुत्र, भाई या भतीजा नहीं था, केवल चुरू के ठाकुर कुशालसिंह थे। उन्होने ही उनका दाह सस्कार करवाया और मृत्योपरात सारे क्रियाकर्म किए और करवाये। सयोगवश जब राजा दलपतसिंह बीकानेर मे अपने भाई सूरसिंह के विरुद्ध युद्ध मे गए थे तब भी उनके पीछे हाथी के हौदे मे चुरू के ठाकुर भीमसिंह बैठे थे। युद्ध के समय उन्होने पीछे से दलपतसिंह के दोनों हाथ पकड लिए और उन्हें बन्दी बनाने के लिए मुगल सेनापति को सौंप दिया। राजा करणसिंह के अन्तिम समय मे भी चुरू के ही ठाकुर कुशालसिंह उनके पास थे।

बीकानेर राज्य के पास औरगाबाद के उपरोक्त तीन गांव सन् 1904 ई तक रहे।

अग्रजा ने इन गाव के बदले मे बीकानेर राज्य को पजाब के दो गाव, बावलवास और रातासेडा, दिए और मुआवजे के 25,000/- रुपये और दिए। महाराजा गगासिह ने इन्ही गावो के नाम के गगानगर जिले के नहरी क्षेत्र म दूसरे तीन गाव, करणपुर, पदमपुर और केसरीसिहपुर बसाए।

इतिहासकार दयालदास ने पूगल को बहुत नीचा दिखाने के प्रयास किए थे, अन्यो ने इनकी नकल की। उनके अनुसार पूगल के राव सुदरसेन एक उद्दड और अक्खड व्यक्ति थे। वह विद्रोही प्रकृति के थे। उन्होने यह नहीं बताया कि राव के इन अवगुणो से राजा करणसिंह को बीकानेर म बैठे क्या पीडा हो रही थी ?

उन्होने फिर लिखा कि पूगल के गढ का एक माह तक घेरा रहने के बाद म राव सुदरसन वहा से निकल गए और लखेरा गाव मे जोइयो की शरण लेने पहुचे। वहा के जोइया ठाकुर ने राव को बन्दी बनाकर बीकानेर की सेना को सौंप दिया। राजा करणसिह ने इनके स्थान पर राजकुमार गणेशदास को पूगल की गद्दी पर बिठा दिया। अगर उनका कथन सही है तो दोनो भाई, सुदरसन और महेशदास, पूगल म कैसे मारे गए ? गणेशदास को मुसलमान कोटवालो की शरण लेने की आवश्यकता क्यो पडी और किस अहसान के बदले म इन्होंने राव बनने पर इन कोटवालो को गणेशवाली गाव दिया ? अगर राव सुदरसेन बीकानेर के बन्दी थे तो उ ह बन्दी बनाकर कहां रखा गया, उन्हे कब रिहा किया गया और उनकी मृत्यु कहा और कैसे हुई ?

दयालदास ने गलत कथन करके पूगल के इतिहास को बिगाडा, इसके बदले इनका भौतिक स्वार्थ अवश्य सिद्ध हुआ, परन्तु उन्होने आने वाली पीढियो को झूठा इतिहास पढने के लिए विरासत म दिया।

मूमनवाहन, मरोठ, देरावर

राव भोजसी ने भटनेर, लाहौर आदि के खोये हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने के लिए सन् 499 ई में प्रयास किया परन्तु वह सफल नही हो सके। इनके पुत्र मगलराव ने सन् 519 ई मे मूमनवाहन का किला बनवाया और नगर बसाया। इसी स्थान के आसपास वर्तमान बहावलपुर नगर बसा हुआ है। जैसा कि मुलतान के वर्णन मे बताया गया है, मूमनवाहन जैसे स्थान का चयन करना राव मगलराव की सामरिक, तकनीकी और कुटनीतिक सूझबूझ थी। इस नए भाटी शासक ने और उनके द्वारा बनवाए गए किले ने पडोसी हिन्दू लगा शासको को आशकित कर दिया। वह इस नई स्थिति और इससे उत्पन्न होने वाली विपदा से शीघ्र निपटे, उन्होने राव मगलराव से मूमनवाहन का किला छीन लिया। उस समय मुलतान एक अत्यन्त समृद्ध हिन्दू राज्य था, वह धन धान्य से सभी प्रकार से सम्पन्न था और इसके आस पास मे इसके आश्रित अनेक छोटे राज्य व जागीरें थी। भाटियो ने इन्ही छोटे राज्यो के शासको और जागीरदारो से भूमि जीत कर, मूमनवाहन मे अपने पाव जमाए थे, परन्तु नवागन्तुको को स्थानीय शासको ने टिकने नही दिया। भाटी पजाब और भटनेर से बुरी तरह पराजित हो कर आए थे, उनके लिए अपना गुजर बसर और निर्वाह करने के लिए नया राज्य स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक था। सतलज नदी के पश्चिमी पार के सरसब्ज क्षेत्र मे मुलतान के विरुद्ध अभी उनका जमना सम्भव नही था, इसलिए उन्होने नदी के पूर्व के वीरान रेगिस्तान से लगने वाले क्षेत्र को अपने राज्य के लिए चुना। वह भटनेर से पलायन करके लाखी जगल की शरण लेते हुए, हाकडा (घग्घर) नदी के साथ साथ सतलज नदी के पूर्वी किनारे तक पहुचे।

राव मडमराव ने 80 वर्ष पश्चात्, सन् 599 ई मे मरोठ का किला बनवाया और इस क्षेत्र के आसपास मे भाटियो का आधिपत्य जमाया। अब मूमनवाहन के स्थान पर मरोठ मे भाटियो की एक बार फिर नई राजधानी स्थापित हुई। मरोठ से भाटियो की अगली छ पीढियों ने 130 वर्षों, सन् 730 ई तक, राज्य किया। यहा से राज्य करते हुए राव मूलराज (सन् 656-682 ई) ने 150 वर्षों के अन्तराल के बाद मे मूमनवाहन पर पुन अधिकार किया। इन जीते हुए क्षेत्रो को उन्होने अपने मरोठ के राज्य मे मिलाया। उन्होने यह सारा क्षेत्र पवार, जोइया, खोखर, खराल आदि हिन्दू राज्यो से जीता था। अभी तक सिन्ध प्रदेश के तट पर अरब के मुसलमानो के आक्रमण आरम्भ नही हुए थे।

सन् 711-12 ई मे अरबों ने सिन्ध प्रदेश पर आक्रमण करके वहा अपना अधिकार सुदृढ किया। मोहम्मद-बिन-कासिम ने सन् 712 ई मे मुलतान पर अधिकार करके वहा अपना राज्य स्थापित किया। अरबो ने मुलतान से अपार सोना और अन्य धन सम्पत्ति

प्राप्त की। इन बदलती हुई परिस्थितियों का लाभ उठाकर और अरबो से लोहा लेने के उद्देश्य से राव मझमराव के पुत्र, राजकुमार केहर, ने सन् 731 ई मे सतलज नदी पार करके आक्रमण किया और मुलतान से साठ मील पूर्व मे, केहरोर का क्षेत्र जीता और पुरानी व्यास नदी के ऊचे पेटे मे, केहरोर का किला बनवाया। पिछले बीस वर्षों मे (सन् 711 ई से) मुलतान मे अरब शासक अपनी स्थिति को सुदृढ नही बना पाए थे, उन्ह पडोस के हिन्दू राजाओ से पराजय का भय था। हिन्दू राजाओ को भी अरबो की विस्तारवादी नीति से भय लग रहा था। इसी स्थिति का कुमार केहर ने लाभ उठाया। उनके केहरोर तक अधिकार कर लेने से अन्य हिन्दू राजाओ का धैर्य बधा और वह कुछ आशान्वित हुए। पिछले एक सौ से अधिक वर्षों तक मरोठ पर राज्य करने वाले भाटी शासक अब इन हिन्दू राजाओ के लिए नये नही थे, उनके लिए अब मुलतान और सिन्ध प्रदेशों मे अरब शासक नये थे और उनसे उत्पन्न होने वाले खतरे भी उनके लिए नये थे। सतलज, पजनद और सिन्ध नदियो के पूर्वी क्षेत्रो पर अधिकार करते हुए भाटी, उछ, रोहडी और तणोत तक पहुच गए। सामरिक और प्रशासनिक कारणो से, सन् 770 ई मे, भाटी अपने राज्य की राजधानी मरोठ से तणोत ले गए। इस प्रकार 170 वर्षों तक मरोठ भाटियो की राजधानी रही। इधर अरब, सिन्ध और मुलतान की नदी घाटियो के उपजाऊ क्षेत्र म उलझे रहे और हिन्दू शासको से सघर्ष करते रहे। उनका मुख्य ध्येय, धन, सोना, चांदी, हीरे, जवाहरात लूटना, गुलाम पकडना और स्त्रिया प्राप्त करना था। अभी तक उनका ध्यान राज्य विस्तार करने या विस्तृत क्षेत्र पर अपना अधिकार करने की ओर नही गया था। इस स्थिति का लाभ उठाकर भाटी अन्य हिन्दू राजाओ से नदी घाटियो के पूर्व का सूखा व रेगिस्तानी क्षेत्र जीतते हुए सिन्ध मे आगे बढ़ते गए।

सन् 820 ई मे राजकुमार विजयराव चुडाला ने बीजनोत का किला बनवाया, ईरान खोरासन से बाईस परगने जीते और वराहो को बार बार युद्ध मे परास्त किया। मुलतान और सिन्ध के अरब शासक अभी तक अरब के खलीफा की प्रभुसत्ता मे थे, वह इन राज्यों पर अपनी स्थिति मजबूत करने मे अनेक कठिनाइयो का सामना कर रहे थे। इसी अवधि म, सन् 841 ई म, भटिंडा के पवारो ने धोखे से भाटी राव विजयराव चुडाला को मार डाला। पवारो ने अन्य किलो के साथ भाटियो से मरोठ और मूमनवाहन के किले भी छीन लिए। अगले दस ग्यारह वर्षों तक यह किले पवारो के अधिकार मे रहे।

सन् 852 ई मे रावल सिद्ध देवराज ने देरावर का किला बनवाया। उन्होंने पवारों को अनेक युद्धों म परास्त किया और अन्य किलो के साथ मरोठ और मूमनवाहन के किले भी पवारो से वापिस जीते। सन् 853 ई मे राजा जसभान पवार से उन्होंने लुद्रवा जीता और वह अपनी राजधानी देरावर से लुद्रवा ले गए। भाटियो ने सन् 857 ई मे पहली बार पवारों से पूगल का किला जीतकर उसके आस-पास का क्षेत्र अपने अधिकार मे लिया। पवारो द्वारा सन् 841 ई में भाटियो के साथ किए गए विश्वासघातो के परिणाम उनके लिए अत्यन्त भयानक सिद्ध हुए। जहा उन्होंने अपने राज्य के अनेक किले भाटियो से युद्ध मे हार कर उन्हें दिए, वहीं उन्होंने स्थाई रूप से सत्ता और शासन खो दिया। भाटी पवारो से हार कर फिर सम्भल गए थे और इन्होंने अगले ग्यारह सौ वर्षों तक जैसलमेर और

पूगल में शासन किया, परन्तु पवार भाटियों से हारने के बाद ये कभी नही सम्भले और धीरे-धीरे सत्ता और शासन उनसे लुप्त हो गए।

मुलतान के शासक अब इतने शक्तिशाली हो गए थे कि सन् 871 ई मे उन्होंने अरब के खलीफा के नियन्त्रण को अमान्य कर दिया, परन्तु सिन्ध के अरब शासक अभी तक ऐसी स्वतन्त्र स्थिति में नही थे। ग्यारहवी शताब्दी के आरम्भ मे मुलतान पर करमाथियनों का अधिकार हो गया था, उनका फतेह दाऊद नाम का एक योग्य शासक था। महमूद गजनी ने सन् 1006, 1010 ई के बीच में मुलतान पर तीन बार आक्रमण किए। इनसे उत्पन्न होने वाली विपदाओं से भाटियों के पड़ोस के मूमनवाहन, मरोठ और देरावर के क्षेत्र अछूते नहीं रहे।

मोहम्मद गौरी ने सन् 1175 ई मे भारत पर पहला आक्रमण मुलतान पर ही किया था, वह विजयी रहा। उसके सूबेदार ने स्थानीय हिन्दुओं को अमानवीय यातनाए दीं, जिनसे दुखी होकर उन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार करना आरम्भ कर दिया था।

सन् 1168 ई मे रावल शालीवाहन (द्वितीय) जैसलमेर के शासक बने। वह सिरोही के राजा मानसिंह देवडा की पुत्री से विवाह करने गए हुए थे, पीछे से उनके पुत्र राजकुमार बीजल ने षड्यन्त्र करके अपने आप को जैसलमेर का शासक घोषित कर दिया। रावल शालीवाहन समझदार व्यक्ति थे, वह पुत्र से सघर्ष नही करना चाहते थे। इसलिए वह अपने राज्य के देरावर के किले म चले गए ताकि वह जैसलमेर की घटनाओ से काफी दूर रहें। वहा सन् 1190 ई म खिजर खा बलोच ने आक्रमण किया, उसके साथ युद्ध मे रावल शालीवाहन मारे गए। क्योंकि उस समय देरावर की सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ थी और अन्य सुख सुविधा के साधनों का अभाव नही था इसीलिए वह अपनी नव-विवाहित रानी के साथ वहा रहने गए थे। इससे यह भी स्पष्ट था कि पडोस मे इतनी उथल-पुथल, युद्ध, आक्रमणो आदि के होते रहने से भी मरोठ, देरावर और मूमनवाहन भाटियो के अधिकार में थे, तभी तो रावल वहा शान्ति से रहने गए थे। यह मानना सही होगा कि सन् 1190 ई के बाद मे यह किले एव इनके क्षेत्र खिजर खा बलोच के अधिकार मे चले गए थे। इसके बाद मे यहा जोइयों, दहियों और चौहानो का अधिकार हुआ।

सन् 1380 ई के बाद मे पूगल के राव रणकदेव ने जोइयों से पहले मरोठ और कुछ समय पश्चात् मूमनवाहन जीते। परन्तु कुछ समय पश्चात् बीकमपाल जोइये ने उनसे मूमनवाहन छीन लिया। अपने शासन के अन्त तक (सन् 1414 ई), राव रणकदेव पूर्वी क्षेत्रों मे जोइयो की सहायता करते रहे या उनके सहयोग से राठौडो से उलझे रहे, इसलिए वह अपने पश्चिम के सीमान्त क्षेत्र की सुरक्षा की ओर ध्यान नही दे सके। इसके फलस्वरूप मरोठ का किला भी इनके अधिकार से निकल गया। इन्होंने देरावर के किले पर अधिकार करने का कभी प्रयास तक नही किया क्योकि वहा के शासक इनसे ज्यादा शक्तिशाली थे। देरावर, मरोठ और मूमनवाहन को पुन भाटियो ने पूगल राज्य के अधिकार मे लने का श्रेय राव केलण को गया।

सन् 1414 ई. मे राव केलण पूगल की राजगद्दी पर बैठे। उन्होने थोडे समय पश्चात् शक्ति सगठन करके भादा पाहू भाटी की सहायता से देरावर के शासक अजा दहिया पर

आक्रमण किया। इस युद्ध मे इनके भाई सोम का पुत्र सहममल और भादा पाहू का पुत्र रूपसी पाहू मारे गए, राव केलण का देरावर पर अधिकार हो गया। देरावर भाटियो के अधिकार से सन् 1190 ई मे निकल गया था, जिसे 225 वर्षों बाद मे राव केलण ने पुन' अधिकार मे लिया। उस समय जैसलमेर के उत्तर पश्चिमी सम्भाग की राजधानी देरावर मे थी, इसीलिए रावल शालीवाहन वहा जा कर रहे थे और इसकी वरिष्ठता के कारण ही राव केलण ने पहले पहल वहा अधिकार किया। सन् 1418 ई. मे नागौर मे राव चून्डा का वध करने के पश्चात् उन्होने फिर पश्चिम की ओर ध्यान दिया। उन्होने मूमनवाहन के अलावा अन्य अनेक किले अपने अधिकार मे लिए और मुलतान के शासको से बराबर के स्तर पर मित्रता बनाए रखी।

सन् 1414 ई के बाद मे जब राव केलण अपने पश्चिम और पूर्व के विजय अभियानो पर निकले तब वह पूगल के प्रशासन व गढ की सुरक्षा का दायित्व अपने छोटे पुत्र कुमार रणमल को सौंप कर गए थे। इनके प्रबन्ध और सेवाओ से प्रसन्न हो कर उन्होंने कुमार रणमल को मरोठ की जागीर प्रदान की।

सन् 1430 ई मे राव चाचगदेव के शासक बनने के पश्चात् पूगल राज्य का पश्चिमी सीमान्त क्षेत्र अशान्त हो गया था। पडोस के लगा और बलोच प्रधान लूटपाट और आक्रमण करने लगे थे। पूगल राज्य मे सीमान्त क्षेत्र मे बसने वाले लोग भी भय और लालच से चोरी छिपे शत्रुओ का साथ देने लग गए थे। इसलिए उन्होने अपना अस्थाई मुख्यालय मरोठ मे रखा और रणमल से मरोठ की जागीर ले कर, बदले मे उन्हें बीकमपुर की जागीर प्रदान की। इसका एक कारण यह भी था कि रणमल अपने पिता के समय से स्वतन्त्र और महत्वाकाक्षी हो गये थे, राव चाचगदेव का शासक बनना उन्हें रास नही आया और वह इस सीमान्त क्षेत्र की रक्षा और शासन व्यवस्था मे पूरे तन, मन, धन से सहयोग नहीं दे रहे थे। इन्ही कारणो से उन्होने रणमल से मरोठ छुडवाया, वहा अपनी अस्थाई राजधानी बनाने का उनका एक सभ्य बहाना मात्र था। इन्होने मुलतान के शासक काला लोदी से दुनियापुर और मूमनवाहन के किले जीते। राव चाचगदेव किसी असाध्य रोग से ग्रस्त थे, इसलिए उन्होंने सन् 1448 ई मे काला लोदी को स्वेच्छा से युद्ध के लिए निमन्त्रण दिया ताकि युद्ध मे मरने से उनका रोग से पीछा छूट जाए। इस युद्ध मे राव चाचगदेव मारे गए। इस पराजय के कारण अन्य किलो के साथ मे मूमनवाहन का किला भी मुलतान के काला लोदी के अधिकार मे चला गया।

राव चाचगदेव ने अपनी चौहान रानी सूरज कवर के पुत्र रणधीर को देरावर की जागीर प्रदान की थी।

सन् 1448 ई मे राव बनते ही राव बरसल ने काला लोदी से युद्ध करके दुनियापुर और मूमनवाहन के किलो पर पुन. अधिकार कर लिया। इन्होने अपने पुत्र जगमाल को मूमनवाहन, जोगायत को केहरोर और तिलोकसी को मरोठ की जागीरें प्रदान की। जगमाल की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र जैतसी और पौत्र पचायन अपनी जागीर पर अधिकार नहीं रख सके। मुसलमानो ने सन् 1543 ई मे सीमा पर जैतसी को मारकर मूमनवाहन पर अधिकार कर लिया था। यह घटना राव वरसिंह (सन् 1535-1553 ई) के समय मे

घटी। जैतसी के पुत्र पचायन का विवाह मारवाड के राव गगा की बहन से हुआ था। राव गगा मारवाड के राव सूजा (सन् 1491-1516 ई) के ज्येष्ठ पौत्र थे, इनके पिता राजकुमार बागा युवावस्था मे ही मर गए थे। पचायन के एक पुत्र राम की पुत्री सहोदरा का विवाह मारवाड के राजा चन्द्रसेन (सन् 1562-1580 ई) के साथ हुआ था, और उनके दूसरे पुत्र गोविन्ददास की पुत्री सुजानदे का विवाह मारवाड के राजा सूरसिंह (सन् 1595-1615 ई) के साथ हुआ था। गोविन्ददास के पुत्र जोगीदास को मारवाड के शासक सूरसिंह ने अपने राज्य मे, सन् 1610 ई मे, बीझवारिया की चार गावो की जागीर बख्शी। इन्होने एक उन्मत्त हाथी को अकेले मारा था। बादशाह शाहजहा (सन् 1627-1657 ई) ने सन् 1634 ई मे मोहब्बत खा को अहमदनगर के दौलताबाद के किले पर आक्रमण करने के आदेश दिए थे। मारवाड के राजा गजसिंह (सन् 1627-38 ई) भी इस युद्ध मे अपनी सेना लेकर गए थे। इस सेना के साथ मे मूमनवाहन के जोगीदास के पुत्र रघनाथ और जगन्नाथ भाटी, जगन्नाथ के पुत्र अचलदास और हरनाथ भी थे। इस युद्ध मे यह चारो भाटी काम आए। जगन्नाथ के वशजो को चादरस की, रघनाथ के वशजो को बीझवारिया मे और राम के वशजो को मेडता मे राजोद की जागीरें मिली। जगमाल के वशज सन् 1650 ई. से पहले मूमनवाहन छोडकर मारवाड राज्य की सेवा मे चले गए थे, जहा उन्होने वीरता दिखाकर मान-सम्मान पाया और मारवाड के शासको ने उन्हे बलिदान और सेवाओ के लिए जागीरें प्रदान की। इन्होने राज्य की सेवा करके और वीरता दिखाकर अपने पूगल के भाटी पूर्वजो का नाम ऊचा रखा। इनसे मारवाड के राजाओ ने वैवाहिक सम्बन्ध बनाए रखे और इन्हे उचित आदर दिया।

राव शेखा की अकर्मण्यता और राव हरा की अवहेलना के कारण पूगल राज्य के पश्चिमी सीमान्त क्षेत्र मे अशान्ति फैली और वहा भाटियो का प्रभाव डगमगाने लगा। राव वरसिंह ने स्थिति की गम्भीरता को पहचाना और मुलतान के सक्रिय हस्तक्षेप को देखते हुए उन्होने जैसलमेर के रावल लूणकरण की सहायता ली। देरावर के रणधीर के वशज वीरमदे, मूला, अजा और नेता अक्षम थे, इसलिए इन्होने नेता को वहा से हटा कर नोख, सेवडा क्षेत्र मे जागीर दी और अपने पुत्र बीदा को देरावर की व्यवस्था सौपी। रावल लूणकरण ने देरावर, मरोठ, और मूमनवाहन की रक्षा की और इन्हे पूगल राज्य के अधिकार क्षेत्र मे रखा। जगमाल के पौत्र पचायन ने मारवाड की ओर पलायन किया, जहा उनके वैवाहिक सम्बन्ध होने से वहा के शासको ने उन्हे जागीरें दी।

राव जैसा ने (सन् 1553 1587 ई) मरोठ के तिलोकसी के पुत्र भैरवदास के नि सन्तान मरने पर, मरोठ को खालसे किया। सन् 1577 ई मे बीकानेर के राजा रायसिंह को बादशाह अकबर ने अन्य 52 परगनो के साथ मे मरोठ का परगना भी बख्शा। फरमान मे इसे सरकार मुलतान का भाग बताया गया और इसकी आय 2,80,000 दाम आकी गई। यह राजा रायसिंह के अकबर के साथ मे घनिष्ठ पारिवारिक और वैवाहिक सम्बन्धो का फल था कि उन्होने मरोठ को सरकार मुलतान का भाग दर्शाकर अपने नाम से जागीर का शाही फरमान प्राप्त कर लिया। वस्तुत मरोठ कभी भी मुलतान का भाग नही रहा था और यह तथ्य राजा रायसिंह की जानकारी मे भी था। राव केलण (सन् 1414-1430 ई)

के समय से ही मरोठ पूगल के स्वतन्त्र राज्य का भाग था। राजा रायसिंह ने यह तथ्य जानते हुए यहा अपना थाना नही बैठाया, न ही अपने राजस्व अधिकारी यहा भेजे। उन्होने फरमान की पालना के लिए मुलतान के सूबेदार से भी कोई सहायता नही मागी। राव जैसा ने जब मरोठ को खालसे किया था तब भी बीकानेर चुप रहा, इससे स्पष्ट था कि मरोठ सदैव पूगल के अधिकार मे रहा था।

देरावर पर बीदा के वशजो का आशिक अधिकार राव सुदरसेन (सन् 1650-1665 ई) के समय तक लगभग एक सौ वर्ष रहा। राव बरसिंह ने सन् 1550 ई मे कुछ समय के लिए अयोग्यता के कारण बीदा से देरावर लेकर उनके भाई धनराज को सौंपी थी। सन् 1587 ई मे धनराज राव जैसा के साथ मारे गए थे, उसके पश्चात् यह जागीर वापिस बीदा के पास आ गई।

जगमाल के वशजो, जैतसी, पचायन, गोविन्ददास, जोगीदास का पुख्ता अधिकार मूमनवाहन पर नही रहा। इसे कभी मुसलमान उनसे छीन लेते और कभी वह अन्य भाटियो की सहायता से इसे अपने अधिकार मे वापिस ले लेते थे। वैसे सन 1540-50 ई के बाद मे उनकी रुचि मूमनवाहन मे कम और अपनी मारवाड की जागीरो मे अधिक रहती थी। मारवाड के शासको से इनकी पुत्रियो और पुत्रो के वैवाहिक सबध हो जाने से वह मूमनवाहन को अपने अधीनस्थ लोगो के भरोसे छोडकर मारवाड चले गए। सन् 1634 ई मे इन्हे चादरख, राजोद, बीझवारिया, रावलावास की मारवाड की जागीरें मिलने से इस क्षेत्र मे उनकी उपस्थिति और भी नगण्य हो गई थी।

पूगल के राव काना (सन् 1587-1600 ई) और राव आसकरण (सन् 1600-1625 ई) की सैनिक शक्ति कमजोर हो गई थी। राव आसकरण ने राजा रायसिंह की नागौर के युद्ध में सहायता भी की थी। चुडेहर के मामले मे इनकी राजा दलपतसिंह से अनबन होने से, और बाद मे बीकानेर की स्वय की दशा कमजोर होने से, राजा सूरसिंह भाटियो की मुलतान के विरुद्ध सहायता करने से कतराते थे। राव आसकरण सन् 1625 ई मे बलोचो द्वारा युद्ध मे मार दिए गए थे। बीकानेर के राजा सूरसिंह का विवाह राव आसकरण की पुत्री से हुआ था। राव जगदेव (सन् 1625-1650 ई) के शासनकाल मे पूगल के भाटियो की स्थिति और भी कमजोर व दयनीय हो गई थी। वह लगाओ और बलोचों के विरुद्ध अपना बचाव करने म असमर्थ रहने लगे। बीकानेर के शासक पूगल की सहायता करके लगाओ और बलोचो से शत्रुता नही करना चाहते थे क्योकि अपनी पराजय की स्थिति मे मुलतान की शत्रुता उन्हे महगी पड सकती थी। उस समय दिल्ली के शासक अत्यन्त शक्तिशाली थे, मुलतान मे उनके सूबेदार उनके अनुशासन और नियन्त्रण मे थे। बादशाह अकबर (सन् 1556-1605 ई), जहागीर (सन् 1605-1627 ई), शाहजहा (सन् 1627-1657 ई), अपनी शक्ति की चरम सीमा पर थे। पूगल के राव हरा और राव बरसिंह अपने राज्य की परवाह नही करते हुए, बीकानेर के राव लूणकरण और जैतसी के नए राज्य की नीव सुदृढ कराने के लिए उनकी सहायता करते रहे। परन्तु जब पूगल के राज्य को खतरा होने लगा तो उन्होने अपने स्वार्थ को पहले महत्व दिया। उधर जैसलमेर के रावल कल्याणदास (सन् 1613-31 ई), मनोहरदास (सन् 1631-49 ई), और रावल

रामचन्द्र (सन् 1649-50 ई) की स्थिति आपसी मनमुटाव, गृह कलह और भाइयो के द्वेष के कारण अस्थिर थी। इसलिए जैसलमेर के रावल पूगल राज्य की सहायता करने की स्थिति मे नही थे। इसके विपरीत राव वरसिंह और राव जैसा, मारवाड, मालाणी और अमरकोट तक म जैसलमेर के रावल लूणकरण और रावल मालदेव के लिए लडाइया लडते रहे।

जैसलमेर के रावल मनोहरदास के देहान्त के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी का विवाद चला। रावल रामचन्द्र वहा के शासक तो बन गए किन्तु सबलसिंह ने अपना दावा नही छोडा। वह सन् 1650 ई म बादशाह शाहजहा से अपने पक्ष म जैसलमेर की राजगद्दी का फरमान प्राप्त करके जैसलमेर आए और उन्होने रावल रामचन्द्र (सन् 1649-50 ई) को पदच्युत किया। वह रावल रामचन्द्र को जैसलमेर से बहुत दूर ऐसे स्थान पर स्थापित करना चाहते थे जहा से वह उनके शासन मे हस्तक्षेप नही कर सकें और असन्तुष्ट सामन्तो और प्रजा को उनका समर्थन प्राप्त करने मे कठिनाई आए। वह पूगल राज्य की समस्याओ से भली भाति परिचित थे, उन्हे यह भा ज्ञात था कि पूगल के राव अपनी पश्चिमी सीमा की सुरक्षा करने म असमर्थ थे और अ य पडोसी राज्यो से सहायता नही मिलने के कारण वह बलोच और लगाओ के आक्रमणो के विरुद्ध असहाय थे। इस उलझी हुई स्थिति का लाभ उठाने के लिए रावल सबलसिंह पदच्युत रावल रामचन्द्र के साथ पूगल आए। उन्होने राव सुदरसन को सलाह दी कि वह अपना पश्चिमी क्षेत्र स्वच्छा से रावल रामचन्द्र को दे दें, वह इस क्षेत्र को सम्भाल लग और शेष पूगल क्षेत्र की प्रजा को सीमान्त पार के आक्रमणो व डाको से राहत मिलेगी। राव सुदरसन को यह प्रस्ताव ठीक लगा। उनकी सैनिक कमजोरी के कारण पश्चिम का सारा क्षेत्र लगा और बलोच उनसे छीन सकते थे और फिर भी बचे हुए पूगल की उनसे सुरक्षा की कोई जमानत नही थी। उन्होने यह भी सोचा कि मुसलमानो के पडोस से एक और भाटी वश का पडोसी शासक उनके लिए ठीक रहेगा। इन सब बातो पर गम्भीरता से विचार करके राव सुदरसेन अपने राज्य के पश्चिम के भाग का 15,000 वर्ग मील क्षेत्र रावल रामचन्द्र को देने के लिए सहमत हो गए। इस भाग मे देरावर, मरोठ, मूमनवाहन, बीकनोत, रुकनपुर आदि का क्षेत्र था। यह नया राज्य 'देरावर' राज्य के नाम मे सन् 1650 ई मे स्थापित किया गया। पूगल राज्य के पास भी लगभग 15,000 वर्ग मील का क्षेत्र शेष रहा। रावल रामचन्द्र नवस्थापित देरावर राज्य के पहले शासक हुए और इन्होने अपनी राजधानी देरावर मे रखी।

अगर रावल सबलसिंह की सहायता से जैसलमेर से आए हुए रावल रामचन्द्र और उनके वशज 113 वर्षों (सन् 1763 ई) तक देरावर पर अपना अधिकार रख सकते थे तो क्या उनकी सहायता से पूगल के राव उस क्षेत्र पर अपना अधिकार यथावत नहीं रख सकते थ? परन्तु यह तो रावल रामचन्द्र को जैसलमेर स दूर स्थापित करने के लिए रावल सबलसिंह की कूटनीति और स्वार्थ था कि इन्होंने पूगल को सैनिक सहायता देने का प्रस्ताव नहीं किया। अगर वह राव सुदरसेन को सैनिक सहायता दे देते तो रावल रामचन्द्र की उनकी समस्या का समाधान कैसे होता? राव सुदरसेन द्वारा रावल सबलसिंह की सलाह का आदर करके रावल रामचन्द्र को आधा राज्य देने के लिए सहमत होने के फलस्वरूप

उनसे बीकानेर के राजा करणसिंह (सन् 1631-1667 ई.) क्रुद्ध हुए और उन्होंने स
1665 ई मे पूगल पर आक्रमण करके राव सुदरसेन को मार डाला। अगर रावल सबलसि
राव सुदरसन को केवल सैनिक सहायता दे देत तो राजा करणसिह द्वारा पूगल पर आक्रम
करने की नौबत नही आती और राव सुदरसेन का मारा जाना टल जाता। रावल सबलसि
का दिल्ली के दरबार में पलडा भारी था, तभी तो उन्हे जैसलमेर की राजगद्दी का फरमा
प्राप्त हुआ था और रावल रामचन्द्र को देरावर के नए राज्य में स्थापित करने के लि
उन्हें दिल्ली दरबार के आशीर्वाद से मुलतान के शासकों का सहयोग भी प्राप्त था। अन्यथ
मुल्तान अपने पड़ोस मे एक नए स्वतन्त्र राज्य की स्थापना को रोक सकता था और बाद
उसमे आन्तरिक हस्तक्षेप करने से भी नहीं चूकता। दिल्ली के नरम रुख के कारण बादशा
औरंगजेब (सन् 1657-1707 ई) के समय भी मुल्तान के शासक देरावर राज्य के प्र
उदार रहे। इसके बाद के दिल्ली के शासक स्वय इतने कमजोर हुए कि उन्हें स्थिति क
सम्भाल कर अपनी राजगद्दी बचाने में ही परेशानी हो रही थी। इसी अस्थिरता के सम
मुलतान के शासक या उनके सहयोग से अन्य मुसलमान प्रमुख देरावर म हस्तक्षेप करने
सक्रिय हो गए।

रावल रामचन्द्र (सन् 1650 ई) के बाद मे माधोसिह, किसनसिंह और रायसि
देरावर के शासक बने। रावल रायसिंह सन् 1741 ई में शासक बने और सन् 1763 ई
मे उन्हें अन्तिम बार देरावर त्यागना पडा।

कन्धार के शासको ने दाऊद खा अफगान को वहा से खदेड कर निकाल दिया था
उसने भारत मे आकर सिन्ध प्रान्त के शिकारपुर क्षेत्र मे शरण ली। अपनी योग्यता औ
चतुराई से उसने शिकारपुर के राज्य पर अधिकार कर लिया। उसके पुत्रो और पौत्र
(दाऊद पुत्रों) ने कच्छ के जाली प्रदेश पर भी राज्य विस्तार करके वहा अधिकार कर लिय
था। देरावर क्षेत्र मे मुसलमानों की जनसख्या काफी थी, इनमे प्रभावशाली खोरान
मुसलमान भी काफी थे। सन् 1726 ई मे देरावर के शासक रावल किसनसिंह की कमजोर
का लाभ उठाकर मोरखा खोरानी ने देरावर के किले पर अधिकार कर लिया। राजकुमा
रायसिंह ने मुल्तान मे मुगलो के सूबेदार से सहायता प्राप्त करके देरावर को खोरानियों
मुक्त करवा कर अपने अधिकार मे लिया। अब खोरानियों ने भटनेर के भाटी और सिहान
कोट के जोइयों (दोनो मुसलमान) से सांठगांठ करके देरावर राज्य मे लूटपाट शुरू की
वहां उपद्रव खडे किए और अशान्ति फैलाई।

देरावर की राजकुमारियो, फतेह कवर और सुरतानदे, का विवाह बीकानेर के
महाराजा सुजानसिंह के साथ मे हुआ था। सन् 1736 ई मे महाराजा जोरावरसिंह क
विवाह भी देरावर के सूरसिंह की पुत्री अर्ज कवर के साथ मे हुआ था।

देरावर के शासकों के लिए खोरानियो के उपद्रवो को दबाने के लिए बार बार
मुलतान से सहायता प्राप्त करना न तो उचित था और न ही आसान था। सन् 1738
39 ई के नादिर शाह के आक्रमण के बाद मे मुगलों की मुलतान में स्थिति अच्छी नहीं थी।
सन् 1751 ई के पश्चात् लाहौर, पंजाब और मुलतान मुगलों ने विवश हो कर अहमद शाह
अब्दाली को सौंप दिए थे। इधर जैसलमेर मे रावल अखैसिंह और उनके पुत्र रावल मूलराज

रामचन्द्र (सन् 1649-50 ई) की स्थिति आपसी मनमुटाव, गृह कलह और भाइयों के द्वेष के कारण अस्थिर थी। इसलिए जैसलमेर के रावल पूगल राज्य की सहायता करने की स्थिति मे नही थे। इसके विपरीत राव बरसिंह और राव जैसा, मारवाड़, मालाणी और अमरकोट तक म जैसलमेर के रावल लूणकरण और रावल मालदेव के लिए लड़ाइया लड़ते रहे।

जैसलमेर के रावल मनोहरदास के देहान्त के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी का विवाद चला। रावल रामचन्द्र वहां के शासक तो बन गए किन्तु सबलसिंह ने अपना दावा नही छोडा। वह सन् 1650 ई म बादशाह शाहजहा से अपने पक्ष म जैसलमेर की राजगद्दी का फरमान प्राप्त करके जैसलमेर आए और उन्होने रावल रामचन्द्र (सन् 1649-50 ई) को पदच्युत किया। वह रावल रामचन्द्र को जैसलमेर से बहुत दूर ऐसे स्थान पर स्थापित करना चाहते थे जहा से वह उनके शासन मे हस्तक्षेप नही कर सकें और असन्तुष्ट सामन्तो और प्रजा को उनका समथन प्राप्त करने मे कठिनाई आए। वह पूगल राज्य की समस्याओ से भली भाति परिचित थे, उन्हे यह भा ज्ञात था कि पूगल के राव अपनी पश्चिमी सीमा की सुरक्षा करने मे असमथ थे और अ य पडोसी राज्यो से सहायता नही मिलने के कारण वह बलोच और लगाओ के आक्रमणो के विरुद्ध असहाय थे। इस उलझी हुई स्थिति का लाभ उठाने के लिए रावल सबलसिंह पदच्युत रावल रामचन्द्र के साथ पूगल आए। उन्होने राव सुदरसेन को सलाह दी कि वह अपना पश्चिमी क्षेत्र स्वच्छा से रावल रामचन्द्र को दे दें, वह इस क्षेत्र को सम्भाल लग और शेष पूगल क्षेत्र की प्रजा को सीमान्त पार के आक्रमणो व डाको से राहत मिलेगी। राव सुदरसेन को यह प्रस्ताव ठीक लगा। उनकी सैनिक कमजोरी के कारण पश्चिम का सारा क्षेत्र लगा और बलोच उनसे छीन सकते थे और फिर भी बचे हुए पूगल की उनसे सुरक्षा की कोई जमानत नही थी। उन्होने यह भी सोचा कि मुसलमानो के पडोस से एक और भाटी वश का पडोसी शासक उनके लिए ठीक रहेगा। इन सब बातो पर गम्भीरता से विचार करके राव सुदरसेन अपने राज्य के पश्चिम के भाग का 15,000 वर्ग मील क्षेत्र रावल रामचन्द्र को देने के लिए सहमत हो गए। इस भाग मे देरावर मरोठ, मुमनवाहन, बीजनोत, रुकनपुर आदि का क्षेत्र था। यह नया राज्य 'देरावर' राज्य के नाम से सन् 1650 ई मे स्थापित किया गया। पूगल राज्य के पास भी लगभग 15,000 वर्ग मील का क्षेत्र शेष रहा। रावल रामचन्द्र नवस्थापित देरावर राज्य के पहले शासक हुए और इन्होने अपनी राजधानी देरावर मे रखी।

अगर रावल सबलसिंह की सहायता से जैसलमेर से आए हुए रावल रामचन्द्र और उनके वशज 113 वर्षों (सन् 1763 ई) तक देरावर पर अपना अधिकार रख सकते थे तो क्या उनकी सहायता से पूगल के राव उस क्षेत्र पर अपना अधिकार यथावत नही रख सकते थे? परन्तु यह तो रावल रामचन्द्र को जैसलमेर से दूर स्थापित करने के लिए रावल सबलसिंह की कूटनीति और स्वार्थ था कि इन्होने पूगल को सैनिक सहायता देने का प्रस्ताव नही किया। अगर वह राव सुदरसेन को सैनिक सहायता दे देते तो रावल रामचन्द्र की उनकी समस्या का समाधान कैसे होता? राव सुदरसेन द्वारा रावल सबलसिंह की सलाह का आदर करके रावल रामचन्द्र को आधा राज्य देने के लिए सहमत होने के फलस्वरूप

उनसे बीकानेर के राजा करणसिंह (सन् 1631-1667 ई.) क्रुद्ध हुए और उन्होंने सन् 1665 ई में पूगल पर आक्रमण करके राव सुदरसेन को मार डाला। अगर रावल सबलसिंह राव सुदरसेन को केवल सैनिक सहायता दे देते तो राजा करणसिंह द्वारा पूगल पर आक्रमण करने की नौबत नहीं आती और राव सुदरसेन का मारा जाना टल जाता। रावल सबलसिंह का दिल्ली के दरबार में पलड़ा भारी था, तभी तो उन्हें जैसलमेर की राजगद्दी का फरमान प्राप्त हुआ था और रावल रामचन्द्र को देरावर के नए राज्य में स्थापित करने के लिए उन्हें दिल्ली दरबार के आशीर्वाद से मुलतान के शासकों का सहयोग भी प्राप्त था। अन्यथा मुलतान अपने पड़ोस में एक नए स्वतन्त्र राज्य की स्थापना को रोक सकता था और बाद में उसमें आन्तरिक हस्तक्षेप करने से भी नहीं चूकता। दिल्ली के नरम रुख के कारण बादशाह औरंगजेब (सन् 1657-1707 ई) के समय भी मुलतान के शासक देरावर राज्य के प्रति उदार रहे। इसके बाद के दिल्ली के शासक स्वयं इतने कमजोर हुए कि उन्हें स्थिति को सम्भाल कर अपनी राजगद्दी बचाने में ही परेशानी हो रही थी। इसी अस्थिरता के समय मुलतान के शासक या उनके सहयोग से अन्य मुसलमान प्रमुख देरावर में हस्तक्षेप करने में सक्रिय हो गए।

रावल रामचन्द्र (सन् 1650 ई) के बाद में माधोसिंह, किसनसिंह और रायसिंह देरावर के शासक बने। रावल रायसिंह सन् 1741 ई में शासक बने और सन् 1763 ई में उन्हें अन्तिम बार देरावर त्यागना पड़ा।

कन्धार के शासकों ने दाऊद खा अफगान को वहा से खदेड़ कर निकाल दिया था। उसने भारत में आकर सिन्ध प्रान्त के शिकारपुर क्षेत्र में शरण ली। अपनी योग्यता और चतुराई से उसने शिकारपुर के राज्य पर अधिकार कर लिया। उसके पुत्रों और पौत्रों (दाऊद पुत्रों) ने कच्छ के खाली प्रदेश पर भी राज्य विस्तार करके वहा अधिकार कर लिया था। देरावर क्षेत्र में मुसलमानों की जनसंख्या काफी थी, इनमें प्रभावशाली खोरानी मुसलमान भी काफी थे। सन् 1726 ई में देरावर के शासक रावल किसनसिंह की कमजोरी का लाभ उठाकर मीरखा खोरानी ने देरावर के किले पर अधिकार कर लिया। राजकुमार रायसिंह ने मुलतान में मुगलों के सूबेदार से सहायता प्राप्त करके देरावर को खोरानियों से मुक्त करवा कर अपने अधिकार में लिया। अब खोरानियों ने भटनेर के भाटियों और मिठान-कोट के जोइयों (दोनों मुसलमान) से सांठगांठ करके देरावर राज्य में लूटपाट शुरू की, वहां उपद्रव खड़े किए और अशान्ति फैलाई।

देरावर की राजकुमारियों, फतेह कवर और सुरतादे, का विवाह बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह के साथ में हुआ था। सन् 1736 ई में महाराजा जोरावरसिंह का विवाह भी देरावर के सूरसिंह की पुत्री अर्जुन कवर के साथ में हुआ था।

देरावर के शासकों के लिए खोरानियों के उपद्रवों को दबाने के लिए बार-बार मुलतान से सहायता प्राप्त करना न तो उचित था और न ही आसान था। सन् 1738-39 ई के नादिर शाह के आक्रमण के बाद में मुगलों की मुलतान में स्थिति अच्छी नहीं थी। सन् 1751 ई के पश्चात् लाहौर, पंजाब और मुलतान मुगलों ने विवश हो कर अहमद शाह अब्दाली को सौंप दिए थे। इधर जैसलमेर के रावल अखैसिंह और उनके पुत्र रावल मूलराज

(सन् 1762-1820 ई) स्वय इतन शक्तिशाली नही थ कि वह देरावर राज्य की सहायता कर सकते । वह ईर्ष्या से रावल रामचन्द्र के वशजो को दूर देरावर मे भी फलता फूलता देख कर प्रसन्न नही थे, इसलिए उनके द्वारा उनकी सहायता करने का प्रश्न ही नही था ।

पूगल पहले ही राव सुदरसेन के समय रावल रामचन्द्र को अपनी विवशता के कारण देरावर का आधा राज्य दे चुका था, इसलिए राव अमरसिह (सन् 1741-1783 ई) द्वारा देरावर राज्य को किसी प्रकार की सहायता उपलब्ध कराना सम्भव नही था । इन विपरीत परिस्थितिया म मजबूर हो कर रावल रायसिह (सन् 1741 63 ई) ने दाऊद खा के पुत्रो, मुबारक खा और सादक मोहम्मद, को अपने राज्य के जमादार नियुक्त किए और इन्हे राज्य मे शान्ति स्थापित करने का कार्य सौंपा । चूकि यह खोरानी मुसलमानो के विरुद्ध थे, इसलिए इन्होने आरम्भ मे सराहनीय कार्य किया और शान्ति स्थापना करने मे अच्छी सफलता पाई । इनकी सेवाओ से प्रसन्न हो कर रावल रायसिह ने इन्हें अपने राज्य के सूबेदार का उच्च पद दिया और कुछ समय पश्चात् इन्हें और ऊचा दीवान का पद देकर सम्मानित किया । इस प्रकार से अप्रत्याशित सफलताओ और उच्च अधिकारो ने दाऊद पुत्रो का मानस फेर दिया ।

सन् 1763 ई मे रावल रायसिह तीर्थ यात्रा करन कुछ दिनो के लिए देरावर से बाहर चले गए थे । इनकी अनुपस्थिति म दाऊद पुत्रो ने देरावर के किल पर अधिकार कर लिया । जब रावल रायसिह को उनके साथ मे किए गए विश्वासघात और अन्य घटनाओ का बढा चढा कर विवरण दिया गया तो वह इतने भयभीत हो गए कि वह वापिस देरावर गए ही नही । उन्हे स्वार्थी तत्वो ने गलत तथ्य पेश किए और घटनाओ का भी सही विवरण नही दिया । वह इतने आशकित थे कि दाऊद पुत्रो द्वारा राज्य की बागडोर सम्भालने के लिए बुलाए जाने पर भी देरावर नही लौटे । वह बीकानेर के महाराजा गजसिह (सन् 1745 87 ई) से सैनिक सहायता लेने बीकानेर आए थे, परन्तु उन्होंने सहायता नही दी । इस सहायता के नही देने के कई कारण थे, महाराजा गजसिह स्वय अवसर पा कर पूगल और देरावर पर अधिकार करना चाहते थे और वह देरावर की खातिर मुसलमानो या मुलतान स झगडा मोल नही लेना चाहते थे । उस समय मुलतान अहमद शाह अब्दाली के अधिकार के होने से उनके देरावर मे सैनिक हस्तक्षेप के परिणाम बीकानेर राज्य के लिए दुर्भाग्यपूर्ण हो सकते थे । बीकानेर अपने भाग्य को देरावर के दुर्भाग्य से नही जोडना चाहता था । यह दोनो कारण उस समय सही थे । सन् 1783 ई मे वस्तुत महाराजा गजसिह ने राव अमरसिह को मार कर पूगल पर अधिकार कर ही लिया था, इससे पहला कारण समझने मे कठिनाई नही रहेगी । दूसरा, मुलतान के हस्तक्षेप के सामने वह कमजोर पडते थे इसलिए उन्होने देरावर के बजाय पूगल लेकर सतोष कर लिया ।

रावल रायसिह कोलायत मे रहने लगे थे । मुबारक खा ने अपने आदमियो और अधिकारिया को रायसिह के पास कोलायत भेजकर उनसे देरावर लौट आने का आग्रह किया । परन्तु पहले की गलत अफवाहो मे वह इतने घबराए हुए थे कि वापिस देरावर जाने का साहस नही कर सके । जब यह देरावर नही लौटे तो मुबारक खा ने मानवीयता के नाते इन्हें राशन और रकम भेजनी शुरू कर दी, और इनका हाथ खर्च रु 20/– प्रति दिन बाध

दिया। इस समय तक शिकारपुर के दाऊद खा के पौत्र फतेह खा कुरेशी ने देरावर पर अपना अधिकार मजबूती से जमा लिया था। मुबारक खा ने जैसलमेर राज्य का कुछ भाग छीनकर अपने पिता दाऊद खा के राज्य मे मिला लिया था। इनके पौत्र वहावलखा ने सन् 1780 ई मे वर्तमान वहावलपुर नगर वसाया, वह अपने राज्य की राजधानी देरावर से वहावलपुर ले गए। सन् 1820 ई मे बहादुर खा ने जैसलमेर से दीनगढ, शाहगढ, घोटाऊ के किले छीन लिए थे। इन्ह सन् 1818 ई की सन्धि की शर्तों के अनुसार ब्रिटिश शासन ने बहावलपुर स वापिस जैसलमेर को दिलवाए।

रावल रायसिंह कोलायत से गडियाला आकर रहने लगे थे। वहा सन् 1777 ई मे इनका देहान्त हो गया। इनके बाद मे रुघनाथसिंह रावल बने। सन् 1791 ई मे जालमसिंह गडियाले के रावल बने। इन्होने बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह की सहायता से ब्रिटिश शासन से देरावर राज्य उन्हे वापिस दिलवाने का असफल प्रयास भी किया। इनके असफल रहने का एक कारण बीकानेर का स्वय का स्वार्थ भी था, वह देरावर राज्य के मोजगढ, पूलडा आदि पर अपना दावा जताना चाहता था।

सन् 1784 ई मे महाराजा गजसिंह ने रावल रायसिंह के पौत्र रावल जालमसिंह को गडियाला की जागीर प्रदान की। इन्होने देरावर के रामचन्द्रोतो (भाटियो) को मगरा क्षेत्र के करणोत और धनराजोत खींया भाटियों के दस गाव गडियाला की जागीर मे दिए। यह गाव थे सुरजडा, नाथूसर, वाक्लसर, मियाकोर, खजवाना, चिमाणा, नामासर, हाडला, जैमला, गडियाला।

बहावलपुर के नवाब वहावलखा ने बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह (सन् 1787-1828 ई) को सूचना भेजी कि उनका राज्य रावल जालमसिंह को राशन व खर्चा यथावत भेजता रहेगा यदि वह उन्हें ब्रिटिश शासन के यहां देरावर राज्य उन्हें वापिस दिलवाने के लिए दावा पेश करने से रोकें। महाराजा ने यह सूचना रावल जालमसिंह के पास गडियाला पहुचा दी। सन् 1831 ई मे रावल जालम सिंह की मृत्यु तक वहावलपुर राज्य उन्हे राशन और खर्चा भेजता रहा। उनके बाद में रावल भोमसिंह के समय यह बन्द कर दिया गया।

जोधपुर के महाराजा बिजयसिंह की सन् 1793 ई मे मृत्यु के पश्चात् उनके पौत्र भीमसिंह जोधपुर के शासक बने। महाराजा भीमसिंह (सन् 1793 1803 ई) की एक रानी देरावरी थी। महाराजा भीमसिंह की सन् 1803 ई मे नि सन्तान मृत्यु हो गई। इनके स्थान पर महाराजा बिजयसिंह के दूसरे पौत्र मानसिंह जोधपुर की राजगद्दी पर बैठे। स्वर्गीय महाराजा भीमसिंह की देरावरी रानी उनकी मृत्यु के समय गर्भवती थी, उनके धोकलसिंह नाम का पुत्र जनमा। राजकुमार धोकलसिंह को महाराजा मानसिंह के स्थान पर राजगद्दी पर बैठाने के लिए पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह चापावत ने बीकानेर और जयपुर के शासको से सहायता मागी। उन्होंने इस सहायता के बदले मे बीकानेर और जयपुर को जोधपुर राज्य के कुछ परगने देने का वचन भी दिया। आपसी युद्ध मे कुछ बेमन की झडपें भी हुई परन्तु मानसिंह को हटाने का उनका प्रयास सफल नही हुआ।

रावल भोमसिंह के बाद मे उनके पुत्र भभूतसिंह रावल बने और इनके बाद मे इनके पुत्र नाथूसिंह रावल हुए। नाथूसिंह के पुत्र नहीं होने के कारण इन्होंने अपने भाई बुलिदान

सिंह को गोद लिया। रावल बुलिदानसिंह के भी पुत्र नही था, इसलिए इन्होने रावल भोमसिंह के परपौत्र और गजसिंह के पुत्र दीपसिंह को गोद लिया। रावल दीपसिंह के पश्चात् उनके पुत्र फतेहसिंह रावल बने। रावल फतेहसिंह के पुत्र नही होने से उन्होने अपने भाई उदयसिंह को गोद लिया। परन्तु दुर्भाग्य से रावल उदयसिंह के भी पुत्र नही हुआ।

हाडला रावलोतान—यह जागीर रावल भोमसिंह के पुत्रो, बाघसिंह और सूरजमाल सिंह को मिली।

टोकला—यह जागीर रावल भोमसिंह के पुत्र सादूलसिंह को मिली।

देरावर छोडने के पश्चात् रावल रायसिंह बीकानेर राज्य मे पहले पहल कोलायत मे रहे और फिर गडियाला गाव चले गए। इनके सन् 1763ई मे देरावर छोडने से पहले ही इनके छोटे भाई पदमसिंह सन् 1741 ई मे जयपुर चले गए थे। कर्नल टाड के अनुसार वि. स. 1774 (सन् 1717 ई) मे जब जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह बादशाह फर्रुखशयार से मिलने दिल्ली गए तब अन्यो के अलावा उनके साथ जैसलमेर के राव बिशनसिंह और देरावर के पदमसिंह भी थे। महाराजा अजीतसिंह का एक विवाह देरावर की राजकुमारी मृगवति से हुआ था। उनका सन् 1724 ई मे देहान्त होने पर जैसलमेर के बजरग भाटी की पुत्री रानी भटियाणी और देरावरनी मृगवती उनके साथ सती हुई।

जयपुर के शासक महाराजा सवाई माधोसिंह प्रथम (सन् 1750-1767 ई) ने पदमसिंह को गीजगढ की महत्वपूर्ण जागीर प्रदान की, जिसकी उस समय वार्षिक आय रु 1,07,000/- थी। इसके पश्चात् जयपुर के महाराजा जगतसिंह (सन् 1803-1818 ई) ने गीजगढ की जागीर के स्थान पर पदमसिंह के वशजो को कानाना की जागीरें दी। महाराजा जयसिंह (सन् 1818 1835 ई) ने इनके वशजों को पानवाडा और करणसर की जागीरें दी। महाराजा रामसिंह (सन् 1835-1880 ई) के अवयस्क काल मे चौमू के रावल शिवसिंह और लक्ष्मणसिंह की सलाह पर वहा के पोलिटिकल एजेन्ट थोरसबाई ने ऐसी सभी जागीरो को खालसे कर लिया जिनकी वार्षिक आय पचास हजार रुपयो से अधिक की थी। इस नियम के अनुसार पदमसिंह के भाटी वशजो की जागीरें भी उनके पास नही रही।

देरावरिया भाटी सुन्दरदास, दलसहाय, चारभुजा और रावल रायसिंह की सन्तानें हैं। (ख्यात जाति री सूची, पृष्ठ 62)

गडियाले के रावलों का कुर्सीनामा

1. रावल रामचन्द्र	सन् 1650 ई मे जैसलमेर की राजगद्दी से पदच्युत किए गए। इन्हें पूगल के राव सुदरसेन ने अपने राज्य मे से इसी वर्ष देरावर का राज्य दिया। इसका क्षेत्रफल लगभग 15,000 वर्गमील था।
2. रावल माधोसिंह	देरावर राज्य के शासक रहे।
3 रावल किसनसिंह	देरावर राज्य के शासक रहे।
4 रावल रायसिंह	यह सन् 1741 ई मे देरावर राज्य के शासक बने। इन्हें सन्

1763 ई मे अपना राज्य त्याग कर कोलायत आना पडा। इनकी मृत्यु सन् 1777 ई मे हुई।

5 रावल रघनाथसिंह — यह बीकानेर राज्य मे कोलायत में रहे।

6 रावल जालमसिंह — इन्हें बीकानेर के महाराजा गजसिंह न सन् 1784 ई मे गडियाला की दस गावो की जागीर दी। बीकानेर ने सन् 1783 ई में पूगल के राव अमरसिंह को मारकर भाटियो के गाव खालसे कर लिए थे। महाराजा गजसिंह ने पूगल के खीया भाटियों के इन खालस किए हुए गावों मे स दस गाव देरावर के रामचन्द्रोत रावलोत भाटियों को जागीर मे दिए।

7 रावल मोमसिंह — इनके भाइयो, बाघसिंह और सूरजमालसिंह, को हाडला रावलोतान की जागीर दी और दूसरे भाई सादूलसिंह को टोकले की जागीर दी।

8 रावल भभूतसिंह — गडियाला के रावल हुए।

9 रावल नाथूसिंह — गडियाला के रावल हुए। इनके पुत्र नहीं था, इन्होंने अपने भाई *बुलिदानसिंह को गोद लिया।*

10 रावल बुलिदानसिंह — गडियाला के रावल हुए। इनके पुत्र नही था इसलिए रावल मोमसिंह के परपौत्र और गजसिंह के पुत्र दीपसिंह को गोद लिया।

11 रावल दीपसिंह — गडियाला के रावल बने।

12 रावल फतेहसिंह — यह गडियाला के रावल बने। इनके पुत्र नही था, इसलिए अपने भाई उदयसिंह को गोद लिया।

13 रावल उदयसिंह — इनके भी पुत्र नही हुआ।

सन् 1942 ई की रावलोतों की जागीरों की स्थिति

1 गडियाला (पांच गांव)	रावल फतेसिंह पुत्र रावल दीपसिंह	1 गडियाला	रकबा
		2 नोकोदेसर (लूणकरणसर)	1,60 000 बीघा आय रु 4000/–
		3 कोलासर (डूगरगढ़)	रकम रेख रु 40/–
		4 गोमालिया (सरदारशहर)	
		5 हाडला, बडी व छोटी	
2 छनेरी (तीन गांव)	ठा मूलसिंह पुत्र भानीसिंह	1 छनेरी	रकबा 52,80 बीघा
		2 सिमाणा वास	
		3 कुम्पा और सांचा बीकोलाई	आय रु 1,800/–

3. टोकला (तीन गाव)	ठाकुर विजयसिंह पुत्र कल्याणसिंह	1. टोकला 2. मोटासर 3. महाल रावलोतान	रकबा 2,17,000 बीघा आय रु. 1000/–
4. नांदडा	ठाकुर लखूसिंह पुत्र बागसिंह	1. नादड़ा	रकबा 6,500 बीघा आय रु 300//–
5. पारवा	ठाकुर बहादुरसिंह पुत्र कानसिंह	1. पारवा	रकबा 40,000 बीघा आय र 1000/–
6. कीतासर	ठाकुर मुकनसिंह पुत्र नन्दसिंह	1. कीतासर	रकबा 26,000 बीघा आय र. 500/–
7. खारा लोहा	ठाकुर जेठमालसिंह पुत्र बीझराजसिंह	1. खारा लोहा	आय र 50/–

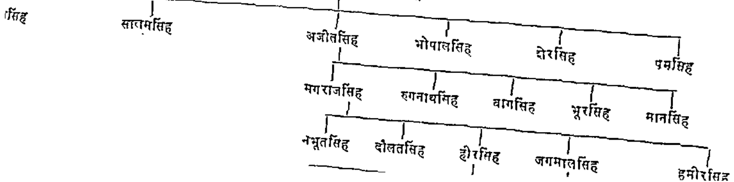
बीकानेर के राजघराने के महाराज भैरूसिंह और नारायणसिंह का विवाह गड़ियाले हुआ था। महाराज नारायणसिंह के पुत्र, जनरल रणजीतसिंह और ऐयर कमांडोर बहादुरसिंह की माता गडियाले की थी।

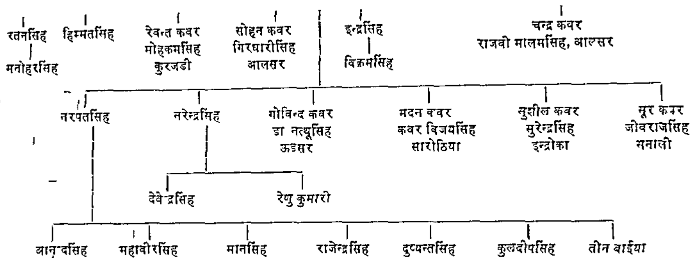
रावल फतेहसिंह और उदयसिंह सज्जन पुरुष थे। टोकले के ठाकुर विजयसिंह ज्यादातर जयपुर में रहते थे। हाडला के भूरसिंह, दौलतसिंह, दानसिंह आदि जाने-माने माटी सरदार थे, यह सभी बीकानेर राज्य की सेवा में थे। इन सबका निर्मल हृदय था, अपनी बिरादरी को चाहते थे और अपने पुरखो की प्रतिष्ठा, इज्जत और आबरू का ध्यान रखते थे। ठाकुर भूरसिंह के पुत्र इन्द्रसिंह राज्य के शिक्षा विभाग मे कार्यरत हैं।

हाडला के कैप्टिन धीरसिंह पहले बीकानेर राज्य के डूंगर लान्सर (घुडसवार सेना) मे अधिकारी थे। बाद मे यह राजस्थान की पुलिस सेवा (आर पी एस.) के लिए चुने गए। यह अधिकाश समय आर ए. सी मे उप-अधीक्षक और सहायक कमान्डेन्ट के पद पर रहे। अब यह सेवानिवृत्त हो चुके हैं। इनकी सेवा सदैव सराहनीय रही, इन्होंने अपना कार्य निष्ठा और ईमानदारी से किया। यह माटी समाज के वरिष्ठ सरदार हैं, सभी की सार-समाल करते रहते हैं। बीकानेर के राजपूत समाज में इनका अपना विशिष्ट स्थान हैं।

अमानसिंह पुत्र हरिसिंह

- हमीरसिंह
- शोभसिंह
  - पेमसिंह
    - चैनसिंह
    - भींवसिंह (गोद आए)
      - भवरसिंह
      - हरिसिंह
  - करणसिंह
    - पदमसिंह
    - पोकरसिंह
    - भींवसिंह (गोद गए)
    - विशालसिंह
      - प्रेमसिंह
      - छोटूसिंह
      - दलीपसिंह
  - मगनसिंह
  - अगरसिंह
  - जसवन्तसिंह
- शिवनाथसिंह
- जेठमालसिंह
  - पन्नेसिंह
  - मूणसिंह
    - हडमानसिंह




रतनसिंह
मनोहरसिंह
हिम्मतसिंह
रेवन्त कवर
मोहकमसिंह
कुरजडी
सोहन कवर
गिरधारीसिंह
आलसर
इन्द्रसिंह
विक्रमसिंह
चन्द्र कवर
राजवी मालमसिंह, आल्सर
नरपतसिंह
नरेन्द्रसिंह
गोविन्द कवर
डा नत्थूसिंह
ऊडसर
मदन कवर
कवर विजयसिंह
सारोठिया
सुशील कवर
सुरेन्द्रसिंह
इन्द्रोका
सूर कवर
जीवराजसिंह
सनाली
देवेन्द्रसिंह
रेणु कुमारी
आनन्दसिंह
महावीरसिंह
मानसिंह
राजेन्द्रसिंह
दुष्यन्तसिंह
कुलदीपसिंह
तीन बाईया

अध्याय–बीस

राव गणेशदास
सन् 1665-1686 ई

राव सुदरसेन सन् 1665 ई मे बीकानेर के राजा करणसिंह के विरुद्ध युद्ध करते हुए पूगल म मारे गए थे। इनके राजकुमार गणेशदास अवसर पा कर पूगल छोड कर अपने राज्य मे अन्यत्र चले गए, जनता ने इन्हे सरक्षण प्रदान किया, बीकानेर की सेना इन्हें बन्दी बनाने में असफल रही।

राजा करणसिंह ने पूगल के गढ पर अधिकार करके वहा थाने स्थापित किए और राज्य का प्रशासन चलाने के लिए अपने अधिकारी नियुक्त किए। बीकानेर के थानेदारो और कारिन्दो के कुशासन और कटु व्यवहार के कारण जनता उनके विरुद्ध हो गई और उनसे असहयोग करने लगी। बरसलपुर और बीकमपुर के रावो, अन्य केलण भाटियो और साधारण जनता ने बीकानेर के राजा की कार्यवाही की निन्दा की और उनके द्वारा किए गए अन्याय का बदला लेने की योजनाए बनाने लगे।

राव सुदरसेन की मृत्यु के पश्चात् राजकुमार गणेशदास के पास में राज्य करने के लिए कोई क्षेत्र नही था, वह अपने अनेक पूर्वजों की तरह राज्यविहीन हो गए। इन वर्षों मे वह एक स्वामिभक्त मुसलमान कोटवाल के पास रहे। वही उनकी देखमाल करता था और बीकानेर के जासूसो के विरुद्ध उन्हे सरक्षण देता था।

जैसलमेर के महारावल अमरसिंह, बीकानेर द्वारा बलपूर्वक पूगल राज्य को हडपने की जघन्य कार्यवाही के मूक दर्शक बनकर नहीं रह सके। उनके विचार मे अगर बीकानेर इसी प्रकार अग्रसर करता गया तो अगली बारी पश्चिम के नव स्थापित देरावर राज्य की होगी और कोई आश्चर्य नहीं था कि वह दक्षिण मे जैसलमेर का चुनौती दे। रावल अमरसिंह दबग और शक्तिशाली शासक थे। उन्होंने बादशाह औरगजेब की अप्रसन्नता स्वीकार की, परन्तु उनके सामने झुके नही। वह दिनांक 2 अक्टूबर, सन् 1669 को रावल बने थे। सन् 1667 ई मे महाराजा अनूपसिंह भी बीकानेर के शासक बने थे। रावल अमरसिंह ने पहले पहल अपने राज्य के सिन्ध प्रदेश मे बलोचो और छन्ना राजपूतों के विद्रोह को दबाया। इसके बाद मे उन्होने बलपूर्वक झझू गाव के पास जैसलमेर और बीकानेर राज्यो की स्थायी सीमा निर्धारित की। इस समय बीकमपुर के राव सुन्दरदास और बरसलपुर के राव दयालदास इनके साथ थे। बीकानेर इनका सशक्त विरोध नहीं कर सका। महाराजा अनूपसिंह की अपनी समस्याए थीं। थोडे दिन पहले ही उनके पिता राजा करणसिंह को पदच्युत करके औरगाबाद मे नजरबन्द किया गया था। उन्हें राजा करणसिंह के औरस पुत्र वनमालीदास के षडयन्त्रो से भी भय लग रहा था।

केलण भाटियो के विरोध, जनता के असहयोग और रावल अमरसिंह के प्रभाव को देखते हुए, महाराजा अनूपसिंह ने पडोस के पूगल क्षेत्र मे शान्ति बनाए रखने के लिए उचित निर्णय लेकर, उन्होने सन् 1670 ई मे गणेशदास को पूगल लौटा दी और उन्हें पूगल के स्वतन्त्र राव की मान्यता दे दी। महाराजा अनूपसिंह ने यह कोई अहसान नही किया था। वह शासक बनने के तुरन्त बाद मे बादशाह द्वारा दक्षिण मे भेज दिए गए थे। इसलिए वह बीकानेर राज्य की भली भाति देखभाल करने मे असमर्थ थे, रावल अमरसिंह और वनमाली दास से उन्हे भय था, बादशाह औरंगजेब भी उनसे प्रसन्न नही थे। इन बातो का ध्यान करके, उन्होने पूगल राव गणेशदास को लौटाकर अपने पडोस की एक समस्या खत्म कर ली।

राव गणेशदास सन् 1670 ई मे पूगल की गद्दी पर बैठे, इनके अधिकार मे 561 गाव थे। इ होने सन् 1686 ई तक शासन किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे :

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
महारावल अमरसिंह,	1 राजा करणसिंह,	1 महाराजा जसवन्तसिंह,	बादशाह औरगजेब
सन् 1659-1702 ई	सन् 1631-1667 ई	सन् 1638-1678 ई.	सन् 1657-1707ई.
	2 महाराजा अनूपसिंह,	2. महाराजा अजीतसिंह,	
	सन् 1667-1698 ई	सन् 1678 1724 ई	

राव बनने के बाद मे राव गणेशदास ने मुसलमान कोटवाल के अहसान को नही भुलाया। उन्होने उसे एक जागीर प्रदान की, उस गाव का नाम अपने नाम पर 'गणेशवाली' रखा। यह कोटवाल सन् 1954 ई तक इस गाव के भोगते रहे और उनके वशज अब भी वही बसे हुए हैं।

बीकानेर ने राव गणेशदास को पूगल सौंप दी, उन्हे स्वतन्त्र राव की मान्यता दे दी, परन्तु फिर भी अपना थाना वहा बैठाये रखा, और सेना का हस्तक्षेप रखा। इससे क्रुद्ध हो कर महारावल अमरसिंह ने अपनी सेना पूगल भेजकर वहा से बीकानेर के थाने को बलपूर्वक हटाया और पूगल को बीकानेर के नियन्त्रण से पूर्णतया मुक्त कराया। इस प्रकार लगभग पाच वर्ष तक परतन्त्र रहने के बाद पूगल फिर स्वतन्त्र राज्य हो गया। राज्यो और राजवशो की आयु मे पाच वर्ष एक बहुत अल्पावधि होती थी। बडी बात उनके जीवट मे होती थी, जिसके कारण वह फिर अपने पावो पर खडे हो जाते थे। भाटियो के साथ मे ऐसा पहले, भटनेर, मूमनवाहन, मरोठ, देरावर, तणोत आदि राजधानियो मे हो चुका था, परन्तु उनका जीवट कभी नही मरा।

महाराजा अनूपसिंह दक्षिण भारत मे मुगल सेना के साथ रहते हुए भी बीकानेर से पूर्ण सम्पर्क बनाए हुए थे। अन्य समस्याओं से निपटने के अलावा वह भाटियो से भी निपटना चाहते थे। उनको सन् 1670 ई मे विवश हो कर पूगल छोडना पडा था, यह उनका अन्तिम दाग था। इससे पहले सन् 1614 ई. मे राजा दलपतसिंह के शासन के अन्तिम दिनों में हयात खा भाटी ने बीकानेर से भटनेर छीन लिया था और पिछले 55 वर्षों

से भाटी वहा काबिज थे। राठौड शासको की तीसरी पीढ़ी भी उन्हे वहा से अपदस्थ करने मे असहाय थी। सन् 1612 ई मे राजा दलपतसिंह ने भाटियो के क्षेत्र मे चूडेहर मे एक किला बनवाने का प्रयास किया था, जिसे भाटियो के विरोध के कारण वह बना नही पाये थे। उन्होने इन तीनो बाधाओ, चूडेहर, भटनेर और पूगल को नए सिरे से निपटने की योजना बनाई। सबसे पहले उन्होने चूडेहर का किला फिर से बनाने की सोची, यह इनकी तीनो समस्याओ मे सबसे पुरानी समस्या थी।

उन्होंने दक्षिण के प्रवास से ही मोहता मुकन्द राय को लिखा कि वह एक सेना गठित कर, खारबारा और रायमलवाली पर आक्रमण करके भाटियो को परास्त करे, चूडेहर का किला बनवाये और वहा बीकानेर राज्य का सशक्त थाना लगाए। मुकन्द राय ने चार हजार सैनिको की सेना स खारबारा पर आक्रमण किया। राठौडों का यह कथन मिथ्या है कि इस सेना के साथ मे खारबारे के तेजमाल का पौत्र भागचन्द भी गया था। भाटियो और जोइयो की दो हजार आदमियो की सेना ने बीकानेर की सेना का विरोध किया। मुकन्द राय को बताया गया कि चूडेहर-समेजा क्षेत्र शताब्दियो से भाटियो के अधिकार मे रहा था, इसे भाटी राठौडो को आसानी से नही लेने देंगे। हाकडा नदी के किनारो का क्षेत्र भाटियो के प्रभाव मे पिछले पन्द्रह सौ वर्षों मे था।

'मोहता सुण वे मुकनराय, गल कटै बिहगी।
बहण कराडै हाकडै, धरती धूतारी (1)
माणी राव हमीरदे, सोढे छत्र धारी।
चूहड, समेजे हदीया, काल नारी कारी (2)
अठै जोइया जनमिया, पुत नालक वारी।
जेसध नाणा खट्टिया, टक साल बुहारी (3)
खीची दस दिन बस गिया, खरला पिण नारी।
फेर बसाई भाटिया, अत करे प्यारी (4)
मोरे ईसर माताजी, गिरम्दा गह कारी।
इताही तिथारी से बसै, सिर नवके खारी (5)
दलपत कोट उसारिया, दुता तेरी बारी।
लेये साधप्लाव सू, न कर तात हमारी (6)
फोज जिती धर बिहारी, लई जेती म्हारी।'

बिहारीदास भाटी पूगलिया ने बीकानेर की सेना मे मुकन्द राय को बताया कि हाकडा नदी के उत्तर मे चूडेहर की भूमि भाटियो की थी। राव हमीरदे सोढा इस भूमि के स्वतन्त्र स्वामी थे। यह धरती, जो सुन्दर कन्याओ की जन्मदात्री थी, वह चूडेहर समेजा के राज्य की सीमा में थी। यह भूमि जोइया की मातृभूमि थी, यह उनकी मूल पैतृक धरती थी। यहाँ के राजा जयसिंह ने यहा से अकूत सम्पदा अर्जित की थी। वह इतना धन ले गये थे कि मानो उन्होने टकसाल म झाड् लगाया हो। यहां खीचियो ने दस वर्ष राज्य किया था, फिर पवारा की एक शाखा खरालो ने यहा चार वर्ष राज्य किया था। भाटियो ने इस धरती पर अधिकार करके इसे स्नेह से पनपाया था। इसलिए दलपतसिंह को भाटियो की भूमि म सेना भेजकर चूडेहर का किला नहीं बनवाना चाहिए था।

राव गणेशदास

पूगल के राव गणेशदास और उनके पुत्र, राजकुमार विजयसिंह और केसरीसिंह, भी भाटी सेना के साथ थे। राठौड़ो ने चूंडेहर के किले को दो माह तक घेरे रखा परन्तु भाटियो ने उनसे कोई सम्पर्क स्थापित करके किले को खाली करने की इच्छा नही दर्शाई। इस पर मुकन्द राय ने कपट नीति का सहारा लिया। उसने बिहारी दास भाटी को पगडी बदल धर्म भाई बनाया। इससे भाटी कुछ आश्वस्त हुए उन्होने किले की चौकसी मे ढिलाई बरती और राठौड़ो से मिलने जुलने लगे। इस ढिलाई का लाभ मोहता मुकन्द राय ने उठाया। उसने अवसर देखकर भाटियो पर आक्रमण कर दिया। भाटियो ने इस विश्वासघात का डट कर सामना किया। जिसे पगडी बदल कर मुकन्द राय ने भाई बनाया था, वह बिहारीदास भाटी उसके द्वारा मारे गए साथ मे राणेर के जगरूपसिंह भाटी भी मारे गए। इस प्रकार खारबारा और रायमलवाली के ठाकुर इस युद्ध में चूंडेहर में काम आए। इसके पश्चात् मोहता मुकन्द राय ने चूंडेहर के किले का निर्माण कार्य सन् 1678 ई तक पूर्ण करवाया। इसका नाम तत्कालीन महाराजा अनूपसिंह के नाम पर 'अनूपगढ' रखा गया।

दूसरी कहानी यह भी गढ़ी थी कि चूंडेहर मे दो माह तक घेरे मे रहने से भाटियो की रसद और पीने का पानी समाप्त होने को आ गया था। भाटियो के प्रमुखो, बिहारीदास और जगरूपसिंह भाटी ने लखवेरा के मुसलमान जोइयों को तुरन्त सहायता पहुंचाने के लिए संदेश भेजा। बीकानेर की सेना ने लखवेरा से आने वाली सहायता सामग्री और गोला बारूद को बीच मे ही रोक लिया, इसे भाटियो तक पहुचने नही दिया। कुछ दिनो पश्चात् हताश भाटियो ने सन्धि के लिए प्रस्ताव भेजे। बीकानेर की सेना का खर्चा और क्षतिपूर्ति के लिए भाटियो ने एक लाख रुपये देना स्वीकार किया। इसमे से आधी रकम, पचास हजार रुपये, तुरन्त चुका दिए गए और बाकी रकम भाटियो ने शीघ्र चुकाने का वचन दिया। मुकन्द राय ने उन्हे आश्वासन दिया कि वह बकाया रकम चुकाने की माफी महाराजा से उन्हें दिलवा देंगे। भाटियो ने मुकन्द राय के वचनों पर विश्वास कर लिया और किले मे रसद आदि की कमी को देखते हुए उन्होने वहा से अपने सैनिक वापिस उनके गावो को भेजने शुरू कर दिए। इस प्रकार से कमजोर हुई भाटियो की सैनिक शक्ति का लाभ उठाकर, मुकन्द राय ने किले पर मध्यरात्रि मे धावा बोल दिया। भाटियो की संख्या बहुत कम होने से वह हार गए। बिहारीदास और जगरूपसिंह भाटी मारे गए। बीकानेर की सेना ने चूंडेहर पर अधिकार कर लिया और वहा पर वर्तमान अनूपगढ का सुदृढ किला सन् 1678 ई मे बनवाया।

उपरोक्त दोनो कथाओ का एक ही सार है कि बीकानेर की सेना बलपूर्वक भाटियो से चूंडेहर नही ले सकी। उसे मुसलमानो की तरह छल कपट से काम निकालना पडा, चाहे वह पगडी बदल भाई बनकर किया हो, चाहे पचास हजार रुपये माफ करवाने का वायदा करके किया हो। दोनो प्रकरणो मे भाटियो ने मुकन्द राय पर विश्वास किया। उसने विश्वासघात करके और भाटियो की लापरवाही का लाभ उठाकर, किले पर आक्रमण करके बिहारीदास और जगरूपसिंह भाटी को मार डाला और चूंडेहर पर अधिकार कर लिया। जैसे तैसे मुकन्द राय ने अपना लक्ष्य पूरा किया, जिसका प्रमाण अनूपगढ का किला था।

खारबारे के ठाकुर तेजमालसिंह के पुत्र भाणसिंह (या चन्द्रभाणसिंह) थे। इन

ठाकुर भाणसिंह के पुत्र रतनसिंह और पौत्र मागचन्द (मागसिंह) थे। ठाकुर जगरूपसिंह भाटी (राणेर) रायमलवालो के थे, यह ठाकुर रायसिंह किसनावत के पड़पौत्र थे।

बीकानेर ने खाराबारा भागचन्द को दिया था, परन्तु कुछ समय पश्चात् बिहारीदास के पुत्र ने जोइयो की सहायता से मागचन्द से खारबारा छीन लिया। यह मालूम नही कि यह बिहारीदास कौन था। सम्भवत यह खारबारे का सेना नायक था। बीकानेर ने खारबारा बिहारीदास के पुत्र से छीन कर महाजन के ठाकुर अजबसिंह को दे दिया। ठाकुर अजबसिंह ने बीकानेर को आश्वासन दिया था कि वह शीघ्र बीकानेर राज्य की सीमा सतलज नदी तक ले जायेंगे। उनकी नीयत से स्पष्ट था कि अब चूडेहर लेने के बाद बीकानेर देरावर के राज्य पर आक्रमण करेगा, जिसकी पश्चिमी सीमा सतलज नदी के पूर्वी तट तक थी। परन्तु इस योजना के पूर्ण होने से पहले ही ठाकुर मागचन्द के पुत्रो ने ठाकुर अजबसिंह को जोइयों की सहायता से खारबारे म मार डाला। और ठाकुर अजबसिंह के अवयस्क पुत्र मोहकमसिंह को बन्दी बना लिया, जिसे उन्होने जोइयों के कहने से बाद म छोड दिया।

मागचन्द के पुत्रो द्वारा खारबारे पर पुन अधिकार करने के साथ ही भाटियो ने चूडेहर (अनूपगढ) पर अधिकार कर लिया और वहा अपना थाना बैठाया। (पावलैट, 1874 ई)

यहा यह ध्यान देने योग्य बात है कि हयात खा भाटी ने महाजन के ठाकुर अजबसिंह को मरवाने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। भटनेर के भाटी अपने आप को पूगल की सन्तान मानते थे, उनकी पूगल के प्रति अपार श्रद्धा थी और जब कभी पूगल पर विपदा आई, वह शान्ति से नही बैठे रहे।

दयालदास का यह कथन मिथ्या है कि महाजन के ठाकुर अजबसिंह ने जोइयो को बीकानेर के अधीन किया। ठाकुर अजबसिंह के पुत्रों ने भाटियों को सहायता देने के कारण फरीद खां जोइया को मारा। इसके बीकानेर के लिए बडे भयानक परिणाम हुए। जोइयों के प्रमुख ने बीकानेर के सिरसा क्षेत्र पर आक्रमण किया, जहां पर बीकानेर की ओर से भूकरका के ठाकुर नियुक्त थे। वह जोइयो द्वारा इस आक्रमण मे मारे गए और सिरसा का क्षेत्र बीकानेर राज्य के अधिकार से हमेशा के लिए चला गया। इसमे हयात खा भाटी के वशजो का पूर्ण योगदान और सहायता रही, क्योंकि वह अपने दूर के भाइयों, बिहारीदास और जगरूपसिंह, की चुडेहर में हुई मृत्यु का बदला लेना चाहते थे।

केलण भाटियों और जोइयो की सयुक्त सेना ने अपनी मातृभूमि खरबारा, चुडेहर आदि को मुक्त कराया, राठोडो से सिरसा छीना और बीकानेर के प्रमुख ठिकानों, महाजन और भूकरका, के ठाकुरों को मारा। (पावलेट, 1874 ई)

पूगल के प्रत्येक राव की वीरगति के बाद में घटनाचक्र तेज गति से बदला था।

राव चूडा द्वारा राव रणकदेव के मारे जाने से, इसका बदला राव केलण ने राव चून्डा को मारकर लिया।

काला सोढी द्वारा राव चाचगदेव दुनियापुर मे मारे गए थे। राव बरसल ने दूनियापुर पर पुन अधिकार किया और कुम्भा न काला सोढी को मारा।

राव गणेशदास

राव हरा, राव लूणकरण की मृत्यु का कारण बने। राव जैतसी ने भाटियों से भटनेर पर राठौड़ों का अधिकार करवाया, किन्तु भाटियों के असहयोग के कारण वह जोधपुर के राव मालदेव द्वारा मारे गए।

अकबर के अधीन मुलतान के शासकों द्वारा राव जैसा मारे गए थे। उन्होंने कुमार काना को बन्दी बनाया था। उन्होंने कुमार काना को तभी छोड़ा जब उन्होंने सतलज पार के केहरोर, दुनियापुर आदि क्षेत्र मुलतान को देना स्वीकार किया।

राव आसकरण की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र राव जगदेव ने बड़ी कठिनाइयों का सामना किया। आखिर राव सुदरसेन को देरावर रावल रामचन्द्र को देनी पड़ी।

राव सुदरसेन ने राजा करणसिंह की अधीनता स्वीकार नहीं की वह युद्ध म उनके द्वारा मारे गए। राव गणेशदास को प्रजा के दबाव के कारण और रावल अमरसिंह के हस्तक्षेप से, सन् 1670 ई मे, पूगल पाच वर्ष बाद मे वापिस मिली।

राव गणेशदास के समय मे भाटियो ने राठौडो स युद्ध जारी रखा। उनसे खारबारा चुडेहर सिरसा मुक्त कराये और महाजन व भूकरके के ठाकुरो को मारा।

राठौडो के साथ सन् 1665 ई मे आरम्भ हुआ युद्ध राव गणेशदास की मृत्यु सन् 1686 ई तक चलता रहा। राव गणेशदास के पुत्र दो थे।

राजकुमार विजयसिंह इनके बाद मे पूगल के राव हुए। दूसरे पुत्र केसरीसिंह थे। इन्हे केला गाव की सात गावो की जागीर दी गई। यह सात गाव थे केला मोटासर, लूणखा, किसनपुरा गोगीसर रोहिड़ावाली, अजीत माना, बेरा बाहिया। केसरीसिंह के पुत्र पदमसिंह केला मे रहे, दानसिंह मोटासर गए। पदमसिंह के ज्येष्ठ पुत्र जगरूपसिंह (या जगतसिंह) केला मे रहे, छोटे पुत्र हठीसिंह लूणखा गए। गोरीसर और खिवेरा के भाटी भी इसी शाखा के हैं। इनका विवरण अलग दिया गया है। करणीसिंह पुत्र हठीसिंह सन् 1795 ई म सत्तासर आए किन्तु सन् 1811 ई म राव अमरसिंह के पुत्र अनोपसिंह को सत्तासर दिए जाने से वह वापिस लूणखा चले गए।

लाखूसार गाव के ठाकुर विशालसिंह के अनुसार उनके गाव के ठाकुर सावतसिंह पर मुलतान-सिन्ध के मुसलमानो की कटक ने आक्रमण किया था, इस युद्ध में ठाकुर सावतसिंह के सारे वशज एव अन्य सभी साथी मारे गए, केवल वह अकेले बच निकले। यह सघर्ष जोगरान तालाब के पास (कालासर गाव की काकड) कुढ़किया म हुआ था। ठाकुर सावतसिंह पास के नूरसर गाव पहुचे जहा स उन्होने राव गणेशदास को पूगल मे इस घटना की सूचना दी। राव गणेशदास ने अपने वशजो की मृत्यु का बदला लेने के लिए और अपनी सीमा मे मुलतान की घुसपैठ को रोकने और सुरक्षा प्रदान करने के लिए उनका पीछा किया। उनकी राजासर गाव के पास आधो तालाब के निकट कटक से मुठभेड हुई। प्रारम्भिक झड़प म कटक के अनेक आदमी मारे गए। कुछ समय पश्चात् राव गणेशदास भी कटक के हाथो मारे गए।

ठाकुर विशालसिंह के अनुसार आधो तालाब के पास राव गणेशदास की पांच छ फुट ऊची देवली लगी हुई है और उसके पास और भी देवलिया हैं। लाखसर गांव के भाटी परिवार ठाकुर सावतसिंह की सन्ताने हैं क्योंकि उनके अलावा सारे भाटी कटक द्वारा मार दिए गए थे।

मोटासर परिवार

मोटासर के ठाकुर रणजीतसिंह के पड़पौत्र और ठाकुर उदयसिंह के पुत्र शिवदानसिंह बीकानेर की सेना के गंगा रिसाले मे मेजर के वरिष्ठ पद पर कार्यरत थे। यह प्रथम विश्व युद्ध, सन् 1914 ई मे युद्ध के अग्रिम मोर्चे पर गए थे और वहीं इन्होने वीरगति पाई। इनके शौर्य के लिए इन्हें अलकृत किया गया। इनके पुत्र गोविन्दसिंह तत्कालीन राज्य की पुलिस मे थानेदार के पद से सेवा निवृत्त हुए थे।

ठाकुर रणजीतसिंह के एक अन्य पड़पौत्र और ठाकुर मूलसिंह के पुत्र गोपालसिंह बीकानेर राज्य की विजय बैटरी (तोपखाने) मे कैप्टिन के पद से सेवा निवृत्त हुए थ। ठाकुर मूलसिंह के दूसरे पुत्र कर्नल ठाकुर बनेसिंह थे। ठाकुर गोपालसिंह के पुत्र ठाकुर रघुनाथसिंह हैं, इनका विवाह सेरुना गाव के ठाकुर मेघसिंह की पुत्री मे हुआ, यह कर्नल भवानीसिंह और आनन्दसिंह (आई ए एस) की बहन हैं। ठाकुर रघुनाथसिंह के पुत्र वीरदानसिंह प्रयोगशाला सहायक हैं।

ठाकुर बनेसिंह का जन्म वि स 1941 के माघ माह की कृष्ण पक्ष की चौथ के दिन मोटासर गांव मे हुआ था। इनका देहान्त 55 वर्ष की आयु मे वि स 1996 (सन् 1939 ई), श्रावन मास वदी छठ के दिन लकवे की बीमारी से हुआ। यह महाराजा गगासिंह के विशेष कृपा पात्र ए डी सी और उनके सेना सचिव थे। महाराजा न इन्हें सन् 1912 ई मे घियेरा, लालेरा, दुलमेरा, सुभलाई, बीछड़वास की पाच गावो की ताजीम और सोने का कड़ा बख्शा। सन् 1919 ई मे इन्हें ले कर्नल बनाया गया। सन् 1919 ई म इन्होंने अपने प्राण जोखिम मे डाल कर महाराजा गगासिंह की जान बचाई थी जिसके लिए इन्हें ले कर्नल से कर्नल के पद पर पदोन्नत किया गया। एक जनवरी सन् 1921 ई मे, महाराजा की सिफारिश पर वॉयसराय ने इन्हें 'राव बहादुर' का खिताब प्रदान किया। सन् 1937 ई म इन्हें चैंज ऑफ ऑनर, तृतीय श्रेणी, से अलकृत किया गया, उस समय यह लकवे से रोग ग्रस्त थे।

राव बहादुर कर्नल ठाकुर बनेसिंह के देवीसिंह (जन्म सन् 1916 ई), भैरूसिंह और नवलसिंह, तीन पुत्र थे। ठाकुर देवीसिंह का विवाह टाई गांव के झुझुनू के जाने माने वकील नियनाथसिंह की पुत्री उगम कवर से वि स 1990 म हुआ था। ठाकुर देवीसिंह तहसीलदार के पद से राज्य सेवा से सेवा निवृत्त हुए। इनकी पुत्री तेज कवर का विवाह कानसर के रामसिंह से हुआ, यह थानेदार के पद से सेवा निवृत्त हुए हैं। ठाकुर देवीसिंह के एक ही पुत्र मोहनसिंह माटी हैं, इनका विवाह मेड़तिया (जोधपुर) के ठाकुर मुकनसिंह मेड़तिया की पुत्री पुष्प कवर से हुआ।

ठाकुर मोहनसिंह भाटी के एक पुत्र इन्द्रसिंह प्रयोगशाला सहायक के पद पर कार्यरत हैं। ठाकुर बनेसिंह के छोटे भाई नवलसिंह के पुत्र राजेन्द्रसिंह एम ए पास की है।

मोटासर गाव क ठाकुर चिमनसिंह के पुत्र ठाकुर गणेशसिंह बीकानेर राज्य की घुडसवार सेना, डूगर लान्सर्स, मे रिसालदार मेजर के पद से सेवा निवृत्त हुए थे। यह एक योग्य अधिकारी और कुशल अश्वरोही रहे हैं। इनके बड़े पुत्र कुवर आसूसिंह श्री विजयनगर मे अपने परिवार की भूमि की देखभाल कर रहे हैं। यह भाटी समाज के समझदार प्रतिष्ठित व्यक्तियो मे से हैं और विवाह शादी एव अन्य उत्सवो मे भाटियो का प्रतिनिधित्व करते हैं। दूसरे पुत्र केसरीसिंह ठाकुर जसवन्तसिंह के गोद गए, यह शिक्षा विभाग मे प्रधानाचार्य के पद पर योग्यता, अनुभव एव निष्ठा व ईमानदारी से कार्य कर रहे हैं। तीसरे पुत्र अनोपसिंह भारतीय रल विभाग म कमचारी हैं यह युवा अवस्था म फुटबाल के अच्छे खिलाडी रह चुके हैं और रलवे की फुटबाल टीम म अनेक वर्षों तक खेलते रहे। इनके चौथे व सबसे छोटे पुत्र सावतसिंह पचायत विभाग मे कर्मचारी हैं।

ठाकुर गणेशसिंह की पुत्री तेजकवर का विवाह वातर गांव के ठाकुर अमरसिंह राठौड से हुआ। अमरसिंह राठौड कृषि विभाग मे उप-निर्देशक के पद पर कार्य कर रहे हैं।

पूगल परिवार के भाटियो म तीन विशिष्ट व्यक्तियो को 'राव बहादुर' के खिताब सम्मानित किया गया था पूगल के राव जीवराजसिंह, सत्तासर के ठाकुर जनरल हरिसिंह और खियेरा के ठाकुर कर्नल बनेसिंह। सत्तासर के ठाकुर बलदेवसिंह को महाराजा सादूलसिंह ने राव की पदवी प्रदान की थी।

पूगल के राव	केला	लूणखा	मोटासर	खियेरा
13 राव गणेशदास	—	–	–	–
14 राव विजयसिंह	केसरीसिंह	केसरीसिंह	केसरीसिंह	–
15 राव दलकरण	पदमसिंह	पदमसिंह	दानसिंह	–
16 राव अमरसिंह राव उज्जोणसिंह	जगरूपसिंह	हठीसिंह	मानसिंह	–
17 राव अभयसिंह	मूलसिंह	करणीसिंह	नवलसिंह	रणजीतसिंह
18 राव रामसिंह राव सादूलसिंह	खेतसिंह	गोविन्दसिंह	भोमसिंह	माधोसिंह
19 राव रणजीतसिंह	पनेसिंह	अनोपसिंह	मोहकमसिंह	मूलसिंह
20 राव करणीसिंह	रामसिंह	बख्तावरसिंह	चिमनसिंह	बनेसिंह
21 राव रघनाथसिंह	फतेहसिंह	हरिसिंह	गणेशसिंह	देवीसिंह
22 राव मेहताबसिंह	प्रतापसिंह	बहादुरसिंह	कु आसूसिंह	मोहनसिंह
23 राव जीवराजसिंह		आसूसिंह		
24 राव देवीसिंह		कु इन्द्रसिंह		
25 राव सगतसिंह				

- 8. बख्तावरसिंह पुत्र अनोपसिंह
  - 9. हरिसिंह
    - 10. बहादुरसिंह
      - 11. भानुसिंह
        - 12 चन्द्रसिंह
          - 13 तेजपालसिंह
            - 12 पूरणसिंह
          - नेपालसिंह
      - पृथ्वीसिंह
        - त्रिभानसिंह
  - सादूलसिंह
  - लक्ष्मणसिंह
    - 10 मादूसिंह
      - 11 मानसिंह
        - 12 महावीरसिंह
        - पूरणसिंह
      - वीरसिंह
      - सुरेन्द्रसिंह
      - भोपालसिंह
    - रूपसिंह
      - 11 मदनसिंह
      - मगनसिंह
      - शिशुपालसिंह
    - पन्नेसिंह
      - 11 नन्दवीरसिंह
      - देवेन्द्रसिंह
    - प्रेमसिंह
      - 11 विजयसिंह
      - पतरसिंह
      - सुमेरसिंह
      - भोपालसिंह
  - बलवन्तसिंह
    - 10 भैरूसिंह
      - 12 भवरसिंह
      - उम्मेदसिंह
      - रघुवीरसिंह
    - जीवराजसिंह
      - 11 बिसनसिंह
      - रघुवीरसिंह
    - जेठमालसिंह
      - 11 जयदेवसिंह
      - विजयसिंह
      - नरेन्द्रसिंह

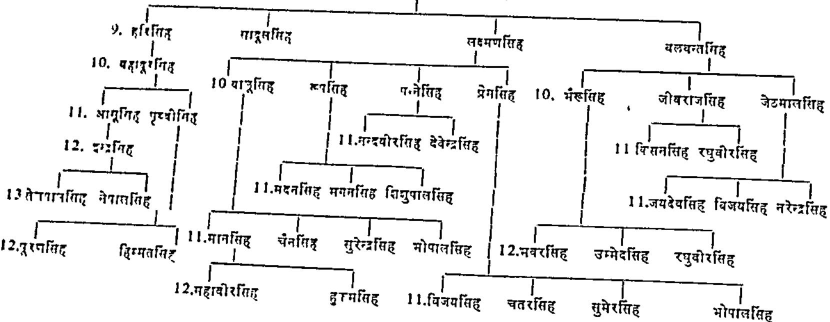
ठाकुर मोहनसिंह भाटी के एक पुत्र इन्द्रसिंह प्रयोगशाला सहायक के पद प
हैं। ठाकुर बनेसिंह के छोटे भाई नवलसिंह के पुत्र राजेन्द्रसिंह एम ए पास की है

मोटासर गाव में ठाकुर चिमनसिंह के पुत्र ठाकुर गणेशसिंह बीकानेर घुडसवार सेना, डूगर लान्सर्स, मे रिसालदार मेजर के पद से सेवा निवृत्त हुए थे। योग्य अधिकारी और कुशल अश्वरोही रहे हैं। इनके बडे पुत्र कुवर आसूसिंह श्री ि मे अपने परिवार की भूमि की देखभाल कर रहे हैं। यह भाटी समाज के समझदार' व्यक्तियो मे से हैं और विवाह शादी एव अन्य उत्सवो मे भाटियो का प्रतिनिधित्व द दूसरे पुत्र केसरीसिंह ठाकुर जसवन्तसिंह के गोद गए, यह शिक्षा विभाग में प्रधान पद पर योग्यता, अनुभव एव निष्ठा व ईमानदारी से कार्य कर रहे हैं। श्री अनोपसिंह भारतीय रल विभाग म कमचारी हैं, यह युवा अवस्था म फुटबाल के खिलाडी रह चुके हैं और रेलवे की फुटबाल टीम मे अनेक वर्षों तक खेलते रहे। इन व सबसे छोटे पुत्र सावतसिंह पचायत विभाग मे कर्मचारी हैं।

ठाकुर गणेशसिंह की पुत्री तेजकवर का विवाह वातर गाव के ठाकुर अमरसिंह से हुआ। अमरसिंह राठौड कृषि विभाग मे उप-निर्देशक के पद पर कार्य कर रहे हैं।

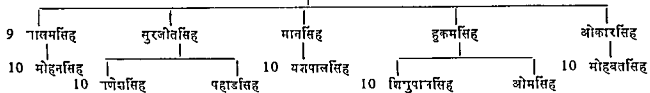
पूगल परिवार के भाटियो मे तीन विशिष्ट व्यक्तियो को 'राव बहादुर' के खि सम्मानित किया गया था, पूगल के राव जीवराजसिंह, सत्तासर के ठाकुर जनरल हर् और खियेरा के ठाकुर कर्नल बनेसिंह। सत्तासर के ठाकुर बलदेवसिंह को महा सादूलसिंह ने 'राव की पदवी प्रदान की थी।

	पूगल के राव	केला	लूणखा	मोटासर	खियेरा
13	राव गणेशदास	—	—	—	—
14.	राव विजयसिंह	केसरीसिंह	केसरीसिंह	केसरीसिंह	—
15	राव दलकरण	पदमसिंह	पदमसिंह	दानसिंह	—
16	राव अमरसिंह राव उज्जीणसिंह	जगरूपसिंह	हठीसिंह	मानसिंह	—
17	राव अभयसिंह	मूलसिंह	करणीसिंह	नवलसिंह	रणजीत
18	राव रामसिंह राव सादूलसिंह	खेतसिंह	गोविन्दसिंह	सोमसिंह	माधोसिंह
19	राव रणजीतसिंह	पनेसिंह	अनोपसिंह	मोहकमसिंह	मूलसिंह
20	राव करणीसिंह	रामसिंह	बख्तावरसिंह	चिमनसिंह	बनेसिंह
21	राव रघुनाथसिंह	फतेहसिंह	हरिसिंह	गणेशसिंह	देवीसिंह
22	राव मेहताबसिंह	प्रतापसिंह	बहादुरसिंह	कु आसूसिंह	मोहनसिं
23	राव जीवराजसिंह		आसूसिंह		
24	राव देवीसिंह		कु इन्द्रसिंह		
25	राव सगतसिंह				



9. हरिसिंह
10. बहादुरसिंह
11. आपूसिंह
पृथ्वीसिंह
12.
हिम्मतसिंह
10
11.मदनसिंह
शिशुपालसिंह
11.मानसिंह
चैनसिंह
सुरेन्द्रसिंह
भोपालसिंह
12.महावीरसिंह
लक्ष्मणसिंह
प्रेमसिंह
देवेन्द्रसिंह
11.विजयसिंह
चतरसिंह
सुमेरसिंह
भोपालसिंह
बलवन्तसिंह
10.
12.मवरसिंह
उम्मेदसिंह
रघुवीरसिंह
जीवराजसिंह
रघुवीरसिंह
जेठमालसिंह
11.जयदेवसिंह
बिजयसिंह
नरेन्द्रसिंह

अनुलग्नक-इ



8 देवीसिंह पुत्र धनेसिंह
9 आलमसिंह
10 मोहनसिंह
सुरजीतसिंह
10 गणेशसिंह
पहाड़सिंह
मानसिंह
10 यशपालसिंह
हुकमसिंह
10 शिशुपालसिंह
ओमसिंह
ओंकारसिंह
10 मोहब्बतसिंह

अध्याय–इक्कीस

राव विजयसिंह
सन् 1686-1710 ई

राव गणेशदास की सन् 1686 ई में मृत्यु के पश्चात उनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार विजय सिंह पूगल के राव बने। इनके समकालीन शासक निम्न थे, इन्होंने सन् 1710 ई तक, 24 वर्ष राज्य किया।

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 महारावल अमरसिंह, सन् 1659-1702 ई	1 महाराजा अनूपसिंह, सन् 1667-1698 ई	महाराजा अजीत सिंह, सन् 1678-1724 ई	1 बादशाह औरंगजेब, सन् 1657-1707 ई
2 महारावल जसवन्तसिंह, सन् 1702-1707 ई	2 महाराजा सरूपसिंह, सन् 1698-1700 ई		2 बहादुर शाह, सन् 1707-1712 ई
3 महारावल बुद्धसिंह, सन् 1707-1709 ई	3 महाराजा सुजानसिंह, सन् 1700-1736 ई		
4 महारावल तेजसिंह, सन् 1709-1717 ई			

राव गणेशदास ने अपने दूसरे पुत्र, कुमार केसरीसिंह को केला गांव की जागीर बख्शी थी, इसमें सात गांव थे। लूणखा, किसनपुरा, मोटासर, गोरीसर, खियेरा इनकी सन्तानों के गांव हैं।

राव विजयसिंह के शासनकाल के 24 वर्ष शान्तिपूर्वक बीते। पूगल की पश्चिमी सीमा पर सन् 1650 ई से देरावर का नया राज्य स्थापित होने के बाद में पूगल को मुलतान के शासकों से कुछ लेना देना नहीं रहा। मुलतान के साथ समान सीमा नहीं होने से लंगाओं और बलोचों के हमले और दावे अब पूगल के स्थान पर देरावर झेलता था। जैसलमेर के सशक्त महारावल अमरसिंह का आशीर्वाद पूगल के साथ सदैव रहने से उसकी दक्षिणी सीमा पर शान्ति बनी रही। उनके पिता रावल सबलसिंह पर राव सुदरसेन ने रावल रामचन्द्र को देरावर का राज्य देकर जो अहसान किया था, वह उन्हें याद था। उस अहसान का बदला वह किसी न किसी रूप में पूगल की सहायता करके चुकाते रहे और उनकी आने वाली पीढ़ियां भी इसे चुकाती रहीं। महारावल अमरसिंह के बाद में जसवन्तसिंह, बुद्धसिंह और तेजसिंह ने जैसलमेर पर बहुत थोड़े समय तक राज्य किया, इसलिए वह पूगल को कोई सक्रिय सहयोग नहीं दे पाए और न ही इसकी उनके समय में आवश्यकता पड़ी, परन्तु उनका स्नेह और सद्भावना हमेशा पूगल को मिलती रही।

महाराजा अनूपसिंह दिल्ली के बादशाह औरंगजेब के मनसबदार थे। इन्होंने भी अपने पिता राजा करणसिंह की भांति अपनी करनी का बड़ा कड़वा फल भोगा। राजा करण सिंह का औरस पुत्र वनमालीदास बादशाह औरंगजेब का कृपा पात्र था। उसने बादशाह को प्रसन्न करने के लिए इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। बादशाह औरंगजेब राजा करणसिंह द्वारा अटक में नावें तोड़ने वाली घटना को कभी नहीं भुला सके। उन्होंने क्रोध का घूंट पी कर राजा करणसिंह को मृत्युदण्ड तो नहीं दिया, परन्तु उन्होंने इन्हें जलील करने मे कोई कसर बाकी नहीं रखी। राठौड़ इतिहासकारों का यह कथन मिथ्या है कि राजा करणसिंह के साथ में दिल्ली में उनके पुत्र पदमसिंह और केशरीसिंह के होने से बादशाह औरंगजेब उनसे घबरा गये थे। उन्हें इन दो आदमियों से घबराने की आवश्यकता कहा थी? अगर वह चाहते तो इन दो के बदले में सौ आदमी मरवाकर भी इन्हें मरवा सकते थे। बादशाह औरंगजेब की सत्ता और शक्ति को केवल दो योद्धाओं के साथ तोलना एक अज्ञान था। बाबर, हुमायु, अकबर, जहांगीर, शाहजहा मे कोई बादशाह इतने शक्तिशाली नही थे, जितने औरंगजेब थे, क्योंकि इसके पीछे पाच पीढियो का सुदृढ शासन और सम्पदा थी।

जब बादशाह औरंगजेब ने वनमालीदास के नाम आधे बीकानेर राज्य की जागीर का फरमान लिख दिया और इस आदेश को क्रियान्वित कराने के लिए दिल्ली से सूबेदार उनके साथ भेज दिया, तब महाराजा अनूपसिंह को चेता हुआ कि राजा करणसिंह द्वारा प्राप्त, 'जयजंगल धर बादशाह' का खिताब पिता-पुत्र के लिए कितना मंहगा पड रहा था। बडी कठिनाई से छल कपट करके इन्होने वनमालीदास को जहर देने का काम उदयराम अहीर को सौंपा। यह तो उदयराम अहीर का हौसला था कि उन्होंने उसे शराब के साथ जहर पिलवा दिया। महाराजा अनूपसिंह ने शाही सूबेदार को एक लाख रुपये रिश्वत के दिए, जिससे उसने बादशाह को वनमालीदास की स्वाभाविक मृत्यु होने की गलत सूचना देदी।

इस घटना से अनूपसिंह इतने घबरा गए थे कि वह अधिकांश समय बादशाह के आदेशो से दक्षिण में रहे, वहीं आदूणी मे इनका देहान्त हुआ। इस प्रकार पिता पुत्र को अपनी जन्मभूमि मे मरने और दाह सस्कार करवाने तक का सौभाग्य भी प्राप्त नही हुआ।

राजा करणसिंह पूगल के राव सुदरसेन को अकारण मारते समय और महाराजा अनूपसिंह भाटियो की भूमि पर चुडेहर मे अनूपगढ का किला बनवाते समय यह भूल गये थे कि ईश्वर उनकी करतूतो के लिए उन्हे कभी क्षमा नही करेगा, उसने इन्हे दण्डित करने के लिए बादशाह औरंगजेब को अपना माध्यम बनाया।

राव विजयसिंह की मृत्यु सन् 1710 ई मे पूगल मे हुई। इनके केवल एक पुत्र, राजकुमार दलकरण होने का विवरण मिलता है। यह इनके बाद मे पूगल के राव बने।

राव दलकरण
सन् 1710-1741 ई

राव विजयसिंह के देहान्त के बाद उनके पुत्र राजकुमार दलकरण, सन् 1710 ई मे पूगल के राव बने। इन्होंने सन् 1741 ई तक, इकतीस वर्ष राज्य किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 महारावल तेजसिंह, सन् 1709 1717 ई	1 महाराजा सुजान सिंह, सन् 1700-1736 ई	1 महाराजा अजीत सिंह, सन् 1678 1724 ई	1 सन् 1707-1713 ई तक कई शासक हुए।
2 महारावल सवाईसिंह, सन् 1717-1718 ई	2 महाराजा जोरावर सिंह, सन् 1736-1745 ई	2 महाराजा अभय सिंह, सन् 1724-1749 ई	2 फर्रूखसियार, सन् 1713 1719 ई
3 महारावल अखेसिंह, सन् 1718-1762 ई			3 मोहम्मद शाह, सन् 1719-1748 ई

राव दलकरण के लिए यह कहा जाता था कि उन्होने अपने एक कामदार की हत्या करवा दी थी, जिसके लिए उन्हे राजगद्दी से उतार दिया गया। पूगल के राव के जिस कार्य को हत्या की सज्ञा दी गई, वह उनके द्वारा अपने एक कामदार को दी गई फासी की सजा थी। पूगल के राव अपने राज्य के एक स्वतन्त्र शासक थे, इन्हे किसी जघन्य अपराध के लिए न्याय प्रक्रिया मे फासी देने का पूण अधिकार था, जिसके लिए उन्हें किसी से स्वीकृति लेने की आवश्यकता नही थी। पूगल के राव को गद्दी से उतारने का अधिकार केवल केलण भाटियो और पूगल के खाना और प्रधानो को ही था। किसी एक कामदार को फासी दिए जाने पर यह विशिष्ट व्यक्ति भी राव को गद्दी से नही उतार सकते थे।

यह भी कहा जाता था कि बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह के अपने प्रमुख सरदारो और जागीरदारो के साथ सम्बन्ध तनावपूर्ण थे। इसलिए बात चीत करने के लिए उन्होने राज्य के सरदारो और जागीरदारो को बीकानेर बुलवाया। इस वार्ता के लिए राव गणेशदास के एक पौत्र खुमान और राव दलकरण के छोटे भाई सूरसिंह भी आमन्त्रित थे। इससे पहले सूरसिंह ने खुमान के भाई को किसी कारण से मार दिया था। बीकानेर मे सूरसिंह का आया देखकर खुमान भडक उठा और उसने बीकानेर म ही सूरसिंह को मारकर अपने भाई की मौत का बदला ले लिया। यह समझ मे नही आता कि यह मिथ्या बात चली कैसे ? राव दलकरण अपने पिता के एकमात्र पुत्र थे, इनके सूरसिंह नाम का कोई भाई नही

था और न राव गणेशदास के खुमान नाम का कोई पौत्र था। राव गणेशदास के पुत्रों, विजय सिंह और केसरीसिंह, के खुमान नाम का कोई पुत्र नहीं था। इसलिए यह कथा बीकानेर के इतिहासकारों की मनगढ़त कहानी है, इसमें कोई सत्यता नहीं है।

मथैन जोगीदास ने अपनी पुस्तक, 'बिरसलपुर विजय' में लिखा कि, सन् 1712 ई में, बरसलपुर के भाटियों ने मुलतान के व्यापारियों का एक काफिला लूट लिया था। उस समय बरसलपुर में राव लखधीरसिंह थे। व्यापारियों ने बीकानेर के महाराजा से इसकी शिकायत की। महाराजा सुजानसिंह ने अपने मुंह लगे खवास आनन्दराम से विचार विमर्श करके बरसलपुर सेना भेजी और राव लखधीर सिंह को कहला भेजा कि वह व्यापारियों को उनका लूटा हुआ माल वापिस करें और उनकी हानि के लिए क्षतिपूर्ति करें। इसकी पालना नहीं करने पर बीकानेर की सेना ने बरसलपुर के गढ़ पर अधिकार कर लिया। उन्होंने लूटा हुआ माल बरामद करके व्यापारियों को लौटाया और मुआवजा वसूल करके सेना बीकानेर लौट आई। इसमें पहली बात यह थी कि बरसलपुर कभी भी बीकानेर के अधीन नहीं था, व्यापारियों को अपनी शिकायत बीकानेर के बजाय पूगल के राव के पास करनी चाहिए थी। एक स्वतन्त्र राज्य की सीमा का उल्लघन करके बीकानेर को उसके किसी गाव व जागीरदार को दण्ड देने का कोई अधिकार नहीं था, वह पूगल के विरुद्ध युद्ध घोषित करके ही ऐसा कर सकते थे। दूसरे, बादशाह औरगजेब बीकानेर से 'जय जगलधर बादशाह' की कीमत अपने निधन तक चुका रहा था। महाराजा सुजानसिंह के सन् 1700 ई में बीकानेर की गद्दी पर बैठते ही उसने उन्हें दक्षिण में भेज दिया था। वह वहा से बादशाह औरगजेब के जीते जी (मृत्यु सन् 1707 ई) वापिस बीकानेर नहीं आए थे, वह लगभग दस वर्ष दक्षिण में ही रहे। इसी बीच में जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह ने बीकानेर पर अधिकार कर लिया था। इसलिए उनके द्वारा सन् 1712 ई में बरसलपुर पर आक्रमण किया जाना सम्भव नहीं प्रतीत होता और न ही इतनी जल्दी उनका आत्मविश्वास लौटा था।

सन् 1703 ई में भाटियों और जोइयों के विद्रोह को दबाने के लिए महाराजा सुजान सिंह ने नोहर पर आक्रमण किया। वहा उन्होंने धोखे से दौलतसिंह बाघल को मरवा दिया। वहा से वह विद्रोही भाटियों और जोइयों को दबाने भटनेर गए। परन्तु इस विद्रोह को दबाने में वह असफल रहे भटनेर के किले पर वह अधिकार नहीं कर सके। इसीलिए महाराजा जोरावरसिंह को सन् 1740 ई में भटनेर पर फिर से आक्रमण करने की आवश्यकता पड़ी, परन्तु इस बार भी उन्हें सफलता नहीं मिली।

सन 1730 ई में बीकानेर के राजकुमार जोरावर सिंह और जयमलसर के उदयसिंह भाटी के बीच किसी बात को लेकर तकरार हो गई थी। दयालदास के अनुसार यह जयमलसर के रावत थे, लेकिन ओझा के अनुसार यह वहा के रावत नहीं थे। जयमलसर की वंशावली के अनुसार वहा इस नाम के कोई रावत नहीं हुए थे। यह रावत भुवनदास के बड़े पुत्र थे, इन्हें रावत नहीं बनाया गया था। उदयसिंह ने प्रण लिया था कि वह बीकानेर को जोधपुर से आक्रमण करवा कर मटियामेट करवायेंगे। इसके लिए वह प्रयास करते रहे। आखिर उन्हें कुछ सफलता मिली भी। सन् 1733 ई में जोधपुर के तत्कालीन महाराजा अभयसिंह ने नागौर के शासक, अपने छोटे भाई बख्तसिंह, को बीकानेर पर आक्रमण करने के लिए भेजा। बाद

मे वह स्वय भी सेना लेकर बीकानेर पहुच गए। इस सेना को देखकर बीकानेर की सेना के पाव उखड गए। आखिर मेवाड के महाराणा सग्रामसिंह के बीच-बचाव से जोधपुर की सेना बीकानेर से खर्चा लेकर वापिस गई। इस प्रकार उदयसिंह भाटी के साथ राजकुमार जोरावर सिंह की तकरार बीकानेर को बहुत महगी पडी। इस आक्रमण के कारण महाराजा सुजानसिंह ने रावत मुकनदास को पदच्युत किया और उदयसिंह को जयमलसर का रावत नही बनाया।

सन् 1740 ई मे महाराजा जोरावरसिंह ने महाजन के ठाकुर भीमसिंह के नेतृत्व मे एक सेना भाटियो और जोइयो को भटनेर से हटाने के लिए भेजी। इस सेना के साथ मे उन्होने मेहता रुगनाथ राठी को भी भेजा। वहा ठाकुर भीमसिंह ने माला जोइया को समझौते के लिए बातचीत करने के लिए बुलाया और साथ मे उसे भोजन का न्योता भी दिया। माला जोइया के साथ म विश्वासघात करके उन्होने उसे और उसके सत्तर साथियो को भोजना के साथ जहर खिलाकर मार दिया। जोइयो और महाजन के ठाकुरो की शत्रुता पुरानी थी, राव गणेशदास (सन् 1665-1686 ई) के समय जोइयो और भाटियो ने महाजन के ठाकुर अजबसिंह को खारवारे मे मार दिया था। यह उस घटना का बदले लेने की उनकी भावना की एक कडी थी। इसके बाद में भीमसिंह ने भटनेर के किले पर आक्रमण किया और माला जोइये के पुत्रो को मारकर किले पर अधिकार कर लिया। भीमसिंह को किले मे चार लाख रुपये और सोने की मोहरो का खजाना मिला। इसे उन्होने स्वय रख लिया, बीकानेर राज्य के मेहता रुगनाथ राठी को इसे देने मे इनकार कर दिया। इस घटना से महाराजा जोरावरसिंह ने अपने आपको बडी दुविधा और शर्मनाक स्थिति मे पाया, उन्ही का भेजा हुआ सेना नायक भटनेर का खजाना दबा गया। इसलिए महाराजा ने अपनी प्रतिष्ठा को भुलाकर हसन खा भाटी से ठाकुर भीमसिंह को भटनेर के किले से निकालने के लिए सहायता मागी और साथ मे ठाकुर भीमसिंह से खजाना छीन कर उसे उन्हे (जोरावरसिंह) सौपने का वचन लिया। हसन खा भाटी बीकानेर के शासको की चालाकियो का जानकार था। उसने भटनेर पर आक्रमण करके ठाकुर भीमसिंह को वहा से जाने दिया और खजाना खुद ने रख लिया। माला जोइया से पहले भटनेर भाटियो के अधिकार मे था, इसलिए यह खजाना भाटियो का ही था जो वापिस उन्ही के पास आ गया। महाराजा जोरावरसिंह को कोई खजाना नही सौपा गया। वह यही सतोप करके बीकानेर लौट आए कि ठाकुर भीमसिंह को उन्होने भटनेर से निकलवा दिया और उसे खजाना नही रखने दिया। अगर खजाना महाराजा जोरावरसिंह को मिलना ही नही था तो ठाकुर भीमसिंह को उसे लेकर भटनेर में बैठे रहने देने मे उन्हें क्या हानि थी? महाराजा की नासमझी स उन्होने भटनेर और खजाना, दोनो वापिस हसन खा भाटी को दिला दिए।

इतिहासकार दयालदास ने एक बार फिर अपनी करामात दिखाई। उनके अनुसार राव दलकरण और उनके राजकुमार अमरसिंह के आपसी सम्बन्ध अच्छे नही थे, तनावपूर्ण थे। इसलिए राजकुमार अमरसिंह ने बीकानेर के महाराजा गजसिंह (सन् 1745-1787ई) को पेशकश भेंट की, जिसके बदले मे उन्होंने राव दलकरण को पूगल की गद्दी से उतार कर, सन् 1761 ई मे अमरसिंह को पूगल का राव बना दिया। पूगल एक स्वतन्त्र राज्य था, वह बीकानेर के अधीन कभी नही था, इसलिए बीकानेर को पूगल के राव को गद्दी से उतारने और उनके स्थान पर अन्य को राव बनाने का कोई अधिकार नही था।

बीकानेर के लालगढ़ महल मे रखे अभिलेखो के अनुसार, वि स 1800 (सन् 1743 ई) मे, राव अमरसिंह पूगल के राव थे। उस समय गजसिंह महाराजा नही थे। सन् 1761 ई मे उन्हे पूगल के राव बनाए जाने की घटना गलत थी। वस्तुत राव अमरसिंह, सन् 1741ई मे, अपने पिता राव दलकरण की मृत्यु के बाद मे पूगल के राव बन गए थे। बीकानेर के स्वय के अभिलेखो से वह सन् 1743 ई से पहले ही पूगल के राव थे। इस प्रकार से इतिहासकार ने अभिलेखो को देखे बिना, किसी स्वतन्त्र राज्य के बारे मे मिथ्या बातें लिख कर किसकी सेवा की ? एक तथ्य इन्होने अवश्य उजागर किया, बीकानेर राज्य का पेशकश से मोह। वह पिता पुत्र के मतभेद से भी पेशकश लेकर समझौता कर लेते थे, यही उनके न्याय का आधार था।

अपने पिता राव विजयसिंह के शासनकाल के 24 वर्षों की तरह राव दलकरण के शासन के 31 वर्ष भी शान्तिपूर्वक बीत गए। यह पचपन वर्ष पूगल राज्य के लिए अच्छे रहे। देरावर का अलग राज्य बनने से पूगल की पश्चिमी सीमा पर शान्ति रही। महाराजा सुजान सिंह को सताने के लिए जोधपुर काफी था, इसलिए उन्हे पूगल को सताने की फुरसत नही मिली। महाराजा सुजानसिंह सन् 1700-1712 ई के बीच लगातार दक्षिण मे रहे, उस समय जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह ने बीकानेर पर आक्रमण करके वहा अधिकार कर लिया था। इसमे उन्हें बीदावतो का सहयोग प्राप्त था। इसके बाद जोधपुर के महाराजा अभयसिंह ने, सन् 1733 और 1739 ई मे, दो बार बीकानेर पर आक्रमण किया। सन् 1740 ई में जोधपुर ने बीकानेर के ही सरदारो की सहायता से फिर उस पर आक्रमण किया। इसी समय बीकानेर को भटनेर व नोहर मे भाटी और जोइये भी तग कर रहे थे। हांसी और हिसार मे भी उनके विरुद्ध विद्रोह पनप रहे थे। इस सबका नतीजा यह रहा कि महाराजा सुजानसिंह और जोरावरसिंह को पूगल की ओर ध्यान देने का वक्त ही नही मिला। उन्हे ज्यादा चिन्ता अपना राज्य रखने की थी, न कि पूगल लेने की। जैसे सन् 1650 ई से पहले पूगल की पश्चिमी सीमा पर मुलतान के शासक, लगा और बलोच उस पर बार-बार आक्रमण किया करते थे, और पूगल अपनी सुरक्षा करने मे असफल रहता था और उसकी स्वतन्त्रता हमेशा खतरे मे रहती थी, ठीक वही हाल अब जोधपुर ने बीकानेर का कर रखा था। तीस साल (सन् 1710-1740 ई) मे जोधपुर ने बीकानेर पर चार बार आक्रमण किए और वह बीकानेर तक पहुचने मे भी सफल हुए। यह जोधपुर की कृपा थी कि राव दलकरण के समय बीकानेर ने पूगल को शान्ति बख्शी।

राव दलकरण का देहान्त सन् 1741ई मे पूगल मे हुआ। इनके दो पुत्र थे, राजकुमार अमरसिंह इनके बाद मे पूगल के राव बने। दूसरे कुमार जुझारसिंह को इन्होने सादोलाई गाव की जागीर दी।

अध्याय–तेईस

राव अमरसिंह
सन् 1741-1783 ई

राव दलकरण के देहान्त होने पर उनके ज्येष्ठ पुत्र, राजकुमार अमरसिंह, सन् 1741 ई मे पूगल के राव बने। इन्होने सन् 1783 ई तक, बयालीस वर्ष शासन किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली	विदेशी
1 महारावल अखैसिह, सन् 1718-1762 ई	1 महाराजा जोरावरसिह, सन् 1736 1745 ई	1 महाराजा अभयसिह, सन् 1724-1749 ई	1 बादशाह मोहम्मदशाह, सन् 1719 1748 ई	1 नादिर शाह सन् 1739 ई
2 महारावल मूलराज, सन् 1762-1820 ई	2 महाराजा गजसिह, सन् 1745-1787 ई	2 महाराजा रामसिह, सन् 1749-1752 ई	2 बादशाह अहमदशाह, सन् 1748-1754 ई	2 अहमदशाह अब्दाली, सन् 1743 ई
		3 महाराजा बख्तावर सिह, सन् 1752-1753ई	3 बादशाह आलमगीर, सन् 1754-1759 ई	
		4 महाराजा विजयसिह, सन् 1753-1793 ई	4 बादशाह शाहजहा, सन् 1759 ई	
			5 बादशाह जलालूद्दीन, सन् 1759-1806 ई	

बीकानेर के लालगढ़ महल में रखे अभिलेखो के अनुसार, बही पृष्ठ सख्या 377–78, राव दलकरण के पुत्रो के नाम अमरसिह और सूरसिह दर्शाये गए हैं। उनके दूसरे पुत्र का नाम सूरसिह नही होकर जुझारसिह था। जुझारसिह को सादोलाई की जागीर दी गई थी। जुझारसिह के पुत्र उम्मेद सिह सन् 1790-93 ई में पूगल के राव बने।

राव अमरसिंह ने माटियाली गाव की जागीर पूगल के पोळ बारहठजी को बख्शी। बाद म माटियाली गाव का नाम बदल कर इनके नाम पर 'अमरपुरा' रखा गया। अमरपुरा के बारहठ ठाकुर हीरदान एक पढे लिखे ज्ञानी पुरुष थ। इन्होने एक हस्तलिखित पुस्तिका, 'पूगल की वार्ते' अपने स्वय के अभिलेखो से तैयार करके जनरल हरिसिह को सन् 1920 ई म अनुमोदन और प्रकाशन के लिए भेंट की थी। इस आलेख म उन्होने अनेक ऐसे तथ्यो को प्रामाणिकता से उजागर किया था जो दयालदास की छपी हुई 'ख्यात' स मल नही खाते थे और कुछ ऐसे तथ्य भी थ जो बीकानेर द्वारा सजोयी गई और अपनाई गई कीर्ति को ध्वस्त करते थे। इसमे पूगल के बारे म बीकानेर द्वारा फैलाई गई भ्रातियो का पर्दाफाश किया गया था। इस पुस्तक के प्रकाशन मे बीकानेर की प्रजा को अपने राजाओ के विषय मे सच्चे तथ्यो का मालूम पडता, जिसमे वह उनके थोथ कारनामा के वदले राजवश का सही मूल्याकन करती। उस समय गगासिह बीकानेर के महाराजा थे और जनरल हरिसिह उनके विश्वासपात्र मन्त्री थ। वह नहीं चाहते थे कि पूगल के एक बारहठ जागीरदार ऐसी कोई पुस्तक छपवायें जिससे बीकानेर राज्य की प्रतिष्ठा, गौरव और अहकार को धक्का लगे। उनको यह मालूम था कि ऐसी ही एक पुस्तक के कारण महाराजा गगासिह ने बीदासर के ठाकुर बहादुरसिह को गद्दी से उतार कर उनकी मानहानि की थी। यही दुर्दशा महाराज मेघसिह की उनकी पुस्तक, 'बीकानेर का इतिहास' छापने पर हुई थी। यह हस्तलिखित पुस्तक बाद म जनरल हरिसिह के पुत्र राव बलदेवसिह के पास रही। वह भी इस पुस्तक को छपवाने का साहस नही जुटा पाए, क्योकि उन्हे भी राजसत्ता की नाराजगी का भय था। वह स्वय ज्यादा पढे लिखे भी नही थे, इसलिए वह इस पुस्तक का सही मूल्याकन करने मे असमर्थ थे। उनकी उदासीनता के कारण यह हस्तलिखित पुस्तिका अपनी मौत स्वय मर गई, कही रद्दी के भाव बिकी या दीमक के चढावे चढ गई। अब यह उपलब्ध नही है। बारहठ हीरदान, नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी थे, इसलिए राव बलदेवसिह उन्हे बडी मान्यता देते थ और उनके प्रति श्रद्धा रखते थे। उन्होने ठाकुर हीरदान बारहठ की स्मृति मे सत्तासर गाव मे एक मन्दिर भी बनवाया था।

इनके बाद मे ऊदादान बारहठ आखिरी व्यक्ति थे जिन्हे पूगल के इतिहास का पूरा ज्ञान था। वह पूगल के प्रमुखो, सरदारो, प्रधानो और खाना के पूरे जानकार थे। पूगल की परम्पराओ और रीति रिवाजो का भी उन्हे ज्ञान था। ठाकुर गोपालदान बारहठ एक लम्बे, तगडे व्यक्ति थ, उनका व्यक्तित्व भव्य था। वह अपनी पोशाक के प्रति हमेशा सचेत रहते थ। ठाकुर भैरवदान और किवरदान कुछ कविता किया करत थे। ठाकुर जीवराज दान और फूसदान साधारण गवई प्रकृति के पुरुष थ।

राव अमरसिंह के समय जैसलमेर के रावल अखैसिह और मूलराज, दोनो ही कमजोर शासक थ। उनका प्रजा और प्रशासन पर नियन्त्रण ढीला था। सही मायने मे वह अयोग्य शासक थे। वह अपने राज्य की सीमाओ की सुरक्षा करने म असमर्थ रहे।

इसी प्रकार दिल्ली मे भी मुगल सत्ता और शक्ति की नीव ढह चुकी थी। वहा राव अमरसिंह के समय मे चार शासक बदल चुके थे, पाचवें गद्दी पर थे। सन् 1739 और 1743 ई के नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली के बाहरी आक्रमणो ने दिल्ली की शक्ति

को धज्जियां उड़ा कर रख दी थी। इन आक्रमणों ने दिल्ली की कमर तोड़ दी और उन्होंने इसे इतना जमकर लूटा कि दिल्ली कंगालों और भूखमरों की नगरी बन गई। प्रत्येक प्रान्तीय सूबेदार और आश्रित शासक अपने आप को स्वतन्त्र घोषित करके, एक दूसरे की भूमि पर अधिकार करने के लिए आपस में लड़ रहे थे। यह सब कुछ कमजोर केन्द्रीय सत्ता के कारण हो रहा था।

जैसलमेर के अयोग्य शासकों और दिल्ली में कमजोर शासकों के कारण, सन् 1763 ई. में दाऊद पुत्रों ने रावल रायसिंह को देरावर राज्य त्यागने के लिए विवश किया। पूगल, राणा माणा के बलिदान के कारण दाऊद पुत्रों के चुंगल से बच गया।

जोधपुर में राजगद्दी के लिए पारिवारिक संघर्ष चल रहा था। पहले महाराजा रामसिंह और बख्तावरसिंह के आपस में संघर्ष था, फिर यह रामसिंह और विजयसिंह के बीच में आरम्भ हो गया। मराठों की त्रासदी जोधपुर सहित अन्य राजपूत राज्यों को सता रही थी। बीकानेर और जैसलमेर अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण मराठों की पहुंच से दूर थे, और इनकी गरीबी के कारण उन्हें इन राज्यों से चौथ वसूल करने में खास रुचि नहीं थी। मौके का लाभ उठाकर और पुरानी शत्रुता का बदला लेने की नीयत से, बीकानेर के महाराजा गजसिंह, महाराजा रामसिंह के विरुद्ध बख्तावरसिंह और विजयसिंह का पक्ष लेकर, जोधपुर के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप कर रहे थे। महाराजा गजसिंह एक शक्तिशाली और योग्य शासक थे। इन्होंने महाराजा जोरावरसिंह के समय उपद्रव मचाने वाले और बगावत करने वाले महाजन, साण्डू, भगरासर, मनसीसर, मादरा के ठाकुरों को ठिकाने लगाया और बीदावतों को दण्डित किया।

इस प्रकार पूगल के पास पड़ोस में बीकानेर राज्य को छोड़कर सभी राज्यों में संघर्ष चल रहा था, उनमें स्थिर शासन नहीं था और उनकी प्रजा अन्याय और कुशासन की शिकार थी।

दयालदास के अनुसार, सन् 1744 ई. में जब महाराजा जोरावरसिंह कोलायत में मुकाम कर रहे थे तब उन्होंने मेहता रुगनाथ के नेतृत्व में सेना की एक छोटी टुकड़ी सिरड़ा भेजी। आरम्भिक विरोध के बाद वहां के भाटियों ने आत्मसमर्पण कर दिया और उन्होंने बीकानेर की अधीनता स्वीकार कर ली। उन्होंने यह नहीं बताया कि इस प्रकार पूगल राज्य के एक गांव पर आक्रमण करने की उन्हें क्या आवश्यकता पड़ गई थी और एक गांव को अपने अधीन करके उन्होंने कौनसी उपलब्धी प्राप्त करली? दयालदास ने आगे लिखा कि महाराजा जोरावरसिंह ने फतेहाबाद में हसन खां भाटी के पुत्र मोहम्मद भाटी को पराजित किया।

उपरोक्त दोनों बातें सही नहीं हैं। अगर सन् 1744 ई. में बीकानेर ने सिरड़ा पर अधिकार कर लिया था तो उसने वाद में यह अधिकार खोया कब? क्योंकि सन् 1947 ई. में सिरड़ा गांव जैसलमेर राज्य का भाग था। महाराजा जोरावरसिंह के स्वयं के कहने पर और उनकी सहायता से हसन खां भाटी ने भटनेर का किला ठाकुर भीमसिंह से खाली करवाया था। इसलिए इनके द्वारा फतेहाबाद में उनके पुत्र मोहम्मद भाटी को परास्त करने का प्रश्न ही कहां था?

सन् 1747 ई. में महाराजा गजसिंह रिणी गए हुए थे, जहां उनके पिता और दिवंगत

महाराजा जोरावरसिंह के चाचा, आनन्दसिंह रोग ग्रस्त थे। वहां उन्हें बीकमपुर मे गडबड होने की सूचना मिली। वह तुरन्त मेहता भीमसिंह के साथ सेना लेकर बीकमपुर पहुचे, वहा शान्ति स्थापित की और कुम्भा को वहा का राव बना दिया। दो वर्ष बाद, सन् 1749 ई मे जैसलमेर के महारावल अखैसिह ने राव कुम्भा को मार डाला। वस्तुत उनके बीकमपुर पहुचने से पहले ही महारावल अखैसिह वहा पहुच चुके थे, इसलिए महाराजा गजसिह ने अपनी सेना जोधपुर भेज दी। इस प्रकार बीकानेर द्वारा स्थापित तथाकथित राव ने केवल दो वर्ष सत्ता भोगी और मृत्यु को गले लगाया। चूकि बीकमपुर जैसलमेर के अधीन चला गया था इसलिए बरसलपुर भी सन 1749 ई के बाद स्वेच्छा से जैसलमेर मे मिल गया।

सन् 1755 ई के भयकर अकाल मे महाराजा गजसिह ने प्रजा को अकाल सहायता देने के रूप म बीकानेर नगर के चारो तरफ शहरपनाह का निर्माण कार्य करवाया था।

राजकुमार राजसिंह के साथ मे इनके सम्बन्ध तनावपूर्ण बने हुए थे। चूरू के विद्रोही ठाकुर हरिसिंह, कुछ बीदावत और भाटी सरदार राजकुमार का साथ दे रहे थे।

सन् 1759 60 ई मे भटनेर मे भाटियो और जोइयो के बीच मे उपद्रव खडा हो गया था। हसन खा भाटी ने भटनेर पर अधिकार कर लिया था। मेहता बख्तावरसिंह ने वहा जाकर बीच बचाव करके शान्ति स्थापित की। इससे पहले बख्तावरसिंह ने भाटियो को सहायता देकर सोरतार पर उनका अधिकार करवाया था।

सन 1760 ई मे राव अमरसिंह की पुत्री सूरज कवर का विवाह, महाराजा गजसिंह के पुत्र राजकुमार राजसिंह से हुआ।

सन् 1761 ई मे राव अमरसिंह के पुत्र राजकुमार अभयसिंह का विवाह रावतसर के रावत आनन्दसिंह की पुत्री के साथ हुआ।

सन 1761 म दाउद पुत्रो ने किसनावत भाटियो से अनूपगढ और मौजगढ के किले छीन लिए थे। भाटियो ने जयमलसर के रावत हिन्दूसिंह के नेतृत्व मे दाउद पुत्रो पर आक्रमण करके मौजगढ का किला उनसे छीन लिया, परन्तु अनूपगढ उनके अधिकार मे ही रहा।

सन् 1762 ई मे महाराजा गजसिह ने अनूपगढ पर आक्रमण करके दाउद पुत्रो को वहा परास्त किया और अनूपगढ अपने अधिकार मे लेकर वहा मेहता शिवदानसिंह की देख रेख मे थाना स्थापित किया। इससे पहले भाटी दाउद पुत्रो को अनूपगढ से हटाने मे असमर्थ रहे थ, अब जब बीकानेर ने वहा पर अपना अधिकार करके थाना बैठा दिया तो भाटी कुछ नही कर सके।

परन्तु भाटी ऐसे हार मानकर शान्ति से घर बैठने वाले नही थ। किसनावत भाटियो ने अपनी दुविधा उनके पीढियो के सहयोगियो और समर्थको, जोइयो को बताई। वह तुरन्त भाटियो की सहायता को आ पहुचे। सन् 1763 ई मे जोइयो ने अनूपगढ पर आक्रमण किया, भाटी भी इनकी सहायता करने वहा पहुच गए। वहा के युद्ध म साडवा के धीरसिंह और मालेरी के बदासिंह मारे गए। उन्होने अनूपगढ के किलेदार मेहता मूलचन्द को किला खाली करके उन्ह और भाटियो को सौंपने के लिए विवश किया। वह हारा थका बीकानेर चला गया, भाटियो ने उसे मारा नही, उसकी जान बख्श दी। बीदासर के ठाकुर

बहादुरसिंह के अनुसार जोइयो और भाटियों की थोडी सी सेना का बीकानेर की अनूपगढ स्थित बडी सेना के विरुद्ध विजय का कारण मेहता बख्तावरसिंह का मेहता मूलचन्द के विरुद्ध सुनियोजित षड्यन्त्र था। मेहता बख्तावरसिंह बीकानेर के पदच्युत दीवान थे।

सन् 1763 ई मे दाउद पुत्रो ने रावल रायसिंह को देरावर छोडने के लिए विवश किया। वह देरावर छोडकर बीकानेर के महाराजा गजसिंह के पास सहायता मागने आए। अगर यह सहायता मिल जाती तो बीकानेर और भाटियो की संयुक्त सेनाए दाउद पुत्रो को देरावर से निकाल सकती थी। परन्तु महाराजा गजसिंह उस समय जोधपुर के शासको की आन्तरिक पारिवारिक कलह मे रुची ले रहे थे। इस कलह का शीघ्र समाधान नही होने का लाभ मराठो और अमीर खा ने उठाया। कलह के कारण मारवाड मे एकता नही होने से उसका लाभ उनके शत्रु उठा रहे थे। महाराजा गजसिंह ऐतिहासिक कारणो से एकता होने देने मे बाधक बन रहे थे।

दाउद पुत्र रावल रायसिंह के देरावर मे दीवान थे। परन्तु वह धीरे-धीरे इतने शक्तिशाली हो गए थे कि सारी सत्ता उनके हाथो मे चली गई, रावल केवल नाममात्र के शासक रह गये थे। राजकाज के कार्य मे उनका हस्तक्षेप बहुत बढ गया था और वह अपनी मनचाही करने लग गए थे। एक बार रावल रायसिंह की देरावर से अनुपस्थिति का लाभ उठाकर इन्होने अन्य षड्यन्त्रकारियो के सहयोग से सत्ता अपने हाथ म ले ली। इस प्रकार सन् 1650 ई मे पूगल द्वारा रावल रामचन्द्र को दिया हुआ देरावर का स्वतन्त्र राज्य, 113 वर्षों बाद सन् 1763 ई से, हमेशा के लिए भाटियो के हाथो से निकल गया। बाद मे वह बहावलपुर नाम से मुसलमान राज्य मे बदल गया।

बीकानेर ने जोधपुर मे उलझे रहने के कारण रावल रायसिंह को सहायता देने मे अपनी असमर्थता दर्शायी। जैसलमेर के रावल मूलराज कमजोर शासक थे, वह मूक दर्शक की भाति अपने एक भाई का 15,000 वर्ग मील क्षेत्र का राज्य उसके हाथों से खिसकता हुआ देख रहे थे। पूगल के राव अमरसिंह के पास साधन नही थे, इसलिए वह रावल रायसिंह की सहायता नही कर सकते थे। उन्हे चिन्ता थी कि अगर दाउद पुत्रो ने देरावर के बाद म पूगल लेने की सोची तो वह क्या करेंगे ? उनकी यह चिन्ता सही थी, दाउद पुत्रो ने जब ऐसा प्रयास किया तो राणा उत्तैराव (राणेवाले का) और भाणा पडिहार (घोधे का) ने पूगल की सीमा पर अपना बलिदान देकर पूगल को राज्यदान दिया। अगर यह वीर शत्रुओ की सेना के सामने पहाड की तरह अडिग रह कर अपने प्राणो का उत्सर्ग नही देते तो पूगल का राज्य भी देरावर राज्य की तरह समाप्त हो जाता। इससे बहावलपुर राज्य की सीमा बीकानेर के बहुत समीप आ जाती। इसका परिणाम यह होता कि बिरधवाल के पश्चिम का सारा क्षेत्र बहावलपुर (देरावर) का भाग होना और सम्भवत यही स्थिति सन् 1947 ई तक बनी रहती। आज जो हम भाटी यहा हैं वह कभी के मुसलमान बन गए होते और यह सारा क्षेत्र पाकिस्तान का भाग होता। बिरधवाल हैड के नीचे का नाथोर सूरतगढ शाखा का अधिकाश भाग भारत मे नही होने से राजस्थान नहर बनती ही नही। आज का यह दस लाख हैक्टेयर सिंचित क्षेत्र पाकिस्तान की किसी अन्य नाम की नहर से सिंचित होता, क्योकि फिर राजस्थान नहर का पानी पाकिस्तान अपने इसी क्षेत्र मे उपयोग

मे लेता। भारत को जो पूर्वी नदियो का पानी मिला है, वह इस सिंचित क्षेत्र के होने के कारण मिला था। यह राणा भाणा के अमर बलिदान का ही परिणाम था कि आज राजस्थान नहर का सिंचित क्षेत्र भारत मे है। बाद मे हुए शहीदो, गोपा और बीरबल, को राष्ट्र ने उनके नाम पर नहरो के नाम देकर उन्हे अमर कर दिया है, किन्तु राणा भाणा के साथ ऐसा नही किया। सूरतगढ और अनूपगढ शाखाओ का नाम इनके नाम पर रखना चाहिए था। ऐसा नही करने का कारण शासको को पूगल के इतिहास की जानकारी नही होना था। जिस स्थान पर राणा भाणा ने प्राण त्यागे थे, वह स्थान अब भी इसी नाम से जाना जाता है। इसके पश्चिम मे बहावलपुर राज्य और पूर्व मे पूगल राज्य की सीमा थी। अब यह स्थान भारत पाक सीमा पर है।

बहावलखा ने सन् 1780 ई मे बहावलपुर नगर की स्थापना की और वह अपनी राजधानी देरावर से वहा ले गए। यह नगर उसी स्थान पर बसाया गया जहा पर पहले मूमनवाहन था।

सन 1770 ई मे राव अमरसिंह, जिनकी पुत्री का विवाह राजकुमार राजसिंह से हुआ था बीकानेर आए। उस समय महाराजा गजसिंह की पौत्री सरदार कवर का विवाह जयपुर के पृथ्वीराज से होना था। राव अमरसिंह के साथ मे राजकुमार अभयसिंह और केला के ठाकुर पदम सिंह भी थे। राव ने नोते के रु 500/– दिए और केला ठाकुर ने रु 25/–दिए। दयालदास ने गलत लिखा था कि यह पदमसिंह किसी सूरसिंह के पुत्र थे, यह राव बिजयसिंह के भाई केसरीसिंह के पुत्र थे।

रावतसर के रावत आनन्दसिंह की पुत्री का विवाह पूगल के राजकुमार अभयसिंह से सन् 1761 ई मे हुआ था। इनके पुत्र अमरसिंह बीकानेर के जूनागढ मे स्थित नेतासर जेल म बदी थ। वह सन् 1773 ई मे जेल तोडकर निकल गए और अपनी बहन के ससुराल पूगल की शरण मे जा पहुचे। बीकानेर के महाराजा गजसिंह न राव अमरसिंह के पास सदेशा भेजा कि वह उनके बन्दी रावतसर के कुमार अमरसिंह को तुरन्त बीकानेर को सौप द। उन्होन वापिस कहला भेजा कि शरणागत की प्राण देकर रक्षा करना पूगल के भाटियो की परम्परा रही थी और फिर कुमार अमरसिंह तो उनके इतने ही निकट के सम्बन्धी थे जितने स्वय महाराजा गजसिंह। इसलिए उन्हे खेद था कि वह महाराजा के निवेदन की पालना नही कर सकते थे। महाराजा गजसिंह क्रोध का घूट पीकर रह गये। कुछ समय पश्चात अमरसिंह स्वेच्छा स पूगल छोडकर रावतसर चले गए, जहा से उन्होने बीकानेर के विरुद्ध बडा भारी विद्रोह किया।

दयालदास ने लिखा है कि सन् 1773 ई मे बीकमपुर के राव बाकीदास ने बीकानेर को फरियाद की कि बारू और टेकडा गावो के ठाकुर उनके क्षेत्र म उत्पात मचा कर प्रजा को लूट रहे थे और अशान्ति फैला रहे थे। इसलिए महाराजा गजसिंह ने मेहता बख्तावर सिंह के नेतृत्व में सेना भेजकर इन उपद्रवी ठाकुरो की करतूतो को रोका और बीकमपुर की शान्ति व्यवस्था बहाल करने मे राव की सहायता की। यह सारा का सारा कथन मिथ्या है। सन् 1749 ई में रावल अखैसिंह ने जब से बीकमपुर के राव कुम्भा को मारा था, तब से बीकमपुर जैसलमेर के सरक्षण मे था। उन्होंने सन् 1749 ई से सन् 1761 ई तक

बीकमपुर को खालसे रखा था। बारू और टेकड़ा गांव बीकानेर की सीमा से बहुत दूर जैसलमेर राज्य की सीमा मे थे। इसलिए अगर बीकमपुर के राव बाकीदास को जैसलमेर राज्य के अन्य ठाकुरो के विरुद्ध कोई शिकायत थी तो वह जैसलमेर के रावल को उनके उपद्रवों और लूटपाट को रोकने के लिए या दडित करने के लिए निवेदन करते। यह जैसलमेर का अन्दरुनी मामला था, बीकानेर बीच मे पचायती करने आता ही कैसे ? अगर बीकानेर ने बीकमपुर के राव के बुलावे पर बारू टेकड़ा म अपनी सेना भेजी तो यह सरासर अन्तर राज्य सीमा का उल्लघन था। इस प्रकार की घुसपैठ को जैसलमेर चुपचाप कभी नहीं सह सकता था, वह बीकानेर से युद्ध अवश्य करता।

सन् 1759 60 ई म मेहता बख्तावरसिंह को भटनेर भेजा गया था, परन्तु बाद मे इसकी महाराजा से अनबन हो गई थी जिस कारण से इन्होने षडयन्त्र करके, सन् 1763ई मे मेहता मूलचन्द को अनूपगढ मे भाटियो और जोइयो से पराजित करवा करके वहा से निकलवा दिया था। इसके बाद फिर से बख्तावरसिंह ने महाराजा से राजीनामा कर लिया लगता था, तभी उन्हें बीकानेर की सेना के साथ, सन् 1773 ई मे बारू और टेकड़ा भेजा गया बताया गया था।

सन् 1773 ई म हसन खा भाटी पर आक्रमण करने बीकानेर की सेना भटनेर भेजी गई। उसके विरुद्ध आरोप था कि वह बीकानेर राज्य को समय पर कर और पेशकश भेंट नही कर रहा था। भटनेर के भाटियो ने इस नाजायज माग का डटकर विरोध किया। बीकानेर की सेना उनसे कर या पेशकश भेंट मे लेने म असफल रही। भाटियो और राठौड़ो का भटनेर के लिए झगडा आगे महाराजा सूरतसिंह के समय भी चलता रहा। आखिर यह झगडा सन् 1805 ई मे तभी निपटा जब भाटी भटनेर म बुरी तरह पराजित हो गए और भटनेर का हमेशा के लिए बीकानेर राज्य म विलय हो गया।

महाराजा गजसिंह के राजकुमार राजसिंह के साथ मे सम्बन्ध दिनोदिन बिगडते गए और वह आपसी तनाव का रूप धारण करते गये। सन् 1780 ई म राजकुमार देशनोक चले गए और बिगडते हुए परिवेश को सह नही सकने के कारण वह अगले वर्ष सन् 1781 ई मे महाराजा विजयसिंह के पास जोधपुर चले गए। महाराजा गजसिंह ने जोधपुर के गृह युद्ध म महाराजा विजयसिंह का साथ दिया था। चूकि राजकुमार राजसिंह का विवाह पूगल हुआ था, इसलिए भाटियो की सहानुभूति उनके साथ होनी स्वाभाविक थी। इससे महाराजा गजसिंह अकारण पूगल और भाटियों से अप्रसन्न रहते थे।

महाराजा गजसिंह के समय बीकानेर की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। उनके पास साधनो और शक्ति का अभाव नही था और नेतृत्व सशक्त था। इसलिए पास पड़ोस के माप दडो के अनुसार वह एक स्थानीय शक्ति के रूप मे उभर रहा था। पड़ोसी राज्यो और उनकी प्रजा को अपने आप का शक्तिशाली साबित करने के लिए उनके लिए शक्ति का प्रदर्शन करना भी आवश्यक था। जयपुर जोधपुर और जैसलमेर के पड़ोसी राज्य इतने कमजोर नहीं थे कि बीकानेर उनके विरुद्ध सफलता से शक्ति का प्रदर्शन कर सके। इसलिए बीकानेर ने इस कार्य के लिए भटनेर, बीकमपुर और पूगल को चुना। पहले पूगल को अछूता छोड़कर यह भटनेर और बीकमपुर के हड़पने के प्रयास म लगा। बीकमपुर में सन् 1747 ई म इन्होंने

राव अमरसिंह के समय तक पूगल के कुल सोलह राव हुए थे, जिनमे से छः राव, रणकदेव (सन् 1414 ई), चाचगदेव (सन् 1448 ई), जैसा (सन् 1587 ई) आसकरण (सन् 1625 ई), सुदरसेन (सन् 2665 ई) और अमरसिंह (सन् 1783 ई), युद्धो मे मारे गए थे।

राव अमरसिंह की मृत्यु के पश्चात उनके दोनो पुत्र, राजकुमार अभयसिंह और भोपालसिंह, जैसलमेर की शरण मे चले गए। वहा उनके पूर्वजो की धरती ने उन्हे शरण प्रदान की, रावल मूलराज ने उन्हे स्नेह पूर्वक रखा और राजकुमारो जैसा सम्मान दिया। बीकानेर ने पूगल पर अधिकार अवश्य कर लिया, परन्तु वह उसकी आत्मा और स्वाभिमान पर अधिकार करने मे असफल रहा। राव अमरसिंह के उत्सर्ग से पूगल की आत्मा कुचली नही गई थी। इससे उसे बल मिला और प्रत्येक भाटी गर्वान्वित हुआ। महाराजा गजसिंह को पूगल लेकर खुशी अवश्य हुई होगी, साथ म अपने सम्बन्धी राव को मारने का और अपने पुत्र के सालो, राजकुमारो को राज्यविहीन करने का दुख भी उन्हे हुआ होगा। इन्ही राजकुमारो की बहन बीकानेर की भावी महारानी थी। महाराजा गजसिंह ने पूगल के राव को उन्ही के दीवान के बराबर तोल कर उचित कार्य नही किया।

सन् 1763 से 1783 ई के बीस वर्ष पूगल के लिए दुर्भाग्यपूर्ण रहे। बीकानेर के लिए सौभाग्यपूर्ण रहे, क्योकि इस अवधि म जहा पूगल की स्थिति मे गिरावट आई वही बीकानेर की सत्ता ऊची चढी। सन् 1763 ई मे पूगल के देरावर राज्य को दाउद पुत्रो ने छीन लिया था। जिस पूगल राज्य को बनाने म राव रणकदेव (सन् 1380-1414 ई) से अब तक चार सौ वर्ष लगे थे वह सन् 1783 ई मे एक बार पूर्णतया समाप्त हो गया। राव केल्हण के वशज पहली बार किसी धरती को अपना राज्य नही कह सकते थे। सब कुछ बीस वर्ष की अल्पावधि म समाप्त हो गया। मुगल साम्राज्य भी बादशाह औरगजेब की मृत्यु (सन् 1707 ई) के तुरन्त बाद मे बिखर गया था, वह फिर कभी नही सभला। एक राज्य को स्थापित करने के लिए कितनी वीरता बलिदान, साहस शौर्य, चतुराई के गुणो की आवश्यकता होती थी, वह किस प्रकार पलक झपकते ही नष्ट हो जाता था। पूगल ने रावल रामचन्द्र को देरावर का स्वतन्त्र राज्य इसलिए दिया था कि इससे पूगल को पश्चिम मे सहारा रहगा। लकिन जब सहारा देन वाला ही पहले समाप्त हो गया अब पूगल को कौन सहारा दे? रावल मूलराज स्वय अपनी समस्याओ से जूझ रहे थे, उनके द्वारा पूगल को सहायता देने का प्रश्न ही नही था। जोधपुर के महाराजा विजयसिंह पूगल के लिए बीकानर से लडाई मोल लन वाले नही थे। बहावलपुर को सहायता के लिए न्योता देना खतरे से खाली नही था। इस प्रकार पूगल के राज्य का एक भाग अब हिन्दुओ न ले लिया एक भाग मुसलमान पहले ही ले चुके थे। इसे यो समझें कि राव केलण के राज्य को मुसलमान और हिन्दुओ न बराबर बाट लिया, उनके वशज शरणार्थी बन गए।

हरगोविन्द व्यास न अपनी पुस्तक, 'जैसलमेर का इतिहास, के पृष्ठ सख्या 119 पर और लक्ष्मीचन्द न अपनी पुस्तक, 'जैसलमेर की ख्यात' के पृष्ठ सख्या 70 71 पर लिखा है कि, बीकानेर के साथ युद्ध म राव अमरसिंह मारे गए, उन्होने आत्मसमर्पण नही किया था। हरिदत्त न इस युद्ध का सन् 1783 ई दिया है, जबकि लक्ष्मीचन्द ने यह युद्ध सन् 1784

ई म होना बनाया है। युद्ध एक वर्ष पहले हुआ या बाद मे हुआ, इससे कोई अन्तर नही पड़ता। पूगल न अपनी स्वतन्त्रता और अस्तित्व किसी गैर के हाथ नही खोई, यह तो राव बीका की पूगल की भटियाणी रानी रगकवर के कोख से पैदा हुए अपनो के ही हाथो लूटी गई।

बीकानेर काउन्सिल के सदस्य सोहनलाल ने अपनी पुस्तक, 'बीकानेर इतिहास' मे लिखा है कि पूगल पीढियो तक बीकानेर को सताता रहा, आखिर महाराजा गजसिह ने इसे सन् 1773 ई मे अधिकार म लेकर शान्ति स्थापित की। अगर यह वर्ष सही है तो दरावर और पूगल का अभाग्य लगभग एक साथ आया। अगर बीकानेर की अनेक पीढिया पूगल द्वारा सताया जाना सह रही थी तो इसम पूगल का क्या दोष था, यह तो बीकानेर की स्वय की कमजोरी थी कि वह पूगल पर इसम पहले आक्रमण करने का साहस नही जुटा पा रहा था।

इससे यह स्पष्ट है कि पूगल सन् 1773 ई से 1784 ई के बीच मे बीकानेर के अधिकार मे आया। इसे सन् 1783 ई मानना उचित होगा क्योकि इसी वर्ष पूगल के राजकुमार जैसलमेर की शरण म गए थे। सोहनलाल के कथन स यह भ्रम दूर हो गया कि पूगल इससे पहले बीकानेर के अधीन था, वह स्वतन्त्र था। अगर बीकानेर पूगल द्वारा सताया जा रहा था तो उसकी शक्ति बीकानेर के अनुपात मे ज्यादा कम नही थी, अन्यथा वह पहले ही उसे ठिकाने लगाकर राहत पा लेता।

बीकानेर राज्य ने पूगल के 252 गाव खालसे किए इसम खीया भाटियो और बरसिहो के गाव शामिल थे। किसनावत भाटिया के 184 गाव भी खालसे किए गए थे। इस प्रकार बीकानेर न भाटियो के कुल 436 गाव खालसे किए। सन् 1665 ई मे जब राजा करणसिह ने पूगल पर पाच वर्ष के लिए अधिकार किया था तब पूगल के गावा का सख्या 561 थी। इन वर्षो मे बीकमपुर और बरसलपुर जैसलमेर म चले गए थे। इनके पास क्रमश 84,41, कुल 125 गाव थे। इस प्रकार पूगल के 561 गावो मे से यह 125 गाव जैसलमेर मे चले गए, शेष 436 गाव पूगल मे रह गए थे।

कुछ समय बाद म महाराजा गजसिह ने निम्नलिखित गावो की जागीरें केलण भाटियो को वापिस दे दीं और उनकी आय निर्धारित करके उनके द्वारा राज्य के कोष मे देय कर भी तय कर दिया। नीचे दी गई सूची मे इन गावा की आय और कर के आंकड़े सन् 1944 ई के हैं

क्र स.	गाव का नाम	भोगतों की सख्या	क्षेत्रफल बीघों मे	आय रु	कर रु
1	2	3	4	5	6
1	बालासर	2	60,000	1,000	426
2	बावनी	1	30,000	1,000	191
3	किसनापुरा	2	60,000	150	92
4	लूणसा	1	1,00,000	300	180
5	लाम्बूसर	1	40,000	400	180

1	2	3	4	5	6
6	अगणेऊ	2	75,000	80	65
7	गोविन्दसर	1	9,000	250	179
8	सजोड़ा	2	30,000	200	165
9	मेत गुढ़ा	2	8 274	125	बटाई
10	नेतोलाई भाटीयान	1	10,000	40	24
11	खेतोलाई साम्पलान	2	10,000	30	21
12	लाडखा	1	15,000	100	49
13	लामाणा भाटीयान	2	10,000	60	30
14	क्षम्मारण	2	25,000	111	111
15	मलकीसर (अखावत भाटी)	2	10,000	70	54
16	गोरीसर	2	20,000	200	152
17	मोटासर, अजीत माना	4	1,50,000	900	831
18	सादोलाई	1	40,000	900	435
		बीघा	7 02,274 रु	5,916 रु	3,210
19	रावत जयमलसर–दस गांव, 1 जयमलसर 2 बोरलो का खेत 3 नोखा का बास 4 गोपलान 5 भोजासर बास 6 भोजासर बास चोरडिया 7 डालूसर 8 जालपसर 9 तोलियासर 10 सरेह भाटीयान।		4,00,000	5,000	1,414
20	बीठनोक, नाथूसर, बधा सरूपसर	ठाकुर एक	1,20,000	3,000	1,464
21	1 सीदामर सात गाव, 2 हदा 3 मियाकोर 4 खिखनिया 5 सालेरी ढाणी 6 लमाणा का बास 7 खाल चुसार का बास	ठाकुर एक	1,44,000	2,260	1,118
22	1 जागलू, तीन गाव, 2 खारी पट्टा 3 तेलियो की ढाणी	ठाकुर दो	31,000	2,600	128
23	1 खारबारा, सात गाव, 2 भाणसर 3 शेरपुरा 4 मगरा श्योपुरा 5 सरेह हमीरान 6 देवासर 7 जगमालवाली राडेवाला	ठाकुर एक	1,54,000	2,500	1,050

1	2	3	4	5	6
24	1 राणेर, चार गाव, 2 लाखनसर 3 गेगडा 4 भोजावास	ठाकुर एक	2,00,000	3 200	1,176
25	मन्डाल भाटियान	1	15,000	40	22
26	पायूसर	2	6,000	40	35
27	पृथ्वीराज का बेरा	1	19,000	35	—
28	राणासर	1	55,000	100	82
29	रणधीसर	1	15,000	200	105
30	मोरखाणा आयूणा	2	15,000	600	135
31	सियाणा बडा वास	1	22,000	160	64
32	सियाणा छोटा वास	1	6,000	60	52

इस प्रकार केलण भाटियों के उपरोक्त तरेसठ गावो की जागीरें उन्हें वापिस की जिन्होने बीकानेर राज्य को वार्षिक कर देना स्वीकार किया था। भानीपुरा, रुगनाथपुरा (चीला) और मडला के ठाकुरो ने किसी प्रकार का कर देने से इनकार कर दिया, इसलिए इन्ह इनकी जागीरें नही लौटाई गई।

देरावर के रावळ रायसिह अपना राज्य त्याग कर सन् 1763 ई मे बीकानेर आ गए थे, यह विशिष्ट व्यक्ति थे, इन्हे महाराजा बीकानेर ने मुख्यत कोनायत के मगरा क्षेत्र मे दस गाव जागीर मे दिए। यह गाव पहले केलण भाटियो की उप शाखाए खिया करणोतों और धनराजोतो के थे। यह गाव थे, 1 सुरजडा 2 नाथूसर 3 बाक्लसर 4 मेहाकोर 5 खजवाना 6 चिमाणा 7 नाभासर 8 हाडला 9. जैंयमला 10 गडियाला।

इस प्रकार पूगल के 436 गावो म से कुल 63 गांवो ने बीकानेर राज्य को कर देना स्वीकार किया, 10 गाव देरावर के रामचन्द्रोत रावत भाटिया को बख्शे और शेष 363 गाव बीकानेर ने अपने सीधे अधिकार मे रखे। उपरोक्त आकडो से पता चलता है कि पूगल के भाटियो की जागीरो का क्षेत्रफल जहा हजारो बीघो मे था, वहा अधिकाश की आय सैकडो रुपयो में ही थी। इसका कारण भूमि का रेतीला और कम उपजाऊ होना, वर्षा का अभाव और जनसख्या का अत्यन्त कम होना था। लोगो की जीविका का साधन मुख्यत पशु पालन था।

बीकानेर ने पूगल मे अपना थाना सन् 1783 ई मे स्थापित किया था, वह वहा सन् 1787 ई, महाराजा गजसिह की मृत्यु तक रहा। इस चार वर्ष के अर्से में बीकानेर के शासको के साथ जनता ने सहयोग नही किया और उनके प्रति सन् 1665 1670 ई की भांति जन आक्रोश और असन्तोष रहा।

बीकानेर के मनसूबे जानकर राव अमरसिह भांप गए थे कि उनका अन्त ज्यादा दूर नही था। उन्होने पुरोहितो, पुजारियों, सेवगो और ढाकोतो को दुधारु गाए दान करदी और खानो और प्रधानो को घोडे बख्श दिये। पूगल के ऊंटो और सांढो का टाला, जिसमें हजारो पशु थे, उन्होने अमरपुर के राइको के साथ वीकमपुर भेज दिया। अपनी पातावत रानी को

उनके पीहर पलिन्डा भेज दिया और राजकुमार अमरसिंह की युवरानी को उनके पीहर रावतसर भेज दिया। इस प्रकार वह अपने परिवार का प्रबन्ध करके बीकानेर के आक्रमण का धैर्य से इन्तजार करने लगे। वह मर गए किन्तु झुके नही।

राव अमरसिंह ने उनके पूर्वजो द्वारा कठिन परिश्रम और बलिदान से बनाए गए राज्य को अपनी आखो के सामने बिखरते देखा। यह बिखराव की क्रिया सन् 1650 ई से ही आरम्भ हो गई थी, इसके लिए भाटियो को सारा दोष देना, उनके साथ अन्याय होगा, इसके लिए ज्यादा दोषी पडोसी मुलतान, लगा और बलोच थे। लेकिन सन् 1749 ई. मे पूगल राज्य से बीकमपुर और बरसलपुर के अलग होने के लिए भाटी दोषी थे, केलण भाटी और जैसलमेर के रावल। अपनी स्थापना के सिर्फ 113 वर्ष बाद, सन् 1763 ई मे देरावर राज्य बिना युद्ध के ढह गया। वहा किसी ने किसी को मारा नही, कोई भाटी मारा नही गया। दाउद पुत्रो ने अहिंसा की पालना करते हुए एक स्वतन्त्र राज्य छीन लिया और रावल रायसिंह ने भी पूरी अहिंसा को निभाते हुए निर्विरोध राज्य उन्हें सौंप दिया। इस अन्त को कमजोर जैसलमेर और पूगल दोनो केवल मूक दर्शको की तरह निहारते रहे। इससे पहले जब सन् 1761 ई मे दाउद पुत्रो ने अनूपगढ और मोजगढ पर अधिकार किया था तब भाटियो ने उनका बडा विरोध किया था और उन्हे वहा से मार भगाया था। यह क्षेत्र भी भाटी सन् 1783 ई मे पूगल के साथ हार गये।

भटनेर के भाटियो ने कभी बीकानेर से हार नही मानी थी। सन् 1744 ई मे उन्होने महाजन के ठाकुर भीमसिंह से भटनेर छीन लिया था। सन् 1760 ई के बीकानेर के भटनेर लेने के प्रयास को विफल किया और इसी प्रकार से उन्होने सन् 1773 ई के बीकानेर के कर वसूली के अभियान का विफल किया। इस प्रकार इन तीनो प्रयासो की विफलता के बाद बीकानेर सन् 1805 ई मे भटनेर लेन मे सफल हो गया।

सन् 1749 ई (बीकमपुर, बरसलपुर) सन् 1763 ई (देरावर), सन् 1783 ई (पूगल), सन् 1805 ई. (भटनेर), भाटियों के पतन के वर्ष थे। केवल 50 वर्ष के थोडे मे अन्तराल मे भाटियो के 32,000 वर्ग मील क्षेत्र के राज्य का नामो-निशान मिट गया। परन्तु यह घुटन ज्यादा समय नही रही। हमारे पूर्वज भी इस प्रकार से राज्य खोते आए थे, अन्त मे विजय भाटियो की ही होती आई थी। भाटी कभी निराश नही होते। उन्हे मोडा और मरोडा जा सकता था, उन्हें तोडने वाली शक्ति अभी उत्पन्न नही हुई थी।

अध्याय–चौवीस

राव उज्जीनसिंह

सन् 1790 1793 ई.

राव अमरसिंह के बलिदान के बाद मे बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने पूगल राज्य मे अपने थाने स्थापित कर दिये। बीकानेर द्वारा पूगल के विरुद्ध अकारण आक्रमण, राव का मारा जाना, राजकुमारो का जैसलमेर के लिए पलायन, ऐसी हृदयविदारक घटनाए थी, जिनके कारण भाटियो के प्रति आम प्रजा और जनता की सहानुभूति जाग्रत हुई, बीकानेर के जघन्य अपराध और कुकृत्य की सर्वत्र भर्त्सना हुई। सभी खापो और शाखाओ के भाटियो ने बीकानेर राज्य की सत्ता का विरोध किया और अन्य लोगो ने पूगल के पक्ष का शान्तिपूर्ण ढग से समर्थन किया। चारणा ने अपनी कविताओ और दोहो म बीकानेर पर कटाक्ष कसे और उनके कायरतापूर्ण कार्य की धज्जिया उडाई। मोपो ने और अन्य जनता के समक्ष गाने वाले लोगो ने बीकानेर को कोसा। उन्होने गाव गाव मे घूम कर दिवन्गत राव के शौर्य और बलिदान की गाथा जन-जन के कानो तक पहुचाई। उनकी करुणा भरी कथाओ और वीर रस की ओजस्वी कविताओं ने राव के प्रति जनता की श्रद्धा और स्वामी-भक्ति की भावनाओ को जगाया। इसम आत्मिक भावना का ज्यादा उजागर इस कारण से भी हुआ कि युवरानी सूरज कवर बीकानेर के महलो मे असहाय बैठी थी, उनके श्वसुर ने उनके पिता की हत्या कर दी और उनके भाइयो को विवश हो कर जैसलमेर के राज दरबार की शरण लेनी पडी।

महाराजा गजसिंह ईश्वरीय प्रकोप से किसी असाध्य रोग स ग्रस्त हो गए। उन्हे मृत्यु निकट दिखने लगी। इसलिए उन्होने अपने राजकुमार राजसिंह को बुलाकर उन्हे क्षमा कर दिया और अपने पुत्र से स्नेहपूर्ण समझौता करके, राज्य का समस्त प्रशासन और अधिकार सार्वजनिक रूप से उन्ह सौंप दिया। इस प्रकार पिता पुत्र के तनावपूर्ण सम्बन्धो पर पटाक्षेप हुआ। उन्होंने भटनेर और पूगल के प्रति किए गए अन्यायो के लिए पश्चाताप भी किया और पूगल के जवाई को अपने जीवनकाल मे राज्य की बागडोर सम्भला कर अन्याय की प्रतिहिंसा को कम करने के प्रयास किए। ऐसे अन्यायी, क्रोधी और दूसरो के राज्यो को हडपने वाले शासक की असाध्य रोग के कारण दर्दनाक मृत्यु दिनांक 25 मार्च, सन् 1787 ई. को हो गई। यह राज्योचित मृत्यु नही थी। पूगल के राव चाचगदेव भी एक असाध्य रोग से ग्रस्त हो गए थे, परन्तु उन्होने मृत्यु को न्योता देकर बुलाया, काला लोदी से युद्ध किया और योद्धा की मौत मरे। जब राजकुमार राजसिंह बीकानेर के महाराजा बने तब वह चाहते थे कि पूगल के उत्तराधिकारियो को पूगल और उसके सन् 1783 ई के राज्य को लौटाकर अपने पिता द्वारा किये गए अन्यायो और पापों का प्रायश्चित करें। परन्तु

पिता के पापो का फल पुत्र को भोगना पड़ा। महाराजा राजसिंह की मृत्यु, एक माह बाद मे, 25 अप्रेल, सन् 1787 ई को हो गई। उनके अवयस्क पुत्र, महाराजा प्रतापसिंह की मृत्यु भी पाच माह बाद मे, रहस्यमय स्थिति मे हो गई।

महाराजा प्रतापसिंह के पश्चात् उनके चाचा, महाराजा राजसिंह के छोटे भाई सूरतसिंह 21 अक्टूबर, सन् 1787 ई को बीकानेर की राजगद्दी पर बैठे। इस प्रकार सात माह की अल्पावधि मे बीकानेर की राजगद्दी पर चार राजा बदल गए। यह भाग्य की विडम्बना थी या गजसिंह के पापो का फल जिसे उनके बेटे पोते अपने प्राणो का उत्सर्ग करके चुका रहे थे। बीकानेर को राव अमरसिंह की मौत बहुत महगी पड़ी।

जैसलमेर के रावल मूलराज की शक्ति और मनोबल इतना कमजोर था कि वह राजकुमार अभयसिंह और भोपालसिंह को बल प्रयोग करके पूगल वापिस नही दिला सकते थे। उन्होने कभी ऐसा सोचा भी नही और न ही कभी ऐसा प्रयास किया। राजकुमार भी अपने भानजे की बीमारी का लाभ नही उठाना चाहते थे और न ही वह ऐसा कोई कार्य करना चाहते थे जिससे उनकी बहन विधवा महारानी, किसी प्रकार की दुविधा मे पड़े। महाराजा गजसिंह की मृत्यु के उपरान्त दोनो भाई जैसलमेर से उनकी मातम पुर्सी करने के लिए बीकानेर आए। इसके बाद मे वह पूगल के गावो म ही रहने लगे।

बीकानेर के नए महाराजा के लिए उनके भाई बन्द चूरू के बणीरोत राजपुरा के भाटी नोहर के भाटी और जोइया, और जोधपुर के महाराजा बिजयसिंह बड़े सिरदर्द बने हुए थे। जहा बणीरोत, जोइया और भाटी बीकानेर राज्य से स्वतन्त्र होना चाहते थे, वही उन्हे जोधपुर को पेशकश देकर उनसे झुक कर समझौता करने के लिए बाध्य होना पड़ा। इसमे महाराजा सूरतसिंह का कोई दोष नही था, इस सबके सूत्रधार महाराजा गजसिंह थे। उनके द्वारा जोधपुर के गृह युद्ध मे भाग लेने का या हस्तक्षेप करने का परिणाम महाराजा सूरतसिंह भुगत रहे थे। महाराजा सूरतसिंह नही चाहते थे कि इन सब बाधाओ के साथ, सन् 1783 ई से पूगल म सुलगता हुआ विद्रोह भी जोर पकडले। परन्तु उनका अहकार ऐसा था कि वह राजकुमार अभयसिंह को पूगल की राजगद्दी पर बैठाने की प्रकिया को सहन करने का साहस नही बटोर सकते थे। उनका अहकार भूखा था, तृप्त नही हुआ था। इसलिए उन्होने पूगल की जनता को शान्त करने के लिए दिवन्गत राव अमरसिंह के छोटे भाई, सादोलाई के ठाकुर जुझारसिंह के पुत्र उज्जीनसिंह को, सन् 1790 ई मे, पूगल का राव बना दिया। यह जब किया गया जब राजकुमार अभयसिंह और भोपालसिंह जीवित थे। वही पूगल के राज्य के हकदार थे।

उज्जीनसिंह को पूगल क राव के पद पर और उसकी जनता पर, बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह द्वारा तीन वर्षों के लिए थोपा गया था। उन्हे खानो, प्रधानो, केलण भाटियो ने पूगल के गजनी के तख्त पर नही बैठने दिया और न ही उनका परम्परागत तरीके से विधिवत राजतिलक होने दिया। केलण भाटियो और अन्यो ने उन्ह नजर पेश करने से इनकार कर दिया। भोमतो ने उन्हे नजरें भेंट नही की। वह दशहरा के उत्सव के समारोह म उपस्थित नही हुए और उन्होने उन्हें इकेन्द्रा लेने के लिए उनके गावो मे आने से रोक दिया। वह बीकानेर के उद्देश्यपूर्ति के लिए नाममात्र के राव थे, पूगल की जनता ने उन्हे

मान्यता नही दी। यह सारा विरोध इसलिए किया गया क्योंकि न्यायोचित उत्तराधिकारी, राव अमरसिंह के राजकुमार, वही पूगल के गावो मे रह रहे थे।

उज्जीनसिंह और उनके पिता ठाकुर जुझारसिंह का नाम पेसणा दशहरे के उत्सव मे नहीं लेता था और शुभराज मे उनका नाम छोड दिया जाता था। ऐसे ही अन्य उत्सवो और शुभकार्यों में इनका नाम नही लिया जाता था।

उज्जीनसिंह का राव के पद पर स्थापित करने मे पूगल की जनता बीकानेर के प्रति और ज्यादा भडक उठी। उन्हें उज्जीनसिंह को राव बनाने मे बीकानेर का कोई स्वार्थ सिद्धी का षड्यन्त्र नजर आने लगा। वैसे उज्जीनसिंह स्वय भले व्यक्ति थे, वह ईश्वर से डरने वाले और पूगल के प्रति निष्ठावान थे। वह पूगल के राव बनाए जाने से राजी नहीं थे, उन्हे इस पद पर घुटन महसूस हो रही थी। उन्हे बीकानेर ने राव का पद ग्रहण करने के लिए वाध्य किया था। वह अपनी योग्यता के कारण राव नही बनाए गए थे, यह केवल महाराजा गजसिंह के अन्याय और अपराध को ढकने के लिए किया गया छल था। वह भी चाहते थे कि उनके चचेरे भाई, राजकुमार अभयसिंह राव बने। उन्होने महाराजा सूरतसिंह से स्वय निवेदन किया कि उनमे किसी प्रकार का अहकार नही था और न ही उनकी कोई प्रतिष्ठा बीच मे अड रही थी, इसलिए वह राजकुमार अभयसिंह को पूगल का राव बना दें। उन्होने उन्हे बताया कि पूगल की जनता मे आक्रोश था, विद्रोह की भावना पनप रही थी और कभी बगावत हो गई तो वह उन्हे दोष नही दें। इस बिगडी हुई स्थिति का लाभ केलण भाटियो के सहयोग से बहावलपुर भी उठा सकता था। इन सब समझदारी की बातों से महाराजा सूरतसिंह का राव उज्जीनसिंह की बात माननी पडी। इसमे महारानी सूरज कवर का सहयोग भी था।

राव दलकरण

राव अमरसिंह	जुझारसिंह
	उज्जीनसिंह
	मालमसिंह
	मायसिंह
	मोतीसिंह
	प्रतापसिंह
	जवाहरसिंह
	गणपतसिंह
	हरिसिंह
	विजयसिंह

सन् 1793 ई मे उज्जीनसिंह ने स्वेच्छा से अपने भाई (चचेरे) के प्रति स्नेहभाव रखते हुए पूगल के राव का पद त्याग दिया। उनके स्थान पर सन् 1793 ई मे राजकुमार अभयसिंह को पूगल का राव घोषित किया गया। इन्हें केलण भाटियों, सानों और प्रधानों ने

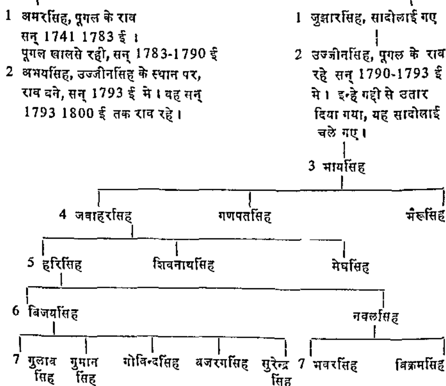
पूगल के गजनी के तख्त पर बैठाया, परम्परागत तरीके से विधिवत राजतिलक किया और नजरें भेंट की। इन्हें पिछले दस वर्षों के इकन्ट्ठे की जमा रकम लेने के लिए भोमतों ने अपने गावो मे आमन्त्रित किया। इस समारोह को कई दिनो तक गाजे बाजे से मनाया गया। सब गावों मे राव अभयसिंह की आन फेरी गई।

इस प्रकार, सन् 1783 ई से 1790 ई, सात वर्ष तक पूगल बीकानेर के अधीन रहा। सन् 1790 से 1793 ई तक, तीन साल उज्जीनसिंह राव के पद पर रहे। सन् 1793 ई मे राजकुमार अभयसिंह पूगल के राव बने।

सादोलाई गाव की वशावली :

सादोलाई गाव की भूमि 40,000 बीघा थी, इसकी वार्षिक आय रु 900/- और रकम रेख रुपये 435/- प्रति वर्ष थी।

सादोलाई गाव के भाटियो की वशावली
राव दलकरण, सन् 1710 1741 ई



अध्याय–पच्चीस

राव अभयसिंह
सन् 1793-1800 ई.

सन् 1783 ई. मे राव अमरसिंह की मृत्यु के पश्चात् पूगल का प्रशासन बीकानेर द्वारा सन् 1790 ई. तक अपने थानो के द्वारा चलाया गया। इस सात साल की अवधि मे पूगल की प्रजा और केलण भाटी बीकानेर के प्रबल विरोधी हो गए। बीकानेर राज्य के आन्तरिक और पडोस के बिगडते हुए वातावरण के कारण बीकानेर ने पूगल के दिवंगत राव अमरसिंह के भाई जुझारसिंह के पुत्र उज्जीनसिंह को सन् 1790 ई. मे पूगल का राव बना दिया था। इससे जनता और केलणो की भावना तुष्ट होने के स्थान पर और ज्यादा भडक उठी। आखिर राव उज्जीनसिंह के आग्रह पर बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह को राजकुमार अभयसिंह को पूगल का राव बनाने के लिए सहमत होना पड़ा। सन् 1793 ई. मे राव उज्जीनसिंह ने स्वेच्छा से पूगल के राव का पद त्यागा और स्नेहपूर्ण अपने भाई (चचेरे) अभयसिंह को पूगल का राव बनाया। राव अभयसिंह ने सन् 1800 ई तक, सात वर्ष शासन किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे—

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1. महारावल मूलराज, सन् 1762-1820 ई.	1. महाराजा गजसिंह, सन् 1745-1787 ई. 2. महाराजा राजसिंह, प्रतापसिंह, सन् 1787 ई. 3. महाराजा सूरतसिंह, सन् 1787-1828 ई.	1. महाराजा विजयसिंह सन् 1753-1793 ई. 2. महाराजा भीमसिंह, सन् 1793-1803 ई	1. बादशाह जलालुद्दीन, शाह आलम सन् 1759-1805 ई. 2 गवर्नर जनरल वैलेजली, सन् 1798-1805 ई.

राव अभयसिंह 43 वर्ष की आयु मे राव बने थे। यह सन् 1783 ई के युद्ध मे महाराजा गजसिंह की सेना के विरुद्ध लडे, इनके छोटे भाई भोपालसिंह भी युद्ध मे इनके साथ थे। राव अमरसिंह की मृत्यु के पश्चात् यह दोनो भाई बीकानेर की सेना के हाथ नही आए, वह जैसलमेर चले गए। सन् 1787 ई. तक यह जैसलमेर मे रहे, इसी वर्ष महाराजा गजसिंह के देहान्त पर मातम-पुर्सी करने बीकानेर आए। थोडे दिनो पश्चात् इनके बहनोई महाराजा राजसिंह की मृत्यु हो गई और पाच महीने बाद मे इनके भानजे, महाराजा प्रतापसिंह की भी मृत्यु हो गई। कुछ समय यह अपनी बहन के पास बीकानेर में रहे। यह

वापिस लौटकर जैसलमेर नही गए, इन्हे रावल मूलराज से किसी प्रकार की सैनिक सहायता मिलने की आशा नही थी। वह पूगल राज्य के गावो मे ही अपने भाटी भाइयो के साथ रहने लगे। अमरसिंह को राव बनाने में उनकी बहन, महारानी सूरज कवर का बडा योगदान रहा। मेरे विचार मे महाराजा राजसिंह के छोटे भाई सूरतसिंह को उन्होने इसी शर्त पर गोद लिया था कि वह उनके भाइयो को पूगल लौटाएगे। महाराजा सूरतसिंह ने एक बार उज्जीनसिंह को राव बनाकर अपने वचन को तोडा, फिर उन्हे अपने वचन को निभाने के लिए बाध्य करके अमरसिंह को पूगल का राव बनाया गया।

सन् 1783 ई मे राव अमरसिंह की मृत्यु के पश्चात् पूगल के गावो के भोगता ईमानदारी से जनता से राज्य का कर इकट्ठा वसूल करते रहे और प्रत्येक वर्ष की रकम मोहतो के पास मे जमा करवाते रहे। यह रकम बीकानेर राज्य के अधिकारियो या राव उज्जीनसिंह को नही दी गई। दस वर्षों (सन् 1783-93 ई) की सचित रकम भोगतो ने मोहतो से लेकर राव अमरसिंह को सन् 1793 ई के दशहरे के त्योहार पर भेंट की। यह काफी बडी धन राशि थी। अगर अमरसिंह सन् 1783 ई मे राव बनते तो भी प्रत्येक वर्ष यह रकम उन्हे ही मिलती, अब दस वर्षों की रकम एक साथ मिल गई।

पिछले दस वर्षों म पूगल के गढ की देखरेख नही होने स और बीकानेर द्वारा मरम्मत नही कराये जाने से, यह बडी जीर्ण शीर्ण अवस्था मे था। इकट्ठी की रकम मिलते ही राव ने पहले पूगल के गढ़ की उचित मरम्मत कराई और इसे अपने रहने योग्य बनाया। चूकि राव अमरसिंह युद्ध से पहले अपनी गायें, घोडे, साज सामान प्रजा मे बांट गए थे, इसलिए राव अमरसिंह ने नए सिरे से अच्छी नसल की दुधारू राठी गायें खरीदी, माताणी और मुलतान से अच्छे घोडे खरीदे। वास्तव मे राव अमरसिंह को शून्य साधनो से आरम्भ करना पडा। यह तो अच्छा हुआ कि दस साल की सचित रकम उन्हे एक साथ मिल गई जिससे वापिस राज्योचित व्यवस्था जमाने मे उन्हे सहायता मिली।

उन्होने अपनी माता रानी पातावतजी को पलिन्दा से बुला भेजा और इनकी रानी रावलोतजी भी रावतसर से पूगल आ गई।

राव अमरसिंह ने पहले पहल, मानीपुरा, रगनाथपुरा, मडला और छीला के भाटियो को उनकी जागीरें बरशी। इन भाटियो ने महाराजा गजसिंह को कर चुकाने के बदले मे उनसे इन गावो की जागीरें लेने से इनकार कर दिया था। राव ने करणीसर गाव के पूर्व मे एक नया गाव बसाया, यहा कुआ खुदवाया और इसका नाम अपने नाम से 'अमरासर' रखा। इन्होने मानीपुर के भाटियो को यह गांव भी दे दिया। इन्होने अमरपुरे के चारणो को उनका गाँव अमरपुरा वापिस दिया।

इनके छोटे भाई कुमार भोपालसिंह दस साल तक दुख सुख मे इनके साथ रहे थे। इन्होने शासन सम्भालने के तुरन्त बाद मे सन् 1794 ई मे भोपालसिंह को रोजडी की जागीर दी।

महाराजा सूरतसिंह ने पूगल को एक अधीनस्थ सहयोगी राज्य के रूप मे मान्यता दी। केलण खीया पट्टी के खीदासर, जयमलसर, बीठनोक, जागलू आदि गाव इन्होने पूगल को नही लौटाए, अपने राज्य के अधीन रखे।

जिले की अनूपगढ तहसील मे है। रोजडी गाव की जागीर का क्षेत्रफल 52,000 बीघा था, इसकी वार्षिक आय रु. 2,000/- थी। यह बीकानेर राज्य को केवल दस्तूर के रूप मे रु 100/- वार्षिक कर देते थे।

रोजडी के ठाकुरो की वशतालिका
राव अमरसिह, पूगल

क्रम सख्या	पूगल	रोजडी
1	राव अमरसिह	ठाकुर भोपालसिह
2	राव रामसिह	ठाकुर भैरोसिह
3	राव सादूलसिह	ठाकुर अन्नेसिह
4	राव रणजीतसिह	ठाकुर रायसिह
5	राव करणीसिह	ठाकुर गुमानसिह, सत्तासर से गोद आए।
6	राव रगनाथसिह	ठाकुर धन्नेसिह
7	राव मेहताबसिह	ठाकुर अखैसिह
8	राव जीवराजसिह	कुवर गजेसिह
9	राव देवीसिह	
10	राव सगतसिह	

रोजडी के ठाकुर रायसिह का विवाह रूपावत राठौडो के यहा हुआ था। इनकी पुत्री का विवाह कुरजडी गाव के राजवीयो के यहा हुआ, इन पुगलियानीजी के एक पुत्र राजवी मोहकमसिह थ। यह एक ईमानदार, खरे और योग्य प्रशासक थे। इन्हे राजस्थान प्रशासनिक सेवा मे चुना गया था। इनका हृदयगति रुकने से अनूपगढ मे देहान्त हो गया था।

सत्तासर के ठाकुर अनोपसिह के पुत्र सत्तासर के ठाकुर हणुतसिह के छोटे भाई प्रतापसिह को ककराला गाव जागीर मे दिया गया था। ठाकुर प्रतापसिह के छोटे पुत्र गुमानसिह को रोजडी के ठाकुर रायसिह ने गोद लिया और इनके बडे पुत्र मूलसिह को सत्तासर के ठाकुर हणुतसिह ने गोद लिया।

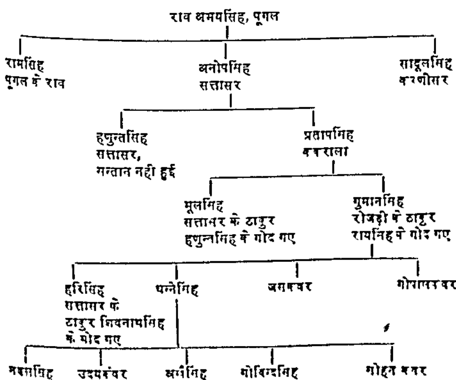
ठाकुर गुमानसिह की पुत्री और ठाकुर धन्नेसिह की बहन जसकवर (जन्म, सन् 1872 ई) का विवाह सन् 1890 ई मे ईडर नरेश दौलतसिह से हुआ था। दौलतसिह ईडर नरेश सर प्रताप के गोद गए थे। जसकवर के पुत्र राजकुमार हिम्मतसिह का विवाह सडेला हुआ और इनके छोटे भाई मानसिह का विवाह करौली हुआ। बडे पुत्र दलजीतसिह का विवाह जामनगर के मोहनसिह की पुत्री से और इनके छोटे पुत्र अमरसिह का विवाह ओसिया के कल्याणसिह भाटी की पुत्री से हुआ।

जसकवर की छोटी बहन गोपाल कवर (जन्म सन् 1874 ई) का विवाह जोधपुर के महाराजा रतनसिह से हुआ, इनके अनूपसिह, मोहनसिह और भोपालसिह तीन पुत्र थे।

ठाकुर गुमानसिह का विवाह मलवाणी (नोहर) की बीकीजी से हुआ था। इनके चार पुत्र हुए थ। गुमानसिह का देहान्त 1906 ई मे हुआ। ठाकुर गुमानसिह के पुत्र

धन्नेसिंह ने तीन विवाह किए थे। इनका पहला विवाह शिमला गाँव की सुगन कंवर से हुआ, इनसे एक पुत्र नवलसिंह और एक पुत्री उदय कंवर थी। इनका देहान्त सन् 1988 ई मे हुआ। इनका दूसरा विवाह ईडर की राठौडजी के साथ हुआ, इनके अर्जुनसिंह और गोविन्द सिंह, दो पुत्र हुए। इनका तीसरा विवाह गुजरात मे राठोडो के यहां हुआ, इनके सोहन कवर नाम की एक पुत्री थी।

ठाकुर अर्जुनसिंह का विवाह पाचोडी गाव मे हुआ, यह राजस्थान के आबकारी विभाग से सेवा निवृत्त हुए थे। आजकल यह ईडर नरेश के पास रह रहे हैं। ठाकुर गोविन्दसिंह गुजरात राज्य की सेवा मे थे। यह सेवा निवृत्त होने के बाद मे हिम्मतनगर मे निवास कर रहे हैं। ठाकुर नवलसिंह बीकानेर मे अपनी कोठी मे निवास कर रहे हैं। इनका विवाह बीकानेर राज्य के दीवान, रोडा (बगसेऊ) के ठाकुर सादूलसिंह की पुत्री से हुआ। ठाकुर नवलसिंह की बहन उदय कवर का विवाह घनेरिया के ठाकुर उदयसिंह से हुआ था। उदय कंवर का देहान्त सन् 1983 ई मे और ठाकुर उदयसिंह का देहान्त सन् 1988 ई मे हो गया।



अध्याय–छब्बीस

राव रामसिंह
सन् 1800-1830 ई

राव अमरसिंह के सन् 1800 ई मे देहान्त होने के पश्चात् इनके ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार रामसिंह पूगल के राव बने। इन्होंने सन् 1800 से 1830 ई तक, तीस वर्ष शासन किया। इनके समकालीन शासक निम्न थे

जैसलमेर	बीकानेर	जोधपुर	दिल्ली
1 महारावल मूलराज, सन् 1762-1820 ई	1 महाराजा सूरतसिंह, सन् 1787-1828 ई	1 महाराजा भीमसिंह सन् 1793-1803 ई	1 बादशाह शाह आलम, सन् 1759-1805 ई
2 महारावल गजसिंह, सन् 1820 1845 ई	2 महाराजा रतनसिंह, सन् 1828-1851 ई	2 महाराजा मानसिंह सन् 1803 1843 ई	2 मोहम्मद अकबर, सन् 1806-1837 ई

उस समय विलायत मे महारानी विक्टोरिया का शासन था। भारत मे, वैलेजली (सन् 1789 1805 ई), मिन्टो (सन् 1805 1813 ई), हैस्टिंगस (सन् 1813-1818 ई), जे अडम (सन् 1818 1823 ई), अमर्हस्ट (1823-1828 ई), विलियम बैंटिक (सन 1828 1835 ई) गवर्नर जनरल और वॉयसराय रहे।

राव रामसिंह का जन्म सन् 1780 ई में हुआ था। इनके पितामह राव अमरसिंह की सन् 1783 ई में मृत्यु के समय यह केवल तीन वर्ष के थे। जब इनके पिता अमरसिंह सन् 1793 ई मे राव बने उस समय इनकी आयु तेरह साल की थी। यह बीस वर्ष की आयु में राव बने। इन्होंने अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्ष जैसलमेर, बीकानेर, पूगल और रावतसर मे बिताए। इनमे से अधिकाश वर्ष इनके ननिहाल रावतसर मे बीते। इन्होंने बाल्यकाल की कठिनाइयो से जीवन मे बहुत कुछ सीखा था। इनसे इनमे जहा धैर्य और साहस के गुण आए, साथ ही इन्होंने अभाव मे जीना भी सीखा। इन्होंने अपनी प्रजा का दु ख बहुत पास से देखा था। इससे इन्हे स्वतन्त्रता के गुणो की पहचान हुई, देश प्रेम की प्रेरणा मिली और अपने भाई भतीजो के साथ आत्मीयता, स्नेह और अपनायत से रहने का अनुभव हुआ। इन्हे यह भी ज्ञान हो गया था कि अपने व्यक्तित्व को बनाए रखने के लिए निष्पक्ष भाव रखना और बलिदान करना कितना आवश्यक था। इन्होंने अपने जीवनकाल मे प्रजा और पशुओ के पानी पीने के लिए दो कुए बनवाये, इनके पास मे एक नया गाव बसाया, जिसका नाम अपने नाम से 'रामसर' रखा। यह गाव इन्होंने अपने दो प्रधानों की जागीर मे बख्शा, आधा गाव देवडा मुसलमानो को और आधा गाव पाहू भाटी राजपूतो को दिया।

सन् 1801 ई मे बहावलपुर मे नवाब पीर जानी बहावल खा राज्य करते थे। उस समय एक दाउद पुत्र खुदाबख्श को मोजगढ की जागीर मिली हुई थी। क्योकि खुदा बख्श की गतिविधिया उचित नही थी इसलिए नवाब ने मोजगढ पर अधिकार करके उसे वहा से निकाल दिया। वह नवाब के विरुद्ध सहायता प्राप्त करने के लिए बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के पास आया। उसने सहायता के बदले मे न केवल बीकानेर की सेना का खर्चा देना स्वीकार किया बल्कि बीकानेर राज्य को सिन्ध प्रदेश का कुछ उपजाऊ क्षेत्र दिलवाने का प्रलोभन भी दिया। इस अभिप्राय से महाराजा सूरतसिंह ने एक शक्तिशाली सेना सगठित की और इसे खुदाबख्श के साथ उसकी सहायता करने भेजी। इस सेना के साथ भाटियो की सेना भी युवा राव रामसिंह के नेतृत्व मे गई। इसमें सत्तासर, राणेर, जागलू और बीठनोक के भाटी शामिल थे। भाटी सेना का योगदान 120 घुडसवार सैनिक और एक हजार पैदल सैनिका का था। प्रमुख केलण सरदार हठीसिंह, अनोपसिंह, मानोसिंह, भैरूसिंह आदि सेना के साथ थे। बीकानेर की सेना का नेतृत्व मोहता मगनी राम कर रहे थे। यह सेना मोजगढ, बरलर, फूलडा, मीरगढ और मरोठ पर अधिकार करती हुई आगे बढी। इसके साथ म भाटियो की सेना के अलावा खुदाबख्श की स्थानीय सेना भी थी। इस अभियान के मध्य म खुदाबख्श बीकानेर की नीयत से भयभीत हो गया, उसे भविष्य कुछ ठीक नही लगा, बीकानेर की सम्भावित विजय से उसे बडे भारी अहित का बोध होने लगा। इसलिए वह बहावलपुर के नवाब की सना के साथ मे मिल गया। अब भयभीत होने की बारी बीकानेर की सेना की थी। उन्हे लगा कि नवाब और खुदाबख्श की सयुक्त सेनाए उन्हे विदेश म परास्त करेंगी। वहा से बहावलपुर पास होने से उनकी सेना के लिए रसद कुमुक, साज-सामान शीघ्रता से और सरलता से पहुचेगा। बीकानेर बहुत दूर होने से उन्हे रसद, कुमुक और सचार मे अत्यधिक कठिनाई आएगी। वहा से पीछे हटने मे उनकी कायरता होगी, उनकी सर्वत्र निन्दा की जायेगी और खुदाबख्श द्वारा उन्हे दिए गए प्रलोभन भी अधूरे रहेंगे। अगर बीकानेर की सेना उसी गति से आगे बढती रहती और नवाब की सेना को सीधे टकराव के लिए ललकार कर उकसाती तो सम्भव था कि उनकी विजय हो जाती और वह बहावलपुर पर अधिकार कर लेते। परन्तु शत्रु के क्षेत्र मे बीकानेर की सेना का मनोबल गिर गया। वह खुदाबख्श द्वारा उनका साथ छोडने से और आगे बढने का साहस नही कर सकी और न ही जिस क्षेत्र पर उनका अधिकार हो चुका था वहा डटे रहने का उनमे अब धैर्य था। वह सेना कुछ भी किए या लिए बिना वापिस बीकानेर लौट आई।

बीकानेर के इतिहासकारों का दावा है कि नवाब बहावल खा ने उनके पास सन्धि के प्रस्ताव भेजे। उन्होने मोजगढ खुदाबख्श को लौटाने का वचन दिया और उन्हे दो लाख रुपये पेशकश के देने के आलावा उनकी सेना का खर्चा अलग से दिया। यह सन्धि सन् 1802 ई म हुई बताई थी, यह तीनो दावे कितने हास्यास्पद थे ?

बीकानेर की भूमि के लिए भूख कभी शान्त नही हुई। वह किसी न किसी बहाने भाटियो की भूमि छीनने के प्रयास करता रहता, जिससे कि भाटी कमजोर हो। बीस वर्ष पहले पूगल से खीया पट्टी छीन कर उसने ऐसा ही किया था। उधर भटनेर के भाटी बीकानेर से निरन्तर सघर्षरत थे, कभी भाटियों का पलडा भारी रहता तो कभी बीकानेर का।

लेकिन उन भाटियो ने पूर्णरूप से और सरलता से कभी पराजय स्वीकार नही की। सन् 1773 ई मे महाराजा गजसिंह के हस्तक्षेप से कुछ दिनो के लिए वहा शान्ति जैसे आसार बने थे, परन्तु सन् 1800 ई मे भाटियो ने जावती खा के नेतृत्व मे फिर से विद्रोह के झडे खडे कर दिए। महाराजा सूरतसिंह ने इसी वर्ष रावत बहादुरसिंह के नेतृत्व मे दो हजार आदमियो की एक सेना भटनेर पर आक्रमण करने के लिए भेजी। जावती खा भाटी ने रावत की सेना का कडा विरोध किया, दोनो ओर से काफी जन धन की हानि हुई। बीकानेर की सेना बडी कठिनाई से डबली पर अधिकार करने मे सफल हुई। इस विजय की स्मृति मे बीकानेर ने बीगोर के पास एक छोटा किला बनवाया, जिसका उन्होने 'फतेहगढ' नाम रखा।

सन् 1799 ई मे जार्ज थामस की सहायता से सिन्धिया की सेना जयपुर राज्य को रौंद रही थी और वहा से चौथ वसूल कर रही थी। बीकानेर ने जयपुर की सहायतार्थ अपनी सेना वहा भेजी। इससे जार्ज थामस जयपुर से हट गया परन्तु उसने क्रोधित होकर बीकानेर पर आक्रमण कर दिया। सन् 1801 ई मे भटनेर के भाटियो ने थामस को पेशकश देकर उससे सहायता मागी और फतेहगढ का किला ध्वस करने का उससे निवेदन किया। थामस शीघ्र भटनेर पहुच गया और उसने भटनेर पर भाटियो का अधिकार करवा दिया। फतेहगढ के किले को उसने ध्वस करके उसम आग लगा दी। हारी मारी बीकानेर की सेना सूरतगढ़ हो कर बीकानेर लौटी।

बीकानेर इस शर्मनाक पराजय को सह नही सका। अभी एक वर्ष पहले बनाए गए फतेहगढ के किले के खडहर रह गए थे। उनका विजय का नशा उतर गया था। यह खडित किला देखकर सब हस रहे थे, जिस गाजे बाजे के साथ फतेहगढ का किला बनवाया गया था, उसकी भाटियो ने बडी भारी दुर्दशा थामस से करवा दी। बीकानेर इसके लिए जावती खा से बदला लेने की योजना बनाने लगा। महाराजा सूरतसिंह ने सन् 1804 ई मे एक शक्तिशाली सेना का गठन किया और अमरचन्द सुराणा के नेतृत्व मे इसे भटनेर के भाटियो से निपटने के लिए भेजा। भाटियो ने भटनेर के किले मे जबरदस्त सुरक्षा के उपाय किए हुए थे, उनकी सारी सेना किले की अभेद्य सुरक्षा म रह रही थी। बीकानेर की सेना ने किले की घेराबन्दी करली और वह उसके बाहर बैठी रही। उन्होने कच्ची दीवारें बना कर किले मे घुसने के यत्न किए और अनेक बार रात मे किले के परकोटे को लाघने के प्रयास भी किए। परन्तु भाटियो की चौकसी के कारण उनके सारे प्रयास विफल हुए। अमरचन्द सुराणा ने किले के घेरे को और ज्यादा कसा, पाच सौ घुडसवार किले के चारो ओर दिन रात निगाह रखते थे कि अन्दर कोई रसद, गोला बारूद या साज सामान नही पहुच सके। यह घेराबन्दी पाच माह तक चली। आखिर रसद, गोला बारूद और साज सामान के अभाव म जावती खा ने एक दिन अचानक किले के द्वार खोल दिए, वह अपनी सना सहित बाहर निकला और राजपुरे की तरफ चला गया। बीकानेर की सेना ने भी उसको निर्विरोध किला खाली करके जान दिया। पाच माह मे बीकानेर की सेना का मनोबल इतना गिर गया था कि वह जाते हुए जावती खा का विरोध करने का साहस नही जुटा पाई। इसके अलावा और क्या कारण हो सकता था कि उन्होने इस प्रकार से भाटियो की सेना को जान का सुरक्षित मार्ग दिया और जावती खा को बन्दी नही बनाया? पाच महीने

में बीकानेर की सेना की क्षति भी काफी हुई थी। किले के अन्दर वाले रक्षक सुरक्षित थे, बाहर वाले केवल किले के अन्दर से आने वाले गोलों का सामना ही नहीं कर रहे थे वरन उन पर बाहर से भी छापामार भाटियों की मार पड़ रही थी। इस दोहरी मार के कारण भाटी सेना हमेशा राठौड़ों की सेना पर हावी रहती थी। बीकानेर ने सोचा कि जब जाबती भा राजी खुशी जा ही रहा था तो उसे युद्ध के लिए ललकार कर व्यर्थ में सैनिकों का नुकसान क्यों कराया जाये। अगर इसके बाद मैदान के युद्ध में बीकानेर की सेना उससे पराजित हो गई तो उनका पांच माह का घेरा बेकार जायेगा। उनका ध्येय केवल भटनेर के किले को लेना था, उनका यह उद्देश्य अपने आप पूर्ण हो रहा था। भाटियों द्वारा किला खाली कर दिये जाने पर अमरचन्द सुराणे ने उस पर अधिकार कर लिया।

सन् 1805 ई. म जिस दिन बीकानेर की सेना ने भटनेर के किले में प्रवेश किया था (वि स 1862, बैसाख वदी 4) उस दिन मगलवार का दिन था। राठौड़ों ने भटनेर का नाम बदल कर 'हनुमानगढ़' रख दिया। भटनेर का नाम पिछले पन्द्रह सौ वर्षों से, सन् 295 ई से, भाटियों से जुड़ा हुआ था। इसके बाद में भाटियों का राज्य सिकुड़ कर पूगल के आस पास रह गया, टुकड़ो टुकड़ों म एक वृहद राज्य समाप्त हो रहा था।

राव केलण के मुसलमान पुत्रों, खुमान और बीरा, के वंशजों ने चार सौ वर्षों तक, सन् 1430 से 1805 ई., भटनेर म भाटियों के झडे नहीं झुकने दिए। उन्ह भटनेर का ऐसा मोह था और उससे ऐसा लगाव था कि वह उनसे बार बार बलिदान मागते हुए भी भाटी भटनेर के लिए सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार रहते थे। भाटियों ने भटनेर अनेक बार खोया और खोकर उसे फिर जीता। यह क्रम सदियों तक निरन्तर चलता रहा, प्रत्येक पराजय के पीछे उनकी अगली विजय थी। उन्ह राव केलण स विरासत म इस भूमि के लिए एसा आकर्षण मिला था कि कोई शक्ति भाटियों को इससे अलग नहीं कर सकी। भटनेर की पुकार उनके लिए साहस, धैर्य और बलिदान का सदेश थी। इसी पुकार के सहारे सदियों तक हजारों भाटी इसकी ओर खिंचते गये और मर कर पीढ़ी दर पीढ़ी जीवित होते रहे। भटनेर दीये की लौ थी, जिसे देखकर भाटी कीट पतगों की तरह उसकी ओर आकर्षित हो कर स्वाह होते थे। भाटियों के लिए भटनेर प्रयाण था जिसकी इतिश्री सन् 1805 ई मे हो गई।

सन् 1809 ई मे बम्बई प्रान्त के राज्यपाल मान्स्टुअर्ट एल्फिन्सटन, काबुल जाते हुए कुछ दिन पूगल मे ठहरे थे। वह लॉर्ड मिन्टो के दूत बनकर, काबुल से फ्रान्स के बढते हुए प्रभाव के विरुद्ध सहायता प्राप्त करने जा रहे थे। उन्होने पूगल राज्य का वर्णन करते हुए लिखा कि यह आदिकाल से भाटियों का पैतृक राज्य था और यह मरुप्रदेश के नौ महत्वपूर्ण गढ़ो मे से एक गढ था। इस रेगिस्तान से घिरे हुए रेतीले उपनिवेशन में सदैव वीर-धीर योद्धा उत्पन्न हुए थे और उन्होने इस धरती की रक्षा अपने रक्त से की थी। इस प्रेमलीला की धरती के पहले स्थापक राव रणकदेव थे, जिनके समय की राजकुमार शार्दूल और कोड़मदे के बलिदान की कहानी कण कण मे गूँजती थी। एल्फिन्सटन के विचार में नवम्बर माह के अन्त तक इस भूमि पर वनस्पति का नाम तक नहीं बचता था, परन्तु वर्षात के मौसम मे यहा की वनस्पति हजारों पशुओं की पोषक बन जाती थी। वह राव रामसिंह के

कई दिनो तक अतिथि रहे, उन्होने इनकी बहुत अच्छी आव-भगत की। इन्होंने उन्हे उच्च स्तर का मान सम्मान दिया और भाटियो के क्षेत्र से बाहर तक सैनिक संरक्षण देकर उन्हें विदा किया।

सन् 1810 ई मे बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह ने महाजन के ठाकुर वैरीसालसिंह को पाच हजार रुपये नकद दे कर उन्हे पूगल में अपनी बहनो से मिलने के लिए प्रेरित किया। साथ ही उन्हें अपने बहनोई, राव रामसिंह, के लिए उचित भेंट ले जाने की सलाह भी दी। यह बीकानेर की कूटनीति थी कि वह पूगल के एक निकट के सबंधी को लालच देकर वहा जाने का आग्रह करके वहा की आन्तरिक गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करने के लिए भेजें।

सन् 1811 ई. मे राव रामसिंह ने अपने छोटे भाई अनोपसिंह को सत्तासर और ककराला की जागीर प्रदान की। महाराजा सूरतसिंह ने भी पूगल के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनाते हुए अनोपसिंह को गिरेरा की जागीर बख्शी। इसके फलस्वरूप अनोपसिंह बीकानेर राज्य के ताजीमि सरदार भी बन गए। यह एक परोक्ष रूप से पूगल के एक प्रमुख भाई को बीकानेर की अधीनता स्वीकार कराने का प्रयास था।

राव रामसिंह ने अपने दूसरे छोटे भाई सादूलसिंह को करणीसर और धराला की जागीर प्रदान की।

सन् 1818 ई में ब्रिटिश शासन ने बीकानेर राज्य से मित्रता की सन्धि की। इस सन्धि पर बीकानेर राज्य की तरफ से काशीनाथ ओझा ने और ब्रिटिश शासन की तरफ से चार्ल्स मैटकाल्फ ने हस्ताक्षर किए। यह सन्धि कलकत्ता मे की गई थी।

सन् 1820 ई में राव रामसिंह, जैसलमेर के महारावल गजसिंह की बारात में मेवाड गए थे। महारावल का विवाह राणा भीम की पुत्री रूप कवर से हुआ। इसी समय मेवाड की अन्य राजकुमारियो से विवाह करने के लिए बीकानेर के राजकुमार रतनसिंह और मोतीसिंह भी बारात लेकर वहां गए हुए थे। किशनगढ़ से राजकुमार मोखमसिंह राठौड भी ब्याहने वहीं गए हुए थे। भाटियो ने शादी के अवसर पर खूब जश्न मनाया और महारावल गजसिंह ने खुले दिल से वहां रुपया खर्च किया। इससे राजकुमार रतनसिंह महारावल से खिन्न हो गए, क्योंकि उन्होंने बीकानेर से अधिक रुपया खर्च करने का साहस किया था। यह रुपया इनाम, बख्शीश, घोल, अनुष्ठानो, चढावों आदि मे खर्च किया गया था। राजकुमार रतनसिंह द्वारा अभद्र व्यवहार करने से उनमे और महारावल मे तकरार, बहस हो गई और बात यहा तक पहुच गई कि दोनो पक्ष आपस में लडने पर उतारु हो गए। महाराणा ने बीच बचाव करके बडी कठिनाई से स्थिति को सम्भाला और रक्तपात टाला। परन्तु इस तकरार से बीकानेर और जैसलमेर के आपसी सम्बन्ध बिगड गए। महारावल गजसिंह सन् 1820 ई में थोडे समय पहले महारावल बने ही थे, उस समय बीकानेर मे महाराजा सूरतसिंह राज्य कर रहे थे, उनके राजकुमार रतनसिंह सन् 1828ई मे महाराजा बने।

राजकुमार ने बीकानेर पहुचते ही अपने पिता, महाराजा सूरतसिंह को जैसलमेर के विरुद्ध अनेक शिकायतें की, जिससे क्रुद्ध हो कर सन् 1820 ई में बीकानेर ने जैसलमेर से

उनके मेवाड में राजकुमार के साथ कथित अभद्र व्यवहार करने का बदला लेने के लिए सेना भेजी। इस सेना का नेतृत्व हुकमचन्द सुराणा कर रहे थे। इस आक्रमण मे बारू के ठाकुर जवानसिंह मारे गए। बीकानेर की सेना क्योकि जैसलमेर को केवल दण्ड ही देना चाहती थी, इसलिए वह ठाकुर मानीसिंह को बन्दी बनाकर, लूटपाट करके रास्ते मे से वापिस लौट आई। सही स्थिति यह थी कि जैसलमेर की सेना के बारू पहुचने से पहले ही बीकानेर की सेना वापिस मुड गई, क्योकि वह जैसलमेर से उनके क्षेत्र मे लडने का साहस नही कर सकती थी। इसके अलावा जैसलमेर और बीकानेर राज्यो की ब्रिटिश शासन के साथ सन् 1818 ई मे हुई सन्धि के अनुसार इस प्रकार से सीमा का उल्लघन करने से सन्धि की शर्तें भग होती थीं और दोषी राज्य दण्ड का भागी होता था। मेरे विचार म महाराजा सूरतसिह काफी अनुभवी शासक थे, वह बारात मे हुई तकरार को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर जैसलमेर से युद्ध नही करना चाहते थे, परन्तु राजकुमार की जिद को पूरा करने के लिए उन्होंने जैसलमेर के बारू क्षेत्र पर सेना भेजी और हुकमचन्द सुराणा को वहा से आगे नही जाने के आदेश दिए। इस दिखावे से राजकुमार रतनसिंह सन्तुष्ट नही हुए, वह जैसलमेर पर भविष्य मे बडा आक्रमण करने के लिए बहाना चाहते थे। वह सुअवसर का इन्तजार करते रहे।

सन् 1828 ई मे महाराजा सूरतसिह का देहान्त होने पर रतनसिह बीकानेर के महाराजा बने। कुछ समय पश्चात् जैसलमेर स्थित राजगढ के राजासी भाटी ने पेशवा (मराठा) से चार सौ ऊटनियो की आपूर्ति करने के लिए पेशकश ले ली थी। राजासी भाटी ने बिहारी दासोत और मालदेव भाटी को इन ऊटनियो का प्रबन्ध करने का काम सौंपा। वह दोनो बीकानेर राज्य से ऊटनिया चुराकर या डाका डालकर जैसलमेर की सीमा से पार ले गए। बीकानेर क्योकि जैसलमेर पर आक्रमण करने का बहाना चाहता था, वह इन ऊटनियो की चोरी (अपहरण) से उन्हें मिल गया। यह सुअवसर महाराजा सूरतसिह की मौत से उन्हे मिला। इसलिए महाराजा रतनसिह ने एक शक्तिशाली सेना से, सन् 1829 ई मे, जैसलमेर पर आक्रमण कर दिया। इस सेना के साथ मे महाजन के ठाकुर वैरीसालसिह, अमरसिह और हुकमचन्द सुराणा गये। उन्हें आदेश थे कि वह बीकानेर की ऊटनियों को भाटियों से छीनकर वापिस लावें और जैसलमेर को उचित दण्ड दें ताकि वह ऐसी कार्यवाही भविष्य मे नही करें। उनका असली उद्देश्य तो मेवाड मे हुई मानहानि का बदला लेना था।

महारावल गजसिह ने इस अनावश्यक युद्ध को टालने के लिए बिहारीदास पुरोहित को सेनानायको से बातचीत करने के लिए भेजा और कहलवाया कि वह सेना को वापिस ले जाए। वह सारी ऊटनियो को ढूंढवा कर वापिस बीकानेर भेज देंगे, और दोषी व्यक्तियो से उन्हें क्षतिपूर्ति भी दिलवाएगे। परन्तु बीकानेर का असली उद्देश्य ऊटनिया वापिस लेने का नही था, उन्हें तो महाराजा रतनसिह के अहकार का तुष्टीकरण करना था। उन्होंने मार्ग मे पडने वाले भाजर, बडगाव, देवीकोट, हदा आदि गावो को लूटा और अहकार मे कहला भेजा कि मेवाड वाली तकरार का बदला वह जैसलमेर के गडीसर तालाब के पचघाट पर नगर की पनिहारियो के गहने लूट कर लेंगे। मेवाड वाली घटना को दस वर्ष होने को आए थे, बीकानेर अभी भी बदला चुकने की चाह कर रहा था।

बीकानेर की सेना लूटपाट और रक्तपात का अभियान चलाती हुई आराम से बासनपीर गांव पहुंची और निश्चिन्त होकर उसने वहा रात्रि के लिए विश्राम करने हेतु डेरे डाले। अभी तक उनका सामना जैसलमेर की सेना से नहीं हुआ था, इसलिए हर्ष में वह कुछ लापरवाही कर रहे थे और सेनापति विजय के सपने सजो रहे थे। यही रात्रि बीकानेर की सेना के लिए करन की रात साबित हुई जो वापिस लौटकर कभी नही आई, और जिसे बीकानेर की आने वाली पीढ़ियां सौ साल तक भी नही भुला सकी।

भाटियो ने अपने निपुण जासूसो से बीकानेर की सेना की शक्ति, उनके हथियारो, सुरक्षा व्यवस्था और पहरा को चौकसी के बारे मे पूरी जानकारी प्राप्त करली। उन्होने बीकानेर की सेना पर सुनियोजित योजनाबद्ध तरीके से आक्रमण किया। उनकी पैदल सेना की छापामार टुकड़ियां पास के टीबो और झाडियो के पीछे ओट लिए हुए थी और घुडसवार सेना ने अर्द्धरात्रि मे सोई हुई सेना पर अचानक आक्रमण कर दिया। अनेक सैनिक घोडों की टापो से रौंदे गए कुछ भालो से बिन्धे गए और जो उठे, उन्हें तलवार के वारो ने सुला दिया। सेना हडबडा कर इधर उधर भागने लगी और ज्योही वह घुडसवार सेना की मार से दूर हुई कि टीबो के पीछे छिपी हुई पैदल सेना उन पर टूट पडी। इस अप्रत्याशित मार की उन्हे कभी आशा नही थी। बडी कठिनाई से बची हुई सेना बीकानेर की राह पकडने में सफल हुई। वह अपने कपडे लत्ते, बरतन भान्डे, रसद और लूटा हुआ माल वही छोडकर बीकानेर की ओर भाग छूटी। उनकी ऐसी दुर्गति हुई जिसका शब्दो से वर्णन नही किया जा सकता।

इस छापे मे जहा बीकानेर की सेना के अनेक सैनिक मारे गए, वहा जैसलमेर की सेना के रामचन्द्र सोढा और बोरसिंह सिहराव भी मारे गए खोसाणा के जागीरदार साहिब खां का बेटा मिट्ठू खा गम्भीर रूप से घायल हुआ। बीकानेर की सेना के सेनानायक अमरचन्द सुराणा भी वही खेत रहे। कुछ वर्षो बाद मे उनके पुत्रो ने बासनपीर मे उनके मारे जाने के स्थान पर एक छतरी का निर्माण कराया। वह आज भी उस त्रासदी की मूक गवाह के रूप म बासनपीर म खडी हैं। वैसे लोग समय व्यतीत होने के साथ बासनपीर के युद्ध को भूल जाते, परन्तु यह छतरी उनकी उत्सुकता को जागृति करती है और बीकानेर उस शर्मनाक पराजय की याद करके सिर झुका लेता है। उन्होने विहारीदास पुरोहित की मध्यस्थता नही मानकर बडी भूल की। उनको अपनी ऊटनियो का तो मिलना दूर रहा, उनकी गडीसर तालाब पर पनिहारियो के गहने लूटने की अभिलाषा भी अधूरी रही।

बीकानेर पहुच कर अभयसिंह और हुकमचन्द सुराणा ने इस पराजय का सारा दोष ठाकुर बैरीसालसिंह के सिर यह कहकर मढ दिया कि वह पूगल के राव के साले होने के नाते भाटियो से सहानुभूति रखते थे और बासनपीर के षड्यन्त्र की उन्हे पहले से जानकारी थी, वह भाटियो से मिले हुए थे।

बासनपीर की पराजय बीकानेर वासियो के लिए दृष्टान्त बन गई। जब कभी बीकानेर के दो आदमी लडते या आपस मे झगडते तो कमजोर पक्ष कहता, 'थे इत्ता ही शूरवीर हो तो बासनपीर वाले वक्त लारे कठै रह गिया हा'।

कवि ने भी इस घटना को अछूता नही छोडा। उसने कवित्त लिखा

जाता जुगा न जावसी, आसी वे दिन याद।
मङक मध नही, भूलसी बासणपीर रो धाव।।

मेह न भूले मेदनी, रंक न भूले राण।
पली न भूले पाड़की, बासणपीर बीकाण ।।'

इस पराजय से महाराजा रतनसिंह का पानी उतर गया। कहा तो मेवाड मे हुई मान हानि को सुधारने चले थे, अब भाटियो ने नाक भी काट ली। उन्हे चाहिए था कि दुबारा सेना का संगठन करके जैसलमेर पर आक्रमण करते, परन्तु उनका सन् 1820 और 1829 ई. का अनुभव काफी लाभप्रद रहा, इससे उन्होने गुरु शिक्षा ले ली। ऐसा ही तीन सौ वर्ष पहले एक बार, सन् 1526 ई मे, राव लूणकरण ने लाला चरण की बातो मे आकर अपनी मानहानि का सुधार करने के लिए जैसलमेर पर आक्रमण किया था। लौटने से पहले समझौते के बदले मे राजकुमारी अमृत कंवर को जैसलमेर के राजकुमार लूणकरण को ब्याहने का वचन देकर छूटे। उस समय पूगल में राव हरा थे।

कुछ समय पश्चात् महाराजा ने बैरीसालसिंह पर आरोप लगाया कि वह बावरी और जोइया जाति के जरायमपेशा चोर डाकूओ से मिले हुए थे, वह उन्हे महाजन मे शरण देते थे और चोरी व लूट के माल मे से वह उनसे हिस्सा प्राप्त करते थे। यह आरोप लगाने का असली कारण उनके प्रति इस संदेह का होना था कि वह बासनपीर के युद्ध से पहले पूगल के माध्यम से जैसलमेर के भाटियो से मिल गए थे, जिसके कारण उस युद्ध मे बीकानेर की शर्मनाक पराजय हुई। उन्हे दण्ड देने के लिए सन् 1829 ई. मे बीकानेर की सेना महाजन पर आक्रमण करने के लिए भेजी गई। बीकानेर की सेना के आने का सुनकर बैरीसालसिंह पहले जोइयो के पास टीबी चले गए, परन्तु वहां अपने आपको सुरक्षित नही समझ कर, वह वहा से पूगल आ गए। उनकी अनुपस्थिति मे महाजन की सेना ने तीन दिन तक बीकानेर की सेना का सामना किया परन्तु चौथे दिन महाजन के किलेदार अमरावत राठौड प्रधान को किला बीकानेर की सेना को सौंपना पडा और साथ मे ठाकुर के पुत्र अमरसिंह को भी बन्धक के रूप मे उन्हें देना पडा।

पूगल के राव अमरसिंह ने अपने राजकुमार अभयसिंह के साले रावतसर के कुमार अमरसिंह को सन् 1773 ई मे शरण दी थी, जिसके परिणाम पूगल के लिए घातक सिद्ध हुए थे। इसलिए उस कडवे अनुभव को ध्यान मे रखते हुए राव रामसिंह ने समझदारी करके ठाकुर बैरीसालसिंह को महाराजा रतनसिंह से क्षमा मागकर समझौता करने के लिए सहमत कर लिया। ठाकुर बैरीसालसिंह परम्परागत शरण क्षेत्र, देशनोक के ओरण में चले गए। राव रामसिंह ने बीकानेर जाकर महाराजा से उन्हे क्षमा करने के लिए निवेदन किया। महाराजा ने राव रामसिंह के निवेदन पर विचार करके ठाकुर बैरीसालसिंह से साठ हजार रुपये पेशकश के प्राप्त किए, उन्हे महाजन का ठिकाना लौटाया, और उनके पुत्र कुमार अमरसिंह को भी छोड दिया।

ठाकुर बैरीसालसिंह अमरावतो के प्रति आग बबूला थे, क्योकि उन्होने युद्ध किए बिना महाजन का गढ और उनका पुत्र बीकानेर को सौंप दिए थे। उन्होने महाजन पहुंचकर पहले पहल चौबीस अमरावतो का वध किया। वह बीकानेर के महाराजा से भी उनके ऊपर लगाए गए झूठे आरोपो, कि वह बासनपीर मे भाटियो के साथ षड्यन्त्र मे मिले हुए थे और डाकूओं को शरण देते थे, के कारण और उनके साथ न्यायोचित व्यवहार न करके साठ

हजार रुपये दण्ड के रूप मे ऐंठ लिए जाने से अत्यन्त क्रुद्ध थे। इसलिए वह बीकानेर के विरुद्ध बगावत कर बैठे।

बागी ठाकुर बैरीसालसिंह ने बीकानेर के पडोसी उन राज्यो से सम्पर्क किया जो बीकानेर के प्रति शत्रुता का भाव रखते थे। पहले पहल वह बहावलपुर गये। वहा के नवाब बीकानेर द्वारा सन् 1801 ई मे खुदाबख्श को दी गई सहायता के कारण उनसे शत्रुता रखते थे। परन्तु वहा नियुक्त ब्रिटिश प्रतिनिधि द्वारा दिए गए आदेशो की पालना मे उन्होने बैरीसालसिंह को कोई सहायता नही दी और उन्हे शरण देने मे अपनी असमर्थता व्यक्त की। वह बैरीसालसिंह की खातिर बीकानेर के प्रति शत्रुता प्रदर्शित नही करना चाहते थे और न ही इनके लिए बीकानेर से झगडा मोल लेना चाहते थे। बैरीसालसिंह बहावलपुर से पूगल आ गए, जहा राव रामसिंह ने एक बार फिर अपने साले को शरण दी। महाराजा रतनसिंह ने राव रामसिंह को ठाकुर बैरीसालसिंह को पूगल से निकाल देने के लिए कहा और यह भी कहलवाया कि आपसी सम्बन्धो को मधुर बनाए रखने के लिए वह ठाकुर को उन्हे सौंप दें। इससे पहले की तरह स्पष्ट संकेत था कि वह पेशकश लेकर ठाकुर को फिर क्षमा कर देंगे। साथ मे उन्होने यह भी चेतावनी दी कि ठाकुर बैरीसालसिंह के पूगल मे रहने से वह उनके कोप भाजन बनेंगे और बीकानेर ठाकुर को बन्दी बनाने के लिए पूगल के विरुद्ध बल प्रयोग करेगा। इस चेतावनी की राव रामसिंह ने कोई परवाह नही की।

बीकानेर के अनुसार ऐसा कहा जाता है कि राव रामसिंह ने ठाकुर बैरीसालसिंह को सलाह दी कि वह जैसलमेर जाकर महारावल गजसिंह से सहायता के लिए निवेदन करें। बासनपीर के युद्ध के कारण उनसे बीकानेर के विरुद्ध सैनिक सहायता मिलने की सम्भावना थी। ठाकुर बैरीसालसिंह जैसलमेर गए और सन् 1830 ई मे वहा से सेना लेकर पूगल आए। ऐसा लगता था कि पूगल की कमजोर स्थिति को देखते हुए महारावल गजसिंह बीकानेर से पहले पूगल पर जैसलमेर की प्रभुसत्ता जमाना चाहते थे, ऐसा पहले जैसलमेर बीकमपुर और बरसलपुर के मामले मे कर चुका था। इसी दृष्टिकोण से उन्होंने अपनी सेना पूगल भेजी। बीकानेर ने भी दीवान लक्ष्मीचन्द सुराणा के नेतृत्व मे अपनी सेना पूगल के लिए रवाना कर दी। बीकानेर की सेना का रणधीसर गाव मे भाटियो ने विरोध किया। इस संघर्ष मे मानीपुरा के ठाकुर रूपसिंह भाटी मारे गए। इधर से पूगल की सेना भी रणधीसर पहुच गई और वहा हुए संघर्ष मे रणधीसर के भाटी ठाकुर भी मारे गए। एक अन्य रणधीसर का भाटी बीकानेर से उनकी सेना के साथ मे आया था, वह भी मारा गया। प्रारम्भिक कडे संघर्ष के कारण और पूगल और जैसलमेर के भाटियो की संयुक्त सेनाओ के भय से बीकानेर की सेना रणधीसर से आगे नही गई, वह वापिस बीकानेर लौट गई।

जैसलमेर की सेना की संख्या को जानकर महाराजा रतनसिंह घबरा गए। उन्होने दिल्ली स्थित ब्रिटिश प्रतिनिधि को पूगल के विद्रोह की सूचना भेजी, परन्तु उन्होंने इस पर आगे कोई कार्यवाही नहीं की। उनके विचार मे यह शासक और शासित का आपस का आन्तरिक मामला था जिसके लिए सन् 1818 ई. की सन्धि की शर्तों के अनुसार उनके द्वारा हस्तक्षेप करना उचित नहीं था।

बीकानेर ने एक दूसरी सेना जालिमचन्द और हुकमचन्द सुराणा के नेतृत्व मे केता

गाव के मार्ग से पूगल पर आक्रमण करने के लिए भेजी। उस समय केला के क्षेत्र मे जोर नाम का वावरी उत्पात मचा रहा था और लूटमार कर रहा था। बीकानेर की सेना न जोर वावरी को वहा से बन्दी बना लिया। बीकानेर के दावे के अनुसार उनकी सेना को पूग आया जानकर ठाकुर बैंरीसालसिंह पूगल छोडकर जैसलमेर चले गए। बीकानेर की सेन ने पूगल के कुओ पर अधिकार कर लिया। कुछ दिनो के युद्ध के बाद मे पूगल क गढ मे पी का पानी समाप्त होने की स्थिति मे होने से राव रामसिंह ने आत्मसमर्पण कर दिया। व बीकानेर दरबार मे उपस्थित हो गए। महाराजा ने उन्हे क्षमा कर दिया। उन्होने रा रामसिंह को पदच्युत करके उनके स्थान पर उनके छोटे भाई सादूलसिंह को राव बना दिया राव रामसिंह को उन्होने गुढा गाव की जागीर दो अन्य गावो सहित प्रदान कर दी। बा म जब महाजन के ठाकुर बैरीसालसिंह, छाडवास के सग्रामसिंह और बीदासर के रामसि को महाराजा ने माफ किया, तब उनके साथ उन्होने राव रामसिंह को भी पूगल वापि दे दी।

उपरोक्त तथ्य दयालदास द्वारा राठौडो की ख्यात मे लिखे गए थे। दयालदा महाराजा रतनसिंह के शासनकाल मे बीकानेर राज्य का सेवक था और उनका इनाम आश्रित था। उसने इतिहास को वही मोड दिया जो शासक के मन भाता था।

सही तथ्य यह थे कि ठाकुर बैंरीसालसिंह ने बहावलपुर क्षेत्र मे रहते हुए बीकाने पर छापे मारने शुरू कर दिए थे। इनसे परेशान होकर बीकानेर ने ब्रिटिश प्रतिनिधि शिकायत की, जिन्होने बहावलपुर के नवाब से निवेदन किया कि वह इस प्रकार से अन्त राज्य शान्ति भग करने की असन्तुष्टो की कार्यवाही को प्रोत्साहन नही देवें। इसलिए नवा ने ठाकुर को उनका राज्य छोडकर अन्यत्र चले जाने के लिए बाध्य किया। वह कुछ दिन बीकानेर क्षेत्र मे लौट आए, जहा से वह इन पर छापे मारने लगे, किन्तु बीकानेर की सेन के दबाव के कारण उन्हे बीकानेर क्षेत्र छोडकर जैसलमेर जाना पडा। दयालदास का य कथन कि ठाकुर बैंरीसालसिंह जैसलमेर से सेना लेकर पूगल आए, मान्य नही है। जैसलमे के इतिहास मे इस प्रकार पूगल सेना भेजे जाने का कही वर्णन नहीं है। महारावल गजसि स्वय समझदार शासक थे, वह सन् 1818 ई की सन्धि की शर्तों को भग करके ऐसे अपर्न सेना पूगल भेजने वाले नहीं थे। अगर राव रामसिंह उनसे बीकानेर के विरुद्ध सैनिव सहायता मागते तो उनकी मांग का स्तर और होता, परन्तु यह प्रकरण तो महाजन के ठाकु से जुडा हुआ था, जिससे जैसलमेर का कुछ लेना देना नही था। जैसलमेर द्वारा ठाकु बैंरीसालसिंह को किसी प्रकार की शरण या सहायता देने से महाराजा रतनसिंह द्वारा उ पर लगाये गए बासनपीर के षड्यन्त्र मे शामिल होने के आरोपों की पुष्टि होती थी जैसलमेर ने पहले से ही बीकानेर के विरुद्ध बासनपीर की घटना की शिकायत ब्रिटिश प्रति निधि से कर रखी थी। अब जैसलमेर द्वारा बैरीसालसिंह की सहायतार्थ पूगल सेना भेजने से, बीकानेर के दिल्ली स्थित वकील हिन्दूमल बैंद, इसकी शिकायत ब्रिटिश शासन से अवश्य करते जिससे जैसलमेर की पहले की शिकायत की सत्यता पर प्रतिकूल असर पडता। इस लिए जैसलमेर की सेना कभी पूगल नहीं आई। यह वर्णन भी असत्य था कि बीकानेर ने उस समय राव रामसिंह के स्थान पर सादूलसिंह को राव बना दिया।

दिल्ली स्थित ब्रिटिश रेजिडेन्ट एफ हॉवकिन्स ने अपने प्रतिवेदन, दिनांक आठ अक्टूबर, सन् 1830 ई के द्वारा विदेशी एव राजनीतिक विभाग, फोर्ट विलियम्स, कलकत्ता को सूचित किया कि ठाकुर बैरीसालसिंह को बहावलपुर से निष्कासित किए जाने के बाद मे, काफी बडी संख्या मे अनुशासनहीन आदमी इकट्ठे करके वह पूगल पहुचा और उसने वहा के किले पर अधिकार कर लिया। इस भीड को किसी माप-दण्ड के अनुसार जैसलमेर से आई सेना नहीं कहा जा सकता था। उन्होने यह भी लिखा कि उनके द्वारा पूगल के राव रामसिंह को भेजे गये आदेशो की अवहेलना करते हुए उन्होने ठाकुर बैरीसालसिंह का पक्ष लिया। हॉवकिन्स के विचार मे जैसलमेर के महारावल असन्तुष्टो एव विद्रोहियो को प्रोत्साहन दे रहे थे। मिस्टर कैवेन्डिश ने उन्हे अति आवश्यक और बार-बार स्मरण पत्र भेजे कि वह विद्रोहियों का साथ नही दें, परन्तु उन्होने इस पर ध्यान नही दिया। हॉवकिन्स ने एक हरकारा पूगल भेजकर राव से युद्ध बन्दी के लिए भी निवेदन किया। राव रामसिंह और ठाकुर बैरीसालसिंह युद्धबन्दी के लिए इस शर्त पर तैयार थे कि उनकी और उनकी सम्पति की सुरक्षा का उत्तरदायित्व वह ले लें। राव रामसिंह ने दिल्ली के रेजिडेन्ट को यह भी बता दिया कि वह बीकानेर की सेना को पूगल मे रखने की शर्त नही मानेंगे और न ही वह बीकानेर के थाने पूगल राज्य मे स्थापित करने के लिए सहमत होंगे।

जब पूगल और बीकानेर के सम्बन्ध ज्यादा बिगडने लगे और तनाव बढता गया, तब महाराजा रतनसिंह ने हॉवकिन्स से सन् 1818 ई की सन्धि की शर्तों के अनुसार सैनिक सहायता मागी। वह यह सैनिक सहायता भेजने के लिए तैयार था परन्तु गवर्नर जनरल विलियम बैन्टिक ने उसे इसके लिए स्वीकृति नही दी। राव रामसिंह ने रेजिडेन्ट को यह भी सूचित कर दिया कि अगर बीकानेर पूगल के प्रति शत्रुता का भाव बनाए रखेगा और उनके राज्य मे हस्तक्षेप करता रहेगा, तो वह भी बीक्मपुर और बरसलपुर की तरह अपने पैतृक राज्य जैसलमेर मे मिल जायेंगे। किन्ही कारणो से हॉवकिन्स शान्तिपूर्वक समाधान के स्थान पर, इस समस्या के सैनिक समाधान पर उतारु था। ऐसा लगता था कि बीकानेर की रीति नीति के अनुसार उन्होने उसे पूगल मे ब्रिटिश सैनिक हस्तक्षेप के बदले मे गुप्त पेश कश देने का आश्वासन दिया हो। वह सारे मामले को गहराई से समझने की कोशिश नही कर रहा था। वह पूर्व के सन् 1665 ई और सन् 1783 ई के पूगल और बीकानेर के संघर्षो के कारणो की जानकारी नही लेना चाहता था। सन् 1829 ई की घटनाए इन्ही पूर्व की दो घटनाओ की केवल पुनरावर्ती थी, इसके भी वही पुराने कारण थे। राव रामसिंह ने हॉवकिन्स को अपनी तरफ से सारे तथ्य प्रस्तुत कर दिए थे।

उसने गवर्नर जनरल को यह भी लिखा कि पूगल बीकानेर राज्य का भाग था। इस पर उन्होंने हॉवकिन्स को आदेश दिया कि अगर वस्तुस्थिति ऐसी थी तो ब्रिटिश सरकार सन्धि की शर्तो के अनुसार किसी राज्य की आन्तरिक समस्याओ को सुलझाने के लिए उसके शासक को किसी प्रकार की सैनिक सहायता प्रदान करने के लिए बाध्य नही थी।

महाराजा रतनसिंह के भय, घबराहट और चिन्ता का इसी बात से अन्दाजा लगाया जा सकता था कि उन्होने दिनाक 10 अप्रेल, 3 जून, 7 अगस्त, 6 सितम्बर, सन् 1830 ई को रेजिडेन्ट को बार बार लिखकर आग्रह किया कि ब्रिटिश शासन उन्हें पूगल राज्य के

विरुद्ध सैनिक सहायता प्रदान करे, तभी एफ हॉकिन्स ने 8 अक्टूबर, सन् 1830 ई को अपना विस्तार से प्रतिवेदन फोर्ट विलियम्स को भेजा। ऊपर दिए गए सम्भावित कारणो से हॉकिन्स समस्या के समाधान के लिए उसकी गहराई और गम्भीरता तक नही गया था, जिसके कारण गवर्नर जनरल ने उससे शासन की अप्रसन्नता दर्शायी। वह जान-बूझ कर समस्या के शान्तिपूर्ण समाधान मे विलम्ब कर रहा था। वह बीकानेर राज्य को सैनिक सहायता देने के लिए इतना उत्सुक था कि उसने नसीराबाद मे सेनापति जनरल विलसन को आदेश भेज दिए कि वह अल्पावधि की सूचना पर बीकानेर सेना भेजने के लिए तैयार रहे। गवर्नर जनरल ने उसे एक और चेतावनी भेजी कि वह इस प्रकार के मामलो म अनावश्यक रुचि लेकर समस्या को उलझाये नही।

महाराजा रतनसिंह ने केवल पाच सौ घुडसवार सेना भेजने के लिए हॉकिन्स से निवेदन किया था। उनके विचार मे यह सख्या पूगल पर बलपूर्वक अधिकार करने के लिए पर्याप्त थी। परन्तु हॉकिन्स को कोई ऐसा बडा लालच दिया गया था कि वह इस छोटी सेना के स्थान पर एक बहुत बडी सेना भेजने का इच्छुक था। उसने राजपूताना फील्ड फोर्स के सेनापति को आदेश भेजा कि वह सेना की दो नेटिव इन्फेन्ट्री रेजिमेन्टें, एक दल नेटिव घुडसवार सेना का, और इनके अनुपात और आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुए हार्स (घोडे) आर्टिलरी (तोपखाना) को पूगल रवाना करने के लिए तैयार रखे। अगर हॉकिन्स की इस योजना को कार्यरूप दे दिया जाता तो पूगल में अनावश्यक रक्तपात होता। सर चार्ल्स मेटकाल्फ ने इस योजना के विरुद्ध गवर्नर जनरल को टिप्पणी प्रस्तुत की, जिससे वह सहमत हुए। इस प्रकार उच्च अधिकारियो की सूझबूझ और धैर्य से पूगल का भयकर सकट टल गया।

हॉकिन्स को चाहिए था कि वह महाराजा रतनसिंह को धैर्य और शान्ति स काम लेने के लिए सलाह देता, उन्हें सारे प्रकरण को इस प्रकार बिगाडने से रोकता और सारे मामले की पृष्ठभूमि की छानबीन करता। वह बिना सोचे समझे बीकानेर राज्य का सहयोगी बन गया था और रिश्वत के लालच मे इस निष्कर्ष पर पहुचा कि पूगल राज्य दोषी था, जिसे दडित किया जाना आवश्यक था।

सर चार्ल्स मेटकाल्फ ने विचार व्यक्त किया कि इस प्रकार के आन्तरिक विवाद म राजा की सहायता करने के लिए ब्रिटिश शासन सैनिक सहायता देने के लिए बाध्य नहीं था, वह केवल शान्तिपूर्वक समझौता कराने के लिए मध्यस्थता कर सकते थे। उसने फिर जोर देकर लिखा कि ब्रिटिश शासन बीकानेर के राजा को कोई ऐसा अधिकार नही दे सकता, जिसका अनुचित लाभ उठाकर वह भविष्य म स्वेच्छा से ब्रिटिश सेना की सहायता से अपनी प्रजा पर अधिकार जमा सके।

परन्तु ब्रिटिश शासन का यह दावा तब झूठा साबित हुआ जब उनकी सेना ने सन् 1883 ई म बीदासर पर आक्रमण मे बीकानेर की सहायता करके वहा के गढ को अत्यन्त क्षति पहुचाई और वहां के ठाकुर को पहले बीकानेर के समक्ष आत्मसमर्पण करने के लिए विवश किया, फिर ब्रिटिश प्रभुसत्ता के सामने झुकने के लिए कहा। परन्तु यह घटना 50 वर्ष बाद की थी, तब तक ब्रिटिश शासन अपनी चरम सीमा पर पहुच गया था।

उपरोक्त सारे सन्दर्भ मे महाराजा रतनसिंह की मानसिक प्रक्रिया का विश्लेपण करना आवश्यक है। अगर वह यह समझते थे कि पूगल राज्य बीकानेर के अधीन था और उसी का एक भाग था, तो उन्हे बार-बार या एक बार भी पूगल के विरुद्ध ब्रिटिश शासन से सहायता के लिए पुकार करने की क्या आवश्यकता थी? सन् 1818 ई की सन्धि केवल उन स्वतन्त्र राज्यो पर लागू होती थी, जिन्होने उसकी पालना के लिए सन्धि पर हस्ताक्षर किए थे। पूगल राज्य के साथ ऐसी कोई सन्धि नही हुई थी। इसलिए बीकानेर राज्य द्वारा इस सन्धि के अन्तर्गत पूगल राज्य के विरुद्ध सैनिक सहायता मागने मे क्या तर्क था? ब्रिटिश शासन ने सैनिक सहायता नही देकर अपनी ओर स सन्धि की पालना की। वास्तव मे बीकानेर की समस्या यह थी कि वह निश्चित तौर पर यह नही कह सकता था कि पूगल उनके राज्य का भाग था। चाहे निजी स्तर पर वह कुछ भी दावा करते रहे हो, परन्तु ऐसा दावा ब्रिटिश विश्लेपण और न्याय व्यवस्था के आगे कहा ठहरता? उनके मानसिक विचार मे पूगल उस समय तक बीकानेर राज्य के अधीन नही था, वह एक स्वतन्त्र इकाई थी। इसलिए अगर उन्होने अपनी सेना भेजकर एक स्वतन्त्र राज्य की सीमा का उल्लघन करने का दुस्साहस किया तो उसके परिणाम बीकानेर राज्य के हित म नही होगे। अभी बासमपीर वाली शिकायत भी उनके विरुद्ध पड रही थी, वह उसके साथ एक और शिकायत जुडवा कर अपने दोप को और ज्यादा बढाना नही चाहते थे। ब्रिटिश शासन को उनकी यही पुकार थी कि पूगल की सीमा का उल्लघन उनकी सेना करे, वह स्वय की सेना से ऐसा करवाने से पीछे हट रहे थे।

ब्रिटिश रेजिडेन्ट के समक्ष राव रामसिंह के यह प्रस्ताव कि वह अपने राज्य मे बीकानेर की सेना रखने का विरोध करेंगे और पूगल के क्षेत्र मे बीकानेर के थाने स्थापित करने के लिए सहमत नही होगे, पूगल राज्य के स्वतन्त्र होने के द्योतक थे। फिर उनका उन्हे यह सदेश भेजना कि अगर ब्रिटिश शासन ने बीकानेर को उनके राज्य मे हस्तक्षेप करने से नही रोका तो उनके लिए अपने पैतृक राज्य जैसलमेर म विलय के सिवाय और कोई विकल्प नही रहेगा। इन ठोस प्रस्तावो और दावो से ब्रिटिश शासन भी आशकित और विचलित हुआ कि क्या पूगल राज्य वास्तव म बीकानर के अधीन नही था और क्या बीकानेर का उस पर प्रभुसत्ता का दावा उन्हे भ्रान्ति मे डाल रहा था? या उन्होने पूगल राज्य से सन् 1818 ई म अलग सन्धि नही करके एक स्वतन्त्र राज्य के अधिकारो पर कुठाराघात तो नही किया था? अब बारह वर्षों बाद म पूगल की स्वतन्त्रता का दावा सही माने जाने से ब्रिटिश शासन की छवि बिगडती थी और उनकी साख भी घटती थी। मेरे विचार म चाहे ब्रिटिश शासन की निगाह म पूगल राज्य स्वतन्त्र नही हो, परन्तु वह इसको गम्भीर विवाद का विपय समझने लग गये थे इसलिए उन्होने सैनिक सहायता भेजकर पूगल की सीमा का उल्लघन करने की पहल स्वय नही करनी चाही। उन्होने अन्त मे यह निर्णय करके अपने आप को इस पेचीदी स्थिति से उबारा कि पूगल का मामला बीकानेर का आन्तरिक विपय था, इसके निपटारे के लिए सन्धि का सहारा लेने की आवश्यकता नही थी। अगर यह समाधान इतना ही सरल था तो पूगल को ठौर ठिकाने लगाने मे बीकानेर क्यो हिचकिचा रहा था?

बीकानर राज्य के बहावलपुर और जैसलमेर राज्यों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध नही थे। ठाकुर वैरीसालसिंह की इन दोनो राज्यो की हाल की यात्रा से वह आशकित थे कि कही

उनके विरुद्ध कोई षड्यन्त्र तो नही रचा जा रहा था। उनके विचार म ठाकुर बैरीसालसिंह अत्यन्त चतुर व्यक्ति था जिसके इरादो के बारे म अनुमान लगाना उनके लिए कठिन था। उनके दिमाग पर बार-बार बासनपीर की पराजय हावी होती थी, वह पूगल पर अकेले आक्रमण करके उसकी पुनरावृत्ति नही होना देना चाहते थे। उन्ह भय था कि जिन कारणो स उन्होने पूगल पर आक्रमण करने की योजना बनाई थी, उन्ही उलटे कारणो से जैसलमेर और बहावलपुर भी पूगल की सहायता करने के लिए हस्तक्षेप कर सकते थे। इसलिए वह ब्रिटिश शासन को पूगल पर आक्रमण करने से पहले विश्वास में लेना चाहते थे। उनकी सहायता के बिना उनकी पराजय निश्चित थी, उनके स्वय के प्रमुख सरदार भी उनके साथ नही थे।

महाराजा रतनसिंह चतुर शासक थे। एक बार जब ब्रिटिश शासन ने पूगल की समस्या पर बीकानेर राज्य की आन्तरिक समस्या होने की मुहर लगा दी, अब जैसलमेर या बहावलपुर के हस्तक्षेप करने पर ब्रिटिश शासन उनके विरुद्ध उनको सैनिक सहायता करने के लिए बाध्य था। क्योकि ऐसी स्थिति मे उनका (जैसलमेर, बहावलपुर) पूगल की सहायतार्थ आने का मतलब बीकानेर राज्य की प्रभुसत्ता को चुनौती देना होगा और उनके द्वारा उसकी सीमा का उल्लघन होता।

इधर पूगल के प्रति बीकानेर की स्थिति तनावपूर्ण हो रही थी, उधर महाराजा रतनसिंह ने कुछ भाटियो को बहला फुसला कर अपने पक्ष में कर लिया था। वह बीकानेर के अधीन जागीरदार होने के कारण पूगल का खुलकर समर्थन नही कर सकते थे। इसी नीति के अनुरूप उन्होने मोहनलाल के नतृत्व म पूगल पर आक्रमण करने के लिए जयमलसर के रास्ते सना भेजी। जयमलसर बीकानेर के अधीन था, इसलिए उसने बीकानेर की सेना को अपने यहा स निर्विरोध जाने दिया वह उसके लिए बाधा नहीं बना। जयमलसर मे आगे जब यह सेना भानीपुरा पहुची तो वहा पूगल और ठाकुर बैरीसालसिंह की सयुक्त सेना ने उन्हें आगे बढ़ने से रोका। उस समय भानीपुरा और रणधीसर गाव बीकानेर के अधीन नहीं थे। इस युद्ध म भानीपुरे के ठाकुर रूपसिंह भाटी और रणधीसर के भाटी ठाकुर काम आए। मोहन लाल को बीकानेर की पराजित सेना को लेकर वापिस बीकानेर लौटना पडा।

अब बीकानेर ने मगरासर के ठाकुर हरनाथसिंह, हुकमचन्द सुराणा और जालिमचन्द के नेतृत्व म सेना भेजकर केला गाव के रास्ते पूगल पर दूसरा आक्रमण किया। मोतीगढ के प्रेमसिंह सिंहराव के नेतृत्व मे पूगल की सेना ने केलां और मोतीगढ गांवो के बीच म बीकानेर की सेना पर आक्रमण किया। कडे सघर्ष के पश्चात वीर सिंहरावो ने बीकानेर की सेना को पीछे मुडने के लिए विवश किया। भानीपुर के बाद म यह बीकानेर की सेना की भाटियो के विरुद्ध दूसरी पराजय थी। भाटियों की इन विजयो का कारण स्पष्ट था। भाटी अपनी मातृभूमि और पूर्वजों की धरती के लिए बलिदान दे रहे थे, बीकानेर के सैनिक और सेना नायक अपने वेतन के लिए और जागीरो को कायम रखने के लिए लड़ रहे थे।

दो बार पराजित और पिटी हुई बीकानेर की सेना का तीसरे आक्रमण के लिए नेतृत्व स्वय महाराजा रतनसिंह ने सम्भाला। इससे जहां सेना का मनोबल ऊचा हुआ वहा वह अधिक अनुशासित भी हुई। महाराजा के साथ हरनाथसिंह मगरासर, पृथ्वीसिंह चूरू,

हुकमचन्द सुराणा और मूलचन्द वैद थे। इस बार आक्रमण कानासर और केला गावो के मार्ग से किया गया। ठाकुर पेमसिंह सिहराव मोतीगढ ने फिर इस सेना का केला गाव के पास सामना किया। इस संघर्ष मे पेमसिंह सिहराव मारे गए। महाराजा रतनसिंह का विचार था कि उनके स्वय के सेना का नेतृत्व सम्भालने से भाटियो का मनोबल गिर जायेगा और राव रामसिंह सन्धि का प्रस्ताव भेजकर ठाकुर बैरीसालसिंह के साथ आत्म-समर्पण कर देंगे। भाटियो ने लडकर मरना सीखा था, उनके संघर्ष मे उत्साह को देखकर और दृढ संकल्प को पहचान कर महाराजा रतनसिंह एक बारगी घबरा गए। उन्होंने बीकानेर कुमुक भेजने के लिए संदेशा भेजा और स्वय के द्वारा पूगल पर आक्रमण किए जाने की सूचना रेजिडेन्ट के पास दिल्ली भी भिजवाई।

बीकानेर की सेना के सत्तासर पहुचने हो ठाकुर बैरीसालसिंह का साहस चुक गया। उन्हे मृत्यु सिर पर मडराती हुई दिखी। वह राव रामसिंह को उनके भाग्य पर छोडकर पूगल से जैसलमेर भाग गए। इस सारे नाटक के विवादस्पद नायक वे ही थे, इसलिए उन्हें भय था कि या तो उन्हे युद्ध म मरना होगा या उन्हे मृत्यु दण्ड दिया जायेगा। उनसे जीवन का मोह नही छूटा, वह अभी जीवित रहकर जीवन को और भोगना चाहते थे। उन्होने यह बिलकुल ध्यान नही किया कि पूगल के राव द्वारा उन्ह शरण देन के कारण ही उन पर यह आक्रमण हुआ था, वह उनके साले थे, इसलिए वह उन्ह बीकानेर को कैसे सौंपते। कायर अपने प्राण लेकर चला गया, पूगल ने उनके खातिर सजा भुगती।

महाराजा रतनसिंह की आशाओ पर राव रामसिंह ने पानी फेर दिया। उन्होने आत्मसमर्पण करने के स्थान पर अपने पूर्वजो, राव सुदरसेन और राव अमरसिंह की तरह युद्ध करने के विकल्प को स्वीकार करके महाराजा को चुनौती दी। तब तक बीकानेर से वांछित कुमुक भी पूगल पहुच चुकी थी। महाराजा की सेना के साथ कडा संघर्ष करते हुए राव रामसिंह 'धूम लका' के पीछे मारे गए, उनके साथ म उसी स्थान पर आडू पडिहार ने भी वीरगति पाई। कायर ठाकुर बैरीसालसिंह राठौड अपने पूर्वजो, अजबसिंह और भीमसिंह, की तरह युद्ध के मैदान से भाग गया था। उसने जैसलमेर जा कर फिर उन्ही भाटियो की शरण ली। राव रामसिंह ने सन् 1830 ई मे अपनी धरती मे उत्सर्ग किया। वह राव केलण और चाचगदेव की सन्तान थे, उनका रक्त उनकी रगो मे बह रहा था। वह सदा के लिए अपनी पूगल की धरती माता की गोद मे समा गए।

राव रामसिंह तक पूगल के अठारह राव हुए थे, यह सातवें राव थे जो युद्ध भूमि म मारे गए थे। राव सुदरसेन व राव अमरसिंह सहित यह तीसरे राव थे जिन्हे बीकानेर के राजाओ, महाराजाओ ने युद्ध मे मारा था। बीकानेर के महाराजा रतनसिंह तक कुल 18 शासक हुए थे, जिनमे से केवल तीन, राव लूणकरण, राव जैतसिंह और राजा दलपतसिंह युद्ध म मारे गए थे।

राव रामसिंह की बीकी राठोड रानी, ठाकुर बैरीसालसिंह की बहन, रथ म चढकर महाराजा रतनसिंह के पास आई और उन्ह पूगल की प्रजा को लूटने या कष्ट देने के विरुद्ध चेतावनी दी, अन्यथा उन्ह सती का श्राप भोगना पडेगा। वह राव रामसिंह के साथ पूगल म सती हो गई। आडू पडिहार का दाह सस्कार भी पूगल के राजघराने के श्मशान म

करके उसे सम्मान दिया गया। आडू पडिहार का चबूतरा अब भी वहां है, यह राव करणीसिंह की छतरी से दाहिनी ओर और ठाकुर शिवनाथसिंह की छतरी के बायें ओर हैं। कानजी का पुत्र दीपसिंह पडिहार इन्ही आडू पडिहार का वशज है। इन पडिहारो के श्मशान पूगल के गढ के पश्चिम की ओर पेम जी की खेजडी के पास हैं, राजघराने के श्मशान गढ के पूर्व म हैं। राव रामसिंह की सन् 1830 ई (वि स 1887) मे हुई मृत्यु का शिलालेख सती स्थल की छतरी पर अकित है। राव रामसिंह के शौर्यपूर्ण बलिदान का गायन प्रत्येक वर्ष दशहरे के उत्सव मे चारणों द्वारा श्रद्धापूर्वक किया जाता है।

बीकानेर के साथ हुए सघर्ष मे जोधासर के मेघराज सिहराव बुरी तरह से घायल हो गए थे, फिर भी वह स्वामी भक्त राजकुमार रणजीतसिंह और करणीसिंह को पूगल से सुरक्षित निकाल कर जैसलमेर ले गए। उन्होने उन्हे बीकानेर के महाराजा के निष्ठुर हाथो मे पडने से बचा लिया था। यह मेघराज जोधासर के ठाकुर लाधूसिंह के पिता थे। दोनो राजकुमार जैसलमेर तब तक रहे जब तक महारावल गजसिंह की सहायता से उन्हे पूगल वापिस नहीं मिल गई।

राव रामसिंह, पूगल के तीसरे राव थे, जिन्हे बीकानेर के राजाओ ने मारा था। राव सुदरसेन, सन् 1665 ई मे, राजा करणसिंह द्वारा मारे गए, राव अमरसिंह, सन् 1783 ई मे, महाराजा गजसिंह द्वारा मारे गए, और अब राव रामसिंह सन् 1830 ई मे, महाराजा रतनसिंह द्वारा मारे गए थे।

रक्त का रिश्ता सब रिश्तो नातो मे सर्वोपरी होता है। सन् 1783 मे राजकुमार अभयसिंह और भोपालसिंह को और सन् 1830 ई मे राजकुमार रणजीतसिंह और करणीसिंह को जैसलमेर के महारावल मूलराज और गजसिंह ने उनकी पैतृक भूमि मे शरण दी। राजकुमार अभयसिंह का विवाह सन् 1761 ई मे रावतसर के रावत आनन्दसिंह की पुत्री से हुआ था, उनके साले अमरसिंह नेतासर जेल तोडकर पूगल की शरण म आए थे। यह घटना राव अमरसिंह की मृत्यु का एक कारण बनी। राजकुमार रामसिंह और अनोपसिंह का विवाह महाजन के ठाकुर शेरसिंह की पुत्रियो से हुआ था। इनके साले बैरीसालसिंह ने बीकानेर स बगावत करके पूगल मे शरण ली थी। यही राव रामसिंह की मृत्यु के एक मात्र कारण बने। दोनो बार, बीकानेर के महाराजा गजसिंह और रतनसिंह ने विद्रोहियो को उन्हे सौंपने के लिए पूगल के रावो से आग्रह किया था। पूगल ने अपनी मर्यादा और भाटियो की परम्परा को निभाते हुए शरण म आए हुए सम्बधी की रक्षा का धर्म निभाया। अपन धर्म और वचन का निर्वाह करते हुए राव अमरसिंह और रामसिंह ने केवल अपने प्राणों का बलिदान ही नही दिया, साथ मे उन्होंने अपना राज्य भी खोया। दादा और पोता दोनो, शरणागतो की रक्षा करने हुए मारे गए, शरणार्थी राठौड जिन्दे रह कर भोग विलास करते रहे।

जैसलमेर सदैव पूगल के केलणो के लिए अपना दूसरा घर रहा। जब भी केलणो ने अपना घर-बार या राज्य खोया, पैतृक जैसलमेर ने उन्हें गले लगाकर सरक्षण दिया, उन्हें पोषण दिया और खोया हुआ घर बार और राज्य उन्हें वापिस दिलाया। पूगल के राव जैसलमेर के आदेशो की पालना म उसके लिए मालाणी, फलौदी, मन्डोर, अमरकोट आदि

स्थानो मे युद्धो मे सफलता पूर्वक लडे और विजयी हुए। पूगल ने रावल सबलसिंह के आग्रह पर रावल रामचन्द्र को बसाने के लिए पूगल का आधा राज्य उन्हे राजी खुशी दे दिया था। जैसलमेर हर बार पूगल की पुकार पर सहायता के लिए दौड़ा आया। जैसलमेर की सेनाओ ने नागौर, कोडमदेसर, पूगल, देरावर, बीकमपुर और अन्य स्थानो के युद्धो मे पूगल की अचूक सहायता की। जैसलमेर ने राव चून्डा के वध मे राव केलण की सहायता की, राव बीका के किले को कोडमदेसर से उखाडने मे राव शेखा की सहायता की, राव कान्हा को मुलतान की कैद से छुड़वाया, राव गणेशदास को पूगल वापिस दिलवाई। जैसलमेर और पूगल के हित एक दूसरे के पोषक, सहायक और समर्थक थे, इनके हितो का कही भी कभी भी टकराव नही हुआ। पूगल सदैव अपने से वरिष्ठ भाई जैसलमेर के सरक्षण की छत्र छाया में रहा। जैसलमेर ने कभी अन्यो के द्वारा पूगल का अहित नही सहा।

राव रामसिंह की मृत्यु के पश्चात् बीकानेर राज्य ने पूगल क्षेत्र मे अपने थाने स्थापित किए और पूगल के गढ में अपनी सेना की सशक्त टुकडी रखी। इन्ही दोनो बातो का विरोध राव रामसिंह ब्रिटिश रेजिडेन्ट से करते आए थे। हुआ वही जिसे वह नही चाहते थे।

बीकानेर के इतिहासकारो का यह कथन है कि राव रामसिंह युद्ध मे नही मारे गए थे, वह युद्ध के बाद मे जीवित रहे और बीकानेर राज्य ने निर्वाह के लिए उन्हे गुढा गाव की जागीर प्रदान की थी। उन्होने आगे लिखा कि राव रामसिंह द्वारा महाराजा रतनसिंह को दस हजार रुपये की पेशकश भेंट किए जाने पर उन्होने राव को पूगल लौटा दी और साथ मे बाप गाव की जागीर भी दे दी। वास्तव मे बाप गाव कभी भी बीकानेर के अधीन नही रहा, यह हमेशा जैसलमेर राज्य का भाग था। इसलिए एक राज्य द्वारा दूसरे राज्य के किसी गांव का अन्य को जागीर के रूप मे दिए जाने का प्रश्न ही मिथ्या था। इन्ही इतिहासकारों ने आगे लिखा है कि सन् 1830 ई म बीकानेर ने सादूलसिंह को पूगल का राव बनाया एव उन्हे बाप गांव की जागीर भी दी। उनकी घोडा चाकरी की सख्या भी 101 से घटाकर 41 करदी गई। घोडा चाकरी घटाने का प्रश्न जब उठता था तब राव रामसिंह बीकानेर को इस प्रकार की सेवा पहले से प्रदान करते आए हो, परन्तु राव रामसिंह या उनसे पहले के किसी राव ने बीकानेर राज्य को कोई ऐसी सेवा नही दी थी। यह सब बातें पूगल को नीचा दिखाने के लिए लिखवाई गईं ताकि बीकानेर का गौरव ऊपर उठ सके। वह जोधपुर या जैसलमेर के विरुद्ध ऐसी मिथ्या करने का साहस नही जुटा पाए, केवल पूगल ही एक ऐसा पराजित राज्य था जिसके लिए बीकानेर अपनी मनमानी करके सतोष कर सकता था। इस तथ्य को कैसे नकारा जाए कि राव रामसिंह की रानी बीकीजी उनके साथ सती हुई थी, यह प्रमाण तो सती स्थल पर उपलब्ध शिलालेख मे भी है। इस लिए राव रामसिंह का जीवित बचना और उन्हे जागीर दिया जाना सब मनगढत झूठ है, यह राठौड सती (महाजन की बेटी) के प्रति निरादर है। उस समय तक पूगल ने कभी भी बीकानेर को कोई पेशकश भेंट नही की थी, यहा तक की पूगल ने कभी बीकानेर के राजा को नजर नही की थी और पूगल का कोई राव बीकानेर के दशहरा के दरबार मे उपस्थित नही हुआ था। बीकानेर ने वास्तव म पूगल के इतिहास को बिगाड कर स्वय के इतिहास को दूषित किया है।

अध्याय–सत्ताईस

राव सादूलसिंह
सन् 1830-1837 ई.

राव रामसिंह की मृत्यु के कुछ समय पश्चात् महाराजा रतनसिंह ने राव रामसिंह के सबसे छोटे भाई सादूलसिंह को पूगल का राव बनाया। इसी प्रकार सन् 1790 ई. मे महाराजा गजसिंह ने राव अभयसिंह के सगे चाचा जुझारसिंह के पुत्र उज्जोनसिंह को राव बनाया था। दोनो बार पूगल के उत्तराधिकारी राजकुमार जीवित थे। क्योंकि राव रामसिंह और अनोपसिंह दोनों महाजन के ठाकुर बैरीसालसिंह के बहनोई थे, इसलिए महाराजा ने अनोपसिंह को राव नही बनाकर, उनके छोटे भाई सादूलसिंह को सन् 1830 ई मे राव बना दिया। अनोपसिंह सत्तासर और बकराला मे जागीरदार थे और सादूलसिंह करणीसर और बराला के जागीरदार थे। सादूलसिंह सीधे सादे व्यक्ति थे, बीकानेर जो चाहता और जैसा चाहता वैसा काम उनसे करवा लेता था। वह किसी बात मे बीकानेर का विरोध करने योग्य नही थे। महाराजा रतनसिंह ने अपनी इच्छानुसार केलणो को जागीरें दी और उनसे छीनी। उन्होने राव सादूलसिंह की इसके लिए कभी अनुमति या सहमति नही ली। राव सादूलसिंह के सात साल, सन् 1830 ई से 1837 ई, के समय मे बीकानेर मे महाराजा रतनसिंह (सन् 1828-1851 ई) थे और जैसलमेर मे महारावल गजसिंह (सन् 1820-1845 ई) थे। सादूलसिंह केवल नाममात्र मे राव थे, प्रजा उनके राजतिलक के समय उपस्थित नही हुई और बाद मे भी प्रजा से उन्हे कोई सहयोग नही मिला। केवल जोधासर गांव के सोलकी मुट्टों ने, जिन्हें उन्होने प्रधान बनाया था, उनका साथ दिया। सन् 1837 ई मे जब रणजीतसिह राव बने तब उन्होंने मुट्टा सोलकियों से जोधासर लेकर इसे मेघराज सिहराव को प्रदान किया।

राव सादूलसिंह को पूगल की जनता और प्रजा का सहयोग व समर्थन प्राप्त नही था। सारे खान, प्रधान, केलण और प्रमुख भाटी इनके विरुद्ध थे। पूगल की राजगद्दी उनके लिए बीकानेर की ओर से एक सजा थी, जिसे वह उसकी सहायता और समर्थन से चुपचाप भोग रहे थे।

भादरा से निष्कासित किए हुए प्रतापसिंह और लक्ष्मणसिंह हिसार क्षेत्र में रहते हुए बीकानेर राज्य मे डाके डालते थे और प्रजा को लूटते थे। दिनांक 3 नवम्बर, 1830 ई को, जब राव सादूलसिंह पूगल मे विद्यमान थे, इन लोगो ने ब्रिटिश क्षेत्र से पूगल पर छापा मारा। पूगल के लोगों ने इन छापामारो का डटकर विरोध किया जिसके फलस्वरूप प्रताप सिंह अपने पाच अन्य साथियो सहित मारा गया।

बीकानेर द्वारा सन् 1829 ई मे जैसलमेर पर बासनपीर मे किए गए आक्रमण की

महारावल गजसिंह ने अनदेखी नहीं की थी। उनके लिए वासनपीर की घटना काफी महत्व पूर्ण थी। सन् 1818 ई की सन्धि की शर्तों का न्यायिक दृष्टिकोण अपनाते हुए महारावल गजसिंह ने बीकानेर के विरुद्ध जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिए शिकायत की। इस आक्रमण की घटना की शिकायत को ब्रिटिश शासन ने अत्यन्त गम्भीरता से लिया। बीकानेर के दिल्ली स्थित वकील से उन्होंने पूछताछ की। बीकानेर की बैंग भी वासनपीर में काफी दुर्गति हो चुकी थी, परन्तु यह तो जैसलमेर की सीमा का उनके द्वारा उल्लंघन करने का *परिणाम था। बीकानेर ने जैसलमेर की सीमा पार करके सैनिक अभियान करने* मे पहल की थी, जिससे सन्धि की मूल शर्तें भंग हुई। इस सन्धि पर जैसलमेर और बीकानेर दोनो राज्यो के प्रतिनिधियो के हस्ताक्षर थे इसलिए दोना पर सन्धि की शर्तें एकरूपता से लागू होती थी। जैसलमेर की शिकायत थी कि बीकानेर की सेना ने न केवल उसकी सीमा का उल्लंघन किया था वह लूटपाट करती हुई उनके क्षेत्र के काफी अन्दर पहुच गई थी। जैसलमेर की सेना ने विवश हो कर अपने बचाव के लिए उसे वासनपीर के पास रोका जहां से हारी मारी वह सेना वापिस बीकानेर लौटी।

इस गम्भीर शिकायत की जांच के लिए सन् 1835 ई मे मिस्टर एडवर्ड ट्रेविलियन आए। उन्होंने जैसलमेर और बीकानेर के शासको की बैठक का आयोजन, उनकी समान सीमा के पास स्थित गडियाला गाव मे किया। महारावल गजसिंह गिराजसर म ठहरे और महाराजा रतनसिंह गडियाला आ कर रुके। मिस्टर ट्रेविलियन ने गडियाला गाव के पास धन्नी तलाई मे अपना कैम्प लगाया। उन्होंने सारे प्रकरण की विस्तार से जांच की शिकायत के प्रत्येक बिन्दु पर दोनों पक्षो से अलग अलग पूछताछ की। वह इस स्पष्ट निष्कर्ष पर पहुचे कि बीकानेर की सेना ने पहले जैसलमेर की सीमा पार करके उस पर आक्रमण किया था। जैसलमेर की सेना ने अपने बचाव मे कार्यवाही करते हुए वासनपीर के पास अपने क्षेत्र मे बीकानेर की सेना पर आक्रमण किया था। बीकानेर की सेना उनसे पराजित हो कर लौट गई। उन्होंने यह भी कहा कि अगर बीकानेर को जैसलमेर के विरुद्ध कोई शिकायत थी तो वह ब्रिटिश शासन से इसका समाधान कराने के लिए निवेदन करते, उन्होंने अपने आप निपटने का प्रयास करके सन्धि की शर्तों का उल्लंघन किया। बीकानेर स्पष्ट तौर पर दोषी घोषित किया गया। जैसलमेर और बीकानेर के आपस के अन्य विवादग्रस्त मामले भी इस बैठक में सुलझाये गए।

मिस्टर एडवर्ड ट्रेविलियन ने बीकानेर को सन्धि की शर्तों का उल्लंघन करने के लिए दोषी पाये जाने पर उस पर ढाई लाख रुपये का जुर्माना किया और आदेश दिया कि यह रकम बीकानेर राज्य जैसलमेर के महारावल को वही चुकायेगा। इस फैसले ने महाराजा रतनसिंह के मान सम्मान पर पानी फेर दिया। उन्हे अफसोस इस बात का था कि यह *रकम उन्हे हाथ पसारकर जैसलमेर को देनी होगी, अगर यह जुर्माना उन्हे ब्रिटिश सरकार* को देना होता तो कोई खास अपमान की बात नही थी। इस सारी विपदा के लिए सन् 1820 ई की मेवाड की उस तकरार को वह दोष दे रहे थे जहा उसके बाद मे जैसलमेर ने सयम और समझदारी से काम लिया था, वहा बीकानेर एक के बाद दूसरा दुस्साहस करता ही गया। इसी कारण से आज वह सार्वजनिक रूप से सिर नीचा किए हुए थे।

महारावल गजसिंह एक समझदार और अनुभवी शासक थे, उन्होंने महाराजा रतनसिंह की मानसिक व्यथा को पहचान लिया। वह अपने एक साथी शासक और सम्बन्धी को इतना अपमानित नहीं करना चाहते थे कि उस अपमान की अग्नि मे जलकर वह समाप्त हो जाये। इसके विपरीत महाराजा रतनसिंह ने वह सभी कार्य किए जिन्हे वह कर सकते थे। उन्होंने जैसलमेर पर दो बार आक्रमण किए और पूगल के राव रामसिंह को अकारण मारा। महारावल गजसिंह ने एक बार फिर अपनी समझदारी का परिचय देते हुए मिस्टर ट्रैविलियन से निवेदन किया कि वह बीकानेर राज्य से जुर्माना वसूल करने के इच्छुक नहीं थे, वह इस जुर्माने के बदले मे पूगल का राज्य उसके वास्तविक उत्तराधिकारी राजकुमार रणजीतसिंह को सौंप दें। पूगल के दोनो राजकुमार उनके संरक्षण मे थे। मिस्टर ट्रैविलियन ने इस न्यायोचित सुझाव को सहर्ष मान लिया और महाराजा रतनसिंह को आदेश दिए कि वह पूगल तुरन्त राजकुमार रणजीतसिंह को देदें। महारावल के सुझाव ने महाराजा को उन्हें जुर्माना चुकाने की अपमान जनक स्थिति से उबारा और भाटियो को पूगल वापिस दिलाई। इसे अगर सही प्रकार से देखें तो महाराजा रतनसिंह का दोहरा अपमान हुआ, भाटियो ने जुर्माने के बदले पूगल की भूमि प्राप्त कर ली और पूगल की राजगद्दी उपहार मे ले ली। अब राव रामसिंह का बलिदान व्यर्थ नहीं गया।

इससे एक बार पहले भी, सन् 1820 ई मे, मिस्टर ट्रैविलियन बीकानेर और पजाब की सीमा सम्बन्धी विवाद सुलझाने आए थे। उचित जाच के बाद उन्होंने पाया था कि बीकानेर राज्य ने पजाब के टीबी और बेनीवाल क्षेत्र के चालीस गाव नाजायज दबा रखे थे। यह गांव बीकानेर को बाद मे पजाब को लौटाने पडे। बाद मे सन् 1861 ई मे यही गाव बीकानेर को, सन् 1857 ई मे ब्रिटिश शासन की महत्वपूर्ण सहायता करने के लिए, पुरस्कार के रूप मे वापिस दिए गए।

इन सारे कुकृत्यो के कारण महाराजा रतनसिंह जीवित मौत जी रहे थे। इन सारे अपमानो, निरादरो और बदनामी से उन्हें सन् 1851 ई मे मुक्ति और मोक्ष मिला, ईश्वर ने उन्हें शान्ति प्रदान की।

महाराजा रतनसिंह राव रामसिंह की मृत्यु का प्रायश्चित्त अपने जीवन भर करते रहे। अगर उन्हें पूगल उसके शासको को लौटानी ही थी तो उन्होने राव को मारने का अपराध नाहक किया। वह अपमान का घूट पी कर रह गये। किस मुह से वह पूगल रणजीतसिंह को लौटायेंगे, और राव सादूलसिंह को, जिन्हे उन्होने ही पूगल का राव बनाया था, कैसे पूगल की गद्दी छोडने के लिए कहेगे। इसी असमजस मे उन्होंने दो साल निकाल दिए। वह न तो राव सादूलसिंह से गद्दी छोडने का कह सके और न ही वह अपने अहकार को समेट कर रणजीतसिंह को राव का पद ग्रहण करने के लिए कह सकते थे। आखिर उन्हें ब्रिटिश शासन से सकेत मिला कि अगर वह पूगल लौटाने मे और अधिक विलम्ब करेंगे तो उन्हें न केवल पूगल का राज्य ही लौटाना होगा, विलम्ब के लिए दण्ड स्वरूप ढाई लाख रुपये भी जैसलमेर को चुकाने पडेंगे। तब वहीं जाकर सन् 1837 ई मे उन्होने राव सादूलसिंह को पूगल की गद्दी त्यागने के लिए कहा और राजकुमार रणजीतसिंह को पूगल लौटाया। लगभग ऐसी ही परिस्थितियो मे, सन् 1793 ई में, महाराजा सूरतसिंह ने राव उज्जीणसिंह से पूगल

लेकर राव अभयसिंह को लौटाई थी। दोनो बार पूगल के रावो ने बलि पर चढकर बीकानेर से पूगल वापिस ली। राजगद्दी त्याग कर ठाकुर सादूलसिंह अपने पैतृक गांव करणीसर लौट गए और राव रणजीतसिंह पूगल की गद्दी पर बैठे। उस वर्ष, सन् 1837 ई. (वि. स. 1894), का पूगल का दशहरा बड़े धूमधाम और उत्साह से मनाया गया। एक बार फिर अन्याय पर न्याय की विजय हुई।

सन् 1707 ई मे बादशाह औरगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल साम्राज्य बिखर गया था। मुगल दरबार मे राजा महाराजाओ को सेवा करने का अवसर मिलता था, जिसके बदले मे उन्हे वेतन और अन्य आर्थिक सुविधाए दी जाती थी। युद्ध के अभियानो में मुगल सेना के साथ जाने से उन्हे लूटपाट का निश्चित भाग (प्रतिशत) प्राप्त होता था। मुगल साम्राज्य के पतन के बाद मे राजा लोग अपनी राजधानियो में रहने लगे, उनके दिल्ली से सम्बन्धित वेतन और आय के स्रोत समाप्त हो गए थे। बीकानेर जैसे गरीब राज्य के आन्तरिक आय के साधन बहुत सीमित थे और उनका व्यय पहले जैसा रहने से आय से कही अधिक था। धीरे-धीरे महाराजा सुजानसिंह (सन् 1700-1736 ई) के शासनकाल से आय-व्यय का सन्तुलन बिगड़ता गया और बीकानेर एक ऐतिहासिक कगाल के रूप मे उभरने लगा।

बीकानेर के राजाओ का हाथ तग रहने से और धन की लालसा और लोभ अधिक होने से उनकी रुचि शासन व्यवस्था को सुधारने मे कम रहती थी और पेशकश ऐंठने मे ज्यादा। उनकी न्याय प्रणाली भी अर्थाभाव में डगमगा गई, धन के बदले में न्याय बिकने लगा था। धन अर्जित करने के अभियान मे इन्होंने हिन्दू, मुसलमान, भाई-सम्बन्धी, अपने-पराये का भेद भाव समाप्त कर दिया था। इन्होंने बीको, बीदावतों, बणीरोतों, कांधलों, किसी को नही बख्शा, भाटियो और मुसलमानों को क्षमा करने का प्रश्न ही नही था। केवल एक बिन्दु सराहनीय और ईमानदारी का था, धन के बदले कोई भी अपराध क्षमा होता था। यहां तक कि देशद्रोह भी अपराधी के धन से देश प्रेम मे बदल सकता था। न्याय का दान रकम के अनुपात मे होता था, जन हित मे नही। वह पूगल राज्य वाली बात नही थी कि उनके न्याय मे जनता की आस्था बनाए रखने के लिए राव ने अपने ही राज्य के दीवान या कामदार को सूली पर चढा दिया, चाहे उसके बदले मे उन्हें पूगल राज्य से वचित ही क्यो नही होना पडा हो।

बीकानेर के शासक कोई न कोई बहाना निकाल कर अपने अधीनस्थ जागीरदारो पर आक्रमण करने का नाटक रचते, उनके किलो की कई दिनो तक जोश खरोश से घेराबन्दी करते और आखिर में पेशकश प्राप्त करके उनके द्वारा पूर्व मे किए गए तथाकथित सब अपराध क्षमा कर देते थे। बीकानेर राज्य के सन् 1710 ई के बाद के राजाओ मे और वर्तमान के पुलिस राज के लक्ष्यो मे कोई अन्तर नही था। दोनो ही धन प्राप्ति को ध्येय बनाकर आगे की कार्य योजना बनाते थे। दोनो का रकम ऐंठने का एक समान तरीका यह था कि दोषी या निर्दोष को रकम ढीली करने के लिए विवश करना। बीकानेर राज्य के इतिहासकार पेशकश मे ली गई रकम का वर्णन करते नही अघाते जैसे यह कोई पुरस्कार हो। उन्हें धन से इतना मोह था कि घटनाए उनके लिए गौण थी, रकम कितनी प्राप्त की,

वह महत्वपूर्ण थी । जितनी ज्यादा पेशकश प्राप्त करते थे उसे लेने के लिए उसी अनुपात मे बल का प्रयोग भी होता था ।

महाराजा अनूपसिंह के समय म चुडेहर मे भाटियो से एक लाख रुपये की पेशकश लेने का इकरार हुआ था । महाराजा गजसिंह ने बीकमपुर के कुम्भकरण से दस हजार रुपये पेशकश के लिए, और उन्होने महाजन के ठाकुर भीमसिंह से गोकुल गज हाथी भेंट मे स्वीकार किया था । महाराजा सूरतसिंह ने सन् 1790 ई. म चूरू के ठाकुर स 95,000 रुपये लिए, राजपुर के भाटी शासक खान बहादुर स 20,000 रुपये लिए, बहावलपुर के नवाब बहावल खा से सन् 1801 ई मे दो लाख रुपये लिए चूरु ठाकुर से सन् 1803 ई में इक्कीस हजार रुपये लिए । वह कुछ मिथ्या प्रचार भी करते थे ताकि अन्य लोग पेशकश देते हुए शका नहीं करें । जैसे पूगल के राजकुमार अमरसिंह से पेशकश लेकर उन्हे उनके जीवित पिता राव दलकरण के स्थान पर राव बनाना या युद्ध मे पराजित राव रामसिंह से पेशकश लेकर उन्हे पूगल बहाल करना । यह मिथ्या प्रचार के उदाहरण हैं, जिससे अन्य जागीरदारो को पेशकश देने के लिए प्रभावित किया जाता था । सन् 1813 मे चूरू के ठाकुर शिवजीसिंह से फिर पच्चीस हजार रुपये लिए, सन् 1815 ई मे रावतसर के रावत बहादुरसिंह से बीस हजार रुपये पेशकश के ठहराये, आदि । इसके अलावा छोटे जागीरदारो को महाराजा हमेशा चूसते रहते थे । उनसे रकम ऐंठने के लिए उन्हे अमानवीय यातनाए दी जाती थीं । सन् 1829 ई म महाराजा रतनसिंह ने महाजन के ठाकुर वैरीसालसिंह स उन्हे महाजन वापिस देने के साठ हजार रुपये पेशकश के लिये ।

पूगल के रावो ने बीकानेर को किसी प्रकार की नजर, पेशकश या कर देने से इनकार कर दिया था । इसलिए उन्हें बार बार आक्रमण सहने पडे और अपने प्राण देने पडे । पूगल के रावो ने रावतसर के अमरसिंह और महाजन के वैरीसालसिंह को बीकानेर को नही सौपकर उनकी पेशकश मे धाटा किया, जिसके परिणामस्वरूप इन रावो को पेशकश के बदले परोक्ष रूप से मृत्यु दण्ड भुगतना पडा ।

बीकानेर के शासक अपने प्रमुखो जागीरदारो और भोगतो से श्रद्धानुसार पेशकश और नजराना समय कुसमय लेते रहत थे । इन दाताओ के साधन सीमित थे और एक बार रकम चुकाने के बाद मे वह अन्तिम किश्त नही होती थी, अगली किश्त के लिए उन्हें चेतावनी किसी समय पहुच सकती थी । रकम नही चुकाने पर जागीरें जब्त करने या आक्रमण करने की नौबत आती थी । इसलिए प्रत्येक प्रमुख, जागीरदार या भोगता एक किश्त चुकाने के बाद दूसरी के लिए धन सचय करने मे लग जाता था ।

ब्राह्मणो ने अपने आप को राजपूतो के गुरु पद पर होने के कारण, महाजनो ने व्यवसायी होने के कारण, अनुसूचित जाति और जन जातियो ने शूद्र होने के कारण, इन सब ने महाराजा से करो मे छूट लेली थी । तेली, लुहार, खाती, माली आदि श्रेणी माफीदार होने के कारण कर से छूट गये थे । नाई, कोटवाल, ढोली, चारण आदि एक विशेष श्रेणी मे होने से कर स मुक्त रखे गए । अब केवल काश्तकार, जाट और बिश्नोई, रह गए थे जिनसे सभी प्रकार के कर, लगान, भूगा, बटाई, बेगार और नजरें ली जाने लगी । जैसे जैसे राजाओ की आर्थिक माग बढती गई वैसे वैसे उन पर कर का भार बढता गया । कुछ वर्षों बाद मे कर और भूमि के लगान

की दरें मनमाने ढंग से बढ़ा दी जाती थी। अकाल और अभाव के समय कोई छूट नही थी। रकम वसूली के लिए तकाजे किए जाते, काश्तकारों को डराया धमकाया जाता, उनकी दशा असहायों जैसी थी। जाटों और विश्नोइयों को गावों मे बेइज्जत किया जाता था। दादा, बेटों और पोतों की तीन पीढियों को एक साथ अमानवीय यातनाएं दी जाती थी। उन्हें सरे आम गाव की गवाड में बेरहमी से पीटा जाता था। कपडे उतार कर गोडा लकडी लगाकर उन्हें तपती रेत पर पटक दिया जाता था। जागीरदारों के दरिन्दे उनकी दाढी और मूछ नोचते थे। गढो और रावलो म बन्द करके उन्हें वही पाशविक यातनाए दी जाती थी जिनके लिए आजकल के पुलिस थाने बदनाम हैं। उनकी औरतो के साथ में अभद्र व्यवहार किया जाता था। इन सब यातनाओं मे आखिर जाट जमींदारों का मनोबल टूट जाता था, वह रकम चुका कर ही पीछा छुडाते थे। कुछ काश्तकार रकम नही चुका पाने के कारण गाव छोडकर दूसरे गावों में चले जाते या पास के राज्यों मे पलायन कर जाते थे। अगर किसी प्रकार से भी रकम वसूल नहीं होती तो औरतो के गहने सरे आम उतारे जाते, घर के बर्तन भांडे उठा लिये जाते और गाय, भैंस, ऊट रेवड, खोलकर ले जाते। यह पीढी दर पीढी यह जीवन जीते थे। बच्चे और जवान उनके सामने अपने बुजुर्गों के साथ किए गए व्यवहार को अपनी आखो से देखते थे, परन्तु सगठित नहीं होने से वह निर्बल रहते, सब कुछ चुपचाप सहते। उनके हृदय मे बदले की एक सुषुप्त भावना सुलगती रहती थी। चूल्हे, चौकी, घरो मे वह आपस म इस अन्याय की चर्चा अवश्य करते थे, परन्तु सगठित नही होने से वह कुछ कर सकने की स्थिति मे नही थे। क्योंकि कर वसूली राजाज्ञा मे होती थी, इसलिए अन्याय के विरुद्ध कही कोई सुनवाई नही थी। वही अन्याय करने वाले थे, फिर न्याय के लिए वह पुकार किसके पास करते। बच्चे जवान होते, जवान बूढ़े होते, बूढे मर जाते थे परन्तु इस त्रासदी से छुटकारा पाने का उनके पास कोई विकल्प नहीं था। बीकानेर के नोहर, भादरा, राजगढ, चूरू और हनुमानगढ क्षेत्र की जमीनें ज्यादा उपजाऊ थी और वह जाट बाहुल्य क्षेत्र था। वहा यह अन्याय ज्यादा होता रहा।

राजपूत छुट भाई और अन्य राजपूत भी काश्त का धन्धा करके अपना पेट पालते थे, उन्हें ठाकुर द्वारा की गई लूट खसोट में कोई हिस्सा नही मिलता था। लेकिन उन्हें वह अपमान, यातनाएं और दण्ड नही दिया जाता था जो जाटो और विश्नोइयो को दिया जाता था। राजपूतो को लगान भी माफ होता था। एक ही पेशा करने वाले जाटो विश्नोइयो और काश्तकार राजपूतो मे यह भेदभाव उन्हें बहुत अखरता था। इसलिए इन लोगो ने इन साधारण राजपूतों को भी जागीरदारो और सामन्तो के समूह के साथ जोड दिया। उस राजपूत की भी कुछ विवशता होती थी, नहीं चाहते हुए भी उसे जागीरदार की चौकी पर बैठना पडता था और उसका पक्ष लेना पड़ता था। ऐसा नही करने पर उसे पहले से भी घटिया जमीन काश्त के लिए बताई जाती, उसकी अन्य सुविधाए छीनकर उसका हुक्का पानी बन्द करके सामाजिक बहिष्कार किया जाता था। इसलिए प्रत्येक जाट, विश्नोई, प्रत्येक राजपूत से वैर की भावना रखने लगा और उनमे बदले की भावना पनपने लगी।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद मे भारत मे स्वतन्त्रता सग्राम ने जोर पकड़ा। सन् 1920 ई के बाद मे इसको गर्म हवा ने राजाओं के राज्यो मे प्रवेश किया। उनकी प्रजा में जाग्रति

आई। जाट और अन्य काश्तकार उनसे अपने अधिकार मांगने लगे, उनमे शिक्षा की भी कुछ शुरुआत हुई। सन् 1930 ई. तक सामन्तो और काश्तकारो के झगडे खुले मे आ गए थे। अंग्रेजो की न्यायिक नाक के तले इन्हे निर्दयता से दबाया गया। परन्तु समय तेज गति से बदल रहा था। उनकी नई पीढी अब और अन्याय सहने को तैयार नही थी, प्रजा परिषदें बनी, जनता के संगठन स्थापित किए गए। आखिर राजाओ, सामन्तो, जागीरदारो और ठाकुरो को काश्तकार समाज को राज्यो की शासन व्यवस्था मे भागीदार बनाना पड़ा। पीढियो से कुंठित दासता और बदले की भावना उनमे पनप रही थी। सन् 1947 ई मे भारत स्वतन्त्र हुआ, सन् 1950 ई. मे रजवाडे समाप्त हुए और सन् 1954 ई मे जागीरें भी समाप्त हो गई। विधान सभाओ, पंचायतो और राज्य सेवा मे काश्तकार वर्ग का बहुमत हो गया, इस बहुमत के कारण सत्ता उनके हाथो मे चली गई। सदियो और पीढियो के अन्याय का बदला लेने के सुषुप्त भाव उनमे जाग्रत हुए। जाट और विश्नोइयो ने सामन्त वर्ग से उनके अन्यायो का भरपूर बदला लिया। यह लोग दुबक गये, इनका मनोबल गिर चुका था। वही सामन्त और जागीरदार अब जाट जमीदारो से सलाम के लिए तरसते थे। थोडा सा आदर और सद्भाव पा कर वह धन्य होते थे। इस बदले की कार्यवाही मे राजपूतो का वह वर्ग मारा गया जो मूलरूप से काश्तकार थे। वह खेती करके या पशुपालन से अपना निर्वाह करते थे। वह सामन्तो और जागीरदारो के अत्याचार मे शामिल नही थे, परन्तु उनके कहने से अत्याचार करने से वह बच रहने वाले थे। आज स्थिति यह है कि राजपूत उन राजाओ, सामन्तो और जागीरदारो द्वारा किए गए प्रत्येक अमानवीय अत्याचार की सजा भुगत रहा है और सम्भवत कई पीढियो तक इनसे बदला चुका जायेगा।

इसके विपरीत पूगल के रावो ने कभी भी अपनी प्रजा का शोषण नही किया। मुसलमान बाहुल्य उनके क्षेत्र मे जाट और विश्नोई बहुत थोडे थे। भाटियो ने कभी मुसलमान, जाट या विश्नोई प्रजा को तंग नही किया। यही कारण था कि पूगल क्षेत्र की जनता आज भी भाटियो के प्रति अपनायत रखती है, वह उनके प्रति संवेदनशील है, दुख सुख मे उनका साथ देती है।

एक तरफ धन के लालची बीकानेर के शासक थे, दूसरी ओर दानवीर जैसलमेर के महारावल थे। महारावल गजसिंह ने ढाई लाख रुपये की रकम को ठोकर मार दी, उसे धूल बराबर समझा। अपने भाटी भाई को पूगल का राज्य दिलाना उन्होने सर्वोपरी समझा। पूगल के भाटी जैसलमेर से पीढियो के हिसाब से ज्यादा दूर हो गए थे; परन्तु महाजन, चूरू, रावतसर, बीकानेर से उतनी पीढिया अभी दूर नही हुए थे जितने पूगल के भाटी जैसलमेर से दूर थे। फिर भी बीकानेर के महाराजाओ ने इन बीको, बणीरोतो, कांधलो, बीदवतो से पेशकश वसूल की और उसे लेने के लिए बल और आक्रमण का सहारा लिया।

इस अन्याय, अत्याचार और लूट खसोट के कई कारण थे। मुगलो के समय से बीकानेर के राजाओ के खर्चे बहुत बढ़े हुए थे। मुगल साम्राज्य के पतन के बाद मे इनके धन प्राप्ति के साधन कम हो गए, खर्चे यथावत रहे। जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, पटियाला, आदि राज्यो से बीकानेर बहुत गरीब राज्य था, साधनहीन था, उसके पास आर्थिक आय के

स्रोत नही थे। परन्तु वह अपना रुतबा, ठाठ-बाट, आचार विचार, उनसे कम नही रखते थे और इस सब के लिए धन आवश्यक था, इस धनाभाव की पूर्ति शोषण और अत्याचार से होती थी। शोषण और अत्याचार के पाटो के बीच काश्तकार पिसते थे। आज वह हमे पीस रहे है। यही जाटो, बिश्नाइयो और राजपूतो के आपसी वैमनस्य का कारण है।

उदाराम चारण दशहरो पर राव रामसिंह के बलिदान और शौर्य का 'मरशिया' कहा करते थे। उन्होने शीश दिया, जीते जी पूगल नही दी। महाजन के बरसिलपुर को बीकानेर को सौंपना उनकी गरिमा के विरुद्ध था इसी गरिमा के लिए वह मर गए।

सत्तासर और करणीसर की वंशतालिकाए सलग्न हैं।

राव रामसिंह के छोटे भाई अनोपसिंह को रोजडी और ककराला की जागीर मिली थी। महाराजा रतनसिंह ने इन्हें सिरेरा की ताजीम देकर बीकानेर राज्य का भी ताजीमी सरदार बना लिया। उनके हनुतसिंह और प्रतापसिंह नाम के दो पुत्र थ। हनुतसिंह के कोई पुत्र नही हुआ। प्रतापसिंह को ककराला गाव पैतृक बट म मिला था। इनके मूलसिंह और गुमानसिंह नाम के दो पुत्र हुए। मूलसिंह हनुतसिंह के गोद गए। उधर रोजडी के रायसिंह के कोई पुत्र नही होने से उन्होने गुमानसिंह को गोद ले लिया। इस प्रकार सत्तासर और ककराला की जागीर मूलसिंह को मिली और रोजडी की जागीर गुमानसिंह को मिली। मूलसिंह (सत्तासर) के केवल एक पुत्र शिवनाथसिंह थे। उधर पूगल के राव रुगनाथसिंह के कोई पुत्र नहीं था, इसलिए पूगल के भाटियो की परम्परा के अनुसार उन्हें शिवनाथसिंह, जो राव अभयसिंह के पडपौत्र थे को गोद लेना चाहिए था। परन्तु राव रुगनाथसिंह ने करणीसर के ठाकुर सादूलसिंह (भूतपूर्व राव) के पौत्र और गिरधारीसिंह के पुत्र ठाकुर मेहतावसिंह को पालपोस कर बड़ा किया था उनस उन्ह अत्यधिक स्नेह था। इसलिए राव रुगनाथसिंह की हार्दिक इच्छा थी कि उनकी जगह मेहतावसिंह पूगल के राव बनें। उनकी मृत्यु के बाद मे उनकी इच्छानुसार उनकी रानी ने मेहतावसिंह को गोद लिया। ठाकुर शिवनाथसिंह एक भले व्यक्ति थे उन्हे राजगद्दी स कोई मोह नही था, मेहतावसिंह को राव बनाने के लिए वह सहमत हो गए। वह जीवनभर पूगल मे ही रहे और राव मेहतावसिंह का स्नेह से ध्यान रखते थे।

ठाकुर मूलसिंह सत्तासर के केवल एक पुत्र और पुत्री, शिवनाथसिंह और मेहताव कवर थे। ठाकुर शिवनाथसिंह का विवाह बीनादेसर के ठाकुर दूलेसिंह बीदावत की बहन से हुआ था। बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह का विवाह पूगल के राव करणीसिंह की पुत्री, पूगलयाणीजी चाद कवर से हुआ था। इन्होने राजकुमार डूगरसिंह को गोद लिया। पूगलयाणीजी ने मेहताव कवर का विवाह राजकुमार डूगरसिंह के साथ सन् 1868 ई मे करवाया। इस सम्बन्ध के कारण ठाकुर शिवनाथसिंह के साले ठाकुर दूलेसिंह को महाराजा डूगरसिंह ने बीकानेर राज्य की पुलिस म उच्च पद दिया। इनका दरबार मे बहुत मान था, यह राज्य के कार्य म अपनी इच्छानुसार हस्तक्षेप भी करते थे।

मेहताव कवर का जन्म सन् 1863 (वि स 1920) मे हुआ था और इनका देहान्त सन् 1960 ई म हुआ था। महाराजा डूगरसिंह और महारानी मेहताव कवर के दत्तक पुत्र गगासिंह सन् 1887 ई म बीकानेर के शासक बने। महाराजा सादूलसिंह इनके पौत्र और

महाराजा करणीसिंह इनके पडपौत्र थे। महारानी मेहताव कवर ने अपने ससुर, महाराजा सरदारसिंह (देहान्त सन् 1872 ई), पति डूगरसिंह (देहान्त, सन् 1887 ई) दत्तक पुत्र गगासिंह (देहान्त सन् 1943 ई) और पौत्र सादूलसिंह (देहान्त, सन् 1950 ई), का राज देखा और पड़पौत्र करणीसिंह (देहान्त, सन् 1988 ई) को देखा और वर्तमान महाराजा नरेन्द्रसिंह को बालपन मे देखा। इस प्रकार इन्होने अपनी आखो से छ पीढिया देखी। इन्होने महाराजा सरदारसिंह और डूगरसिंह का साधनहीन राज्य देखा, जिनके समय मे हमेशा आर्थिक अभाव की स्थिति बनी रहती थी। महाराजा गगासिंह का वह समय भी देखा जब बीकानेर राज्य ने चहुँमुखी प्रगति की, धन धान्य से वह सम्पन्न था और भारत के चोटी के राज्यो मे इनका गौरवमय स्थान था। महाराजा सादूलसिंह का प्रगतिशील, साधन सम्पन्न राज देखा और राज्य का राजस्थान मे विलय भी देखा। इन्हे राजस्थान बनने के बाद मे सरकार से छ हजार रुपये प्रतिमाह पेन्शन मिलती थी, इनकी श्रेणी राजदादी से भी ऊपर थी। इन्होने महाराजा करणीसिंह को बार बार लोकप्रियता से लोक सभा के चुनाव जीतते देखा। महाराजा नरेन्द्रसिंह (जन्म, सन् 1946 ई), इनके देहान्त सन् 1960 ई के समय चौदह वर्ष के थे। बीकानेर के महाराजा गगासिंह और सादूलसिंह इनका बहुत मान रखते थे, प्रत्येक अवसर पर इनसे राय लेते और शुभ कार्यों मे इनका आशीर्वाद लते थे। यह गरीबो के प्रति बहुत उदार थी। जब तक यह जीवित रही तब तक जूनागढ मे सदाव्रत चलता था, सैकडों भूखों को सुबह और शाम भरपेट भोजन मिलता था। इनका प्रजा से अटूट स्नेह था, यह भाटियो का विशेष ध्यान रखती थी। पूगल के पट्टे की प्रजा, हिन्दू या मुसलमान, इन्हें पुत्रवत प्यारी थी।

सत्तासर के ठाकुर मूलसिंह के गुलाब कवर, मदन कवर और किसन कवर तीन बहनें थी। यह तीनो महारानी मेहताब कवर की बुआए थी। गुलाब कवर का विवाह महाराजा खडगसिंह के पुत्र मुकनसिंह से हुआ। इनके जसवन्तसिंह, हुकमसिंह, जवानीसिंह, नाहरसिंह, चार पुत्र और एक पुत्री उदय कवर थी। हुकमसिंह और उदय कवर का देहान्त बाल्यावस्था मे हो गया था। जगमालसिंह, नारायणसिंह और पृथ्वीसिंह, नाहरसिंह के पुत्र थे। जगमालसिंह और नारायण सिंह बीकानेर राज्य के मन्त्री रहे, पृथ्वीसिंह बीकानेर राज्य मे सचिव के पद पर रहे। जनरल रणजीतसिंह और ऐयर कमाडोर बहादुरसिंह नारायणसिंह के पुत्र हैं।

जसवन्तसिह पर महाराजा सरदारसिंह की महारानी चांद कवर का विशेष स्नेह था, वह उन्हे गोद लेकर महाराजा बनाना चाहती थी। परन्तु वह इन्हे गोद लेने के प्रयास मे सफल नही हुई। लालसिंह के पुत्र डूगरसिंह महाराजा बने। कुछ समय पश्चात् युवा अवस्था मे ही जसवन्तसिंह का देहान्त हो गया। मदन कवर और किसन कवर का विवाह महाराजा खडगसिंह के पुत्र तख्तसिंह के साथ हुआ था।

सत्तासर के ठाकुर शिवनाथसिंह की नि सन्तान मृत्यु होने से, रोजडी के ठाकुर गुमान सिंह के पुत्र हरिसिंह इनके गोद आए और सत्तासर के ठाकुर बने। इनका जन्म 3 जुलाई, सन् 1882 ई मे हुआ था। 59 वर्ष की आयु में, 10 दिसम्बर, 1940 ई को, इनका देहान्त हो गया। यह उस समय बीकानेर की सेना के सेनापति थे और मेजर जनरल के पद पर कार्यरत थे।

इन्होने अजमेर के मेयो कॉलेज मे शिक्षा ग्रहण की थी। बीकानेर मे इन्होने सतरह हजार वर्ग गज (बीकानेर का गज 2'×2') भूमि पर भव्य निवास, सत्तासर हाउस, बनवाया। यह बीकानेर राज्य के सेना मन्त्री भी थे, इसी पद पर रहते हुए इनका देहान्त हुआ। इनका भव्य व्यक्तित्व था, यह अपनी वेश-भूषा के प्रति बडे सतर्क रहते थे और बहुत मिलनसार प्रकृति वाले थे। यह पुरोहितो, राणो, रसालो की सहायता करते थे। यह लोग इनके निवास स्थान के साथ बने आवास गृहो मे रहते थे, जहा इन्हे सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध थी। इन्हे वह अपने परिवार के सदस्यो की तरह रखते सभी से मृदु व्यवहार करते और अनेक परिवारो को मुफ्त भोजन देते थे। यह पूगल पट्टे की प्रजा को स्वयं की जनता समझते थे, उनका विशेष ध्यान रखते और उन्हे किसी प्रकार का कष्ट नही होने देते थे। किशोरसिंह पातावत और कुन्जी इनके निकट के विश्वासपात्र थे। यह दोनो उनकी पूर्ण निष्ठा से सेवा करते थे।

इनकी माता मलवाणी (नोहर) गाव की बीका राठौड थी। यह सरल प्रकृति की ईश्वर मे डर कर चलने वाली महिला थी।

जनरल हरिसिंह का पहला विवाह पातावत राठौडो के यहां हुआ था। इस पत्नी से इनके, बलदेवसिंह और केशरीसिंह, दो पुत्र हुए। पहली पत्नी के स्वर्गवास के बाद मे इन्होने दूसरा विवाह ईडर के राठौडो के यहा किया। इन पत्नी से भीमसिंह और अर्जुनसिंह, दो पुत्र हुए। जब जनरल हरिसिंह प्रथम विश्व युद्ध मे मोर्चे पर गए थे तब इनकी दूसरी पत्नी चिन्ता से अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठी थी। इसलिए इन्होने तीसरा विवाह सेवास गाव के कूम्पावत राठोडो के यहा किया। इस पत्नी का देहान्त सन् 1970 ई मे हुआ।

जनरल हरिसिंह ने अपने गाव सत्तासर मे एक पक्का तालाब और एक सुन्दर मन्दिर बनवाया। इनके पास श्री विजयनगर से दो मील उत्तर मे सैकडो एकड सिंचित भूमि थी, उस गाव का नाम इन्होने अपने नाम पर, 'हरिपुरा' रखा। ठाकुर किशोरसिंह पातावत इस भूमि की देखभाल किया करते थे। इनकी मृत्यु के बाद इनके तीनो पुत्र छोटे इसी भूमि पर काश्त करवाते रहे। इनके ज्येष्ठ पुत्र बलदेवसिंह को इन्होने अन्यत्र भूमि दी थी।

सन् 1902 ई. मे जब महाराजा गगासिंह सम्राट ऐडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेक समारोह मे लदन गए, तब जनरल हरिसिंह भी उनके साथ गए थे। इन्हे, 24 सितम्बर, सन् 1912 ई मे, बीकानेर राज्य मे मन्त्री का पद दिया गया। सन् 1915 ई मे महाराजा गगासिंह की सिफारिश पर ब्रिटिश सरकार ने इन्हें 'राव बहादुर' का खिताब प्रदान किया। यह सन् 1917 ई मे प्रथम विश्व युद्ध मे मेसोपोटामिया के मोर्चे पर गए थे। इनकी सराहनीय सेवाओ और शासन के प्रति निष्ठा के लिए जून, सन् 1918 ई मे इन्हे ओ.बी.ई. के खिताब से सम्मानित किया गया। इनकी विश्व युद्ध मे उत्कृष्ट सेवाओ के लिए महाराजा गगासिंह ने इन्हे ब्रिटिश शासन की अनुमति से सन् 1923 ई. मे मेजर जनरल के पद पर पदोन्नत किया। सन् 1935 ई मे इन्हें सी. बी. ई का खिताब मिला और इसी वर्ष, किंग्स सिलवर जुबली मैडल इन्हे प्रदान किया गया। सन् 1937 ई मे जब सम्राट जार्ज षष्टम सिंहासन पर बैठे तब इन्हें कोरोनेशन मैडल प्रदान किया गया। इन्हें महाराजा गगासिंह ने गोल्डन जुबली मेडल और बैज ऑफ ऑनर प्रथम श्रेणी से सुशोभित किया। मेजर जनरल

राव बहादुर ठाकुर हरिसिंह, सी आई ई, ओ बी ई, सी वी ई, ए डी सी, केवल केलण भाटियो म सबसे अधिक सम्मानित रत्न ही नही थे, महाराजा गगासिंह के वाद मे यही राज्य के सर्वाधिक अलकृत सरदार थे। ठाकुर सादूलसिंह बवसेऊ, राजा हरिसिंह महाजन और राजा जीवराजसिंह साडवा इनके समकालीन सम्मानित सरदारो मे थे।

इनकी निम्नलिखित जागीरें थी

(1) सत्तासर, 1,50,000 बीघा, (2) ककराला, 52,000 बीघा, (3) हासीवास, 14,400 बीघा, (4) फूलसर (5) डूगरसिंहपुरा (6) फूलदेसर (7) आनन्दगढ (8) मीरगढ (9) रिन्ला, कुल 9 गावो की ताजीम थी। इन गावो की भूमि का क्षेत्रफल 3,40,430 बीघा था, इनकी वार्षिक आय रु 6,023/– थी। इन द्वारा राज्य को किसी प्रकार का कर देय नही था। इनके द्वारा महाराजा को भेट की जाने वाली नजर मात्र रु 7/– थी।

सालगढ के अभिलेखो के अनुसार, सत्तासर के बारे म निम्नलिखित सूचना उपलब्ध है

पृष्ठ सख्या	ठाकुर का नाम	सन्	विवरण
380	करणीसिंह पुत्र हठीसिंह	1795 ई	यह लूणसा शाखा के थे।
381	अनोपसिंह पुत्र राव अमयसिंह	1811 ई	इन्हे सत्तासर दिया, करणीसिंह लूणखा गए।
382	हनुतसिंह पुत्र अनोपसिंह	1819 ई	इनका विवाह पलिडा हुआ।
383	मूलसिंह पुत्र हनुतसिंह	1837 ई	इनके विवाह नेनाऊ और जैतपुर हुए।

अनोपसिंह आठ वर्ष और हनुतसिंह 18 वर्ष ठाकुर रहे।

हरिसिंह के पुत्र, कर्नल बलदेवसिंह का जन्म सन् 1905 ई मे हुआ था। इनके दो विवाह हुए, पहला चान्दलाव मे और दूसरा जैतपुर मे। इनके कोई सन्तान नही हुई। इनका और इनकी पहली पत्नी का देहान्त, एक सप्ताह के अन्तर म, सन् 1973 ई म हो गया। इनकी दूसरी पत्नी अभी जीवित हैं, इन्होने किसी को अभी तक गोद नही लिया है। यह जनरल हरिसिंह की कोठी मे अपने पीहर वालो के साथ रह रही हैं। सन् 1944 ई मे महाराजा सादूलसिंह ने ठाकुर बलदेवसिंह को 'राव' का खिताब दिया था। यह उनके ए डी सी थे, यूरोप, अफ्रीका और विलायत उनके साथ गए थे।

इनके दूसरे पुत्र कर्नल केसरीसिंह बहुत होशियार और चतुर व्यक्ति थे। यह बीकानेर, ईडर, जामनगर, जोधपुर, जयपुर के शासको के पास महत्वपूर्ण पदो पर रहे। यह राजाओ के राज्यो के भारतीय सघ मे विलय के समय तत्कालीन गृह मन्त्री सरदार पटेल के सहायक थे और राज्यों को सघ मे विलय कराने मे इन्होने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इन्होंने बीकानेर मे 'केसर विलास' नाम की सुन्दर कोठी बनवाई। इनका विवाह बीकानेर के दीवान, ठाकुर सादूलसिंह बवसेऊ, की पुत्री से हुआ था। इनकी एकमात्र सन्तान, पुत्री सूरज कवर, का विवाह चीदासर के राजा प्रतापसिंह के छोटे भाई ठाकुर रघुवीरसिंह से हुआ।

इस विवाह मे जोधपुर के महाराजा उम्मेदसिंह पधारे थे। सूरज कवर के राजेन्द्रसिंह और मानवेन्द्रसिंह दो पुत्र हैं। राजेन्द्रसिंह का विवाह बासवाडे के ठाकुर रामसिंह, आई ए एस (सेवा निवृत्त) की पुत्री से हुआ, इनके दो पुत्रिया हैं। मानवेन्द्रसिंह का विवाह गोंडल (राजकोट) के भगवानसिंह जाडेचा की पुत्री से हुआ, इनके एक पुत्र और एक पुत्री है।

इनके तीसरे पुत्र भीमसिंह का जन्म सन् 1913 ई मे हुआ था। यह भारतीय रेल विभाग मे वरिष्ठ अधिकारी के पद से सेवा निवृत्त हुए। इनका विवाह भी ठाकुर सादूलसिंह बवसेऊ की पुत्री से हुआ था। इनके कोई सन्तान नही हुई। इनका देहान्त सन् 1986 ई मे हुआ। इनके छोटे भाई अर्जुनसिंह का पौत्र और मानसिंह का पुत्र नत्थुसिंह, इनके देहान्त के बाद म इनके गोद बिठाया गया। इनकी पत्नी का देहान्त इनसे पहले हो गया था।

इनके चौथे पुत्र अर्जुनसिंह का जन्म सन् 1915 ई मे हुआ था। यह राजस्थान राज्य मे तहसीलदार के पद से सेवा निवृत्त हुए थे। इनका देहान्त सन् 1982 ई मे हुआ। इनका 'हरि निवास' नाम का बीकानेर मे मकान है। इनका विवाह पाचौडी गांव मे हुआ था। इनके मानसिंह और प्रेमसिंह नाम के दो पुत्र हैं। इनके विवाह रायपुर और मोकलसर (सिवाना) मे हुए। मानसिंह के गोपालसिंह और नत्थुसिंह दो पुत्र और एक पुत्री है। नत्थुसिंह ठाकुर भीमसिंह के गोद दिया गया। प्रेमसिंह के एक पुत्र अभिमन्युसिंह और पाच पुत्रिया हैं। ठाकुर अर्जुनसिंह की तीन पुत्रिया भी हैं, एक का विवाह पादरू गाव मे किया, दूसरी सूई गाव ब्याही और तीसरी का विवाह नीमा के ठाकुर मदनसिंह से हुआ।

राव रामसिंह ने अपने सबसे छोटे भाई सादूलसिंह को करणीसर और बरबाला की जागीर प्रदान की थी। सन् 1830 ई मे राव रामसिंह की मृत्यु के पश्चात् बीकानेर के महाराजा रतनसिंह ने इन्हे पूगल का राव बना दिया था। सन् 1837 ई तक यह पूगल के राव रहे। तत्पश्चात् इनके स्थान पर राव रामसिंह के पुत्र राजकुमार रणजीतसिंह पूगल के राव बने। इनके बाद मे ठाकुर सादूलसिंह अपने गाव करणीसर चले गए थे।

ठाकुर सादूलसिंह के दुर्जनसालसिंह और गिरधारीसिंह दो पुत्र थे। दुर्जनसालसिंह का विवाह घडसीसर के बीकों के यहा हुआ था। दुर्जनसालसिंह के अनाडसिंह, हीरसिंह, जगमालसिंह, पन्नेसिंह और भरतसिंह पाच पुत्र थे। इनके पुत्र अनाडसिंह, जगमालसिंह और भरतसिंह का विवाह खारिया गाव के पातावत राठौडो मे हुआ था। अनाडसिंह का स्वर्गवास युवावस्था मे हो गया था। हीरसिंह का विवाह चाडी गाव के पातावत राठौडो के यहा हुआ था। ठाकुर दुर्जनसालसिंह के बाद मे हीरसिंह करणीसर के ठाकुर बने। पन्नेसिंह का पहला विवाह मलवाणी मे बीका राठौडो के यहां हुआ। इस विवाह से इनकी पुत्री चन्दन कवर का विवाह पाचौडी गाव के जेठूसिंह से हुआ था। इनका दूसरा विवाह मोकलसर (सिवाना) के कोजसिंह वाला की बहन हस कवर से हुआ था।

ठाकुर हीरसिंह के पुत्र किशोरसिंह का विवाह जज्जू गाव मे हुआ। इनके माधोसिंह और हिम्मतसिंह दो पुत्र हुए, और एक पुत्री भवरी बाई है। दोनों पुत्रो का विवाह मलवाणी हुआ। हिम्मतसिंह का देहान्त हो गया है। इनकी पुत्री भवरी बाई का विवाह थैलासर गाव के रे कर्नल ठाकुर जयसिंह से हुआ। मेजर भूरसिंह और ठाकुर दुलेसिंह आई पी एस, ठाकुर किशोरसिंह के साले हैं।

ठाकुर हीरसिंह के अन्य पुत्र कल्याणसिंह, मोहबतसिंह, सुजानसिंह और उमेदसिंह थे। कल्याणसिंह नायब तहसीलदार के पद पर थे, इनकी सेवाकाल मे ही मृत्यु हो गई थी। इनके दो पुत्रिया है, पुत्र नही है। इनकी वेवा पत्नी जीवित हैं। बाकी तीनो भाई कुंवारे मर गए थ।

ठाकुर हीरसिंह के पन्ने कवर और समन्द कवर नाम की दो बहने थी। पन्न कवर का विवाह रावतसर के रावत मानसिंह से हुआ था। समन्द कवर का विवाह बेणीसर के राजवी गुलाबसिंह से हुआ, राजवी अमरसिंह तहसीलदार इनके पुत्र थे।

ठाकुर हीरसिंह की पुत्री इच्छर कवर का विवाह गाटा गाव के राजवी चन्द्रसिंह स हुआ, यह देवस्थान अधिकारी के पद से सेवा निवृत हुए। इनकी दूसरी पुत्री सिरे कवर का विवाह धावा गाव के मेजर लालसिंह से हुआ।

ठाकुर पन्नेसिंह के तीन पुत्र, पृथ्वीसिंह, रतनसिंह और तेजसिंह हैं। ठाकुर पृथ्वीसिंह अनेक वर्षों तक सरपच रहे। इनके सात पुत्र हैं। ठाकुर जगमालसिंह के एक मात्र पुत्र शिवदानसिंह की मृत्यु भी विवाह से पहले हा गई थी। ठाकुर सादूलसिंह ने पूगल के राव की गद्दी त्यागने के पश्चात् बीकानेर राज्य से करणीसर गाव की जागीर की चिठ्ठी नहीं ली। वह पूगल के अधीन ही रहे। करणीसर गांव की जागीर की भूमि दो लाख बीघा थी, इससे लगभग एक हजार रुपया वार्षिक आय होती थी। पूगल के राव करणीसर के ठाकुर को रु 125/ प्रति वर्ष जकात की हानि का मुआवजा देते थे।

ठाकुर सादूलसिंह के दूसरे पुत्र गिरधारीसिंह थे। इनके मेहतावसिंह, गणपतसिंह, हरनाथसिंह और खेतसिंह नाम के चार पुत्र और एक पुत्री मान कवर थी। मेहतावसिंह पूगल के राव रुगनाथसिंह के गोद गए और पूगल के राव बने। मान कवर का जन्म सन् 1895 ई में हुआ था। इनका विवाह इनके भतीजे राव जीवराजसिंह ने सन् 1906 ई म रावती के महाराजा शेरसिंह से किया था।

ठाकुर गणपतसिंह के दो विवाह हुए, पहला सन् 1890 ई मे बूगडी गाव के पातावतो के यहा और दूसरा सन् 1904 ई म मलधाणी के बीको के यहा। इनके सुगनसिंह और कानसिंह, दो पुत्र थे, सुगनसिंह का देहान्त बाल्यकाल मे हो गया था। इनके पांच पुत्रिया भी थी।

हरनाथसिंह, खेतसिंह और गणपतसिंह की पहली पत्नी पातावतजी, तीनो का देहान्त सन् 1903 ई के उसी माह म हुआ जिस माह मे राव मेहतावसिंह का देहान्त हुआ था। इस प्रकार इन तीनो भाईयो का देहान्त लगभग एक साथ हुआ। गणपतसिंह का देहान्त सन् 1915 ई मे हुआ था। ठाकुर कानसिंह का देहान्त सन् 1980 ई मे, 72 वर्ष की आयु मे हुआ था।

ठाकुर कानसिंह के पुत्र विक्रमसिंह का पहला विवाह सान्दोल गाव के चाम्पावत राठोडों के यहा और दूसरा विवाह झझेऊ के तवरो के यहा हुआ था। इनका देहान्त नवम्बर, सन् 1976 ई में हुआ था। इनके तीन पुत्र, चित्तरजनसिंह, गजवेन्द्रसिंह और पदमसिंह हैं, एक पुत्री है। विक्रमसिंह बहुत लोकप्रिय व्यक्ति थे। यह जनता की सेवा निस्वार्थ भाव से निडर हो कर करते थे। यह काफी वर्ष दातौर ग्राम पचायत मे सरपच रहे, मृत्यु के समय

इस विवाह मे जोधपुर के महाराजा उम्मेदसिंह पधारे थे। सूरज कवर के राजेन्द्रसिंह और मानवेन्द्रसिंह दो पुत्र हैं। राजेन्द्रसिंह का विवाह बांसवाडे के ठाकुर रामसिंह, आई ए एस (सेवा निवृत्त) की पुत्री से हुआ, इनके दो पुत्रिया हैं। मानवेन्द्रसिंह का विवाह गोहल (राजकोट) के भगवानसिंह जाडेचा की पुत्री से हुआ, इनके एक पुत्र और एक पुत्री है।

इनके तीसरे पुत्र भीमसिंह का जन्म सन् 1913 ई मे हुआ था। यह भारतीय रेल विभाग मे वरिष्ठ अधिकारी के पद से सेवा निवृत्त हुए। इनका विवाह भी ठाकुर सादूलसिंह बवसेऊ की पुत्री से हुआ था। इनके कोई स तान नही हुई। इनका देहान्त सन् 1986 ई मे हुआ। इनके छोटे भाई अर्जुनसिंह का पौत्र और मानसिंह का पुत्र नत्थुसिंह, इनके देहान्त के बाद म इनके गोद बिठाया गया। इनकी पत्नी का देहान्त इनसे पहले हो गया था।

इनके चौथे पुत्र अजुनसिंह का जन्म सन् 1915 ई म हुआ था। यह राजस्थान राज्य मे तहसीलदार के पद से सेवा निवृत्त हुए थे। इनका देहान्त सन् 1982 ई म हुआ। इनका 'हरि निवास' नाम का बीकानेर मे मकान है। इनका विवाह पाचौडी गाव मे हुआ था। इनके मानसिंह और प्रेमसिंह नाम के दो पुत्र हैं। इनके विवाह रायपुर और मोकलसर (सिवाना) मे हुए। मानसिंह के गोपालसिंह और नत्थुसिंह दो पुत्र और एक पुत्री है। नत्थु सिंह ठाकुर भीमसिंह के गोद दिया गया। प्रेमसिंह के एक पुत्र अभिमन्युसिंह और पाच पुत्रिया हैं। ठाकुर अर्जुनसिंह की तीन पुत्रियां भी हैं, एक का विवाह पादरू गाव मे किया, दूसरी मूई गाव ब्याही और तीसरी का विवाह नीमा के ठाकुर मदनसिंह से हुआ।

राव रामसिंह ने अपने सबसे छोटे भाई सादूलसिंह को करणीसर और बरवाला की जागीर प्रदान की थी। सन् 1830 ई मे राव रामसिंह की मृत्यु के पश्चात् बीकानेर के महाराजा रतनसिंह ने इन्हे पूगल का राव बना दिया था। सन् 1837 ई तक यह पूगल के राव रहे। तत्पश्चात् इनके स्थान पर राव रामसिंह के पुत्र राजकुमार रणजीतसिंह पूगल के राव बने। इनके बाद मे ठाकुर सादूलसिंह अपने गांव करणीसर चले गए थे।

ठाकुर सादूलसिंह के दुर्जनसालसिंह और गिरधारीसिंह दो पुत्र थे। दुर्जनसालसिंह का विवाह घडसीसर के बीको के यहां हुआ था। दुर्जनसालसिंह के अनाडसिंह, हीरसिंह, जगमालसिंह, पन्नेसिंह और भरतसिंह पाच पुत्र थे। इनके पुत्र अनाडसिंह, जगमालसिंह और भरतसिंह का विवाह खारिया गाव के पातावत राठौडो मे हुआ था। अनाडसिंह का स्वगवास युवावस्था में हो गया था। हीरसिंह का विवाह चाडी गाव के पातावत राठौडो के यहां हुआ था। ठाकुर दुर्जनसालसिंह के बाद मे हीरसिंह करणीसर के ठाकुर बने। पन्नेसिंह का पहला विवाह मलवाणी मे बाका राठौडो के यहां हुआ। इस विवाह से इनकी पुत्री चन्दन कवर का विवाह पाचौडी गाव के जेठूसिंह से हुआ था। इनका दूसरा विवाह मोकलसर (सिवाना) के कोझसिंह बाला की बहन हस कवर स हुआ था।

ठाकुर हीरसिंह के पुत्र किशोरसिंह का विवाह जज्झू गाव मे हुआ। इनके माधोसिंह और हिम्मतसिंह दो पुत्र हुए, और एक पुत्री भवरी बाई है। दोनो पुत्रो का विवाह मलवाणी हुआ। हिम्मतसिंह का देहान्त हो गया है। इनकी पुत्री भवरी बाई का विवाह थैलासर गाव के ले फनल ठाकुर जयसिंह स हुआ। मेजर सूरसिंह और ठाकुर दुलेसिंह आई पी एस ठाकुर किशोरसिंह के साले हैं।

ठाकुर हीरसिंह के अन्य पुत्र कल्याणसिंह, मोहब्बतसिंह, सुजानसिंह और उमेदसिंह थे। कल्याणसिंह नायब तहसीलदार के पद पर थे, इनकी सेवाकाल में ही मृत्यु हो गई थी। इनके दो पुत्रियां हैं, पुत्र नहीं है। इनकी धेवा पत्नी जीवित हैं। बाकी तीनों भाई कुंवारे मर गए थे।

ठाकुर हीरसिंह के पन्ने कवर और समन्द कवर नाम की दो बहनें थीं। पन्ने कवर का विवाह रावतसर के रावत मानसिंह से हुआ था। समन्द कवर का विवाह बेणीसर के राजवी गुलाबसिंह से हुआ, राजवी अमर्यसिंह तहसीलदार इनके पुत्र थे।

ठाकुर हीरसिंह की पुत्री इच्छद्र कवर का विवाह गाटा गांव के राजवी चन्द्रसिंह से हुआ, यह देवस्थान अधिकारी के पद से सेवा निवृत्त हुए। इनकी दूसरी पुत्री सिरे कवर का विवाह धावा गांव के मेजर लालसिंह से हुआ।

ठाकुर पन्नेसिंह के तीन पुत्र, पृथ्वीसिंह, रतनसिंह और तेजसिंह हैं। ठाकुर पृथ्वीसिंह अनेक वर्षों तक सरपंच रहे। इनके सात पुत्र हैं। ठाकुर जगमालसिंह के एक मात्र पुत्र गिरदानसिंह की मृत्यु भी विवाह से पहले हो गई थी। ठाकुर सादूलसिंह ने पूगल के राव की गद्दी त्यागने के पश्चात् बीकानेर राज्य से करणीसर गांव की जागीर की 'चिट्ठी' नहीं ली। वह पूगल के अधीन ही रहे। करणीसर गांव की जागीर की भूमि दो लाख बीघा थी, इससे लगभग एक हजार रुपया वार्षिक आय होती थी। पूगल के राव करणीसर के ठाकुर को रु 125/- प्रति वर्ष जकात की हानि का मुआवजा देते थे।

ठाकुर सादूलसिंह के दूसरे पुत्र गिरधारीसिंह थे। इनके मेहताबसिंह, गणपतसिंह, हरनाथसिंह और खेतसिंह नाम के चार पुत्र और एक पुत्री मान कवर थी। मेहताबसिंह पूगल के राव रघुनाथसिंह के गोद गए और पूगल के राव बने। मान कवर का जन्म सन् 1895 ई में हुआ था। इनका विवाह इनके भतीजे राव जीवराजसिंह ने सन् 1906 ई में रावती के महाराजा शेरसिंह से किया था।

ठाकुर गणपतसिंह के दो विवाह हुए, पहला सन् 1890 ई में बूगडी गांव के पातावतों के यहां और दूसरा सन् 1904 ई मे मलवाणी के बीकों के यहां। इनके सुगनसिंह और कानसिंह, दो पुत्र थे, सुगनसिंह का देहान्त बाल्यकाल में हो गया था। इनके पांच पुत्रियां भी थीं।

हरनाथसिंह, खेतसिंह और गणपतसिंह की पहली पत्नी पातावतजी, तीनों का देहान्त सन् 1903 ई के उसी माह में हुआ जिस माह में राव मेहताबसिंह का देहान्त हुआ था। इस प्रकार इन तीनों भाईयों का देहान्त लगभग एक साथ हुआ। गणपतसिंह का देहान्त सन् 1915 ई में हुआ था। ठाकुर कानसिंह का देहान्त सन् 1980 ई मे, 72 वर्ष की आयु मे हुआ था।

ठाकुर कानसिंह के पुत्र विक्रमसिंह का पहला विवाह सान्दोल गांव के चाम्पावत राठोड़ों के यहां और दूसरा विवाह झझेऊ के तंवरों के यहां हुआ था। इनका देहान्त नवम्बर, सन् 1976 ई म हुआ था। इनके तीन पुत्र, चित्तरंजनसिंह, गजवेन्द्रसिंह और पदमसिंह हैं, एक पुत्री है। विक्रमसिंह बहुत लोकप्रिय व्यक्ति थे। यह जनता की सेवा निस्वार्थ भाव से निडर हो कर करते थे। यह काफी वर्ष दातौर ग्राम पंचायत के सरपंच रहे, मृत्यु के समय

भी यह सरपच के पद पर थे। इनके सरपच रहते हुए पूगल की जनता को नहरी भूमि दिलवाने मे इनका विशेष योगदान रहा।

ठाकुर कानसिंह के दूसरे पुत्र उगमसिंह का विवाह भी सान्दोल के चापावतो के यहा हुआ। यह राज्य सेवा म भण्डार सहायक के पद पर हैं। यह अपनी माता और बडे भाई विक्रमसिंह के परिवार की अच्छी देखभाल कर रहे हैं। ठाकुर कानसिंह के सबसे छोटे पुत्र बलवन्तसिंह का विवाह जक्षेऊ के चन्द्रावतो के यहां हुआ। यह अर्जुनसर गांव मे रह रहे हैं।

ठाकुर कानसिंह के प्रेम कवर, तेज कवर, राम कवर, कमल कवर, विमल कवर और जगदीश कवर, छ पुत्रिया हैं। इन सबके विवाह वह अपने जीवनकाल मे कर गए थे।

व्यक्तियो और राजगद्दियो का भविष्य अचानक बदलता है। कोई नहीं बता सकता कि व्यक्तियो और घटनाओ का भविष्य क्या होगा? ठाकुर सादूलसिंह को बीकानेर के महाराजा रतनसिंह ने सन् 1830 ई मे पूगल का राव बनाया था। इनका राव का पद मिस्टर ट्रैविलियन और महाराजा गजसिंह के समझौते के साथ सन् 1835 ई मे ही समाप्त हो जाना चाहिए था परन्तु यह सन् 1837 ई तक राव बने रहे। इनके बाद म इनके भतीजे और राव रामसिंह के पुत्र रणजीतसिंह राव बने। राव रणजीतसिंह के बाद मे उनके छोटे भाई करणीसिंह पूगल के राव बने। राव करणीसिंह के बाद मे उनके पुत्र राजकुमार रुगनाथसिंह राव बने। चूकि राव रुगनाथसिंह के कोई पुत्र नही था, इसलिए इनके बाद म ठाकुर सादूलसिंह के पौत्र और गिरधारीसिंह के पुत्र मेहताबसिंह राव बने। वैसे राव रुगनाथसिंह के बाद म, राव रामसिंह के छोटे भाई अनोपसिंह के पडपौत्र शिवनाथसिंह का राव बनने का न्यायिक अधिकार था। परन्तु भाग्य का खेल था, राव रुगनाथसिंह की विधवा रानी ने राव रामसिंह के सबसे छोटे भाई ठाकुर सादूलसिंह के पौत्र और गिरधारीसिंह के पुत्र महताबसिंह को गोद लेने की इच्छा दर्शाई। इस इच्छा को शिरोधार्य करते हुए ठाकुर शिवनाथसिंह ने अपना अधिकार स्वेच्छा से त्याग दिया। इस प्रकार जिस राजगद्दी को राव सादूलसिंह ने सन् 1837 ई म त्यागी थी, वही राजगद्दी उनके पौत्र मेहताबसिंह को सन् 1890 ई मे मिल गई। इस कडी मे केवल ठाकुर सादूलसिंह के पुत्र गिरधारीसिंह भाग्यवान नही रहे, यह पूगल क राव नही बन पाए। इस प्रकार विधाता ने पूगल की गद्दी ठाकुर सादूलसिंह के वशजो के नाम ही लिखी थी। मिस्टर ट्रैविलियन के न्याय और महारावल गजसिंह के ढाई लाख रुपये के त्याग का केवल यही परिणाम रहा कि राव रामसिंह के पुत्रो, राव रणजीतसिंह और करणीसिंह ने, और राव करणीसिंह के पुत्र रुगनाथसिंह ने पूगल क शासन को भोगा। ठाकुर सादूलसिंह के पुत्र गिरधारीसिंह इस पद को नही भोग सके। आज भी सादूलसिंह के वशज ही पूगल की राजगद्दी पर है। अगर राव रुगनाथसिंह की रानी अनोपसिंह के वशज शिवनाथसिंह को गोद ले लेती तो जनरल हरिसिंह, राव बलदेवसिंह, मानसिंह (अर्जुनसिंह के पुत्र) पूगल के राव होते। यह सब सुखद सभावनाए थी, हुआ वही जो ईश्वर को स्वीकार था। ईश्वर का आदेश ठाकुर सादूलसिंह के वशजो को पूगल वापिस देने का था, वैसा ही हुआ। इनके दोनो बडे भाइयो, राव रामसिंह और अनोपसिंह (दोनो का विवाह महाजन हुआ था), के वशजो के भाग्य मे पूगल की राजगद्दी नही लिखी

थी, सो नही मिली। सम्भवत राव रुगनाथसिंह की रानी ने महाजन वाले सम्पर्क से अपने आप को दूर रखने के लिए ही शिवनाथसिंह को गोद नही लिया था।

पूगल की प्रजा, प्रमुखो, खान, प्रधानो और केलण भाटियो ने सादूलसिंह को राव की मान्यता नही दी थी और न ही उन्हें सहयोग दिया था। अब वही लोग उन्ही के पौत्र, मेहताब सिंह को राव मानकर, उन्हें तन, मन, धन से सहयोग दे रहे थे। राव रुगनाथसिंह ने अपना उत्तराधिकारी नही चुना था, उन्होने यह चुनाव करने का अधिकार अपनी रानी, खानों, प्रधानों और केलणों की परम्परागत व्यवस्था पर छोड़ दिया था। मेहताबसिंह अपने वशजो की पक्ति मे कनिष्ठ थे, पहला अधिकार सत्तासर का था। यह ठाकुर शिवनाथसिंह का त्याग ही था, जिसके कारण पूगल करणीसर के ठाकुर सादूलसिंह के वशजो को मिली। अगर पूगल शिवनाथसिंह को मिलती तो यह रोजडी के भोपालसिंह के वशजो के पास जाती (जनरल हरिसिंह रोजडी से शिवनाथसिंह के गोद आए थे)। ठाकुर शिवनाथसिंह के स्वेच्छा से अपना अधिकार त्यागने पर अपने वशजो की शृखला मे ठाकुर सादूलसिंह के ज्येष्ठ पुत्र दुर्जनसाल सिंह का गोद आने का अधिकार बनता था, जिसे इन्होंने अपने छोटे भाई गिरधारीसिंह के पुत्र, मेहताबसिंह के लिए त्याग दिया। मेहताबसिंह के राजगद्दी पर बैठने पर ठाकुर शिवनाथसिंह ने उन्हें पहले पहल नजर भेंट की। इनके आग्रह पर ठाकुर दुर्जनसालसिंह ने इनके बाद मे नजर भेंट की। इस प्रकार सत्तासर और करणीसर द्वारा नजरें भेंट किए जाने के बाद मे, रोजडी के ठाकुर गुमानसिंह और अन्य केलणो ने अपनी नजरें भेंट की।

सत्तासर की वंशावली

- राव अभयसिंह, सन् 1793-1800 ई
  - राव रामसिंह सन् 1800 1830 ई
  - अनोपसिंह सत्तासर, सन् 1811 ई
    - हनुतसिंह, सत्तासर
      - मूलसिंह गोद आए
        - शिवनाथसिंह, इनके रोजडी के गुमानसिंह के पुत्र हरिसिंह गोद आए
          - बलदेवसिंह, इनके सन्तान नही, किसी को गोद नही लिया
          - केसरीसिंह, केवल एक पुत्री सूरज कवर, जिन्हे बीदासर के रघुवीरसिंह को ब्याही, इनके दो पुत्र हैं
            - राजेन्द्रसिंह, इनका विवाह बासवाडा के रामसिंह आई ए एस की पुत्री से हुआ। इनके दो पुत्रिया हैं।
            - मानवेन्द्रसिंह, इनका विवाह गोंडल (राजकोट) के भगवान सिंह जाडेचा की पुत्री से हुआ। इनके एक पुत्र और एक पुत्री है।
          - भीमसिंह, सतान नही, अर्जुनसिंह के पौत्र नत्थुसिंह को गोद लिया
          - अर्जुनसिंह
            - मानसिंह
              - गोपलसिंह
              - नत्थूसिंह, भीमसिंह के गोद गया
              - एक पुत्री
            - प्रेमसिंह
              - अभिमन्यु सिंह
              - पाच पुत्रिया
        - मेहताब कवर, महाराजा डूगरसिंह को ब्याही
    - प्रतापसिंह
      - मूलसिंह, हनुतसिंह के गोद गए
      - गुमानसिंह, रोजडी के रायसिंह के गोद गए
  - सादुलसिंह करणीसर

करणीसर की वंशावली

- राव अमरसिंह, सन् 1793–1800 ई
  - राव रामसिंह, सन् 1800-1830 ई
  - अनोपसिंह, सत्तासर, सन् 1811 ई.
  - सादुलसिंह, करणीसर
    - दुर्जनसालसिंह
      - अनाडसिंह
      - हीरसिंह
        - किशोरसिंह
          - माधोसिंह
            - भवरसिंह
            - अर्जुन सिंह
            - रूपसिंह
            - राजेन्द्र सिंह
            - किरण कवर
          - हिम्मतसिंह
            - मोहन सिंह
            - ओंकार सिंह
            - जीतसिंह
            - भवरकवर
            - सूरजकवर
            - मनोहर कवर
            - चंपा कवर
          - भवरी बाई (कर्नल जयसिंह, पैलासर को)
        - कल्याणसिंह
          - भवरकवर
          - रुकमण कवर
        - मोहबत सिंह
        - सुजानन सिंह
        - उमेदसिंह
        - इच्छरकवर (राजवी चन्द्रसिंह गाटा)
        - सिरेकवर (मेजर लालसिंह, धावा को)
        - जडाव कवर
      - जगमालसिंह
        - शिवदान सिंह
      - पन्नेसिंह (नीचे देखें)
      - भरतसिंह (नीचे देखें)
      - पन्ने कवर (रायतसर के रावत मानसिंह को)
      - समद कवर (राजवी गुलाबसिंह, बेणीसर को)
    - गिरधारीसिंह (अनुलग्न-ब)

अध्याय–अट्ठाईस

राव रणजीतसिंह
सन् 1837 ई.

राव रामसिंह के सन् 1830 ई मे शहीद हो जाने के तुरन्त बाद मे इनके पुत्र, राजकुमार रणजीतसिंह और करणीसिंह, जैसलमेर चले गए। वहा इनकी पैतृक भूमि मे महारावल गजसिंह ने इन्हें शरण दी और स्नेह मे अपने पास रखा। बीकानेर के महाराजा रतनसिंह ने राव रामसिंह के सबसे छोटे भाई ठाकुर सादूलसिंह को, दिनांक 3 नवम्बर, सन् 1830 ई, पूगल की राजगद्दी पर बैठाकर पूगल का राव घोषित कर दिया। मिस्टर ट्रैविलियन के सन् 1835 ई के फैसले के अनुसार महाराजा रतनसिंह को सन् 1829 ई में जैसलमेर के बासनपीर पर आक्रमण करने के लिए दोषी ठहराया गया था। महारावल गजसिंह के आग्रह पर ढाई लाख रुपये के जुर्माने के बदले मे महाराजा रतनसिंह ने राजकुमार रणजीतसिंह को पूगल राज्य वापिस देना स्वीकार किया। सन् 1837 ई मे बीकानेर के महाराजा ने राव सादूलसिंह को गद्दी छोडने के लिए कहा।

सन् 1837 ई मे रणजीतसिंह पूगल के राव बने। जब वह राजगद्दी पर बैठे तो जैसलमेर के दीवान उत्तमसिंह ने उनके महारावल गजसिंह की ओर से राजतिलक किया। उन्हें इस उत्सव मे भाग लेने के लिए जैसलमेर की ओर से विशेष तौर पर भेजा गया था। राव रणजीतसिंह राजगद्दी पर बैठने के कुछ समय पश्चात् बीमार हो गये। इनके विवाह से पहले ही सन् 1837 ई मे इनका देहान्त हो गया।

लालगढ महल की बही के पृष्ठ सख्या 383 के अनुसार, वि स 1894, चैत्र बदी 4 (सन् 1837 ई) को रणजीतसिंह पूगल के राव बने। इसी बही के अनुसार, वि स 1894, पोष सुदी 13 को सादूलसिंह पूगल मे बिराज रहे थे। यह राव रणजीतसिंह के सगे चाचा थे। इन्होने महाराजा रतनसिंह से करणीसर गाव की जागीर की चिट्ठी लेने से इनकार कर दिया था।

वि स *1894* के चैत्र मास के नवरात्रे पूगल मे बडे धूम धाम से मनाये गये। समारोह मे पूगल के सारे खान, प्रधान और प्रमुख केलण भाटी आए। ठाकुर सादूलसिंह ने रणजीतसिंह को पूगल का स्वामी स्वीकार करते हुए पहले पहल नजर पेश की। उनके बाद म वरिष्ठता के अनुसार अन्य उपस्थित लोगो ने नजरें भेंट की।

बीकानेर ने पूगल के खालसे किए हुए अनेक गाव वापिस नही लौटाए थे परन्तु अपने अधिकार मे रखे, इनमे मोतीगढ एक ऐसा गाव था। बीकानेर ने भानीपुरा और अमरपुरा गाव पूगल को उसी दिन लौटा दिए जिस दिन रणजीतसिंह पूगल की राजगद्दी पर बैठे थे।

कर्नल टाड ने अपनी पुस्तक में पृष्ठ संख्या 1227 पर लिखा है – मेरे परिश्रम का मुख्य लाभ ब्रिटिश शासन को तब होगा जब उन्हें राजपूताने के देशी राज्यों के अन्तर राज्य विवादों को सुलझाने के लिए और समाधान करने के लिए, संरक्षक के तौर पर मध्यस्थता करनी होगी। उन्ह विवादों के मूल कारणों म जाकर न्यायिक पहलू का अध्ययन करना होगा। यहा हम सीमा के झगड़ों को समझना होगा, जिसके कारण बीकानेर और पूगल (जैसलमेर की कनिष्ठ शाखा) व मम्मेर के बीच अनेक बार रक्तपात हुआ। इनमें हमेशा बीकानेर ने पहल करके आक्रमण किया, बीकानेर के करणसिंह ने पूगल के राव सुदरसेन पर सन् 1665 ई. मे आक्रमण किया/जैसलमेर के महारावल अमरसिंह ने बदले की कार्यवाही करके सन् 1670 ई. मे पूगल वापिस ले लिया। राजा दलपतसिंह ने पूगल लेने के प्रयास किए, परन्तु असफल रहे। महाराजा अनूपसिंह ने गणेशदास और विमनावतो के विरुद्ध आक्रमण किया, परन्तु वह सफल नही हुए, महाराजा गजसिंह राव अमरसिंह के विरुद्ध गये, इन्होंने सन् 1783 ई. मे पूगल पर अधिकार कर लिया और आखिरी बार, सन् 1830 ई. मे, महाराजा रतनसिंह ने राव रामसिंह पर आक्रमण किया।

प्रत्येक बार पूगल ने बीकानेर से अपने क्षेत्र को वापिस लेने के लिए संघर्ष किया, जिससे ऐसा आभास होता है कि इन्होंने प्रजा को शान्ति मग की। इसलिए यह आवश्यक है कि हम हमारे निर्णय पर पहुचने के लिए उन पूर्व के अतीत के कारणो का पता लगाए।'

उन्होंने यह भी विचार व्यक्त किया कि, 'मूलराज के पिता के समय या उनके पितामह जसवन्तसिंह के समय, भाटियो के राज्य की सीमा उत्तर म गारा नदी तक थी, यह उनके और मुलतान के बीच राज्य विभाजन की सीमा थी, पश्चिम मे सीमा पजनद तक थी। इस प्रकार इनके राज्य मे सिन्ध की मरुडी किन्तु उपजाऊ घाटी का क्षेत्र था। दक्षिण मे यह राज्य घाट तक फैला हुआ था, जिसमे शिव, कोटडा और बाडमेर थे, जिन्हें मारवाड ने छीन लिया, पूर्व मे फलोदी–पोकरण और अन्य भाग, जैसे पूगल और भटनेर थे, जिन्हें अब बीकानेर ने छीन लिया था। बहावलपुर का पूरा राज्य राव केलण के भाटी वशजो की भूमि से बना हुआ है।'

'ईश्वर जानता है कि जैसलमेर ने इन खोयी हुई भूमियो के लिए कभी दावा पेश किया–यह भूमि बीकानेर, जोधपुर और बहावलपुर के अधिकार मे रह गई। राजा सूरतसिंह ने माधोसिंह रामचन्द्रोत का बहावलपुर वापिस करने का दावा भेजा था, उसे नत्थी कर दिया गया।'

'रावल गजसिंह को, शाहगढ, घोटरू और दीनगढ का क्षेत्र, सन् 1843 ई. मे, वापिस दिलवाया गया। दीनगढ का नाम रामगढ रखा गया।'

'जब बहावलपुर के लिए माधोसिंह का दावा खारिज कर दिया गया, तब बीकानेर के रतनसिंह ने मौजगढ, मरोठ और फूलरा उनके होने का दावा पेश किया। ब्रिटिश शासन ने उन्हें सूचित किया कि चूकि यह किले कभी भी उनके अधिकार मे नहीं रहे, इसलिए उनका दावा स्वीकार करने मे वह असमर्थ थे।'

मेरे विचार मे जब महाराजा सूरतसिंह ने बहावलपुर के लिए देरावर के रामचन्द्रोतो के दावे ब्रिटिश शासन को अग्रसारित किये उस समय उनकी नीयत साफ नहीं थी। वह

चाहते थे कि पहले रामचन्द्रोत भाटियो के यह दावे खारिज हो जाए। इसीलिए उन्होने ठोस और तर्कसगत प्रकरण प्रस्तुत नही किये। रामचन्द्रोतो के दावे खारिज होते ही महाराजा रतनसिह ने मोजगढ, मरोठ और फूलरा के लिए अपना दावा पेश कर दिया। उन्हे चाहिए था कि वह रामचन्द्रोतो का दावा पूगल की ओर से बनाकर पेश करते। साथ मे यह भी लिखते कि क्योंकि पूगल अब उनके सरक्षण का राज्य था और यह समस्त किले सन् 1650 ई से पहले पूगल के थे, जिन्हे इसने रामचन्द्रोतो को दिए थे, इन्हे सन् 1763 ई मे बहावल खा ने अपने अधिकार मे कर लिया था। इस प्रकार के स्पष्ट दावे के स्वीकार होने की सम्भावनाए अधिक थी। बीकानेर ने स्वार्थ के कारण बहावलपुर रामचन्द्रोतो से खोया, वही स्वय के दावे को ब्रिटिश शासन से झूठा करार दिलवाया।

अध्याय–उनतीस

राव करणीसिंह
सन् 1837-1883 ई.

(5) सन् 1838 ई : राजकुमारी चाद कवर का जन्म हुआ। यह बाद मे महाराजा सरदारसिंह की पटरानी हुई।

(6) 1839 ई. . राजकुमार रुगनाथसिंह का जन्म हुआ। यह सन् 1883 ई मे पूगल के राव बने।

(7) सन् 1840 ई राजकुमारी तख्त कवर का जन्म हुआ। इनका विवाह भी महाराजा सरदारसिंह से हुआ।

महाराजा रतनसिंह ने खारबारे की जागीर ठाकुर गोपालसिंह भाटी को प्रदान की।

(8) सन् 1842 ई · दूसरे राजकुमार लक्ष्मणसिंह का जन्म हुआ।

(9) सन् 1845 ई राजकुमारी किसन कवर का जन्म हुआ। इनका विवाह भी महाराजा सरदारसिंह से हुआ।

इसी वर्ष बीकानेर की सेना को ब्रिटिश शासन ने प्रथम सिख युद्ध मे सहायता के लिए बुलाया। इस सेना के साथ जाने के लिए उन जागीरदारो को आदेश दिया गया था जो बीकानेर से 'घोडा चाकरी' से बन्धे हुए थे। जिन जागीरदारो या उनके प्रतिनिधियो ने इस युद्ध को जीतने मे सहयोग दिया, उन्हे लौटने पर महाराजा रतनसिंह ने 'सिरोपाव' भेंट करके सम्मानित किया। इनमे सिधमुख, छाडवास, खारबारा (गोपालसिंह भाटी), जैतसीसर, केला (मूलसिंह भाटी), जसाणा, बीठनोक, श्रीरगसर के ठाकुर शामिल थे। महाजन, रावतसर, साडवा, बीठनोक और कुम्भाणा ठिकानो के प्रधान सेना के साथ मे गए थे। इनमे केला, बीठनोक और खारबारा केलण भाटियो के ठिकाने थे। पूगल के राव बीकानेर राज्य को 'घोडा चाकरी' देने के लिए बाध्य नही थे, इसलिए पूगल इस सैनिक सहायता मे सम्मिलित नही हुआ।

महाराजा रतनसिंह ने मोतीगढ की जागीर सत्तासर के ठाकुर अनोपसिंह के पुत्र हनुतसिंह को प्रदान की। बीकानेर ने राव रणजीतसिंह को सन् 1837 ई मे पूगल वापिस लौटाते समय भाटियो के अनेक गाव अपने पास रख लिए थे। इनमे मोतीगढ भी एक गाव था, जिसे उन्होने अब हनुतसिंह को दिया।

'छतरगढ़' गाव का यह नया नाम पुराने गाव के स्थान पर महाराजा गजसिंह के पुत्र छत्रसिंह के नाम पर रखा गया। यह गाव पहले राणेर की जागीर का था, इसे बीकानेर ने पूगल को वापिस नहीं किया था। छतरसिंह के पुत्र दलेलसिंह को पूगल राज्य और किसानावतो के अनेक गाव बीकानेर द्वारा दिए गए थे। दलेलसिंह का देहान्त सन् 1838 ई. मे हुआ। यह सगतसिंह के पिता और लालसिंह के दादा थे। लालसिंह, महाराजा डूंगरसिंह और गगासिंह के पिता थे। लालसिंह की जागीर का मुख्यालय छतरगढ़ मे था।

(10) सन् 1848 ई ब्रिटिश शासन ने एक बार फिर, द्वितीय सिख युद्ध के लिए, बीकानेर से सैनिक सहायता मागी। पूगल को छोडकर अन्य सभी ठिकानो ने अपने सैनिक बीकानेर की सेना के साथ भेजे।

(11) सन् 1849 ई : जैसलमेर, बीकानेर और बहावलपुर तीनो राज्यो की सीमा को मिलाने वाले समान बिन्दु को मौके पर कैप्टन जैक्सन और मिस्टर कुनिंघम ने निर्धारित किया। यह स्थान स्पष्टतया निर्धारित होने से इन राज्यो मे सीमा सम्बन्धी विवाद समाप्त

हुए। यह सीमा रेखा देसलो से शियोली की दिशा मे थी। शहीद राणा भाणा का टोबा इस सीमा के लिए निर्णायक स्थान था। यही सीमा वर्तमान मे भारत और पाकिस्तान की सीमा है।

(12) सन् 1851 ई राव करणीसिंह समय के साथ अनुभवी और ज्यादा व्यावहारिक हो गए थे। पुरानी परम्परा का स्थान नई व्यवस्था ले रही थी। सन् 1851 ई मे वह बीकानेर गए और महाराजा सरदारसिंह के राज्याभिषेक समारोह मे भाग लिया। वह बीकानेर के दरबार मे भी उपस्थित हुए। यह पूगल राज्य के इतिहास मे पहला अवसर था जब पूगल का कोई शासक, बीकानेर के शासकों के राज्याभिषेक समारोह मे या शासको के दरबार मे उपस्थित हुआ हो। यह दरबार मे तभी उपस्थित हुए जब बीकानेर के महाराजा ने इनकी दो शर्तों को मानने का वचन दिया।

1 महाराजा उनकी पुत्री से विवाह करके उन्हे बीकानेर राज्य की पटरानी घोषित करेंगे।

2 बीकानेर के दरबार म पूगल के राव के बैठने के लिए ऐसा स्थान निर्धारित किया जायेगा जो अन्य किसी सामन्त, प्रमुख या जागीरदार से नीचा नही होगा और न ही वह किसी के बैठने के स्थान से अगला स्थान होगा।

उपरोक्त दोनो शर्तों को स्वीकार करने का वचन लेकर राव करणीसिंह बीकानेर के दरबार मे आए।

राव करणीसिंह को महाराजा रतनसिंह, सरदारसिंह और डूगरसिंह न उनके जन्म दिन और दशहरा के दरबारो मे नही आने के लिए छूट दे रखी थी। अन्य सब जागीरदारो के लिए इन दोनों दरबारो मे उपस्थित रहना अनिवार्य था। दिवंगत महाराजा रतनसिंह के समय राव करणीसिंह कभी बीकानेर नहीं आए थे, उनके दरबार या कचहरी म वह कभी उपस्थित नही हुए और इन्होने बीकानेर राज्य को कोई कर या अन्य रकम कभी नही दी।

महाराजा रतनसिंह का राव करणीसिंह क पिता राव रामसिंह को व्यर्थ म मारने के अपराध का बोध हो गया था, वह इस जघन्य कार्यवाही के लिए अपने आप को दोषी समझने लग गए थे। तभी वह राव करणीसिंह के घावो को सहलाने के प्रयत्न म उन्हें सभी रियायतें प्रदान कर रहे थे। वह प्रायश्चित की अग्नि मे चौदह वर्ष, सन् 1837 स 1851 ई तक, जलते रहे। इसी प्रायश्चित की श्रृंखला को महाराजा सरदारसिंह न बनाए रखा। वह अपने पिता के दुष्कर्मों को भुगतते रहे और पूगल की सभी शर्तें मानते रहे। उसी राव रामसिंह की पौत्री को उन्होने बीकानेर की पटरानी बनाई, परन्तु यही काफी नहीं था, उन्होने राव करणीसिंह की दो और पुत्रियो को भी अपनी रानियां बनाईं।

(13) सन् 1853 ई राजकुमारी चाद कवर का विवाह महाराजा सरदारसिंह स वि स 1910, फाग बदी 8 (फरवरी सन् 1853 ई) मे हुआ। यह विवाह करके वह पूगल से सीधे गजनेर चले गए, जहां उन्होने अपने दाम्पत्य जीवन के भोग का आरम्भ किया। केवल पाच दिन बाद मे महाराजा सरदारसिंह एक बार फिर गोधूली वेला मे पूगल पहुच गए। पूगल के लोग यह जानकर अचम्भे मे पड गए कि केवल पांच दिन बाद मे ही वह राव करणीसिंह की दूसरी पुत्री तख्त कवर से विवाह करने आए थे। उस समय महाराजा की आयु 35 वर्ष की

थी। राजकुमारी तरत कवर का विवाह वि स 1910, फाग बदी 13 (फरवरी, सन् 1853 ई) को हो गया।

महारानी चाद कवर के तीन चचेरा बहनो सत्तासर के मूलसिंह की बहनें, का विवाह राव करणीसिंह द्वारा बीकानेर के प्रमुख सरदारो के साथ किया गया। गुलाब कवर का विवाह महाराज खडगसिंह के पुत्र मुकनसिंह के साथ किया किसन कवर और मदन कवर, दोनो बहनो का विवाह महाराज खडगसिंह के पुत्र तख्तसिंह के साथ किया। खडगसिंह महाराज दलेलसिंह के पुत्र थे।

(14) सन् 1854 ई राव करणीसिंह के दूसरे पुत्र राजकुमार लक्ष्मणसिंह का ग्यारह वर्ष की आयु म अचानक देहान्त हो गया।

(15) सन् 1856 ई राजकुमार रुगनाथसिंह का विवाह सरदारशहर तहसील के शिमला गाव क भिगात बीका के यहा हुआ। इस विवाह से पहल पूगल के गढ की विस्तार स मरम्मत करवाई गई।

(16) सन् 1857 ई बीकानेर राज्य न सन् 1857 ई की सैनिक क्राति का विफल करने मे ब्रिटिश शासन की सहायता की। बीकानेर की सरहद पर स्थित हांसी और सिरसा की पलटने विद्रोह मे शामिल हो गई थी। इस विद्रोह म महाराजा सरदारसिंह न विद्रोहियो का दमन करने के लिए अग्रेजो की बहुत सहायता की और पीडित अग्रेज परिवारो को विद्रोह की समाप्ति तक अपने राज्य म आश्रय दिया। इस सहायता के बदले म अग्रेज सरकार ने महाराजा को सन् 1861 ई म एक सनद द्वारा सिरसा जिले के 41 गावो का टीबी परगना दिया। यही गाव पहले सन् 1820 ई म मिस्टर ट्रविलियन को जाच के बाद बीकानेर से लेकर पजाब को दिए गए थे।

इस विद्रोह को दबाने के लिए बीकानर की सना राज्य की सीमा स बाहर भेजी गई थी। राव करणीसिंह से किसी प्रकार की सैनिक सहायता देने के लिए नही कहा गया। इससे स्पष्ट था कि पूगल के लिए बीकानेर को सैनिक सहायता देना अनिवार्य नही था।

(17) सन् 1863 ई महाराजा सरदारसिंह का एक और विवाह राव करणीसिंह की सबसे छोटी और तीसरी पुत्री किसन कवर स वि स 1920 फाल्गुन बदी 7 को हुआ। इस प्रकार महाराजा सरदारसिंह के तीन विवाह पूगल म तीन सगी बहनो से फाल्गुन माह मे हुए।

पहला विवाह चाँद कवर से हुआ, उस समय महाराज की आयु 35 वर्ष और राजकुमारी को 15 वर्ष थी। दूसरा विवाह पाच दिन बाद म राजकुमारी तरत कवर से हुआ उनकी आयु 13 वर्ष की थी। तीसरे विवाह के समय महाराजा की आयु 45 वर्ष और राजकुमारी किसन कवर की आयु 18 वर्ष थी। वास्तव म महाराजा सरदारसिंह राज रोग (क्षयरोग) से भयकर पीडित थे, इसलिए इन्होने अनेक विवाह करके स तान उत्पत्ति के प्रयत्न किए। लेकिन क्षय रोग से निबल महाराजा के ज्यादा विवाह करने से स तान कहा से उत्पन्न होती। इसी प्रकार महाराजा डूगरसिंह भी क्षय रोग से निर्बल थे, वह भी कोई सन्तान पैदा करने म असमर्थ रहे।

(18) सन् 1864 ई.. इस वर्ष महाराजा सरदारसिंह ने खारबारे की जागीर भादरा के ठाकुर बहादुरसिंह को बख्शी। किसनावत भाटियों ने इसका विरोध करके भादरा ठाकुर को बेइज्जत करके खारबारे से मार भगाया। इस घटना से अप्रसन्न होकर महाराजा ने खारबारे के पास के भाटियों के अनेक गाव खालसे कर लिए। इसके फलस्वरूप खारबारे के भाटियों ने बीकानेर के महाराजा के विरुद्ध ब्रिटिश एजेन्ट के पास आबू मे मुकदमा दायर किया। भाटी यह मुकदमा जीत गए। फैसले का सार यह था कि जिन जागीरो को बीकानेर राज्य ने प्रदान नही की थी उन्हें खालसे करने का अधिकार राज्य को नही था। यह जागीरें पूर्व में किसनावतो को पूगल द्वारा प्रदान की गई थी।

इसी वर्ष बीकानेर राज्य और पूगल मे एक आपसी समझौता हुआ, जिसके अनुसार पूगल ने पूगल, जोधासर और सियासर चौगान के अपने जकात के थाने समाप्त करके इनके स्थान पर बीकानेर को थाने स्थापित करने का अधिकार दिया। इनके बदले मे बीकानेर ने क्षतिपूर्ति के लिए पूगल को पांच सौ रुपये प्रतिमाह देते रहने का इकरार किया।

(19) सन् 1868 ई महारानी चाद कवर ने महाराजा सरदारसिंह स महाराज लालसिंह (पौत्र दलेलसिंह) पर दबाव डलवाया कि वह अपने पुत्र डूगरसिंह का विवाह उनकी भतीजी मेहताब कवर से करें। मेहताब कवर सत्तासर के ठाकुर मूलसिंह की पुत्री और शिवनाथसिंह की बहन थी। इस समय डूगरसिंह की आयु चौदह वर्ष और मेहताब कवर की आयु पांच वर्ष थी। इस प्रकार राव करणीसिंह ने अपनी पौत्री मेहताब कवर का विवाह बीकानेर के भावी महाराजा से किया।

यह विवाह भी अत्यन्त महत्वपूर्ण था, इसलिए पूगल के गढ की विस्तार से मरम्मत करवाई गई और उसम अनेक नये भवन और महल बनवाये गए। ड्योढी पर एक बड़ा महल भी बनवाया गया। मेहताब कवर का कन्यादान राजकुमार रुगनाथसिंह और उनकी युवरानी द्वारा किया गया।

राजकुमारी मेहताब कवर का जन्म सन् 1863 ई म हुआ था, इनका विवाह पाच वर्ष की आयु मे सन् 1868 ई मे हुआ। यह नौ वर्ष की आयु मे, सन् 1872 ई. मे, बीकानेर की महारानी बन गई। जब यह 24 वर्ष की थीं, तब सन् 1887 ई मे, महाराजा डूगरसिंह का स्वर्गवास हो गया। महारानी मेहताब कवर का देहान्त 97 वर्ष की आयु में, सन् 1960 ई मे, हुआ। यह केवल पन्द्रह वर्ष महारानी रही।

(20) सन् 1869 ई · राजकुमार रुगनाथसिंह का जन्म सन् 1839 ई मे हुआ था, इनका पहला विवाह सत्तरह वर्ष की आयु मे, सन् 1856 ई मे हुआ था। तीस वर्ष की आयु तक इनके सन्तान नही होने से, इनका दूसरा विवाह झावर (मारवाड) के ठाकुर की पुत्री से किया गया। इस विवाहोत्सव के लिए बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह और जैसलमेर के महारावल बैरीसालसिंह पूगल पधारे थे। पूगल मे इन शासको के सम्मान म एक भव्य दरबार का आयोजन किया गया। दरबार मे दोनों शासक बराबर बिराजे। जैसलमेर और बीकानेर के शासक मेहमानो का आदर सम्मान करते हुए राव करणीसिंह ने इन दोनो को नजरें पेश की। समारोह म उपस्थित खान, प्रधान और अन्य सरदारों का इन शासको से परिचय कराया गया। बीकानेर द्वारा पूर्व मे खालसे किया हुआ मोतीगढ़ गाव इस दरबार मे पूगल को वापिस दिया गया।

(21) सन् 1871 ई केलण भाटियो के जांगलू ठिकाने को महाराजा सरदारसिंह द्वारा ताजीम मे क्रमोन्नत किया गया।

(22) सन् 1872 ई दिनाक 16 मई, सन् 1872 ई को महाराजा सरदारसिंह का देहान्त हो गया। यह नि सन्तान मरे। यह पूगल के बहुत नजदीक के सम्बन्धी और हितैषी थे। इनकी महारानी चाद कवरजी, खडगसिंह के पौत्र और मुकनसिंह के पुत्र, जसवन्तसिंह को गोद लेने की इच्छुक थी। परन्तु डूगरसिंह के पिता लालसिंह ने अपने पुत्र का पक्ष बडी योग्यता से प्रस्तुत किया और वरिष्ठ माजी साहिबा, जो स्वय एक भटियाणी थी, को अपने पक्ष मे कर लिया। इन्हे उदयपुर के महाराणा शम्भुसिंह का समर्थन भी प्राप्त था। लालसिंह स्वय तो महाराजा सरदारसिंह के उत्तराधिकारी नही बन सके परन्तु इन्होने अपने प्रभाव से ब्रिटिश सरकार से अपने पुत्र डूगरसिंह को उत्तराधिकारी बनाने का अनुमोदन करा लिया। महाराजा डूगरसिंह 11 अगस्त, सन् 1872 ई को बीकानेर की राजगद्दी पर बैठे। मेहताब कवर बीकानेर की महारानी बन गई। इस प्रकार महाराजा सरदारसिंह द्वारा राव करणीसिंह को दिया गया वचन कि वह मेहताब कवर को बीकानेर की महारानी बनाएगे, पूरा हुआ।

महाराजा डूगरसिंह के राजगद्दी पर बैठने से पहले, जेठ बदी 13 को लालसिंह ने राव करणीसिंह को पत्र लिखा कि पूगल के समस्त अधिकार, मान्यताए एव परम्पराए यथावत रहेगी। यह उन्होने लक्ष्मीनाथजी और करणीजी की शपथ लेकर आश्वासन दिया था, जिसे इनके पुत्र महाराजा डूगरसिंह ने पूरा निभाया।

(23) सन् 1873 ई इस वर्ष महाराजा डूगरसिंह को पूण शासनाधिकार प्राप्त हुए। यह दिनांक 10 माच, सन् 1873 ई के जे सी ब्रुक्स के प्रतिवेदन के पैरा 22 से स्पष्ट है। उन्होने यह प्रतिवेदन महाराजा डूगरसिंह को औपचारिक रूप से शासनाधिकार सौपने के विषय मे भेजा था, उन्होने लिखा कि, 'समारोह के हर्षोल्लास मे पूगलयाणिजी के देहान्त से कुछ कमी रही। महाराजा की इच्छा थी कि वह समारोह को भोजो और आतिशबाजियो से तीन दिन तक मनायेंगे परन्तु महारानी के देहान्त के कारण यह सभी उत्सव नही किए जा सके।'

महाराजा सरदारसिंह की महारानी चान्द कवर पूगलयाणी का देहान्त दिनाक 22 जनवरी सन् 1873 ई को हुआ। इसी दिन देवी कुण्ड सागर म इनका सम्मान से दाह संस्कार किया गया। रानी तख्त कवर और किसन कवर का देहा त महाराजा सरदारसिंह के जीवनकाल मे ही हो गया था।

महाराजा डूगरसिंह अपने ददीया ससुर राव करणीसिंह का बहुत सम्मान करते थे।

(24) सन् 1875 ई महाराजा डूगरसिंह ने अपने ससुर ठाकुर मूलसिंह को सरदारपुरा गाव बक्शा।

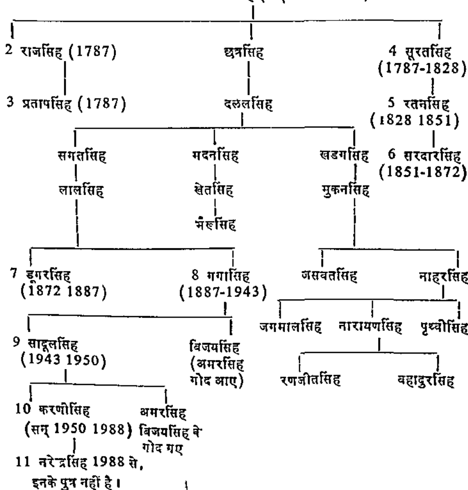
(25) सन् 1876 ई सम्राट एडवड सप्तम जब वह प्रिन्स ऑफ वेलस थे, भारत के दौरे पर आए। उनके सम्मान मे आगरा मे एक भव्य दरबार का आयोजन किया गया। इसमे राज्य के अन्य सरदारो और प्रमुखो सहित महाराजा डूगरसिंह भी पधारे। राव करणीसिंह भी महाराजा के साथ आगरा गए।

(26) सन् 1879 ई महाराजा डूगरसिंह ने अपने साले, सत्तासर के शिवनाथ सिंह को फूलसर और डूगरसिंह पुरा गाव जागीर मे बख्शे।

(27) सन 1881 ई बीकानेर राज्य पूगल की जागीर का बन्दोबस्ती सर्वेक्षण करना चाहता था, इसके लिए राव करणीसिंह ने अपनी सहमति नहीं दी।

महाराजा डूगरसिंह ने रोजडी के ठाकुर गुमानसिंह को बीकानेर राज्य का ताजीमी सरदार बनाया।

ऊपर के वृतान्त को सही समझने के लिए महाराजा गजसिंह से बीकानेर की वशतालिका नीचे दी गई है



(28) सन् 1883 ई सन् 1883 ई मे राव करणीसिंह का देहान्त हो गया। इन्होने 73 वर्ष की लम्बी आयु पाई। इन्होंने 46 वर्ष तक पूगल मे शासन किया। इनके शासनकाल मे प्रजा सन्तुष्ट और सुखी थी, आपसी झगडे नही थे। इनका प्रजा से भाईचारे

राव

अटूट सम्बन्ध था। इन्होंने अपने जंवाई महाराजा सरदारसिंह से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखे। इनके बाद मे महाराजा डूगरसिंह से भी इनके बहुत अच्छे सम्बन्ध रहे। महाराजा डूगरसिंह के सन् 1872 ई मे राजगद्दी पर बैठने के बाद मे महारानी मेहताब कवर ने पूगल के हितो का सदैव ध्यान रखा। महारानी मेहताब कवर ने महाराजा गगासिंह और सादूलसिंह के शासनकाल मे भी पूगल की घटनाओ मे अत्यन्त रुचि रखी और केलण भाटियो की सभी प्रकार से सहायता की। उनका यह मातृत्व, उनके देहान्त, सन् 1960 ई, तक बना रहा। राव करणीसिंह के एकमात्र पुत्र, राजकुमार रुगनाथसिंह थे, वह बाद मे पूगल के राव बने।

राव करणीसिंह ने अपने जीवनकाल मे एक कुआ बनवाया और इसके पास स्वय के नाम पर, 'करणपुरा' नाम का गाव बसाया। इसे उन्होंने लखा का प्रधान को बख्शा। इन्हे बीकानेर राज्य जकात के मुआवजे के रूप मे रुपये 500/– प्रति माह भुगतान करता था, यह बाद के रावो को भी बीकानेर राज्य से सन् 1949 ई. तक मिलता रहा। इसके बाद मे राजस्थान सरकार भी यह भुगतान सन् 1952-53 ई तक करती रही। इसके बाद मे राजस्थान मे जकात कर समाप्त कर दिए जाने से, पूगल को भी भुगतान बन्द हो गया।

महाराजा रतनसिंह ने राव रामसिंह को मारकर जो जघन्य अपराध किया था, उसका परिणाम राव रामसिंह की सती रानी के श्राप से उनकी आने वाली पीढिया भुगतती रही। इसी कारण महाराजा सरदारसिंह और डूगरसिंह को बार-बार पूगल विवाह करके श्राप का फल भुगतना पडा। इनका नि सन्तान मरना उसी श्राप की पूर्णाहुति थी।

अध्याय–तीस

राव रुगनाथसिंह
सन् 1883-1890 ई.

राव करणीसिंह की सन् 1883 ई मे मृत्यु के पश्चात् इनके पुत्र राजकुमार रुगनाथ सिंह पूगल के राव बने। इन्होने सन् 1890 ई तक सात वर्ष शासन किया।

इनका जन्म सन् 1839 ई में हुआ था। इनका पहला विवाह सत्तरह वर्ष की आयु मे सरदारशहर तहसील के सिमला गांव के भिंगोत बीकों के यहां सन् 1856 ई मे हुआ। जब इनके तीस वर्ष की आयु तक कोई सन्तान नहीं हुई, तब सन् 1869 ई मे इनका दूसरा विवाह मारवाड़ के झांवर गाव मे करणोत राठोडो के यहा हुआ। दूसरे विवाह से भी इनके कोई सन्तान नही हुई। इसलिए इनका तीसरा विवाह लखासर मे तवरों के यहां हुआ। रानी तवरजी के एक पुत्री आनन्द कवर, वि स 1942, सोमवार, श्रावण पूर्णिमा (सन् 1885 ई), को हुई। तीनो रानियों मे से किसी एक के भी पुत्र नही जनमा। दूसरी रानी करणोतजी का स्वर्गवास, वि स 1947 (सन् 1890 ई) मे हुआ, पहली रानी बीकीजी का स्वर्गवास, वि स 1956 (सन् 1899 ई) मे हुआ और तीसरी रानी तवरजी का स्वर्गवास, वि स 1959 (सन् 1902 ई) मे हो गया।

सन् 1883 ई मे राव बनने के पश्चात इन्होने महाराजा डूगरसिंह से पूगल की जागीर का पट्टा प्राप्त किया। यह पूगल के इतिहास मे पहला अवसर था जब कि पूगल के किसी भाटी राव ने जैसलमेर या बीकानेर राज्यों से जागीर का पट्टा प्राप्त किया था। पूगल राज्य अपनी प्रभुसत्ता सन् 1830 ई मे ही खो चुका था। यह कितने दुर्भाग्य की बात थी कि जिस राव केलण के वशज अन्यो को जागीरें प्रदान किया करते थे, उन्हीं के वशज 450 वर्ष पश्चात अपनी ही पूगल की जागीर के पट्टे के लिए अन्यो के आगे हाथ पसारते थे। इन्ही बीकानेर राज्य के शासकों के पूर्वजो को पूगल के राव शरण और पोषण दिया करते थे, मन्डोर और जोधपुर का राज्य लेने मे इनकी सहायता की, राज्य के विस्तार करने के अभियानों म इनके साथ रहे, वही पूगल समय के फेर से बीकानेर के उन शासकों के वशजो से पूगल की जागीर का पट्टा प्राप्त करने के लिए अन्य जागीरदारो के साथ पक्तिबद्ध खड़ा था। अब पूगल के राव, राव नही थे, बीकानेर राज्य के जागीरदार थे।

सन् 1864 ई में महाराजा बीकानेर ने कानोलाई सहित बिसनावतो के अनेक गांव खालसे कर लिए थे। बीकानेर की इस कार्यवाही का खारबारे के ठाकुर भोपालसिंह के पुत्र तख्तसिंह ने विरोध किया। उन्होंने महाराजा सरदारसिंह की इस अन्यायपूर्ण कार्यवाही के विरुद्ध माउन्ट आबू स्थित ब्रिटिश रेजिडेन्ट को अपील की। इस अपील का निर्णय

किसनावत भाटियो के पक्ष मे सन् 1887 88 म हुआ। निर्णय मे लिखा गया था कि जिन जागीरो को बीकानेर के शासकों द्वारा प्रदान नही किया गया था, उन्हें खालसा करने का अधिकार बीकानेर राज्य को प्राप्त नही था। फैसले म स्पष्ट आदेश थे कि सन् 1864 ई मे कानोलाई सहित समस्त खालसे किए गए गाव खारबारे को लौटाए जायें।

उपरोक्त निर्णय के होने म लगभग 23 वर्ष लग गए। इस अवधि मे महाराजा सरदारसिंह और डूगरसिंह का देहान्त हो चुका था, महाराजा गगासिंह बीकानेर के शासक बन गए थे। इतने वर्षो तक इन गावो को अपने अधिकार म रखने से बीकानेर राज्य अपने आप को इनका स्वामी मान बैठा था। इस निर्णय की पालना मे अगर यह गाव किसनावतो को वापिस किए जाते तो पूर्व के शासको की अनुचित कार्यवाही की भर्त्सना होती और वर्तमान शासक की नाक का प्रश्न था।

जैसे सन् 1835 ई के मिस्टर ट्रैविलियन के फैसले की पालना महाराजा रतनसिंह ने दो वर्ष तक नही की थी, वैसे ही रेजिडेन्ट के फैसले की पालना करने से बीकानेर राज्य की कौंसिल टालती रही। इस मुकदमे को लडने के लिए खारबारा के ठाकुरो ने बीकानेर के साहूकारों से हजारों रुपया कर्जा उठाया था। दिन पर दिन कर्जे की रकम पर ब्याज बढ रहा था। ठाकुर ने अपने पक्ष मे दिए गए आदेश की पालना के लिए बीकानेर पर जोर देना शुरू किया और निवेदन किया कि उनकी जागीर बहाल करके उन्हे सौंपी जाए। जब बीकानेर पर ज्यादा दबाव पडने लगा तो दीवान ने ठाकुर को बुलाकर साहूकारा के कर्जे की रकम के बारे मे पूरी जानकारी ले ली। कौंसिल मे विचार विमर्श करके निर्णय लिया गया कि बीकानेर राज्य अपनी तरफ से साहूकारो को ब्याज सहित खारबारे का कर्जा चुका दे। इसके लिए खारबारा के ठाकुर सहमत हो गये। बीकानेर राज्य ने साहूकारो का पूरा कर्जा चुका दिया। कुछ समय पश्चात ठाकुर ने जागीर उन्ह शीघ्र लौटाने के लिए निवेदन किया। अब राज्य द्वारा कर्ज चुकाने के बाद ठाकुर का पक्ष कमजोर हो गया था। राज्य ने उन्हें बताया कि चूकि राज ने कर्जे की सारी रकम चुकाई थी इसलिए ठिकाना तो उन्हें लौटा दिया गया समझा जाए परन्तु जो रकम साहूकारो को राज्य न चुकाई थी वह रकम अब ठिकाने के विरुद्ध कर्जा लिखी गई थी। जब तक यह भारी कर्जा नही चुकता ठिकाने का प्रबन्ध राज्य के पास रहेगा। राज्य के अधिकारी ठिकाने क लगान की उगाई करके खजाने म रुपया जमा कराएगे और यह वसूली कर्जे व ब्याज के विरुद्ध जमा होती रहेगी। जिस दिन राज्य का पूरा कर्जा वसूल हो जायेगा ठिकाना ठाकुर को अवश्य लौटा दिया जायेगा।

इस तर्क स ठाकुर सकते म आ गए। अगर साहूकारा का कर्जा रहता तो उससे बीकानेर को कुछ लेना देना नही होता, वह जागीर की बहाली के लिए ब्रिटिश शासन से निवेदन कर सकते थे। परन्तु अब वह अपने विकल्प खो बैठे थे। वह अनजाने म एक चाल म फस गए। जब सन् 1898 ई मे महाराजा गगासिंह को समस्त शासनाधिकार मिल गए तब ठाकुर न उनसे भी ठिकाना लौटाने के लिए प्रार्थना की, परन्तु महाराजा ने अपने पुरखो की लाज रखने के लिए कहा कि ठाकुर कर्जा चुकादें, जागीर सम्भाल लें। ठाकुर के लिए हजारो रुपया चुकाना कहा सम्भव था। महाराजा गगासिंह इसी जिद पर, उनके देहान्त

सन् 1943 ई. तक, अड़े रहे। वह कभी नही चाहते थे कि एक छोटा जागीरदार इस प्रकार से न्याय की शरण में जा कर राज्य की तौहीन करे। सन् 1864 ई की अनुचित कार्यवाही अस्सी वर्ष बाद भी कायम रही। जब महाराजा सादूलसिंह शासक बने तब अनेक सरदारो ने उनसे राज्य का कर्जा माफ करके, खारबारा उसके तत्कालीन ठाकुर को देने का निवेदन किया। परन्तु वह भी अपने पिता के रवैये पर अडे रहे। जब स्वतन्त्रता प्राप्ति की सम्भावनाएं स्पष्ट हो गई और राज्यों का भारतीय सघ मे विलय होना निश्चित लगने लगा, तब एक बार फिर महाराजा से ठिकाना बहाल करने की गुहार की गई, वह नही माने। परिणाम यह हुआ कि खारबारे के गाव वापिस किसनावत भाटियो को कभी नही मिले। उसका राज्य के अधूरे चुके कर्जे के साथ राजस्थान मे विलय हो गया।

राव रुगनाथसिंह सन् 1887 ई. मे महाराजा गगासिंह के राज्याभिषेक समारोह मे बीकानेर मे उपस्थित हुए थे। अब वह शासक नही रहे, राज्य के जागीरदार थे, इसलिए दरबार मे आना उनके लिए अनिवार्य था। उन्होने राज्याभिषेक के सारे समारोहों और उत्सवो मे भाग लिया।

सन् 1890 ई. मे राव रुगनाथसिंह बीमार पड गए। उन्होने किसी को अपना उत्तराधिकारी नामजद नही किया, इसे उन्होने पूगल की परम्परा के अनुसार तय होने के लिए छोड दिया। पूगल मे गोद लेने की परम्परा यह थी कि जो व्यक्ति दिवन्गत राव के उत्तराधिकारी होने की श्रृखला मे सबसे नजदीक होता उसी का वशज गोद लिया जाता था। ऐसा नही था कि जो दिवन्गत राव के वरिष्ठता के क्रम मे सबसे नजदीक होता उसे गोद लिया जाये। इस प्रकरण मे राव रामसिंह के भाई अनोपसिंह के पौत्र मूलसिंह के पुत्र ठाकुर शिवनाथसिंह का गोद जाने का परम्परा के अनुसार पहला अधिकार बनता था। अनोपसिंह के भाई ठाकुर सादूलसिंह के पौत्र वरिष्ठता से दिवन्गत राव के ज्यादा नजदीक थे, परन्तु उनका गोद आने का अधिकार नही था।

इनका देहान्त, वि. स 1947, बैसाख सुदी 13 (सन् 1890 ई.) मे हुआ। यह अपने पीछे अपनी माता, रानी पातावत जी, तीन रानियां और पाच वर्ष की पुत्री, आनन्द कवर को छोड गए।

इनको पूगल की प्रजा बहुत चाहती थी। यह अपने व्यवहार के कारण बहुत लोकप्रिय थे। यह नाथ सम्प्रदाय में विश्वास रखते थे और अपने गुरुजी की भक्ति मे 'वाणियो' की रचना किया करते थे। इन्होने अपने जीवनकाल मे छीला गाव के पास एक कुआ खुदवाया और स्वय के नाम पर भानीपुरा के पास, 'रुगनाथपुरा' नाम का नया गाव बसाया।

अध्याय–इकतीस

रांव मेहताबसिंह

सन् 1890-1903 ई.

राव रुगनाथसिंह का देहान्त सन् 1890 ई मे हो गया, इनके कोई पुत्र नही था। पूगल की गोद लेने की परम्पराओ के अनुसार, राव रामसिंह के छोटे भाई अनोपसिंह के वशज ठाकुर शिवनाथसिंह का राव बनने का अधिकार था। परन्तु राव रुगनाथसिंह और उनकी रानी बीकीजी ने बडे स्नेह और लाड-प्यार से राव रामसिंह के सबसे छोटे भाई, सादूलसिंह के दूसरे पुत्र गिरधारीसिंह के पुत्र मेहताबसिंह को पाला पोसा था। यह उन्ही के पास रह कर बडे हुए थे। तीनो रानियो का झुकाव मेहताबसिंह की तरफ था। इनकी इच्छाओं का आदर करते हुए ठाकुर शिवनाथसिंह ने राव बनने का अपना अधिकार त्याग दिया। ठाकुर सादूलसिंह के बडे पुत्र दुर्जनसालसिंह, जिनका शिवनाथसिंह के बाद में राव बनने का अधिकार बनता था, ने भी मेहताबसिंह के पक्ष मे अपनी सहमति दे दी। इस प्रकार पारिवारिक त्याग की भावना से मेहताबसिंह को गोद लिए जाने मे सारी बाधाए दूर हो गई। सन् 1890 ई मे मेहताबसिंह पूगल के राव बने। यह पूगल के थोडे वर्षों (सन् 1830-37) तक राव रहे, ठाकुर सादूलसिंह के पौत्र थे। इनके राव बनने से पूगल की राजगद्दी फिर से ठाकुर सादूलसिंह के वशजो को मिल गई।

ठाकुर शिवनाथसिंह का त्याग सराहनीय अवश्य था, परन्तु इस उचित निर्णय नही कहना चाहिए। सन् 1890 ई. और उसके बाद के न्याय और सुरक्षा के वातावरण को ध्यान में रखते हुए, उन्हे उनके न्यायिक अधिकार से वचित रखने का साहस किसी का नही होता और न ही इस बदले हुए समय म प्रजा का विरोध उन्हे राजगद्दी से हटाने मे सक्षम होता। उस समय पूगल बीकानेर राज्य के सरक्षण मे एक जागीर थी, ठाकुर शिवनाथसिंह की बहन, मेहताब कवर पूगलयाणीजी, बीकानेर की माजी साहिबा थी, जिनका महाराजा गगासिंह बहुत आदर करते थे। इसलिए इनके राव बनने मे और बने रहने मे कोई कठिनाई नहीं होती। इन्होंने स्वय के त्याग से न केवल स्वय को पूगल की गद्दी से वचित किया, आने वाली अपनी पीढियो के लिए भी राजगद्दी तक पहुचने का मार्ग अवरुद्ध कर दिया। ठाकुर को भविष्य की पीढियो का अहित करने का कोई अधिकार नहीं था। ठाकुर शिवनाथसिंह को राजी करने मे पडित घेव्हलाल पुरोहित, मोहता मेघराज मोदी घेरूमल, घोघा के प्रधान पन्ने रा, जोधासर के ठाकुर लाधूसिंह, सियासर पचकोसा के मेघराज, छोगजी जसोड धामाई, रामबाला के खान हैयत खा उत्तेराव, करणपुरे के खान लखा रा पडिहार और अन्य भोगताओं का विशेष योगदान रहा। यह सभी मेहताबसिंह को राव बनाने के पक्ष मे थे। इन प्रयासो मे यह स्पष्ट था कि ठाकुर शिवनाथसिंह को स्वय के विरुद्ध निर्णय देने के

लिए बाध्य किया गया। उपरोक्त नामो की सूची से यह भी स्पष्ट था कि इस प्रकरण मे केलण भाटियो की कोई भूमिका नही थी, वह चाहते थे कि रानियो की इच्छाओं की परवाह नही करते हुए परम्परा को निभाया जाए। जब उन्हे यह अहसास हो गया कि उनकी राय को नही माना जायेगा तो वह उत्तराधिकारी तय करने की प्रक्रिया से अलग हो गए। पडित, बनिये, चाकर और खान जहा रानियो की इच्छाओ का सम्मान करते थे, वहा केलण भाटी अपनी परम्परा को नही तोडना चाहते थे। यह भी झूठा प्रचार किया गया कि ठाकुर शिवनाथसिह भी मेहतावसिह को राव बनाने के पक्ष म थे। एक बार जब ठाकुर शिवनाथ सिह ने अपना अधिकार छोड दिया, तब इन सब लोगो ने मिलकर अगले न्यायिक दावेदार ठाकुर दुर्जनसालसिह को भी मेहतावसिह को राव बनाने के लिए राजी कर लिया।

वि स 1947, बैसाख सुदी 9 (सन् 1890 ई) को ठाकुर शिवनाथसिह ने अपने हाथो से राव केलण की पाग मेहतावसिह के माथे पर रखी, वही उन्हे गजनी के राजतख्त तक ले गए और निवेदन किया कि वह सर्वसम्मति से गजनी के तख्त पर विराजें। पडित घेरूलाल ने वैदिक मन्त्रोचार के साथ मेहतावसिह का राजतिलक किया, हजारीलाल सेवग ने उत्साह से शख बजाया। इसके पश्चात मेहतावसिह को पूगल का राव घोषित कर दिया गया। अब यह समारोह राज दरबार मे परिवर्तित हो गया। ठाकुर शिवनाथसिह ने राव मेहतावसिह को स्वामी स्वीकार करते हुए सबसे पहले उन्हे नजर पेश की, इनके बाद मे करणीसर, रोजडी और सादोलाई के ठाकुरो ने क्रमवार नजरें भेंट की। इनके पश्चात अन्य केलण भाटियों, खानों, प्रधानो, अधिकारियो ने वरिष्ठता के अनुसार उन्हे नजर भेंट की।

जब सन् 1835 ई मे ट्रैविलियन के कहने से महाराजा रतनसिह ने ढाई लाख रुपये के जुर्माने के बदले मे रणजीतसिह को पूगल वापिस करना स्वीकार किया, उस समय राव सादूलसिह को कहना चाहिए था कि वह पिछले पांच वर्ष से पूगल के राव थे, अब वह अन्य को राज्य नही देने देंगे। वह ब्रिटिश शासन से सीधी अपील करने का डर भी दिखा सकते थे। उनके इस प्रकार अडने का परिणाम यह होता कि महाराजा रतनसिह को जैसलमेर को जुर्माना चुकाना पडता। इसके बाद मे अगर राव सादूलसिह मे त्याग और निष्ठा की भावना होती और उन्हे अपने भतीजे के प्रति स्नेह होता तो वह स्वय राजगद्दी का त्याग करके रणजीतसिह को राव बना देते। उनकी इस प्रकार की समझदारी से जहा जैसलमेर को जुर्माने की राशि प्राप्त होती, वहा इनके त्याग की सर्वत्र सराहना भी होती। अब तो उन्हें घुडकी देकर महाराजा रतनसिह ने गद्दी से उतार दिया था और अपने ढाई लाख रुपये बचा लिए। अन्ततः पूगल बीकानेर के अधीन ही रहा जिसमे बीकानेर को कोई हानि नही हुई, राव चाहे सादूलसिह रहे या रणजीतसिह बने।

फिर भी भाग्य का फेर था कि 53 वर्ष बाद मे राव सादूलसिह का पौत्र पूगल का राव बना। उन्हे राव बनाने की प्रक्रिया मे शिवनाथसिह, दुर्जनसालसिह और गिरधारीसिह (मेहतावसिह के पिता) को अपने राव बनने के अधिकार छोडने पडे। इसमे घाटा शिवनाथसिह और दुर्जनसालसिह के वशजो का हुआ, गिरधारीसिह के ज्येष्ठ पुत्र मेहतावसिह को तो राव बनाया ही जा रहा था।

बीकानेर राज्य ने मेहतावसिह को सबकी सहमति से राव बनाये जाने के निर्णय क

अनुमोदन कर दिया। राव रुगनाथसिंह की मातम पुर्सी करने के लिए महाराजा गंगासिंह स्वयं बीकानेर स्थित पूगल हाउस पधारे। यह इतिहास में पहला अवसर था जब बीकानेर के कोई शासक पूगल के किसी राव के देहान्त पर मातम पुर्सी करने उनके निवास स्थान पर स्वयं पधारे हों।

राव मेहतावसिंह ने पूगल के राव बनने के लिए बीकानेर राज्य को पेशकश भी दी। यह भी पूगल के इतिहास में पहला अवसर था जब पूगल के किसी राव ने, राव बनने के लिए, बीकानेर राज्य को पेशकश दी और बीकानेर ने पूगल से पेशकश स्वीकार की।

सन् 1863 ई. ठाकुर मूलसिंह रात्तासर के यहां मेहताब कंवर का जन्म हुआ।

सन् 1865 ई. कुमार मेहतावसिंह का जन्म ठाकुर गिरधारीसिंह करणोसर की पत्नी पारवा गांव की बीकीजी से हुआ।

सन् 1868 ई. मेहताब कंवर का विवाह राजकुमार डूंगरसिंह के साथ हुआ।

सन् 1885 ई. कुमार मेहतावसिंह का विवाह चाम्पी गांव के ठाकुर जोगराजसिंह की पुत्री मेहताब कंवर पातावतजी से हुआ। यह विवाह राव रुगनाथसिंह के समय में हुआ था। इन रानी का स्वर्गवास सन् 1954 ई. में हुआ।

सन् 1886 ई. मेहतावसिंह के उदय कंवर नाम की पुत्री का जन्म हुआ। इनका देहान्त एक वर्ष की आयु में हो गया।

सन् 1887 ई. मेहतावसिंह की दूसरी पुत्री पन्ने कंवर का जन्म हुआ, इनका देहान्त भी एक वर्ष की आयु में हो गया।

सन् 1890 ई. कुमार मेहतावसिंह पूगल के राव वि.स. 1947, बैसाख सुदी 9 को बने। इन्होंने अपने भाई गणपतसिंह को बल्लर गांव की जागीर प्रदान की।

वि.स. 1947, श्रावण सुदी 5 (सन् 1890 ई.) को इनके पुत्र राजकुमार जीवराज सिंह का जन्म हुआ।

सन् 1891 ई. दादी साहेबा, आऊ गांव की पातावतजी का देहान्त हुआ। यह दिवंगत राव करणीसिंह की रानी थीं।

सन् 1892 ई. दिवंगत राव रुगनाथसिंह की रानी, माजी साहेबा करणोतजी भंवर का देहान्त, दादी साहेबा के देहान्त के आठ माह पश्चात् हुआ।

सन् 1896 ई. भारतवर्ष के वायसराय लार्ड एल्गिन ने बीकानेर का दौरा किया। राव मेहतावसिंह, जो महाराजा गंगासिंह के साथ सेवा में थे का रेलवे स्टेशन पर वायसराय से परिचय कराया गया। यह बीकानेर राज्य के उन दस प्रमुख सरदारों और चार अधिकारियों में से थे, जिनका परिचय वायसराय से रेलवे स्टेशन पर करवाया गया।

सन् 1899 ई. राव रुगनाथसिंह की रानी, वरिष्ठ माजी साहेबा बीकीजी शिमला का देहान्त हुआ।

इस वर्ष बहुत भयानक अकाल पड़ा। मनुष्यों और पशुओं के लिए अनाज, पीने का पानी और घास का अत्यन्त अभाव था। यह अकाल छपने काल के नाम से प्रसिद्ध था। पूगल पट्टे

के अभावग्रस्त क्षेत्र में पशुओं के लिए पूगल कैम्प में चारे, घास और पानी की व्यवस्था की गई। बूढ़े, कमजोर, बिना सहारे वाले और जरूरतमन्द लोगों के लिए पूगल में सदाव्रत का प्रबन्ध हुआ। यह सारा अकाल सहायता का कार्य मोहता मेघराज और घेम्मल मोदी की देख-रेख में सम्पन्न हुआ। अकाल सहायता के लिए राव मेहतावसिंह की ओर से सारा रुपया लगाया गया था।

सन् 1897 ई . इस वर्ष महाराजा गंगासिंह का पहला विवाह प्रतापगढ हुआ। क्योंकि यह महाराजा डूंगरसिंह और महारानी मेहताब कंवर पूगलयाणीजी के दत्तक पुत्र थे, इसलिए राव मेहतावसिंह पूगल से 'मायरा' लेकर बीकानेर पधारे। उस समय यह मायरा पच्चीस हजार रुपये की कीमत का था। आज के भावों से यह कई करोड़ रुपयों का था।

सन् 1900 ई · राजकुमार जीवराजसिंह को दस वर्ष की आयु में वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल, बीकानेर, में पढ़ने के लिए प्रवेश दिलाया गया।

सन् 1902 ई राव रुगनाथसिंह की तीसरी रानी, लगासर की तवरजी का देहान्त हो गया।

सन् 1902 ई भारतवर्ष के वायसराय, लॉर्ड कर्जन, बीकानेर के दौरे पर पधारे। राव मेहतावसिंह पूगल, राज्य के उन दस प्रमुख सरदारों और चार अधिकारियों में थे, जिनका परिचय वायसराय से बीकानेर के रेलवे स्टेशन पर कराया गया।

सन् 1903 ई : राव मेहतावसिंह थोड़े समय के लिए बीमार रहे। 37 वर्ष की कम आयु में, वि स 1960, वैसाख सुदी 13, (सन् 1903 ई), इनका देहान्त हो गया। इसी माह राजकुमारी आनन्द कंवर, इनकी बहन (राव रुगनाथसिंह की पुत्री) का भी देहान्त हो गया।

इन्होंने अपनी मृत्युशैय्या से महाराजा गंगासिंह को एक मार्मिक पत्र लिखा। इसमें उन्होंने महाराजा से निवेदन किया कि उनके तेरह वर्षीय पुत्र, राजकुमार जीवराजसिंह का वह विशेष ध्यान रखें। उन्होंने यह भी राय दी कि बदलते हुए समय के साथ पूगल के पुलिस अमले को हटाकर, बीकानेर राज्य की पुलिस के थाने वहां स्थापित किए जायें, इससे न्याय व्यवस्था में सुधार होगा। इस समय तक पूगल के रावों के समस्त पुलिस और न्यायिक अधिकार पूर्व की तरह ही थे। महाराजा गंगासिंह ने राव मेहतावसिंह के व्यवहारिक दृष्टिकोण की सराहना की। महाराजा ने राव के सुझावों को ध्यान में रखते हुए उनके समस्त न्यायिक अधिकार ले लिए, परन्तु पूगल के राव स्वयं को प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट के अधिकार प्रदान किए। इन अधिकारों के लेने या देने से पूगल की प्रजा पर कोई विशेष असर नहीं पड़ा। पूगल की प्रजा अपने परम्परागत तरीकों, रीति रिवाजों, पेड़ा पचायतों से आपसी विवाद सुलझाती रही। पेथोड़े और केलण भाटियों के आपसी मामले दशहरे के समारोह में पूर्वानुसार तय होते रहे। चोरियें बहुत कम होती थीं, चोरी होने पर चोर को पकड़ने और चोरी गए माल को लौटाने का उत्तरदायित्व राव का था। कत्ल जैसे जघन्य अपराध कभी सुनने में ही नहीं आते थे। पूगल के क्षेत्र में पूर्ण शान्ति रहती थी और प्रजा में आपसी स्नेह और भाई चारा था। पेड़ा पचायत सारे मामले निपटा देती थी, बाकी का निर्णय अगले

राव

दशहरे पर पूगल मे ही जाता था। न्याय प्रक्रिया लम्बी नही चलती थी, निर्णय होने मे कुछ दिन या माह ही लगते थे। राव केलण के निर्देशो की अभी तक सच्चाई से पालना हो रही थी।

राव मेहतावसिंह एक दिलदार शासक थे। जहा वह अपनी प्रजा के सुख दुख के साथी थे, वहा वह कवियो, गायको और वादको के सरक्षक भी थे। वह उन्हें समय-समय पर पुरस्कार देने के अलावा आर्थिक सहायता भी देते थे। वह भोपो के गायन सुनने के शौकीन थे। वह अपने प्रमुख सरदारो, प्रधानो, खानो एव प्रजा के अन्य लोगो को अनेक भोजो और गोष्ठियो पर आमन्त्रित करते थे। अनेक भोजो मे उपस्थितगणो की सख्या एक हजार से भी अधिक होती थी। उन्होंने अपने शासन के थोडे से तेरह वर्षों मे, सात ऐसे भव्य और वृहद भोजो का आयोजन किया था।

इन्होंने अपने जीवनकाल मे एक कुआ कुम्हारो की ढाणी के पास खुदवाया था। वहां बसे गाव का नाम उन्होंने अपने नाम पर 'मेहतावसर' रखा।

ठाकुर गणपतसिंह के वल्लर परिवार के विषय मे पूर्ण विवरण राव सादूलसिंह के साथ दे दिया गया है।

स्वर्गीय ठाकुर कल्याणसिंह (देहान्त 20 जुलाई सन् 1988 ई) ने राव मेहतावसिंह को दत्तक पुत्र बनाए जाने के विषय में अपने विचार व्यक्त किए थे, वह हैं

'ठाकुर शिवनाथसिंह का पूगल की परम्पराओ को ध्यान मे रखते हुए निर्णय ठीक था। वह पूगल के राव बनने के लिए निश्चिन्त थे। उनके विरुद्ध सारा कबाडा, उनके साले दुर्जेसिंह बीदावत, बीनादेसर, के कारण हुआ। उसका उस समय पूगल मे उपस्थित रहना ही शिवनाथसिंह के राव बनने मे बाधक साबित हुआ। उसके अभद्र और उद्दड व्यवहार और खोटी बोली स, पूगल के प्रमुख और प्रजा उसके विरुद्ध हो गई। वह इस निष्कर्ष पर पहुचे कि अगर यह व्यक्ति शिवनाथसिंह के राव बनने से पहले ही ऐसा व्यवहार कर रहा था तो उनके राव बनने के बाद यह उनका और जनता का क्या हाल करेगा ?

शिवनाथसिंह रानी बीकीजी का बहुत आदर और सम्मान करते थे। रानी ने पूगल के राव केलण की पाग उन्हे सौपते हुए चेतावनी दी कि पूगल के प्रमुख उन्हें पूगल का राव नही बनाएगे और उनम से कोई भी राजतिलक के समारोह मे उपस्थित नही रहेगा। गजनी के तख्त के सरक्षक उत्तैराव (मुसल्मान) उनके तख्त पर बैठने का विरोध करेंगे, नाथजी, पुरोहितजी, खान, प्रधान भी उत्तैराव का साथ देंगे। ऐसी परिस्थितियों मे परम्परागत तरीके से उनका राजतिलक कौन करेगा और बाद की औपचारिकताओ को कौन विधिवत पूरी करेगा ?

शिवनाथसिंह, माता बीकीजी का आदर पूगल की राजगद्दी से ज्यादा करते थे। राव केलण ने भी पाच सौ वर्ष पहले जैसलमेर की राजगद्दी पर अपना अधिकार, रावल केहर की इच्छा का आदर करते हुए छोडा था।

ठाकुर शिवनाथसिंह पूगल की प्रजा को नाराज नही करना चाहते थे। ऐसा करने से उनके और प्रजा के पीढ़ियो के मधुर सम्बन्धो में कटुता आती थी।

सत्तासर के प्रधान जवानसिंह बीदावत ने ठाकुर शिवनाथसिंह से उन्हें राव बनाने के लिए बीकानेर दरबार मे अपील भी दायर करवाई थी। इसे बाद मे ठाकुर शिवनाथसिंह ने वापिस ले ली। यह अपील इनकी सहमति लिए बिना, इनके साले ठाकुर दुर्लेसिंह बीदावत के कहने से की गई थी। उस समय इनकी बहन, बीकानेर की माजी साहेबा मेहताब कवर, भी पूगल म उपस्थित थी। उन्होने भी अपने भाई को राय दी कि वह प्रजा के निर्णय का साथ दें और रानी बीकीजी की इच्छा पूर्ण करें। अन्य दोनो रानियां, माजी साहेबा करणोतजी और तवरजी ने भी उन्हें बीकीजी की बात मानने के लिए आग्रह किया। इस लिए सब की इच्छाओं का और जनता के निर्णय का आदर करते हुए ठाकुर शिवनाथसिंह ने अपना दावा मेहताबसिंह के पक्ष में छोड दिया। महाराजा गगासिंह भी माता पूगलयाणीजी की इच्छा के अनुसार मेहताबसिंह को राव बनाने के पक्ष मे थे।'

ठाकुर कल्याणसिंह के विचार म ठाकुर शिवनाथसिंह का फैसला उचित था। 'उनके उत्तराधिकारियो की कोई हानि उन्होने नही की, उनके पुत्र था ही नही। इनकी मृत्यु के पश्चात् हरिसिंह सत्तासर के ठाकुर बने। हरिसिंह अभयसिंहगोत नही थ, वह रोजडी परिवार के अमरसिंहगोत थे। अगर ठाकुर शिवनाथसिंह राव बन भी जाते तो दुर्जनसाल सिंह अभयसिंहगोत सत्तासर के ठाकुर बनते और उनके पुत्र हरिसिंह सम्भवत करणीसर के ठाकुर बनते। चूकि राव शिवनाथसिंह के पुत्र नही था, इसलिए दुर्जनसालसिंह पूगल के राव बनते। उनके ज्येष्ठ पुत्र हीरसिंह तब सत्तासर के ठाकुर बनते और दुजनसालसिंह की मृत्यु के बाद मे पूगल के राव बनते। ऐसी परिस्थितियो म इनके छोटे भाई जगमालसिंह (या जगतसिंह) सत्तासर के ठाकुर बनते और पन्नेसिंह करणीसर के ठाकुर होते।' यह सब सम्भावनाए थी, सत्य वही था, जैसा हो गया।

'सत्तासर के ठाकुर बलदेवसिंह ने पूगल के राव बनने के लिए अपना दावा महाराजा सादूलसिंह के समय पेश किया था। वह उनके विशेष कृपा पात्र थे। महारानी दादी साहबा मेहताब कवर ने महाराजा से कहा कि ईश्वर की कृपा से राजकुमार जीवराजसिंह का राव मेहताबसिंह के घर म जन्म हुआ था, इसलिए जनरल हरिसिंह के वशजो के भाग्य म पूगल का राव बनना नही लिखा था। बलदेवसिंह का दावा वही नत्थी हो गया। उनकी राय म अगर बलदेवसिंह के तर्कों को सही समझा जाय तो उन्हें सत्तासर का ठिकाना छोडकर रोजडी ठिकाने मे जाना चाहिए।'

'केलण भाटियो ने राव कलण के निर्देशो की पालना करते हुए प्रजा की राय को सर्वोपरी माना। जब पुरोहितजी और नाथजी ने राव महताबसिंह के राजतिलक की सारी औपचारिकताए विधिवत पूर्ण करली, तब वह अपने पूर्वजो के गजनी के तख्त पर विराजे। वहा दरबार मे राजगद्दी के निकट के दावेदारों, सत्तासर, करणीसर, रोजडी और मादोलाई के ठाकुरो ने उन्हें नजरें भेंट की। उनके बाद मे अन्य सरदारो ने वरिष्ठता के क्रम मे नजरें भेंट की। इन सबने समझदारी से काम किया कि उन्होने राव मेहताबसिंह को पूगल के राव के पद और भाटी परिवार के प्रमुख के पद पर मान्यता दे दी। सिहराव और प्रधान उन्हें पूगल राजगद्दी पर बैठाकर द चुके थे, फिर किसका साहस था कि उन्हें गद्दी स

उतारता। राज्याभिषेक समारोह के बाद बीकानेर राज्य की ओर से आए हुए सरदार और अधिकारी वापिस लौट गए।'

मेहताबसिंह अन्य किसी के नामजद राव नहीं थे, उनको राव बनाने का श्रेय केवल ठाकुर शिवनाथसिंह का था।

महाराजा गंगासिंह ने राव महताबसिंह को उनके जन्म दिन और दशहरे के दरबार में बीकानेर में उपस्थित नहीं होने की छूट दे रखी थी।

जहां तक ठाकुर सादूलसिंह का प्रश्न था, चाहे वह सात वर्षों तक पूगल के राव के पद पर रहे हो, परन्तु प्रजा ने उन्हें इस पद पर कभी मान्यता नहीं दी थी। उनके पास पूगल की राजगद्दी जल्दी से जल्दी छोड़ने के सिवाय अन्य कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने करणीसर गांव की जागीर की चिट्ठी बीकानेर से लेने के लिए मना करके अपनी निष्ठा का परिचय दिया था। उन्होंने राव रामसिंह को, सत्तासर की पहले नजर करने की बारी तोड़ कर, स्वयं ने पहले नजर पेश करके अपनी निष्ठा और स्वामिभक्ति का परिचय दिया।'

मेरे विचार में यह ठाकुर कल्याणसिंह का बड़प्पन था कि वह महताबसिंह को राव बनाने का सारा श्रेय ठाकुर शिवनाथसिंह को दे रहे थे। ठाकुर स्वयं सादूलसिंह के वंशज थे, और राव मेहताबसिंह से समस्त राव जीवराजसिंह, देवीसिंह, संगतसिंह, ठाकुर सादूलसिंह के वंशज है।

अध्याय–बत्तीस

राव बहादुर राव जीवराजसिंह

सन् 1903-1925 ई.

सन् 1903 ई. में राव मेहतावसिंह के देहान्त के पश्चात् उनके पुत्र, राजकुमार जीवराजसिंह, पूगल के राव बने। इनके समय में महाराजा गंगासिंह (सन् 1887-1943 ई.) बीकानेर के शासक थे।

राव जीवराजसिंह का जन्म, वि. सं. 1947, श्रावण सुदी 5, सन् 1890 ई. को, राव मेहतावसिंह की भाटियाणी रानी से हुआ था।

इन्हें दस वर्ष की आयु में वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल, बीकानेर, में सन् 1900 ई. में शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रवेश दिलाया गया। यह इस स्कूल में, सन् 1905 ई. तक, पांच वर्ष पढ़े, सन् 1903 ई. में इनके पिता के निधन के कारण इनकी शिक्षा में विघ्न पड़ा। इनके पहले नोबल्स स्कूल में कुल 121 विद्यार्थी थे। ठाकुर आसूसिंह रामपुरा 121 वें क्रम के विद्यार्थी थे। सत्तासर के ठाकुर हरिसिंह इस स्कूल में प्रवेश लेने वाले 123 वें विद्यार्थी थे, यह स्कूल सन् 1893 ई. में स्थापित हुआ था। जीवराजसिंह के स्कूल में प्रवेश लेने के समय लधी प्रसाद हैडमास्टर थे, इनके बाद में इस पद पर बाबू मगनलाल आए। जब जीवराजसिंह ने सन् 1905 ई. में स्कूल छोड़ा, उस समय शिवगोविन्दसिंह (सन् 1903-10 ई.) हैडमास्टर थे।

जीवराजसिंह सन् 1903 ई. में पूगल के राव बने। इनके अवयस्क होने के कारण पूगल ठिकाने की देखरेख कोर्ट ऑफ वार्डस के अधीन थी। सन् 1903 से 1908 ई. तक के पांच वर्षों के लिए बीकानेर राज्य के कोर्ट ऑफ वार्डस का प्रशासन हरखचन्द मोदी के योग्य और अनुभवी हाथों में रहा। सन् 1908 ई. में राव जीवराजसिंह के वयस्क हो जाने पर इन्हें पूगल ठिकाने के प्रशासन के समस्त अधिकार मिलने से यह अब बीकानेर राज्य के प्रमुख सरदार बन गए। इसी वर्ष, स्वर्गीय राव मेहतावसिंह की इच्छानुसार, पूगल क्षेत्र में बीकानेर राज्य के थाने स्थापित किए गए।

19 जुलाई, सन् 1905 ई. में राव जीवराजसिंह को मेयो कॉलेज, अजमेर, में प्रवेश दिलवाया गया। इस समय मिस्टर वार्डिंगटन कॉलेज के प्रिन्सिपल थे और मिस्टर एच. शेरिंग, वाईस प्रिन्सिपल थे। कॉलेज की स्टाफ के अन्य सदस्य थे, मिस्टर एफ. एम. मार्डेन, मिस्टर सी. सी. एच. टविस, मिस्टर कृष्ण राव लक्ष्मण पनोशकर, रामनारायण कपूर (हैड मास्टर), जे. सी. सेन, गफ्फार हुसन ए सैयद, गोपीनाथ माथुर, महा महोपाध्याय पंडित शिवनारायण, लाला हरचरण, भाई उत्तमसिंह और बुलाकी राम। सन् 1908 ई. में जब

इन्होंने कालेज छोड़ा तब श्री पनोशकर स्टाफ म नही थे, इनके स्थान पर लक्ष्मण गणेश सत्तार आ गए थे। विल्किन्सन, आई सी एस, और जोहन विलयम्स, आई सी एस, भी उस समय कॉलेज के स्टाफ मे थे। मेयो कॉलेज मे यह बीकानेर हाऊस मे रहते थे, वहा मोतमिन्द मुन्शी ऋषिकेश और कालूसिह ऊदावत इनके सरक्षक थे।

राव जीवराजसिंह का विवाह सन् 1905 ई मे, बाय के ठाकुर जगमालसिंह बीका की पुत्री से हुआ। बाय ठिकाना बीकानेर राज्य की तारानगर तहसील मे था। बाद म इन बीकी रानी साहेबा को स्नेह से सभी 'दाता' कहकर सम्बोधित करते थे।

सन् 1906 ई मे भारतवर्ष के वायसराय लार्ड मिन्टो बीकानेर राज्य के दौरे पर पधारे थे। उस समय जिन दस प्रमुख सरदारो और चार वरिष्ठ अधिकारियो का महाराजा गगासिंह ने वायसराय से रेलवे स्टेशन पर परिचय करवाया, उन दस सरदारो मे एक राव जीवराजसिंह भी थे।

सन् 1908 ई मे रानी बीकीजी ने सरस कवर नाम की पुत्री को जन्म दिया, परन्तु इस शिशु का छ माह पश्चात् देहान्त हो गया। सन् 1910 ई मे एक और पुत्री, सज्जन कवर का जन्म हुआ परन्तु इनका देहान्त भी तीन वर्ष की आयु मे, सन् 1913 ई मे, हो गया।

सन् 1912 ई मे महाराजा गगासिंह के शासनकाल के पच्चीस वर्ष (सन् 1887-1912 ई) पूर्ण हुए थे। इस उपलक्ष्य मे एक भव्य सिल्वर जुबली समारोह मनाया गया। इस अवसर पर बीकानेर राज्य के पूगल और रिडी ठिकानो को द्वितीय श्रेणी से प्रथम श्रेणी मे क्रमोन्नत किया गया। इससे पहले बीकानेर राज्य के केवल महाजन, रावतसर, बीदासर और भूकरका, चार ठिकाने प्रथम श्रेणी मे थे। अब प्रथम श्रेणी के ठिकानो की सख्या छ हो गई।

सन् 1916 ई म इनके फतेह कवर बाईसा का जन्म हुआ। इनका देहान्त भी तीन वर्ष की आयु म सन् 1919 ई मे, हो गया। इस प्रकार रानी बीकीजी ने तीन पुत्रियो को जन्म दिया परन्तु तीनो का देहान्त छोटी अवस्था म हो गया।

चूकि राव जीवराजसिंह के 26 27 वर्ष की आयु तक कोई पुत्र नही हुआ था इसलिए इन्हे दूसरी शादी करने की सलाह दी गई। इन्होने सन् 1918 ई मे अपना दूसरा विवाह मोकलसर (सिवाना) के ठाकुर अजीतसिंह बाला राठौड़ की पुत्री और जोरावरसिंह बाला की बहन, सोहन कवर से किया। इसी वर्ष, सन् 1918 ई मे, महाराजा गगासिंह की सिफारिश पर इन्हे वायसराय लॉर्ड चैम्सफोर्ड ने 'राव बहादुर' के खिताब से सम्मानित किया।

सन् 1919 ई, वि स 1976, पोह सुदी पचमी को, रानी बीकीजी के राजकुमार देवीसिंह का जन्म हुआ। इन रानी के यह पुत्र इनकी तीन पुत्रियो के बाद मे जनमे थे। पूगल के उत्तराधिकारी राजकुमार के जन्म होने के उपलक्ष्य म प्रमुख केलणों को 'सरोपावों' के साथ घोडे और टोटिये भेंट मे दिए गए। इस अवसर पर पूगल के गढ़ से, बीकानेर राज्य से स्वीकृति लेकर, इक्कीस तोपें दागी गई। कई दिनो तक पूगल मे उत्सव और खुशिया मनाई गई, साथ मे खाने पीने की अनेक गोष्ठियो का दौर चलता रहा।

राव जीवराजसिंह ने अपना तीसरा विवाह लाडम गाव के ठाकुर भैरूसिंह रावतोत की पुत्री सूरज कवर से किया। इसी वर्ष रानी बीकीजी ने चौथी पुत्री राजकुमारी नथ कवर को जन्म दिया।

30 अगस्त, सन् 1923 ई, वि. स 1980, भादवा वदी 4, को रानी सूरज कवर रावतोतजी ने कल्याणसिंह को जन्म दिया। सन् 1925 ई, वि स 1982, चैत सुदी 12, को कल्याणसिंह की माता, राव जीवराजसिंह की तीसरी रानी सूरज कवर रावतोतजी का सत्तरह वर्ष की अल्पायु मे देहान्त हो गया। इसका जन्म वि स. 1965, सन् 1908 ई. मे हुआ था।

राव जीवराजसिंह का पैंतीस वर्ष की अल्पायु मे वि.स 1925, जेठ वदी 3, सन् 1925 ई, सायकाल साढे पांच बजे, हृदय गति रुक जाने से देहान्त हो गया। उस समय यह मुरली मनोहरजी के मन्दिर के विषय मे कुछ लेख लिखवा रहे थे, यह लेख अधूरा रह गया, ईश्वर की यही इच्छा थी। इनके पिता राव मेहताबसिंह का देहान्त भी सैंतीस वर्ष की कम उम्र मे ही हुआ था। राव जीवराजसिंह अपने पीछे अपनी माता, 57 वर्षीय चाडो की पातावतजी, 35 वर्षीय बाय की रानी बीकीजी, 26 वर्षीय मोकलसर की बाली रानी को छोड गए। उस समय इनके राजकुमार देवीसिंह की आयु केवल छः वर्ष की थी, राजकुमारी नथकवर चार वर्ष की और कल्याणसिंह केवल डेढ वर्ष के थे। इस प्रकार कल्याणसिंह के माता और पिता, दोनो का देहान्त इनके बाल्यकाल मे हो गया, इन्हे दादी मा और दोनो रानियो ने पाल पोस कर बड़ा किया।

राव जीवराजसिंह लम्बे कद काठी के, लुभावने व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे। यह अपने सरल व्यवहार और आकर्षक व्यक्तित्व के कारण इनसे मिलने वाले व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। इनका हसी-मजाक, विनोद, चुहलबाजी करने का बहुत सभ्य और सौम्य तरीका था। यह हरेक का भला चाहते थे। महाराजा गगासिंह इनका बहुत आदर करते थे, उनका इनके प्रति आत्मीय स्नेह था। महाराजा उनको राव मेहताबसिंह द्वारा लिखे गए अन्तिम पत्र को सदैव याद रखते थे और उसी की भावना को निभाते हुए वह इनका विशेष ध्यान रखते थे। महाराजा की माता मेहताब कवर पूगलयाणिजी के कारण भी उनका दृष्टिकोण इनके प्रति उदार रहता था।

महाराजा गंगासिंह ने राव जीवराजसिंह को बीकानेर राज्य की एसेम्बली का सदस्य मनोनीत किया था और इन्हें सन् 1918 ई मे राव बहादुर का खिताब दिलवाया था। राव जीवराजसिंह ने प्रथम विश्व युद्ध के लिए ब्रिटिश इन्डियन आर्मी में पूगल से बहुत से जवान भेजे थे, इस सेवा के लिए इन्हें उपरोक्त खिताब मिला था। महाराजा ने पूगल ठिकाने की श्रेणी क्रमोन्नत करके इसे प्रथम श्रेणी का ठिकाना बना दिया था।

पडित सुखलाल और जानकी प्रसाद इनके कामदार थे, छोगजी धामाई सभी धार्मिक उत्सवों के आयोजनों के प्रभारी थे और हमीरसिंह व हैबत खा उनके प्रधान थे। भैरूलाल पुरोहित, द्वारकादास मोहता, फकीरचन्द चौधरी, भैरूमल मोदी, पडित जवाहरमल ज्योतिषी आदि इनके प्रमुख कार्यकर्ता थे। छोगजी मेड़तिया सभी समारोहों की देखभाल

राव बहादुर राव ज...

करते थे (मास्टर ऑफ सैरेमनीज)। रामड़ा में जवाहरसिंह पड़िहार बीकानेर मुख्यालय में इनके आम मुख्तियार थे।

राव जीवराजसिंह ने पूगल के गढ की मरम्मत करवाई, नये महल बनवाये, घुड़साल बनवाई और नोहरे में एक पक्का कुंड बनवाया। इन्हें अच्छे घोड़े और ऊंट रखने का शौक था, उनके रख रखाव की देख भाल वह स्वयं करते थे।

राव जीवराजसिंह ज्ञानी पुरुष थे वह समय के साथ चलने वालों में से थे, क्योंकि समय जा किसी के लिए नहीं ठहरता, उन्हें पीछे नहीं छोड़ जाये। उन्हें बदलते हुए वातावरण का अहसास हो रहा था। उन्हें यह भी आभास था कि अब बीकानेर और पूगल की भाग्य रेखा एक दूसरे से बंधी होने के कारण दोनों की गति, अच्छा या बुरी, एक साथ होगी। इसलिए जब महाराजा गंगासिंह ने बीकानेर नहर (गंग नहर) के लिए इनसे जागीर की भूमि देने के लिए कहा तो इन्होंने वान्छित भूमि राजी हो कर उन्हें दे दी। इन्हें ज्ञात था कि नहर के लिए भूमि नहीं देने से उन्हीं की प्रजा सिंचाई के लाभ से वंचित रहेगी। उन्होंने नहर के कार्य के लिए राज्य को भरपूर सहयोग देने का वचन दिया क्योंकि बीकानेर राज्य बहुत मोटी रकम खर्च करके नहरों का निर्माण करवा रहा था इसलिए उन्हें सभी सम्बन्ध पक्षों का सहयोग मिलना अत्यन्त आवश्यक था। नहर के लिए भूमि देने के लिए सहमत नहीं होने वालों से महाराजा गंगासिंह का अप्रसन्न होना स्वाभाविक था। वह नहर निर्माण के काम में स्वयं के जागीरदारों की अड़चनें व उनके द्वारा खड़ी की गई बाधाओं से निपटना जानते थे। राव जीवराजसिंह राज्य के साथ सहयोग करने के गुण और लाभ जानते थे और इनके लिए उन्हें कई बार पुरस्कृत भी किया जा चुका था।

राव सुदरसन और अमरसिंह पूगल की स्वतन्त्रता के लिए लड़ मरे, परन्तु पूगल का ज्यादा नुकसान नहीं हुआ था क्योंकि उनका स्वतन्त्रता का लक्ष्य कुछ समय बाद में प्राप्त होता रहा। परन्तु राव रामसिंह ने ठाकुर बैरीसालसिंह को उन्हें नहीं सौंपने के बदले में बीकानेर का सामना करके हमेशा के लिए पूगल राज्य को बीकानेर की जागीर बना दिया। इनके बाद के राव शार्दूलसिंह करणीसिंह, सब चुपचाप बीकानेर की चापलूसी करते रहे। राव महतावसिंह जीवराजसिंह और देवीसिंह के समय बीकानेर के महाराजा गंगासिंह की शक्ति रौब और तव इतना प्रभावशाली था कि सामना करने की बात छोड़ सामने आने का साहस भी इनमें नहीं रहा था।

अध्याय–तेतीस

राव देवीसिंह
सन् 1925-1984 ई

राव बहादुर जीवराजसिंह के सन् 1925 ई में निधन के बाद में उनके राजकुमार देवीसिंह छ वर्ष की आयु मे वि स 1982, जेठ बदी 3, सन् 1925 ई, मे पूगल के राव बने।

यह अपने पिता के देहान्त के तुरन्त पश्चात राजगद्दी पर विराज, इनके ललाट पर 'रक्षा भभूति' का तिलक बाबा बालकनाथ ने किया। केलण भाटियो, खानो, प्रधानो और प्रजा की सहमति से यह पूगल के तख्त पर वि स 1982, जेठ सुदी 14 को, विराजे। राज तिलक करने की परम्परा पडित चुनीलाल ने वैदिक विधि से मत्रोचार करके पूर्ण की, तेजमाल सेवग ने शख बजाया। इसके पश्चात पूगल मे विधिवत दरबार लगा जिसम नजरें पेश की गई और निछरावलें की गई। सबसे पहले नजर, निछरावल, सत्तासर के ठाकुर जनरल हरिसिंह ने पेश की, उनके पश्चात अन्य केलण भाटिया, खानो और प्रधानो ने वरिष्ठता के अनुसार उन्हे यह भेंट पेश की।

मोतीगढ़ के बख्तावरसिंह सिंहराव और धोधा गाव के समसदीन न सभी प्रमुखो, खानो और प्रधानो की ओर स पूगल की सभी जागीरें नए राव को समर्पित की। इसके पश्चात, छोगजी मेडतिया के माध्यम स, राव ने यह सब समर्पित जागीरें उनके पूर्व क स्वामियो को यथावत वापिस प्रदान करने की घोषणा की। इससे एक बात स्पष्ट थी कि पूगल की बची हुई जागीरें अब पैतृक नही रही थी, राव के देहान्त के साथ ही इनका अधिकार वापिस नये राव म निहित हो जाता था। यह केवल नये राव की प्रसन्नता होती थी कि वह अमुक जागीर किसी भोगता (ठाकुर) को वापिस प्रदान करें या नही करें। इस क्रिया से नये राव को अधिकार हो गया था कि वह विद्रोही, अहकारी, दुष्ट और प्रजा के साथ अन्याय व दुर्व्यवहार करने वाले व्यक्तियों को आगे अपना जागीरदार नही रखें। इस प्रथा से जागीरदार रावो के प्रति निष्ठावान और स्वामीभक्त रहते थे। इस बदले हुए समय में यह परम्परागत औपचारिकताए थी जिन्हे केवल निभाया जाता था, वही पहले वाले जागीरदार इन जागीरो को पीढी दर पीढी भोगते आ रहे थे।

मुरली मनोहरजी और करणीजी के मन्दिरो के दर्शन करके और उन्हे चढावा भेंट करके यह पजपीरो की खानगाह पर गए। वहा श्रद्धा से शीश नवाया, फिर बाबा बालक नाथ की मेडी मे जाकर उन्हें अपनी श्रद्धा अर्पण की। वह स्वर्गीय घेरूलाल पुरोहित के घर भी गए, वहाँ उन्होने उनकी पत्नी और नाथीजी के चरण स्पर्श करके उनसे आशीर्वाद पाया। इन सब अनुष्ठानो से भाटियो की धर्मनिरपेक्षता बिना किसी दबाव या दिखावे के

निखर कर सामने आती थी। वह हिन्दुओ के मन्दिरो और मुसलमानो की खानगाहो का आशीर्वाद बराबर ग्रहण करते थे और इनके रख रखाव का विशेष ध्यान रखते थे। इस भावना का हिन्दू और मुसलमान प्रजा पर अनुकूल प्रभाव पडता था और आपस में साम्प्रदायिक सद्भावना बनी रहती थी। पूगल मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र सैकडो वर्षो से रहा था परन्तु वहा आपस मे कभी दगे फसाद नही हुए। यहा बहुसख्यक मुसलमानो ने अपना नैतिक दायित्व भली भाति निभाया, वह सदैव अल्पसख्यक हिन्दुओ के प्रति सहनशील रहे और उन्हे सरक्षण दिया।

गढ के बाहर से लौटने पर वह गढ मे स्वामी घण्टियालोजी, सागियाजी और सालिग राम के दर्शन करने गए। वहा से वह जनाना कक्ष मे गए, जहा उन्होने दादी साहेबा पातावतजी, माजी साहेबा बीकीजी व बालीजी को प्रणाम किया और उनका आशीर्वाद लिया। वह बल्लर के ठाकुर करनसिंह व उनकी मलवाणी की ठुकरानी बीकीजी को भी प्रणाम करने गए।

महाराजा गगासिह ने स्वय बीकानेर स्थित पूगल हाऊस मे पधार कर दिवगत राव जीवराजसिह के निधन पर शोक व्यक्त किया, उनके परिवारजनो को सात्वना दी और परम्परागत मातम पुर्सी की रस्म पूरी की। इससे पहले महाराजा गगासिह सन् 1903 ई म राव मेहताबसिह के निधन पर भी मातम पुर्सी करने पूगल हाऊस पधारे थे। उन्होने यह एक स्वच्छ परम्परा डाली। पूगल के लिए अब यह एक दुर्लभ सम्मान था कि बीकानेर के शासक अपने किसी अधीनस्थ प्रमुख के यहा ऐसे दु खद मौके पर स्वय पधारे हो और वह भी सगे सम्बन्धी भाटी के निवास पर।

चूकि राव देवीसिह इस समय अवयस्क थे, इसलिए महाराजा गगासिह ने पूगल ठिकाने का प्रशासन और राजस्व वसूली का कार्य बीकानेर राज्य के कोर्ट ऑफ वाडस को सौपा। उन्होने राम प्रताप धाभाई को कोर्ट ऑफ वार्डस का प्रबन्धक नियुक्त किया और करणीसर के ठाकुर पन्नेसिह को इनकी दैनिक कार्य म सहायता करने के आदेश दिए। एक वर्ष पश्चात राम प्रताप धाभाई के स्थान पर ठाकुर पन्नेसिह के सतोषजनक कार्य की प्रशसा करते हुए, उन्ह पूगल ठिकाने के प्रबन्धक के पद पर नियुक्त किया गया। बीकानेर राज्य के कोर्ट आफ वार्डस के एक अन्य अधिकारी छोटेलाल को भी आदेश दिए गए कि वह जनरल हरिसिह के निर्देशन म पूगल ठिकाने की व्यवस्था सभालें।

सन् 1926 ई म बीकानेर राज्य ने निर्णय लिया कि पूगल के गावो की जागीरो का बन्दोबस्ती सर्वेक्षण पूर्ण किया जाये। ऐसे सर्वेक्षण कार्य का राव करणीसिह ने सन् 1881 ई मे विरोध किया था, इसलिए यह कार्य उस समय नही हो सका था। महाराजा गगासिह ने इस अवधि मे यह निणय इसलिए लिया कि पूगल का ठिकाना कोर्ट ऑफ वार्डस मे होते हुए उन्ह किसी की सहमति लेने की आवश्यकता नही होगी। इस कार्य के लिए उन्होने गुरुचरणसिह का सहायक भू प्रबन्धक अधिकारी नियुक्त किया। गावो की पैमाइश करके उनका क्षेत्रफल निर्धारित किया गया और उनकी सीमाओ की मौके पर निशान देही की गई। इससे भूमि के स्वामियो के आपसी विवाद तय हो गये और भूमि के अधिकारो से सम्बन्धित सारे अभिलेख स्थायी हो गए।

पूगल के कोर्ट ऑफ वार्ड्स मे रहने के वर्षों मे बीकानेर शासन ने वहाँ की राजस्व वसूली में आमूलचूल परिवर्तन किया। इस नई व्यवस्था से पूगल का राजस्व वसूली का कार्य और राजस्व प्रशासन वैसा ही हो गया जैसा कि बीकानेर राज्य के दूसरे प्रगतिशील क्षेत्रों मे था। इससे सारे राज्य के राजस्व प्रशासन म एकरूपता लाई गई। सन् 1927 ई में समस्त भोगनो के अधिकारो को समाप्त करके उन्हे चौधरी का पद दिया गया। इन चौधरियो का दायित्व था कि वह अपने गावो का राजस्व वसूल करके राज्य के कोष मे जमा करायें। इसके बदले मे उन्हे जमा कराई गई राशि का पाच प्रतिशत कमीशन दिया जाता था। भूमि का प्रति बीघा लगान तय किया गया और विभिन्न श्रेणी के पशुओ पर चराई की दरें भी तय की गई। प्रत्येक बीघे का लगान तय तो हो गया, परन्तु पूगल की प्रजा पूर्वानुसार केवल 14 रुपया 13 आना प्रति परिवार लगान चुकाती रही। अब राव को इकन्द्रा देने की परम्परा समाप्त करदी गई थी। इस नई व्यवस्था के अन्तर्गत ठिकाने के कर्मचारियो ने गांव के चौधरी की सहायता से प्रजा से सीधा कर लेना शुरू कर दिया। सदियों से चली आ रही एक स्थायी व्यवस्था को छोडकर प्रजा को नई व्यवस्था अपनाने मे कठिनाई आ रही थी और न ही वह मानसिक तौर पर इसे समझने के प्रयास करती थी। इसलिए आम प्रजा और उनके प्रमुख इसके विरोधी हो गए, परन्तु बीच मे राव वाली कडी नही होने से वह शिकायत किससे करते ? प्रजा चुपचाप राजस्व चुकाती रही, वह यह नही चाहती थी कि उनके असतोष के कारण अवयस्क राव की कोई हानि हो। उन्हें आशा थी कि उनके राव बडे होकर उनकी कठिनाई अवश्य दूर करेंगे। जनता यह भूल रही थी कि अभी उनके राव को शासनाधिकार मिलने मे ग्यारह वर्ष शेष थे तब तक वह स्वय नई व्यवस्था अपना लेगी और उनकी शिकायत का मुद्दा ही मिट जायेगा।

राव देवीसिंह को नौ वर्ष की आयु मे, सन् 1928 ई मे, वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल, बीकानेर, म प्रवेश दिलाया गया, जहा उन्होने छ वर्ष शिक्षा ग्रहण की। उस प्रारम्भिक शिक्षा के पश्चात जब इन्होने अपना आपा सम्भाल लिया, तब इन्होने और इनके छोटे भाई ठाकुर कल्याणसिंह ने अजमेर जाने के लिए यह स्कूल छोड दिया। इस स्कूल के पडित शार्दूलमल शर्मा और उनके बाद मे पडित एस के मोजे इन्हे घर पर पढाया करते थे। ठाकुर जुगलसिंह खीची स्कूल के हैडमास्टर थे और जवाहरसिंह सिहराव इनके स्कूल मे सरक्षक थे। इन्हे और इनके भाई को 20 अगस्त, सन् 1934 ई मे मेयो कॉलेज, अजमेर, मे पढ़ने के लिए प्रवेश दिलाया गया।

मेयो कॉलेज मे इनके निम्नलिखित शिक्षक थे

मिस्टर बी ए एस स्टोव, प्रिन्सिपल, मिस्टर ए ए रिचि, वाइस प्रिन्सिपल एव नार्थ हाऊसेस के हाऊस मास्टर (बीकानेर, टोक, जोधपुर), मिस्टर डबल्यू एच ब्रैंडशा, हाऊस मास्टर, वैस्ट हाऊसेस (अजमेर, कोटा, उदयपुर), मिस्टर एच के बैंफटरड, राय साहब पडित श्याम सुन्दर शर्मा, वरिष्ठ सहायक (हैडमास्टर), अब्दुल वहीद, हरचरण दास कपूर, श्रीकृष्ण, साधोसिंह, अस्फाक हसन, ठाकुर मदनसिंह, एन पी माथुर, एन घोष, महावीर दयाल, दानमल, वी एस भाटिया, एम एन कपूर, पुरुषोतम दास चतुर्वेदी, ए. के वारियर, श्री गोपालदास, और बहादुरसिंह मलसीसर खेलकूद अधिकारी थे।

निम्नलिखित व्यक्ति मोतमिद थे

जयपुर—सवाईसिंह, जोधपुर—एस बी गुरुवादी, उदयपुर—जमनालाल, बीकानेर—ठाकुर जीवनसिंह, कोटा—दानमल, यह राव जीवराजसिंह के समय, सन् 1903-1908 ई मे भी वही थे, भरतपुर—पडित हरप्रसाद, अलवर—के एम सक्सेना, टोंक—लेफ्टिनेन्ट अहमद अली, अजमेर—पी एस नानावती। जिन्द (पजाब) के विद्यार्थियो के सरक्षक मेजर हैनरी थे और टिहरी गढवाल राज्य के विद्यार्थियो के सरक्षक कैप्टिन बियले थे। मेजर हैनरी और कैप्टिन बियले कक्षाओ मे पढाया भी करते थे। राय साहब डाक्टर देनानाथ रेजिडेन्ट मेडिकल ऑफिसर थे और डाक्टर लाल मोहम्मद पशु-चिकित्सक थे। बसन्तीलाल, अभियन्ता थे और नन्दकिशोर, कार्यालय अधीक्षक थे।

मेयो कॉलेज म राव के निजी शिक्षक पडित बद्री प्रसाद, बी ए, थे। जवाहरसिंह सिहराव जो वाल्टर नोबल्स स्कूल, बीकानेर, मे इनके सरक्षक थे, वही मेयो कॉलेज, अजमेर, म भी इनके सरक्षक बन कर गए। वहा इनके अन्य सेवक थे, लखजी मेडतिया, मोहबतसिंह सिहराव, हजारीजी दहिया और रामसर के भूरसिंह राठौड। राव साहब सन् 1937 ई तक चार वर्ष मेयो कॉलेज मे पढे, सन् 1937 ई मे इनकी आयु अट्ठारह वर्ष की होने पर इन्हें अपनी जागीर का प्रशासन सम्भालने के पूर्णाधिकार मिल गए।

सन् 1934 ई मे भारतवर्ष के तत्कालीन वायसराय, लॉर्ड विलिंगडन, वायुयान से बीकानेर पधारे थे। राव साहब, जिनकी आयु उस समय केवल चौदह वर्ष की थी, का परिचय महाराजा गगासिंह ने वायसराय से विक्टोरिया मेमोरियल क्लब के पश्चिमी चौक पर करवाया।

सन् 1936 ई म पूगल गढ मे पुरानी घुडसाल और अन्य पुराने भवनो के स्थान पर नई कोठी के भवन का निर्माण कार्य आरम्भ कराया गया। इनके अलावा गढ मे अन्य कई निर्माण कार्य करवाए गए और बीकानेर स्थित पूगल हाउस मे भी कई नये काय करवाए गए। यह सारा कार्य इनकी बहन राजकुमारी नथ कवर का विवाह करने की तैयारी के लिए करवाना आवश्यक था।

सन् 1936 ई वि स 1993 के माघ माह मे, राजकुमारी नथ कवर का विवाह, पारा दरबार रणवीरसिंह जोधा (अजमेर) के पुत्र, राजकुमार विजय बहादुरसिंह के साथ हुआ। राव साहब ने उन्हे छत्तीस हजार रुपये का टीका दिया और अपनी बहन को दो लाख रुपये से अधिक मूल्य का दहेज दिया। सत्तासर के ठाकुर जनरल हरिसिंह पूगल म किए गए इस पूरे विवाहोत्सव के सचालक थे। जनरल हरिसिंह और उनकी कूपावत ठुकरानी ने राजकुमारी का कन्यादान किया। बारात के ठहरने के लिए गढ से पूर्व दिशा मे मैदान मे एक बहुत बडा कैम्प लगाया गया था। उस समय बीकानेर से पूगल तक की पक्की सडक नही थी, फिर भी बारात को बडी कठिनाई मे मोटर गाडियो मे पूगल ले जाया गया। राजकुमारी नथ कवर को दो लाख रुपये के मूल्य के दहेज के अलावा उस समय एक कार भी दी गई थी। राजकुमार को चार घोडे और पूगल के ऊटो के टोले के ग्यारह टोडिये भेंट किए गए थे।

पारा के विजय बहादुरसिंह का देहान्त 15 दिसम्बर, सन् 1986 ई को हो गया। इनके पुत्र अनन्त विक्रमसिंह अब पारा परिवार के मुखिया हैं, इनका विवाह मेवाड के प्रसिद्ध बोहिरा परिवार मे हुआ है। अनन्त विक्रमसिंह के पाच छोटे भाई और हैं। इनके राजकुमार पुष्पेन्द्रसिंह का विवाह फरवरी, सन् 1988 म घँटा ठिकाने मे हुआ।

महाराजा गगासिंह की गोल्डन जुबली दिसम्बर, सन् 1937 ई मे मनाई गई थी। भारतवर्ष के वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो इस समारोह म भाग लेने के लिए दिनाक 4 नवम्बर, सन् 1937 ई को बीकानेर पहुचे। रेलवे स्टेशन पर नौ सरदारो और तेईस अधिकारियो का उनसे परिचय महाराजा गगासिंह ने करवाया। राव देवीसिंह वरिष्ठता के क्रम मे पांचवे सरदार थे जिनका वायसराय से परिचय करवाया गया। वायसराय की शोभा यात्रा हाथियो पर बीकानेर के प्रमुख राजमार्गों से निकाली गई इस जलूस मे राव देवीसिंह और राजा जीवराजसिंह साडवा एक हाथी पर सवार थे, यह हाथी वायसराय के पीछे आठवें स्थान पर था। इस जलूस मे कुल पच्चीस हाथियो ने भाग लिया था। इनके अलावा घुडसवार सेना, ऊट सवार गगा रिसाला पैदल सेना और अन्य लोग इस समारोह मे शामिल थे। इसके बाद म एक बहुत भव्य दरबार का आयोजन जूनागढ स्थित गगा निवास के दरबार हॉल मे किया गया। इसम बीकानेर राज्य के समस्त सरदार, जागीरदार, भोमिया आये हुए थे और राज्य के समस्त अधिकारी उपस्थित थे। दरबार मे राज्य के बारह प्रमुख सरदारो और छ अधिकारियो की भेंट वायसराय से कराई गई। इनम राव देवीसिंह वरिष्ठता के क्रम म पाचवे सरदार थे। महाराजा गगासिंह ने राव देवीसिंह को भी दशहरे और उनके जन्म दिन के दरबार से अनुपस्थित रहने की छूट प्रदान कर रखी थी।

सन् 1938 ई मे राव देवीसिंह के व्यस्क हो जाने पर पूगल ठिकाना कोर्ट ऑफ वार्डस से मुक्त कर दिया गया और इन्हे ठिकाने के पूर्ण अधिकार हस्तातरित कर दिए गए। ठाकुर पन्नेसिंह करणीसर यथावत कामदार के पद पर दिसम्बर, सन् 1940 ई तक कार्य करते रहे। जनरल हरिसिंह के निधन 10 दिसम्बर, सन् 1940 ई के पश्चात बीकानेर राज्य ने पूगल के प्रशासन मे हस्तक्षेप किया और छोगसिंह स्याणी, सेवानिवृत्त तहसीलदार, की नियुक्ति ठाकुर पन्नेसिंह के स्थान पर की। ठाकुर पन्नेसिंह को अन्य ठिकानो म प्रबन्धक के पद पर नियुक्ति का विकल्प दिया गया, किन्तु इन्होने इसे नम्रता से अस्वीकार कर दिया। लीद उठानी थी तो हाथी की उठानी गधे की क्या उठानी, सेवा ही करनी थी तो अपने भाई पूगल के राव की ही करनी थी।

पूगल का ठिकाना चौदह वर्ष के लम्बे अर्से तक जनरल हरिसिंह की देखरेख मे कोर्ट ऑफ वार्डस के पास रहा। इस अर्से मे पूगल क्षेत्र म शान्ति बनी रही, प्रजा की आर्थिक स्थिति मे बहुत सुधार हुआ सारा ठिकाना समृद्ध बना रहा, सुरक्षा का स्थायी वातावरण था, आवागमन के साधनो म सुधार हुआ और प्रजा को अपने परिश्रम से पैदा की गई उपज, ऊन, घी, घास, लकडी के अच्छे दाम मिलने लगे। भोमियो और अन्य लोगो व सरकारी कर्मचारियो की तरफ से जनता की लूट खसोट नहीं थी। बीकानेर सरकार द्वारा राजस्व के नियमों मे सुधार करने और कर वसूली का तरीका बदल देने से, इसके आर्थिक परिणाम

अच्छे रहे, जिससे ठिकाने री आर्थिक स्थिति मे सुधार हुआ। जब राव देवीसिंह ने सन् 1938 ई मे ठिकाना सम्भाला तो उन्हे आर्थिक तौर पर एक समृद्ध ठिकाना मिला। इसका मुख्य कारण पिछले लम्बे समय से ठाकुर पन्नेसिंह का कामदार के पद पर रहना और उनका निष्ठा और ईमानदारी से कार्य करते रहना था।

सन् 1938 ई मे राव देवीसिंह की सगाई मालवा के डोडिया पवारो के राज्य, पीपलोदा के राजा मगलसिंह की पुत्री सुगन कवर से हुई। इस विवाह के लिए बारात जेठ माह मे बीकानेर रेलवे स्टेशन मे झारवा के लिए रवाना हुई, झारवा, पिपलोदा पहुचने के लिए उसके पास का रेलवे स्टेशन था। इस बारात मे प्रमुख सरदार और अन्य लोग काफी सख्या मे थे, सत्तासर के ठाकुर जनरल हरिसिंह, बीकमपुर के राव अमरसिंह, जयमलसर के रावत मेहताबसिंह, सीदासर ठाकुर बुलीदानसिंह, रोजडी ठाकुर घन्नेसिंह, ठाकुर कल्याण सिंह, गिराजसर ठाकुर डूगरसिंह, खियेरा ठाकुर देवीसिंह, भैला कवर फतेहसिंह, कालासर कवर कैप्टिन पेमसिंह, पारा के राजकुमार विजय बहादुरसिंह जोधा, जैसलमेर के पुरोहित पडित रावतमल, कवर बलदेवसिंह, केसरीसिंह, भीमसिंह, अर्जुनसिंह (चारो सत्तासर के), ठाकुर पन्नेसिंह और कवर किशोरसिंह करणीसर, बरलर ठाकुर कानसिंह, कवर नवलसिंह रोजडी, ठाकुर किशोरसिंह पातावत, नथमल और चाद रतन मोहता, मोदी आसूमल, चौधरी दयाल चन्द, तेजकरण बूचा, रामप्रताप बियाणी, जवाहरसिंह सिहराव, मोहकमदीन पडिहार गुलाम खा पडिहार, ठाकुर दूलेसिंह छीला, पडित मोतीलाल पुरोहित, ठाकुर उदा दान चारण, ठाकुर जेठूसिंह पडिहार, उत्तमजी जाटू, जसजी कच्छवाहा, छोगजी, लखजी, नेमिनाथ मेडतिया, मदन स्याणी, हजारीजी दहिया, नारायण जसोड, जीवन खवास, बरत अली, जीवण, अल्लाह बरश राणा, जीवण पेलणा, हडब्रूजीवाला, बुनजी खवास, शिव नारायण, धनजी मूर, तुलसीराम मेडतिया आदि।

झारवा रेलवे स्टेशन पहुचने पर बारात का हाथियो पर जलूस निकाला गया जो हाथियो पर ही पीपलोदा तक गया। वहा बारात का बडा भव्य स्वागत किया गया। नाच, गाने, गीतो और अन्य तरीको से सबका उत्साहपूर्वक मान सम्मान किया गया। विवाह बडे गाजो बाजो के साथ ऐसा सम्पन्न हुआ जैसा कि पूगल के राव का होना चाहिए था। विवाह के पश्चात् बारात को भावभीनी विदाई दी गई। राव और रानी को लेकर बारात के बीकानेर रेलवे स्टेशन पहुचने पर इसका परम्परागत रीति से स्वागत किया गया। राव देवीसिंह हाथी पर सवार होकर जलूस के साथ सत्तासर हाउस पहुचे, उनकी रानी कार मे सवार होकर वहा पहुची। रेलवे स्टेशन पर अनेक केलण भाटी और पूगल के भोगता बारात के स्वागत के लिए उपस्थित थे। बारातियो के अलावा लगभग पचास गावो के भोगता, सेठ, साहूकार, मोदी, पुरोहित, सेवग आदि जलूस मे साथ हुए। बाबा बालक नाथ अपनी अलग बग्गी मे सवार थे।

इन रानी के राजकुमार सगतसिंह का जन्म वि स 1996, चैत सुदी 9, रामनवमी, के दिन, 29 मार्च, सन् 1939 ई को हुआ।

वि स 1996, मिगसर सुदी 5, शुक्रवार, 15 दिसम्बर, सन् 1939 ई. को माजी साहिबा मोहन कवर बाईजी का देहान्त साय पाच बजे हो गया। यह राव देवीसिंह की दूसरी

माता थी। इनका उसी दिन दाह संस्कार कर दिया गया। माजी साहेबा के देहान्त का सभी को बड़ा दुख हुआ था। इस शोक में पूगल के जवान या वृद्ध सभी हिन्दुओं ने अपने बाल कटवाए, यही उनकी दिवंगत आत्मा के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि थी। उनके पीछे सभी धार्मिक अनुष्ठान विधिवत पूर्ण कराये गये। दसवें दिन पूगल में सैंकड़ों लोग इकट्ठे हुए, ग्यारहवें और बारहवें दिन मरवा का कार्यक्रम पूर्ण किया गया। इसमें हजारों लोग इकट्ठे हुए थे, सभी को परम्परागत मिठाइयों आदि का भोजन कराया गया। पुरोहितों को माजी साहेबा के उच्च पद के अनुसार दान दक्षिणा देकर सन्तुष्ट किया गया। मृत्यु भोज के पश्चात् सभी कच्चे अनुष्ठान पूर्ण किए। सभी को पेचे भेंट किए गए, जिन्हें राव साहब सहित सभी लोगों ने धारण किए। बारह दिन के सावरवाड़े में नजदीक के सभी पुरुष और महिलाएं पूगल आये हुए थे।

पूगल की प्रजा का पूगल के राज परिवार के प्रति अथाह स्नेह और श्रद्धा थी। इन भावनाओं का आदर करते हुए शोकसंतप्त राव देवीसिंह ने सबका यथोचित सम्मान किया। इस शोक की घड़ी में उनका दुख बटाने आने के लिए उन्होंने सबको हृदय से धन्यवाद दिया। मृत्यु पश्चात के रीति रिवाजों और क्रियाक्रमों में उस समय दस हजार रुपयों का खर्चा आया था, आज के मूल्य वृद्धि से यह लगभग छः लाख रुपए के बराबर था।

राव देवीसिंह के दूसरे पुत्र, राजकुमार जगजीतसिंह का जन्म अक्टूबर, सन् 1940 ई में हुआ।

सन् 1941 ई में वृद्धा अवस्था के कारण छोगसिंह कामदार ने अपनी सेवा से त्याग-पत्र दे दिया। इनके स्थान पर बीकानेर राज्य ने एक अन्य सेवा निवृत्त तहसीलदार, पाण्वे के ठाकुर सूरजमालसिंह भाटी को कामदार के पद पर नियुक्त किया। इन्होंने पदभार ग्रहण करते ही कई प्रकार के नये कर लगाए। इन्होंने माफीदारों से भी भूमि कर लेना शुरू कर दिया। यह उनके लिए एक नया कर था। राव रणकदेव (सन् 1380 ई) के समय से पिछले साढे पाच सौ वर्षों से माफीदार कर मुक्त थे। यह नया कर उनके परम्परागत अधिकारों का हनन था और राव केलण के निर्देशों के विरुद्ध था। वंशानुगत दीवान नथमल मोहता ने भी इस कर को रोकने के लिए कामदार से कुछ नहीं कहा। उनके इस कृत्य के कारण जनता की भावनाएँ उनके विरुद्ध हो गईं। उन्होंने इस विषय में अपना असंतोष राव से व्यक्त किया, किन्तु बीकानेर राज्य की कर की ऐसी ही नीति होने के कारण वह इस कार्य में हस्तक्षेप करने में असमर्थ थे। माफीदारों ने यह कर अदा करने से मना कर दिया, दादी साहेबा मेहताब कवर ने उनका पक्ष लिया। यह झगड़ा दो वर्ष तक, सन् 1941 और 1942 ई में, चलता रहा। अन्त में विजय जनता की हुई। ठाकुर सूरजमालसिंह भाटी को कामदार के पद से, मार्च, सन् 1943 ई में, हटा दिया गया। उनके स्थान पर राजसिंह चौहान (आनन्दसिंह चौहान के पितामह) को कामदार नियुक्त किया गया। इन्होंने जनता की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए, सूरजमालसिंह भाटी द्वारा फैलाए गए असंतोष और अव्यवस्था को सुधारा।

सन् 1941 ई, वि स. 1998, आषाढ सुदी 9, को ठाकुर कल्याणसिंह का विवाह कानसर गाव के ठाकुर लक्ष्मणसिंह बीका राठौड़ की पुत्री मोहन कवर से हुआ।

राव साहब के तीसरे पुत्र इन्द्रजीतसिंह का जन्म, 2 अक्टूबर, सन् 1943 ई को हुआ, इनके चौथे पुत्र की मृत्यु, जन्म के कुछ समय पश्चात् हो गई थी।

ठाकुर कल्याणसिंह को उनके विवाह के पश्चात्, सन् 1944 ई मे, मोतीगढ की जागीर मय सियासर पचकोसा गांव के दी गई।

बीकानेर के प्रधान मन्त्री श्री के एम पान्नीकर और मिस्टर एच गोयटज सन् 1945 ई मे पूगल पधारे थे। वहा यह दोनो राव देवीसिंह के तीन दिन तक मेहमान रहे। मिस्टर गोयटज ख्याति प्राप्त पुरातत्व विशेषज्ञ थे। इन्होने पूगल के गढ मे रखे हुए गजनी के लकड़ी के तख्त का निरीक्षण किया और इसे कई कोणो से जाचा। वह इस निष्कर्ष पर पहुचे कि यह लकडी का तख्त भारतवर्ष मे उपलब्ध सबसे पुराना लकडी का फर्नीचर था, अन्यत्र इतनी पुरानी लकडी की कोई वस्तु नही थी। उन्हें इसके पुरातन के विषय मे कोई सन्देह नही था।

पूगल के कामदार राजसिंह का स्थानान्तरण राज्य सरकार ने महाजन ठिकाने मे कर दिया, उनके स्थान पर हरखचन्द को पूगल का कामदार लगाया गया।

राजकुमार संगतसिंह, जगजीतसिंह और इन्द्रजीतसिंह की माता सुगनकवर का देहान्त 14 अगस्त, सन् 1947 ई को हो गया, अगले दिन, 15 अगस्त सन् 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ। रानी साहेबा का देहान्त इनके विवाह (सन् 1938 ई) के दस वर्षों से भी कम समय मे हो गया था।

सन् 1947 ई मे पूगल के राव देवीसिंह अपना कामदार नियुक्त करने के लिए पुन अधिकृत हो गए थे। राव देवीसिंह ने सात साल के अन्तराल के बाद पुन ठाकुर पन्नेसिंह को पूगल के कामदार के पद पर नियुक्त किया, यह सन् 1947 से 1954 ई तक कामदार रहे। इसके बाद जागीरो का स्थायी रूप से राजस्थान राज्य मे विलय होने से कामदार का पद स्थायी रूप मे समाप्त हो गया।

सन् 1948 ई मे राव देवीसिंह का दूसरा विवाह कानोता गाव के कवर नत्थुसिंह चीदावत की पुत्री कचन कवर से हुआ। यह भानीसिंह, महावीरसिंह और शिव कवर बाईसा की माता थी।

सन् 1949 ई म बीकानेर राज्य का राजस्थान राज्य मे विलय हो गया। इस प्रकार यह राज्य 464 वर्षों (सन् 1485 1949 ई) बाद मे समाप्त हो गया।

राजस्थान सरकार ने सन् 1951 ई मे पूगल क्षेत्र के गावो का नया बन्दोबस्ती सर्वेक्षण कार्य आरम्भ किया और साथ मे स्थायी भू प्रबन्ध का कार्य भी पूर्ण करवाया। यह आवश्यक भी था, क्योकि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद राज्यो के राजस्थान मे विलय होने से सत्ता मे परिवर्तन आया था और जनता के भूमि सम्बन्धी मूल अधिकारो मे भी बदलाव आया था।

राव देवीसिंह ने हर किसी को जो उनके पास समय रहते हुए पहुच गया, उसे चुनिंदा भूमि दे दी। उन्हें मालूम था कि शीघ्र ही राज्यो की तरह जागीरें भी समाप्त होने वाली थीं, इसलिए जितना सम्भव हो सकता था, उतना वह अपनी प्रजा, भाटी भाइयो या अन्यो

का उद्धार करना चाहते थे। इस प्रकार से लोगों के नाम की गई भूमि के बदले में उन्होंने कोई कीमत नहीं ली और न ही उनसे किसी प्रकार का भूमि कर लिया। जो कोई उनके पास पहुंचा, उसे उन्होंने जमीन बख्श दी। उनके द्वारा मुफ्त दी हुई हजारों बीघा भूमि आज राजस्थान नहर से सिंचित हो रही है। यह भूमि मुख्यतया अनूपगढ़ से बल्लर तक थी। इसमें घड़साना, रावला, खानूवाला, दातौर आदि की उपजाऊ भूमि थी। परन्तु इन्होंने स्वयं के लिए और अपने पुत्रों के लिए एक बीघा भूमि भी नहीं रखी। जिस राव ने हजारों लोगों को हजारों बीघा भूमि प्रदान करके भूमिधारी और पूंजीपति बनाया, वही परिवार आज भूमिहीनों की श्रेणी में भूमि आवंटन करवा रहा है। अगर राव देवीसिंह स्वार्थी होते तो अपने परिवार के लोगों को चयनित भूमि दे सकते थे, परन्तु उनकी पूर्वजों की बलिदान की भावना इनमें अभी छूटी नहीं थी। यहां तक कि पूगल के प्रभु कोटवाल का पुत्र मोडा आज भूमि का स्वामी है, उसके पास ट्रैक्टर है, चालक को वह प्रति माह आठ सौ रुपये का वेतन देता है, धन धान्य से सम्पन्न है। पूगल के राव को मोडा से ईर्ष्या नहीं थी, वह प्रसन्न थे कि उनके द्वारा दी गई भूमि का सदुपयोग हो रहा था। स्वयं राव रंक बन गए, रंक को राजा बना दिया। इससे बड़ा त्याग क्या हो सकता था? पूगल के रावों में राव केलण के समय से ऐसा दानी राव दूसरा नहीं हुआ। इन्होंने हरिजनों, मेघवालों, नायकों, पुरोहितों, ब्राह्मणों, राणा, बनिया, स्वर्णो सिखों, कर्मचारियों, अधिकारियों, राठौड़ों, भाटियों, हिन्दुओं और मुसलमानों को हजारों बीघों का स्वामी बना दिया और वह भी इस भ्रष्टाचार, भाई भतीजे वाद, आपाधापी के अनीति के युग में। इनके बराबर त्याग और भूमि का दान किसी राव ने नहीं किया था।

उन्होंने भानीपुरा गांव के प्रत्येक भाटी परिवार को उसी गांव में एक एक हजार बीघा भूमि दे दी।

भू-प्रबन्धक अधिकारियों और कर्मचारियों से उन्होंने कहा कि वह उन द्वारा आवंटित भूमि को खातेदारी भूमि में दर्ज करें। परन्तु जिन कर्मचारियों ने कुछ लोगों को इस भूमि का बन्दोबस्ती काश्तकार बताकर दर्ज किया था, उन लोगों को बाद में भारी अड़चनों का सामना करना पड़ा।

सन् 1954 ई., वि. स. 2010, माघ बदी सोमवती अमावस्या की पुण्य तिथि को राव मेहताबसिंह की रानी, दादी साहेबा मेहताब कंवर पातावतजी भाटी का देहान्त हो गया। सन् 1954 ई. तक पुराने समय से काफी बदलाव आ चुका था, फिर भी दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए सारे धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण कराये गये और बारह दिनों तक सारे क्रियाकर्म विधिवत निपटाये।

दिनांक 7 अप्रेल, 1949 ई. को बीकानेर राज्य के राजस्थान में विलय से पूगल अब राजस्थान राज्य की जागीर हो गई थी। यह जागीर भी सन् 1954 ई. की गर्मियों में समाप्त हो गई। पूगल में दशहरा परम्परागत रीति से सन् 1980 ई. तक मनाया जाता रहा, परन्तु इसका स्तर पहले से काफी घट गया था।

सन् 1954 ई. में जागीरों की समाप्ति के साथ एक बहुत बड़ा बदलाव आया। सामन्तवादी व्यवस्था का स्थान लोकतन्त्र ने ले लिया था। प्रजा सामन्तवाद में दुख और

सुख मे अभ्यस्त थी, उन्हे अभी गणतन्त्र के गुण परखने थे। पूगल मे सही अर्थों मे सामन्तवाद कभी नही रहा, यहा का शासन अधिनायकवाद और गणतन्त्र की मिली जुली तस्वीर था। पहले शासन, राहत, न्याय और दण्ड, राव के पास केन्द्रित था। अब वह पूगल से बीकानेर मे बैठे जिलाधिकारियो के हाथो मे आ गया। इन लोगो का जातीय निष्ठा, परम्परा, रीति-रिवाजो, उसवो से कोई लगाव नही था और इनकी जनता के दुख सुख मे कोई स्थायी रुचि नही थी। अहमद खा मानावत की ऊटनी के शेर मोहम्मद द्वारा चुराई जाने की साधारण घटना दो दशहरो तक नही सुलझाई जा सकी, जब कि इसे शीघ्र सुलझाने मे सूरासर के माजरावा का विशेष प्रयत्न रहा था। पहले इसका समाधान कुछ दिनो मे सम्भव था। विधान सभा के चुनाव हुए, चौधरी भीमसेन इस क्षेत्र से चुने गए और वह उप मन्त्री बने। जब तक वह मन्त्री रहे, वह प्रत्येक दशहरे पर पूगल आया करते थे, जनता की शिकायतो और सुझावो को सुनते थे। वह समस्याओ के समाधान के प्रयास भी करते थे। इसके बाद मे यह सिलसिला समाप्त हो गया।

सन् 1959 ई मे कुमार जगजीतसिह का विवाह रायपुर (सिरोही) के देवडा ठाकुर की पुत्री से सम्पन्न हुआ।

सन् 1960 ई की गर्मियो मे भानीपुरा के बीचरराजसिह भाटी की बेवा सोहन कवर 'बुजी' का देहान्त हो गया। इन्हे समस्त पूगल परिवार श्रद्धा और स्नेह से 'बुजी' कहता था। यह कावनी गाव के भीमसिह नायीत की पुत्री थी। इनके बारह दिनों के सारे धार्मिक अनुष्ठान और क्रियाकर्म राव देवीसिह द्वारा सम्पन्न करवाये गये। यह एक प्रकार से राव की दत्तक माता थी। इनके सारे क्रियाकर्मों का खर्चा पूगल के राव ने वहन किया। यह देवी थी, पूगल के सुख दुख की साथिन थी। इनकी निष्ठा, कार्य कुशलता, ईमानदारी, कार्य मे तत्परता, सभी सराहनीय थी।

5 मई, सन् 1961 ई में कुवर इन्द्रजीतसिह का विवाह, कानसर के कुवर शिवदानसिह बीका की पुत्री से हुआ। यह कानसर के ठाकुर लक्ष्मणसिह की पौत्री थी। शिवदानसिह, ठाकुर कल्याणसिह के सगे साले थे।

वि स 2018 सन् 1961 ई की गर्मियो मे राव देवीसिह की दूसरी रानी कचन कवर बीदावतजी का देहान्त हो गया। इनका विवाह केवल तेरह वर्ष पहले, सन् 1948 ई मे, हुआ था।

सन् 1961 ई म राजकुमार सगतसिह का विवाह हरासर के ठाकुर, राव बहादुर जीवराजसिह की पुत्री से सम्पन्न हुआ।

सन् 1968 ई, वि स 2024, माघ सुदी 6 को, माजी साहेबा गुमान कवर बीकीजी बाप, का देहान्त बीकानेर मे हो गया। इनके मृत्यु पश्चात् के सारे क्रियाक्रम बीकानेर म ही किए गए। यह राव देवीसिह की माता थी।

कुमार भानीसिह, महावीरसिह और शिव कवर बाईसा के विवाह माजी साहेबा के देहान्त के बाद म किए गए थे।

शिव कवर बाईसा का विवाह श्री बलबीरसिह बीका, मेलूसर, के साथ हुआ। यह राजस्थान राज्य बिजली बोर्ड मे सहायक अभियन्ता के पद पर कार्यरत है।

जगजीतसिंह के पुत्र शिवराजसिंह का विवाह राव देवीसिंह के जीवनकाल मे हो गया था। इनके एक पुत्र, पौत्र सिद्धार्थ भी हो गया था। जगजीतसिंह की पुत्री मधु का विवाह, महाराज बहादुरसिंह, सेवा निवृत्त एयर कमाण्डोर, के पुत्र राजकुमार पुष्पेन्द्रसिंह के साथ हुआ। भानीसिंह का विवाह कारडा (अजमेर) मे हुआ और महावीरसिंह का विवाह रायपुर (सिरोही) हुआ।

राव साहब के तीसरे पुत्र इन्द्रजीतसिंह ने सादूल पब्लिक स्कूल, बीकानेर, मे शिक्षा ग्रहण की। यह सन् 1966 ई मे पुलिस विभाग मे थानदार के पद नियुक्त हुए। वर्तमान मे यह राजस्थान पुलिस सेवा मे उप-अधीक्षक के पद पर कार्यरत हैं।

इनके पुत्र ऋषिराजसिंह का जन्म 23 जुलाई, सन् 1961 ई मे हुआ था। ऋषिराज सिंह भाटी का योग्यता मे भारतीय पुलिस सेवा (आई पी एस) के लिए वर्ष 1984 मे चयन हुआ। इन्होने इतिहास मे एम ए किया था। वर्तमान मे यह केरल राज्य के पुलिस विभाग मे उच्च पद पर कार्य कर रहे हैं। इनका विवाह, एक नवम्बर सन् 1987 ई म, सेवाड (सवाई माधोपुर) के ठाकुर शिवप्रकाशसिंह की पुत्री दुर्गेश्वरी कुमारी से हुआ। यह सोफिया कॉलिज, अजमेर, की स्नातक हैं। इनके एक पुत्र यशराजसिंह है।

इनकी बडी पुत्री डाक्टर सगीता का जन्म 13 जून, सन् 1963 ई मे हुआ। इन्होने वर्ष 1987 ई मे एम बी बी एस की परीक्षा उत्तीर्ण की। इनका विवाह, 6 मार्च, 1987 ई को तुकियाबास के ठाकुर मानसिंह के पुत्र डाक्टर इन्द्रसिंह से हुआ। डाक्टर इन्द्रसिंह पैड्रियाटिक्स मे एम एस हैं। वर्तमान मे यह बीकानेर मे कार्यरत हैं।

इन्द्रजीतसिंह की दूसरी पुत्री, मजु भाटी का जन्म 15 जुलाई, सन् 1966 ई को हुआ। इन्होने इतिहास में एम ए किया है।

इन्द्रजीतसिंह की दो पुत्रिया, सोनल और मोनल, जोडे की हैं। इसका जन्म 29 जून, 1977 ई को हुआ था। सोनल पाच मिनट बडी है।

राव देवीसिंह का देहान्त, वि स 2041, कातिक पूर्णिमा, 8 नवम्बर, सन् 1984 ई को बीकानेर मे हुआ। इनका देहान्त 65 वर्ष की आयु मे, रात्रि के साढे दस बजे हुआ था। इनके पीछे बारह दिनो तक सारे क्रियाकर्म बीकानेर म करवाए गए। बारहवें दिन सारे सबधी, बीकानेर के प्रमुख सरदार, पूगल क्षेत्र के हिन्दू, मुसलमान, पूगल हाऊस मे एकत्रित हुए। बीकानेर के स्वर्गीय महाराजा करणीसिंह स्वय मातम पुर्सी करने पूगल हाऊस पधारे थे।

राव देवीसिंह के पुत्र राजकुमार सगतसिंह का राजतिलक पूगल हाऊस, बीकानेर, मे किया गया। इस अवसर पर अनेक केलण भाटियो के अलावा बीकानेर के प्रमुख सरदार और सगे सबधी उपस्थित थे। यहा एक दरबार का आयोजन किया गया, जिसमे नये राव को नजरें भेंट की गईं और निछरावलें की गईं। नजरें भेंट करने वालों मे भाटियो और अन्य सरदारो के अलावा, पूगल क्षेत्र के बहुत सारे मुसलमान भाई भी थे।

इस प्रकार पूगल के 26 वें शासक के साथ ही इतिहास का एक युग समाप्त हो गया। राव देवीसिंह पूगल के अन्तिम शासक थे, जिनके पास शासन और सत्ता रही थी। राव

रणकदेव द्वारा सन् 1380 ई में स्थापित पूगल राज्य पर उनके वंशजों ने सन् 1954 ई तक, 574 वर्ष शासन किया। राव देवीसिंह का देहान्त राज्य की स्थापना करने के 604 वर्ष बाद में हुआ था।

राव देवीसिंह के समय में पूगल के भाटी अत्यन्त लोकप्रिय रहे। इनके पुत्र जगजीतसिंह सन् 1981 ई तक पूगल पचायत के निर्विरोध सरपच रहे। इन्होंने अपने समय में पूगल के सैकड़ो लोगों को नहरी भूमि आवटन करवाई, अपने क्षेत्र के भूमिहीनों का विशेष ध्यान रखा और प्रयास करके उन्हे जमीनें दिलवाई। पूगल पचायत के समस्त विकास कार्य इनके प्रयत्नों से हुए। सन् 1981 ई के बाद म इन्होंने चुनाव लड़ने से स्वेच्छा से मना कर दिया। इनके और डाक्टर दुर्गसिंह भाटी, किशनपुरा, के सहयोग स पिछले वर्षों स शिवलाल पुरोहित पूगल के सरपच है।

कुवर विक्रमसिंह वल्लर, अपने देहान्त तक दातोर पचायत क सरपच रहे। इनके देहान्त के बाद मे पूगल परिवार की सहमति और सहयोग स कुवर दिग्विजयसिंह बीदावत (सनाली) सरपच बने। ठाकुर पन्नेसिंह आरम्भ मे करणीसर पचायत के सरपच रहे और इनके बाद म इनके पुत्र ठाकुर पृथ्वीसिंह सरपच बने। राजासर के ठाकुर बनेसिंह भाटी केला पचायत के सरपच रहे। खूणखा के ठाकुर लाधूसिंह भाटी और उनके बाद मे भवानीसिंह भाटी कई सालो तक गनासर ग्राम पचायत के सरपच रहे। इसी प्रकार अमरपुरा मे ठाकुर बागसिंह भाटी और बाद म हनुमानसिंह भाटी सन् 1988 तक सरपच रहे। जयमलसर मे मावनी के ठाकुर मानसिंह और उनके पुत्र जीवराजसिंह सन् 1981 तक सरपच रहे। सारबारा पचायत के ठाकुर मूलसिंह भाटी बहुत वर्षों तक निर्विरोध सरपच रहे, अब वहा उनके परिवार के ठाकुर राजेन्द्रसिंह भाटी सरपच चुने गए है। कोलायत क्षेत्र मे पहले राव पृथ्वीसिंह, बरसलपुर, और बाद म उम्मेदसिंह सीदासर, पचायत समिति के प्रधान रहे। अब वहा रुगनाथसिंह भाटी प्रधान है। केवल यही नहीं, भाटियों के सहयोग और समर्थन से अन्य जातियो के लोग भी सरपच बने। राव देवीसिंह ने जिस जोधासर के राईके को भूमि प्रदान की थी, वह आज वहां सरपच है। करणीसर के ठाकुर माधोसिंह ने समर्थन देकर मातीगढ के कोटवाल को सरपच बनने मे सहायता की।

इनके अलावा अनेक और भाटी भी सरपच हैं। भाटियो का सदैव जनता के साथ व्यवहार बहुत अच्छा और न्यायसगत रहा। इसलिए आज भी वह अल्पसख्या मे होते हुए भी खुलकर चुनावो मे खड़े होते है और अपनी लोकप्रियता के कारण चुनाव जीतते हैं।

पूगल को सन् 1830 ई के बाद मे दो विशष सुविधाए रही, जो बीकानेर राज्य के अन्य जागीरदारों को उपलब्ध नहीं थी –

(1) पूगल ने बीकानेर राज्य को कर या लगान के रूप मे कभी कोई रकम नहीं दी। या इसे यो समझलें कि बीकानेर राज्य ने पूगल से कभी कर नही मागा।

(2) केवल पूगल ही एक ऐसा ठिकाना था जिसे महाराजा के जन्म दिन और दशहरे के दरबारो मे बीकानेर से अनुपस्थित रहने की छूट थी।

राव सगतसिंह
सन् 1984 ई से

राव देवीसिंह के देहान्त के बाद मे राजकुमार सगतसिंह 8 नवम्बर, सन् 1984 मे पूगल के राव बने। इनका जन्म 29 मार्च, 1939 ई को हुआ था। इन्होने सन् 1956 ई म सादूल पब्लिक स्कूल, बीकानेर, से मैट्रिक कक्षा की परीक्षा उत्तीर्ण की फिर बी ए पास किया और बाद मे सन् 1962 65 ई म इन्होंने ड्रिलिंग मे डिप्लोमा किया। वर्तमान मे यह राजस्थान राज्य के खनन विभाग म डिप्टी ड्रिलिंग इन्जिनियर के पद पर कार्यरत हैं।

इनका विवाह 4 दिसम्बर, सन् 1961 ई मे राव बहादुर ठाकुर जीवराजसिंह हरासर की पुत्री से हुआ था। इनके केवल एक सन्तान, राजकुमार राहुलसिंह भाटी हैं, जिनका जन्म, एक सितम्बर, 1965 ई को हुआ था। इन्होने विज्ञान की स्नातक परीक्षा, एम बी कॉलेज, उदयपुर मे उत्तीर्ण की और एम बी ए, इन्स्टीटयूट ऑफ मैनेमेजट स्टडीज, बीकानेर से किया। अभी यह निजी उद्योग मे मैनेजमेंट के सलाहकार पद पर कायरत हैं। यह बहुत होनहार युवा पुरुष हैं।

राव सगतसिंह मृदु भाषी, व्यवहार कुशल और ईमानदार व्यक्ति है। इनमे अहंकार नही है, सरल प्रकृति के हैं। इनम वह सभी योग्यताए और गुण हैं जिनकी पूगल के शासक में हम अपेक्षा करते हैं। यह हमारा दुर्भाग्य है कि अब पूगल, पूगल नही रही। राव सगतसिंह की तरह राजकुमार राहुल मे भी उपरोक्त सभी गुण हैं। यह पढाई लिखाई मे बहुत प्रतिभाशाली रहे हैं। हमे आशा है कि यह अपने कार्यक्षेत्र मे अच्छी उन्नति करेंगे और अपनी निष्ठा व ईमानदारी म सेवा करके पूगल के लिए यश अर्जित करेंगे। हमारी युवा पीढिया इनके साथ सहयोग करके पूगल के भाटी वश का इतिहास सदैव पूर्व की तरह उज्ज्वल रखेंगी।

बही भाट :

राव देवीसिंह के समय रावजी सबलसिंह और ठाकुर रुद्रसिंह, पूगल के केलण भाटियो के वश के बही भाट थे। इनके पास राव रणकदेव के समय से केलण भाटियो के जनम, मरण, उत्तराधिकार, आदि के समस्त अभिलेख लिपिबद्ध थे। इनकी सेवाए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी। भाटियो के सभी गावो में इन रावो को मान, सम्मान, आदर, सत्कार, दान-दक्षिणा मिलती थी। यह पीढी दर पीढी का अभिलेख रखते थे और सामान्यत तीन वर्ष बाद मे प्रत्येक गांव मे जाकर पिछले तीन वर्षों की अवधि के जनम, मरण, विवाह, गोद आदि का लेखा-जोखा पूर्ण कर लेते थे। केवल राजपूतों का ही नहीं, यह यहाँ भाट राजपूत मुसलमान परिवारो के पास जाकर उनका भी लेखा-जोखा व वंशावली पूर्ण करते थे।

ठाकुर कल्याणसिंह, मोतीगढ

मोतीगढ के ठाकुर कल्याणसिंह, राव देवीसिंह के छोटे भाई थे, राव बहादुर राव जीवराजसिंह के यह दो ही पुत्र थे। इनकी माता रानी सूरज कवर, राव जीवराजसिंह की तीसरी पत्नी थीं। यह ठाडम के ठाकुर मैरूसिंह रावतोत की पुत्री थी, इनका जन्म सन् 1908 ई में हुआ था और विवाह तेरह वर्ष की आयु में, सन् 1923 ई में हुआ था। कल्याणसिंह की माता का देहान्त वि स 1982, चैत बदी 12 (सन् 1925 ई) को हो गया और इनके पिता का देहान्त भी दो माह पश्चात, वि स 1982, जेठ बदी 3, को हो गया था। माता पिता के देहान्त के समय यह केवल डेढ वर्ष के अबोध बालक थे। राव जीवराजसिंह की दूसरी रानी, सोहन कवर, जन्म से ही इनका लालन पालन करती रही थीं और इनकी माता के देहान्त के बाद में इन्होंने ही इन्हे पाल पोस कर बडा किया था। रानी सोहन कवर का देहान्त 15 दिसम्बर, 1939 ई को हुआ, उस समय ठाकुर कल्याणसिंह अजमेर के मेयो कॉलेज में होने के कारण इनके देहान्त के समय अनुपस्थित थे।

ठाकुर कल्याणसिंह को सात वर्ष की आयु में, सन् 1930 ई में, वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल, बीकानेर, में प्रवेश दिलाया गया था। यहा इन्होंने सन् 1934 ई तक चार साल शिक्षा ग्रहण की। बीकानेर में इनके और राव देवीसिंह के पास राव जीवराजसिंह की पहली रानी बीकीजी रहती थी। इनकी माता का बाल्यकाल में देहान्त हो जाने के कारण रानी बीकीजी अपने पुत्र देवीसिंह से ज्यादा इनका ध्यान रखती थी।

जनरल हरिसिंह ने इन्हे और इनके बडे भाई राव देवीसिंह को सन् 1934 ई में मेयो कॉलेज, अजमेर, में शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेज दिया। यह मेयो कॉलेज में सन् 1944 ई तक रहे, इनके भाई इनसे काफी पहले सन् 1937 ई में बीकानेर लौट आए थे। यहां इन्होंने शिक्षा के अलावा और भी बहुत कुछ सीखा। लाला हरचरण दास इनके पूज्य थे, जिनसे इन्होंने चरित्र, निष्ठा और ईमानदारी के गुण ग्रहण किये। ठाकुर कल्याणसिंह बीकानेर में अपने कक्ष में मेयो कॉलेज के सामूहिक फोटोग्राफ के साथ लाला हरचरण दास और राय साहब श्याम सुन्दर दास के फोटो अलग से रखते थे, जिनके प्रात दर्शन करके यह प्रेरणा लेते थे।

सन् 1942 ई की गर्मियों में महाराजा गगासिंह ने इन्हें अपने स्टाफ में कैप्टिन का पद देकर नियुक्त किया था। वह इन्हे अपने साथ बम्बई भी लेकर गए ताकि यह आधुनिक महानगर के जीवन, चहल पहल और नीति गति का अनुभव प्राप्त कर सकें। बम्बई में डाक्टर पेंटजेल ने महाराजा का ऑपरेशन करने पर उनके गले में कैंसर के रोग का होना पाया। यह असाध्य व्याधि थी। महाराजा कुछ दिनों तक मद्रास में बिजली के सेक

से कैंसर का उपचार करवा कर बीकानेर लौट आए। उन्होंने ठाकुर कल्याणसिंह को वापिस अजमेर लौटने की स्वीकृति दे दी। महाराजा ने उन्हें एक व्यक्तिगत पत्र अजमेर लिखा, जिसमें उन्होंने अपेक्षा की कि आगामी गर्मियों की छुट्टियों में वह उनसे फिर मिलने की बाट देखेंगे। कल्याणसिंह उनसे दुबारा दर्शन नहीं कर सके क्योंकि उनकी अगली गर्मियों की छुट्टियों से पहले ही महाराजा गंगासिंह का 2 फरवरी, सन् 1943 ई. को बम्बई में देहान्त हो गया था।

सन् 1941 ई. में ठाकुर कल्याणसिंह का विवाह रानसर गाँव के ठाकुर लक्ष्मणसिंह की पुत्री मोहन कंवर से हुआ था। सन् 1944 ई. में यह मेयो कॉलेज, अजमेर, से अपनी स्नातक स्तर की शिक्षा पूर्ण करके बीकानेर लौट आए। इसी वर्ष इन्हें राव देवीसिंह ने मोतीगढ़ और सियासर पचकोसा गांवों की, रुपये 1500/- की वार्षिक आय की, जागीर प्रदान की। इसका क्षेत्रफल 1,45,123 बीघा था।

सन् 1945 में महाराजा सादूलसिंह ने इन्हें बीकानेर असेम्बली में छुट भाईयों के प्रतिनिधि सदस्य के रूप में नियुक्त किया। 31 मार्च, सन् 1946 ई. में बीकानेर राज्य की सेवा में इन्हें 'विकास तहसीलदार' के पद पर नियुक्ति दी गई। सन् 1919 ई. में बीकानेर राज्य के राजस्थान राज्य में विलय हो जाने के फलस्वरूप इन्हें राजस्थान सरकार की सेवा में ले लिया गया था। 31 अगस्त, सन् 1978 ई. को यह राजस्थान राज्य की प्रशासनिक सेवा (आर. ए. एस.) से सेवा निवृत्त हुए। उस समय यह परियोजना निदेशक, सिंचित क्षेत्र विकास, राजस्थान नहर परियोजना, बीकानेर के पद पर कार्यरत थे।

इनकी शिक्षा व रहन सहन और अन्य सभी प्रकार के व्यय राव देवीसिंह ने सन् 1944 ई. तक वहन किए। इनके विवाह का भी सारा खर्चा उनके द्वारा किया गया था। सन् 1950 ई. में इन्हें राव साहब ने अलग से नया मकान बनवाने के लिए पांच हजार रुपये दिए। केवल यही नहीं, राव साहब ने इन्हें सिंचाई योग्य भूमि भी साजूराना के पास दी थी। इस भूमि का लगान यह सन् 1960 ई. तक बराबर राज्य सरकार को चुकाते रहे किन्तु इसके पश्चात् राज्य सरकार ने इस भूमि का अधिग्रहण कर लिया, इसके बदले में न तो इन्हें दूसरी भूमि दी गई और न ही इन्हें इस भूमि का कोई मुआवजा दिया गया।

ठाकुर कल्याणसिंह के स्वयं की कोई सन्तान नहीं हुई थी। इनकी देखभाल इनकी धर्मपत्नी के अलावा इनके भतीजे भी किया करते थे। जुलाई, सन् 1988 ई. में इन्हें आंख के मोतियाबिन्द के ऑपरेशन के लिए चिकित्सालय में भर्ती करवाया गया था। इनकी आंख का ऑपरेशन सफलतापूर्वक हो गया और यह 20 जुलाई को अपने निवास स्थान पर वापिस आने वाले थे। उसी दिन सवेरे इन्हें अचानक हृदयघात हुआ और वहीं चिकित्सालय में इन्होंने प्राण दे दिए। इनका दाह संस्कार उसी दिन दोपहर में बीकानेर में कर दिया गया। इनके पीछे बारह दिनों तक सारे क्रियाकर्म इनके निवास स्थान पर किए गए। इनकी पाग इनके भतीजे इन्द्रजीतसिंह को समाज के सामने बंधवाई गई।

ठाकुर कल्याणसिंह का व्यक्तित्व अपना अलग रूप लिए हुए था। युवावस्था में इनका चेहरा बहुत लुभावना था। इनका शरीर हृष्ट पुष्ट और मांसल गठन वाला था, इनका औसत से लम्बा कद, हंसमुख आकृति और रौबीले हाव भाव आकर्षक थे। इन्हें देख कर

कोई भी वह सकता था कि यह राजपुरुष थे। अपने सेवाकाल में सभी प्रकार के प्रलोभनों को ठुकरा कर यह ईमानदार रहे। इनका कहना था कि इस संसार में केवल एक राव दवीसिंह ही इन्हें बख्शीश दे सकते थे। यह अपने वरिष्ठ अधिकारियों के प्रति निष्ठावान थे, इनकी ईमानदारी सर्वविदित थी। इनके कार्य में उत्साह, कार्य निष्ठा और विषयों के गूढ़ ज्ञान में कोई कमी नहीं थी। इन्हीं कारणों से इनका राजस्थान प्रशासनिक सेवा में योग्यता के आधार पर चयन हुआ था। जिस समय यह उपनिवेशन विभाग में उपायुक्त के पद पर थे, उस समय इन्होंने पूगल क्षेत्र के हिन्दुओं और मुसलमानों की भूमि आवंटन में और उनसे उलझे हुए मामले सुलझाने में बहुत सहायता की। सिंचित क्षेत्र विकास संगठन में परियोजना निर्देशक के पद रहते हुए इन्होंने बुद्धिमता से पूगल क्षेत्र के विकास में बहुत बड़ा योगदान दिया। सारे क्षेत्र में सड़कें, डिग्गियें, स्कूलें मंदिर चिकित्सालय, पशु चिकित्सालय बिजली पानी की प्राथमिक सेवाएं आदि के प्रस्ताव स्वीकृत करवाने में और इन्हें शीघ्र बनवाने में इनका बड़ा योगदान रहा।

सेवा निवृत्त होने के बाद में यह क्षत्रिय समाज की सेवा में लग गए थे। इनके प्रयासों से ही क्षत्रिय सभा बीदासर हाऊस को धर्मशाला के लिए खरीद सकी। यह राजपूत समाज के एक स्तम्भ थे। भाटियों में इनका बहुत आदर था सभी भाटी इनका सम्मान करते थे और इन्हें पितातुल्य मानते थे। यह एक ऐसे वरिष्ठ भाटी थे जिनकी सभी लोग बात सुनते थे और मानते थे। इन्होंने अपने प्रयास से भाटियों से हजारों रुपये चन्दे के इकट्ठे करके धर्मशाला और शान्तिधाम के लिए दिए।

इनका प्रत्येक विषय पर गहरा ज्ञान था। अनेक सम्भ्रांत सरदार इनसे बात करते हुए कतराते थे, क्योंकि इनमें ज्ञान था उनमें सुनी सुनाई अफवाहों का अज्ञान था। इन्हें इतिहास में विशेष रुचि थी। भाटियों के इतिहास का जहां इन्हें पूर्ण ज्ञान था वहां भाटी होने का इन्हें बड़ा भारी गर्व था। भाटियों के इतिहास के साथ इन्हें राजस्थान के राज्यों और भारत के इतिहास का अथाह ज्ञान था। यह मार्मिक विषयों पर घंटों तक बात कर सकते थे, इनसे बात करना और इन्हें सुनना एक सुखद अनुभव था। बीकानेर समाज के थोड़े से सच्चे, ईमानदार और खरे सरदारों में से यह एक थे।

पूगल राज्य का अभी तक कोई लिखित में इतिहास नहीं था। ठाकुर कल्याणसिंह की प्रबल इच्छा थी कि पूगल राज्य का इतिहास लिखा जाय। राज्यों के इतिहास लिखने का सिलसिला आरम्भ होने से पहले ही सन् 1830 ई. में पूगल अपनी स्वतन्त्रता खो कर परतन्त्र हो चुका था। जब भी किसी राज्य का इतिहास बनता है तब किसी दूसरे का बिगड़ता भी है। जब पूगल राज्य अपने शिखर पर था, उस समय बीकानेर, जोधपुर, जयपुर आदि राज्यों का अस्तित्व ही नहीं था। ज्यों ज्यों यह नये राज्य उभरे, पूगल ने इन्हें अपने से तुच्छ समझा। समय का फेर था, पूगल के बाद में उत्पन्न हुए यही राज्य शक्तिशाली होते गए और पूगल का बुढ़ापा दबाता गया। इसलिए सन् 1830 ई. के बाद में पूगल का सच्चा इतिहास लिखना सम्भव नहीं था। अब पूगल परतन्त्र था गुलाम का इतिहास कैसा? आज के गुलाम पूर्व के मालिक थे और वर्तमान के मालिकों को पूगल ने ही तो पनपाया था। पूगल का इतिहास अगर इन तथ्यों को उजागर करता तो उसकी खाल

खींचली जाती। इसलिए पिछले डेढ सौ वर्षों से पूगल का इतिहास लिखकर किसी ने राज सत्ता को चुनौती देने का साहस नही किया।

जिस दिन से ठाकुर कल्याणसिंह सेवा निवृत्त हुए, तभी से उनकी उत्कट इच्छा थी कि पूगल राज्य का इतिहास सही दृष्टिकोण से लिखा जाये। वह सही तथ्यों और सही घटनाओं को मान्यता देना चाहते थे। लगभग आठ वर्षों तक उन्होंने सैंकडो इतिहास की पुस्तकों और अन्य दुर्लभ अभिलेखों का अध्ययन किया और स्वय ने हजारो पृष्ठों के नोट्स बनाए। जब यह इतिहास सकलन करने की स्थिति मे आए तो इनका असमय निधन हो गया।

यह चिकित्सालय मे भर्ती होने मे पहले अपने सारे कागजात मुझे सौंप गए थे, उनके निधन के बाद उनकी यह अमूल्य धरोहर मेरे पास रह गई।

सन् 1417 ई मे पूगल के राव केलण ने उनके दत्तकी पिता राव रणकदेव के पुत्र तणु और दीवान माहेराव हमीरोत को भटनेर की जागीर प्रदान की थी। यह पूगल राज्य के किसी राव द्वारा प्रदान की गई पहली जागीर थी। सन् 1944 ई मे राव देवीसिंह ने ठाकुर कल्याणसिंह को मोतीगढ और सियासर पचकोसा की जागीर प्रदान की थी। यह पूगल के किसी शासक राव द्वारा प्रदान की गई अन्तिम जागीर थी, जिसके प्राप्तकर्ता ठाकुर कल्याणसिंह थे। प्रथम जागीर प्रदान करने मे और अन्तिम जागीर देने मे 527 वर्ष का अन्तराल था। इसके बाद सब कुछ समाप्त हो गया, एक नई व्यवस्था का जन्म हुआ।

बीकानेर राज्य में सन् 1946 ई. की सूची के अनुसार भाटियों की ताजीमें

क्र स.		कुल गाव	आय रुपयो मे
दोलडी ताजीमे			
1 पूगल	राव देवीसिंह	46	35,000/-
2 सत्तासर	मेजर राव बलदेवसिंह	7	7,000/-
3 गडियाला	रावल फतेहसिंह	4	3,000/
इकेलडी ताजीमे			
1 जयमलसर	रावत मेहताबसिंह	8	9,000/-
2. कूदसू	ठाकुर प्रतापसिंह	5	6,500/-
अन्य ताजीमे			
1 बीठनोक	ठाकुर मेहताबसिंह	3	3,000/-
2 छनेरी	मालसिंह	3	1,000/-
3 गौरीसर	मेघसिंह	4	6,000/-
4 हाडला	तेजसिंह	2	500/-
5 हाडला	अनिश्चित	2	500/
6 जागलू	अभयसिंह	2	1,000/-
7 क्षदू	गुमानसिंह	1	2,000/-
8 केला	रामसिंह	1	1,500/-
9 खारबारा	लालसिंह	5	2 500/-
10 खीदासर	खगारसिंह	6	2,000/-
11 खिमेरा	देवीसिंह	4	1,000/-
12 नादडा	लखसिंह	1/2	500/
13 राणेर	लालसिंह	4	3,000/-
14 रोजडी	धन्नसिंह	2	1,000/-
15 पाखेडा	बहादुरसिंह	1	1,000/-
16 टोकला	बिजयसिंह	4	1,000/-

बीकानेर राज्य मे जागीरो म गावो की सख्या के अनुसार महाजन ठिकाने मे 72 गाव थे, इसका पहला स्थान था। दूसरा स्थान पूगल ठिकाने का था, जिसमे 46 गाव थे।

बीकानेर राज्य मे पूगल व अन्य भाटियो की कुल 151 जागीरें निम्न प्रकार से थी

पूगल –60, खीया–जयमलसर–6, किसनावत–6, पूगलिया भाटी–45, रावलोत भाटी–4, गोगली भाटी–4, वाला भाटी–3, देरावरिया भाटी–3, पाहू भाटी–1, केहरभाटी–1, चाचा भाटी–1, अर्जुनोत भाटी–2, आखावत भाटी–1, जैतूग भाटी–2, राहड भाटी–1, फौजदार भाटी–8, बुद्ध भाटी–3, कुल 151 जागीरें।

सन् 1946 ई. में पूगल के भोगतों का विवरण

क्र स.	गाव का नाम	नाम भोगता	जाति	क्षेत्रफल, बीघों मे
1	मोतीगढ	बख्तावरसिंह	सिहराव भाटी	62,220
2	घोघा	शमशुद्दीनखा	पडिहार	39,805
3	दातौर	अमीरखा	पडिहार	1,53,845
4	जोधासर	खेतसिंह	सिहराव भाटी	1,45,994
5	सूरामर	गुल्लु खा 1/4	पडिहार	63,300
		मीर बख्श खा 1/4	पडिहार	
		बालू खा 1/4	पडिहार	
		सेध खा 1/4	पडिहार	
6	रामडा	अर्जुनसिंह पुत्र डूगरसिंह	पडिहार	82,267 बीबछा सहित
7	धारूसर	ऊमरदीन खा	पडिहार	38,317
8	सियासर पचकोसा	बालूसिंह	सिहराव भाटी	82,903
9	राणावाला	अल्लाह बसाया 1/4	उत्तराव	1 07,000
	ममा का बेरा	रहमत अल्लाह खा 1/4	उत्तराव	
	सलीम का बेरा	जहागीर खा 1/4	उत्तराव	
		पीर बख्श 1/4	उत्तराव	
10	रामसर	छोगसिंह 1/2	पाहू भाटी	44,116
		जेठमालसिंह 1/2	देवडा	
11.	जुराहडी	करीम खा	उत्तराव	28,737
12	भुट्टो का बेरा	पृथ्वीराजसिंह	भुट्टा	–
13	करणपुरा	अदला खा	पडिहार	27,162
14	मकेरी	मगनसिंह	सिहराव भाटी	16,544
15	भानावतवाला	अत्ते खा 1/2	पडिहार	25 000
		जहागीर खा 1/2	पडिहार	
16	सियासर चौगान	भैरूसिंह	सिहराव भाटी	3,50,380
17	भाइयों का बेरा	जिनदत्त खा	मैया	
18	नवगाव	ग्यान मोहम्मद	नायाब	
		अली मोहम्मद खा	नायाब	
19	बल्लर	पजुखा	मोलवी	2,50 000

20	सोयाधाना (बोरिया वाली ढाणी)	वाहिद बख्श पीर बख्श	मुवार साहू	
21	बान्दरवाला	दुर्लेसिंह 1/2 निमनसिंह 1/2	बाघोड भाटी	45,000
22	बरजू	जलाल खां	शेख	31,648
23	बराला	जगमालसिंह	जसोड भाटी	21,746
24	अमरपुरा	गणपतदान हीरदान फूसदान भैवरदान जीवराजदान	रतनू चारण	2 24 866
25	जाटवां की ढाणी	उत्तमसिंह	जाट	– अमरपुरा की ढाणी
26	आडूरी	फिरोज खां	पडिहार	16,107
27	कुम्भारवाला	गणेशा	कुम्भार	– पूगल के साथ
28	सीरसर	सूरा खां	कुम्भार	23,981
29	गणेशवाली	अलीखा उधानखा	कोटवाल कोटवाल	7,788
30	ढड्डी सुमेरा	जवाहरसिंह	सिहराव भाटी	– जोधासर के साथ
31	सामेवाला	लधाखा	पहोड	15,849
32	अक्कासर	—	पडिहार	58,986
33	रसूलसर	रसूलबख्श	पडिहार	31,500
34	नरसिंहवारा	सुलतान खा	मुवार	61,411
35.	पवारावाली	भावन खा	पहोड	– राणीसर ढाणी के साथ
36	राणीसर	करीम बख्श पहलवान	पडिहार माछा	71,005
37	डावर	मेवाखा	कोटवाल	31,000
38	गगाजली	अमदूखा	पडिहार	23,980
39	पहलवान का बेरा	रमजान खा वली मोहम्मद हुसैन खा	पडिहार पडिहार पडिहार	20,600
40	पालावाली	मानेखा 1/2 लालखा 1/2	मुवार मुवार	24,658
41	करणीसर	हीरसिंह	भाटी	2,00,000
42	भानीपुरा	जठमालसिंह	भाटी	1,10,000
43	रघनाथपुरा	कल्याणसिंह	भाटी	
44	मण्डला	खुमाणसिंह	भाटी	

सन् 1946 ई. में पूगल के भोगतों का विवरण

क्र सं.	गांव का नाम	नाम भोगता	जाति	क्षेत्रफल, बीघों मे
1	मोतीगढ	बरतावरसिह	सिहराव भाटी	62,220
2.	धोधा	शमशुद्दीनखा	पडिहार	39,805
3	दातौर	अमीरखा	पडिहार	1,53,845
4	जोधासर	खेतसिह	सिहराव भाटी	1,45,994
5	सूरासर	गुल्लु खा 1/4	पडिहार	63,300
		मीर बरश खा 1/4	पडिहार	
		बालू खा 1/4	पडिहार	
		सेघ खा 1/4	पडिहार	
6	रामडा	अखैसिह पुत्र डूगरसिह	पडिहार	82,267 बीवछा सहित
7	थारूसर	ऊमरदीन खा	पडिहार	38,317
8	सियासर पचकोसा	कालूसिह	सिहराव भाटी	82,903
9	राणावाला	अल्लाह बसाया 1/4	उत्तराव	1 07,000
	समा का बेरा	रहमत अल्लाह खा 1/4	उत्तराव	
	सलीम का बेरा	जहागीर खा 1/4	उत्तराव	
		पीर बख्श 1/4	उत्तराव	
10	राससर	छोगसिह 1/2	पाहू भाटी	44,116
		जेठमालसिह 1/2	देवडा	
11	जुराडकी	करीम खा	उत्तराव	28,737
12	भुट्टो का बेरा	पृथ्वीराजसिह	भुट्टा	–
13	करणपुरा	अदला खा	पडिहार	27,162
14	मकेरी	मगनसिह	सिहराव भाटी	16,544
15	भानावतवाला	अत्ते खा 1/2	पडिहार	25,000
		जहागीर खा 1/2	पडिहार	
16	सियासर चौगान	भैरूसिह	सिहराव भाटी	3,50,380
17	भाइयो का बेरा	जिनदन खा	भैया	
18	नवगाव	खान मोहम्मद	नायाच	
		अली मोहम्मद खा	नायाच	
19	बल्लर	पजुखा	सोनकी	2,50,000

20 सोयावाला	वाहिद बख्श	मुवार	
(बोरिया वाली ढाणी)	पीर बख्श	साहू	
21 बान्दरवाला	दुर्लेसिंह 1/2	बाघोड़	45,000
	चिमनसिंह 1/2	भाटी	
22 बरजू	जलाल खां	शेख	31,648
23 दराला	जगमालसिंह	जसोड़ भाटी	21,746
24 अमरपुरा	गणपतदान हीरदान पूनदान केवरदान जीवराजदान	रतनू चारण	2,24,866
25 जाटवा की ढाणी	उत्तमसिंह	जाटू	— अमरपुरा की ढाणी
26 आडूरी	फिरोज खां	पड़िहार	16,107
27 कुम्भारवाला	गणेखां	कुम्भार	— पूगल के साथ
28 खीरसर	सूराखां	कुम्भार	23,981
29 गणेशवाली	अलीखां	कोटवाल	7,788
	उधानखां	कोटवाल	
30 ढढी सुमेरान	जवाहरसिंह	सिहराव भाटी	— जाखासर के साथ
31 सामेवाला	लधाखां	पहोड़	15,849
32 बरासर	—	पड़िहार	58,986
33 रसूलसर	रसूलबख्श	पड़िहार	31,500
34 नरसिंह्यारा	सुलतान खां	मुवार	61,411
35 पवारावाली	भावन खां	पहाड़	— राणीसर ढाणी के साथ
36 राणीसर	करीम बख्श	पड़िहार	71,005
	पहलवान	माछा	
37 डाबर	सेवाखां	कोटवाल	31,000
38 गंगाजली	अमदूखां	पड़िहार	23,980
39 पहलवान का बेरा	रमजान खां	पड़िहार	20,600
	वली मोहम्मद	पड़िहार	
	हुसैन खां	पड़िहार	
40 पारावाली	मांगेखां 1/2	मुवार	24,658
	लालखां 1/2	मुवार	
41 करणीसर	हीरसिंह	भाटी	2,00,000
42 भानीपुरा	जैतमालसिंह	भाटी	1,10,000
43 रघुनाथपुरा	कल्याणसिंह	भाटी	
44 मण्डला	गुमानसिंह	भाटी	

45	पूगल	चौधरी फकीरचंद	चाडक	1,11 430
46	अमराला	चांदसिंह	पड़िहार	23 820
47	बीकछा	हमीरसिंह	पड़िहार	रामड़ा के साथ
48	लखासर	धनसिंह	सिहराव भाटी	– रामड़ा के साथ
49	दीनगढ	उमरदीन खा	डूडी	23 792
50	बेरियावाला (खाजूवाला)	मोहम्मदीन खा	पड़िहार	1 88 500
51	अल्लादीन का बेरा	इस्माइलखा	पड़िहार	23 030
52	करमवाली	मेहबक्श	मुवार	1,04,392
53	नूरमोहम्मद का ढांढा	नूरमोहम्मद	मुवार	5,600
54	समा का बेरा	–	समा	– राणेवाले के साथ
55	रमजानवाली	–	खीची	9 460
56	कोरियावाला	अहमद बक्श कोरी	कोरी	– सूरासर के साथ
57	छमोलिया	फैजू खा	पड़िहार	10,000
58	सहरा	भागूखा	–	– पूगल के साथ
59	सूरासर	–	–	– बान्दरवाला के साथ
60	गोगलीवाला	उमरदीन खा	चौहान	48 807 मुगराला के साथ
61	ममाई	भागूखा	कोटवाल	11,932
		अलीखा	कोटवाल	–
62	मुगराला	अलीखा	पड़िहार	गोगलीवाला के साथ
63	छारोली	जावता खा	पड़िहार	23 573
64	गुलामअलियाला	–	पड़िहार	1 26 450
65	अकबर सैयदां	सावनशाह	सैयद	– गुलामअलिवाला के साथ
66	भेपूरा	रणजीतसिंह	भाटी	भाटीपुरा के साथ
67	हिम्मतवाला	–	–	– पूगल के साथ
68	खालसा का कुआ	सावतसिंह	जाटू	– अमरपुर के साथ
69	सीरनवाला	मुराद	कोटवाल	– डावर के साथ
70	राईको की ढाणी	रूपा	राईका	–

उपरोक्त गांवों का क्षेत्रफल लगभग 32 50 लाख बीघा
पूगल की खालसे के गांवों का क्षेत्रफल 24 32 लाख बीघा
योग 56 82 लाख बीघा

उपरोक्त गांवों की आय रु 41 000/–
खालसे के गांवों की आय रु 36 000/–
योग रु 77 000/–

पूगल के रावो के समकालीन शासक

क्र सं. पूगल	जैसलमेर	बीकानेर	मारवाड(जोधपुर)	दिल्ली	आमेर (जयपुर)	मेवाड (उदयपुर)
1. राव रणकदेव, सन् 1380-1414 ई	1 रावल केहर, सन् 1361-1396 ई 2 रावल लखमन, सन् 1396-1427 ई	–	1 राव चून्डा, मडोर, नागौर, सन् 1418 ई तक	1 सुलतान फिरोज तुगलक, सन् 1351-1388 ई 2 सुलतान ग्यासुद्दीन तुगलक, सन् 1388-1389 ई 3 अन्य सन् 1414 ई तक	–	1 रावल समरसी, मृत्यु सन् 1193 ई 2 रावल करण, सन् 1193-1201 ई 3 राणा राहुप, सन् 1201-1239 ई 4 राणा हमीर, सन् 1301-1365 ई 5 राणा खेतसी, सन् 1365-1373 ई 6 राणा लाखा, सन् 1373-1398 ई 7 राणा मोकल, सन् 1398-1419 ई

क्र स. पूगल	जैसलमेर	बीकानेर	मारवाड(जोधपुर)	दिल्ली	आमेर (जयपुर)	मेवाड (उदयपुर)
2 राव केलण, सन् 1414-1430 ई	1. रावल लखमन, सन् 1396-1427 ई 2 रावल वरसी, सन् 1427-1448 ई	–	1 राव चून्डा, मडोर और नागोर सन् 1418 ई तक 2 राव कान्हा और सातल, सन् 1418-1427 ई 3 राव रिडमल, मडोर, सन् 1427-1438 ई	1 सुलतान सैयद खिजर खा, सन् 1414-1421 ई 2 मुबारक शाह, 1421-1434 ई	–	1 राणा मोकल, सन् 1389-1419 ई
3 राव चाचग-देव, सन् 1430-1448 ई.	1 रावल वरसी, सन् 1427-1448 ई	–	1 राव रिडमल, सन् 1427-1438 ई 2 सन् 1438 से 1453 ई तक मडोर मेवाड के अधिकार में रही।	1 मुबारक शाह, 1421-1434 ई 2 मोहम्मद शाह, सन् 1434-1444 ई 3 अल्लाउद्दीन आलम शाह, सन् 1444-1451 ई	– –	1 राणा कुम्भा, सन् 1419-1469 ई
4 राव बरसल, सन 1448-	1. रावल वरसी, सन 1427-	–	1 राव जोधा, मडोर, 1453-	1 अल्लाउद्दीन आलम शाह, सन् 1444-		राणा कुम्भा, सन् 1419-1469 ई

1464 ई	1448 ई 2 रावल चाचा, सन् 1448-1467 ई		1459 ई 2 राव जोधा, जोधपुर, सन् 1459 1488 ई	1451 ई 2 सुलतान बहलोल लोदी, सन् 1451-1489 ई		
5 राव शेखा, सन् 1464 1500 ई	1 रावल चाचा, सन् 1448-1467 ई 2 रावल देवीदास, सन् 1467-1524 ई	राव बीका, सन् 1485-1504 ई	1 राव जोधा, सन 1453-1488 ई 2 राव सातन, सन् 1488-1491 ई 3 राव सजा सन् 1491-1516 ई	1 सुलतान बहलोल लोदी, सन् 1451-1489 ई 2 सिकन्दर लोदी, सन् 1489-1517 ई	—	1 राणा कुम्भा, सन् 1419-1469 ई 2 उदयसिंह, सन् 1469-1474 ई 3 रायमल, सन् 1474 1509 ई (उपरोक्त शासनकाल कर्नल टाड के अनुसार है।)
6 राव हरा सन 1500 1535 ई	1 रावल देवीदास, सन् 1467-1524 ई 2 रावल जैतसी, सन् 1524-1528 ई 3 रावल लूणकरण, सन् 1528 1551 ई	1 राव बीका, सन् 1485-1504 ई 2 राव नरा, सन् 1504-1505 ई 3 राव लूणकरण सन् 1505-1526 ई	1 राव सूजा, सन् 1491 1516 ई 2 राव गगा, सन् 1516-1532 ई 3 राव मालदेव सन् 1532 1562 ई	1 सुलतान सिकन्दर लोदी, सन् 1489 1517 ई 2 इब्राहिम लोदी, सन् 1517-1526 ई 3 बाबर, सन् 1526 1530 ई	1 राजा पृथ्वीराज, सन् 1502 1527 ई 2 पूरणमल, सन् 1527-1533 ई 3 भीमसिंह, सन् 1533-1536 ई	1 रायमल, सन् 1474 1509 ई 2 संग्रामसिंह, सन् 1509-1528 ई 3 रतनसिंह, सन् 1528-1531 ई 4 विक्रमादित्य, सन् 1531-1536 ई

क स पूगल	जैसलमेर	बीकानेर	मारवाड(जोधपुर)	दिल्ली	आमेर (जयपुर)	मेवाड (उदयपुर)
		4 राव जैतसी, सन् 1526-1542 ई		4 हुमायु सन् 1530-1540 ई		
7 राव वरसिंह, सन् 1535 1553 ई	1 रावल लूणकरण, सन् 1528-1551 ई 2 मालदेव, सन 1551-1561 ई	1 राव जैतसी सन् 1526-1542 ई 2 कल्याणमल, सन् 1542-1571 ई (सन् 1542-44 ई जोधपुर के अधीन)	1 राव मालदेव सन् 1532 1562 ई	1 हुमायु सन 1530-1540 ई 2 शेरशाह सूरी सन् 1540 1545 ई 3 इस्लाम शाह सन् 1545 1553 ई.	1 भीमसिंह, सन् 1533 1536 ई 2 रतनसिंह, सन् 1533 1547 ई 3 आसकरण, सन् 1547 ई 4 भारमल, सन् 1547-1573 ई	1 विक्रमादित्य, सन् 1531 1536 ई 2 वनवीर, सन् 1537 ई 3 उदयसिंह, सन् 1537-1572 ई
8 राव जैसा, सन् 1553 1587 ई	1 रावल मालदेव, सन् 1551-1561 ई 2 हरराज, सन् 1561 1577 ई 3 भीमसिंह, सन् 1577 1613 ई	1 राव कल्याण मल, सन् 1542 1571 ई 2 राजा रायसिंह सन् 1571-1612 ई	1 राव मालदेव सन् 1532-1562 ई 2 राव चन्द्रसेन, सन् 1562 1581 ई 3 राजा उदय सिंह, सन् 1581-1595 ई	1 इस्लाम शाह, सन् 1545 1553 ई 2 इब्राहिम, सन् 1553-1555 ई 3 सिकन्दर, सन 1555 ई 4 हुमायु, सन् 1555-1556 ई 5 बादशाह अकबर, सन् 1556 1605 ई	1 राजा भारमल, सन् 1547-1573 ई 2 भगवानदास, सन् 1573 1587 ई	1 राणा उदयसिंह, सन् 1537-1572 ई 2 राणा प्रताप, सन् 1572-1597 ई

9	राव काना, सन् 1587-1600 ई	रावल भीमसिंह, सन् 1577-1613 ई	राजा रायसिंह, सन् 1571-1612 ई	1 राजा उदयसिंह, सन् 1581-1595 ई 2. राजा सूरसिंह, सन् 1595-1620 ई	बादशाह अकबर, सन् 1556 1605 ई	राजा मानसिंह, सन् 1587-1614 ई	1 राणा प्रताप, सन् 1572-1597 ई 2 महाराणा अमर सिंह, सन् 1597-1620 ई
10	राव आसकरण, सन् 1600-1625 ई	1 रावल भीम सिंह, सन् 1577-1613 ई 2 कल्याणदास, सन् 1613-1631 ई	1 राजा रायसिंह, सन् 1571-1612 ई 2. दलपतसिंह, सन 1612-1614 ई 3 सूरसिंह, सन् 1614-1631 ई	1 राजा सूरसिंह, सन् 1595-1620 ई 2 महाराजा गजसिंह सन् 1620-1638 ई	1 बादशाह अकबर, सन् 1556-1605 ई 2 जहांगीर, सन् 1605-1627 ई	1 राजा मानसिंह, सन् 1587-1614 ई 2 भाव सिंह, सन् 1614-1621 ई 3 जयसिंह, सन् 1621-1667 ई	1 महाराणा अमर सिंह, सन् 1597-1620 ई 2 करणसिंह, सन् 1620-1628 ई
11	राव जगदेव, सन् 1625-1650 ई	1 रावल कल्याण दास, सन् 1613 1631 ई 2 मनोहरदास, सन् 1631-1649 ई 3. रामचन्द्र, सन् 1649-1650 ई	1 राजा सूरसिंह, सन् 1614-1631 ई 2 राजा करणसिंह, सन् 1631-1667 ई	1 महाराजा गजसिंह, सन् 1620-1638 ई 2 जसवन्तसिंह, सन् 1638 1678 ई	1. बादशाह जहांगीर सन् 1605-1627 ई 2 शाहजहां, सन् 1627 1657 ई	राजा जयसिंह, सन् 1621 1667 ई	1 महाराणा करण सिंह, सन् 1620-1628 ई 2 जगतसिंह, सन् 1628 1652 ई

क्र. स. पूगल	जैसलमेर	बीकानेर	मारवाड़ (जोधपुर)	दिल्ली	आमेर (जयपुर)	मेवाड़ (उदयपुर)
12. राव सुदरसेन, सन् 1650-1665 ई	1. रावल सबल सिंह, सन् 1650-1659 ई. 2. महारावल अमरसिंह, सन् 1659-1702 ई.	राजा करणसिंह, सन् 1631-1667 ई.	महाराजा जसवन्त सिंह, सन् 1638-1678 ई	1 बादशाह शाहजहा, सन् 1627-1657 ई 2. औरंगजेब, सन् 1657-1707 ई	महाराजा जयसिंह, सन् 1621-1667 ई	1. महाराणा जगत सिंह, सन् 1628-1652 ई. 2. राजसिंह, सन् 1652-1680 ई.
13. राव गणेश दास, सन् 1665-1686 ई	महारावल अमर सिंह, सन् 1659-1702 ई	1. राजा करण सिंह, सन् 1631-1667 ई 2 महाराजा अनोपसिंह, सन् 1667-1698 ई	1 महाराजा जसवन्तसिंह, सन् 1638-1678 ई 2. अजीतसिंह, सन् 1678-1724 ई	बादशाह औरंगजेब, सन् 1657-1707 ई	1 महाराजा जयसिंह, सन् 1621-1667 ई 2. रामसिंह, सन् 1667-1687 ई	1. महाराणा राज सिंह, सन् 1652-1680 ई. 2 जयसिंह, सन् 1680-1698 ई.
14. राव विजय सिंह, सन् 1686-1710 ई	1. महारावल अमरसिंह, सन् 1659-1702 ई 2. जसवन्तसिंह, सन् 1702-	1 महाराजा अनोपसिंह, सन् 1667-1698 ई. 2 सरूपसिंह,	महाराजा अजीतसिंह, सन् 1678-1724 ई	1 बादशाह औरंगजेब, सन् 1657-1707 ई 2 आलमशाह, सन् 1707 ई	1 महाराजा रामसिंह, सन् 1667-1687 ई 2 बिशनसिंह, सन् 1687-1699 ई	1 महाराणा जयसिंह, सन् 1680-1698 ई 2. अमरसिंह, (द्वितीय) सन्

		1707 ई 3 बुधसिंह, सन् 1707 1709 ई 4 तेजसिंह, सन् 1709-1717 ई	सन् 1698 1700 ई 3 सुजानसिंह, सन् 1700-1736 ई		3 खान बख्श, सन् 1707 ई 4 शाह आलम, सन् 1707 ई 5 कुतुबुद्दीन, सन् 1707-1712 ई	3 जयसिंह, सन् 1699-1743 ई	1698-1710 ई
पूगल	15 राव दलकरण, सन् 1710 1741 ई	1 महारावल तेजसिंह, सन् 1709-1717 ई 2 सवाईसिंह, सन् 1717-1718 ई 3 अखैसिंह, सन् 1718-1762 ई	1 महाराजा सुजानसिंह, सन् 1700-1736 ई 2 जोरावरसिंह सन् 1736-1745 ई	1 महाराजा अजीतसिंह, सन् 1678-1724 ई 2 अभयसिंह, सन् 1724 1749 ई	1 कुतुबुद्दीन, सन् 1707-1712 ई 2 सन् 1712 ई मे तीन शासक हुए। 3 फर्रुखशियार, सन् 1712-1719 ई 4 मोहम्मद शाह, सन् 1719-1748 ई	महाराना जयसिंह, सन् 1699-1743 ई	1 महाराणा अमर सिंह, सन् 1698 1710 ई 2 संग्रामसिंह, सन् 1710-1734 ई 3 जगतसिंह, सन् 1734 1751 ई
तीन शासक	16 राव अमर सिंह, सन् 1741-1783 ई	1 महारावल अखैसिंह, सन् 1718 1762 ई 2 मूलराज, सन्	1 महाराजा जोरावरसिंह, सन् 1736 1745 ई 2 गजसिंह, सन्	1 महाराजा अभयसिंह सन् 1724-1749 ई 2 रामसिंह, सन्	1 मोहम्मदशाह, सन् 1719-1748 ई 2 अहमदशाह, सन् 1748 1754 ई 3 आलमगीर, सन्	1 महाराजा जयसिंह, सन् 1699-1743 ई 2 ईश्वरसिंह, सन् 1743 1750 ई	1 महाराणा जगत सिंह, सन् 1734-1751 ई 2 प्रतापसिंह, सन् 1751-1754 ई

क्र. सं. पूगल	जैसलमेर	बीकानेर	मारवाड़ (जोधपुर)	दिल्ली	आमेर (जयपुर)	मेवाड़ (उदयपुर)
	1762-1820 ई	1745-1787 ई	1749-1752 ई 3 बरतसिंह, सन् 1752-1753 ई 4. विजयसिंह, सन् 1753-1793 ई	1754-1759 ई 4 जलालुद्दीन, सन् 1759-1806 ई	3 माधोसिंह, सन् 1750-1767 ई 4 पृथ्वीसिंह, सन् 1767-1778 ई 5. प्रतापसिंह, सन् 1778-1802 ई	3. गजसिंह, सन् 1754-1761 ई. 4 अमरसिंह, सन् 1761-1773 ई. 5 हमीरसिंह, सन् 1773-1778 ई 6 भीमसिंह, सन् 1778-1828 ई
17. 1 1783-1790 ई. खालसे 2 उज्जीण सिंह, सन् 1790-1793 ई 3 राव अभय सिंह, सन् 1793-1800 ई	महारावल मूलराज, सन् 1762-1820 ई	1 महाराजा गज सिंह, सन् 1745-1787 ई 2 राजसिंह, सन् 1787 ई 3. प्रतापसिंह, सन् 1787 ई 4 सूरतसिंह, सन् 1787-1828 ई	1 महाराजा विजयसिंह, सन् 1753-1793 ई 2. भीमसिंह, सन् 1793-1803 ई	1 जलालुद्दीन, सन् 1759-1806 ई 2 वैलेजली, गवर्नर जनरल, सन् 1798-1805 ई	महाराजा प्रताप सिंह, सन् 1778-1802 ई	महाराणा भीम सिंह, सन् 1778-1828 ई.
18. राव रामसिंह, सन् 1800-	1 महारावल मूलराज, सन्	1 महाराजा सूरतसिंह, सन्	1. महाराजा भीमसिंह, सन्	1 जलालुद्दीन, सन् 1759-1806 ई	1. महाराजा प्रताप सिंह, सन् 1778-	1. महाराणा भीम सिंह, सन् 1778-

	1830 ई.	1762-1820 ई 2 गजसिंह, सन् 1820-1845 ई	1787-1828 ई. 2. रतनसिंह, सन् 1828-1851 ई.	1793-1803 ई 2. मानसिंह, सन् 1803-1843 ई.	2. मोहम्मद अकबर, सन् 1806-1837 ई 3 अनेक गवर्नर जनरल	1802 ई. 2 जगतसिंह, सन् 1802-1818 ई. 3 जयसिंह, सन् 1818-1835 ई.	1828 ई. 2. जवानसिंह, सन् 1828-1838 ई
19	1. राव साद्लसिंह, सन् 1830-1837 ई 2. राव रणजीतसिंह, सन् 1837 ई 3. राव करणीसिंह, सन् 1837-1883 ई	1. महारावल गज सिंह, सन् 1820-1845 ई 2 रणजीतसिंह, सन् 1845-1863 ई 3. वेरीसालसिंह, सन् 1863-1891 ई	1. महाराजा रतनसिंह, सन् 1828-1851 ई 2 सरदारसिंह, सन् 1851-1872 ई 3 डूगरसिंह, सन् 1872-1887 ई.	1 महाराजा मानसिंह, सन् 1803-1843 ई 2 तख्तसिंह सन् 1843-1873 ई 3. जसवन्तसिंह, सन् 1873-1895 ई	1 मोहम्मद अकबर, सन् 1806-1837 ई. 2 बहादुरशाह जफर, सन् 1837-1857 ई. 3 अनेक गवर्नर जनरल	1 महाराजा जयसिंह, सन् 1818-1835 ई 2 रामसिंह, सन् 1835-1880 ई 3 माधोसिंह, सन् 1880-1922 ई	1. महाराणा जवान सिंह, सन् 1828-1838 ई 2 सरदारसिंह, सन् 1838-1842 ई 3 सरूपसिंह, सन् 1842-1861 ई 4. शम्भुसिंह, सन् 1861-1874 ई 5. सज्जनसिंह, सन् 1874-1884 ई
20	राव रुघनाथ सिंह, सन् 1883-1890 ई	महारावल बैरी साल सिंह, सन् 1863-1891 ई.	1. महाराजा डूगरसिंह, सन् 1872-1887 ई 2. गगासिंह, सन्	1 महाराजा जसवन्तसिंह, सन् 1873-1895 ई	अनेक गर्वनर जनरल	महाराजा माधोसिंह, सन् 1880-1922 ई	महाराणा सज्जन सिंह, सन् 1874-1884 ई. 2 फतेहसिंह, सन् 1884-1929 ई.

क्र. सं.	पूगल	जैसलमेर	बीकानेर 1887-1943 ई	मारवाड़(जोधपुर)	दिल्ली	आमेर (जयपुर)	मेवाड़ (उदयपुर)
21	1 राव मेहतावसिंह, सन् 1890-1903 ई 2 राव जीवराजसिंह, सन् 1903-1925 ई. 3 राव देवीसिंह, सन् 1925-1984 ई. 4 राव सगतसिंह, सन् 1984 से। सन् 1949 मे राज्यो का विलय हुआ और 1954 मे जागीरें समाप्त कर दी गई।	1 महारावल बैरीसालसिंह, सन् 1863-1891 ई 2 शालीवाहन सिंह, सन् 1891-1914 ई 3 जवाहरसिंह, सन् 1914-1949 ई 4 गिरधारीसिंह, सन् 1949– 5 रघनाथसिंह, सन् 1949-1982 ई 6 बृजराजसिंह, सन् 1982 से	1 महाराजा गगासिंह, सन् 1887-1943 ई 2 सादूलसिंह, सन् 1943-1950 ई 3. करणीसिंह, सन् 1950-1988 ई 4 नरेन्द्रसिंह, सन् 1988 से	1 महाराजा जसवन्तसिंह, सन् 1873-1895 ई 2 सरदारसिंह, सन् 1895-1911 ई 3 सुमेरसिंह, सन् 1911-1914 ई 4 उमेदसिंह, सन् 1914-1946 ई 5 हनुवन्तसिंह, सन् 1946-1952 ई 6. गजसिंह, सन् 1952 से	सन् 1947 ई तक अंग्रेज गवर्नर जनरल और वायसराय रहे, बाद मे भारत स्वतन्त्र हो गया।	1 महाराजा माधोसिंह, सन् 1880-1922 ई 2 महाराजा मान सिंह, सन् 1922-24-6-1970 ई 3 भवानीसिंह 24-6-1970 से	1 महाराणा फतेह सिंह, सन् 1884-1929 ई 2 भोपालसिंह, सन् 1929-1954 ई. 3 भगवतसिंह, सन् 1954-1984 ई. 4 मानमहेन्द्रसिंह, सन् 1984 से

प्रमुख भाटी जिन्होंने युद्धो में वीरगति पाई

1 राजकुमार शार्दूल सन् 1413 ई मे कुमार अरडकमल के साथ हुए कोडमदेसर के प्रथम युद्ध मे मारे गए। युवरानी कोडमदे मोहिल इनके साथ कोडमदेसर मे सती हुई।

इसी युद्ध मे सेदा जैतूग, सीया सोमनसिया, मीखा, लिछमणसी, जैठी पाहू ने वीरगति पाई।

2 राव रणकदेव सिरडा गाव के पास राव चूडा द्वारा मारे गए। नैनसी की ख्यात के अनुसार यह वि स 1471 (सन् 1414 ई) मे राव चूडा द्वारा मारे गए थे। नथमल द्वारा रचित इतिहास के अनुसार यह वि स 1468 (सन् 1411 ई) मे गोगादे राठोड द्वारा मारे गए थे। सन् 1414 ई सही है, क्योकि राजकुमार शार्दूल के सन् 1413 ई मे मारे जाने के समय यह पूगल म जीवित थे।

3 राव केलण ने अमीर खा कोरी को केहरोर के युद्ध मे परास्त किया था। इस युद्ध मे लगभग एक सौ भाटी सैनिक मारे गए थे।

4 राव चून्डा के राव केलण द्वारा मारे जाने पर उनका पुत्र अखा भाटी राव रिडमल के पुत्र नत्थू द्वारा मारा गया।

5 सन् 1448 ई म राव चाचगदेव काला लोदी के विरुद्ध लडे गए तीसरे युद्ध मे दुनियापुर मे मारे गए।

6 सन् 1478 ई मे राव केलण के पाचवें पुत्र कलकरण, बीका राठोड के विरुद्ध लडे गए कोडमदेसर के दूसरे युद्ध म मारे गए।

7 सन् 1543 ई म रावत खेमाल और उनक पुत्र करणसिंह मुलतान की सेना के विरुद्ध बरसलपुर की रक्षा करते हुए मारे गए।

8 मारवाड के मोटा राजा उदयसिंह के आदमियो ने बीकमपुर के राव डूगरसिंह के भाई बाकीदास को माडरियार गाव के पास मार दिया।

9 बरसलपुर के राव मन्डलीकजी बीकमपुर की ओर से मारवाड के मोटा राजा उदय सिंह के विरुद्ध लडते हुए कुडल गाव के पास सन् 1570 ई मे मारे गए थ।

राव उदयसिंह बीकमपुर के पुत्र ईशरदास को सिरडा की जागीर दी हुई थी, यह फलोदी के हाकिम थे। यह सन् 1628 ई मे मारे गए थे।

10 सन् 1587 ई मे राव जैसा मुलतान की सेना के विरुद्ध लडते हुए पूगल में मारे गए।

11 सन् 1606 ई मे राव काना के पुत्र मानसिंह नागौर मे मारे गए थे। यह बीकानेर के राजा रायसिंह की सहायतार्थ उनके बागी पुत्र राजकुमार दलपतसिंह के विरुद्ध युद्ध मे नागौर गए थे।

12 सन् 1612 ई मे राव काना के पुत्र रामसिंह चुडेहर म बीकानेर के राजा दलपतसिंह की सेना के विरुद्ध लडते हुए मारे गए।

13 सन् 1625 ई मे राव आसकरण समा बलोच के विरुद्ध लडते हुए पूगल म मारे गए।

इस युद्ध म बरसलपुर के राव नेतसिंह ने भी वीरगति पाई।

इस युद्ध मे 15 हिन्दू एव मुसलमान राजपूत भी मारे गए थे। इनके अलावा सुमार गा उत्तराव भाटी भी मारे गए थे।

14 सन् 1665 ई मे राव सुदरसेन बीकानेर के राजा करणसिंह के विरुद्ध युद्ध म लडते हुए पूगल मे मारे गए। इनके साथ इनके भाई महेशदास भी मारे गए थे। इनके साथ ही रामडा, दातौर, मोतीगढ और घोघा गावा के हिन्दू और मुसलमान प्रधान भी मारे गए थे।

15 सन् 1678 ई मे राणेर और खारबारा के ठाकुर जगरूपसिंह और बिहारीदास चुडेहर मे मुक दराय के विरुद्ध लडते हुए मारे गए।

16 गोपालदास, हेमराज, लिखमीदास घनराज खीया आदि भाटी सन् 1534 ई म कामरान से भटनेर की रक्षा करते हुए मारे गए थे।

17 मानीपुरा के ठाकुर रूपसिंह भाटी बीकानेर की सेना से लडते हुए मारे गए।

18 मोतीगढ़ के पेमसिंह सिहराव व अन्य पन्द्रह सैनिक बीकानेर की सेना स लडते हुए मारे गए।

19 सन 1783 ई मे राव अमरसिंह बीकानेर के महाराजा गजसिंह के विरुद्ध लडते हुए पूगल मे मारे गए।

20 बीकमपुर के राव सूरसिंह और राजकुमार बालूसिंह मारवाड के राजा उदयसिंह के विरुद्ध युद्ध मे मारे गए।

21 सन् 1830 ई मे राव रामसिंह बीकानेर के महाराजा रतनसिंह के विरुद्ध युद्ध म पूगल म मारे गए।

22 सन् 1962 ई के भारत चीन युद्ध मे बानासर के कर्नल हेमसिंह के पुत्र मेजर शैतानसिंह ने दिनाक 18 11 1962 को वीरगति पाई। इन्हे मरणोपरान्त परमवीर चक्र से सम्मानित किया गया। यह बरसिंह भाटी थे।

भारत चीन सग्राम म चुशूल की घाटियों को इन्होंने 18 11 1962 को हल्दी घाटी के समान गौरव दिया। इनके सभी साथी रण मे खेत रहे। इन्होने शत्रु के सामने युद्ध का मैदान नही छोडा और अ त म गोली चलाते हुए हिम समाधि ले ली। तीन माह बाद मे इनका शव मिला। इसका दाह सस्कार जोधपुर के राजपरिवार के श्मशान जसवतथडा म किया गया था। जसवतथडा आज जन जन की श्रद्धा का केन्द्र है।

पूगल की राजकुमारियो के अन्य राजघरानो में विवाह

क्र स	नाम भटियाणी	पिता का नाम	पति का नाम व राज्य
1	कोडमदे	राव केलण	राव रिडमल, मन्डोर। यह राव जोधा की माता थी।
2	रगकवर	राव शेखा	राव बीका, बीकानेर।
3	प्रेमकवर		राव कल्याणमल, बीकानेर।
4	लाजा		राव कल्याणमल, बीकानेर।
5	अमोलकदे		राजा रायसिंह, बीकानेर।
6	जसोदा	राव डूगरसिंह के भाई बाकीदास की पुत्री	राजा रायसिंह, बीकानेर।
7	परपद दे		राजा रायसिंह, बीकानेर।
8	जादमदे		राजा दलपतसिंह, बीकानेर।
9	नौरगदे		राजा दलपतसिंह, बीकानेर।
10	कनकदे		राजा दलपतसिंह, बीकानेर।
11	सदाकवर		राजा दलपतसिंह, बीकानेर।
12	जसकवर	राव माला	इनकी सगाई राजा रायसिंह के राजकुमार भोपत से हुई थी, राजकुमार की विवाह से पहले मृत्यु हो जाने के कारण यह कुमारी ही उनके पीछे बीकानेर म सती हो गई।
13	रगकवर (प्रेमकवर)	ठाकुर तेजमालसिंह, सारवारा	राजा सूरसिंह, बीकानेर।
14	मनोहरदे	बीठनोक के ठाकुर श्रीरगसिंह या राघोदास की पुत्री।	राजा सूरसिंह, बीकानेर।
15	रत्नावति (सती हुई)	राव आसकरण	राजा सूरसिंह, बीकानेर।
16	अजबदे धाराजोत		राजा करणसिंह, बीकानेर।
17	सुदरसेन	सिरडा गाव	राजा करणसिंह, बीकानेर।
18	कोडमदे	बीकमपुर	राजा करणसिंह, बीकानेर।
19	सूरजकवर	राव अमरसिंह, पूगल	महाराजा राजसिंह, बीकानेर।
20	श्यामकवर	बरसलपुर	महाराजा सूरतसिंह, बीकानेर

1448 ई	कवर और चौहानजी हिन्दू राजपूत थी; लगा (कोरी) और सोनल सेहती, मुसलमान राणिया थी। 2. यह बाला लोदी द्वारा दुनियापुर के तीसरे युद्ध मे मारे गए थे।	इनके वंशज मेहरवान केलण भाटी हुए। बाद मे यह मुसलमान बनकर रुकनपुर से सिन्ध प्रदेश मे चले गए। 3 भीमदे को बीजनोत की जागीर दी। इनके वशज भीमदेओत केलण भाटी हुए। बाद मे यह मुसलमान बनकर बीजनोत से सिन्ध प्रदेश मे चले गए। यह तीनो राणी लालकवर सोढी के पुत्र थे। 4 रणधीर को देरावर की जागीर दी। *इनके वशज नेता के नेतावत केलण भाटी* हुए। इन्हे बाद मे राव हरा ने देरावर के बदले मे नोख, सेवडा क्षेत्र दिया। यह चौहान राणी सूरज कवर के पुत्र थे। 5 कुम्भा मुसलमान लगा (कोरी) राणी के पुत्र थे, इन्हें दुनियापुर की जागीर दी। यह बाद मे स्थानीय मुसलमानो मे विलय हो गए, इन्होने धीरे धीरे पूगल से सम्पर्क छोड दिया। 6 गर्जसिह और राता मुसलमान राणी सोनल सेहती के पुत्र थे। इन्हें डेरा गाजी खा और डेरा इसमाइल खा का क्षेत्र *दिया*। यह इनका ननिहाल था फिर लौट कर पूगल नही आए।
4 राव बरसल, सन् 1448-1464 ई	इन्होने बरसलपुर बसाया।	1 राजकुमार शेखा पूगल के राव बने। 2 जगमाल को मूमनवाहन की जागीर दी। बाद मे इनके वशज वहा से मारवाड चले गए और मूमनवाहन पर मुसलमानो ने अधिकार कर लिया। 3. जोगायत को मेहरोर की जागीर दी। *इनके पुत्रो से मुसलमानो ने मेहरोर छीन* ली और इनके वंशज मुसलमान बनकर स्थानीय समुदाय मे लोप हो गए। 4 तिलोकसी को मरोठ की जागीर दी, इसे बाद म राव जैसा ने खालसे कर लिया था।
5 राव शेखा, सन् 1464-	1. इन्हे सन् 1469 ई मे मुलतान ने बदी	1. राजकुमार हरा पूगल के राव बने। 2 रावत खेमाल को बरसलपुर की 68

पूगल के रावों द्वारा दी गई जागीरें एवं रावों के वैवाहिक सम्बन्ध

1 राव रणकदेव, सन् 1380-1414 ई	1 सोढी राणी	1 पुत्र तणु (या तारडा) के वंशज मुमानी भाटी मुसलमान हुए, भटनेर की जागीर दी।
	2 राव चूडा राठौड द्वारा मारे गए।	2 दीवान मेहराव हमीरोत के वंशज हमीरोत भाटी मुसलमान हुए, भटनेर क्षेत्र मे बसे।
	3 कोडमदे सती हुई।	
2. राव केलण सन् 1414-1430 ई	1 राव रणकदेव के गोद आए।	1 राजकुमार चाचगदेव राव बने।
	2 जगमाल राठौड की बहन माहेची राणी, सोढी राणी	2 पुत्र रणमल को मरोठ की जागीर दी। इनके वंशज केलण भाटी हुए। बाद मे इनके वंशजो को राव चाचगदेव ने बीकमपुर की जागीर दी।
	3 राव चूडा राठौड को मारा।	3 पुत्र विक्रमजीत को खीरवा की जागीर दी। इनके वंशज विक्रमजीत केलण भाटी हुए।
	4 पठान राणी जावेदा, ममा बलोच	4 पुत्र अखा को शेखासर की जागीर दी। इनके वंशज शेखसरिया केलण भाटी कहलाए।
	5 पुत्री कोडमदे का विवाह राव रिडमल राठौड से हुआ।	5 पुत्र कलकरण को तणु की जागीर दी। यह सन् 1478 ई मे बीका राठौड के विरुद्ध कोडमदेसर के दूसरे युद्ध मे मारे गए।
		6 हरभाम को नाचना, सत्पगर की जागीर दी। इनके वंशज हरभाम केलण भाटी हुए।
		7 पुत्र खुमाण और थीरा पठान राणी जावेदा के पुत्र थे, इन्हे भटनेर क्षेत्र जागीर मे दिया। इनके वंशज भट्टी मुसलमान हैं।
3 राव चाचगदेव, सन् 1430	1 इनके चार राणियां थी। मोटी जी, लाल	1 राजकुमार बरसल पूगल के राव बने।
		2 मेहरबान को रुकनपुर की जागीर दी।

1448 ई.	कंवर और चौहानजी हिन्दू राजपूत थी; लंगा (कोरी) और सोनल सेहती, मुसलमान राणिया थी। 2. यह काला लोदी द्वारा दुनियापुर के तीसरे युद्ध मे मारे गए थे।	इनके वंशज मेहरवान केलण भाटी हुए। बाद मे यह मुसलमान बनकर रुकनपुर से सिन्ध प्रदेश मे चले गए। 3. भीमदे को बीजनोत की जागीर दी। इनके वंशज भीमदेओत केलण भाटी हुए। बाद मे यह मुसलमान बनकर बीजनोत से सिन्ध प्रदेश मे चले गए। यह तीनो राणी लालकंवर सोढी के पुत्र थे। 4. रणधीर को देरावर की जागीर दी। इनके वंशज नेता के नेतावत केलण भाटी हुए। इन्हे बाद मे राव हरा ने देरावर के बदले मे नोख, सेवडा क्षेत्र दिया। यह चौहान राणी सूरज कवर के पुत्र थे। 5. कुम्भा मुसलमान लगा (कोरी) राणी के पुत्र थे, इन्हे दुनियापुर की जागीर दी। यह बाद मे स्थानीय मुसलमानो मे विलय हो गए, इन्होने धीरे-धीरे पूगल से सम्पर्क छोड दिया। 6. गजसिंह और राता मुसलमान राणी सोनल सेहती के पुत्र थे। इन्हें डेरा गाजी खा और डेरा इस्माइल खा का क्षेत्र दिया। यह इनका ननिहाल था फिर लौट कर पूगल नही आए।
4. राव बरसल, सन् 1448-1464 ई.	इन्होने बरसलपुर बसाया।	1. राजकुमार शेखा पूगल के राव बने। 2. जगमाल को मूमनवाहन की जागीर दी। बाद मे इनके वंशज वहा से मारवाड चले गए और मूमनवाहन पर मुसलमानो ने अधिकार कर लिया। 3. जोगायत को केहरोर की जागीर दी। इनके पुत्रो से मुसलमानो ने केहरोर छीन ली और इनके वंशज मुसलमान बनकर स्थानीय समुदाय मे लोप हो गए। 4. तिलोकसी को मरोट की जागीर दी, इसे बाद मे राव जैसा ने खालसे कर लिया था।
5. राव शेखा, सन् 1464-	1. इन्हे सन् 1469 ई मे मुलतान ने बंदी	1. राजकुमार हरा पूगल के राव बने। 2. रावत खेमाल को बरसलपुर की 68

1500 ई	बना लिया था। 2 राजकुमारी रग कंवर का विवाह बीका राठौड़ से हुआ।	गावो की जागीर दी, यह सन् 1543 ई मे मुलतान के साथ युद्ध मे मारे गए थे। इनके वशज खींया भाटी हुए। 3 बाघसिंह को रायमलवाली–हापासर की 140 गावो की जागीर दी, इनके पुत्र किसनसिंह के वशज किसनावत भाटी हुए। यह राणेर, सारवारा मे हैं।
6 राव हरा, सन् 1500-1535 ई		1 राजकुमार बरसिंह पूगल के राव बने। 2 रणधीर के वशज नेतावत भाटियो को देरावर से हटाकर नोख, सेवडा मे बसाया, और अपने पुत्र बीदा को देरावर की जागीर दी। 3 भीमदे के वशजो को बीजनोत से हटाकर यह जागीर अपने पुत्र हमीर को दी। 4 मेहरबान के वशजो को रुकनपुर से हटाकर यह जागीर अपने पुत्र धनराज को दी।
7 राव बरसिंह, सन् 1535-1553 ई	1 राणी पातावतजी, जैसा की माता। 2 राणी सोनगरीजी, दुर्जनसाल की माता।	1 गोपा केलण के वशजो से बीकमपुर खालसे किया। 2 रावत सेमाल के पुत्र जैतसिंह को 'राव' की पदवी दी। यह बरसलपुर के पहले 'राव' हुए। इनके वशज जैतावत खींया भाटी कहलाए। 3 रावत सेमाल के पुत्र करणसिंह उनके साथ ही युद्ध मे मारे गए थे। राव बरसिंह ने करणसिंह के पुत्र अमरसिंह को बरसलपुर की जागीर के 68 गावो मे से 27 गाव लेकर जयमलसर की अलग जागीर दी, और इन्हें इनके दादा सेमाल की 'रावत' की पदवी दी। इनके वशज करणोत खींया भाटी कहलाए। 4 राजकुमार जैसा पूगल के राव बने। 5 अपने पुत्र दुर्जनसाल को 84 गांवो की बीकमपुर की जागीर दी। सन् 1553 ई के बाद मे इन्हें राव जैसा ने 'राव' की पदवी दी। उनके बाद मे यह बीकमपुर के

		4 किसनसिंह को राजासर और अमारण की जागीर दी ।
11 राव जगदेव, सन् 1625-1650 ई	राणी, मान सेमावता की पुत्री थी ।	1 राजकुमार सुदरसेन पूगल के राव बने । 2 महेशदास अपने भाई राव सुदरसेन के साथ सन् 1665 ई मे बीकानेर के राजा करणसिंह के साथ युद्ध करते हुए पूगल मे मारे गए । इनके सन्तान नहीं थी । 3 जुगतसिंह (या जसवन्तसिंह) को मानीपुरा, छीला, मण्डला की जागीरें दी ।
12 राव सुदरसेन, सन् 1650-1665 ई	बीकानेर के राजा करणसिंह के साथ हुए युद्ध मे पूगल में मारे गए ।	1 राजकुमार गणेशदास पूगल के राव बने । 2 इन्होने जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र को सन् 1650 ई मे देरावर का 15,000 वर्ग मील का स्वतन्त्र राज्य दिया ।
13 राव गणेशदास, सन् 1665-1686 ई	सन् 1665-1670 ई मे पूगल बीकानेर के खालसे रहा ।	1 राजकुमार विजयसिंह पूगल के राव बने । 2 केसरीसिंह को केला, मोटासर, लूणखा, विसनपुरा, गौरीसर, अजीतमाना, राहड़ीवाली, बेरा बाडिया गावो की जागीरें दी । केसरीसिंह के पुत्र पदमसिंह केला मे रहे, दानसिंह मोटासर गए । पदमसिंह के पुत्र हठीसिंह लूणखा गए, दानसिंह के पुत्र ईशरसिंह गौरीसर गए ।
14 राव विजयसिंह, सन् 1686-1710 ई		1 राजकुमार दलकरण पूगल के राव बने ।
15 राव दलकरण सन् 1710-1741 ई		1 राजकुमार अमरसिंह पूगल के राव बने । 2 जुझारसिंह को सादोलाई की जागीर दी।
16 राव अमरसिंह, सन् 1741-1783 ई	सन् 1783 ई मे बीकानेर के महाराजा गजसिंह के साथ हुए युद्ध मे पूगल मे मारे गए ।	1 राजकुमार अभयसिंह और भोपालसिंह ने जैसलमेर जा कर शरण ली । 2 सन् 1783-1790 ई तक पूगल बीकानेर के खालसे रहा । 3 इनका विवाह पलिन्डा गाव के पातावतो के यहा हुआ ।

17. राव उज्जीण सिंह, सन् 1790-1793 ई	इन्हें सन् 1793 ई मे राजगद्दी छोडनी पडी।	यह सादोलाई के ठाकुर जुझारसिंह के पुत्र थे जो राव अभयसिंह के सगे चाचा थे।
18 राव अभयसिंह, सन् 1793 1800 ई	इनका विवाह रावतसर की रावतोतजी से हुआ।	1 राजकुमार रामसिंह पूगल के राव बने। 2 इन्होने अपने भाई भोपालसिंह को सन् 1794 ई मे रोजडी गाव की जागीर दी। 3 इनके पुत्र अनोपसिंह और सादूलसिंह को राव रामसिंह ने जागीरें दी।
19 राव रामसिंह, सन् 1800 1830 ई	1 महाजन के ठाकुर शेरसिंह की पुत्री, राणी बीकीजी। 2 बीकानेर के महाराजा रतनसिंह के साथ पूगल म हुए युद्ध मे सन् 1830 ई मे मारे गए। राणी बीकीजी सती हुई।	1 राजकुमार रणजीतसिंह पूगल के राव बने। 2 राजकुमार करणीसिंह अपने भाइ के गोद आ कर पूगल के राव बने। 3 दानो राजकुमार सन् 1830 1837 ई तक राज्यविहीन रहे। 4 भाई अनोपसिंह को सन् 1811 ई म सत्तासर, ककराला गावा की जागीरें दी। 5 भाई सादूलसिंह को करणीसर, बराला गावो की जागीर दी।
20 राव सादूलसिंह, सन् 1830 1837 ई	मिस्टर ट्रेविलियन ने बीकानेर पर ढाई लाख रुपये का दण्ड कायम किया था। दण्ड के बदले मे बीकानेर ने पूगल राव रणजीत सिंह को लौटाई।	1 यह राव रामसिंह के छोटे भाई थे, इन्हे सन् 1837 ई मे पूगल की राजगद्दी छोडनी पडी।
21 राव रणजीत सिंह, सन् 1837 ई	इनकी राव बनने के कुछ माह बाद मे मृत्यु हो गई।	इनके सन्तान नही थी।
22 राव करणीसिंह, सन् 1837 1883 ई	भाऊ री पातावत राणी।	1 यह अपने भाई राव रणजीतसिंह के गोद गए। 2 इनके केवल एक पुत्र राजकुमार रुगनाथसिंह हुए, वह पूगल के राव बने। 3 इनकी तीन पुत्रिया बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह को ब्याही गई थीं। 4 सत्तासर के ठाकुर मूलसिंह की पुत्री मेहताब कवर महाराजा डूगरसिंह को

		ब्याही गई थी, इनका देहान्त सन् 1960 मे हुआ।
23 राव रुगनाथ सिंह, सन् 1883-1890 ई	1 राणी बीकीजी (शिमला) 2 राणी करणोतजी (झवर) 3 राणी तवरजी (लखासर)	1 इनके राजकुमार नही होने से पूर्व मे राव रहे करणीसर के ठाकुर सादूलसिंह के पौत्र और गिरधारीसिंह के पुत्र मेहतावसिंह इनके गोद आए।
24 राव मेहताव सिंह, सन् 1890 1903 ई	चाडी की मेहताव कवर राणी पातावतजी।	राजकुमार जीवराजसिंह पूगल के राव बने।
25 राव जीवराज सिंह, सन् 1903-1925 ई	1 राणी गुमानकवर बीकीजी (बाय) 2 राणी सोहनकवर वालीजी (मोकलसर)	राजकुमार देवीसिंह की माता।
	3 राणी सूरजकवर रावतोतजी (लाडम)	कल्याणसिंह की माता।
26 राव देवीसिंह, सन् 1925-1984 ई	1 राणी मुगनकवर डाडोयानीजी (पीपलोदा राज्य)	राजकुमार सगतसिंह, जगजीतसिंह और इन्द्रसिंह की माता।
	2 राणी कचन कवर बीदावतजी (कानोता)	मानीसिंह, महावीरसिंह, शिव कवर बाईसा की माता।
27 राव सगतसिंह सन् 1984 ई से	राणी सुगनकवर बीदावतजी (हरासर)	इनके केवल एक पुत्र राजकुमार राहुल हैं, इनका जन्म दिनाक एक सितम्बर, सन् 1965 मे हुआ।

अनेक इतिहासकारों के विषय में

बीकानेर राज्य का अधिकाश इतिहास दयालदास की ख्यात पर आधारित है। ालदास, बीकानेर राज्य के खुलरिया गांव के सिंघायत चारण थे। यह मारवाडी गद्य के च्छे लेखक थे, इनका फारसी और उर्दू भाषा का ज्ञान भी बहुत अच्छा था। इन्होने कानेर राज्य की ख्यात की रचना सन् 1852 ई. मे की और एक अन्य ग्रंथ 'देश दर्पण' भी 1870 ई. मे लिखा। महाराजा गजसिंह (सन् 1745-87 ई.) से पहले तक के काल इतिहास इन्होने सुनी सुनाई बातो और अन्य चारणो की मौखिक कथाओ से लिखा। नी रचना के लिए इन्होने कोई लिखित अभिलेख नही देखे और न ही अकाट्य सबूतो से सी घटना या तथ्य का विश्लेषण किया। इन्होने कही पर भी सन्दर्भ ग्रंथो व अभिलेखो उद्धृत नही किया जिससे इनके कथनो की सत्यता को आका जा सके।

बीकानेर राज्य की ख्यात का अधिकाश भाग इन्होने महाराजा रतनसिंह के शासनकाल लिखा और इसे सन् 1852 ई. मे महाराजा सरदारसिंह के समय पूर्ण किया। यह इनके श्रित वेतन भोगी लेखक थे। समय-समय पर वह अपनी रचना महाराजा रतनसिंह को ढकर सुनाया करते थे और उनकी सहमति से उसमें सुधार करके आगे का लेखन कार्य रते थे। क्योकि इन्हे अपने कार्य का अनुमोदन महाराजा से करवाना पडता था इसलिए ह उन्ही तथ्यो को उजागर करते थे जो उनकी भावनाओ और रुचि के अनुरूप होते थे। न समय यह ख्यात बीकानेर के जूनागढ मे स्थित अनूप संस्कृत पुस्तकालय मे उपलब्ध है, ह दो भागो मे है, इसमे कुल 394 पृष्ठ हैं।

दयालदास ने 'देश दर्पण' ग्रंथ की रचना महाराजा सरदारसिंह के काल मे सन् 870 ई. मे की।

इनका लेखन बहुत छिछला था। पुरानी छत्रियो, बीकाजी की टेकरी, देवी कुण्ड ागर आदि के शिलालेखो को इन्होने जाकर पढा तक नही या इन्हे इनके वहा होने का ायद ज्ञान भी नही हो। इनमे अपने दाता महाराजा रतनसिंह के पिता द्वारा अपनाए गए थकण्डो का वर्णन करने का साहस नही होना स्वाभाविक था। जितना अत्याचार और रता महाराजा सूरतसिंह ने अपनी जनता और सामन्तो के साथ किया था उतना शायद ानेर के अन्य किसी शासक ने नहीं किया। कर्नल टाड ने भी इनकी भरपूर निन्दा की थी न्तु दयालदास ने इनके कुकृत्यो को सराहा था। महाराजा सूरतसिंह (सन् 1787 ई.) और तनसिंह (सन् 1851 ई.) तक के सारे इतिहास को सही दृष्टिकोण से प्रस्तुत नहीं करके न्होने उसे बिगाड दिया। यही बिगाड इन्होंने 'देश दर्पण' मे महाराजा सरदारसिंह सन् 1851-1872 ई.) मे बाल था किया। जी. एच. ओझा तक ने दयालदास की कटु

आलोचना करते हुए लिखा कि उन्होंने महाराजा रायसिंह के पुत्र प्रतापसिंह (सन् 1787 ई) से सम्बन्धित तथ्यों को जानबूझ कर छिपाया था।

दयालदास ने न केवल बीकानेर राज्य के बाद क इतिहास को बिगाड़ा, उन्होंने इसके प्रारम्भिक इतिहास को भी नही बख्शा। उनके अनुसार राव बीकाजी का राजकुमारी रगकवर स सन् 1492 ई म विवाह हुआ था, जबकि तथ्य यह था कि यह विवाह सन् 1469 ई मे हुआ था और राणी रगकवर के राजकुमार लूणकरण का जन्म सन् 1470 ई म हुआ था। (पृष्ठ 2, 3, 4, 27)

उन्होने इतिहास लेखन का कार्य एक मशीन की तरह किया जिसके लिए कोई अभिलेख या साक्ष्य एकत्र नही किए। बीकानेर के राजा महाराजाओ की इन्होंने भरपूर प्रशसा की और जैसा चारणो और ख्यातकारो से सुना, उस अपनी ओर से बढ़ा चढ़ा कर लिखा। वह एक इतिहासकार कम और चाकर ज्यादा थे, इसलिए वह उन तथ्यों को छिपा गए जिनस महाराजा के पूर्वजो की उपलब्धियां की हेठी होती थी। उनके लिए सेवा और उदर पालन सर्वोपरी था, उन्होन वही लिखा जो इनके दाता को भाता था। उन्हे यह अदेशा नही था कि उनके लिखे हुए इतिहास का सौ वर्ष बाद म मूल्यांकन भी होगा। उनकी यही मान्यता रही थी कि ऐसा ही राजशाही कारोबार अनन्तकाल तक चलता रहेगा जिसमे केवल शासक और उनके पूर्वजो की स्तुति ही पढी और सुनी जायेगी। राव शेखा को वह राव बीका का चाकर लिखकर धन्य हो गए। उनकी और उनके दाता की हीन भावनाए दर्शाने के लिए यही पर्याप्त था और इसी म इनकी ख्यात की सार्थकता को आंका जा सकता है।

पी डब्ल्यु पावलेट न 'बीकानेर गजेटियर' सन् 1874 ई मे लिखा था। यह दयालदास की ख्यात पर आधारित था इसलिए इसम भी सच्चाई उतनी ही थी जितनी ख्यात मे।

श्यामलदास और सूरजमल ने बीकानेर की तवारिख की प्रति किसी मारवाड के नागरिक से प्राप्त की थी। यह दयालदास कृत ख्यात ही थी। इसलिए इनके इतिहास की उपयोगिता भी सीमित हो गई।

कर्नल टाड (सन् 1832 ई) ने बीकानेर के राव बीका, राजा रायसिंह और पदमसिंह के विषय म प्रचलित किस्सो का वर्णन बडी चतुराई से किया, उन्होने महाराजा गजसिंह और सूरतसिंह के शासनकाल का वर्णन भी विस्तार से किया, परन्तु उस युग मे उनकी सूचनाओ की भी कुछ सीमाए थी इसलिए उन्ह इनके विषय मे वास्तविक पूर्ण तथ्य प्राप्त भी नही हो सके।

मुन्शी देवी प्रसाद द्वारा रचित बीकानेर के राजाओ का जीवन चरित्र और सोहनलाल की बीकानेर की तवारिख का आधार भी दयालदास की ख्यात होने से उनकी यह रचनाए भी बासी हो गई।

जी एच ओझा द्वारा रचित बीकानेर का इतिहास भी दयालदास की ख्यात और पावलेट के गजेटियर पर आधारित था। फिर भी इनमे इतना साहस अवश्य था कि इन्होने नेक तथ्यो की जानकारी प्राप्त करके उन्ह सही परिप्रेक्ष्य मे प्रस्तुत किया। इसके अलावा

इन्होने अबुल फजल जैसे अनेक मुसलमान इतिहासकारो की कृतियो का नाम उठाकर सही ऐतिहासिक तथ्य प्रस्तुत किए।

'हाऊस ऑफ बीकानेर', महाराजा गंगासिंह की व्यक्तिगत देख-रेख मे तैयार किया गया था। इसमे ब्रिटिश काल की सारी जानकारी उपलब्ध अभिलेखो पर आधारित होने से सदेह से ऊपर थी। फिर भी लेखन कला मे कुछ ऐसा घुमाव दिया गया जिससे पाठक को यह आभास हो कि महाराजा गंगासिंह ब्रिटिश साम्राज्य के स्तम्भ थे और उनकी उपलब्धिया बीकानेर राज्य की प्रजा के लिए ईश्वरीय देन थी। अपने पूर्वजो के इतिहास के विषय मे और मुगल काल के इतिहास के सदर्भ मे इन्होने भी दयालदास वाला दृष्टिकोण ही अपनाया।

महाराजा डाक्टर करणीसिंह द्वारा रचित ग्रन्थ, 'बीकानेर राजघराने के केन्द्रीय सत्ता से सम्बन्ध', म भी इन्होने दयालदास, जी एच ओझा, पावलेट और हाऊस ऑफ बीकानेर मे प्रस्तुत तथ्यो को एक नए अनुशासन मे लिपिबद्ध किया, केवल उनके अपने विचार और घटनाओ की समीक्षा व विश्लेषण नए थे।

मेरे विचार मे दयालदास चारण ही बीकानेर के इतिहास के आदि पुरुष थे। उनसे पहले कभी भी बीकानेर का इतिहास नही लिखा गया था, इसलिए इसके बारे म जो भी सूचनाए थी वह राज्य की बहियो मे थी या कुछ मुगलकालीन फरमानो और दिल्ली दरबार के रोजनामचो मे थीं। केवल दयालदास ही पहले लेखक थे जिन्होने उपलब्ध पुरानी बहिया को दुबारा पढा और उनम से तथ्य लिए, और अनेक चारणो और कथाकारो स मौखिक वर्णन सुनकर उन्हे लिपिबद्ध किया। बाद मे किसी इतिहासकार ने बीकानेर के इतिहास पर शोधकार्य नही किया, केवल अपने तरीके से दयालदास की नकल करते रहे। चूकि दयालदास बीकानेर राज्य के आश्रित थे इसलिए वह इसके इतिहास के साथ न्याय नही कर सके, तब वह पूगल के इतिहास के साथ न्याय कैसे करते? और वह भी सन् 1830 ई मे महाराजा रतनसिंह द्वारा राव रामसिंह को मारे जाने के पश्चात्!

नैनसी मुहणोत पहले बीकानेर राज्य की सेवा मे थे और बाद म वह जोधपुर राज्य मे दीवान बनाए गए थे। उनके द्वारा रचित, 'मारवाड रे परगनो री विगत', एक अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ था। इसमे मारवाड के इतिहास की विस्तृत जानकारी दी गई थी। इनके सूत्र पुरानी पोथिया, बहिया, ठिकानो के अभिलेख और अनक सुनी सुनाई बातें थी। अब उन सुनी सुनाई बातो पर कितना विश्वास किया जाये, यह विवाद का विषय था। नैनसी ने, 'सिसोदिया री ख्यात' जोशी मनोहर से वर्णन सुनकर लिखी, हाडी राणी करणावती और राणा उदयसिह का प्रसग उन्होने गिरधर चारण से सुनकर लिखा और रावल समरसी का वर्णन रुद्रदान चारण ने उन्ह सुनाया था। इसी प्रकार उन्होंने पड़िहारो की उप-जातियो का वर्णन भाट खगार से लिया, रामसिंह बघेले ने उन्हें सिरोही के देवडो के विषय मे बताया, जैसलमेर का इतिहास उन्होने लाखो के वर्णन के अनुसार लिखा और भाटियो की वशावली गोकल रतनु के कहे अनुसार लिपिबद्ध की। उन्होंने जालौर के सोनगरो, मेवाड के झालो और कच्छावो की ख्यात की नक्ल सीथल के पन्ना बिट्ठु की कृति से की। परन्तु फिर भी यह अच्छा रहा कि उस समय के जानकार लोगो से मौखिक वर्णन सुनकर नैनसी ने उसे कलमबद्ध कर लिया, कुछ समय पश्चात् यह मौखिक जानकारी वाला स्रोत भी लुप्त हो जाता।

अनेक इतिहासकारो के

आलोचना करते हुए लिखा कि उन्होंने महाराजा रायसिंह के पुत्र प्रतापसिंह (सन् 1787 ई) से सम्बन्धित तथ्यों को जानबूझ कर छिपाया था।

दयालदास ने न केवल बीकानेर राज्य के बाद के इतिहास को बिगाड़ा, उन्होंने इसके प्रारम्भिक इतिहास को भी नहीं बख्शा। उनके अनुसार राव बीकाजी का राजकुमारी रगकवर से सन् 1492 ई में विवाह हुआ था, जबकि तथ्य यह था कि यह विवाह सन् 1469 ई में हुआ था और राणी रगकवर के राजकुमार लूणकरण का जन्म सन् 1470 ई में हुआ था। (पृष्ठ 2, 3, 4, 27)

इन्होंने इतिहास लेखन का कार्य एक मशीन की तरह किया जिसके लिए कोई अभिलेख या साक्ष्य एकत्र नहीं किए। बीकानेर के राजा महाराजाओं की इन्होंने भरपूर प्रशंसा की और जैसा चारणों और कथाकारों से सुना, उसे अपनी ओर से बढ़ा-चढ़ा कर लिखा। वह एक इतिहासकार कम और चाकर ज्यादा थे, इसलिए वह उन तथ्यों को छिपा गए जिनसे महाराजा के पूर्वजों की उपलब्धियों की हेठी होती थी। उनके लिए सेवा और उदर पालन सर्वोपरी था, उन्होंने वही लिखा जो इनके दाता को भाता था। उन्हें यह अदेशा नहीं था कि उनके लिखे हुए इतिहास का सौ वर्ष बाद मे मूल्यांकन भी होगा। उनकी यही मान्यता रही थी कि ऐसा ही राजशाही कारोबार अनन्तकाल तक चलता रहेगा जिसमे केवल शासक और उनके पूर्वजों की स्तुति ही पढ़ी और सुनी जायेगी। राव बीका को यह राव बीका का चाकर लिखकर धन्य हो गए। उनकी और उनके दाता की हीन भावनाएं दर्शाने के लिए यही पर्याप्त था और इसी से इनकी ख्यात की सार्थकता को आंका जा सकता है।

पी डब्ल्यु पावलेट ने 'बीकानेर गजेटियर' सन् 1874 ई में लिखा था। यह दयालदास की ख्यात पर आधारित था इसलिए इसमें भी सच्चाई उतनी ही थी जितनी ख्यात मे।

श्यामलदास और सूरजमल ने बीकानेर की तवारिख की प्रति किसी मारवाड के नागरिक से प्राप्त की थी। यह दयालदास कृत ख्यात ही थी। इसलिए इनके इतिहास की उपयोगिता भी सीमित हो गई।

कर्नल टाड (सन् 1832 ई) ने बीकानेर के राव बीका, राजा रायसिंह और पदमसिंह के विषय में प्रचलित किस्सो का वर्णन बड़ी चतुराई से किया, उन्होंने महाराजा गजसिंह और सूरतसिंह के शासनकाल का वर्णन भी विस्तार से किया, परन्तु उस युग में उनकी सूचनाओं की भी कुछ सीमाएं थी इसलिए उन्हें इनके विषय मे वास्तविक पूर्ण तथ्य प्राप्त भी नहीं हो सके।

मुन्शी देवी प्रसाद द्वारा रचित बीकानेर के राजाओं का जीवन चरित्र और सोहनलाल की बीकानेर की तवारिख का आधार भी दयालदास की ख्यात होने से उनकी यह रचनाएं भी बासी हो गई।

जी एच ओझा द्वारा रचित बीकानेर का इतिहास भी दयालदास की ख्यात और पावलेट के गजेटियर पर आधारित था। फिर भी इनमे इतना साहस अवश्य था कि इन्होंने अनेक तथ्यों की जानकारी प्राप्त करके उन्हें सही परिप्रेक्ष्य मे प्रस्तुत किया। इसके अलावा

इन्होने अबुल फजल जैसे अनेक मुसलमान इतिहासकारो की कृतियो का लाभ उठाकर सही ऐतिहासिक तथ्य प्रस्तुत किए।

'हाऊस ऑफ बीकानेर', महाराजा गंगासिंह की व्यक्तिगत देख-रेख मे तैयार किया गया था। इसमे ब्रिटिश काल की सारी जानकारी उपलब्ध अभिलेखो पर आधारित होने से संदेह से ऊपर थी। फिर भी लेखन कला मे कुछ ऐसा घुमाव दिया गया जिससे पाठक को यह आभास हो कि महाराजा गंगासिंह ब्रिटिश साम्राज्य के स्तम्भ थे और उनकी उपलब्धिया बीकानेर राज्य की प्रजा के लिए ईश्वरीय देन थी। अपने पूर्वजो के इतिहास के विषय मे और मुगल काल के इतिहास के संदर्भ मे इन्होने भी दयालदास वाला दृष्टिकोण ही अपनाया।

महाराजा डाक्टर करणीसिंह द्वारा रचित ग्रन्थ, 'बीकानेर राजघराने के केन्द्रीय सत्ता से सम्बन्ध', म भी इन्होने दयालदास, जी एच ओझा, पावलैट और हाऊस ऑफ बीकानेर मे प्रस्तुत तथ्यो को एक नए अनुशासन म लिपिबद्ध किया, केवल उनके अपने विचार और घटनाओ की समीक्षा व विश्लेषण नए थे।

मेरे विचार म दयालदास चारण ही बीकानेर के इतिहास के आदि पुरुष थे। उनसे पहले कभी भी बीकानेर का इतिहास नही लिखा गया था, इसलिए इसके बारे मे जो भी सूचनाए थी वह राज्य की बहियो मे थी या कुछ मुगलकालीन फरमानो और दिल्ली दरबार के रोजनामचो मे थी। केवल दयालदास ही पहले लेखक थे जिन्होने उपलब्ध पुरानी बहियो को दुबारा पढा और उनम से तथ्य लिए, और अनेक चारणो और कथाकारो स मौखिक वर्णन सुनकर उन्हे लिपिबद्ध किया। बाद म किसी इतिहासकार ने बीकानेर के इतिहास पर शोधकार्य नही किया, केवल अपने तरीके से दयालदास की नकल करते रहे। चूकि दयालदास बीकानेर राज्य के आश्रित थे इसलिए वह इसके इतिहास के साथ न्याय नही कर सके, तब वह पूगल के इतिहास के साथ न्याय कैसे करते? और वह भी सन् 1830 ई मे महाराजा रतनसिंह द्वारा राव रामसिंह को मारे जाने के पश्चात्!

नैणसी मुहणोत पहले बीकानेर राज्य की सेवा म थे और बाद म वह जोधपुर राज्य मे दीवान बनाए गए थे। उनके द्वारा रचित, 'मारवाड रे परगनो री विगत', एक अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ था। इसमे मारवाड के इतिहास की विस्तृत जानकारी दी गई थी। इनके सूत्र पुरानी पोथिया, बहिया, ठिकानो के अभिलेख और अनेक सुनी सुनाई बातें थीं। अब उन सुनी सुनाई बातो पर कितना विश्वास किया जाये, यह विवाद का विषय था। नैणसी ने, 'सिसोदिया री ख्यात' जोशी मनोहर से वर्णन सुनकर लिखी, हाडी राणी करणावती और राणा उदयसिंह का प्रसग उन्होंने गिरधर चारण से सुनकर लिखा और रावल समरसी का वर्णन रुद्रदान चारण ने उन्हे सुनाया था। इसी प्रकार उन्होने पड़िहारो की उप-जातियो का वर्णन भाट खगार से लिया, रामसिंह बघेले न उन्हे सिरोही के देवडो के विषय मे बताया, जैसलमेर का इतिहास उन्होने लाखो के वर्णन के अनुसार लिखा और भाटियो की वंशावली गोकल रतनु के कहे अनुसार लिपिबद्ध की। उन्होंने जालोर के सोनगरो, मेवाड के झालो और कच्छावो की ख्यात की नकल सीधल के पत्ता बिट्ठु की कृति से की। परन्तु फिर भी यह अच्छा रहा कि उस समय के जानकार लोगों से मौखिक वर्णन सुनकर नैणसी ने इसे कलमबद्ध कर लिया, कुछ समय पश्चात् यह मौखिक जानकारी वाला स्रोत भी लुप्त हो जाता।

यह हमारा सौभाग्य रहा कि इन महानुभावो ने काफी कुछ लिख दिया जो आज हमें उपलब्ध है। अगर दयालदास और नैणसी जैसे इतिहासकार भी कुछ नही लिख पाते तो आज हमारे सामने इन रजवाडो के इतिहास की रूपरेखा तथ्यों से और भी परे होती। उस समय की रीति नीति के अनुसार चारण और बही भाट ही ऐतिहासिक घटनाओं का मौखिक और लिखित मे लेखा-जोखा रखते थे। पीढी दर पीढी वह कथा सुनाते थे, इसलिए उसमे सन्देह करना उचित नही, वह घटना को छन्दो और अलकारो के घेरे में ऐसा बाधते थे कि उसकी सच्चाई छिप जाती थी और तथ्यो को समझने मे कठिनाई होती थी। फिर भी इन दोनो इतिहासकारो का उस अतीत के युग के वातावरण मे प्रयास और कार्य बहुत सराहनीय रहा। उनके कार्यों की नकल ज्यादा की गई है, किसी ने स्वतन्त्र रूप से मौलिक तथ्य नहीं सुझाये।

समीक्षा

राव रणकदेव (सन् 1380 ई) पूगल के पहले राव थ, राव देवीसिंह (देहान्त सन् 1984 ई) पूगल के अन्तिम राव थे । भाटियो का पूगल पर सन् 1380 ई से 1954 ई तक अटूट राज्य रहा । इन 575 वर्षो मे पूगल के 26 राव हुए । इनम राव केलण, करणी सिंह और मेहतावसिंह गोद आए थे, राव उज्जीणसिंह और राव सादूलसिंह को पदच्युत किया गया था । राव रणकदेव, राव चाचगदेव, राव जैसा, राव आसकरण राव सुदरसेन, राव अमरसिंह और राव रामसिंह युद्धो मे मारे गए थे, आखिरी तीनो राव बीकानेर के राजाओ के साथ हुए युद्धो मे मारे गए थे । राव शेखा और राव बाना थोडे समय के लिए सुलतान द्वारा बन्दी बना लिए गए थ ।

जहा राव रणकदेव ने विपरीत परिस्थितियो म पूगल का नया राज्य स्थापित किया था, वहा राव केलण राव चाचगदेव और राव वरसल ने तलवार के बल से राज्य का विस्तार किया । सन् 1414 1464 ई मे पूगल का राज्य बहुत शक्तिशाली था । सारे राव योग्य प्रशासक और उत्कृष्ट योद्धा थे । इनक शत्रु इनका लोहा मानते थ ।

राव वरसल ने अपने पुत्र राव शेखा को 32,000 वर्ग मील का सुरक्षित राज्य विरासत मे दिया था । सन् 1469 ई मे इनके सुलतान द्वारा बन्दी बनाए जान से इनका मनोबल दृढ़ नही रहा । उसी समय बीका राठौड के इस क्षेत्र म आने से और देवी करणीजी द्वारा राजकुमारी रगकवर का विवाह उनके साथ कराने से राव शेखा शासक के दायित्व से डगमगा गए । इनके साथ ही पूगल की शक्ति का क्षय होना आरम्भ हो गया । राव हरा बीकानेर के राव लूणकरण और राव जैतसी की लडाइया लडते रहे, राव बरसिंह मारवाड के राठौडो से जैसलमेर के लिए लडाइया लडते रहे और राव जैसा मारवाड के राव मालदेव से पजा लडाकर उनकी शक्ति परीक्षा करते रहे । इस प्रकार सन् 1464 ई से 1587 ई म पूगल ने अपने लिए कुछ नहीं किया, केलण भाटी दिशाहीन रहे और क्योकि वह अपने राज्य की रक्षा या उसके विस्तार के लिए नही लड रहे थे इसलिए इनके नेतृत्व म उनकी आस्था घटती रही । इसके फलस्वरूप इनका पश्चिम का क्षेत्र सुरक्षित नहीं रहा और सुरक्षा क अभाव मे राजपूतो और हिन्दुओ न अपना धर्म परिवर्तन कर लिया ।

सन् 1587 ई म राव बाना के सुलतान द्वारा बन्दी बनाए जाने स पूगल के भाटियो का शासन करने का मनोबल और गिर गया । कुछ बीकानेर के शक्तिशाली हो जाने से इनम हीनता की भावना ने घर कर लिया । यही सहमी हुई स्थिति राव जगदेव (सन् 1650 ई) के समय तक बनी रही ।

इस भय और असुरक्षा के कारण सन् 1650 ई में राव सुदरसेन ने जैसलमेर के रावल सबलसिंह के दबाव के कारण अपना आधा राज्य रावल रामचन्द्र को दे दिया। पूगल वस्तुत सन् 1650 ई मे ही मृतप्राय हो गया था, राजा करणसिंह ने सन् 1665 ई मे राव सुदरसेन को मारकर इसे अनाथ बना दिया।

राव गणेशदास (सन् 1665 ई) के समय से पूगल नाममात्र का राज्य रह गया था। इसके तीन शत्रु इसे बारी बारी से नोच रहे थे। इस त्रिकोण के सघर्ष मे फसा हुआ पूगल असहाय सा अपने चीरहरण की घडिया गिन रहा था। इसी स्थिति को अगली सात पीढ़िया, राव रामसिंह (मृत्यु सन् 1830 ई) तक जीती रही। सन् 1749 ई मे पूगल के वशज भाई जैसलमेर ने पहल करके बीकमपुर और बरसलपुर हड़प लिए, सन् 1763 ई मे दाऊद पुत्रो ने रावल रामचन्द्र के वशजो से देरावर का राज्य छीन लिया और सन् 1830 ई मे महाराजा रतनसिंह ने राव रामसिह को मारकर एक स्वतन्त्र राज्य को दफना दिया।

सन् 1830 ई के बाद मे पूगल बीकानेर राज्य का श्रृंगार मात्र रह गया था।

पूगल के लिए अकाल पड़ना एक सामान्य घटना होती थी, उसे वहा के भाटी पीढी दर पीढ़ी भुगतते आए थे, पूगल क्षेत्र अकाल की विभीषिका से जूझने मे सदैव अग्रणी रहा। यह भाटी प्रदेश की नियति थी।

पग पूगल, धड मेडते,
आधो गयो बीकाणै,
हू ढालो जैसलमेर।

अब यह सब कुछ बदल चुका है। पूगल क्षेत्र म राजस्थान नहर परियोजना से सर्वाधिक सिचाई सुविधा उपलब्ध है।

तुलसी जग मे क्या बडा,
समय बडा बलवान,
भीलन लूटी गोपिया,
वाही अर्जुन वही बाण।

सन्दर्भ ग्रथ

1 नैनसी ख्यात, भाग II पृष्ठ 500, परिशिष्ट 10, सख्या (4), 42, 111 327, 328, 112, 116, 315, 65

2 नैनसी ख्यात भाग I पृष्ठ सख्या 349, 350

3 तीस निर्णायक युद्ध नरेन्द्रसिंह पृष्ठ सख्या 30, 40, 41

4 दयालदास की ख्यात बीकानेर भाग II पृष्ठ सख्या 211, 212, 38, 48 58, 59, 60, 165, 166, 145, 210 से 214

5 जैसलमेर का इतिहास हरि दत्त पृष्ठ सख्या 38, 51 119

6 जैसलमर की तवारिख – नथमल पृष्ठ सख्या 43, 70, 71 एव 111 से आगे।

7 राव जैतसी के छन्द, रचयिता अज्ञात, छन्द सख्या 35 से 54, 49 74, 82, 83, 90, 91, 171 से 180

8 कर्नल टाड, अनैल्स एण्ड अटिक्विटीज ऑफ राजस्थान भाग II पृष्ठ 330, 1227

9 जैतसी के छन्द, द्वारा सूजा, छ द सख्या 10 से 20, 43, 48 84 से 93

10 बाकीदास की ख्यात, पृष्ठ सख्या 116 – क्रम 303

11 क्यामखा रासो – द्वारा जाना, कवित्त 285 पृष्ठ 210 से 215

12 नैनसी ख्यात (बी) भाग II पृष्ठ 115, 116, 117, 140 141, 118 से 121, 126, 127 137, 138, 139, 140, 298, 500, 129 से 132

भाग III पृष्ठ 37, 121, 122, 124 123, 125, 128, 297

13 कम्प्रिहेंन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग V पृष्ठ 668, 669

14 उत्तर तैमूरकालीन भारत, खण्ड 1 पृष्ठ 364 – वर्णन सख्या 8

15 बीकानेर राज्य का गजेटियर, 1874 – पावलैट – पृष्ठ 3

16 हिस्ट्री ऑफ बीकानेर, भाग I, जी एच ओझा, पृष्ठ सख्या 95, 112 113, 415 से 418, 666, 667, 36, 37 297, 300, 301

17 आर्टस एण्ड आर्किटेक्चर ऑफ बीकानेर, एच गोयट्ज अध्याय – 8

18 बीकानेर राज्य के ताजीमी पटटे पृष्ठ 14

19 बीकानेर का इतिहास, हिस्ट्री ऑफ बीकानेर, खण्ड – I, पृष्ठ 349

20 बीकानेर की ख्यात, मोहता भीमसिंह, अप्रकाशित
21 राजस्थान स्टेट आर्काइविज, बीकानेर, बही संख्या 157, 159, 175, वि स 1827
22 देश दर्पण दयालदास
23 राजस्थान स्टेट आर्काइविज, बीकानेर, बही संख्या 150, वि स 1810
24 विविध संघर्ष पृष्ठ 134, ठाकुर भूरसिंह मलसीसर
25 क्षत्रिय जाति की सूची पृष्ठ 58, 59
26 मारवाड परगना री ख्यात भाग I पृष्ठ 38
27 भाटी पराशास्त्री छन्द 44, 47
28 रावली बही मोहता नथमल चाण्डक के पास पृष्ठ 25
29 माइया री गावारी विगत – पूगल के टीका मोहता – नथमलजी पुत्र मेघराजजी के सौजन्य से
30 गाइया री विगत हमीरदान बारठ, अमरपुरा हस्तलिखित पुस्तिका सन् 1953 ई मे सत्तासर के राव बलदेवसिंह के पास थी।
31 बीकानेर का इतिहास सोहनलाल पृष्ठ 24
32 पूगल री वातो हमीरदान बारठ, अमरपुरा सत्तासर के अभिलेखो से
33 नेशनल आर्काइवज, नई दिल्ली, केन्द्रीय अभिलेख की फाईल संख्या 51, दिनाक 3 12 1836
34 तागढ के अभिलेख बही पृष्ठ संख्या 376 स 383
35 वीर विनोद रावत अमरसिंह
36 राजस्थान स्टेट आर्काइवज, बीकानेर, बही सख्या 175, वि स 1827
37 रावजी सबलसिंह और रुडजी बही भाट की बहियो से
38 'कोडमदे' कविता रचयिता मेघराज 'मुकुल'
39 राजस्थान का इतिहास डा गोपीनाथ शर्मा
40 भारत का इतिहास आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव
41 बीकानेर राज्य का सक्षिप्त इतिहास श्री करणी ग्रथमाला – 2 दीनानाथ खत्री
42 मुस्लिम रूल इन इण्डिया वी डी महाजन
43 भारत – पाकिस्तान मरुस्थलीय युद्ध तनोट 1965, लोगवाला 1971 ले कर्नल जयसिंह (थैलासर), एस एम
44 'रणबाकुरा' मासिक पत्रिका – जनवरी, फरवरी, मार्च – 1988
45 सोनगरा साचोरा चौहानो का इतिहास डा हुकमसिंह भाटी।
46 तवारिख जैसलमेर लखमीचन्द – सम्वत् 1948
47 जयमन्दर ठिकाणे की बही रावत मेहताबसिंह के हाथ से।

48. ठाकुर कल्याणसिंह, मोतीगढ़ (पूगल), के हस्तलिखित नोट्स (आठ रजिस्टर)।

49. राजवी अमरसिंह के नोट्स।

50. इसी विषय पर, पूगल – दी डेजर्ट बैशन, पुस्तक अंग्रेजी में, मेजर जनरल एस सी. सरदेशपाण्डे ने प्रकाशित की है; लान्सर इन्टरनेशल, पोस्ट बॉक्स 3802, नई दिल्ली– 110049। पाठकगण इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें। Pugal—The Desert Bastion by Maj. Gen. Sardespande, UYSM.

51. मेजर शैतानसिंह, परमवीर चक्र के विषय में
13 th Bn. The Kumaon Regiment के सौजन्य से।